प्रकाशक—
मंत्री, माणिकचन्द्र-जैनग्रन्थमाला
हीराबाग, बम्बई ४

मार्च १९५७

मुद्रक—
शारदा मुद्रण
ठठेरी बाजार, वाराणसी

विषय-सूची

प्राक्-कथन

जैन-शिलालेखसग्रह, भाग १, का जब मैंने आज से कोई बत्तीस वर्ष पूर्व सम्पादन किया था, तब मुझे यह आशा थी कि शेष प्राप्य जैन शिलालेखों के संग्रह भी शीघ्र ही क्रमशः प्रस्तुत किये जा सकेंगे। किन्तु वह कार्य शीघ्र सम्पन्न न हो सका। तथापि इस योजना की चिन्ता माणिकचन्द्र ग्रथमाला के कर्णधार श्रद्धेय प० नाथूराम जी प्रेमी को बनी ही रही। उसी के फलस्वरूप गेरीनो की शिलालेख सूची के अनुसार अब यह संग्रह कार्य भाग दूसरे और तीसरे मे पूरा हो गया है। गेरीनो की सूची बनने के पश्चात् जो जैन लेख प्रकाश मे आये हैं, तथा जो महत्त्वपूर्ण लेख उस सूची में उल्लिखित होने से छूट गये हैं उनका संकलन करना अब भी शेष रहा है।

यह तो मानी हुई बात है कि देश, धर्म और समाज के इतिहास मे पाषाण, ताम्रपट आदि लेख सर्वोपरि प्रामाणिक होते हैं। भारत का प्राचीन इतिहास तभी से विधिवत् प्रस्तुत किया जा सका है जब से कि इन शिला आदि लेखों के अध्ययन अनुशीलन की ओर ध्यान दिया गया है। जितने शिलालेख प्रस्तुत संग्रह मे समाविष्ट हैं वे सभी गत सौ वर्षों मे समय समय पर यथास्थान पत्रिकाओं आदि मे प्रकाशित हो चुके हैं और उनस प्राप्य राजनीतिक वृत्तान्त का उपयोग भी प्राय, किया जा चुका है। किंतु जैन इतिहास के निर्माण में उनका पूर्णत उपयोग करना अभी भी शेष है। इस सग्रह में जो मौर्य सम्राट् अशोक से लेकर कुषाण, गुप्त, चालुक्य, गग, कदम्ब, राष्ट्रकूट आदि राजवंशों के काल के जैन लेख सकलित हैं उनमे भारतीय इतिहास और विशेषत. जैन धर्म के प्राचीन इतिहास की बड़ी बहुमूल्य सामग्री बिखरी हुई पड़ी है जिसका अध्ययन कर जैन इतिहास को परिष्कृत करना आवश्यक है।

शिलालेखसग्रह के प्रथम भाग की भूमिका में मैने वहाँ संकलित लेखों का विभिन्न दृष्टियों से एक अध्ययन प्रस्तुत किया था। अब इस भाग के साथ

तब से आगे प्रकाशित दोनों भागों का सुविस्तृत और सूक्ष्म अध्ययन डॉ० गुलाब चन्द्र चोधरी द्वारा प्रस्तुत किया गया है जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। मुझे भरोसा है कि डॉ० चोधरी के इस परिश्रम से जैन इतिहास का बड़ा उपकार होगा। इनकी प्रस्तावना से प्रकाश में आने वाली कुछ विशेष बातें निम्न प्रकार हैं.—

(१) मथुरा की खुदाई से प्रकाश मे आई मूर्तियों मे प्रमाणित हुआ कि आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व जैन प्रतिमाये नग्न ही बनाई जाती थीं। मूर्तियों मे वस्त्रों का प्रदर्शन लगभग पाँचवीं शती से पूर्व नहीं पाया जाता।

(२) प्राचीन काल की प्रतिमाओं मे तीर्थंकरों के बैल आदि विशेष चिह्न बनाने की प्रथा नहीं थी। केवल आदिनाथ के केश (जटा) तथा पार्श्व और सुपार्श्व के सर्पफण मूर्तियों मे दिखलाये जाते थे।

(३) तीर्थंकरों के साथ साथ यक्ष यक्षिणियों की पूजा का भी प्राचीन काल से ही प्रचार था और उनको भी मूर्तियाँ स्थापित की जाती थीं।

(४) मथुरा से जो जैन मूर्तियों की प्रतिष्ठा संबधी लेख मिले हैं उनमें गणिकायें, गणिकापुत्रियाँ, नर्तकियाँ और लुहार, सुनार, गधीगिर आदि जातियों के लोग भी पूजा प्रतिष्ठादि धार्मिक कार्यों मे भाग लेते हुए पाये जाते हैं।

(५) मथुरा के लेखों से सिद्ध होता है कि उत्तर भारत मे मां मातृपरम्परा के उल्लेख की प्रथा थी। वात्सीपुत्र, गोतिमीपुत्र, मोगलिपुत्र, कोशिकी-पुत्र आदि जैसे नाम पाये जाते हैं।

(६) मथुरा के लेखों मे जो जैन मुनियों के गणों, कुलों और शाखाओं के उल्लेख मिलते हैं उनसे कल्पसूत्र की स्थविरावली को प्रामाणिकता सिद्ध होती है।

(७) कदंब वंशो लेखों के अनुसार ४-५ वीं शती के लगभग दक्षिण भारत में निर्ग्रन्थ महाश्रमण, श्वेतपट महाश्रमण तथा यापनीय और कूर्चक सघों का अस्तित्व पाया जाता है। ये सब सम्प्रदाय प्राय. मिल जुल कर रहते थे।

(८) मूलसघ का सर्व प्रथम उल्लेख गग वश के माधव वर्मा द्वितीय और उसके पुत्र अविनीत (सन् ४००-४२५ के लगभग) के लेखों में पाया जाता है। किन्तु इन लेखों से किसी गण, गच्छ, अन्वय आदि का कोई उल्लेख

नहीं है। गण गच्छादि के उल्लेख सन् ६८७ और उसके पश्चात्कालीन लेखों में उत्तरोत्तर बढ़ते हुए पाये जाते हैं।

(६) पाँचवीं छठी शती के लेखों में नन्दिसंघ और नन्दिगच्छ तथा श्री मूलमूलगण और पुन्नागवृक्षमूलगण के उल्लेख यापनीय संघ के अन्तर्गत मिलते हैं। ग्यारहवीं शती से नन्दि संघ का उल्लेख द्रविड संघ के साथ तथा बारहवीं शती से मूलसघ के साथ दिखाई पड़ता है।

(१०) यापनीय संघ के अन्तर्गत बलहारि या बलगार गण के उल्लेख दशवीं शती तक पाये जाते हैं। ग्यारहवीं शती से बलात्कार गण मूलसघ से सबद्ध प्रकट होता है।

(११) मर्करा के जिस ताम्रपत्र लेख के आधार पर कोण्डकुन्दान्वय का अस्तित्व पाँचवीं शती में माना जाता है वह लेख परीक्षण करने पर बनावटी सिद्ध होता है, तथा देशीय गण की जो परम्परा उस लेख में दी गई है वहों लेख नं० १५० (सन् ६३१) के बाद की मालूम होती है।

(१२) कोण्डकुन्दान्वय का स्वतंत्र प्रयोग आठवीं नौवीं शती के लेख में देखा गया है तथा मूलसघ कोण्डकुन्दान्वय का एक साथ सर्व प्रथम प्रयोग लेख नं० १८० (लगभग १०४४ ई०) में हुआ पाया जाता है।

डॉ० चौधरी की प्रस्तावना में प्रकट होने वाले ये तथ्य हमारी अनेक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक मान्यताओं को चुनोती देने वाले हैं। अतएव उनपर गभीर विचार करने तथा उनसे फलित होने वाली बातों को अपने इतिहास में यथोचित रूप से समाविष्ट करने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से इन शिलालेखों तथा डॉ० चोधरी की प्रस्तावना का यह प्रकाशन बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

मुजफ्फरपुर,
१४–३–१९५७

हीरालाल जैन
डायरेक्टर, प्राकृत जैन विद्यापीठ,
मुजफ्फरपुर (बिहार)

प्रकाशकीय निवेदन

जैन-शिलालेख संग्रह का पहला भाग सन् १६२८ में निकला था। दूसरा भाग उसके चौबीस वर्ष बाद सन् १६५२ में और यह तीसरा भाग उसके लगभग पाँच वर्ष बाद प्रकाशित हो रहा है। अर्थात् सब मिलाकर इन तीन भागों के प्रकाशन में कोई तीस वर्ष लग गये।

पहले भाग के साथ मे सुहृद्वर डा० हीरालाल जी ने उसके लेखों का १६२ पृष्ठों का एक सुविस्तृत अध्ययन लिखा था। दूसरे भाग के साथ उसके लेखों का परिचय देने का कोई प्रबन्ध न हो सका, इसलिए अब इस तीसरे भाग में दोनों भागों के लेखों का अध्ययन करके डा० गुलाबचन्द्र जी चौधरी, एम० ए०, पी-एच० डी०, आचार्य ने १७५ पृष्ठों की भूमिका लिख दी है जिसमें जैन सम्प्रदाय के संघों, गणों, गच्छों, राजवंशों, सामन्तों, श्रेष्ठियों, जैन-तीर्थों आदि पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

डा० चौधरी स्याद्वाद विद्यालय काशी के स्नातक हैं और इस समय नालन्दा के पाली बौद्ध विद्यापीठ में पुस्तकाध्यक्ष एवं प्राध्यापक हैं। दो वर्ष पहले इन्हें हिन्दूविश्वविद्यालय से "पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ नादर्न इण्डिया फ्राम जैन सोर्सेज्" से (जैन स्रोतों से प्राप्त किया गया उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास) महानिर्बन्ध पर 'डाक्टरेट' की उपाधि मिली थी। चूँकि जैन साधनों से उक्त महानिबन्ध तैयार किया गया था, और इसके लिए इन्हें अनेक शिलालेखों की भी छान-बीन करनी पड़ी थी, इस लिए इस ग्रंथ की यह भूमिका लिखने के लिए वही उपयुक्त समझे गये और उन्होंने भी मेरे आग्रह को स्वीकार कर लिया। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि उन्होंने यह काम एक इतिहास-संशोधक की दृष्टि से बड़ी लगन के साथ परिश्रमपूर्वक किया है। इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

इसमे ऐसी अनेक बातों पर प्रकाश डाला गया है जो अभी तक अन्धकार मे थीं और जिनकी ओर ध्यान देना इतिहासज्ञों के लिए परम आवश्यक है। इनमें से कुछ बातों की तरफ डा० हीरालाल जी ने 'प्राक्कथन' में हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

इन तीन भागों में वे सब लेख आ गए हैं जिनकी सूची डा० गेरिनो ने सकलित की थी और जिसका नाम Repertoire de Epigraphie Jaina है।

उक्त सूची के प्रकाशित होने के बाद और भी सैकड़ों लेख प्रकाश में आये हैं और उनका प्रकाशित होना भी आवश्यक है। परन्तु माणिक्यचन्द्र ग्रन्थमाला का फण्ड समाप्त हो गया है और इधर दीर्घकालव्यापिनी अस्वस्थता के कारण मेरी शक्तियों ने भी जवाब दे दिया है, इसलिए अब यह आशा तो नहीं है कि उक्त लेख-सग्रह भी चौथे भाग के रूप मे प्रकाशित कर सकूँगा। फिर भी विश्वास तो रखना ही चाहिए कि किसी न किसी इतिहास प्रेमी के द्वारा यह आवश्यक कार्य अविलम्ब पूरा होगा। मुझे सन्तोष है कि मेरी एक बहुत बड़ी आशा इन तीस वर्षों मे किसी तरह पूरी हो गयी।

दूसरे भाग के समान इस भाग का सकलन भी श्री विजयमूर्ति जी एम० ए०, शास्त्राचार्य ने किया है। इसमें उन्हें भी बहुत परिश्रम करना पड़ा है। विभिन्न लाइब्रेरियों में जाकर 'इण्डियन एण्टीक्वेरी', 'एपीग्राफिया इंडिका' आदि की पुरानी फाइलों में से प्रत्येक लेख को ढूँढना, उन्हें रोमन लिपि से नागरी मे उतारना और फिर उनका साराश लिखना समयसाध्य और श्रमसाध्य तो है ही। इसके लिए वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

बम्बई
२४-२-५७

नाथूराम प्रेमी
मंत्री

प्रस्तावना

१. जैनों का अभिलेख साहित्य: एक परिचय

भारतीय इतिहास के विविध अंगों के ज्ञान के लिए अभिलेख साहित्य बड़ा ही प्रामाणिक साधन है। यह साधन भारतवर्ष में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध भी है और विशेष कर दक्षिण भारत में। जैनों का अभिलेख साहित्य बड़ा ही विशाल है। वैसे तो जैनों के ये लेख भारतवर्ष के प्रत्येक कोने से प्राप्त हुए हैं। पर इनका प्राचुर्य दक्षिण और पश्चिम भारत में विशेषतः देखा जाता है।

ये लेख जल्दी न नष्ट होने वाले पाषाण एवं धातु द्रव्यों पर उत्कीर्ण पाये जाते हैं। इसलिए इनमें कालान्तर में सम्भावित संशोधन और परिवर्तन की वैसी कम गुंजाइश होती है जैसी कि अन्य साहित्यिक कृतियों में देखी जाती है। इसलिए इनसे प्राप्त होने वाले तथ्यों को प्रथम श्रेणी का महत्त्व दिया जाता है।

पाषाणनिर्मित द्रव्यों पर पाये जाने वाले जैनों के लेख कई प्रकार के हैं, जैसे चट्टानों एवं गुफाओं में मिलने वाले लेख, उदाहरण के रूप में लेख नं० २,७,९१ एवं एलोरा, पञ्चपाण्डवमलै, वल्लीमलै और तिरुमलै से प्राप्त लेख; मंदिरों से प्राप्त लेख, जैसे श्रवण बेल्गोल हुम्मच एवं अन्य तीर्थ स्थानों के कई लेख; मूर्तियों के पादुका पट्ट पर उत्कीर्ण लेख जैसे श्रवण बेल्गोल, आबू, गिरनार, शत्रुंजय, महोबा, खजुराहो, ग्वालियर से प्राप्त होने वाले कतिपय प्रतिमा-लेख; स्तम्भों पर उत्कीर्ण लेख, जैसे मथुरा से प्राप्त लेख नं० ४३,४४ एवं कहायूं का लेख तथा दक्षिण भारत से प्राप्त मानस्तम्भो एवं सल्लेखना मरण के स्मारक स्वरूप निर्मित निषिधिकलों पर के लेख; मथुरा से प्राप्त कतिपय लेख स्तूपों पर तथा शिलापट्टों पर, मथुरा के आयागपटों के लेख और शासन पत्र के रूप में लेख नं० २२८,३३२,३७४ आदि प्राप्त हुए हैं।

ताम्रादि धातुओं पर भी उत्कीर्ण अनेकों जैन लेख पाये जाते हैं, उदाहरण के रूप में मर्करा का ताम्रपत्र एवं कदम्ब वंश के कतिपय लेख समझने चाहिये।

इन लेखों में अधिकांश पर काल निर्देश देखा गया है, चाहे वह शासन करने वाले राजा का संवत् हो, चाहे वह शक संवत्, विक्रम संवत् या ज्योतिष् शास्त्रप्रणीत प्लवङ्ग, खर आदि संवत् हो। ये संवत् राजनीतिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व के हैं।

जैन लेखों की प्रकृति समझने के लिये, हम उन्हें अनेक दृष्टियों से विभक्त कर सकते हैं, जैसे उत्तर भारत के लेख, दक्षिण भारत के लेख, दिगम्बर सम्प्रदाय के, श्वेताम्बर सम्प्रदाय के, राजनीतिक, धार्मिक तथा भाषावार संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, तामिल आदि,इसी तरह लिपि के अनुसार भी। पर वास्तव में इनके दो ही भेद करना ठीक है, एक तो राजनीतिक शासन पत्रों के रूप में या अधिकारिवर्ग द्वारा उत्कीर्ण और दूसरे सांस्कृतिक, जनवर्ग से सम्बधित। राजनीतिक एवं अधिकारिवर्ग से सम्बधित लेख प्रायः प्रशस्तियों के रूप में होते हैं। इनमें राजाओं की अनेक विरुदावली, सामरिक विजय, वंश परिचय आदि के साथ मंदिर, मूर्ति या पुरोहित आदि के लिए भूमिदान, ग्रामदानादि का वर्णन होता है। सांस्कृतिक एवं जनवर्ग से सम्बधित लेखों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। ये लेख अपनी धार्मिक मान्यता के लिए भक्त एवं श्रद्धालु पुरुष या स्त्रीवर्ग द्वारा लिखाये जाते थे। ऐसे लेख १-२ पंक्ति के रूप में मूर्ति के पादुकापट्टों पर तथा कुटुम्ब एवं व्यक्ति की प्रशंसा में उच्च कोटि के काव्य रूप में भी पाये जाते हैं। इनसे अनेक जातियों के सामाजिक इतिहास और जैनाचार्यों के संघ, गण, गच्छ, पट्टावली के रूप में धार्मिक इतिहास के अतिरिक्त सांस्कृतिक एवं राजनीतिक इतिहास का परिचय मिलता है। इन लेखों में प्रायः मूर्तियों, धर्मस्थानों, और मंदिरों के निर्माण का काल अङ्कित रहता है। जिससे कला और धर्म के विकास-क्रम को समझने में बड़ी सहायता मिलती है, और सामाजिक स्थिति का परिज्ञान—एक देश से दूसरे देश में जैन कब फैले और वहाँ जैन धर्म का प्रसार अधिकाधिक कब हुआ—भी हो जाता है। अनेक जैन भक्त पुरुषों और महिलाओं के नाम भी इन लेखों से

ज्ञात होते हैं जो कि भाषाशास्त्र की दृष्टि से वड़े महत्व के हैं। अधिकांश नाम अपभ्रंश और तत्कालीन लोक भाषा के रूप को प्रकट करते हैं।

प्रस्तुत लेख संग्रह से ज्ञात सांस्कृतिक इतिहास का एक छोटा चित्र यहाँ दिया जाता है। लोग अपने कल्याण के लिए, माता, पिता, भाई, वहिन आदि के कल्याण के लिए, गुरु के स्मृत्यर्थ, राजा, महामण्डलेश्वर आदि के सम्मानार्थ मंदिर या मूर्ति का निर्माण कराते थे और उनकी मरम्मत, पूजा, ऋषियों के आहार, पुजारी की आजीविका, नये कार्यों के लिये तथा शास्त्र लिखने वालों के भोजन के लिए दान देते थे। दातव्य वस्तुओं में ग्राम, भूमि, खेत, तालाव, कुँआ, दुकान, भवन, कोल्हू, हाथ के तेल की चक्की, चावल, सुपारी का वगीचा, साधारण वगीचे, चुंगी से प्राप्त आमदनी, तथा निष्क, पण, गद्याण, होन्नु (ये सब एक प्रकार के सिक्के हैं) घी एवं मुफ्त श्रम आदि हैं। एक लेख (१९८) मे ब्राह्मण को कुमारिकाओं की भेंट का उल्लेख है जो देवदासी प्रथा की याद दिलाता है। ग्राम या भूमि के दान मे प्रायः यह ध्यान रखा जाता था कि वे दान सर्व करों से मुक्त कराकर दिये जाँय (२२६,४०४ आदि)। उत्सवों पर ही दान देने की प्रथा थी। वहुत से लेखों से ज्ञात होता है कि दानादि द्रव्य, चंद्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, उत्तरायण-संक्रांति या पूर्णिमा आदि के दिन दान दिये जाते थे (१०२ १२७,३०१,६४९ आदि)। मूर्तियों के निर्माण मे हम देखते हैं कि लोग प्रायः तीर्थंकरों की मूर्तियाँ वनवाते थे—उनमे विशेषतः आदिनाथ, शान्तिनाथ, चंद्रप्रभ, कुंथुनाथ, पार्श्वनाथ एवं वर्धमान की मूर्तियाँ होती थीं। तीर्थंकरों के अतिरिक्त हम दक्षिण भारत मे वाहुवली की मूर्ति भी देखते हैं। भक्त या शिष्यगण अपने आचार्यों की मूर्तियाँ या पादुका (चरण) भी वनवाते थे। यक्ष-यक्षिणियों की पूजा भी प्रचलित थी। हुम्मच पद्मावती की पूजा का प्रमुख केन्द्र था। लेखों में अम्बिका देवी (३४६) और ज्वालामालिनी (७५८) की मूर्तियों का भी उल्लेख मिलता है। प्रतिमाएं प्रायः पाषाण और धातु की वनती थीं, पर एक लेख (१९७) में पंच धातु की प्रतिमा का उल्लेख है। मंदिर प्रायः पाषाण या ईंट के वनते थे, पर कुछ लेखों (२७७,२०४) में लकड़ी

के मंदिर का भी उल्लेख है। पूजा के अनेक प्रकार होते थे (३३८)।

धर्मप्राण महिलावर्ग एवं पुरुषवर्ग सारे जीवन को धर्म की आराधना में व्यतीत कर अन्तिम क्षणों में समाधिमरण पूर्वक देहोत्सर्ग करता था। चौदहवीं शताब्दी के लगभग दक्षिण प्रांत में जैन महिलावर्ग के बीच सतीप्रथा का भी प्रवेश हो गया था (५५६,५७४,६०५)। राजघराने की महिलाएँ अपने पति के शासन में हाथ बटाती थीं।

जमीन प्रायः नापकर दान में दी जाती थी। लेखों में विविध प्रकार की नापों का उल्लेख है जैसे निवर्तन (लेख नं० १०१,१६०२) मेरुदण्ड दण्ड (१८१) मत्तर (२१०) कम्म (२४१) कुण्डिदेश दण्ड (३३४) हाथ (३२०) तथा स्तम्भ (३३४) आदि। चावल आदि की नाप के लिए मत्त (१८१) तथा तेल की नाप के लिए करघटिका (२२८) का भी उल्लेख मिलता है।

विविध प्रकार के आय करों के नाम भी लेखों से ज्ञात होते हैं। जैसे अविनाय बावदण्ड विरै (१६७, तामिल देश में , सिद्धाय कर (३१२) नमम्य (२१०) हालदारे (६७३)। तत्कालीन अनेकों सिक्कों के नाम भी लेखों में मिलते हैं, जैसे गुप्त कालीन कार्षापण (६४) निष्क (४६४) सुवर्ण गद्याण (१६७) लोक्कि गद्याण (२५३) गद्याण (१६७,६७३) होन्नु (४११,६७३) विंशोपक (२२८) आदि।

गाँव के अधिकारी के रूप में सेनबोव (पटवारी, २१०,२२६,२५१) महामहत्तु, (७१०) एवं हेग्गडे या पेर्गडे (२०८) के नाम पाते हैं। पटवारी लोग अच्छे पढ़े लिखे होते थे। एक लेख (२५१) में एक पटवारी को लेख रचने वाला लिखा है।

यह एक छोटा सा चित्र है। विस्तृत के लिए भूमिका के विविध प्रकरणों को देखना चाहिये।

लेख पद्धतिः—प्रत्येक पाषाण लेख या ताम्र लेख, यदि वह बहुत ही छोटा केवल नाम मात्र का या छोटा-सा दानपत्र नहीं हुआ तो, प्रायः देखा गया

है कि उसमें एक निश्चत शैली का अनुसरण किया जाता है। प्रारम्भ में बहुधा मंगलाचरण होता है। वह छोटे वाक्य के रूप में 'सर्वज्ञाय नमः,ॐ नमः सिद्धेभ्यः' आदि या पद्य के रूप में जिनशासन को नमस्कार या किसी देवता या अनेक देवताओं को नमस्कार आदि। इसके बाद प्रशस्ति प्रारम्भ होती है जिसमें राजा के नाम युद्ध में विजय आदि तथा वंशपरम्परा का वर्णन होता है। यह वर्णन कभी कभी ऐसे साचे में ढले हुए के समान होता है कि एक राजा के शासनकाल के सभी लेखों में एकसा विवरण मिलता है। लेख का यही हिस्सा राजनीतिक इतिहास के विद्यार्थी के लिए बड़े महत्त्व का होता है। इस अंश के बाद राजा से भिन्न अगर कोई दाता है तो उसका, उसके वंश एव वैभव आदि का वर्णन आता है। साथ मे देय पात्र का वर्णन आता है। यदि वह मुनि व आचार्य हुआ तो उसकी गुरुपरम्परा संघ, कुल, गण, गच्छ, अन्वय आदि का वर्णन होता है। यदि वह मंदिर आदि धर्मस्थान हुआ तो उसका भी वर्णन होता है। इसके बाद देय वस्तु- धन, जमीन, कर, शुल्क, तेल आदि जो होता है उसका भी खुलासा वर्णन मिलता है। जमीन के दान में उसकी सभी परिधियों का वर्णन होता है। इसके बाद दान की रक्षा के लिए विशेष अनुरोध किया जाता है। इसमे दान को जो क्षति पहुचाते हैं उनकी भर्त्सना और जो रक्षा करते हैं उनके प्रशंसावाक्य दिये जाते हैं। अंत मे लेख को उत्कीर्ण करने वाले का या निर्माता का नाम होता है।

जैन लेख संग्रह.—जैन शिला लेखों की संख्या इतनी अधिक है कि उनका सग्रह एक जगह करना कठिन है। इधर माणिकचंद्र दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला से दिगम्बर सम्प्रदाय से सम्बंधित लेखों का संग्रह तीन भागो में निकला है। बाबू कामताप्रसाद ने एक छोटा प्रतिमालेख संग्रह निकाला है। वैसे ही श्वेताम्बर जैन शिलालेखो के संग्रह स्वर्गीय बाबू पूरणचंद्र नाहर ने जैन लेख संग्रह नाम से तीन भाग में, मुनि जयंतविजय जी ने अर्बुद प्राचीन लेख सग्रह पाच भाग मे, विजयधर्म सूरि के प्राचीन लेख संग्रह और जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह एवं मुनि कातिसागर जी का जैन प्रतिमा लेख दो भाग तथा उपाध्याय विनयसागर जी का प्रतिष्ठा लेख संग्रह आदि प्रकाशित हो चुके हैं।

जैन धर्म और जैन समाज के इतिहास निर्माण में इन लेखों का जितना महत्व है वैसा ही भारतीय इतिहास के लिखने में भी है। भारतीय इतिहास के अनेक परिच्छेदों के निर्माण करने में, उन्हें संशोधित एवं प्राप्त तथ्यों को दृढ़ करने में इन लेखों का बड़ा उपयोग है। भारतीय इतिहास के निर्माण में जैन साहित्यिक उपादानों की भले ही अब तक उपेक्षा हुई हो पर वर्षा, सर्दी एवं गर्मी के आघातों से सुरक्षित इन लेखों से प्राप्त अटल तथ्यों को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

प्रस्तुत लेख सग्रह'—प्रस्तुत लेखों का संग्रह श्रद्धेय पं० नाथूराम जी प्रेमी की सत्कृपा एवं प्रेरणा का फल है। इसके प्रथम भाग का संकलन एवं सम्पादन डा० हीरालाल जी जैन ने २८-२९ वर्ष पहले किया था। उक्त भाग में ५००लेख श्रवण बेलगोल और उसके आस पास के कुछ स्थानों के हैं। इसके बहुत वर्षों बाद श्रद्धेय प्रेमी जी ने पं०विजयमूर्ति जी एम० ए० शास्त्राचार्य से द्वितीय एवं तृतीय भाग का संकलन कराया। इन दो भागों में ८८६लेख संग्रहीत हैं। इसके संकलन में प्रसिद्ध फ्रेन्च विद्वान् स्व० ए० गेरोनो द्वारा प्रकाशित जैन शिलालेखों की एक विस्तृत तालिका Repertoire Epigraphie Jaina की सहायता ली गई है। वह तालिका सन् १९०८ में प्रकाशित हुई थी, इसलिए इस संग्रह में उक्त सन् या उससे पहले तक के प्रकाशित लेख ही आ सके हैं, बाद का एक भी लेख नहीं। सभी लेखों का संग्रह तिथिक्रम से किया गया है। उनमें प्रथम भाग में प्रकाशित लेखों का एवं श्वेताम्बर लेखों का यथास्थान निर्देश मात्र कर दिया गया है इससे ग्रन्थ का कलेवर बढ़ नहीं सका।

सन् १९०८ से अब तक अनेक जैन लेख प्रकाश में आ चुके हैं। उनका भी तिथिक्रम से संकलन आवश्यक है। ग्रन्थमाला को चाहिये कि उन लेखों को भी संग्रह कराकर प्रकाशित करे।

२ मथुरा के लेख: एक अध्ययन

प्रस्तुत संग्रह में मथुरा से प्राप्त ८५ लेख संग्रहीत हैं। इनमें नं० ४ से लेकर १६ तक के लेखों को अक्षरों की बनावट की दृष्टि से डा० बूल्हर ने ईसा

पूर्व १५० से लेकर ईसा की प्रथम शताब्दी के बीच का सिद्ध किया है। नं० १७ से ८६ तक के लेख कुषाणकालीन हैं जिनमें कुछेक पर सम्राट् कनिष्क, हुविष्क एवं वासुदेव के राज्यसंवत्सर दिये गये हैं और कुछेक बिना संवत्सर के हैं। शेष लेख गुप्तकाल से लेकर ११वीं शताब्दी तक के हैं।

इनमें से ८ लेख तो आयागपटों[1] पर, २ लेख ध्वज[2] स्तम्भों पर, ३ लेख तोरणों[3] पर, १ लेख नैगमेष[4] (यक्षप्रतिमा) पर, १ लेख सरस्वती[5] की मूर्ति पर, ५ लेख सर्वतोभद्र[6] प्रतिमाओं पर, और शेष लेख प्रतिमापट्ट या मूर्तियों की चौकियों पर उत्कीर्ण मिले हैं।

उक्त तथा अन्य मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त हुई थी। इस टीले पर कंकाली देवी का एक मन्दिर है। मन्दिर भी एक छोटी-सी झोपड़ी के रूप में है, जिसमें नक्काशीदार एक स्तम्भ का टुकड़ा रखा गया है, जिसे लोग कंकाली देवी मानकर पूजते हैं। इस तरह देवी के नाम से इस टीले का नाम कंकाली पड़ गया।

इसकी सर्व प्रथम खुदाई सन् १८७१ में जनरल कनिंघम ने की थी जिसमें उन्हें तीर्थंकरों की अनेक मूर्तियाँ मिलीं जिनमें कुछ पर कुषाण वंशी प्रतापी सम्राट् कनिष्क के ५ वें वर्ष से लेकर वासुदेव के राज्य के कुषाण संवत् ९८ तक के लेख खुदे। दूसरी खुदाई सन् १८८८-९१ में डा० फ्यूरर ने विस्तृत रूप से की जिससे ७३७ मूर्तियाँ तथा अन्य शिल्पसामग्री प्राप्त हुई। उसके पश्चात् पं० राधाकृष्ण ने भी यहाँ की खुदाई की और अनेक महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त की। इस तरह कंकाली टीला जैन सामग्री के लिए एक निधान सिद्ध हुआ। यहाँ से अनेक

१—नं० ५,८,९,१५,१७,७१,७३,८१

२—नं० ४३,४४

३—नं० ४,१४,६८

४—नं० १३

५—नं० ५५

६—नं० २१,२६,२७,४१,१७३

प्रकार की हिन्दू और बौद्ध सामग्री भी प्राप्त हुई है जिससे ज्ञात होता है कि जैन धर्म की बढ़ती देखकर, हिन्दुओं और बौद्धों ने भी मथुरा को अपना केन्द्र बना लिया था। यह स्थान प्राचीन काल में जैनियों का अतिशय क्षेत्र था।

डा० फ्यूरर को इसी टीले से एक जैन स्तूप भी मिला था। स्तूप की एक ओर विशाल मन्दिर दिगम्बर सम्प्रदाय का और दूसरा श्वेताम्बर सम्प्रदाय का मिला, पर वे खनन कार्य की असावधानी से छिन्न भिन्न हो गये। खोदने के समय के फोटुओं में ये तथ्य अब भी मौजूद हैं। लेख नं० ५६ से ज्ञात होता है कि इस स्तूप का नाम 'देवनिर्मित बौद्ध स्तूप' था। लेख एक प्रतिमा की चोकी पर पाया गया है जो उक्त स्तूप पर प्रतिष्ठित की गई थी। लेख में कुषाण संवत् ७६ दिया गया है। इस संवत् में कुषाण नरेश वासुदेव का राज्य था। ईस्वी सन् की गणना में इस मूर्ति की प्रतिष्ठा ७६ + ७८=१५७ ईस्वी में हुई थी। उस समय भी यह स्तूप इतना पुराना हो गया था कि लोग इसके वास्तविक बनाने वाले को एकदम भूल गये थे और उसे देवों का बनाया (देवनिर्मित) हुआ मानते थे। इससे प्रतीत होता है कि 'बौद्ध स्तूप' बहुत ही प्राचीन स्तूप था जिसका कि निर्माण कम से कम ईसा पूर्व ५-६ वीं शताब्दी में हुआ होगा। इस अनुमान की पुष्टि का दूसरा प्रमाण यह भी है कि तिब्बतीय विद्वान् तारनाथ ने लिखा है कि मौर्य-काल की कला यक्ष-कला कहलाती थी और उससे पूर्व की कला देवनिर्मित-कला। अतः सिद्ध है कि ककाली टीले का स्तूप कम से कम मौर्य-काल से पहले अवश्य बना था। जिनप्रभ सूरि (१३ वी १४ वीं ई न०) ने विविधतीर्थकल्प में लिखा है कि पहले यह स्तूप स्वर्ण का बना था, इसमें रत्न जड़े थे, इसे मुनि धर्मरुचि और धर्मघोष की इच्छा से कुवेरा देवी ने सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ की पुण्यस्मृति में बनवाया था। तत्पश्चात् २३ वें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ के समय में इसका निर्माण ईंटों से हुआ था और पाषाण का एक मन्दिर इसके बाहर बनाया गया था। पुनः वीर भगवान् के केवलज्ञान प्राप्त करने के १३०० वर्ष बाद बप्पभट्टि सूरि ने इस स्तूप को भग० पार्श्वनाथ के नाम पर अर्पण करने के लिए इसकी मरम्मत कराई थी। भग० महावीर को केवलज्ञान की

प्राप्ति ईसा से लगभग ५५० वर्ष पहले हुई थी, अतः इस स्तूप की मरम्मत १३०० वर्ष बाद अर्थात् सन् ७५० के लगभग में हुई होगी। और पार्श्वनाथ के समय में इसके ईंटों से बनाये जाने का काल ईसा से ६०० वर्ष से भी पूर्व निश्चित होता है। सम्भव है देवनिर्मित शब्द यही द्योतित करता है। यदि यह सम्भावना ठीक है तो भारत वर्ष के जितने स्तूप एवं इमारतें हैं उनमें यह स्तूप सबसे प्राचीन समझना चाहिये।

स्तूप का मूल अभी तक विद्वानों के विवाद का विषय है। किन्हीं का मत है कि यह प्राचीन यज्ञशालाओं का अनुकरण है जब कि दूसरे इसे भग० बुद्ध के उलटकर रखे गये भिक्षापात्र के आधार पर निर्मित मानते हैं। कभी कभी विशिष्ट पुरुषों के स्मारक रूप मे भी स्तूप बनते थे और उसमें उनके अस्थिफूल रखे जाते थे। पर यह आवश्यक नहीं कि सभी स्तूप ऐसे हों। सारनाथ के धमेख स्तूप और चौखण्डी स्तूप में कनिंघम को कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ।

स्तूप का तलभाग गोल होता है। नीचे एक गोल चबूतरा, उसके ऊपर ढोल या कुएं के आकार की इमारत और उसके भी ऊपर एक अर्ध गोलाकार गुंबज (छतरी) होती है। चबूतरे पर स्तूप के चारों ओर एक प्रदक्षिणा पथ छोड़कर पत्थर की लम्बी खड़ी और आड़ी पटरियों का एक घेरा (Railing) बना रहता है। इस घेरे में अधिकतर चारों दिशाओं में तोरण (gate way) बने होते हैं। ये तोरण बड़े ही सुन्दर बनाये जाते हैं। पत्थर के दो स्तम्भ खड़े करके उनके ऊपर के सिरे पर तीन आड़ी पटरियाँ लगा देते हैं। उन्हीं के नीचे से आने जाने का रास्ता रहता है। तोरण तक जाने के लिए सीढ़ियां रहती हैं। ये स्तूप पोले और ठोस दोनों तरह के मिले हैं।

मथुरा के जैन स्तूप का वर्णन इस प्रकार है:—इस स्तूप के तले का व्यास ४७ फीट था। यह ईंटों का बना था, ईंटें आपस में बराबर न थीं किन्तु छोटी बड़ी थीं। इसकी भूमि का ढाँचा इक्के गाड़ी के आकार का था। केन्द्र से बाहर की दीवार तक आठ व्यासार्ध, जिनपर आठ दीवारें स्तूप के भीतर-भीतर ऊपर तक बनी थीं। इन दीवारों के बीच में मिट्टी भरी हुई मिली है। कदाचित् यह स्तूप

ठोस था और गृहनिर्माण की मितव्ययिता के कारण भीतर की ओर केवल ये दीवारें ही बना दी गई थीं। इस कारण भीतर के कुछ हिस्से में ईंट चिनने की जरूरत न रही। स्तूप के बाहर की ओर तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ बनी थी।

यहाँ एक और जैन स्तूप था, उस पर का बहुत छोटा सा लेख मिला है। वह ईसा की तीसरी या चौथी शताब्दी का मालूम होता है।

इन स्तूपों के अतिरिक्त यहाँ कई आयागपट्ट मिले हैं। जिनसे ८ लेख प्रस्तुत सग्रह मे सकलित हुए हैं। ये आयागपट्ट पत्थर के वे चौकोर पटिये होते हैं जो अनेकों प्रकार के माङ्गलिक चिन्हों से अकित करके किसी तीर्थंकर को चढ़ाये जाते थे। मथुरा के इन आयाग पट्टों का जैन कला मे विशेष स्थान है। एक आयागपट्ट (जिस पर लेख न० ७१ उत्कीर्ण है) पर १ मीन मिथुन, २ देव विमान गृह, ३ श्रीवत्स, ४ वर्धमानक, ५ त्रिरत्न, ६ पुष्पमाला, ७ वैजयन्ती और ८ पूर्णघट ये अष्ट मागलिक चिह्न मिले हैं। दूसरे अन्य आयागपट्टों पर नद्यावर्त स्वस्तिक, कमल आदि चिह्न अङ्कित हैं।

इन पर उत्कीर्ण लेखों से ज्ञात होता है कि ये मन्दिरों मे अर्हन्तों की पूजा के लिए रखे जाते थे। अधिकाश न अर्हन्तों की प्रतिमाएं हैं, कुछ में चरणचिह्न हैं। तीन आयागपट्टों पर स्तूपों के चित्र अङ्कित मिले हैं। लेख न० ८ और १५ वाले आयागपट्ट इनमें से ही हैं। लेख न० ८ वाला आयागपट्ट (मथुरा सग्रहालय २) अधिक महत्व का है। अनुमान किया जाता है कि उक्त आयागपट्ट पर उत्कीर्ण तोरण और वेदिका मण्डित स्तूप मथुरा के विशाल जैन स्तूप की प्रतिकृति है। लेख के अनुसार श्रमणों की श्राविका गणिका लोणशोभिका की पुत्री गणिका वासु ने अपनी माता, पुत्री, पुत्र और अपने समस्त कुटुम्ब के साथ अर्हत् का एक मन्दिर एक आयागसभा, पानीगृह और एक पाषाणासन बनवाये।

इसके अतिरिक्त ककाली टीले से स्तूप की प्रतिकृति और पूजन आदि के महोत्सव को चित्रित करनेवाले कुछ इमारतों के अंश भी मिले हैं। लेख न०

६८ ऐसे ही एक तोरण के ऊपर से लिया गया है। इस तोरण पर एक नग्न साधु चित्रित है जिसकी कलाई पर एक खण्ड वस्त्र लटका हुआ[1] है।

यहाँ से सैकड़ों जैन तीर्थंकरों एवं यक्ष-यक्षिणियों की मूर्तियाँ मिली हैं। ये मूर्तियाँ बड़े सादे ढंग से बनाई गई हैं। तीर्थंकरों की मूर्तियाँ खड्गासन एव पद्मासन दोनों प्रकार की मिली हैं। प्रारम्भिक शताब्दियों की मूर्तियाँ नग्न हैं। इनमें अधिकाश मूर्तियाँ आदिनाथ, अजितनाथ, सुपार्श्वनाथ, शान्तिनाथ, अरिष्टनेमि और वर्धमान की मिली हैं। उस काल मे तीर्थंकर के चिन्हों—लाञ्छनों—का आविष्कार न होने के कारण मूर्तियो में प्रायः एक दूसरे से भेद नहीं है। हाँ, आदिनाथ के केश (जटाएं) तथा पार्श्व और सुपार्श्व के सर्पफण इनको पहचानने में सहायता देते हैं। जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ नग्न होने के कारण, वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिन्ह होने से और शिर पर उष्णीष न होने कारण इस काल की बौद्ध मूर्तियों से अलग आसानी से पहचानी जा सकती हैं।

मथुरा से इसी समय की चौमुखी मूर्तियाँ मिली हैं जो सर्वतोभद्रिका प्रतिमा अर्थात् वह शुभ मूर्ति जो चारों ओर से देखी जा सके, कहलाती थीं। इन प्रतिमाओं मे चारों ओर एक तीर्थंकर की मूर्ति बनी होती है। चौमुखी मूर्तियो मे आदिनाथ, महावीर और सुपार्श्वनाथ अवश्य होते हैं। ऐसी मूर्तियाँ कुषाण और गुप्त काल में बहुतायत से बनती थीं। ईस्वी सन् ४७५ के लगभग उत्तर भारत पर हूणों के भयानक आक्रमणों से मथुरा के स्थापत्य को बड़ा धक्का लगा। अत. ईस्वी ६वी के पश्चात् मथुरा से जो नमूने हमें मिले हैं वे भोंड़े और भद्दे हैं। उनमें पहले की सी सजीवता नहीं है। इसी काल के लगभग बिना कपड़ेवाली मूर्तियों मे कपड़े दिखाये जाने लगे, और सर्वप्रथम राजसिंहासन यक्ष यक्षिणी, त्रिछत्र एव गजेन्द्र आदि प्रदर्शित होने लगे जो उत्तर गुप्तकाल और उसके बाद की जैन मूर्तियों के विशेष लक्षण हैं। इन्हीं के साथ मध्यकाल में मथुरा के शिल्पियों ने यक्ष यक्षिणियों और जैन मातृकाओं की भी पृथक

१—बाबू कामताप्रसाद जैन इसे जैनों के अर्धफालकसम्प्रदाय से सबधित बताते हैं, देखो जैन सि० भास्कर भाग ८ अक २ पृष्ठ ६३-६६

मूर्तियाँ बनाना प्रारम्भ की। जैन मातृकाओं मे आदिनाथ की यक्षिणी चक्रेश्वरी, तथा नेमिनाथ की अम्बिका देवी की मूर्तियाँ यहाँ मिली हैं। यक्ष धरणेन्द्र की मूर्ति भी मिली है।

इन मूर्तियों के सिवाय यहाँ नैगमेष नामक एक यक्ष की भी मूर्ति मिली है। नैगमेष या हरि नैगमेष जैन मान्यता के अनुसार सन्तानोत्पत्ति के प्रमुख देवता थे। इनकी पुरुष और स्त्री दोनों विग्रहों में मूर्तियाँ मिली हैं। संभवतः पुरुषशरीर की मूर्तियाँ पुरुषों के पूजने के लिए और स्त्रीशरीर की मूर्तियाँ स्त्रियों के लिए थीं। इनका मुख बकरी के आकार का होता है। इनके हाथों या कन्धों पर खेलते हुए बच्चे चिन्हित किये गये हैं। गले में लम्बी मोती की माला भी है जो कि इनका विशेष चिह्न है। कुषाणकाल में इन मूर्तियों की विशेष पूजा होती थी। लेख न० १३ ऐसी ही एक मूर्ति पर से लिया गया है।

मथुरा से प्राप्त ये लेख ऐतिहासिक, धार्मिक एव सामाजिक दृष्टि से बड़े महत्त्व के हैं। इनमें उल्लिखित शक एव कुषाण राजाओं के नाम तथा तिथियों से हमे उनके क्रमिक इतिहास तथा राज्य काल की अवधि का पता चलता है।

लेख न ५, वें म स्वामी महाक्षत्रप शोडास का सवत्सर ४२ तथा मास दिन दिये हुए हैं। शोडास, महाक्षत्रप रजुवुल का पुत्र एव उत्तराधिकारी था। रंजुवुल शक नरेश मोअ के अधीन मथुरा का महाशासक था। यह मोअ ईसा पूर्व ६० के लगभग अफगानिस्तान एव पजाब का शासक था। उसके अधीन मथुरा का शासक रंजुवुल पीछे स्वतत्र हो गया था जैसा कि उसकी शाही उपाधियों से मालूम होता है। लेख में शोडास की स्वामी एव महाक्षत्रप उपाधियाँ दी गई हैं जो कि उसके स्वतन्त्र शासक होने की परिचायक हैं। यदि उक्त लेख का सवत्सर ४२ विक्रम-सवत् माना जाय जैसा कि स्टीन कोनो सा० का मत है, तो शोडास ईसा पूर्व १७-१६ मे राज्य करता था।

शकों के राज्य पर अधिकार करनेवाले थे कुषाणवशी राजा। इनका राज्य भारत वर्ष पर ईसा की प्रथम शताब्दी के मध्य से स्थापित हुआ था। इस वंश का सबसे बड़ा प्रतापी राजा कनिष्क हुआ, जिसने अपने राज्याभिषेक के समय

से एक संवत् चलाया था जो कि विद्वानों के मत से सन् ७८ ई० से प्रारम्भ होता है। इतिहासज्ञों के अनुसार कनिष्क ने सन् १०० ई० तक अर्थात् २२ वर्ष राज्य किया। इसके बाद उसके उत्तराधिकारी वासिष्क ने सन् १०८ तक, तत्पश्चात् उसके उत्तराधिकारी हुविष्क ने सन् १३८ तक तथा उसके उत्तराधिकारी वासुदेव ने सन् १७६ तक राज्य किया।

प्रस्तुत संग्रह में लेख नं० १६ में देवपुत्र कनिष्क लिखा है और राज्य स० ५ दिया है। इसी तरह लेख नं०२४ में महाराज राजातिराज देवपुत्र षाहि कनिष्क तथा राज्य सं० ७ दिया है और लेख नं० २५ में महाराज कनिष्क तथा स० ६ दिया गया है। इन लेखों के सिवाय लेख नं० १७,१८,१६,२०,२१,२६,२८, २६,३०,३३ और ३४ में राजा का नाम तो अंकित नहीं है पर राज्य संवत्सर से मालूम होता है कि ये कनिष्क के ४थें वर्ष से लेकर २२वें तक के लेख हैं। लेख नं ३५-३८ तक कुषाण सं० २५ से २६ तक के हैं जो कि वासिष्क के के राज्य काल के होते हैं। यद्यपि इनमे राजा का नाम या तो दिया ही नहीं गया या स्पष्ट उत्कीर्ण नहीं हो पाया है। लेख नं० ४० से ५६ तक के लेख कुषाण सं० ३१ से ६० के भीतर के हैं जो कि हुविष्क के शासनकाल के हैं। इनमे लेख नं० ४३,४५,४८,५० और ५६ में तो हुविष्क का नाम दिया हुआ है। लेख न० ५८ से ७० तक कुषाण सं० ६२ से ६८ के अन्तर्गत हैं जो कि वासुदेव के राज्यकाल में पड़ते हैं उनमे से ६२,६५ और ६६ में तो वासुदेव का नाम भी दिया हुआ है। इतिहासज्ञों के मत से लेख नं० ६६ वासुदेव के राज्य की अन्तिम अवधि का द्योतक है।

यहाँ लेखों के सम्बन्ध में यह सब विस्तार पूर्वक इस लिए लिखना पड़ा कि इस संग्रह में भूल से कतिपय लेखों पर दूसरे राजाओं का नाम दिया गया है जो कि इतिहासज्ञों के लिये भ्रम उत्पन्न कर सकता है। इन राजाओं में कनिष्क, वासिष्क एवं हुविष्क तो बौद्ध धर्म प्रतिपालक थे और वासुदेव शैव मत का, पर अपने शासन में वे लोग अन्य धर्मों के प्रति बड़े उदार थे। इनके राज्यकाल में जैन धर्म का हित सुरक्षित था और वह खूब समृद्ध स्थिति में था।

सामजिक इतिहास की दृष्टि से भी ये लेख बड़े महत्व के हैं। इन लेखों में गणिका (८) नर्तकी (१५) लुहार (३१,५४) गन्धिक (४१,४२,६२,६६) सुनार (६७), ग्रामिक (४४) तथा श्रेष्ठी (१६,२६,४३) आदि जातियों या वर्ग के लोगों के नाम मिलते हैं जिन्होंने मूर्ति आदि का निर्माण, प्रतिष्ठा एवं दान कार्य किये थे। इनसे विदित होता है कि २ हजार वर्ष पहले जैन सघ मे सभी व्यवसाय के लोग बराबरी से धर्माराधन करते थे। अधिकाश लेखों में दातावर्ग के रूप में स्त्रियों की प्रधानता है जो बड़े गर्व के साथ अपने पुण्य का भागधेय अपने माता-पिता सास-ससुर पुत्र-पुत्री, भाई आदि आत्मीयों को बनाती थीं (१४)। इन स्त्रियों में बहुतसी विधवाएं थीं जो वैधव्य के शोक से घर गृहस्थी छोड़कर विरक्त हो जैन सघ में आर्यिका हो गयी थीं। लेख न० ४२ मे ऐसी ही स्त्री कुमारमित्रा थी जिसे लेख में आर्या कुमारमित्रा लिखा है तथा उसे सशित, मखित एव बोधित कहा गया है।

इन लेखों से एक और महत्व की बात सूचित होती है कि उस समय लोग अपने व्यक्तिवाचक नाम के साथ माता का नाम जोड़ते थे जैसे वात्सीपुत्र, तेवणीपुत्र, वैहिदरीपुत्र, गोतिपुत्र, मोगलिपुत्र एव कौशिकिपुत्र आदि। ऐसे नाम सास्कृतिक-इतिहास निर्माण की दृष्टि से मूल्यवान् हैं।

जैन धर्म के प्राचीन इतिहास की दृष्टि से मथुरा के ये लेख और भी बड़े महत्त्व के हैं। इन लेखों में मूर्ति के संस्थापक ने न केवल अपना ही नाम उत्कीर्ण कराया है बल्कि अपने धर्मगुरुओं का नाम भी, जिनके कि सम्प्रदाय का वह था। इनमें आचार्यों की उपाधियाँ—आर्य, गणी, वाचक, महावाचक, आतपिक आदि जो कि उस समय प्रचलित थीं, दी गई हैं। लेखों में अनेक गणों, कुलों और शाखाओं के नाम भी दिये गये हैं। ठीक इस प्रकार के गण, कुल एच शाखा, श्वेताम्बर आगम 'कल्पसूत्र' की स्थावरावली मे तथा कुछ वाचक आचार्यों के नाम नन्दिसूत्र की पट्टावली मे मिलते हैं। महत्त्व की बात तो यह है कि लेखों का कुछ हिस्सा घिस जाने या पत्थर के कारीगर द्वारा गलत ढग से उत्कीर्ण

किये जाने या लेखों का गलत छापा लेने तथा नकल को गलत पढ़े जाने पर भी उक्त दोनों पट्टावलियों के कई नामों के साथ साम्य स्थापित किया जा सकता है।

संभव है सम्प्रदाय का नाम गण, उसके विभाग का नाम कुल तथा उसके उपविभाग का नाम शाखा था। ये नाम जैन श्रमणों के उन विभिन्न संघों की ओर संकेत करते हैं जो कि ईसा पूर्व की कुछ शताब्दियों में जैन श्रमणों में अपनी अपनी आचार्य परम्परा और पर्यटन भूमि की विभिन्नता के कारण पैदा होना शुरु हुए थे।

कल्पसूत्र स्थविरावली के अनुसार वर्धमान स्वामी की परम्परा में ६ वीं पीढ़ी में आर्य सुहस्ति हुए जो कि आर्य स्थूलभद्र के अन्तेवासी थे। इन आर्य सुहस्ति के १२ अन्तेवासी थे। इनमें से आर्य रोहण, आर्य कामर्धि, आर्य सुस्थित तथा सुप्रतिबुद्ध एव आर्य श्रीगुप्त से निकलने वाले गण, कुल एव शाखाओं के कई एक नाम लेखों में पहिचाने जा सके हैं।

तदनुसार आर्य रोहण गणी से 'उद्देह' गण निकला जो कि हमारे लेख २४ एव ६६ का 'उद्देकिय' गण समझना चाहिये। उक्त गणके ६ कुल थे जिनमें से केवल दो की पहिचान हो सकी है। 'नागभूय' कुल हमारे लेख न० २४ का 'नागभूतिय' होना चाहिये। 'परिहासक' गलत रूप से लिखा या पढ़ा जाकर लेख नं० ६६ में पुरिध के रूप में प्रतीत होता है। उक्त गण की चार शाखायें थीं जिनमें एक शाखा 'पुरण पत्तिका' लेख न० ६६ की पेतपुत्रिका होना चाहिये।

आर्य कामर्धि गणी से वेसवाडिय गण निकला। यद्यपि यह नाम लेखों में स्पष्ट रूपसे उत्कीर्ण नहीं मिला लेकिन उक्त गणके चारकुलों में से एक 'मेहियकुल' मेहिक के रूप में २६ और ६३ वें लेख में प्राप्त हुआ है।

आर्य सुस्थित एवं सुप्रतिबुद्ध गणी से 'कोडिय' गण निकला जो कि अनेकों लेखों में कोट्टिय के रूप में मिलता है। इस गण के चार कुलों में पहले कुल 'बंभलिज्ज' को तो अनेकों लेखों का ब्रह्मदासिक कुल ही समझना चाहिये। दूसरा 'वत्थलिज्ज' भी लेख न० २७ कावच्छलिय प्रतीत होता है। तृतीय 'वाणिज्ज' कुल

अनेक लेखों से प्राप्त ठानिय कुल के रूप मे प्राप्त हुआ है। इसी तरह चतुर्थ 'पर्णहवाहण' तो पएहवणय कुल (६६) मालुम होता है। उक्त गण की चार शाखायें थीं। प्रथम 'उच्चानगरि' तो अनेक लेखों की उच्छेनगरी ही है। द्वितीय 'विज्जाहरी' शाखा लेख नं० ६२ की विद्याधरी शाखा मालूम होती है। तृतीय 'वइरी' शाखा को हम अनेक लेखों में वेरिय, वेर, वैर, वइर के रूप मे देख सकते हैं। चतुर्थ 'मज्झिमिल्ला' शाखा लेख न० ६६ की मज्झम शाखा ही समझना चाहिये

आर्य श्रीगुप्त गणी से 'चारण' गण निकला था जो कि मथुरा के अनेक लेखों मे वारण गण के रूप में पडा गया है। उससे सम्बन्धित ७ कुलों में से 'पीइ-धम्मित्र' लेख न० ३४ एव ४७ का पेतवमिक मालुम होता है। 'हालिज्ज' कुल लेख न० १७,४४ एव ८० का आर्य हाटिकिय प्रतीत होता है। 'पूसमित्तिज्ज' लेख नं० ३७ का पुश्यमित्रीय तथा 'अज्जवेडय' कुल लेख न० ४५ का आर्यचेटिय एवं नं० ५२ का अय्यमित्त (?) और 'कएहसय' लेख न० ७६ का कनियसिक विदित होते हैं। इसी तरह उक्त गण की चार शाखाओं मे 'हारियमालागारी' लेख न० ४५ की 'हरीतमालकाधी,' 'वजनागरी' लेख न० ११,४४ एवं ८० की वाज-नगरी, 'सकासीआ' लेख नं० ५२ की स (कासिया) तथा 'गवेधुका' लेख न० ७६ में ओद (समव गोदुक) के रूप मे पढ़ी गयी है।

इस तरह ३ गण, १२ कुल एव १० शाखाओं के नाम लेखों और कल्पसूत्र स्थविरावली में बराबर मिल जाते हैं। केवल लेख न० ८२ के वारण गण के नाडिक कुल का मिलान नही हो सका है। संभव है यह नाम अन्य नामों के समान लिखने की अशुद्धियों के कारण अज्ञात सा प्रतीत होता है।

कल्पसूत्र स्थविरावली के अनुसार काल की दृष्टि से इन गणों, कुलों और शाखाओं का आविर्भाव वीर स० २४५-२९१ अर्थात् ई० पूर्व २८२-२३६ के बीच हुआ था और मथुरा के लेखों से मालूम होता है कि ये गुप्त सवत् ११३ अर्थात् सन् ४३४ तक बराबर चलते रहे।

मथुरा के इन लेखों मे उक्त गणों, कुलो एवं शाखाओं के सिवाय अनेकों आचार्यों के नाम आते हैं जो कि वाचक आदि पद से विभूषित थे। श्वेताम्बर आगम नन्दिसूत्र में एक वाचक वंश की पट्टावली दी हुई है, जिसके अनेकों नामों का मिलान शिलालेखों के नामों से किया जा सकता है। उक्त पट्टावली में सुधर्म गणधर की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए ७वें आर्य स्थूलभद्र के शिष्य सुहस्ति से चलने वाले वाचक वंश का वर्णन है जो कि वीर निर्वाण सं० २४५ से लेकर ६६४ तक अर्थात् ई० पूर्व २८२ से लेकर सन् ४६७ तक चलता रहा। उक्त वंश में ही आर्य देवर्धि क्षमाश्रमण हुए थे जिन्होंने वर्तमान श्वेताम्बर आगमों को अन्तिम रूप दिया था। उक्त पट्टावली मे गण, कुल एवं शाखाओं का नाम बिल्कुल नहीं दिया। संभव है वहाँ गण, कुल शाखादि को महत्त्व न दे वाचक पदधारी आचार्यों का नाम ही गिनाया गया है। जो भी हो, यहाँ उक्त पट्टावली और लेखो के कुछ नामों में काल दृष्टि से साम्य प्रकट किया जाता है।

१३—आर्य समुद्र,	वीर नि० स०...	महावाचक, गणि समदि	(ले० नं०५२)
१४—आर्य मंगु[1],	,, ४६७[2]	गणि मंगुहस्ति	(,, ५४)
१५—आर्य नन्दिल क्षमण		आर्य नन्दिक	(,, ४१)
		गणी नन्दी	(,, ६७)
१६—आर्य नागहस्तिं	(,, ६२०[3]-६८६)	वाचक आर्य घस्तुहस्ति	(,, ५४)

१—मुनि दर्शनविजय, पट्टावली समुच्चय, भा० १ पृष्ठ १३ पर आर्य मगुकी गाथा के अनन्तर दो प्रक्षिप्त गाथाएं आती हैं, जिनमे अज्जधम्म, भद्दगुत्त, अज्जवयर, अज्जरक्खित के नाम आते हैं।

२—वही, पृष्ठ ४७, तपागच्छपट्टावली। इस पट्टावलो का रचना काल विक्रम सं० १६४६ है।

३—वही, पृष्ठ १६, 'सिरि दुषमाकाल समणसंघथयं' नामक पट्टावली का

एवं हस्तहस्ति[1] (ले० न०-५५)
२२—भूतदिन्न (वी० नि० ९०४–९८३[2]) दन्तिल (,, ६२)

लेख नं० ५२ पर जिसमें कि महावाचक गणि समदि का नाम आता है, कुषाण संवत् ५० अंकित है जो कि गणना मे वीर निर्वाण सं० ६५५ आता है[3]। नन्दिसूत्र पट्टावली में आर्य समुद्र का नाम आर्य मंगु से पहले आता है। आर्य मंगु का समय पट्टावली के अनुसार वीर नि० स० ४६७ है। यदि यह ठीक है तब तो आर्य समुद्र का समय भी आर्य मगु से पहले होना चाहिये। लेख में दिया गया कुषाण स० ५० (वी०नि० स० ६५५) यदि आर्य समदि का समय है तो इस हिसाब से पट्टावली के समय और लेख के समय में लगभग १८८ वर्ष का अन्तर आता है। पर वास्तव में लेख न० ५२ मे आर्य समदि का समय नहीं दिया गया बल्कि वह आर्य दिनर (?) आदि की एक शिष्या द्वारा मूर्ति स्थापना का समय है। उक्त लेख में समदि शब्द के बाद कई अक्षर घिस गये हैं। यदि

' रचना काल वि० स० १३२७ है।

१. शुद्ध नाम हस्ति-हस्ति प्रतीत होता है। हस्ति का पर्यायवाची नाग होता है। यह समव है कि नागहस्ति को लेख में हस्ति-हस्ति लिखा गया है। संभव है लेख को उत्कीर्ण करने वाले की भूल से हस्ति शब्द ग्रस्त हो गया हो, और दूसरे लेख में हस्ति का हस्त हो गया हो।

२. वही, पृष्ठ १८, दिन्न और दत्तिल दोनों शब्द दत्त शब्द के प्राकृत रूप होते हैं।

३. जैन परम्परा के अनुसार वीर निर्वाण का समय विक्रम सं० से ४७० वर्ष पूर्व है, अतः ई० सन् पूर्व ५२७ होगा। कुषाण संवत् ईस्वी सन् ७८ से प्रारम्भ होता है अतः कुषाण सवत् के प्रारंभ में ५२७+७८= ६०५ वीर निर्वाण स० समझना चाहिये। डा० याकोबी के मतानुसार वीर निर्वाण ई० सन् पूर्व ४६७ में होता है।

अक्षरों की पूर्ति श्राद्धचर या श्राद्धचरी[1] शब्द से की जाय तो यह कहा जा सकता है कि वह शिष्या या उसके गुरु, महावाचक समदि के श्राद्धचरी या श्राद्धचर थे। श्राद्धचर शब्द का यदि यह अर्थ मान लिया जाय कि उक्त आचार्य की परम्परा में विश्वास करने वाला तो यह संभावना करनी पड़ेगी कि महावाचक समदि की परम्परा १८८ वर्ष या उसके कुछ अधिक वर्षों तक चलती रही[2]। इसी हालत में लेख और पट्टावली के आर्य समदि और आर्य समुद्र का समीकरण संभव है।

इसी तरह गणि आर्य मंगुहस्ति का उल्लेख करने वाले लेख नं० ५४ का समय कुषाण सं० ५२ दिया गया है जो कि वी० नि० स० ६५७ होता है। इस लेख में जो समय दिया गया है वह है वाचक आर्य घस्तुहस्ति के शिष्य एवं गणी आर्य मंगुहस्ति के श्राद्धचर वाचक आर्य दिवित का। पट्टावली में आर्य मंगु का समय वी० नि० सं०४६७ दिया गया है। लेखगत समय वी० नि० सं० ६५७ (कुषाण स० ५२) से संगति वैठाने के लिए यहाँ यह समझना चाहिए कि आर्य मंगु की परम्परा कम से कम १९० वर्ष तक चलती रही।

---

१. मथुरा के लेख नं० १७ मे सढचरी, ४३ मे सढचरिय, ५४ मे पढचरो तथा ५५ में श्रद्धचरों शब्द आते हैं।

२. यह संभावना इसलिए करना पड़ी कि उस काल में एक समय में ही आचार्यों की कई परम्परायें चलती थीं। श्वेताम्बर जैन पट्टावलियों के देखने से यह बात भली भाँति विदित होती है कि आर्य सुहस्ति के वाद ऐसी अनेक परम्पराओं का उद्गम हुआ था। कोई वाचक परम्परा थी, कोई युगप्रधान परम्परा थी तथा कोई गुरु परम्परा थी आदि, तथा उन आचार्यों से कई गण, कुल और शाखा निकले थे। जिन परम्पराओं की स्मृति रही उनका अंकन तो हो गया, शेष कालदोष से लुप्त हो गई।

लेख नं० ४१ एवं ६७ के आर्य नन्दिक या गणी नन्दिय, नन्दिसूत्र पट्टावली के १५ वें आर्य नन्दिल खमण प्रतीत होते हैं। लेखों मे उनका समय कुषाण स० ३२ तथा ६३ दिया हुआ है जो कि गणना मे वीर नि० ६३७ तथा ६६८ होता है। इस तरह उनका समय ६१ वर्ष आता है। पर पट्टावली की गणना मे उक्त समय आर्य नागहस्ति को दिया गया है तथा नन्दिल के समय का कोई उल्लेख नहीं। यद्यपि यहाँ लेख और पट्टावली के समय को देखते हुए एक समय में दो वाचक आचार्य—नन्दिल और नागहस्ति-के होने का आपत्ति दोष आता है पर मथुराके लेखों में तो एक एक, दो दो वर्ष के बीच या एक ही समय मे अनेक वाचक आचार्यों को होता देख उक्त दोनों आचार्यों की एक समय में सभावना कोई बाधक सी प्रतीत नहीं होती।

लेख न० ५४ एव ५५ के आर्य घस्तुहस्ति तथा हस्तहस्ति तो काल की दृष्टिसे भी पट्टावली के १६ वें पट्टधर नागहस्ति मालूम होते हैं। लेखों से ज्ञात समय और पट्टावली मे दिये गये उन के समय में कोई गड़बड़ी पैदा नहीं होती। लेखों के कुषाण संवत् ५२ और ५४ अर्थात् वीर नि०स० ६५७ और ६५६, पट्टावली में दिये गये नागहस्ति के समय वीर नि० ६२०-६८६ के अन्तर्गत आ जाते हैं। इस तरह लेखगत यह समकालीन उल्लेख अद्भुत है।

लेख न० ५४ और ५५ की एक और बात विशेष उल्लेखनीय है। लेख न० ५४ में आर्य नागहस्ति (घस्तुहस्ति) और मगुहस्ति का तथा लेख न० ५५ में-नागहस्ति (हस्तहस्ति) और माघहस्ति का एक साथ उल्लेख है। माघहस्ति सभव है मंगु, मंखु या मंक्षु का नामान्तर या शब्दान्तर हो या शिल्पी की असावधानी से ऐसा उत्कीर्ण होगया हो। यदि यह अनुमान सही है तो दोनों लेखों में इन दोनों आचार्यों का एक साथ उल्लेख कुछ विशेष अर्थ रखता है। दिगम्बर परम्परा के धवलादि ग्रन्थों में आर्य मंखु और नागहस्ति को सहपाठी कहा गया है[1]। मंगु और मंखु एकार्थक हैं। धवला और जयधवला इन दोनों में इन

१— षट्खण्डागम की भूमिका, पुस्तक २ पृष्ठ ३८

दोनों आचार्यों को क्षमाश्रमण और महावाचक भी लिखा है[1]। इन्हें उक्त ग्रन्थों में यतिवृषभ का गुरु कहा है[2]।

इसी तरह लेख नं० ६२ के आर्य दन्तिल, नन्दिसूत्र पट्टा० के २२ वें वाचक आर्य भूतदिन्न मालूम होते हैं। दन्तिल का समय गुप्त संवत् ११३ अर्थात् सन् ४३४ ई० होता है जो कि वीर नि० सं० ६६१ है। पट्टावली में भूतदिन्न का समय भी वीर नि० सं० ६०४से ६८३ दिया गया है। इस समय के अन्तर्गत लेख का समय आ जाता है।

यद्यपि लेखों के तथा नन्दिसूत्र पट्टावली के एवं कल्पसूत्र थेरावली के अन्य कुछ नामों में साम्य सा प्रतीत होता है—जैसे न० पट्टा० के स्कन्दिल या पंडिल्ल का लेख नं० २४, ३२ एवं ३६ के आर्य संघिक या संधि से तथा सिंहसूरि का लेख नं० ३१, ३२ के सिंह या सीह से और कल्पसूत्र थे० के २७ वें पट्टधर वृद्ध का नाम लेख नं० ५६ एवं ५८ के वृद्धहस्ति से तथा २३ वें पट्टधर गोहिल या ज्येष्ठ का लेख नं० २३ के गाढक व ज्येष्ठ हस्ति से— पर कालक्रम के विचार से यह समीकरण व्यर्थ सा है। यहाँ पट्टावली और लेखों के इन नामों से इतना तो अवश्य ज्ञात होता है कि ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में जैन मुनियों के प्राय ऐसे नाम होते थे।

जो भी हो, पर मथुरा के शिलालेखों के आचार्यों और उनके गणों, कुलों और शाखाओं के नाम जैनधर्म के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व के हैं। हम इन गणों आदि के अस्तित्व से उस महान् युग का, उसके जीवन की गति विधि

१—पुरातन जैन वाक्य सूची, भूमिका, पृष्ठ ३०.

२—यतिवृषभ का समय अभी तक ठीक रूप से निश्चित नहीं हुआ। विद्वान् लोग इन्हें सन् ४७८ के लगभग का मानते हैं, पर श्रद्धेय प्रेमी जी की संभावना कि वे और पहले के आचार्य हैं (जैन सा० और इति० द्वि० सं०, पृष्ठ २१)। विद्वानों का ध्यान मैं अपनी संभावना की ओर खींचता हूँ।

का तथा साथ ही सम्प्रदायों की परम्परा को रखने में विशेष सावधानी का अनुमान कर सकते हैं[1]।

३. जैन संघ का परिचय

मथुरा के प्राचीन लेखों की चर्चा के प्रसंग में हम देख चुके हैं कि कल्पसूत्र स्थविरावली और नन्दिसूत्र पट्टावली में अङ्कित कुछ गण, कुल और शाखाओं का अस्तित्व गुप्तकाल (ले० नं० ६२) तक अवश्य था। इसके बाद हमें ऐसे लेख नहीं मिले जिनसे कहा जाय कि उक्त परम्परा चलती रही हो। गुप्तकाल

---

१. इस अध्याय के लिखने में सहायक ग्रन्थों का निर्देश—

जी० बूलर, इण्डियन सेक्ट आफ जैन्स, लन्दन, १९०३.

जे० इ० लोजेन्डे, सीथियन पीरियड, लीडन, १९४९.

इ० जे० रेप्सन, केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इंडिया, भाग १, दिल्ली, १९५५.

ह० याकोबी, कल्पसूत्र, अंग्रेजी अनुवाद (से० बु० ई० भाग २२) आक्सफोर्ड, १८८४.

जे० फ़र्ग्युसन एण्ड जे० बर्जेस, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, भाग २, १९१०.

उमाकान्त प्रेमचन्द शाह, स्टडीज इन जैन आर्ट, बनारस, १९५५.

प० नाथूराम प्रेमी, जैन साहित्य और इतिहास, बम्बई, १९४२, १९५६.

डा० हीरालाल जैन, षट्खण्डागम, प्रथम, द्वितीय पुस्तक।

मजूमदार और पुसलकर, एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, बम्बई।

मुनि दर्शनविजय जी, पट्टावली समुच्चय, प्रथम भाग, वीरमगाम १९३३.

त्रिपुटी महाराज, जैन परम्परानो इतिहास अहमदाबाद १९५२.

प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ।

जैन हितैषी भाग, १०, १३.

जैन सिद्धान्त भास्कर।

अनेकान्त।

के ही कुछ लेखों से तथा बाद के सैकड़ों लेखों पर सरसरी दृष्टि डालने से हमें दक्षिण भारत मे कुछ नये सघों और उनकी नई शाखाओं — गण, गच्छ, अन्वय एवं वलियों के नाम दिखाई पड़ते हैं। ऐसा मालूम होता है कि दक्षिण भारत मे उत्तर भारत की परम्परा शायद उसी रूप मे चालू न रही थी। हम श्रवण वेल्गोल के एक लेख (प्र० भा० नं० १) से जानते हैं कि दक्षिण भारत में सर्व प्रथम भद्रबाहु द्वितीय आये थे और वहाँ जैन धर्म की प्रतिष्ठा इनसे ही हुई थी, पर कदम्ब वशी नरेशों के एक लेख (९८) से मालूम होता है कि ईसा की ४-५ वीं शताब्दी में जैन सघ के वहाँ विशाल दो सम्प्रदाय—श्वेतपट महाश्रमण संघ और निर्ग्रन्थ महाश्रमण सघ—का अस्तित्व था। इसी तरह इस वंश के कई लेखो में जैनों के यापनीय[1] और कूर्चक[2] नामक संघों का उल्लेख मिलता है जो कि एक प्रकार से उक्त दोनों से भिन्न थे।

दक्षिण भारत में निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय एव यापनीय तथा कूर्चक तथा सम्प्रदायों की स्थापना किसने की यह बात स्पष्ट रूप से हमें लेखों से विदित नहीं होती, पर यह कहने मे शायद आपत्ति न होगी कि निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय वहा भद्रबाहु (द्वितीय) द्वारा स्थापित हुआ था। लेख नं० ९८ और ९९ (सन् ४७०-४९० के लगभग) में इस सम्प्रदाय का उल्लेख है पर इसके बाद इस नाम से नहीं। वैसे तो प्राचीन काल में निर्ग्रन्थ या निगण्ठ (लेख नं० १) शब्द भग० महावीर और उनके अनुयायी सम्प्रदाय मात्र के लिए प्रयुक्त होता था पर इन लेखों

---

१. यह सम्प्रदाय सिद्धात दृष्टि से श्वेताम्बर सम्प्रदाय से अधिक मिलता जुलता था, परन्तु संघ के साधु नग्न रहते एवं अनुयायी नग्न मुर्तियों की स्थापना करते एवं पूजते थे। इसका अस्तित्व १५-१६ वीं शताब्दी तक दक्षिण भारत में था। परिचय आगे दिया गया है।

२. कूर्चक सम्प्रदाय का परिचय आगे दिया गया है।

में श्वेताम्बर और यापनीय सम्प्रदाय से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होने के कारण इसे दिगम्बर सम्प्रदाय अर्थ में ही लेना सयुक्तिक होगा। । इस संघ का प्रारंभिक रूप क्या था यह तो ईसा से पूर्व तथा ईसा के बाद ४-५ वीं शताब्दियों के लेखों से विदित नहीं होता पर कदम्ब नरेश मृगेशवर्मा के उपर्युक्त लेख नं० ६८-६६ से ज्ञात होता है कि इस सम्प्रदाय के मुनियों के नाम पर दान में ग्राम और भूमि आदि दी जाती थी।

लेख नं० ६८ से ज्ञात होता है कि देवगिरि नामक स्थान में श्वेताम्बर और दिगम्बर सम्प्रदाय मिल जुल कर रहते थे और शायद उनका एक ही मन्दिर था। इसके बाद हम निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय का नाम तो लेखो में नहीं पाते पर गंग-वंश के नरेश माधववर्म द्वितीय (सन् ४०० के लगभग) और उसके पुत्र अविनीत (सन् ४२५ या उसके बाद) के लेखों (६० और ६४) मे सर्वप्रथम मूल संघ का उल्लेख पाते हैं जो कि ६-१० वीं शताब्दी के लेखों मे और उसके बाद के लेखों में प्रचुर मात्रा में निर्दिष्ट है। विद्वानों की धारणा है कि दक्षिण भारत में श्वेता० सम्प्रदाय से दिगम्बर सम्प्रदाय को पृथक् बतलाने के लिए ही संभवतः मूलसंघ का प्रयोग किया गया है। यदि यह बात ठीक है तो कहना होगा कि निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय ही उस समय से मूलसंघ कहलाने लगा हो[1]। प्रस्तुत

---

१. श्रद्धेय पं० नाथूराम जी प्रेमी मूलसंघ के नाम को तीसरी चौथी शताब्दि के लेखों में न देख संभावना करते हैं कि मूलसंघ यह नामकरण अपने से अतिरिक्त दूसरों को अमूल—जिनका कोई मूल आधार नहीं—बतलाने के लिए ही किया गया है। और यह तो वह स्वयं ही उद्घोषित कर रहा है कि उस समय उसके प्रतिपक्षी दूसरे दलों का अस्तित्व था। (जैन साहित्य और इति० द्वि० संस्करण, पृष्ठ ४८५)

संग्रह में मूलसंघ के प्रथम दो लेखों में हमें आचार्य वीरदेव[1] और चन्द्रनन्दि आचार्य का नाम मिलता है। उक्त आचार्यों ने जैन मन्दिरों की प्रतिष्ठा कराई थी और गङ्ग नरेश माधव द्वितीय और अविनीत ने कुछ भूमि और ग्रामादि दान में दिये थे।

उपर्युक्त लेखों में मूलसंघ के पश्चात्कालीन लेखों में दिखने वाले किसी गण, गच्छ एवं अन्वय तथा बलि का निर्देश नहीं है। उनका उल्लेख सातवीं के उत्तरार्ध (लेख नं० १११ सन् ६८७ ई०) से ही मिलता है। लेखों से प्राप्त होने वाले इस संघ के प्रमुख गणों का नाम इस प्रकार है:— देवगण, सेनगण, देशिय गण, सुरस्थगण, क्राणूरगण और बलात्कार गण। इन गणों का नामकरण प्रायः मुनियों के नामान्त शब्दों को लेकर या प्रान्त विशेष अथवा स्थान विशेष को लेकर किया गया है। इनमें लेखों के क्रमानुसार देवगण प्राचीन (७ वीं शता०) है। इसके बाद सेन, देशिय और सूरस्थ गण हैं। शेष का उल्लेख ११ वीं १२ वीं शताब्दी से ही मिलता है, इसके पहले नहीं। इन गणों और उनके अवान्तर भेदों का परिचय देने के पहले इनके समकालीन दूसरे जैन संघों—विशेष कर यापनीय,कूर्चक और द्रविड संघ—का परिचय देना आवश्यक है।

यापनीय संघ

यह संघ दक्षिण भारत की अपनी देन है। वहाँ के जलवायु और कठोर जीवन बिताने के प्रति आग्रह ने इस संघ को भग० महावीर द्वारा उपदिष्ट यथावत् जैनधर्म पालन करने में प्रेरणा दी। इस संघ के साधु एक ओर दिगम्बर साधुओं के समान उग्र चर्या के रूप में नग्न रहते, मोर की पिच्छी रखते तथा पाणितल भोजी थे एवं नग्न मूर्तियाँ पूजते थे और बन्दना करने वालों को धर्म-

---

१—सम्भव है ये वीरदेव राजगृह (विहार) के सोन भण्डार से प्राप्त एक एक लेख (नं० ८७ ३री४थी श०) के आचार्य वैरदेव ही हों। देखो 'प्रसिद्ध जैन केन्द्र' प्रकरण।

लाभ देते थे, तो दूसरी ओर सैद्धान्तिक मान्यता में श्वेताम्बरों के समान स्त्रीमुक्ति, केवलीकवलाहार और सग्रन्थावस्था आदि भी मानते थे। वे प्राचीन जैनागम ग्रन्थों का पठन-पाठन करते थे पर उनके आगम शायद श्वेताम्बरों के वर्तमान आगमों से पाठभेद को लिए हुए कुछ भिन्न थे। सभव है यह सम्प्रदाय श्वेताम्बर दिगम्बरों के बीच की एक कड़ी था। इस सम्प्रदाय में अनेकों प्रतिभाशाली विद्वान, आचार्य एवं कवि हुए हैं जिन्होंने संस्कृत प्राकृत और कन्नड भाषा मे सैकड़ो प्रतिष्ठित ग्रन्थ लिखे हैं। श्रद्धेय पण्डित नाथूराम जी प्रेमी ने खोजकर बतलाया है कि इन विद्वानों में शिवार्य, अपराजित, पाल्यकीर्ति शाकटायन, महावीर और स्वयम्भू कवि थे। वे सभावना करते हैं कि उमास्वाति, वट्टकेरि, यतिवृषभ आदि भी शायद यापनीय हों[1]।

प्रस्तुत सग्रह में इन सघ का प्रकट या अप्रकट रूप से उल्लेख करने वाले अनेकों लेख हैं जिनसे इनके गणों एव गच्छों का परिचय मिलता है। इस सघ के कतिपय गणों के सम्बन्ध मे, लेखों के तिथिक्रम से अध्ययन करने पर मालूम होता है कि वे पीछे दिगम्बर सम्प्रदाय के अन्य दूसरे सघों द्वारा आत्मसात् कर लिये गये, या उनका पुन सस्कार किया गया, या वे काल के थपेड़े में लुप्त हो गये। लेखों के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है। यह सम्प्रदाय बड़ा ही राज्य-मान्य था। लेखों से विदित होता है कि कदम्ब, चालुक्य, गंग, राष्ट्रकूट और रट्ट वश के राजाओं ने इस संघ को और इसके साधुओं को अनेकों भूमिदानादि किये थे।

कदम्ब वंश के लेख न० ९९, १०० तथा १०५ से ज्ञात होता है कि उस वंश के प्रारम्भिक राजाओं के काल मे यह संघ बड़ा ही प्रभावक था। कदम्ब नरेश मृगेशवर्मा (सन् ४७०-४९०) ने पलासिका स्थान में इस सघ को अन्य दूसरे संघों—निर्ग्रन्थ एवं कूर्चकों-के साथ भूमिदान द्वारा सत्कृत किया था (९९)। उक्त नरेश के पुत्र रविवर्मा ने इस सघ के प्रमुख आचार्य कुमारदत्त को पुरुखेटक

१—देखिए, जैन साहित्य और इतिहास, द्वितीय संस्करण के अनेक स्थल।

ग्राम दान मे दिया था (१००)। इसी तरह कदम्ब वंश की दूसरी शाखा के युवराज देववर्मा ने भी यापनीय संघ को कुछ क्षेत्रों का दान देकर सत्कृत किया था (१०५)। लेख नं० १०५ में 'यापनीयसंघेभ्यः' यह बहुवचन प्रयोग द्योतित करता है कि यापनीय सघ के कई अवान्तर भेद थे।

यद्यपि इन लेखों से इस सम्प्रदाय पर विशेष प्रकाश नहीं मिलता पर लेख न० १०६, १२१, १२४, १४३ आदि से इसके गणो और गच्छों का साधारण परिचय मिलता है। इन लेखों से ज्ञात होता है कि इस सम्प्रदाय में नन्दिसंघ (नन्दि गच्छ) प्राचीन तथा प्रमुख था। इस संघ के आचार्यों का नाम विशेषत. नन्द्यन्त और कीर्त्यन्त (१२४) होता था। नन्दिसघ कई गणों मे विभक्त था या संघ की व्यवस्था की दृष्टि से कल्पित भेदों मे बाट दिया गया था। उनमें कनकोपलसम्भूत वृक्षमूलगण[1] (१०६) श्रीमूलमूलगण (१२१) तथा पुन्नागवृक्षमूलगण प्रमुख (१२४) थे। हम देखते हैं कि गणों के ये नाम कतिपय वृक्षों के नामों से सम्बन्धित हैं। वृक्षों के ये नाम भी या तो विभिन्न साधु समुदाय का चिह्न रहे होंगे जैसे विभिन्न राजवंशों के सिंह, बन्दर आदि चिह्न होते हैं या वे लोग अमुक अमुक वृक्ष विशेष वाले स्थान से शुरू शुरू में सम्बन्धित रहे होंगे और

१—लेख मे मूलगुण लिखा है जो कि अशुद्ध प्रतीत होता है। प० नाथूराम जी प्रेमी लेख नं० १०६ के मूल गण को मूलसंघ समझ बैठे हैं (जै०सा०इति० द्वि० सं० पृ० ४८५-) पर मूलसंघ को मूलगण कही नहीं लिखा गया और न वह उस अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ है। मूलगण उक्त लेखों मे तीन जगह आया है जो कि कुछ वृत्तान्त नामों से विशेषित है। चूँकि ले० न० १२१ और १२४वें वृक्षमूलपरक गण नन्दिसघ से सम्बन्धित हैं इसलिए ले० न० १०६ के कनकोपल सम्भूत मूलगण की भी नन्दि संघ से सम्बन्धित होने की संभावना है। लेखों से ज्ञात होता है कि नन्दिसघ आठवीं और नवीं शता० में सर्वप्रथम यापनीय सम्प्रदाय के अन्तर्गत था तो नन्दिसघ से सम्बद्ध उस काल के गणो को उस सम्प्रदाय से ही सम्बद्ध समझना चाहिए।

तत्कालीन सुविधा की दृष्टि से नामकरण किया गया होगा पर पीछे वही नाग रूढ़िगत हो गया। इनमें पुन्नाग=नागकेशर के समीप से आने वाले साधु पुन्नागवृक्षमूलगण, श्रीमूल=शाल्मलि=सेमर के वृक्ष के पास से आने से श्रीमूल, मूलगण तथा कनक = चम्पा, पलाश या धतूरा, उपल=पाषाण या रत्न अर्थात् उक्त वृक्षों से घिरे पाषाणों के पास से आने या वहीं बैठने आदि के कारण कनकोपलसम्भूत मूलगण[1] नाम पड़ा होगा, ऐसा प्रतीत होता है।

उक्त लेखों में लेख नं० १०६ (सन् ४८८ ई०) से कनकोपलसम्भूतवृक्ष मूलगण के आचार्यों की गुरुपक्ति इस प्रकार है—सिद्धनन्दि,[2] चितकाचार्य (जिनके पाँच सौ शिष्य थे), नागदेव और जिननन्दि। जिननन्दि के लिए चालुक्य नरेश जयसिंह के एक सामन्त सेन्द्रक वंशी सामियार ने एक जैन मन्दिर बनवा कर, एक गाँव और कुछ जमीन दान में दी थी। इसी तरह ले० नं० १२१ में चन्द्रनन्दि, कुमारनन्दि, कीर्तिनन्दि और विमलचन्द्राचार्य के उल्लेख के सिवाय उसका संक्षिप्त वर्णन है। लेख में श्रीमूल मूलगण के अन्तर्गत एरेगित्तूर गण और पुलिकल गच्छ का उल्लेख है जो प्रतीत होता है कि कोई स्थानीय भेद रहा होगा। उक्त गणों के विमलचन्द्राचार्य के उपदेश से गङ्ग नरेश श्रीपुरुष के ५०वें वर्ष में उसके एक सामन्त निगुन्दराज परमगूल ने जैन मन्दिर बनवाकर सर्व करों से मुक्त करा कर एक गाँव दान में दिया था। इसी प्रकार पुन्नाग वृक्ष मूलगण के आचार्यों की परम्परा लेख नं० १२४ में इस प्रकार दी गई— श्री कित्याचार्य (चितकाचार्य ?), इनके बाद अनेकों आचार्य होने पर कूविलाचार्य, विजयकीर्ति और अर्ककीर्ति। अर्ककीर्ति के लिए राष्ट्रकूट नरेश प्रभूतवर्ष गोविन्द तृतीय ने अपने सामन्त चाकिराज की प्रार्थना पर सन् ८१२

---

१. लेख नं० १०६ में उसे काकोपलाम्नाय भी लिखा है। संभव है यह उसका दूसरा नाम हो या उसकी अवान्तर शाखा हो।

२. ये बड़े वैयाकरण थे, इनके मत का उल्लेख शाकटायन व्याकरण में किया गया है।

ई० में शिला ग्राम के जैन मन्दिर के प्रबन्ध के लिए जालमङ्गल नाम का गाँव दान में दिया था। उक्त मुनि ने चाकिराज के भानजे विमलादित्य की शनिबाधा को दूर किया था। यह लेख गोविन्द तृतीय के पुत्र अमोघवर्ष प्रथम के राजपद पाने के केवल एक वर्ष पहले का है। अमोघवर्ष के समय ही यापनीय संघ में शाकटायन व्याकरण के कर्ता आचार्य पाल्यकीर्ति (शाकटायन) हुए हैं। श्रद्धेय प्रेमी जी सम्भावना करते हैं कि पाल्यकीर्ति इस लेख के अर्ककीर्ति के या तो शिष्य थे या सधर्मा थे।[1]

यापनीय नन्दिसंघ के कनकोपलादि गणों का अस्तित्व बाद के लेखों से नहीं मालूम होता इसलिए यह कहना कठिन है कि उनका क्या हुआ। पर लेख नं० २५० (सन् ११०८) में पुन्नागवृक्ष मूलगण को हम मूल संघ के अन्तर्गत जीवित पाते हैं। संभव है पीछे वह मूलसंघ द्वारा आत्मसात् कर लिया गया हो।

उपर्युक्त लेखों से कर्नाटक प्रान्त में यापनीय सम्प्रदाय का परिचय मिलता है। कर्नाटक के समान ही तामिल प्रान्त में भी यापनीय सम्प्रदाय का अच्छा प्रचार था, यह बात हमें लेख नं० १४३-१४४ से विदित होती है। लेख नं० १४३ में यापनीय सम्प्रदाय के नन्दि गच्छ (संघ) के कोटिमडुवगण का उल्लेख है और उसके आचार्यों—जिननन्दि, दिवाकर, श्रीमान्दिर देव (धीरदेव)—का नाम दिया गया है। धीरदेव कटकाभरण जिनालय के अधिष्ठाता थे। उस जिनालय के लिए पूर्वीय चालुक्यवंश के अम्मराज द्वितीय ने सेनापति (कटकराज) दुर्गराज की प्रार्थना पर उक्त संघ के लिए एक गाव दान में दिया था। उसी राजा के दूसरे एक लेख नं० १४४ मे अड्डकलिगच्छ बलहारिगण के आचार्यों की गुरु पंक्ति इस प्रकार दी गई है—'सकलचन्द्र, अय्यपोटि और अर्हनन्दि। अर्हनन्दि मुनि को अम्मराज द्वितीय ने सर्वलोकाश्रय जिनालय की भोजनशाला की मरम्मत कराने के लिए अत्तिलिनाण्डु प्रान्त के कलुचुम्बर्रु नामक ग्राम को दान में दिया था। यद्यपि उक्त लेख में स्पष्ट रूप से यापनीय या नन्दिसंघ का उल्लेख नहीं है पर अड्डकलिगच्छ वलहारि गण का अन्य संघों के साथ निर्देश न देख तथा एक

1. जैन साहित्य और इतिहास (द्वि० सं०) पृष्ठ १६७.

ही नरेश से उक्त दोनों लेखों को सम्बद्ध देख ऐसा प्रतीत होता है कि वलहारि गण और अड्डकलिगच्छ भी यापनीय सम्प्रदाय के थे। इस सम्बन्ध में हमें इसलिए और विश्वास करना पड़ता है कि लेख न० १८१ (सन् १६४८ ई०) में केवल वलगार गण[1] (वलहारि गण) का उल्लेख है और नन्द्यन्त नाम वाले मेघनन्दि और केशवनन्दि (अष्टोपवासी) मुनियों का नाम दिया गया है। इस तरह किसी और सत्र के साथ उल्लेख न देख तथा नन्द्यन्त नाम के कारण, उक्त गण को यापनीय मानने में हमें कोई आपत्ति नहीं दिखती।

इस सम्प्रदाय के नन्दिसघ और वलहारि या वलगार गण का पीछे क्या हुआ सो तो मालूम नहीं क्योंकि इससे सम्बन्धित पीछे की शताब्दियों के कोई लेख नहीं मिले। हाँ, ११ वीं शताब्दी के (लेखों १८८ सन् १०५८ आदि) से नन्दि सघ को द्रविड गण या द्रविड सघ के साथ विशेष रूप से तथा १२ वीं शताब्दी के लेखों (२५५ प्रथम भाग ४७ सन् १११५ ई० आदि) से मूल सघ के साथ कतिपय लेखों में उल्लेख देख हम यह अनुमान करते हैं कि प्रारम्भ मे द्रविड सघ को चलाने वाले या तो इस सघ के साधु थे या ११ वीं शताब्दी में नव संगठित द्रविड सघ ने इस सघ को अपना आधार बनाया था। पीछे मूल सघ का पुनर्गठन करने वाले साधु समूह ने इस सघ को अपने अन्तर्गत भी मान्यता प्रदान की। इसी तरह वलहारि या वलगार गण का उल्लेख ११वीं शताब्दी के उत्तरार्ध (२०८) से वलात्कार गण के रूप में मूल संघ से सम्बद्ध मिलता है। यह सम्भव है कि वलिहारि एव वलगार शब्द का ही परिवर्तित एव सुसस्कृत रूप (वलात्कार[2]) हो और यापनीय सघ के उक्त गण को मूल सघ के सघटन कर्ताओं ने पीछे अधीन कर लिया हो।

---

१. वलगार शब्द स्थान विशेष का द्योतक है। उस स्थान से निकले साधु समुदाय का नाम वलगार गण पड़ा। वलगार नामक एक ग्राम भी था (मेडीवल जैनिज्म, पृ० ३२७)।

२. वलात्कार शब्द स्थानविशेष का द्योतक नहीं प्रतीत होता। स्थानविशेष के अर्थ में सभव है, वह शब्दानुकरण मात्र हो।

रट्ट वंशी नरेशों के लेखों से इस संप्रदाय के दो और नये गणों पता चलता है। वे हैं कारेय गण और कण्डूर गण। लेख नं० १३० से ज्ञात होता है कि रट्टवंश के प्रथम नरेश पृथ्वीराम के गुरु इन्द्रकीति (गुणकीर्ति के शिष्य) मैलाप तीर्थ कारेय गण के थे। कारेय गण निश्चित रूप से यापनीय था यह वात हमें जैन एन्टीक्वेरी भाग ६, अक २, पृष्ठ ६८, ६६ में अङ्कित दो लेखों (५३-५५) से मालुम होती है। लेख नं० १३० के सिवाय लेख नं० १८२ में भी कारेय गण का उल्लेख है और वहाँ मैलापतीर्थ के स्थान मे मैलापान्वय लिखा है तथा गुरुपरम्परा लेख नं० १३० के गुणकीर्ति से प्रारम्भ की गई है। दोनों लेखों को मिलाकर कारेय गण मैलाप अन्वय की परम्परा इस प्रकार वनती है— मूल भट्टारक, गुणकीर्ति,, इन्द्रकीर्ति, नागचन्द्र (गुणकीर्ति के शिष्य) जिनचन्द्र, शुभकीर्ति, देवकीर्ति। देवकीर्ति मुनि को किसी अमोघवर्ष नरेश के गंग सामन्त ने जैन मन्दिर वनवाकर एक गाँव दान मे दिया था। लेख मे शक संवत् २३१ दिया गया है जो कि अशुद्ध प्रतीत होता है। कारेयगण का इस संग्रह के अन्य लेखों में और कोई उल्लेख नहीं है।

इस सम्प्रदाय के कण्डूर गण का अस्तित्व रट्ट नरेशों के दो लेखों नं० १६० और २०५ से विदित होता है। लेख नं० १६० (सन् ६८० ई०) में यापनीय कण्डूर गण की गुरुपरम्परा इस प्रकार है—देवचन्द्र, देवसिंह, रविचन्द्र अर्हणन्दि, शुभचन्द्र, मौनि देव और प्रभाचन्द्र देव। लेख नं० २०५ में कण्डूर गण के रविचन्द्र और अर्हणन्दि (१६०) का उल्लेख है। इस गण का ११ वीं शताब्दी में क्या हुआ सो तो मालूम नहीं पर मूल संघके ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से मिलने वाले लेखों (२०७, २०६ आदि) मे क्राणूर गण[1] के रूप में उल्लेख देख ऐसा लगता है कि यापनीय कण्डूर गण ही मूल संघ द्वारा आत्मसात् कर लिया गया है।

इस तरह लेखगत प्रमाणों से हम देखते हैं कि यह संघ ४ थीं से १० वीं

१. कण्डूर से काडूर और वाद में क्राणूर का प्रचलन हुआ, ऐसा प्रतीत होता है।

शताब्दी या उसके कुछ बाद तक अच्छा संगठित था इसमें कई प्रभावशाली गण थे जिन मे से पुन्नागवृक्ष मूलगण, बलहारि गण और कण्डूर गण मूलसघ में शामिल कर लिए गये और नन्दिसंघ को द्रविड संघ और पीछे मूलसंघ ने अपना लिया।

कूर्चकसंघ

कर्नाटक प्रान्त में ईस्वी पाचवी शताब्दी या उसके पहले जैनो का एक सम्प्रदाय कूर्चक नाम से था और कदम्बवशी राजाओं के लेखों (९८, ९९) से ज्ञात होता है कि वह निर्ग्रन्थ संघ, श्वेतपट (श्वेताम्बर) सघ एव यापनीय सघ से पृथक् था। श्रद्धेय प्रेमी जी का अनुमान है कि यह कूर्चक जैन साधुओं का ऐसा सम्प्रदाय होना चाहिये जो दाढी-मूछ रखता हो। प्राचीनकाल म जटाधारी, शिखाधारी, मुड़िया, कूर्चक, वस्त्रधारी और नग्न आदि अनेक प्रकार के अजैन साधु थे। जान पड़ता है कि इसी तरह जैनों में भ। साधुओं का ऐसा सम्प्रदाय था जो दाढी-मूछ (कूर्चक) रखने के कारण कूर्चक[1] कहलाता होगा। वरागचरित्र के कर्ता जटाचार्य सिंहनन्दि सम्भव है ऐसे ही साधुओं में थे जिनकी जटाओं का वर्णन (जटाः प्रचलवृत्तयः) आचार्य जिनसेन ने अपने आदिपुराण में किया है।

कदम्बवंशी राजाओं के एक लेख (९९) में इस सम्प्रदाय का यापनीय और निर्ग्रन्थों के साथ उल्लेख है। लेख में 'यापनीयनिर्ग्रन्थकूर्चकाना' बहुवचनान्त पद सूचित करता है कि यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चक तीन पृथक् सम्प्रदाय थे। कूर्चक सम्प्रदाय के भी कई सघ थे इससे उक्त सम्प्रदाय का लेख न १०३ में बहुवचन (कूर्चकानाम्) प्रयोग किया है। यदि लेख नं० ९९ के कूर्चक पद को बहु-वचनान्त मान निर्ग्रन्थ पद को उसका विशेषण मान लें, तो कहना होगा कि वह संघ निर्ग्रन्थ अर्थात् दिगम्बर सम्प्रदाय का ही एक भेद था। कदम्ब मृगेशवर्मा ने अन्य दो जैन सम्प्रदायों के समय इसे भी भूमिदान देकर सत्कृत किया था। दूसरे एक लेख (१०३) में इस संघ के अवान्तर वारिषेणाचार्य संघ का उल्लेख

है। साथ में लिखा है कि उक्तसंघ के प्रधान मुनि चन्द्रक्षान्त को कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने अपने पितृव्य शिवरथ के उपदेशसे सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर की अष्टाह्निका पूजा के लिए तथा सर्व संघ के भोजन के लिए वसुन्तवाटक नामक ग्राम दान में दिया था। लेख नं० १०४ मे अहरिष्टि नामक एक और श्रमण संघ का उल्लेख है जिसे सेन्द्रक सामन्त भानुशक्ति की प्रार्थना पर कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने मरदे नामक ग्राम दान मे दिया था। उक्त संघ के आचार्य धर्मनन्दि को यह दान में भेट किया गया था ताकि वे अपने अधीन चैत्यालय की पूजा आदि का प्रबन्ध कर सके और उस दान का उपयोग साधुओं के लिए भी कर सकें। यद्यपि इस लेख में कूर्चक सम्प्रदाय का उलेख नहीं है तथापि जान पड़ता है कि वारिषेणाचार्य संघ के समान ही अहरिष्टि श्रमण संघ भी कूर्चकों का एक भेद था।

द्राविड़ संघ

द्रविड़ देश में रहने वाले जैन साधु समुदाय का नाम द्राविड़ संघ है। इस सघ के अनेकों लेख प्रस्तुत संग्रह मे हैं। इन लेखो में इसे द्रमिड़, द्रविड़, द्रविण, द्रविड, द्राविड, दविल, दरविल या तिवुल नाम से उल्लिखित किया गया है। नामगत ये सब भेद लेखक या उत्कीर्णक के कारण हुए प्रतीत होते हैं। द्रविड़ देश वास्तव में वर्तमान आन्ध्र और मद्रास प्रान्त का कुछ हिस्सा है जिसे सुविधा की दृष्टि से तामिल देश भी कह सकते हैं। इस देश मे जैनधर्म पहुँचने का समय बहुत प्राचीन है। उस देश के प्राचीन साधु समुदाय का कोई सघ रहा होगा। उसका क्या नाम था यह हमे मालुम नहीं पर देवसेनाचार्य ने अपने दर्शनसार में अन्य संघों के उत्पत्ति के वर्णन मे द्राविड़ सघ के सम्बन्ध मे लिखा है कि पूज्यपाद के शिष्य वज्रनन्दि ने वि० स० ५२६ मे दक्षिण मथुरा (मदुरा) मे द्राविड़सघ की स्थापना की। इस संघ को वहाँ जैनाभासों मे गिनाया गया है और वज्रनन्दि के

---

१. जैन साहित्य और इतिहास (द्वितीय सस्करण) पृष्ठ ५५६-५६३

विषय में लिखा है कि उस दुष्ट ने कछार, खेत, बसदि और वाणिज्य से जीविका निर्वाह करते हुए शीतल जल से स्नान करते हुए प्रचुर पाप अर्जित किया।[1] इस कथन में सचाई कहा तक है यह तो हम नहीं कह सकते पर इन लेखों में इस संघ के अनेक प्रतिष्ठित और विद्वान् आचार्यों को देखते हुए ऐसा लगता है कि शायद संघीय विद्वेष के कारण मूलसघ के उक्त आचार्य ने एक प्राचीन आचार्य के सम्बन्ध में ऐसी कटूक्ति कह दी हो।

इस सघ से सम्बन्धित इस सग्रह के सभी लेख ईस्वी १०–११वीं शताब्दी या उसके ही बाद के हैं। इससे पहले इसकी प्राचीनता का द्योतक शायद ही कोई लेख मिला हो, तथा दसवीं शताब्दी से पहले का ऐसा कोई ग्रन्थ भी नहीं जो इस संघ के इतिहास पर प्रकाश डाले।

इस संघ के प्रायः सभी लेख कोङ्गाल्ववशी, शान्तरवंशी तथा होय्सल-वंशी राजाओं के राज्यकाल के हैं जिससे ज्ञात होता है कि उन वशों के नरेशों का इस संघ को संरक्षण प्राप्त था। अधिकाश लेख होय्सल नरेशों के हैं। इन लेखों से यह भी ज्ञात होता है कि इस सघ के आचार्यों ने पद्मावती देवी की पूजा एवं प्रतिष्ठा के प्रसार में बड़ा योग दिया था। इस सघ के कई लेखों मे शान्तर और होय्सलवंश के आदि राजाओं द्वारा राज्य सत्ता पाने में पद्मावती के चमत्कार या प्रभाव की सहायता दिखायी गई है। लेखों से यह भी ज्ञात होता है कि इस सघ के साधु बसदि या जैन मन्दिरों में रहते थे। उनका जीर्णोद्धार और ऋषियों को आहार दान, तथा भूमि, जागीर आदि का प्रबन्ध करते थे।

---

१. सिरिपुज्जपादसीसो दाविडसघस्स कारगो दुट्ठो।
णामेण वज्जणंदी पाहुडवेदी महासत्थो ॥ २५ ॥
पञ्चसए छव्वीसे विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स।
दक्खिणमहुरा जादो दाविडसंघो महामोहो ॥ २६ ॥
कच्छं खेत्त-वसहिं वाणिज्ज कारिऊण जीवन्तो।
ण्हतो सीयलनीरे पावं पउर स्स सचेदि ॥ २७ ॥

इस संघ के आदि एवं प्राचीन कुछ लेख होय्सलों के उत्पत्ति स्थान अङ्गदि (सोसेदूर) से ही प्राप्त हुए हैं। इस स्थान के एक लेख नं० १६६ (सन् ६६० के लगभग) में इस संघ को द्रविड संघ कोण्डकुन्दान्वय, तथा दूसरे लेख नं० १७८ (सन् १०४० ई० ?) मे मूलसत्र द्रविडान्वय लिखा है। पर ई० ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के लेख नं० १८८,१८६,१६०,१६२,२०२, २१४,२१५,२१६ और २२६ में इसका द्रविड़ गण के रूप में नन्दिसत्र इरुङ्गला-न्वय या अरुङ्गलान्वय के साथ उल्लेख किया गया है। इन निर्देशों से यह अनुमान होता है कि प्रारम्भ में नव संगठित द्रविड़ संघ ने अपना आधार या तो मूलसंव को या कुन्दकुन्दान्वय को बनाया होगा पर पीछे यापनीय सम्प्रदाय के विशेष प्रभावशाली नन्दिसंघ मे इस सम्प्रदाय ने अपना व्यावहारिक रूप पाने के लिए उससे विशेष सम्बन्ध रखा या द्रविड़ गण के रूप में उक्त सत्र के अन्तर्गत हो गया। पीछे यह द्रविड़ गण इतना प्रभावशाली हुआ कि उसे ही सत्र का रूप दे दिया गया और साथ में कुछ लेखों (२१३-२१५) मे नन्दिसघ को नन्दिगण के रूप में निर्दिष्ट किया गया पर पीछे उसको उसी रूप (नन्दिसघ) में उल्लेख किया गया है। दर्शनसार (१० वीं शता०) में द्रविड़ सघ को यापनीयो के साथ जो जैनाभास कहा गया है, वह संभव है, इस ओर ही सकेत कर रहा है।

होय्सलों के उत्पत्ति-स्थान अङ्गदि (सोसेवूर) से इस संघ के आदि एव प्राचीन लेखों की प्राप्ति से हम अनुमान करते हैं कि इस सघ के प्रारम्भिक आचार्यों ने जैन धर्म सरक्षक होय्सल नरेशों को ऊपर उठाने में अवश्य सहायता की होगी, अथवा प्रगतिशील दोनों–राज्य एव सघ–ने एक दूसरे को बढाने की कोशिश की होगी[1]। होय्सल वश के अनेकों नरेश और सेनापति इस सघ के

---

१. बहुत सम्भव है कि होय्सल वंश के समुद्धारक सुदत्तमुनि (४५७) या वर्धमान मुनि (६६७) लेख नं० १६६ में आये त्रिकाल मोनि देव हों या विमलचन्द्राचार्य के सधर्मा कोई और मुनि हों।

भक्त थे हालां कि उन्होंने अपनी भक्ति एवं आदर दूसरे जैन सघों के प्रति भी प्रदर्शित किया है। धार्मिक उदारता सचमुच में उस युग की देन थी।

इसके बाद इस नवीन संघ के एक प्रमुख आचार्य के रूप में वज्रपाणि पण्डित का नाम आता है। लेख नं० १७८ मे इन्हें द्रविडान्वय मूलसघ का तथा नं० १८५ मे सूरस्थ गण का लिखा है। पिछले लेख मे उनकी एक गृहस्थ शिष्या के दान का उल्लेख है। लेख न० १७८ की शुरू की पक्तिया भग्न हैं पर 'तर्कोच्चालित' आदि विशेषणों से प्रतीत होता है कि थे बड़े तार्किक थे। ये होय्सल नरेश राचमल्ल भूपाल (नृपकाम) के गुरु थे और इन्होंने होय्सलों के उत्पत्तिस्थान सोसेवूर में अपना जीवन बिता कर सन्यास मरण किया था। लेख में यद्यपि काल निर्देश नहीं है फिर भी उनका समय द्रविड संघ का प्रथम साहित्यिक उल्लेख करने वाले ग्रन्थ दर्शनसार और होय्सल नृपकाल के समय के आसपास होना चाहिये। देवसेनाचार्य के दर्शनसार मे जिस वज्रनन्दि का वर्णन किया गया है और उनके द्वारा प्रवृत्त जिस शिथिलाचार की ओर सकेत किया गया है, उससे प्रतीत होता है कि इस सघ की स्थापना देवसेन के समय (१० वीं शता०) या उससे कुछ पूर्व हुई है। वि० स० ५२६ के जिस वज्रनन्दि को ग्रन्थकर्ता ने शिथिलाचार फैलाने का दोषी ठहराया है, उसका उल्लेख किसी लेख या उनसे पूर्व किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता। फिर जिन कटुशब्दों द्वारा एक संघ के अनुयायी द्वारा दूसरे सघ के प्रतिष्ठापक आचार्य की भर्त्सना की गई इससे प्रतीत होता है कि वे समकालीन या कुछ ही समय पूर्ववर्ती रहे होंगे। संभव है इस लेख के वज्रपाणि ही वज्रनन्दि हों, पर इस अनुमान की पुष्टि के लिए अभी और प्रमाणो की आवश्यकता है।

वज्रपाणि पण्डित की आगे पीछे की गुरुपरम्परा का वर्णन हमे किसी लेख से प्राप्त नहीं हुआ। इसके बाद इस सघ के लेखों में नन्दिसघ के आचार्यों की परम्परा चलने लगती है। इस सघ के अनेको ऐसे लेख हैं जो कि पट्टावली कहे जा सकते हैं पर उनमें गुरुपरम्परा का क्रम व्यवस्थित न होने से कम से कम प्राचीन आचार्यों के क्रम पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अनेकों लेखों

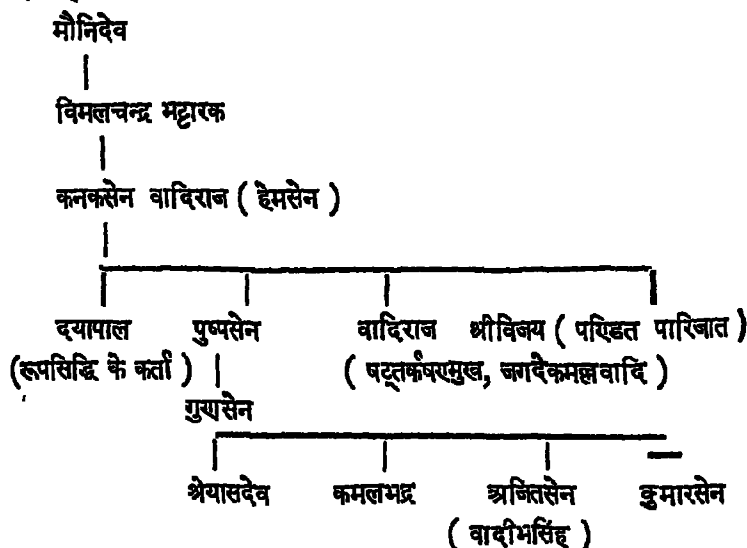
(२१३-२१४ आदि) में वर्धमान, एव गौतमस्वामी के उल्लेख पूर्वक कतिपय प्रसिद्ध जैनाचार्यों का निर्देश किया गया है—जैसे कोण्डकुन्दाचार्य, भद्रबाहु, समन्तभद्र-स्वामी, सिंहनन्दि, अकलंक देव, वज्रनन्दि, पूज्यपाद स्वामी आदि। इन लेखो मे यह दिखाने का प्रयत्न किया गया है कि प्रायः सभी प्रतिष्ठित प्राचीन आचार्य द्रविड़ सघ के नन्दिसघ के अन्तर्गत थे। हम पहले सभावना कर चुके हैं कि नन्दि संघ द्रविड़ संघ में यापनीय सघ से आया है। नन्दिसघ की एक प्राचीन प्राकृत पट्टावली भी है[1] जिसमें भगवान् महावीर के बाद ६८३ वर्षों तक की परम्परा दी गई है। उसके बाद के क्रम का उल्लेख करने वाली कोई प्रामाणिक पट्टावली उपलब्ध नहीं होती। संभव है द्रविड़ संघ में आकर नन्दिसंघ के पश्चात्कालीन आचार्यों ने अपनी स्मृति से कुछ परम्परा को सुरक्षित रखने के लिए लेखों मे उक्त आचार्यों का निर्देश किया हो। यह निर्देश सूचित करता है कि उक्त आचार्य उस नन्दिसंघ के अन्तर्गत थे जो कि प्रारम्भिक शताब्दियों मे याप-नीय था।

इस संघ के अन्तर्गत नन्दिसंघ के साथ प्रत्येक लेख में अरुङ्गलान्वय का उल्लेख मिलता है। अरुङ्गलान्वय किसी स्थानविशेष की अपेक्षा सूचित करता है। अरुङ्गल नाम का स्थान भी तामिल प्रान्त के गुडियपत्तन तालुका में है जो कि एक प्राचीन जैन स्थान था। हम यापनीय संघ के वर्णन में देख चुके हैं कि तामिल प्रान्त मे यापनीय नन्दिसघ का अस्तित्व पूर्वीय चालुक्यों के राज्य मे था। द्रविड़ सघ, नन्दिसघ, अरुङ्गलान्वय इन तीनों शब्दों का एकत्र प्रयोग हमें नि.सन्देह सूचित करता है कि वह तामिल प्रान्त का नन्दिसंघ था जो कि अरुङ्गल स्थान से उद्भूत हुआ था। इससे अब हमें यह कहने में सकोच न होना चाहिये कि तामिल प्रान्त के यापनीयों के नन्दिसंघ से ही द्रविड़ सघ के नन्दि-संघ को उत्तराधिकार मिला था।

---

१. षट्खंडागम, पुस्तक १, पृ० २४-२७। समव है यह पट्टावली प्राचीन याप-नीय नन्दिसंघ की हो।

११-१२ वीं शताब्दी में इस सघ के मुनियों की गद्दियाँ कोङ्गाल्व राज्य के मुल्लूर तथा शान्तर राजाओं की राजधानी हुम्मच में थीं। हुम्मच से प्राप्त लेख नं० २१३-२१६ में इस सघ के अनेकों आचार्यों का परिचय मिलता है। इनमें श्रेयास पण्डित, उनके सधर्मा कमलभद्र और वादीभसिंह अजितसेन पण्डित के पूर्ववर्ती और समकालीन आचार्यों की परम्परा दी गई है। जो इस प्रकार है:—



इनमें मौनिदेव और विमलचन्द्र भट्टारक वे ही मालुम होते हैं जिनका उल्लेख अंगदि से प्राप्त लेख नं० १६६ (लगभग ९९० ई०) में द्रविड़ सघ कुन्दकुन्दान्वय के आचार्य के रूप में किया गया गया है। शायद ये ही द्रविड़ संघ के आदि प्रवर्तक आचार्य रहे हों। कनकसेन वादिराज का दूसरा नाम लेख नं० २१३ और २१५ में हेमसेन दिया गया है। संस्कृत नें कनक और हेम का अर्थ भी एक होता है। इन्हें श्रीविजय, वादिराज, दयापाल आदि के गुरु के रूप में कहा गया है। वादिराज की उपाधियाँ षट्तर्कषण्मुख और

जगदेकमल्लवादी थीं। वादिराज भी हमें एक उपाधि मालुम होती है, क्योंकि लेख नं० ३४७ में इनका असली नाम श्री वर्धमान जगदेकमल्ल वादिराज दिया गया है। इनके सधर्मा रूपसिद्धि नामक व्याकरण ग्रन्थ के कर्ता दयापाल थे। मल्लिषेण प्रशस्ति (५४, प्रथम भाग ५४) में उपर्युक्त पट्टावली के अनेकों आचार्यों का उल्लेख तथा प्रशंसावाक्य दिये गये हैं। उसमें वादिराज के गुरु का नाम मतिसागर दिया गया है और दयापाल को उनका सधर्मा माना गया है। उसी प्रशस्ति के ३५ वें पद्य में मतिसागर की प्रशंसा के बाद ३६-३७वें पद्य में हेमसेन मुनि की प्रशंसा की गई है, पर दोनों आचार्यों का कोई सम्बन्ध नहीं बतलाया गया। हेमसेन तो निःसन्देह हुम्मच के उक्त दोनों लेखों के कनकसेन वादिराज (हेमसेन) ही हैं। पर वादिराज के गुरु मतिसागर भी थे, यह बात हमें उनकी षट्तर्कषण्मुख प्रतिभा के परिचायक उनके न्यायशास्त्र के ग्रन्थ न्यायविनिश्चयविवरण की प्रशस्ति से मालुम होती है। लेखों से यह सिद्ध होता है कि मतिसागर और हेमसेन (कनकसेन) दो व्यक्ति थे। संभव है एक तो वादिराज के दीक्षागुरु और दूसरे विद्यागुरु रहे हों। हमारे इस आशय का समर्थन न्यायविनिश्चयविवरण की प्रशस्ति के दूसरे पद्य से भी होता है जहाँ श्लेषात्मक ढंग से जिनेन्द्र की स्तुति करते हुए वादिराज ने 'सन्मतिसागरकनकसेनाराध्यम्' लिखा है। वादिराज बड़े ही विद्वान्, लेखक एवं वादी आचार्य थे। इन्हें चालुक्य नरेश जयसिंह तृतीय जगदेकमल्ल (सन् १०१६-१०४४) ने जगदेकमल्लवादि नामक उपाधि दी थी (५४ पद्य ४२, प्रथम भाग ५४)। लेख नं० २१५ में इन्हें अकलंक, धर्मकीर्ति और अक्षपाद के प्रतिनिधिरूप माना गया है।

वादिराज के अन्य सधर्माओं में पुष्पसेन और श्रीविजय पण्डित थे। पुष्पसेन हमें वे ही प्रतीत होते हैं जिनकी पादुकाओं की स्थापना का स्मारक लेख नं० १७७ (सन् १०३० के लगभग) में है। इनके शिष्य का नाम गुणसेन था जिनके कई लेख मुल्लूर से प्राप्त हुए हैं। ये कोङ्गाल्व नरेश राजेन्द्र चोल के कुलगुरु थे (१८८-१९२)। लेख नं० २०१ में इन्हें पोय्सलाचारि लिखा

है जिससे ज्ञात होता है कि इनका प्रभाव होय्सल राजाओं पर भी था। लेख नं० २०२ (सन् १०६४ ई०) इनके समाधिमरण का स्मारक है और उन्हें द्रविल-गण, नन्दिसंघ, अरुङ्गलान्वय का नाथ तथा अनेक शास्त्रों का वेत्ता लिखा है। लेख नं० १७७ और लेख नं० २०२ में अंकित वर्षों से ज्ञात होता है कि वे ३४ वर्षों (१०३० ई०–१०६४ ई०) तक बराबर जिनशासन की प्रभावना करते रहे। हुम्मच के लेख नं० २१३ में इनका नाम वादिराज के बाद की पीढी के आचार्यों में दिया गया है और मल्लिषेण प्रशस्ति के पद्य ५३ में इनकी प्रशंसा की गयी है।

श्रीविजय पण्डित के सम्बन्ध में लेख नं० २१३ से विदित होता है कि वे अनेक प्रतिष्ठित आचार्यों के गुरु थे। उनका दूसरा नाम वोडेयदेव या ओडेयदेव था जो कि तियगुडि के निडुम्बरे तीर्थ, अरुङ्गलान्वय, नन्दिगण के अधीश्वर थे। इन्हें तामिल प्रान्त (तामेल्लरु) से सम्बन्धित बताया गया है (२१४) पर इनका अधिक समय हुम्मच में बीता था ऐसा उक्त स्थान से प्राप्त लेखों से मालुम होता है। इनके गृहस्थ शिष्यों में नन्नि शान्तर एवं प्रसिद्ध जैन महिला चट्टलदेवी प्रमुख थे।

श्रीविजय के शिष्यों में श्रेयासदेव को लेख नं० २१३ में उर्वीतिलक जिनालय का प्रतिष्ठापक लिखा है। दूसरे शिष्य कमलभद्र लेख नं० २१४ और २१६ के अनुसार भुजबल शान्तर आदि तथा चट्टल देवी द्वारा सम्मानित थे। तीसरे शिष्य अजितसेन[1] बड़े ही विद्वान् थे। उनकी कई उपाधियाँ थीं—जैसे शब्द-

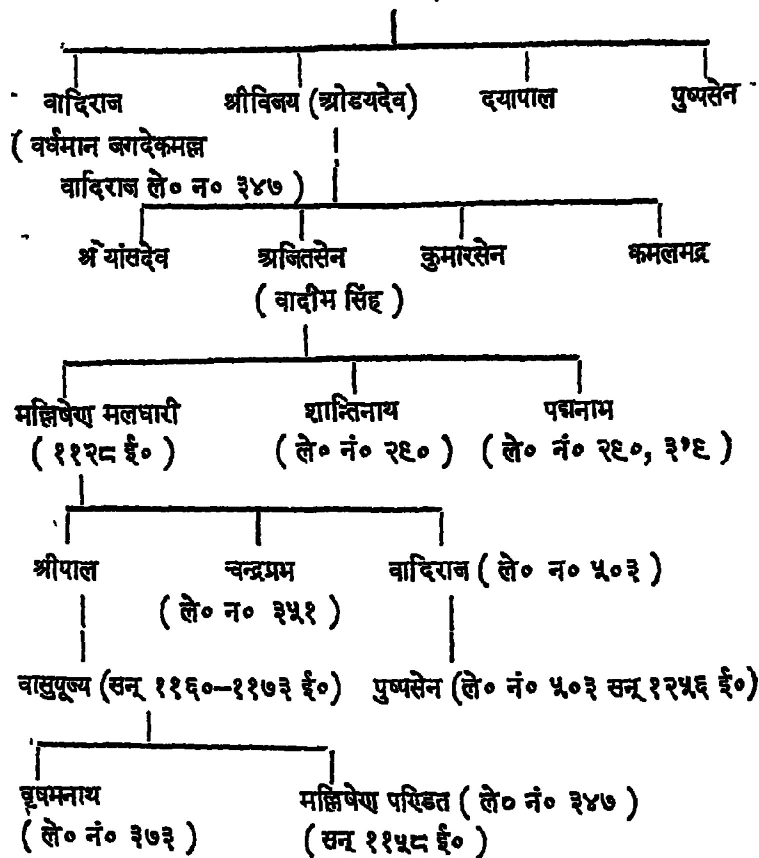
---

१. कुछ विद्वान् इन अजितसेन वादीभसिंह का गद्यचिन्तामणि और क्षत्रचूडामणि के कर्ता वादीभसिंह अजितसेन से साम्य स्थापित करते हैं, पर यह ठीक नहीं क्योंकि ग्रन्थकर्ता अजितसेन के गुरु का नाम पुष्पसेन था। इस लेख के अजितसेन के गुरु-सधर्मा एक पुष्पसेन अवश्य थे पर वे ग्रन्थकर्ता अजितसेन के गुरु थे यह लेखों से नहीं ज्ञात होता।

चतुर्मुख, तार्किकचक्रवर्ती एवं वादीभसिंह (२१४)। लेख नं० २४८ में इन्हें वादिघरट्ट, तार्किक चक्रवर्ती एवं वादीभपञ्चानन कहा गया है। ये विक्रम शान्तर द्वारा पूजित थे। उसने पञ्चवसदि जिनालय के लिए इन्हें ग्रामादि भेंट में दिये थे (२२६)। पीछे विक्रम शान्तर के पुत्र त्रिभुवनमल्ल शान्तर ने अपनी दादी की स्मृति में इन्हीं गुरु का स्मरण कर एक मन्दिर का शिलान्यास किया था (२४८)। इन मुनि के अन्तिम समय का स्मारक लेख न० १३२ है जिसका समय लगभग १०६० ई० दिया गया है। लेख नं० २१४ में इनके सधर्मा मुनि कुमारसेन का नाम दिया गया है जो कि वैद्यगजकेशरी थे। लेख नं० २१३ में इनके समकालीन शान्तिदेव और दयापाल नामक दो मुनियों का उल्लेख है। शान्तिदेव के सम्बन्ध में मल्लिषेण प्रशस्ति में लिखा है कि इनके पवित्र पादकमलों की पूजा होय्सल विनयादित्य द्वितीय (सन् १०४७ से, ११०० ई०) करता था। लेख नं० २०० से भी यह बात समर्थित होती है। इस लेख के अनुसार सन् १०६२ मे इनकी मृत्यु के उपलक्ष्य में एक स्मारक खड़ा किया गया था। दयापाल के सम्बन्ध मे मल्लिषेण प्रशस्ति मे केवल प्रशंसा पद दिये गये हैं।

हुम्मच के लेखों से प्राप्त इतिवृत्त के बाद इस संग्रह के अनेकों लेखों से[1] जो संघ की आचार्यपरम्परा ज्ञात होती है वह इस प्रकार है—

१—इस संग्रह के अन्य लेख हैं—२६४, २६५, २७४, २८७, २८८, २९० ३०५, ३१९, ३२६, ३२७, ३४७, ३५१, ३७३, ३७५, ३७९, ३८०, ४१०, ४२५ और ४६६.



मूलसंघ के गण, गच्छ एवं अन्वय

हम पहले लिख चुके हैं कि यापनीय और द्रविड संघ के वर्णन के बाद मूलसघ के गण गच्छादि का लेखों से प्राप्त होने वाले वाला परिचय देंगे। इसके सम्बन्ध में ११ वीं शताब्दी के आचार्य इन्द्रनन्दि के श्रुतावतार में और उसके

अनुकरण पर पीछे १४ वीं शताब्दी में लिखे गये लेखो (५६६ प्रथम भा० १०५, और ६२५ प्रथम भाग० १०८) मे लिखा है कि अर्हद्बलि आचार्य ने आपसी द्वेष को घटाने के लिए सेन, नन्दि, देव और सिंह नाम से चार सघों की रचना की थी अथवा अकलंक देव के स्वर्गवास के बाद संघ, देश भेद से उक्त चार भेदों मे विभाजित हो गया, इनमें कोई चरित्रभेद नही है आदि, पर ऊपर जैन सघ के विकासक्रम को दिखाते हुए हमें यह लगता है कि यह बहुत कुछ मूलसघ कुन्दकुन्दान्वय को नव सगठित करने वाले आचार्यों की कल्पना थी इसके पीछे ऐतिहासिक आधार कम है।

देवगण—लेखों के निर्देशानुसार मूलसंघ के अन्य गणों से देवगण कुछ प्राचीन है यह हम कह आये हैं। इस गण का अस्तित्व लक्ष्मेश्वर से प्राप्त चार लेखों (१११,११३,११४ और १४९) से तथा कडवन्ति से प्राप्त ११ वीं शताब्दी के एक लेख (१९३) से मालुम होता है। इसके पश्चात् और लेखों में इसका उल्लेख नही मिलता। देवगण यह नाम कैसे पड़ा यह तो तत्कालीन लेखों से ज्ञात नहीं होता पर उक्त गण के सभी आचार्यों के नाम देवान्त देख यह लगता है कि इससे ही देवगण नाम पड़ा हो। आचार्यों के नाम इस प्रकार हैं—पूज्यपाद, उदयदेव, (११३) रामदेव, जयदेव, विजयदेव (११४) एकदेव, जयदेव (१४९) अङ्कदेव, महीदेव (१९३)। इनमे पूज्यपाद को कुछ इतिहासज्ञ अकलकदेव पूज्यपाद मानते हैं। यदि यह सत्य है तो कहना होगा कि अकलकदेव ही इस गण के प्रतिष्ठापक थे।

सेनगण—देवगण के समान सेनगण भी प्राचीन है। एक दृष्टि से तो उससे भी प्राचीन है। यद्यपि लेखों में इसका सर्वप्रथम उल्लेख मूलगुण्ड से प्राप्त लेख न० १३७ (सन् ९०३) मे हुआ है पर इसके पहले नवमी शताब्दी के उत्तरार्ध (सन् ८९८ के पहले) मे उत्तरपुराण के रचयिता गुणभद्र ने अपने गुरु जिनसेन और दादागुरु वीरसेन को सेनान्वय का कहा है। पर जिनसेन

और वीरसेन ने जयधवला और धवला टीका में अपने वंश को पञ्चस्तूपान्वय[1] लिखा है। यह पञ्चस्तूपान्वय ईसा की पाचवीं शताब्दी में निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय के साधुओं का एक सघ था यह बात पहाड़पुर (जिला राजशाही, बंगाल) से प्राप्त एक लेख से मालुम होती है[2]। पञ्चस्तूपान्वय का सेनान्वय के रूप में सर्वप्रथम उल्लेख गुणभद्र ने, संभव है अपने गुरुओं के सेनान्त नाम को देखते हुए किया है। इससे हम कह सकते हैं कि गुणभद्र के गुरु जिनसेनाचार्य इस गण के आदि आचार्य थे।

मूलगुण्ड के लेख न० १३७ मे सेनगण को सेनान्वय लिखा है और किसी आसार्य नाम के व्यक्ति द्वारा उक्त वश के कनकसेन मुनि को एक खेत दान देने का उल्लेख है। लेख मे कनकसेन को वीरसेन का शिष्य लिखा है और वीरसेन के आगे दो नाम—पूज्यपाद और कुमारसेन–दिये हैं पर उनसे वीरसेन का सवन्ध नहीं वतलाया। हमारी समझ मे पूज्यपाद देवगण के अकलक देव पूज्यपाद थे जिनकी कृतियो का मर्म वीरसेन स्वामी ने अच्छी तरह समझा था और काल की दृष्टि से भी वीरसेन (सातवीं का उत्तरार्ध और आठवीं का पूर्वार्ध) अकलकदेव (सातवीं शताब्दी) से दूर नही है। कुमारसेन का उल्लेख द्वितीय जिनसेन (पुन्नाटसघीय) ने अपने हरिवशपुराण मे वीरसेन गुरु से पहले किया है और उनके शिष्य के रूप मे प्रभाचन्द्राचार्य को लिखा है।

इसके वाद इस गण के लेखों मे सेनगण के साथ पोगरि गच्छ का उल्लेख हैं जो कि १३ वीं शताब्दी तक के लेखों मे मिलता है। इन लेखों ने जिस तरह आचार्यों का निर्देश है। उससे इस वश की कोई गुरुपरम्परा नहीं निर्मित की जा सकती। लेख न० १८६ (सन् १०५४ ई०) २१७ (१०७७ई०) तथा ५११ (सन् १२७१ ई०) मे एक महासेन नामक मुनि का नाम आता है।

---

१. पञ्चस्तूपान्वय का मूल कुछ विद्वान् पूर्वीय वगाल से और कुछ मथुरा के पञ्चस्तूपों से, जिनका उल्लेख हरिषेण के कथाकोष मे हैं, मानते हैं।

२. जैन सिद्धान्तभास्कर भाग १६, किरण १, पृष्ठ १–६।

उन्हें ब्रह्मसेन का प्रशिष्य और आर्यसेन का शिष्य लिखा है तथा , लेख नं० २१७ में गुणभद्र के सहधर्मी के रूप में लिखा है और उनके किसी विद्वान् शिष्य रामसेन का नाम दिया है पर लेख न० ५११ में वीरसेन,जिनसेन और गुणभद्र का उल्लेख कर बिना कोई सम्बन्ध बताये महासेन और उसके बाद उनके शिष्य पद्मसेन का नाम है। इस सबसे यह मालुम होता है कि तीनो लेखों के महासेन जुदे २ व्यक्ति थे। हिरे आवलि से इस गण के पाँच लेख प्राप्त हुए हैं जो कि १२ वीं से १५ वी शताब्दी के बीच के हैं। जिनसे प्रतीत होता है कि यह स्थान इस गण के साधुओं का प्रमुख केन्द्र रहा है। लेख न० ५३८ (१३ वीं शताब्दी का उत्तरार्ध) में सेनगण के साथ कुन्दकुन्दान्वय जुड़ा है और किन्हीं कन्तरसेन का उल्लेख है, तथा लेख न० ६१४ (सन् १४२१ ई०) में इस गण के मुनिभद्र स्वामी का नाम दिया गया है। संभव है १५ वीं शताब्दी से इस गण का प्रभाव क्षीण होने लगा था।

देशिय गण और कोण्डकुन्दान्वयः—देशिय गण इस संग्रह के अनेकों लेखो में देशिय, देशिक, देशिग, देसिय, देसिग एवं महादेशिगण नाम से कहा गया है। इन नामों से ऐसा लगता है कि देशिय शब्द देश शब्द से निकला है। देश का साधारण अर्थ प्रान्त होता है। दक्षिण भारत में कन्नड प्रान्त के उस हिस्से को, जो कि पश्चिमी घाट के उच्चभूमि भाग (बालाघाट) और गोदावरी नदी के बीच में है, एक समय देश नाम से कहते थे। वहाँ के ब्राह्मण अब भी देशस्थ ब्राह्मण कहलाते हैं। संभव है कि देश नामक प्रान्त मे में रहने वाले साधु समुदाय को शुरू में देशिय कहा जाता हो और पीछे वही एक प्रमुख गण के रूप मे परिणत हुआ हो[1]।

प्रचलित कुन्दकुन्दान्वय का लेखगत प्राचीन नाम कोण्डकुन्दान्वय है। जिसका अर्थ होता है कोण्डकुन्दपुर से निकला मुनि वंश जैसे अरुङ्गलान्वय, श्रीपुरान्वय कित्तूरान्वय आदि। पर जहाँ वह किसी गण या संघ के विशेषण रूप में

१—देशीगण, जैन एन्टीक्वेरी, भाग १ अं० ३, पृष्ठ ६३-६६.

प्रयुक्त हुआ है वहाँ उस परम्परा से सम्बद्ध गण या संघ समझना चाहिये। कुछ विद्वान् साहित्यिक आधारों के बल पर सिद्ध करते हैं कि मूलसंघ और कोण्ड-कुन्दान्वय पर्यायवाची हैं, आचार्य कुन्दकुन्द ही मूलसघ के आदि प्रवर्तक हैं आदि, पर यह बात ११ वीं शताब्दी के पहले किसी लेख से सिद्ध नहीं होती। मूलसंघ कोण्डकुन्दान्वय का एक साथ सर्व प्रथम प्रयोग लेख नं० १८० (लगभग सन् १०४४ ई०) में हुआ है। हाँ, कोण्डकुन्दान्वय का स्वतन्त्र प्रयोग ८-६ वीं शताब्दी के लेख न० १२२, १२३ और १३२ मे देखा गया है। लेख नं० १२३ (सन् ८०२ ई०) में कोण्डकुन्दान्वय को गण भी माना गया है। लेख नं० १३२ में इस अन्वय के एक आचार्य मौनि सिद्धान्तदेव भटार का नाम दिया गया है। लेख न० १२२-१२३ में इस वंश के तीन आचार्यों-तोरणाचार्य, पुष्पनन्दि और प्रभाचन्द्र-के नाम दिये गये हैं। लेख न० १२२ से ज्ञात होता है कि गङ्गनरेश मारसिंह प्रथम के प्रभावक सेनापति श्रीविजय ने मण्णे में एक विशाल जिनालय बनाकर प्रभाचन्द्र मुनि को बसदि के लिये एक गाँव और कुछ भूमियाँ दान में दीं। इसी तरह लेख न० १२३ से ज्ञात होता है कि उक्त श्रीविजय द्वारा निर्मापित जिनभवन के लिए प्रभाचन्द्र मुनि के शिष्य वप्पय्य ने एक गाँव दान में दिया। पुष्पनन्दि के शिष्य प्रभाचन्द्र कौन थे, यह अन्य आधारों से पता नहीं लगता। लेख में इन्हें चन्द्रमा के समान निर्मल चारित्र वाला लिखा है। पुष्पनन्दि को गणाग्रणी (१२२) और उपशम भावना से कल्मष हीन (१२३) तथा उनके गुरु तोरणाचार्य को कोण्डकुन्दान्वय में उत्पन्न तथा शाल्मलि ग्राम का निवासी बतलाया गया है। लेख नं० १२२ में इनके सम्बन्ध में लिखा है कि उन्होंने अज्ञान अन्धकार को नष्ट कर सत्पथ में लोगों को स्थापित किया था तथा अपने तेज से पृथ्वी को प्रकाशित करते हुए वे सूर्य के समान सुशोभित थे।

कोण्डकुन्दान्वय के साथ देशीय गण का सर्वप्रथम प्रयोग लेख नं० १५० (सन् ६३१ ई०) में हुआ है। कुछ विद्वान् मर्करा के ताम्रपत्रों (६५) को प्राचीन (सन् ४६६ ई०) मानकर देशीयगण कोण्डकुन्दान्वय का अस्तित्व एव

उल्लेख वहुत प्राचीन मानते हैं पर परीक्षण करने पर उक्त लेख बनावटी सिद्ध होता है[1], तथा देशीयगण की जो परंपरा वहाँ दी गई है वह लेख न० १५० के वाद की मालुम होती है।

---

१. मर्करा के ताम्रपत्र सन् १८७२ में इण्डियन एण्टीक्वेरी भाग १, पृष्ठ ३६३–३६५ मे स्व० वी० एल० राइस महोदय ने मूल तथा अनुवाद के साथ प्रकाशित करवाये थे। ये ताम्रपत्र ८ इञ्च लवे तथा ३.२ इञ्च चौड़े हैं पर मोटाई मे एक से नहीं। इनमें गङ्गवशी नरेश कोंगुणि प्रथम से लेकर अविनीत तक की वंशावली दी गई है और लिखा है कि अकालवर्ष पृथुवीवल्लभ के मंत्री (जिसका नाम नही दिया गया) ने (किसी) सवत् ३८८ के माघ महीने की शुक्ल ५, सोमवार, स्वातिनक्षत्र में वदणेगुप्पे नामक ग्राम तलवन नगर के श्रीविजय जिनालय के लिए देशिगण, कोण्डकुन्द अन्वय के चन्द्रणन्दि भट्टार (जिनकी गुरुपरम्परा लेख मे दी गई है) को भेंट में दिया।

लेख का परिचय देते हुए बर्नेस महोदय ने लेख के सवत् को विल्सन सा० के 'मैकेन्जी कलेक्शन' के आधार पर शक संवत् माना है पर ज्योतिष शास्त्र के आधार पर उक्त संवत् के दिन और नक्षत्र को ठीक नहीं वतलाया। तदनुसार सोमवार, स्वाति नक्षत्र के स्थान मे वहाँ बुधवार उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र होना चाहिए था।

दूसरी एक और वात कि, लेख में आगे 'अविनीत महाधिराजेन दत्तेन' आदि शब्द लिखकर अविनीत और अकालवर्ष के मंत्री के बीच क्या संबन्ध था यह स्पष्ट नहीं किया गया।

लेख की आगे की पंक्तियों से द्योतित होता है कि 'उसने (मत्री ने) आस पास के ६ गाँवों पर आतङ्क फैलाकर उन पर अधिकार करके सन्धि द्वारा उयम्बलि एवं तलवनपुर को लेकर तथा पिरिकेरे में राजकीय अधिकारों को संचालित कर (राजमान अनुमोदन) एक मनोहर ग्राम 'वदणेगुप्पे' दान में दिया था' (अनुवाद इ० ए० भाग, पृष्ठ ३६५)। उपर्युक्त

वर्णन हमें बलात् राष्ट्रकूट वंश के इतिहास की ओर ले जाता है। इस वंश में अकाल वर्ष उपाधिधारी तीन नरेश हुए हैं। उन सभी का नाम कृष्ण था। कृष्ण प्रथम का समय सन् ७५८ से ७७८ ई० के लगभग, द्वितीय का सन् ७७९ से ९१४ के लगभग, तथा तृतीय का सन् ९३७ से ९६८ ई० के लगभग बतलाया जाता है।

लेख का तलवनपुर वर्तमान तलकाड नामक ग्राम ही है जो कि मैसूर से २८ मील दूर कावेरी के बाये किनारे पर स्थित है। गङ्ग वंश की राजधानी यहीं थी। बदणेगुप्पे, तलकाड से ५–६ मील दक्षिण मे नदी के दूसरे किनारे 'बदनकूपम्' नामक ग्राम के रूप में पहिचाना गया है (दि० च० सरकार–सक्शेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २६८)। गंग राज्य के एक प्रान्त गङ्गवाडी पर, जिसमें कि तलवनपुर, मण्णे (मान्यपुर) आदि अवस्थित हैं, राष्ट्रकूट कृष्ण प्रथम (अकालवर्ष) ने आधिपत्य स्थापित किया था यह हमें मन्ने से प्राप्त तलेगाव-ताम्रपत्रो से विदित होता है (अल्तेकर-राष्ट्रकूटाज, पृ० ४४)। इसके बाद राष्ट्रकूट साम्राज्य के अन्त होने तक गङ्ग-प्रान्त राष्ट्रकूट नरेशों के अधीन था। अतएव मर्करा के ताम्रपत्रों के अकाल वर्ष पृथुवीवल्लभ को उक्त वश के तीन अकालवर्ष उपाधिधारी नरेशों में से एक होना चाहिए।

यह कौन नरेश था इस बात का पता हमें यदि लेख में मन्त्री का नाम दिया होता तो कुछ हद तक लग सकता था पर दुर्भाग्य से वह नहीं दिया गया। फिर भी श्रीविजय जिनालय का नाम (जिसके लिए दान दिया गया था) हमें इस सम्बन्ध में कुछ सहायता देता दिखाई देता है। इस संग्रह के मन्ने से प्राप्त दो लेखो (१२२–१२३) में एक श्रीविजय का उल्लेख है जो कि सन् ७९७ ई० में गङ्ग नरेश मारसिंह के प्रभावक सेनापति के रूप में और सन् ८०२ मे राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय (सन् ७८३–८१४ ई०) के ज्येष्ठ भ्राता एव गङ्गवाडी प्रान्त के उपशासक (Viceroy) कम्भ (स्तम्भ-रणावलोक) के अधीन तथा मन्ने के आसपास के क्षेत्र का महासामन्त एवं

शासक के रूप में बतलाया गया है। यह श्रीविजय बड़ा ही जिनभक्त था। इसने मरणे में एक विशाल जिनालय बनवाया था (१२२, १२३)। इस संग्रह के बाहर के एक जैन लेख (मै० आ० रि० १९२१, पृष्ठ ३१) से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट कम्भ ने सन् ८०७ ई० में अपने पुत्र की प्रार्थना पर तलवनपुर के श्रीविजय जिनालय के लिए कोण्डकुन्दान्वय के कुमारनन्दि भटार के प्रशिष्य एवं एलवाचार्य के शिष्य वर्धमान गुरु को बदणेगुप्पे ग्राम दान में दिया। यह श्रीविजय जिनालय बहुत कर जिनभक्त महासामन्त श्रीविजय द्वारा ही निर्मापित हुआ था (सालेतोरे-'मेडीवल जैनिज्म' पृष्ठ ३८)।

उपर्युक्त विवेचन से ऐसा प्रतीत होता है कि तलवननगर मे श्रीविजय जिनालय का निर्माण राष्ट्रकूट नरेश गोविन्द तृतीय के शासनकाल में हुआ था इसलिए उक्त ताम्रपत्रों का अकालवर्ष राष्ट्रकूट कृष्ण प्रथम तो हो नहीं सकता, क्योंकि वह गोविन्द तृतीय का पितामह था। तब उसे कृष्ण द्वितीय या तृतीय में से कोई होना चाहिए।

अब हम मर्करा के ताम्रपत्रों के उस वक्तव्य की ओर ध्यान देते हैं जिसमें अकालवर्ष के मन्त्री द्वारा आसपास के गावों पर आतंक या आक्रमण आदि की चर्चा है। तलवनपुर पर आक्रमण का संकेत हमें कृष्ण तृतीय के राज्यकाल में मिलता है। उक्त नरेश ने अपने बहनोई एवं सामन्त गाङ्ग नृप बुतुग द्वितीय का पक्ष लेकर तलवनपुर पर चढ़ाई की (संभव है मन्त्री द्वारा की) और उसके ज्येष्ठ भ्राता राचमल्ल तृतीय का वध कर गङ्गवंश की राजगद्दी पर उसे बैठाया (अल्तेकर, राष्ट्रकूटाज, पृ० ११२–११३)। यह एक घरेलू झगड़ा रहा होगा, इसीलिए मर्करा के ताम्रपत्रों में इसका संक्षिप्त में आभास दिया गया है। कृष्ण तृतीय को 'अकालवर्ष पृथुवीवल्लभ' इस समूचे नाम से कहा जाता था, यह बात हरसोल ताम्रपत्रों से भी समर्थित होती है (अल्तेकर, राष्ट्रकूटाज, पृ० १२०)।

यदि किन्हीं कारणों से मर्करा के ताम्रपत्रों को प्राचीन भी मान लिया जाय तो उस लेख के सन् ४६६ के बाद और लेख नं० १५० के सन् ६३१ के पहले ४-५ सौ वर्षों तक बीच के समय में कोण्डकुन्दान्वय और देशिय गण का एक साथ लेखगत कोई प्रयोग न मिलना आश्चर्य की बात है और इतने पहले उस लेख में उक्त दोनों का एकाकी प्रयोग मर्करा के ताम्रपत्रों की स्थिति को अजीब सी बना देता है।

कोण्डकुन्दान्वय के साथ प्रयुक्त होने के पहले देशिय गण का मूलसंघ के साथ प्रयोग एक लेख[१] (१२७ सन् ८६० ई०) में देखा गया है, पर उस लेख की अपनी कहानी है। वह बहुत समय तक ताम्रपत्र के रूप में था पर पीछे (लगभग १२ वीं शता०) मुनि मेघचन्द्र त्रैविद्य के शिष्य वीरनन्दि मुनि ने कुछ लोगों के आग्रह पर उसे पाषाण पर उत्कीर्ण कराया था। इन मेघचन्द्र और वीरनन्दि की शिष्यपरम्परा लेख नं० ५५२ (प्र० मा० ४१ = सन् १३१३) में दी गई है जहां उन्हें मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छ कोण्डकुन्दान्वय का लिखा गया है। देशियगण की एक शाखा पुस्तक गच्छ थी यह बात हमें ई० ११वीं शताब्दी के प्रारम्भ के लेखों से ज्ञात होती है। मूलसंघ के साथ उसका प्रयोग भी ११ वीं शता० (लेख १८०) से होने लगता था पर इसके पहले और लेख नं० १२७ (सन् ८६० ई०) के बाद के करीब १५० वर्षों से ऊपर के समय में एक भी लेख में मूलसंघ के साथ देशियगण, पुस्तक गच्छ के प्रयोग को न देख, और

इस सबसे हमें लगता है कि मर्करा के प्राचीन ताम्रपत्रों को उक्त राजा के काल में पुनः नये रूप में उत्कीर्ण किया गया है तभी इन नामों एवं घटना आदि के साथ दान से सम्बन्धित देशीय गण, कोण्डकुन्दान्वय के आचार्यों के नाम लिखे गये हैं।

१—लेख में राष्ट्रकूट वंशावली दी गई है, जो अन्य लेखों से भिन्न है, पर इसमें अमोघवर्ष के सम्बन्ध में जो घटनायें वर्णित हैं उनको इतिहासज्ञ महत्त्व देते हैं।

केवल उक्त लेख (१२७) में देख सन्देह सा होने लगता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पीछे उत्कीर्ण करते समय उस लेख में संशोधन कर मूलसंघ ला दिया गया है और वह भी, संभव है, यह समझ कर लाया गया है कि लेख के उत्कीर्णन काल १२ वीं शता० में कोण्डकुन्दान्वय और मूलसंघ पर्यायवाची या एक हो गये थे।

इस संबन्ध में लेखीय आधारों से ऐसा प्रतीत होता है कि कोण्डकुन्दान्वय का प्रचलन ई० ७ वीं के उत्तरार्ध से प्रारम्भ हुआ था और उसने ८-९ वीं शताब्दी में प्रभावशाली बनने के प्रयत्न किये थे। उसका प्रथम प्रभाव कर्नाटक प्रान्त के देशस्थ साधुओं पर पड़ा जिसके सम्पर्क से वे कोण्डकुन्दान्वय देशियगण के कहलाने लगे। कोण्डकुन्दान्वय का कुछ प्रभाव द्रविड संघ पर भी पड़ा था ऐसा लेख नं० १६६ से ज्ञात होता है पर संभव है वह प्रभाव स्थायी न था क्योंकि और किसी लेख में द्रविड संघ कोण्डकुन्दान्वय नहीं दिया गया।

हम पहले देख चुके हैं कि मूलसंघ ४-५ वीं शताब्दी में दक्षिण भारत में विद्यमान था। उसकी धारा देवान्त और सेनान्त मुनियों के बीच देवगण और सेनगण के रूप में चल रही थी पर पिछली शताब्दियों जैसा उसका न तो संघटन था और न प्रभाव। ई० सन् ११ वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही उसके पुनर्गठन एवं प्रभाव का क्रम चला ऐसा लेखों से ज्ञात होता है (१८० आदि)। द्रविड संघ के कुछ साधु भी एक बार उसके प्रभाव में थे (१७८)। मूलसंघ के बढ़ते हुए प्रभाव के भीतर यापनीय संघ के कतिपय गण भी इन्हीं शताब्दियों में आये थे, इस ओर हम संकेत कर चुके हैं। संभवतः उस समय नवोदित इतर जैन संघों—द्रविड संघ, काष्ठा संघ—के संघटनों (गण, गच्छ आदि) ने जैन जनता पर विशेष प्रभाव डालना शुरू किया था इसलिए मूलानुगामी मूलसंघ के साधु समूह ने मूल जैनत्व की रक्षा के लिये शायद आन्दोलन कर अपने पुनर्गठन के प्रयत्न में इतर संघों के तत्कालीन अनुकूल गणों को अपने में मिलाने की चेष्टा की हो। यह प्रयत्न पिछली शताब्दियों तक जारी रहा और हम देखते हैं कि १२वीं शताब्दी में द्रविड संघ का एक मात्र आधार नन्दिसंघ भी मूलसंघ कोण्ड-

कुन्दान्वय के संरक्षण मे आने लगा (२५५, प्रथम भाग ४७ आदि) और इस तरह १३वीं शताब्दी के बाद द्रविड सघ का नाम शेष रह गया। काष्ठासघ उत्तर भारत मे आकर अपने अस्तित्व को ईसा की १९वीं शताब्दी तक बनाये रखा यह लेखों से मालूम होता है।'

'इस चर्चा को हम आगे के अनुसधान कर्ताओं पर छोड़ अपने प्रकृत विषय देशिय गण पर आते हैं। यह बात पहले कही गयी है कि इस गण के इतिहास की दृष्टि से लेख न० १५० प्रथम है और मर्करा के ताम्रपत्र द्वितीय हैं। लेख न० १२७ को हमने सन्देह की दृष्टि से देखा है पर उक्त लेख में 'दिंए गण-देशिय गण' के आदि आचार्य के रूप में देवेन्द्र मुनि का नाम लेख न० १५० और बाद के कई लेखों—२०४, २३३ (प्र० भा० ४९२) २५६ (प्र० भा० ५५)—से भी ज्ञात होता है। इसलिए गण की आचार्यपरम्परा की दृष्टि से और उसमें अंकित समय की दृष्टि से भी यदि हम उसे ही देशिय गण का प्रथम लेख मानकर लेख न० १५० और मर्करा के ताम्रपत्रों को दूसरा एवं तीसरा नम्बर दें तो कोई आपत्ति न होगी। उक्त लेखों से निम्न लिखित गुरुपरम्परा बनती है :—

त्रैकाल योगीश (१२७)
|
देवेन्द्र मुनि (सिद्धान्त भट्टार) (१२७, १५०)
|
चान्द्रायणाद भट्टार (१५०)
|
गुणचन्द्र „ (१५०, ९५)
|
अभयणन्दि „ (१५०-९५)
|
शीलभद्र भटार (९५)
|
जयणन्दि „ (९५)
|
गुणणन्दि „ (९५)
चन्दणन्दि „ (९५)

इस परम्परा मे आदि मुनि त्रैकाल योगीश हैं जिनके सम्बन्ध मे विशेष मालुम नहीं। देवेन्द्र सिद्धान्त के सम्बन्ध में कई लेखों को सूचित कर चुके हैं। इनका समय लेख नं० १२७ का ही समय सन् ८६० दिया गया है। १२वीं शताब्दी के द्वितीय, तृतीय और बाद के दशकों के लेखों—न० २५५ (प्र० भा० ४७) २८५ (प्र० भा० ४३) ३२३ (प्र० भा० ५०) एवं ३८८ (प्र० भा० ४२) आदि—मे देवेन्द्र मुनि का नाम तो अवश्य है पर उन्हें एक बड़े विद्वान् मुनि गुणनन्दि के तीन सौ शिष्यों मे उत्कृष्टतम ७२ शिष्यों मे से एक बताया गया है पर इस बात का उक्त लेखों से पहले के लेखो से समर्थन नहीं होता।

उक्त गुरुवंश मे देवेन्द्र मुनि के बाद चान्द्रायणद भट्टार का नाम आता है जो कि आचार्य का नाम न मालुम होकर उपाधि मालुम होती है। लेख नं० २५६ मे देवेन्द्र मुनि के शिष्य का नाम चतुर्मुखदेव दिया है और लिखा है कि वे चारों दिशाओं की ओर प्रस्तुत मुख होकर अष्टोपवास व्रत करते थे इससे चतुर्मुख कहलाये। चान्द्रायणद उपाधि भी चान्द्रायण व्रत को सूचित करती है जो कि अष्टोपवास हो जैसा है। शेष दूसरे मुनियों के सम्बन्ध मे हमें विशेष मालुम नहीं। लेख नं० १२७ के अनुसार देवेन्द्र मुनि को अमोघवर्ष प्रथम ने तलेयूर ग्राम तथा दूसरे गाँवों की जमीनें दान में दी थीं। लेख नं० १५० में अभयणन्दि की व्रतपरायणा शिष्या नाणब्बे कन्ति का उल्लेख है तथा लेख नं० ९५ (मर्करा ताम्रपत्र) में चन्दणन्दि भटार को श्रीविजय जिनालय के लिए अकालवर्ष नृप (कृष्ण तृतीय) के मंत्री द्वारा बदणेगुप्पे नामक गाव के दान का उल्लेख है।

इस गण के आदिम आचार्यों के नाम के साथ भट्टार पद जुड़ा है। यह हमें उपर्युक्त केवल तीन लेखों से ही नहीं मालूम होता बल्कि लेख नं० १५८ और २०४ से भी ज्ञात होता है। यथार्थ में ९ वीं-१० वीं शताब्दी के अनेकों लेखों (१३१, १३२, १३४, १३५, १३६, १४४, १४९ आदि) में मुनियों की उपाधि भट्टार दी गई है। पीछे के लेखों में इस गण के आचार्यों को उपाधि सिद्धान्त-देव, सैद्धान्तिक तथा त्रैविद्य दी गई है।

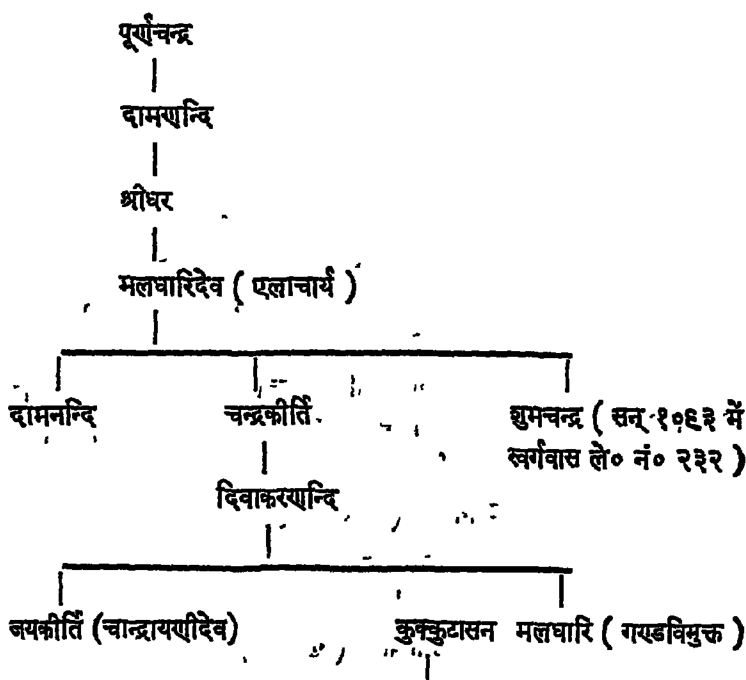
प्रस्तुत संग्रह में देशियगण से संबन्धित ६५-७० लेख हैं पर कुछ ऐसे लेख हैं जिनसे ७-८ आचार्यों का एक गुरुवंश बन सकता है और कुछ से गण की विभिन्न पट्टावलियां। लेखों के पर्यालोचन से विदित होता है कि कर्नाटक प्रान्त के कई स्थानों में इस गण के केन्द्र थे। उन स्थानों में हनसोगे (चिक हनसोगे) प्रमुख था। यहाँ के आचार्यों से ही पीछे इस गण की हनसोगे बलि या गच्छ निकले हैं। गच्छ का साधारण अर्थ होता है शाखा और बलि (कन्नड शब्द बलय या बलग) का अर्थ होता है परिवार = आध्यात्मिक परिवार या समुदाय।

चिक हनसोगे से प्राप्त लेख नं० १७५, १९५, १९६ और २२३ से विदित होता है कि यहाँ इस गण की अनेक बसदियाँ (मन्दिर) थीं, जिन्हें चङ्गाल्व नरेशों द्वारा संरक्षण प्राप्त था। हनसोगे (पनसोगे) बलि या गच्छ के आचार्यों की लेख नं० २२३, २३२, २३९, २४१, २५३, २६९, २८४ एवं २८५ की सहायता से प्राप्त एक परम्परा अगले पृष्ठ पर दी गई है। इसका बहुत कुछ समर्थन धवला के अन्त में दी गई आचार्य शुभचन्द्र सिद्धान्तदेव की ग्रन्थप्रशस्ति से भी होता है[1]।

लेखों से प्राप्त इस गुरुपरम्परा में और प्रशस्ति में दी गई परम्परा में कुछ अन्तर है। प्रशस्ति में गुरुवंश कुन्दकुन्द, गृद्धपिच्छ और बलाकपिच्छ से चला है और इस परम्परा के पूर्णचन्द्र को देशिय गण के प्रतिष्ठापक देवेन्द्र सिद्धान्त से जोड़ने का प्रयत्न हुआ है। उनके बीच में वसुनन्दि और रविचन्द्र सिद्धान्तदेव नामक दो आचार्यों का नाम दिया गया है। देवेन्द्र सिद्धान्त के पहले गुणनन्दि पण्डित का नाम भी रखा गया है। मालुम होता है कि प्रशस्ति के आधार १२वीं शताब्दी के द्वितीय, तृतीय दशकों के लेख (२५५, २८५ आदि) रहे होंगे। प्रशस्ति के तथा अन्य लेखों के द्वितीय शुभचन्द्र सिद्धान्त देव प्रसिद्ध सेनापति गंगराज के गुरु थे।

---

१. षट्खण्डागम, पुस्तक पृष्ठ ७–१०।



इस गण की एक और शाखा का नाम इंगुलेश्वर बलि है जिसके आचार्य गण प्राय: कोल्हापुर के आस पास रहते थे (४११ एवं ५७१ आदि)। इस से सम्बन्धित अनेकों लेख (४११, ४६५, ५१४, ५२१, ५२४, ५२८, ५७१, ५८४, ५९६, ६००, ६२५ और ६७३) हैं पर इन लेखों से इस गण की ठीक गुरुपरम्परा नहीं दी जा सकती। १२-१३ वीं शताब्दीं के लेखों में माघनन्दि आचार्य का नाम प्रथम दिया गया है (४११, ४६५, ५१४ आदि)। १४ वीं-१५ वीं शताब्दी लेखों में अभयचन्द्र और उसके शिष्य श्रुतमुनि का नाम आगे आता है तथा १६ वीं शताब्दी के लेखों में चारुकीर्ति का नाम।

लेख ४७८ में इस गण की एक वाणद बलिय का नाम दिया गया है।

इस गण का प्रसिद्ध एवं प्रमुख गच्छ पुस्तक गच्छ है। जिसका कि उल्लेख अधिकाश लेखों में है। इसी गच्छ का दूसरा नाम वक्रगच्छ है (२५६, प्रथम भा० ५५ और ४२६)।

नन्दिगण —मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, देशियगण, पुस्तक गच्छ से सम्बन्धित तथा सन् १११५ से ११७६ ई० के बीच के श्रवणवेल्गोल से प्राप्त लेख नं० २५५ (४७) २८५ (४३) ३३२ (५०) ३६२ (४०) और ३८८ (४२) में आचार्यों की कई पट्टावलिया दी गई हैं। इनमें बीच-या अन्त में आचार्यों के साथ मूलसघ देशियगण आदि लिखा है पर आदि में दो चार मंगलाचरण के श्लोकों के वाद केवल नन्दिगण का उल्लेख कर एक सामान्य परम्परा दी गई है जो इस प्रकार है:—

पद्मनन्दि (कोण्डकुन्द)

उनके अन्वय में

|

उमास्वाति (गृद्धपिच्छ)

|

बलाकपिच्छ

|

गुणनन्दि

|

देवेन्द्र सैद्धान्तिक

|

कलधौतनन्दि

लेख नं० ३६२ की थोड़ी विशेषता यह है कि बलाकपिच्छ के बाद समन्तभद्र, देवनन्दि (पूज्यपाद) और अकलंक का नाम दिया गया है। इनमें गुणनन्दि,

देवेन्द्र सिद्धान्त आदि देशियगण की परम्परा से सम्बन्धित हैं यह हम पहले देख चुके हैं पर उनके पहले के कोण्डकुन्दाचार्य, उमास्वाति, समन्तभद्र आदि आचार्यों के नाम द्रविड संघ से सम्बन्धित नन्दिगण के ११ वीं शताब्दी के लेखों (२१३, २१४, २८७ आदि) में भी दिखाई देते हैं। इस तरह मूलसंघ और द्रविडसंघ के लेखों में नन्दिगण के प्राचीन आचार्यों के प्राय. एक से नामों को देखकर ऐसा लगता है कि इन दोनों संघों में कोई प्राचीन नन्दिगण (संघ) बाहर से शामिल किया गया होगा, तथा ये सब आचार्य उसी गण के रहे होंगे और इस विषय में हम संकेत भी कर आये हैं कि यापनीय संघ के नन्दिसंघ को ही द्रविड संघ और मूलसंघ ने अपनाया था। यापनीय संघ के साथ नन्दिसंघ के प्रगट या अप्रगट रूप से किये गये कतिपय उल्लेखों से यह ज्ञात होता है कि यापनीयों में नन्दिसंघ महत्त्वपूर्ण था (१०६, १२१, १२४, १४३)। प्राकृत भाषा में नन्दिसंघ की जो प्राचीन पट्टावली उपलब्ध है वह संभव है इसी संघ की थी[1]। उसमें वीर निर्वाण सं० ६८३ तक की वंशपरम्परा दी गई है। संस्कृत में नन्दिसंघ की एक और पट्टावली उपलब्ध है[2] पर वह मूलसंघ के पश्चात्कालीन आचार्यों की है उसका प्राकृत पट्टावलि से कोई सम्बन्ध नहीं।

इस सम्भावना के बाद उपर्युक्त मूलसंघ के लेखों में जो पट्टावलियाँ दी गई हैं उन पर हम संक्षिप्त में कह देना चाहते हैं कि लेख नं० २५५ (४७) और ३२२ (५०) में प्राय. एकसी गुरुपरम्परा दी गई है पर वह कलधौतनन्दि के बाद देशिय गण के उपर्युक्त निर्दिष्ट अन्य लेखों से नहीं मिलती। लेख नं० ३६२ (४०) में देशिय गण को नन्दि गण का प्रभेद कहा गया है और उसमें जो पट्टावली दी गई है वह जैन शिलालेखसंग्रह के प्रथम भाग की भूमिका के पृष्ठ सं० १३२ में अङ्कित है। लेख नं० २८५ (४३) में कलधौतनन्दि एवं रविचन्द्र के बाद जो गुरुपरम्परा मिलती है वह देशिय गण हनसोगे बलि की पट्टा-

---

१. पट्खण्डागम, पुस्तक १, पृष्ठ २४-२७

२. जैन सिद्धान्त भास्कर, भाग १, किरण ४ पृष्ठ ७१, ८१.

वली में हमने जो दी है वही है। लेख नं० ३८८ (४२) में इनसोगे वलि के मलधारि देव के बाद एक दूसरी गुरुपरम्परा दी गई है जो उक्त लेख से जान लेना चाहिये।

इसके बाद लेख नं० ५८६ (१०५, १४वीं शताब्दी) और ६२५ (१०८, १५ वी शताब्दी) में नन्दिगण को नन्दिसघ कहा गया है और उसे मूलसघ के अर्थ में प्रयुक्त किया है। इन दोनों लेखों में सेन, नन्दि, देव और सिंह संघों का एक काल्पनिक इतिहास दिया गया है। लेख नं० १०५ के ऐतिहासिक महत्त्व के लिए प्रथम भाग की भूमिका के पृष्ठ १२४-१२७ देखें। ये दोनों लेख एक सुन्दर काव्य कहे जा सकते हैं।

सूरस्थगण.—मूलसंघ का एक गण सूरस्थ गण नाम से प्रसिद्ध था यह लेख नं० १८५ २३४, २६६, ३१८, ४६० और ५४१ से ज्ञात होता है। लेखों में इसका सूरस्त, सुराष्ट्र एवं सूरस्थ नाम से उल्लेख है। इन लेखों मे इसके अन्वय गच्छ आदि का निर्देश नहीं है पर इस संग्रह के वाहर के कुछ लेखों से ज्ञात होता है कि इसमें चित्रकूट अन्वय या गच्छ था[1]। सूरस्थ एवं सूरस्त नाम कैसे पड़े यह कहना कठिन है। सुराष्ट्र नाम से प्रतीत होता है कि इस गण के साधु शुरू मे सुराष्ट्र देश में रहते रहे होंगे, पर सुराष्ट्र का प्राकृत या अपभ्रंश रूप तो सुरट्ठ होता है सूरस्थ नहीं। संभव है उत्कीर्णक ने सुरट्ठ का पुन संस्कृत रूप देने के प्रयत्न में सूरस्थ कर दिया हो पर यह भी एक दो लेख में सम्भव था सब में नहीं। इस तरह सूरस्थ गण की व्युत्पत्ति अब भी भ्रान्त है। हो सकता है कि कोई सूरस्त नाम का दक्षिण भारत में क्षेत्र हो जहाँ से इस गण के मुनियों ने अपना नाम ग्रहण किया हो।

सूरस्थ गण का सर्वप्रथम उल्लेख सन् ६६४ के एक जैन लेख में मिलता है। कहा जाता है कि सूरस्थ गण प्रारंभ में मूल संघ के सेनगण से सम्बन्धित था[2]।

---

१. जैन एन्टीक्वेरी, भाग-११, अक २, पृष्ठ ६३, ६५

२. जैनिज्म इन साउथ इण्डिया, लेख नं० ४६ पृष्ठ ३६७–३७४ (जीवराज ग्रन्थमाला सोलापुर)

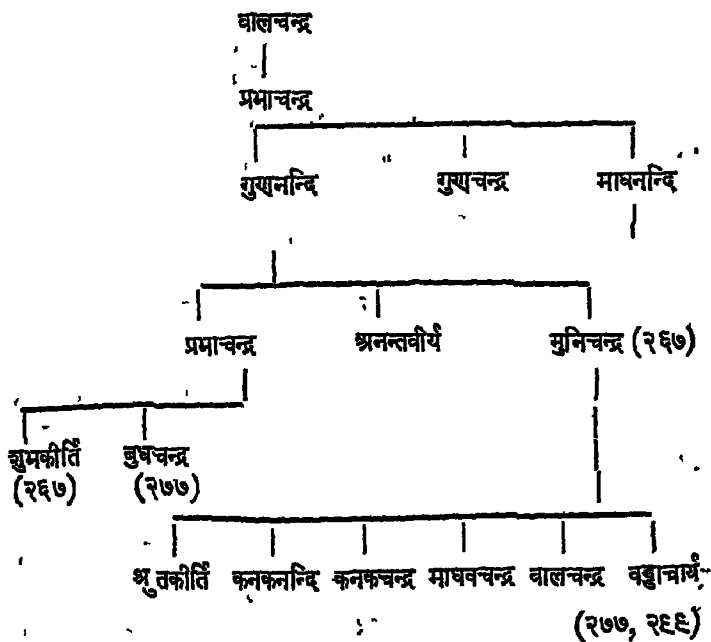
इसके बाद प्रस्तुत संग्रह के ११ वीं शताब्दी के पूर्वार्ध के लेख नं० १८५ में इसका उल्लेख है जहाँ यह मूलसंघ के साथ द्रविड़ान्वय से युक्त है। इस पर हम अनुमान करते हैं कि द्रविड़ संघ के आदि गठन काल में, संभव है, इस गण के साधुओं ने भाग लिया हो या उस संघ के साधुगण मूलसंघ सूरस्थ गण में सम्मिलित रहे हों। इस गण के लेख, ११ वीं के पूर्वार्ध से लेकर १३ वीं शता० के अन्त तक के मिलते हैं। सभी लेख छोटे हैं केवल लेख नं २६६ को छोड़कर। इसमें सौभाग्य से इस गण की एक छोटी पट्टावली दी गई है जो इस प्रकार है:— अनन्तवीर्य, बालचन्द्र, प्रभाचन्द्र, कल्नेलेय देव (रामचन्द्र), अष्टोपवासि, हेमनन्दि, विनयनन्दि, एकवीर और उनके सधर्मा पल्लपण्डित (अभिमानदानिक)। लेख में पल्ल पण्डित की बड़ी प्रशंसा है। इनका समय सन् १११८ ई० (२६६) दिया गया है। इस गण के किसी भी लेख में कुन्दकुन्दान्वय का उल्लेख नहीं है। संभव है यह गण मूलसंघ की प्रभावशालिनी कुन्दकुन्दान्वय धारा में स्थान न पाने के कारण पिछली शताब्दियों में अपनी स्थिति को न सम्हाल सका हो।

क्राणूर गणः—क्राणूर गण के सम्बन्ध में यापनीय संघ के विवेचन में हम संभावना प्रकट कर आये हैं कि क्राणूर गण यापनीयों के कण्डूर गण के नाम का शब्दानुकरण है। कण्डूर या क्राणूर दोनों किसी स्थान विशेष को सूचित करते हैं जहाँ से कि उक्त गण के साधु समुदाय ने नाम ग्रहण किया है। इस गण के ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध (२०७, सन् १०७४ ई०) से लेकर १४ वीं शताब्दी के अन्त तक लेख मिलते हैं। इस संग्रह में १७-१८ लेख इस गण से सम्बन्धित हैं जिनसे मालुम होता है कि इसमें प्रसिद्ध दो गच्छ थे—मेषपाषाण गच्छ (२१६, २६७, २७७, २६६, ३५३) तथा तिन्त्रिणीक गच्छ (२०६, २६३, ३१३, ३७७, ३८६, ४०८, ४३१, ४५६, ५८२)। मेषपाषाण का अर्थ है मेषों के बैठने का पाषाण। यह कोई स्थल विशेष होना चाहिए जहाँ से इस गण के के साधुओं का शुरू शुरू में सम्बन्ध रहा होगा। तिन्त्रिणीक एक वृक्ष का नाम है। ये पाषाणान्त और वृक्ष परक नाम इस गण के यापनीय संघ के साथ पूर्व सम्बन्ध

ो स्मृति दिलाते हैं।

लेख नं० २६७, २७७ और २६६ से मेषपाषाणगच्छ की इस प्रकार गुरु-रम्परा प्राप्त होती है (तिथिक्रम के अनुसार लेख नं० २६६ (पुरले) को सबसे हले होना चाहिए)।

सिंहनन्दि आदि अनेकों आचार्यों के नाम बिना किसी सम्बन्ध को दिखाये

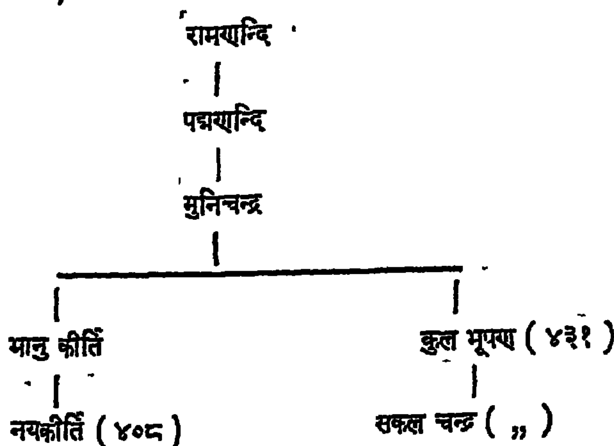


१. यापनीयों में श्रीमूलमूलगण पुन्नागवृक्षमूलगण तथा कनकोपल (कनकपाषाण) आदि गण थे। गण एवं गच्छ पीछे एकार्थ में भी प्रयुक्त हुए हैं।

इन लेखों में मूलसंघ कुन्दकुन्दान्वय के नाथ स्वरूप सिंहनन्दि आचार्य का उल्लेख है, जिन्हें गंग महीमण्डलिककुलसंधरण या समुद्धरण कहा गया है। लेख नं २७७ में अर्हद्बलि, बेट्टद-दामनन्दि भट्टारक, बालचन्द्र भट्टारक, मेघचन्द्र त्रैविद्य आदि आचार्यों के नाम बिना किसी सम्बन्ध बताये दिए गये हैं।

इन लेखों से ज्ञात होता है कि ११-१२ वीं शताब्दी के गंगनरेश भुजबल गंग वर्मदेव उसकी रानी गंग महादेवी तथा चार पुत्र मारसिंग, नन्नियं गंग, रक्कस गंग और भुजबल गंग चौथी और पांचवी पीढ़ी के आचार्यों के भक्त थे और उन्हें दानादि से सम्मानित किया था।

क्राणूर गण के तिन्त्रिणीक गच्छ की आचार्य परम्परा लेख नं० ३१३, ३७७ ३८६, ४०८ और ४३१ से इस प्रकार मालुम होती है।



इनमें मुनिचन्द्र और उनके शिष्य की लेखों में बड़ी प्रशंसा है। वे कल्याणी के चालुक्यों के अधीन सामन्तों के गुरु थे। भानुकीर्ति यंत्र, तन्त्र, मंत्र में प्रवीण थे। वे वन्दणिकापुर के अधिपति थे (३७७) तथा मण्डलाचार्य कहलाते थे और इस पद पर करीब ४० वर्ष तक रहे (३१३, ४०८)।

मूलसंघ के देशिय गण और क्राणूर गण की अपनी बसदियाँ होती थीं और उन दोनों में वास्तविक भेद था यह बात हमें दक्षिण से प्राप्त एक लेख से मालुम होती है जिसमें लिखा है कि होय्सल सेनापति मरियाने और भरत ने दक्षिण-केरे स्थान में पाँच बसदियाँ बनवायी थीं उनमें चार तो देशिय गण के लिए और एक क्राणूर गण के लिए[1]।

१४ वीं शताब्दी के बाद क्राणूर गण का प्रभाव बलात्कार गण के प्रभावशाली भट्टारकों के आगे क्षीण हो गया। इसके बाद इसके विरले ही उल्लेख मिलते हैं।

बलात्कार गणः—इस गण के सम्बन्ध में हम कह चुके हैं कि नामसाम्य को देखते हुए यह यापनीयों के बलिहारि या बलगार गण से निकला है। बलिहारि और बलगार, सम्भव है, स्थान विशेष के सूचक हैं[2] पर उससे निकले बलात्कार शब्द से ऐसा सूचित नहीं होता। बलात्कार शब्द का अर्थ पीछे १६ वीं शताब्दी के विद्वानों ने बतलाया है कि : चूंकि इस गण के आदि नायक पद्मनन्दि आचार्य ने सरस्वती को बलात्कार से बुलाया था इसलिए बलात्कार गण और सरस्वती गच्छ नाम प्रसिद्ध हुआ[3]। जो हो, लेखों से बलात्कार के इस अर्थ की कोई सूचना नहीं मिलती।

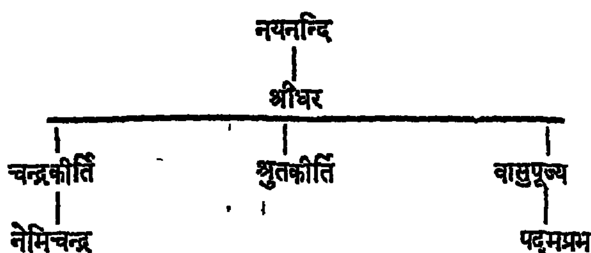
बलात्कार गण का सर्व प्रथम नाम ले० नं० २०८ (सन् १०७५ ई० के लगभग) में मिलता है जिसमे इस गण के चित्रकूटाम्नाय के मुनि मुनिचन्द्र और उनके शिष्य अनन्तकीर्ति का उल्लेख है। लेख २२७ (सन् १०८७ ई०) में इस गण के कुछ मुनियों की परम्परा दी गई है जो निम्न प्रकार हैः—

---

१. जैन एण्टीक्वेरी भाग ६, अंक २, पृष्ठ ६६, नं० ५८

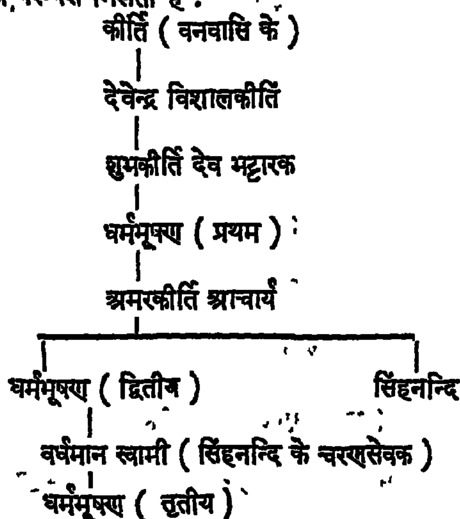
२. दक्षिण भारत में बलगार नामक एक गाव था (मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ २२७)

३. जैन साहित्य और इतिहास (प्र० स०) पृष्ठ ३४३।



लेख के अन्त में गण का नाम वालक्कार गण दिया गया है। इसके वाद लेख नं० २४६ और ४४४ में इस गण के मुनि कुमुदचन्द्र भट्टारक व कुमुदेन्दु का नाम तथा उन्हें कुछ सेट्टियों द्वारा दान का उल्लेख है। लेखों में कोई समय नहीं दिया गया। इसके वाद चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक इस गण के कोई लेख नहीं है। चौदहवीं शता० के उत्तरार्ध के लेखों से इस गण का विशेष प्रभाव द्योतित होता है। विजयनगर साम्राज्य के नरेश इनका सम्मान करते थे। लेख नं० ५६६ में वीर बुक्कराय के राज्यकाल में इस गण के एक अग्रणी आचार्य सिंहनन्दि का उल्लेख है। उनकी उपाधियाँ–राय, राजगुरु तथा मण्डलाचार्य थीं। उक्त लेख उनकी गृहस्थ शिष्या का समाधिमरण स्मारक है।

लेख नं० ५७२ (प्रथम भाग १११) और ५८५ मे इस गण की निम्न प्रकार की परम्परा मिलती है :—



लेख नं० ५८५ बड़े महत्त्व का है। इसमें मूलसंघ के साथ नन्दिसंघ का तथा बलात्कार गण के सारस्वत गच्छ का उल्लेख है। साथ ही इस गण के आदि आचार्य के रूप में पद्मनन्दि को लिखा है और उनके कुन्दकुन्द, वक्रग्रीव, एलाचार्य, गृध्रपिच्छ नाम दिए हैं। हमें लेखों से इस परम्परा के आचार्य अमरकीर्ति तक केवल प्रशंसा के अतिरिक्त विशेष कुछ नहीं मालुम होता है। लेख नं० ५७२ (सन् १३७२) से धर्मभूषण द्वितीय की। उनके शिष्य वर्धमान मुनि द्वारा निषद्या निर्माण का उल्लेख है। लेख नं० ५८५ में सिंहनन्दि आचार्य को सेनापति इरुगप का गुरु लिखा है। ये सिंहनन्दि वे ही प्रतीत होते हैं जिनका उल्लेख हमें लेख न० ५६६ में मिला है। धर्मभूषण तृतीय का कुछ विद्वान् वर्तमान न्यायदीपिका ग्रंथ के कर्ता से साम्य स्थापित करते हैं[1]। ये विजयनगर सम्राट् देवराय के गुरु थे, यह बात हमें लेख नं० ६६७ के एक श्लोक से विदित होती है। देवराय प्रथम का समय सन् १४०६ ई० से १४२२ तक है। लेख में धर्मभूषण तृतीय का समय सन् १३८६ दिया गया है जो संभव है उनके पट्टारोहण के आस पास का समय हो।

लेख नं० ६६७ (सन् १५५४ के लगभग) और ६६१ (सन् १६०८ ई०) में इस गण की एक गुरुपरम्परा इस प्रकार दी गई :—

सिंहकीर्ति
|
मेरुनन्दि, वर्धमान आदि अ
|
विशालकीर्ति (सन् १४६७–१५५४ ई०)
|
विद्यानन्द (सन् १५०२–१५३० ई०)
|
देवेन्द्रकीर्ति (सन् १५३०–१५५० ई)
|
विशालकीर्ति द्वितीय (सन् १५५०–१६०८ ई०)

१. प० दरबारीलाल न्यायाचार्य, न्यायदीपिका, प्रस्तावना, पृष्ठ ६२–६६।

लेख नं० ६६७ में जैनधर्म की प्रभावना करने वाले अनेकों आचार्यों का 'नाम शुरू में दिया गया है जो कि विभिन्न संघों एवं गणों से सम्बन्धित हैं। सिंहकीर्ति से पहले धर्मभूषण तृतीय का भी उल्लेख है पर उन दोनों के बीच कोई सम्बन्ध का निर्देश नहीं है। हो सकता है कि ये सिंहकीर्ति, धर्मभूषण तृतीय से जुदी किसी और गुरुपरम्परा के हों। उन्होंने दिल्ली के बादशाह मुहम्मद सुरित्राण की सभा में बौद्धादि वादियों को जीता था। इस बादशाह का समय सन् १३२६ से १३३७ तक था। मेरुनन्दि आदि के विषय में हमें कुछ नहीं मालुम। विशाल कीर्ति ने विजयनगर नरेश विरूपाक्ष के दरबार में विजय पत्र प्राप्त किया था तथा सिकन्दर सुरित्राण (सुल्तान सिकन्दर सूर सन् १५५४ ई०) के दरबार में विरोधियों को जीता था। इससे विशालकीर्ति का ८०-९० वर्ष का दीर्घ जीवन मालुम होता है। विद्यानंद की उपाधि वादी थी इन्होंने अनेकों दरबारों में विरोधियों को वाद में परास्त किया था। इनकी अनेक यशस्वी विजयों का वर्णन लेख में दिया गया[1] है। इसी तरह उनके शिष्य देवेन्द्रकीर्ति थे। लेख में तिथिका निर्देश नहीं है तथा वर्णन व्यतिक्रम से आचार्यपरम्परा ठीक नहीं मालुम हो पाती।

लेख नं० ६१७ में उत्तर भारत में बलात्कार गण के मदसारद गच्छ की गुरुपरम्परा दी गई है वह निम्न प्रकार है—

धर्म चन्द्र
|
रत्न कीर्ति
|
प्रभा चन्द्र
|
पद्मनन्दि
|
शुभचन्द्र

---

१. जैन एन्टीक्वेरी भाग ४ पृ०१–२१ तथा मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ३७१–३७५।

इसी-तरह लेख न० ७०२ में पश्चिम भारत के बलात्कार गण सरस्वती गच्छ कुन्दकुन्दान्वय की भट्टारक परम्परा दी गई है जो इस प्रकार है—सकलकीर्ति, भुवनकीर्ति, ज्ञानभूषण, विजयकीर्ति, शुभचंद्र, सुमतिकीर्ति, गुणकीर्ति, वादिभूषण, रामकीर्ति तथा पद्मनन्दि ।

काष्ठासंघ

काष्ठासंघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक विवाद हैं । दसवीं शताब्दी में देवसेनाचार्यकृत दर्शनसार ग्रन्थ में लिखा है कि दक्षिण प्रांत में आचार्य जिनसेन के सतीर्थ्य विनयसेन के शिष्य कुमारसेन ने उत्तर पुराण के रचयिता गुणभद्र के दिवगत (सवत् ६५३) होने के पश्चात् काष्ठासंघ की स्थापना की थी, पर यह उल्लेख कालक्रम आदि अनेक दृष्टियों से युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होता है[1] । १७ वीं शताब्दी के एक ग्रन्थ वचनकोश में इस संघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है कि उमास्वामी के पट्टाधिकारी लोहाचार्य ने इस संघ की स्थापना उत्तर भारत के अमरोहा नगर में की थी । इस कथन में सचाई जो हो पर १६-२० वी शताब्दी के लेखों में काष्ठासंघ के अन्तर्गत लोहाचार्य अन्वय का उल्लेख मिलता है । प्रस्तुत सग्रह के एक लेख न० ७५६ (स० १८८१) में यही बात हम पाते हैं ।

इस संग्रह में इस सघ से सम्बन्धित सभी लेख उत्तर और पश्चिम भारत से ही प्राप्त हुए हैं । लेख नं० ६३३ और ६४० में इसका नाम काञ्चीसघ लिखा है, जो कि माथुरान्वय (मयूरान्वय) एव पुष्करगण के साथ होने से लगता है कि यह काष्ठासंघ का ही अपर नाम होना चाहिए । इस संघ के प्रमुख गच्छ या शाखायें चार थीं:— नन्दितट, माथुर, बागड़ और लाटबागड़ । ये चारों नाम बहुतकर स्थानों और प्रदेशों के नामों पर रखे गये हैं । नन्दितट से सबन्धित एक ले० नं० ११६ इस सग्रह के प्रथम भाग में है जिसमें कि नन्दितट को भूलकर मण्डित-तट लिखा गया है । सभव है इस गच्छ का संबन्ध दक्षिण से था । माथुर गच्छ

---

१. जैन साहित्य और इतिहास, पृष्ठ २७७ (द्वि० सं०) ।

या अन्वय से संबन्धित ६ लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। अथूंणा से प्राप्त लेख नं० ३०५, क में यद्यपि काष्ठासंघ का उल्लेख नहीं है फिर भी उसके प्रसिद्ध अन्वय माथुरान्वय का निर्देश है और लेख से इस संघ के एक आचार्य छत्रसेन का नया नाम मालूम होता है। लेख नं० ५८६ में मसार से प्राप्त तीन प्रतिमालेखों में इस संघ के आचार्य कमलकीर्ति का नाम देकर एक लेख मे उन्हें माथुरान्वय का लिखा है। ग्वालियर से प्राप्त दो लेख नं० ६३३ और ६४० में तोमरवंशीय नरेश डूंगरसिंह और उसके पुत्र कीर्तिसिंह (१५ वीं शता०) के समय इस संघ के कतिपय प्रतिष्ठित भट्टारकों के नाम मिलते हैं। लेख नं० ६३३ में भट्टा० गुणकीर्ति और उनके शिष्य यश कीर्ति का उल्लेख है, साथ मे प्रतिष्ठाचार्य श्री पण्डित रइधू का भी। भट्टा० यश.कीर्ति वे ही हैं जिन्होंने अपभ्रंश भाषा में पाण्डवपुराण (वि० सं० १४९७) और हरिवंशपुराण (वि० स० १५००) की रचना की थी। अपभ्रंश चंदप्पहचरिउ भी इनकी रचना है। इन्होंने प्रसिद्ध कवि स्वयम्भू के हरिवंशपुराण की जीर्ण-शीर्ण खण्डित प्रति का समुद्धार भी किया था। ये गुणकीर्ति भट्टारक के अनुज तथा शिष्य भी थे। प्रतिष्ठाचार्य रइधू, प्रसिद्ध कवि रइधू ही हैं जिन्होंने बीसों ग्रन्थों की रचना की थी। ये महान् कवि होने के साथ साथ भट्टारकीय पण्डित थे, प्रतिष्ठा आदि में भाग लेते थे इसलिए प्रतिष्ठाचार्य कहलाते थे। ग्वालियर से प्राप्त ले० नं० ६४० मे और बारा गंज से प्राप्त लेख नं० ६४३ में इस संघ के कुछ दूसरे भट्टारकों के नाम गुरुपरम्परा पूर्वक मिलते हैं, वे हैं—, क्षेमकीर्ति, हेमकीर्ति, विमलकीर्ति (६४०) तथा क्षेमकीर्ति, हेमकीर्ति, कमलकीर्ति एवं रत्नकीर्ति (६४३)। संभव है इन दोनों लेखों के भट्टारक एक परम्परा से सम्बन्धित थे और लेख नं० ६३३ की परम्परा से जुदे थे, क्योंकि ज्ञानार्णव की लेखक-प्रशस्ति से मालुम होता है कि उक्त लेख के भट्टारक यश.-कीर्ति के बाद उनकी गद्दी पर उनके शिष्य मलय कीर्ति और प्रशिष्य गुणभद्र भट्टारक हुए थे[1]। ले० नं० ६४३ में भट्टारक रत्नकीर्ति को मण्डलाचार्य लिखा

१. जैन साहित्य और इतिहास, पृष्ठ ५३५ (प्रथम संस्करण)।

है। माथुर गच्छ (अन्वयं) पुष्कर गण का उल्लेख करने वाला सं० १८८१ का एक लेख पभोसा (कौशाम्बी) से प्राप्त हुआ है जिसमें भट्टारक जगत्कीर्ति और उनके शिष्य ललितकीर्ति का निर्देश है।

माथुर गच्छ या सघ का इतना प्रभाव था कि आचार्य देवसेन को अपने ग्रन्थ दर्शनसार मे इसकी गणना अलग करना पड़ी। माथुर सघ नाम भी स्थान के कारण पड़ा है—मथुरा नगर या प्रान्त का जो मुनिसघ है वह माथुर संघ। मथुरा प्राचीन काल से जैन धर्म का प्रमुख स्थान रहा है यह हम मथुरा से प्राप्त बहुसंख्यक लेखों से जान चुके हैं। स्थान सापेक्षिकता के कारण सघों, गणों एवं गच्छों के नाम को लेकर बाबू कामताप्रसाद जी जैन ने काष्ठासघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे कल्पना की है कि यह सघ मथुरा के निकट जमुना तट पर स्थित काष्ठा ग्राम से निकला[1] है, या हो सकता है कि काष्ठासघ जैन मुनियो के उस साधुसमुदाय का नाम पड़ा जिसका मुख्य स्थान काष्ठा नामक स्थान[2] था।

काष्ठासंघ माथुरान्वय के प्रसिद्ध आचार्यों में सुभाषितरत्नसन्दोह आदि अनेक ग्रन्थों के रचयिता आ० अमितगति हो गये हैं जो परमार नरेश मुंज और भोज के समकालीन थे (वि० स० १०२० से १०७३)।

काष्ठासघ, की दूसरी शाखा लाट वागट से भी सम्बन्धित दो लेख प्रस्तुत सग्रह में हैं और वे हैं दूबकुण्ड से प्राप्त ले० नं० २२८ और २३५। सन् १०८८ ई० के लेख नं० २२८ में इस शाखा (गण) के देवसेन, कुलभूषण, दुर्ल्लभसेन, शान्तिषेण एवं विजयकीर्ति नामक आचार्यों के नाम गुरु-शिष्यपरम्परा के रूप में दिये गये हैं। अन्तिम आचार्य विजयकीर्ति उक्त प्रशस्ति के रचयिता थे। यदि पूर्ववर्ती चार आचार्यों का समय १०० वर्ष मान लिया जाय

१. जैन सिद्धान्त भास्कर भा० २, किरण ४, पृष्ठ २८-२९।
२. पं० नाथूराम जी प्रेमी ने बतलाया है कि दिल्ली के उत्तर में जमुना के किनारे 'काष्ठा' नगरी थी जिस पर नागवंशियों की एक शाखा का राज्य था। १४वीं शताब्दी में 'मदनपारिजात' निबन्ध यहीं लिखा गया था।

तो उसे सन् १०२८ में से घटाने पर देवसेन का समय सन् ६८८ ई० के करीव आ जाता है। देवसेन अपने गण के उन्नत रोहणाद्रि थे। कुलभूषण, दुर्लभसेन निर्मल चरित्रवान् आचार्य थे। शान्तिषेण ने राजा भोज की सभा में अम्बरसेन आदि सैकड़ों वादियों को हराया था। लेख नं० २३५ में काष्ठासघ के महाचार्य श्री देवसेन की पादुकाओं की स्थापना का उल्लेख है। यह लेख प्रथम लेख के ठीक सात वर्ष वाद का है। संभव है इस संघ के प्रमुख आचार्य देवसेन की स्मृति को वनाये रखने के लिए उनकी परम्परा के शिष्यो ने स्थापना की हो।

लाट वागट संघ में प्रद्युम्नचरित्र काव्य के कर्ता आचार्य महासेन हो गये हैं जो कि परमार राजा मुञ्ज के समय वि० स० १०५० के लगभग हुए हैं।

इस संघ के अन्य गणों गच्छों के विषय मे इन लेखो से विशेष कुछ ज्ञात नहीं होता है।

---

४. राज वंश और जैन धर्म

जैन संघ का विस्तृत परिचय जानने के वाद अव हम इन लेखों से प्राप्त होने वाले उत्तर भारत और दक्षिण भारत के राज वशो का परिचय तथा उनके समय मे जैन धर्म की स्थितिका यथाशक्य वर्णन करते हैं।

अ. उत्तर भारत के राज वंश

यद्यपि इस संग्रह मे दक्षिण भारत के लेख अधिक हैं फिर भी उत्तर भारत के जो भी लेख हैं उनसे प्राप्त राज वंशों का परिचय उन वशों के इतिहास के लिए पूरक का काम देता है। इतना ही नहीं कुछ लेख तो ऐसे हैं जो कि कतिपय वशों का परिचय देने में एक मात्र साधन समझे जाते हैं। उदाहरण के लिए उदयगिरि (उड़ीसा) से प्राप्त ले० नं० २ कलिंग सम्राट खारवेल के इतिहास पर, दूवकुण्ड से प्राप्त ले० न० २८८ दूवकुण्ड के कच्छपघातों पर तथा ले० नं० ३०५ क अथूणा की परमार शाखा पर प्रकाश डालते हैं।

प्रस्तुत संग्रह का सर्वप्रथम लेख मौर्य सम्राट् अशोक का है जो कि उसके धर्म

शासनों में सातवाँ माना जाता है। इसका समय लगभग २४२ ई० पूर्व है। यह एक स्तम्भ पर खुदा हुआ है। शिलालेखों में जैनियों का सर्व प्रथम उल्लेख इसी लेख मे निगण्ठ नाम से हुआ है। पाली भाषा मे, जिससे कि इस लेख की भाषा बहुत कुछ मिलती है भगवान् महावीर का निगण्ठ नातपुत्त शब्द से और जैनियों का निगण्ठ (निर्ग्रन्थ) नाम से बीसो जगह उल्लेख किया गया है। उक्त लेख से प्रगट होता है कि बौद्ध सम्राट् अशोक की धार्मिक नीति बड़ी उदार थी। उसने अन्य सम्प्रदायों के समान जैनो का भी अनेकविध उपकार करने के लिए धर्म महामात्य नियुक्त किये थे।

इस सग्रह का दूसरा लेख एक महत्त्वपूर्ण एवं प्रतिनिधि लेख है। इसमें कलिंग के जैन सम्राट् खारवेल का इतिहास दिया गया है जो कि तत्कालीन राजनीतिक एवं धार्मिक इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। यह लेख सन् १८२७ या उसके पूर्व स्टर्लिंग महोदय को मिला था। इसके बाद उसकी पाण्डुलिपि बनाने और उसे पढने मे उच्चकोटि के अनेको विद्वानों ने अथक परिश्रम किया। उनमे जेम्स प्रिन्सेप, जनरल कनिंघम, राजेन्द्रलाल मित्र, भगवानलाल इन्द्र जी, राखालदास बनर्जी, और काशीप्रसाद जायसवाल के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। डा० वेणीमाधव बरुआ ने इस लेख का महत्त्व आकते हुए करीब ३०० पृष्ठों का एक ग्रन्थ ओल्ड ब्राह्मी इन्सक्रिप्सन्स, नाम से लिखा है और अनेक तथ्यों के आधार से यह नया पाठ प्रस्तुत किया है। उन्होंने उक्त लेख का अध्ययन, खारवेल वश से सम्बन्धित अन्य १४ जैन लेखों के साथ करके उक्त वश का एक अच्छा परिचय दिया है। इस तरह इस महत्त्वपूर्ण लेख के अध्ययन में विद्वानों ने १०० से अधिक वर्ष लगाये। अशोक के लेखों के सिवाय, शायद ही अन्य किसी लेख का इस प्रकार अध्ययन किया गया हो। प्रस्तुत सग्रह मे जो पाठ दिया है वह सन् १९२१ तक निर्धारित पाठों में से एक है। इस पर से जो निष्कर्ष निकले थे वे अब बहुत कुछ पुराने एवं भ्रामक कहे जा सकते हैं।

जो हो, खारवेल चेदि (महा मेघवाहन) वंश का तृतीय नरेश था। उदयगिरि से प्राप्त एक लेख से उसके पिता का नाम वक्रदेव ज्ञात होता है। उसने

अपने प्रारम्भिक जीवन के १५ वर्ष कुमारावस्था में और ६ वर्ष युवराज के रूप में विताये। २४ वे वर्ष मे उसका राज्याभिषेक हुआ। उसने लालाक वश के हस्तिसिंह के प्रपौत्र की पुत्री से विवाह किया था। वह जैनधर्म का परम भक्त था इसलिए वह भिक्षुराजा एवं धर्मराजा कहलाता था। पर वह अन्धभक्त न था। अशोक के समान ही अन्य धर्म वालों (पाषण्ड) का भी आदर करता था। राजगद्दी सम्हालते ही उसने दिग्विजय प्रारम्भ की। अपने राज्य के दूसरे वर्ष में उसने दक्षिण भारत पर चढाई की। उस समय उस देश का राजा सातवाहन वंश का सातकर्णि प्रथम था। राज्य के चतुर्थ वर्ष मे उसने किसी विद्याधर नरेश की राजधानी पर अधिकार कर लिया तथा उसी वर्ष वरार प्रान्त के राष्ट्रिक और भोजको को भी परास्त किया। आठवें वर्ष मे उसने गोरथगिरि नामक पहाड़ी किले (गया जिले की 'वराबर' की पहाड़ियों) को नष्ट कर राजगृह पर चढ़ाई की, इस समाचार से मथुरा के यवन राजा के मन में भय का संचार हो गया। ग्यारहवें वर्ष में उसने मसुलीपट्टम् प्रदेश (मद्रास प्रान्त) के राजा की राजधानी पिथुड को नष्ट कर दिया और बारहवें वर्ष में मगधनरेश वृहस्पतिमित्र[1] पर चढाई कर नन्दराजा द्वारा कलिंग से लायी गयी एक जिनमूर्ति को छीन कर ले गया। उसी वर्ष उसने सुदूर दक्षिण के पाण्ड्य नरेश को भी हराया था।

लेख में उसके १४ वर्षों के कार्यों का वर्णन है जिससे ज्ञात होता है कि वह बड़ा ही प्रजाहितैषी था, अनेकों कलाओं में प्रवीण था तथा उसने अनेकों निर्माण कार्य कराये थे। अन्त मे लिखा है कि जिनधर्म भक्त उस राजा ने जैन साधुओं के लिए कुमारी पर्वत (खण्डगिरि) पर ११७ गुफायें बनवायी थीं और पाभार स्थान में एक जैन मठ का निर्माण कराया तथा अनेक स्तम्भ, चैत्यादि भी बनवाये थे।

अनेक प्रमाणों के आधार से इस राजा का समय इतिहासज्ञ ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के लगभग मानते हैं।

---

१. इस नरेश का मामा आषाढसेन जैनधर्म भक्त था यह बात प्रभोसा से प्राप्त लै० नं० ६ से ज्ञात होती है।

इस संग्रह में उदयगिरि खडगिरि की गुफाओं से प्राप्त केवल तीन लेख दिए गये हैं। दो (२,३,) तो खारवेल के वंश से सम्बन्धित हैं। तीसरा लेख (२४५, लग० ११ वीं शताब्दी) केसरीवश के नरेश उद्योतकेसरी के समय का है।

इसके बाद कालक्रम से मथुरा के लेख आते हैं जिनसे हमें शकों के क्षत्रप तथा कुषाणवंशी राजाओं का परिचय मिलता है। उनका वर्णन पहले किया जा चुका है।

कुषाणों के बाद गुप्तवश का राज्य आता है। इस वंश के केवल तीन लेख (६१,६२ एवं ६३) दिये गये हैं। लेख ६१ के प्रथम श्लोक में गुप्त सवत्सर १०६ दिया गया है। लेख ६२ में कुमारगुप्त का नाम एव गुप्त सवत् ११३ दिया गया है। इस लेख की विशेषता यह है कि वह सूचित करता है कि उस समय मे भी कल्पसूत्र की पट्टावली में निर्दिष्ट प्राचीन गण एवं शाखादि विद्यमान थे। लेख नं० ६३ स्कन्दगुप्त के राज्यकाल का है उसमे आदिकर्ता पच तीर्थंकरों की प्रतिमा के स्थापन का उल्लेख है।

उत्तर भारत में गुप्तवंश के बाद ४०० वर्षों में होने वाले किसी राजवंश से संबंधित जैन लेख इस संग्रह में नहीं हैं। हाँ, हर्षवर्धन (सन् ६०६-६४७ ई०) का उल्लेख हमें एहोले से प्राप्त चालुक्य पुलकेशि के एक लेख (१०८) में मिलता है जिसमें लिखा है कि वह पुलकेशिद्वारा विगलितहर्ष किया गया था (हार गया था)। इसी तरह उसी लेख मे कलचूरि वश का उल्लेख है जिसे पुलकेशि के चाचा मंगलीश ने हराया था।

इसके बाद ६ वीं शताब्दी के गुर्जर प्रतिहार वंश के प्रतापी राजा मिहिर-भोज के समय का एक लेख (१२८) देवगढ से प्राप्त होता है जिसमें ९१९ विक्रम सं० अङ्कित है। वहाँ उक्त नरेश को सम्राट् की उपाधि से भूषित पाते हैं। उसके महासामन्त विष्णुराम के शासन मे आचार्य कमलदेव के शिष्य श्रीदेव ने शान्तिनाथ का एक मन्दिर बनवाया था। लेख से मालुम होता है कि उस समय देवगढ़ या उस क्षेत्र का नाम लुअच्छगिरि था।

गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य के पतन के बाद उत्तर भारत में अनेक छोटे छोटे राज्य उदित होते हैं। उनमें चन्देल, परमार, कच्छपघात उल्लेखनीय हैं। इस संग्रह में दुबकुण्ड से प्राप्त लेख (नं० २२८) में दुबकुण्ड शाखा के कच्छपघातों की वंशावली एवं प्रत्येक राजा का महत्त्व बतलाया गया है। इस वंश का द्वितीय नरेश अर्जुन, चन्देल नरेश विद्याधर के अधीन था तथा उसने गुर्जर प्रतिहार नरेश राज्यपाल को युद्ध में मार डाला था तृतीय नरेश अभिमन्यु के शस्त्र प्रयोग से परमार नरेश भोज भी डरता था। यह लेख इस वंश के पांचवें नरेश विक्रमसिंह के समय का है। उक्त नरेश के नगर चन्दोभ (दुबकुण्ड) में कुछ जैन व्यापारियों ने काष्ठासंघ के मुनि विजयकीर्ति की प्रेरणा से एक मन्दिर का निर्माण कराया था। विक्रमसिंह ने उस मन्दिर के लिए कई प्रकार के दान भी दिये। उक्त लेख में काष्ठासंघ के महाचार्य देवसेन से लेकर विजयकीर्ति तक की पट्टावली दी गयी है।

कच्छपघातों की एक शाखा ग्वालियर से भी राज्य करती थी। उसके एक नरेश वज्रदाम के नाम एवं समय को सूचित करने वाला सुहानियाँ से प्राप्त एक लेख नं० १५३ है।

महोबे और खजुराहो से प्राप्त कतिपय लेखों में चन्देल नरेशों के नाम एवं संवत् दिये गये हैं। उनसे उनके राजनीतिक इतिहास पर कोई विशेष प्रकाश नहीं पड़ता, पर जैन धर्म की अच्छी स्थिति का पता अवश्य लगता है।

परमार वंश की मुख्य शाखा के जैन लेख इस संग्रह में नहीं है पर उसकी बांसवाड़ा एवं चन्द्रावती शाखा को बतलाने वाले लेख इस संग्रह में आ सके हैं। लेख नं० ३०५ क से बांसवाड़ा शाखा के मण्डलीक, चामुण्डराज एवं विजयराज का पता चलता है। इस लेख में काष्ठासंघ माथुरान्वय के एक नये आचार्य छत्रसेन का नाम दिया गया है जो कि अच्छे वक्ता थे। लेख में उल्लेख है कि विजयराज के राज्य में भूषण नामक एक जैन ने एक मूर्ति की स्थापना की थी।

चन्द्रावती के परमारों पर प्रकाश डालने वाले आबू से प्राप्त दो लेख

(४७१-७२) हैं। चूँकि उन लेखों का मूल उद्धृत नहीं हो सका इसलिए उनका महत्व बतलाने में कठिनाई है।

गुजरात के चौलुक्य वश के प्रसिद्ध जैन सम्राट् कुमारपाल के राज्य का केवल एक लेख न० ३३२ इस सग्रहमें लिया गया है। यद्यपि यह लेख किसी जैन घटना या दानादि से सम्बन्धित नहीं है पर चूँकि यह दिगम्बराचार्य रामकीर्ति की रचना है इसलिए सग्रह मे आ सका है। यह लेख कुमारपाल के चित्तोड़ आगमन पर लिखाया गया था तथा उसमें उक्त नरेश द्वारा शाकम्भरीश की पराजय और सपादलक्ष देश को मर्दन करने का उल्लेख है। उस समय शाकम्भरी का पति अर्णोराज चौहान था जिसे कुमारपाल ने हराया था और पीछे उसकी बेटी से विवाह किया था। उक्त लेख से वह भी ज्ञात होता है कि उस समय तक कुमारपाल शिवभक्त था। उसने वहाँ समिधेश्वर के मन्दिर के लिए एक गाँव प्रदान किया था।

राजस्थान के चाहमानों (चोहानो) की विविध शाखाओं को द्योतन करने वाले भी कुछ लेख इस सग्रह में निर्दिष्ट हैं पर खेद है कि उनका मूल पाठ नहीं दिया गया जिससे उनका महत्त्व बतलाना कठिन है। बिजौली से प्राप्त सन् ११७० ई० का लेख न० ३७४ शाकम्भरी के चौहानो के इतिहास के लिए प्रमुख लेख है। यद्यपि यह सोमेश्वर चौहान के राज्यकाल का है पर इस विशाल लेख में उसके पूर्व के २६ नरेशों की वशावली एव प्रत्येक का वर्णन दिया गया है।

इसी तरह लेख न० ३५७-५५८ नडोले के चौहान अल्हणदेव के समय के हैं जिससे उक्त शाखा के चौहानों का परिचय मिलता है। सुन्ध पर्वत से प्राप्त लेख न० ५०७ मे जालौर की चौहान शाखा के कई नरेशों का वर्णन है। गुजरात के अन्तिम हिन्दू शासक वश—बघेल वश के लवणप्रसाद वीरधवल तथा उनके प्रसिद्ध मत्री वस्तुपाल, तेजपाल की गतिविधियों एव धार्मिक कार्यों का वर्णन भी हमारे सग्रह के एक लेख नं ४७६ से मिलता है।

१५ वीं शताब्दी में ग्वालियर स्थान से राज्य करने वाले तोमरवंशी डूङ्गरेन्द्र देव के समय दो लेख (६३३ और ६४०) मिले हैं। ये लेख ग्वालियर के

किले मे जैन मूर्तियों के निर्माण कराने वाले जैन हितैषी नरेश डूंगरसिंह और कीर्तिसिंह के राज्य में जैन धर्म की स्थिति के सूचक हैं। नं० ६३६ (सन् १४५३ ई०) टोंक से प्राप्त एक लेख में लूंगरेन्द्र नरेश का उल्लेख है। लेख उक्त तोमरवंशी राजाओं के समकालीन है। लूंगरेन्द्र सभव है डूंगरेन्द्र (तोमरवशी) का ही नाम है जो अशुद्ध रूप से उत्कीर्ण हो गया या पढ़ा गया है।

लेख नं० ६१७ (सन् १४२४) में मुस्लिम सरदार अलपखा के शासन-काल मे देवगढ़ तीर्थ मे जैन प्रवृत्तियों का निर्देश है।

आ. दक्षिण भारत के राजवंश

१. गङ्गवंश—दक्षिण भारत के प्राचीन राजवशों मे से एक गग वंश माना जाता है। इस वंश का जैन धर्म से ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों से ही सम्बंध रहा है। ले० नं० २७७ (सन् ११२१ ई०) में इस वंश की दक्षिण भारत मे स्थापना की कहानी दी गई जिससे ज्ञात होता कि उत्तर भारतवासी इक्ष्वाकुवंशीय किसी गगदत्त से चलने वाले गगवश के दो राजकुमार दडिग और माधव ने इस को स्थापना काणूर गण (१) के जैनाचार्य सिंहनन्दि की सहायता से गंगवाडि ६६००० प्रान्त में की थी। उक्त लेख मे सिंह नन्दि को 'गंगराज्य-समुद्धरणम्' कहा गया है। यद्यपि यह बहुत पश्चात्कालीन निर्देश है इसलिए इस लेख का वक्तव्य कहाँ तक सच है हम नहीं कह सकते। हाँ, इस वंश के शुरू के लेखों में ऐसा कोई कथन नहीं हैं। पर जैन गुरु ने इस वश के आदि राजाओं की सहायता की थी यह बात ईस्वी सातवीं शताब्दी और उसके बाद के गग वशी तथा अन्य वंशों के लेखो से पुष्ट होती है[1]। इस वंश के प्रारम्भिक लेखों में गंगनरेशों को जाह्नवेय कुल एव काण्वायन सगोत्र का कहा गया है (९०,९४) तथा प्रथम नरेश का नाम कोङ्गुणि महाधिराज दिया गया है। लु० राइस महोदय इस

१. भास्कर आनन्द सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ९-१०

नरेश का नाम, दडिग कोङ्गुणि देते हैं और उसका समय सन् १८८-२०० के लगभग मानते हैं[1]।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश का सबसे प्राचीन ले० नं० ६० है, जिसे गुप्त काल के प्रारंभ का होना चाहिये। इसमें कोङ्गुणिवर्मा प्रथम से माधववर्मा द्वितीय तक पाँच नरेशों की वंशावली दी गई है यदि प्रथम राजा के राज्य का प्रारंभ समय ई० सन् २०० के लगभग मान लिया जाय और प्रत्येक नरेश को ३५-४० वर्ष या उससे कुछ अधिक वर्ष का राज्यकाल दिया जाय (जो कि संभव है) तो लेख के अन्तिम राजा माधव द्वितीय का समय ई० सन् ३७५-४०० के लगभग या कुछ बाद आता है। उक्त लेख में इस बात का उल्लेख नहीं है कि कोङ्गुणि-वर्मा और उसके बाद के दो नरेश किस धर्म के प्रतिपालक थे। पर इस बात का वहाँ स्पष्ट निर्देश है कि तृतीय नरेश हरिवर्मा महाधिराज का उत्तराधिकारी विष्णुगोप नारायण भक्त था और उसका उत्तराधिकारी माधववर्मा त्र्यम्बकभक्त था[2]। माधववर्मा द्वितीय ने चिर प्रनष्ट देवभोग, ब्रह्मदेय आदि को फिर से सञ्चालित किया था और कलियुग में धर्मोद्धार किया था (६४)। इसका विवाह कदम्बवंशी नरेश काकुस्थवर्मा की बेटी से हुआ था क्योंकि गंगवंश के अनेक लेखों में इसके बेटे अविनीत को कदम्बनरेश कृष्णवर्मा (संभव है प्रथम) का प्रिय भागिनेय लिखा है[3] (६५, १२१, १२२)। कृष्णवर्मा काकुस्थवर्मा का द्वितीय पुत्र था। त्र्यम्बकभक्त होते हुए भी माधववर्मा द्वितीय की धार्मिक नीति बड़ी उदार थी।

---

१. मैसूर एण्ड कुर्ग इन्स्क्रिप्सन्स पृष्ठ, ३२, ४६.

२ लुइस राइस महोदय सन्देह करते हैं कि इन ताम्रपत्रों में प्रत्येक राजा के साथ पूर्व निर्धारित या साँचे में ढले हुए के समान जो विवरणात्मक वाक्य दिये हैं, वे संभव है, तथ्य नहीं हैं। वे मानते हैं कि ब्राह्मण प्रभाव के कारण ताम्रपत्र उत्कीर्ण करने वाले ने स्वेच्छा पूर्वक तथ्यों को विकृत कर उनके जैन होने पर पर्दा डाला है।

३. पीछे कदम्बों का परिचय भी देखिये।

ले० नं० ६० के अनुसार उसने अपने राज्य के १३ वें वर्ष में आचार्य वीरदेव[1] की सम्मति से मूलसंघ द्वारा प्रतिष्ठापित जिनालय के लिए कुछ भूमि और कुमारपुर गाँव दान में दिया था।

माधव द्वितीय का पुत्र एवं उत्तराधिकारी कोङ्गुणिवर्म धर्ममहाधिराज अविनीत था। ले० नं० ६४ में इसके प्रतापी होने का वर्णन है। लेख से ज्ञात होता है कि यह जैनधर्मानुयायी था। इसने अपने गुरु परमार्हत विजयकीर्ति के उपदेश से अपने राज्य के प्रथम वर्ष में ही मूलसंघ के चन्द्रनन्दि आदि द्वारा प्रतिष्ठापित उरनूर के जैन मन्दिर के लिए एक गाँव प्रदान किया था तथा एक दूसरे जिनमन्दिर के लिए चुंगी से प्राप्त धन का चतुर्थ भाग दान में दिया था। लु० राइस महोदय उक्त लेख का समय सन् ४२५ के लगभग मानते हैं। यदि उनका यह अनुमान सच है तो कहना होगा कि अविनीत सन् ४२५ के लगभग राजगद्दी पर बैठा था। अविनीत ने बहुत समय तक शासन किया था क्योंकि उसके बेटा दुर्विनीत का समय अनेक प्रमाणों के आधार पर लगभग सन् ४८० और ५२० ई० के बीच बैठता है[2]। अविनीत जैनधर्मानुयायी था यह बात मर्करा से प्राप्त ताम्रपत्रों (९५) से भी सिद्ध होती है[3]।

---

१. जैन धर्म के केन्द्र प्रकरण में हमने इन वीरदेव और सोनभण्डार के वैरदेव मुनि में साम्य स्थापित किया है।

२. प्रो० ज्योतिप्रसाद जैन, 'गङ्गनरेश' दुर्विनीत का समय', जैन एन्टीक्वेरी, भाग १८, अंक २, पृष्ठ १–११।

३. मर्करा से प्राप्त ताम्रपत्र असली नहीं है क्योंकि उनमें पश्चात्कालीन अकालवर्ष पृथ्वीवल्लभ (राष्ट्रकूट नरेश) का निर्देश है तथा जो आचार्यपरम्परा दी गई है वह ई० ९–१० वीं शताब्दी की मालुम होती है। लेख में समयोल्लेख के साथ यह निर्देश नहीं है कि वह किस (शक या विक्रम) संवत् का है।

अविनीत का उत्तराधिकारी एवं पुत्र दुर्विनीत संस्कृत और कन्नड भाषा का बड़ा विद्वान् था। उसे एक ताम्रपत्र में 'शब्दावतारकार, देवभारतीनिबद्ध बृहत्कथा' आदि कहा गया है। राइस महोदय एवं डा० सालेतोरे आदि विद्वान् इस पद की व्याख्या कर यह सूचित करते हैं दुर्विनीत जैन वैय्याकरण पूज्यपाद का शिष्य था और उसने पूज्यपाद द्वारा लिखे शब्दावतार को कन्नड भाषा में परिवर्तित किया था[1]। उसने भारवि के किरातार्जुनीय काव्य के १५ सर्गों पर संस्कृत टीका भी लिखी थी (१२१-१२२)। इसके समय का उल्लेख किया जा चुका है। हा, इसके समकालीन कोई जैन लेख हमारे संग्रह मे नहीं हैं।

इसके बाद इस वश के राजाओं का वर्णन ई० सन् ७५० के लेख न० ११६ तथा बाद के लेखों (१२०-१२२) में मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि गङ्ग वंश एक स्वतन्त्र राज्य था, उसने किसी की पराधीनता स्वीकार न की थी। इन लेखों से दुर्विनीत के बाद के नरेशों—मुष्कर, श्रीविक्रम, भूविक्रम, शिवमार प्रथम (नवकाम) श्रीपुरुष, शिवमार द्वितीय एव मारसिंह प्रथम तक वर्णन मिलता है। लेख न० १२१ और १२२ में इन राजाओं को राजनीतिक सफलताओं और सामरिक विजयों का उल्लेख है।

शिवमार द्वितीय के पुत्र मारसिंह प्रथम के सम्बन्ध में उसके समकालीन लेख न० १२२ से ज्ञात होता है कि ई० सन् ७९७ में वह युवराज ही था। उसके राज्यकाल का ऐसा कोई लेख नहीं मिला जिससे कहा जाय कि वह राजा हो सका हो।

इसके बाद ईस्वी सन् ७९७ से ८८६ तक इस वंश का कोई लेख इस संग्रह में नहीं आ सका।

मण्णे से प्राप्त सन् ८०२ ई० के एक लेख (१२३) से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय के समय मे राष्ट्रकूट वश दूसरे वश की प्रतियोगिता में

---

१. मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ १९—२३।

ऊपर उठ गया था। उसने गङ्गों को बहुत समय से पराधीन देख उन्हें मुक्त किया पर उनके उद्धत स्वभाव के कारण पुनः बांध दिया। गङ्ग वंश के पराधीन होने की बात सन् ८६० के कोन्नूर से प्राप्त एक लेख (१२७) से भी ज्ञात होती है। इतिहासज्ञों का अनुमान है कि गङ्ग वंश के इन बुरे दिनों मे शिवमार द्वितीय उक्त वंश की गद्दी पर था। उसने राष्ट्रकूट वंश की अधीनता मान ली थी। इस राजा के सम्बन्ध में लेख नं० १८२ में लिखा है कि यह राष्ट्रकूट नरेश अमोघ-वर्ष प्रथम (८१४-८७७ ई०) का पञ्चमहाशब्दधारी महामण्डलेश्वर था। इसने कल्भावी में एक जैन मन्दिर बनवाकर उसके लिए एक गाव दान में दिया था।

इसके बाद भी जैनधर्म की परम्परा इस वंश के नरेशों में बराबर चलती रही। लेख नं० १३१ से ज्ञात होता है कि सन् ८८७ मे सत्यवाक्य कोंगुणिवर्मा ने अपने राज्याभिषेक के १८ वें वर्ष में एक जैन मन्दिर के उद्देश से भट्टारक सर्वनन्दि के लिए १२ गाव दान में दिए थे। इतिहासज्ञ इस राजा को राचमल्ल द्वितीय मानते हैं जिसे राष्ट्रकूट नृप कृष्ण द्वितीय ने हराया था। इस लेख में और इसके बाद के लेखों में इस वंश की राजधानी का नाम कुवलालपुर (वर्तमान कोलार) और किले का नाम उच्च नन्दगिरि नाम दिया गया है। लेख नं० १३८ से विदित होता है कि सत्यवाक्य (राचमल्ल द्वितीय) तथा उनके भतीजे एरेंयप्परस (चतुर्थ) ने कुमारसेन भट्टारक को दान दिया था। ले० नं० १३६ के अनुसार एरेंयप्परस के पुत्र नीतिमार्ग अर्थात् राचमल्ल तृतीय का राज्य उत्तरोत्तर बढ़ रहा था। उसने कनकगिरि तीर्थंवसदि को दुगुना कर भट्टारक कनकसेन को दान दिया।

सूदी से प्राप्त सन् ६३८ का एक लेख (१४२) इस वंश के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। इसमें गंगवंश की आदि से लेकर बूतुग द्वितीय तक सारे राजाओं की वंशावली दी गई है तथा कहीं कहीं उनके राजनीतिक महत्त्व के कार्यों का भी उल्लेख किया गया है। इस लेख में लिखा है कि बूतुग द्वितीय ने अपनी पत्नी द्वारा निर्मापित एक जैन मन्दिर के लिए कुछ भूमि दान मे दी।

बूतुग, राचमल्ल तृतीय का भाई एवं उत्तराधिकारी था, तथा राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय अकालवर्ष (९३८-९६६ ई०) का बहनोई और सामन्त राजा था।

बूतुग द्वितीय का पुत्र मारसिंह तृतीय इस वंश का बड़ा प्रतापी राजा हुआ है। लेख न० १४९ और १५२[1] में इसकी जो अनेक उपाधियाँ दी गई हैं और उसके लिए जो प्रशंसात्मक वाक्य प्रयुक्त हुए हैं उनसे इसके प्रतापी होने में कोई संदेह नहीं रह जाता। लेख न० १४९ के अनुसार उसने पुलिगेरे नामक स्थान में एक जिन मन्दिर बनवाया जो कि इसके नाम पर 'गंमकदर्प जिनेन्द्र मन्दिर' कहलाता था। लेख न० १५२ के उल्लेखानुसार इसने अनेक पुण्य कार्य किए थे, और जैन धर्म के उत्थान में बड़ा योग दिया था। इसी लेख में उसकी अनेक सामारिक विजयों का उल्लेख है। उक्त लेख के अनुसार इस राजा ने अन्त में राज्य का परित्याग कर अजितसेन भट्टारक के समीप तीन दिवस तक सल्लेखना व्रत का पालन कर बंकापुर में देहोत्सर्ग किया था। यह राजा राष्ट्रकूट नरेशों का महासामन्त था और इसने कृष्ण तृतीय के लिए अनेक देश जीत कर दिये थे तथा इन्द्र चतुर्थ का राज्याभिषेक कराया था। इसका और इसके बेटे राचमल्ल चतुर्थ का मंत्री और सेनापति प्रसिद्ध चामुण्डराय था।

राचमल्ल चतुर्थ के समय का केवल एक लेख (१५४) प्रस्तुत संग्रह में है। उसने श्रवणबेल्गोल निवासी श्रीमत् अनन्तवीर्य के लिए पेर्गादूर नामक ग्राम तथा कुछ और दान दिये थे। इसके राज्यकाल में सेनापति चामुण्डराय ने श्रवणबेल्गोल स्थान में बाहुबलि की एक विशालमूर्ति का निर्माण कराया था।

गंग वंश के राजाओं में अन्तिम उल्लेखनीय नाम है रक्कसगंग पेर्म्मानडि राचमल्ल पंचम का जो कि सन् ९८४ में सिंहासनारूढ हुआ था। उसका असली नाम अरुमुलि देव था। वह बूतुग द्वितीय की दूसरी पत्नी रेवकन्निम्मदि से उत्पन्न पुत्र वासव का पुत्र था। इसने अपनी कन्याओं के विवाह द्वारा पल्लवों

---

१. जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, लेख नं० ३८.

और शान्तरवंश से सम्बन्ध स्थापित किया था। हुम्मच से प्राप्त लेख नं० २१३ से विदित होता है कि नन्नि आदि शान्तर राजकुमारों की अभिभाविका प्रसिद्ध जैन महिला चट्टल देवी इसी की पुत्री थी। इसके गुरु द्रविड संघ के विजय देव भट्टारक थे। इस राजा ने अपने वंश की गिरती हुई हालत को सुधारने का प्रयत्न किया पर सफल न हो सका।

यद्यपि इस वंश का अन्त सन् १००४ में राज राज चोल प्रथम की लड़ाई मे हो गया, तो भी यह यत्र तत्र शाखाओं के रूप में जीवित बना रहा।

ऊपर निर्दिष्ट इस वंश के लेखों के अतिरिक्त दूसरे वंश के लेखों (नं० १७२, २२२, २५१, २५३, २६७, २७७, २९९, ३१४, ४३१) में गगवश के अनेको महामण्डलेश्वरों एव राजाओं का नाम आता है। ले० नं० २६७, २७७ एव २९९ मे तो इस वश की प्रारम्भ से अन्त तक की वंशावली दी गई है, पर पीछे के राजाओ के सम्बन्ध मे बहुत ही कम बातें मालुम होती हैं जिनसे क्रमबद्ध इतिहास नहीं लिखा जा सकता।

प्रस्तुत शिलालेख सग्रह के देखने से इस बात मे तनिक भी सन्देह नही रह जाता कि इस वंश के राजा प्रारम्भ से ही जैन धर्म और साहित्य के उपासक एवं संरक्षक साथ ही अपनी उदारनीति के कारण दूसरे सम्प्रदायो को भी दान आदि द्वारा सरक्षण प्रदान करते थे। इस वंश के सरक्षण में जैन धर्म ने अपना स्वर्णयुग देखा है।

२. कदम्बवंशः—प्रस्तुत संग्रह मे कदम्ब वंश से सम्बन्धित १० लेख (९६, ९७, ९८, ९९, १००, १०१, १०२, १०३, १०४ और १०५) सग्रहीत हैं जिनमें कतिपय तो सस्कृत भाषा की सुन्दर काव्यात्मक शैली के नमूने हैं। यद्यपि इन लेखों में कोई काल-निर्देश नहीं है पर जिन राजाओं के ये लेख हैं उनका समय अन्य प्रमाणो से ज्ञात होता है इसलिए हमें इन्हें लगभग सन् ३९९ से ५५० के भीतर के मानना चाहिए।

इन लेखों से कदम्ब नरेशों के गोत्रादि विदित होते हैं। तदनुसार वे मानव्य गोत्र एवं हारितीपुत्र अंगिरस के वंशज तथा काकुस्थान्वयी थे। यद्यपि यह वंश

ब्राह्मणधर्मानुयायी था पर इसके कतिपय नरेशों की धार्मिक नीति बड़ी ही उदार थी और कुछ तो जैनधर्म प्रतिपालक भी थे। इस वश का आदि नरेश मयूरशर्मा माना जाता है पर उपर्युक्त लेखों में उसका तथा उसके बाद के चार नरेशों का नाम नहीं दिया गया। प्रस्तुत लेखों में इस वश के पाचवें नरेश काकुस्थवर्मा से ही वश परम्परा का उल्लेख है।

काकुस्थवर्मा के समय का केवल एक लेख (९६) अबतक उपलब्ध हुआ है। इसमें काकुस्थ वर्मा को कदम्बयुवराज लिखा है तथा उल्लेख है कि उसने ८० वें वर्ष में अपने एक जैन सेनापति श्रुतकीर्ति के लिए अर्हन्तों के खेट ग्राम में, वदोवर क्षेत्र दान में दिया था। लेख के ८० वॉ वर्ष को इतिहासज्ञ गुप्त सवत् का मानते हैं। इस मान्यता का आधार यह है कि कदम्बों का अपना कोई सवत् नहीं चला था तथा काकुस्थवर्मा की कुछ कन्याओं में से एक का विवाह गुप्त नरेश चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय (सन् ३७५-४१५ ई०) के एक पुत्र से हुआ[1] था। गुप्त सवत् के लेखा के अनुसार युवराज काकुस्थवर्मा का समय ३१९ +८०=३९९ ई० होना चाहिए। इसके बाद काकुस्थवर्मा ने राजा के रूप में कुछ वर्ष अवश्य राज्य किया होगा। हम गग अविनीत के सम्बन्ध में लिख आये हैं कि उसे काकुस्थवर्मा की एक पुत्री विवाही गई थी। समय की दृष्टि से अविनीत (लग० सन् ४०० ई० के बाद) और काकुस्थवर्मा प्रायः समकालीन भी थे। काकुस्थ वर्मा पलासिका मे राज्य करता था, पर उसके पुत्र और प्रपौत्र वैजयन्ती से राज्य करते थे। सम्भव है पलासिका, कुछ समय के लिये उनसे छिन गई थी।

काकुस्थवर्मा का पुत्र शान्तिवर्मा था (९९) उसके सम्बन्ध का इस सग्रह में कोई लेख नहीं है। ले० न० ९९ में इसके सम्बन्ध मे लिखा है कि जैसे दुर्जन किसी स्त्री को बलात् खींचता है उसी तरह उसने शत्रु के गृह से लक्ष्मी को आकृष्ट किया था। यह उल्लेख उसके किसी सघर्ष का द्योतक है। उसका बेटा मृगेश

---

१. दि० च० सरकार, सक्सेसर आफ़ सातवाहनाज, पृष्ठ २५६

वर्मा हुआ जिसके राज्य काल के तीन लेख (६७, ६८, ६६) प्रस्तुत संग्रह में हैं। ले० नं० ६७ से ज्ञात होता है कि उसने अपने राज्य के तीसरे वर्ष में अर्हन्तदेव के अभिषेक, उपलेपन एवं पूजनादि के लिए भूमिदान किया था। उसने अपने राज्य के चतुर्थ वर्ष में एक गाँव को तीन भागों में विभाजित कर एक भाग अर्हन्महाजिनेन्द्र के लिए, दूसरा भाग श्वेताम्बर श्रमण संघ तथा तीसरा भाग दिगम्बर श्रमण के उपभोग के लिए दान में दिया था (६८)। आठवें वर्ष में उसने पलासिका नामक स्थान में एक जिनालय बनवाकर ३३ निवर्तन प्रमाण भूमि को यापनीयों के लिए तथा निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय के कूर्चकों के उपभोग के लिए दान में दे दिया (६६)। ले० नं० ६६ में उसे एक धर्मविजयी नृप लिखा है। यह लेख राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्व का है। इसमें उसे उन्नत गंग कुल को नष्ट करने वाला तथा पल्लव वंश के लिए प्रलयाग्नि लिखा है[1]। इस लेख से मालुम होता है मृगेशवर्मा पलाशिका से राज्य कर रहा था।

मृगेशवर्मा के तीन बेटे थे रविवर्मा, भानुवर्मा और शिवरथ। उनमें रविवर्मा उसका उत्तराधिकारी हुआ। उसके राज्यकाल के तीन लेख (१००, १०१, १०२) इस संग्रह में हैं। ले० नं० १०० के अनुसार सेनापति श्रुतकीर्ति के पौत्र जयकीर्ति ने कदम्ब राजाओं द्वारा परम्परा से प्राप्त पुरुखेटक ग्राम को रविवर्मा की आज्ञा से अपने माता पिता के कल्याणार्थ यापनीय संघ के कुमारदत्त प्रमुख आचार्यों को दान में दे दिया। ले० नं० १०१ राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्त्व का है। इसमें लिखा है कि विष्णुवर्मा प्रभृति राजाओं को नष्ट कर तथा काञ्चीपति चण्डदण्ड को पराजित कर रविवर्मा पलाशिका में समवस्थित था। इतिहासज्ञ इस लेख के विष्णुवर्मा को काकुस्थवर्मा के द्वितीय पुत्र कृष्णवर्मा (प्रथम) का इस नाम वाला ज्येष्ठ पुत्र मानते हैं, जिसने सम्भव है, मुख्य शाखा के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया

---

१. इस लेख में गंगकुल के जिस नरेश से मतलब है वह पेरूर शाखा का गंग नृप अय्यवर्म या माधव प्रथम होना चाहिये। पल्लव नृप को सिंहवर्म का पुत्र स्कन्दवर्मा होना चाहिये। (सक्शेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २६४)।

था, तथा काञ्चीपति चण्डदण्ड को नन्दिवर्मा पल्लव या उसका कोई एक उत्तराधिकारी मानते हैं[१]। इस ले० के अनुसार दामकीर्ति (श्रुतकीर्ति का पुत्र) के अनुज श्रीकीर्ति ने अपनी माता के कल्याणार्थ अपने स्वामी रविवर्मा से चार निवर्तन भूमि लेकर जिनेन्द्र के लिए दान मे दी। ले० न० १०२ से ज्ञात होता है कि रविवर्मा के ११ वें राज्य वर्ष में उसके अनुज भानुवर्मा से किसी पण्डर भोजक ने १५ निवर्तन भूमि प्राप्त कर जिनेन्द्र के लिए दान मे दे दी। रविवर्मा का राज्यकाल साधारणतः सन् ४७८ से ५१३ ई० के लगभग माना जाता है।

रविवर्मा का उत्तराधिकारी उसका पुत्र हरिवर्मा हुआ। इसके राज्य के दो लेख (१०३–१०४) इस सग्रह में हैं। ले० न० १०३ से ज्ञात होता है कि उसने अपने राज्य के चतुर्थ वर्ष मे अपने चाचा शिवरथ के उपदेश से पलाशिका मे सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर की अष्टाह्निका पूजा के लिए तथा सर्व सघ के भोजन के हेतु कूर्चकों के वारिषेणाचार्य सघ के हाथ मे चन्द्रक्षान्त को प्रमुख बनाकर वसुन्तवाटक ग्राम दान में दिया। इसी तरह ले० नं १०४ से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने राज्य के पाचवे सवत्सर मे सेन्द्रक राजा भानुवर्मा की प्रार्थना पर अहिरिष्टि नामक दूसरे श्रमण सघ के लिए मरदे नामक ग्राम दान में दिया। हरिवर्मा का राज्य काल सन् ५१३ से ५३४ ई० मे माना जाता है।

कदम्बों की एक शाखा और थी जिसके कुछ नरेशों ने मुख्य शाखा से विद्रोह किया था यह हमें ले० न० १०१ से ज्ञात होती है। इस शाखा से सम्बन्धित इस सग्रह में केवल एक लेख (१०५) है। जो कि कृष्णवर्मा प्रथम के राज्यकाल का है। इतिहासज्ञो ने इस कृष्णवर्मा को शान्तिवर्मा का अनुज एवं काकुस्थवर्मा का पुत्र माना[२] है। ले० न० १०५ मे उसके अश्वमेधयाजिन्, समरार्जित विपुल ऐश्वर्य, एकातपत्र आदि विशेषण दिये हैं जो कि इसके प्रताप

१. सक्सेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २७२–२७३।

२. सक्सेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २८२।

के सूचक हैं। लेख में इसके प्रियतनय देवराज का उल्लेख है जो कि युवराज था। वह त्रिपर्वत का शासक था तथा जिनधर्म का भक्त था। उसने अर्हन्त भगवान् के चैत्यालय की पूजा मरम्मत आदि के लिए यापनीय संघों के लिए कुछ खेत दान में दिये थे।

गंग वंश के कई लेखों में अविनीत महाधिराज को कदम्ब कुल के कृष्णवर्मा का प्रिय भागिनेय माना जाता है। कदम्ब नरेशों में कृष्णवर्मा दो हो गये हैं। अविनीत का मामा कौन कृष्णवर्मा था इसमें इतिहासज्ञ एक मत नहीं है। फिर भी समकालीन राजवंशों के इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह प्रतीत होता है उसे कृष्ण वर्मा प्रथम होना चाहिए[1]। कृष्णवर्मा प्रथम अविनीत का समकालीन भी था।

३. चालुक्य वंश.—प्रस्तुत संग्रह में इस वंश से सम्बन्धित अनेकों लेख संगृहीत हैं जिनसे मालुम होता है कि ये मानव्य गोत्र तथा हारीति के वंशज थे, वराह इनका लाञ्छन था। इस वंश के राजाओं की साधारणत वल्लभ एवं सत्याश्रय उपाधियाँ थीं। इस वंश की एक शाखा जिसे पश्चिमी चालुक्य कहा जाता है वातापी (बादामी) नामक स्थान से ६ वीं ईस्वी से ८ वीं ईस्वी तक शासन करती रही और पीछे दो शताब्दी बाद १०वीं से १२वीं तक कल्याणी नामक स्थान से। इसी तरह दूसरी एक शाखा पूर्वी चालुक्य के नाम से विख्यात थी और आन्ध्र देश के वेंगी नामक स्थान से ७ वीं शताब्दी से ११-१२ वीं शताब्दी तक सत्तारूढ रही। इस तरह इस वंश ने दक्षिण भारत के बहु भाग पर शासन किया।

(क) पश्चिमी चालुक्य —जैन लेखों में इस वंश का सबसे प्राचीन दानपत्र (१०६) शक सं० ४११ (ई० ४८९) का आड़ते से मिला है। यह ले० सत्याश्रय पुलकेशि का था। तदनुसार उस राजा ने चोल, चेर, केरल, सिंहल और कलिङ्ग के राजाओं को कर देने वाला बना दिया था एवं पाण्ड्य

---

१. प्रो० ज्योतिप्रसाद, 'गंग नरेश दुर्विनीत का समय', जैन एण्टीक्वेरी, भाग १२, अंक २, पृष्ठ १–११

आदि मण्डलीक राजाओं को दण्डित किया था। लेख का उद्देश्य है कि उक्त नरेश के शासनकाल मे सेन्द्रकवशी सामन्त सामियार ने अलक्तक नगर मे एक जैन मन्दिर बनवाया था और राजाज्ञा लेकर चन्द्र ग्रहण के समय कुछ जमीन और गाँव दान मे दिये। इस लेख के समय के सम्बन्ध मे इतिहासज्ञ एकमत नहीं है। डा० रा० गो० भण्डारकर प्रभृति विद्वानों की धारणा है कि पुलकेशि प्रथम के सिंहासनारूढ होने का समय ई० सन् ५५० से पहले नहीं हो सकता, पर यह लेख उस नरेश के राज्यकाल को ६२ वर्ष पहले ले जाता है। जो हो, इस लेख में पुलकेशि प्रथम के वश गोत्रादि के निर्देश के अतिरिक्त पितामह का नाम जयसिंह और पिता का नाम रणराग दिया गया है। ले० न० १०६ से ज्ञात होता है कि रणराग के शासनकाल मे उसके एक सेन्द्रक सामन्त दुर्गशक्ति ने पुलिगेरे के प्रसिद्ध शख जिनालय के लिए भूमिदान दिया था।

पुलकेशि प्रथम का उत्तराधिकारी उसका बेटा कीर्तिवर्मा प्रथम था। उसके शासन काल के एक लेख (१०७) के कन्नड अश से ज्ञात होता है कि कीर्तिवर्मा ने कुछ सरदारो के निवेदन पर जिनेन्द्र मन्दिर के पूजा विधान के लिए कुछ खेत प्रदान किये थे। इसी तरह उक्त लेख के सस्कृत अश से ज्ञात होता है कि उसने अपने सरदारों द्वारा निर्मापित जिनालय एव दानशाला आदि के लिए भी कुछ खेतों का दान दिया था।

कीर्तिवर्मा प्रथम का बेटा पुलकेशि द्वितीय हुआ जिसके काल का एक प्रसिद्ध लेख एहोले (१०८) से प्राप्त हुआ है, जिसे कविता के क्षेत्र मे कालिदास एव भारवि की कीर्ति पाने वाले जैन कवि रविकीर्ति ने रचा था। भारतवर्ष का तत्कालीन राजनीतिक इतिहास जानने के लिए यह लेख बड़े महत्त्व का है। इसमे पुलकेशि द्वितीय के पिता कीर्तिवर्मा और चाचा मगलीश की सामरिक विजयो के उल्लेख के बाद पुलकेशि द्वारा राज्य प्राप्ति और उसकी विस्तृत दिग्विजय का वर्णन मिलता है। उक्त लेख के अनुसार पुलकेशि उत्तर भारत के सम्राट् हर्षवर्धन का समकालीन था और उसने दक्षिण की ओर बढते हुए हर्ष का हर्ष (उत्साह) विगलित कर दिया था। लेख के अन्त में लिखा है कि प्रतापी पुल-

केशि के आश्रित कवि रविकीर्ति ने पाषाण का एक जैन मन्दिर शक सं० ५५६ में बनवाया था।

इस वंश के अन्य ले० नं० १११, ११३, ११४ से ज्ञात होता है कि चालुक्य नरेश प्रारम्भ से लेकर जैन धर्म और उसके उपास्य स्थानों को संरक्षण देते आये हैं। ले० नं० १११ पुलकेशि द्वितीय के पौत्र विनयादित्य के राज्यकाल का है और नं० ११३ विजयादित्य तथा नं० ११४ विक्रमादित्य द्वितीय के राज्यकाल का है। इनसे विक्रमादित्य द्वितीय तक की वंशावली के अतिरिक्त हमें इन राजाओं के राजनीतिक इतिहास की कोई सूचना नहीं मिलती। ये लेख छोटे दान पत्र के रूप हैं। ले० नं० ११३ से मालुम होता है कि विजयादित्य ने अपने पिता के पुरोहित उदय देव पण्डित अर्थात् निरवद्य पण्डित को एक गाँव दान में दिया था। इसी तरह ११४ वें लेख से मालुम होता है कि विक्रमादित्य द्वितीय ने पुलिगेरे नगर में धवल जिनालय की मरम्मत एवं सजावट करायी थी। तथा मूलसंघ देवगण के विजयदेव पण्डिताचार्य के लिए जिनपूजा प्रबन्ध के हेतु भूमिदान दिया था।

विक्रमादित्य द्वितीय के बाद चालुक्य कुल के बुरे दिन आते हैं। यह बात हमें ले० नं० १२२, १२३, १२४, एवं १२७ से सूचित होती है। गंग और राष्ट्रकूट राजाओं ने इस साम्राज्य को तहस नहस कर दिया और लगभग २०० वर्षों तक यह फिर न पनप सका। इस बीच काल में इनका स्थान राष्ट्रकूट वंश को मिला।

इस राजवंश का इतिहास पढ़ने से मालुम होता है कि सन् ९७४ के आस पास तैलप द्वितीय ने इस वंश का पुनरुद्धार किया तथा कल्याणी नामक स्थान को राजधानी बनाया। नूतन शक्ति प्राप्त इस वंश के कतिपय राजाओं ने यद्यपि उतने उत्साह के साथ तो नहीं, फिर भी जैनधर्म की यथाशक्ति सेवा की। अजितचरिते नामक ग्रन्थ से मालुम होता है कि तैलप द्वितीय महान् कन्नड जैन कवि रन्न का आश्रयदाता था। यह धारा नरेश मुंज और भोज का समकालीन था।

इसके हाथ ही मुंज की मृत्यु हुई थी[1]।

इसका पुत्र और उत्तराधिकारी सत्याश्रय इरिव वेडेंग हुआ जिसने सन् ९९७ से १००९ ई० तक शासन किया। इस नरेश के जैन गुरु द्रविडसंघ कुन्दकुन्दान्वय के विमलचन्द्र पण्डित देव थे (१६६)।

सत्याश्रय के दो उत्तराधिकारियो के सम्बन्ध मे जैन लेखों से हमे विशेष कुछ नहीं विदित होता, पर जयसिंह तृतीय के सम्बन्ध में कुछ विवाद है। इस नरेश का राज्य सन् १०१५ से १०४२ ई० तक रहा। यह तैलप द्वितीय का पौत्र एवं सत्याश्रय का भतीजा था। कुछ विद्वानों का विश्वास है कि इसने अपनी पत्नी के प्रभाव में धर्म परिवर्तन कर वीर शैवमत अपना लिया था और वसवपुराण के कथनानुसार[2] उसकी पत्नी ने जैन श्रावकों को अनेक प्रकार की क्षति पहुँचाई थी। कुछ इतिहासज्ञों का यह अनुमान है कि यह नरेश अनेक जैन विद्वानों का आश्रयदाता था[3]। इसके राज्य मे अनेक हिन्दू और जैन विद्वान् हुए हैं। उसके अनेक विरुदों मे एक था मल्लिकामोद। श्रवणबेल्गोल के एक लेख[4] से ज्ञात होता है कि नलिपुर के मल्लिकामोद शान्तीश के चरण अर्चक थे मलधारि गुणचन्द्र। सभव है उक्त मन्दिर को इस राजा ने बनवाया हो या इसके नाम पर किसी दूसरे ने। जयसिंह तृतीय के उत्तराधिकारी सोमेश्वर प्रथम के राज्य में भी उक्त मन्दिर की प्रसिद्धि का उल्लेख ले० न० २०४ में है।

इस राजा के समय के प्रमुख विद्वान् थे द्रविडसघ के वादिराज, दयापाल एवं पुष्पषेण सिद्धान्त देव। लेख नं० २१३, २१६ एव २४८ से ज्ञात होता है कि वादिराज की उपाधि षट्तर्कषण्मुख थी। इनकी एक उपाधि जगदेकमल्लवादि भी थी जिसके सम्बन्ध में कतिपय लेखों से ज्ञात होता है कि यह उपाधि जयसिंह

---

१. इण्डियन एण्टीक्वेरी, भाग २१, पृष्ठ १६७-६८

२. शर्मा, जैनिज्म एण्ड कर्नाटक कल्चर, पृष्ठ २५.

३. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ४३.

४. जैन शिलालेख सग्रह, प्रथम भाग, लेख नं० ५५, श्लोक न० २०.

तृतीय जगदेकमल्ल ने अपने दरबार में किसी वादविजय के प्रसंग मे उन्हें दी थी[1]।

उक्त नरेश का पुत्र एवं उत्तराधिकारी सोमेश्वर प्रथम हुआ जिसकी उपाधियाँ आहवमल्ल एवं त्रैलोक्यमल्ल थीं। इसने सन् १०४२ से १०६८ ई० तक राज्य किया। इसके राज्यकाल के ६ लेख (१८१, १८६, १८७, १९८, २०३, २०४) प्रस्तुत संग्रह में है, जो कि इसके अधीन नरेशों के हैं तथा जिनमें इसे अधिराजा के रूप मे स्मरण किया गया है। लेख नं० १८६ से ज्ञात होता है कि इसकी रानी केतलदेवी के अधीन कर्मचारी चाकिराज ने त्रिभुवनतिलक जिनालय में तीन वेदियाँ बनवाई और उक्त राजा और रानी की आज्ञा से अनेक प्रकार के दान दिए। ले० नं० २९०[2] से ज्ञात होता है कि इस आहवमल्ल विरुदधारी नृप ने अजितसेन भट्टारक को 'शब्दचतुर्मुख' की उपाधि दी थी। ले० नं० २१३ और ३२६ में अजितसेन भट्टारक की अन्य उपाधियों—वादीभसिंह और तार्किकचक्रवर्ती-के साथ उक्त उपाधि का भी उल्लेख है। ले० न० २०४ सोमेश्वर प्रथम के राज्य के अन्तिम वर्ष का है इसमे उक्त राजा के राजनीतिक प्रभाव का अच्छी तरह परिचय दिया गया है तथा लिखा है कि इसने शक स० ९९० में प्रधान योग का उत्सव कर तुंगभद्रा मे जलसमाधि ले ली थी। इसी लेख मे इस नरेश के ज्येष्ठ पुत्र सोमेश्वर (द्वितीय) भुवनैकमल्ल का उल्लेख है, जिसका कि राज्य उसी वर्ष से प्रारम्भ होता है।

सोमेश्वर द्वितीय ने भी जैन धर्म का संरक्षण किया था। ले० न० २०५ मे यह नरेश रट्ट राजाओं के अधिपति राजा के रूप मे स्मरण किया गया है। ले० नं० २०७ से ज्ञात होता है कि इस नरेश ने सन् १०७४ ई० मे शान्तिनाथ मन्दिर के लिए मूलसंघान्वय तथा क्राणूर गण के कुलचन्द्र देव को नागरखण्ड में भूमिदान दिया था। ले० नं० २१० में प्रसगवश भुवनैकमल्ल शान्तिनाथदेव मन्दिर

१. लेख नं० २१३ तथा ले० न० २९० (प्रथम भाग का ५४ वा लेख)
२. जैन शिल लेख सग्रह, प्रथम भाग, ले० ५४

का उल्लेख है। सभव है भुवनैकमल्ल विरुदधारी उक्त नृप ने वह मन्दिर बनवाया था या उसमें शान्तिनाथ की प्रतिमा प्रतिष्ठित करायी थी।

सोमेश्वर द्वितीय के बाद उसके भाई विक्रमादित्य षष्ठ का राज्य सन् १०७६ से ११२६ तक आता है। यह एक बड़ा प्रतापी राजा था। इसके चरित्र को चित्रित करते हुए प्रसिद्ध कवि बिल्हण ने विक्रमाङ्कदेवचरित काव्य लिखा है। इस सग्रह में इस राजा के राज्यकाल के २२ लेख सगृहीत हैं[१]। ये भी इस नरेश के अधीन सामन्त राजाओं द्वारा दानपत्र के रूप में हैं जो प्रायः सामन्त राजाओं के वशों पर प्रकाश डालते हैं। इन लेखों में कुछ तो गंग वंश से, कुछ शान्तरों से कुछ रट्ट वशसे, तथा कुछ होयसल वश से और कुछ सेना पतियों से सबधित हैं। ये सब सामन्त घराने जैन धर्म प्रतिपालक थे और अपने लेखों तथा दानपत्रो मे त्रिभुवनमल्ल विक्रमादित्य षष्ठ को सम्राट् के रूप में स्मरण करते हैं। ये लेख इस नरेश के द्वितीय वर्ष से ४८ वे वर्ष तक के हैं। ले० नं० २१७ से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने द्वितीय वर्ष मे धारानाथ (परमार), सौराष्ट्र, अग, कलिङ्ग, मगध, आन्ध्र, अवन्ति एव पाञ्चाल को वश में किया था। उसकी एक उपाधि गंगपेर्मा-नडि थी क्योंकि उसकी माँ गंग वंश की राजकुमारी थी। उसने चालुक्य गंग-पेर्म्मानडि चैत्यालय बनवाया था और एक समय अपने दण्डनाथ के अनुरोध पर उस मन्दिर के प्रबन्धादि के लिए एक गाव मूलसंघ, सेनगण और पोगरिगच्छ के रामसेन मुनि को दान में दिया था। हमे कुछ ऐसे लेखों से मालुम होता है, जो कि इस सग्रह में नही आये, कि इस राजा ने बेल्गोल प्रदेश मे कई जिनालय बनवाये थे जिन्हें राजाधिराज चोल ने जला दिया था[२]। श्रवणबेलगोल की कत्तले

---

१. ले० नं० २१३, २१४, २१६, २१७, २१८, २१९, २२१, २२७, २३७, २४३, २४७, २४८, २५१, २५३, २६७, २७३ २७६, २७७, २८०, २८८, २९९, ३०८.

२. सालेतोरे: मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ १९४.

वसदि से प्राप्त एक लेख[1] से ज्ञात होता है कि इस नरेश ने जैन मुनि वासवचन्द्र को वालसरस्वती की उपाधि दी थी।

ले० नं० २२७ मे इसके एक प्रिय पुत्र का नाम जयकर्ण दिया गया है जो कि ज्ञात होता है उसके राज्यकाल मे ही दिवंगत हो गया था। ले० नं० २६६ में इसके राज्य का शक स० १०५४ दिया गया है जो कि ठीक न होने से १०३४ अर्थात् सन् १११२ ई० किया गया है।

विक्रमादित्य षष्ठ का उत्तराधिकारी उसका दूसरा बेटा सोमेश्वर तृतीय भूलोकमल्ल हुआ। इसका राज्यकाल सन् ११२६ से लेकर ११३८ तक है। ले० नं० २१८ (शक सं० १००० = १०७८ ई०) मे जो कि विक्रमादित्य षष्ठ के द्वितीय वर्ष का है, भूलोकमल्ल सोमेश्वर का नाम एव उसकी महाराजाधिराज उपाधि दी गई हैं। पर इतने पहले अपने पिता के राज्यकाल में उसका इस रूप मे होना शंका का विषय है। यह लेख जाली सा मालुम होता है। ले० नं० २६२ इस नरेश के छठवें वर्ष का है जिसमे उल्लेख है कि इसके सामन्त नरेश मारसिंह ने कोडनपूर्व्वदवल्लि गाव के पार्श्वनाथदेव की पूजा के लिए बहुत से क्षेत्र दान में दिये थे।

सोमेश्वर तृतीय का उत्तराधिकारी उसका ज्येष्ठ पुत्र पेर्म्म जगदेकमल्ल हुआ। इसका शासन सन् ११३८–११५१ तक था। इसके शासनकाल के ६ लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं जो कि उसके दण्डनायकों एव सामन्तो से सम्बन्धित हे। ये सभी दानपत्र के रूप मे हैं।

जगदेकमल्ल के बाद इस वंश के राजाओं के ५ और लेख हैं। ३४६ वे लेख (सन् ११५६) मे त्रिभुवनमल्ल नाम चालुक्य का उल्लेख या उक्त वर्ष मे इस नाम के राजा का अस्तित्व अब तक अन्य स्रोतों से ज्ञात नही हुआ। ३५६ वें लेख (सन् ११६१) में भूवल्लभराय पेर्म्माडि का नाम आता है। सभव है यह

---

१. जैन शिलालेख सग्रह, प्रथम भाग, ले० न० ५५, प्रस्तुत सग्रह का ५६ वा लेख।

भूलोकमल्ल का दूसरा नाम हो जो कि तैल तृतीय का पुत्र था। यह नरेश कलचूरि राजा त्रिज्जल के अधीन सन् ११६०–६१ में शासन करता था। ले० न० ४०८ (सन् ११८२) इस वंश की पश्चात्कालीन वंशावली की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। इसमें ले० न० ३१३ के समान ही चालुक्य वंश की वंशावली तैल द्वितीय से दी गई है और जगदेकमल्ल के अनुज नूर्म्मडि तैल का उल्लेख है, तथा लिखा है कि चालुक्य राज्य की लक्ष्मी कलचूरि-तिलक त्रिज्जल के हाथ आ गई थी। यह नूर्म्मडि तैल, तैलप तृतीय ही था जिसने सन् ११५१–११५६ मे राज्य किया था और जिसे त्रिज्जल कलचूरि ने राज्य से हटा दिया था। ले० न० ४३५ में इस वंश के अन्तिम नरेश सोमेश्वर चतुर्थ का उल्लेख है जो कि तैलप तृतीय का तीसरा पुत्र था। ये लेख विशेषतः शान्तर, कलचूरि और होय्सल राजाओं से सम्बन्धित हैं। इनके विषय का वर्णन उन राजाओं के साथ किया जायगा।

(ख) पूर्वीय चालुक्य.—इस वंश की एक और शाखा पूर्वीय या वेंगी के चालुक्य नाम से प्रसिद्ध थी। इस शाखा की परम्परा पुलकेशि द्वितीय के भाई कुब्ज विष्णुवर्धन से चलती है। इसने सन् ६१५ से ६२३ ई० तक राज्य किया था। इस वंश के केवल तीन लेख हमारे संग्रह मे हैं। ले० नं० १४३ (सन् ६४५) में कुब्ज विष्णुवर्धन से लेकर उस वंश के २३वें राजा अम्म द्वितीय (विजयादित्य षष्ठ) तक की वंशावली दी गई है। यह लेख बड़े महत्त्व का है। इसमें प्रत्येक राजाओं का शासनकाल तथा उत्तराधिकारक्रम अच्छी तरह दिया गया है। इस वंश के कतिपय नरेशों ने जैन धर्म का अच्छी तरह संरक्षण किया था। लेख का विषय है कि कटकाभरण जिनालय को पूजादि के हेतु अम्मराज विजयादित्य ने यापनीय संघ, नन्दि गच्छ के चीरदेव (श्रीमान्दिरदेव) मुनि को मलियपूण्डि नामक ग्राम दान में दिया। इसी तरह ले० न० १४४ मे, जो कि पूर्व लेख के समान ही वंशावली के परिचय की दृष्टि से महत्त्व का है तथा सुन्दर संस्कृत काव्य के रूप में है, उल्लेख है कि अम्मराज ने सर्वलोकाश्रय जिनभवन की मरम्मत आदि के लिए वलहारि गण, अड्डकलि गच्छ के अर्हनन्दि मुनि को

कलुचुम्बरु नामक ग्राम दान मे दिया। उक्त लेख में लिखा है कि यह दान पट्टवर्धिक कुल की तिलकभूता गणिकाजन-में प्रमुख चामेकाम्बा[1] नामकी दान-दयाशीलयुत श्राविकी की प्रेरणा से दिया गया था। ले० नं० २१० (सन् १०७६) में चालुक्य चक्रवर्ती विजयादित्यवल्लभ और उसकी बहिन कुंकुमदेवी का उल्लेख है। इस लेख के काल निर्देश को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि उसे इस वंश का विजयादित्य सप्तम होना चाहिये जो कि अपने भतीजे चालुक्य राजेन्द्र द्वितीय (पीछे कुलोत्तुंग चोल नाम से प्रसिद्ध) के अधीन वेगी का शासक था। उक्त लेख में लिखा है पुरिगेरी मे कुंकुमदेवी ने एक जैनमन्दिर बनवाया था और श्रीनन्दि पण्डित ने कतिपय खेतों का दान दिया था।

इस वंश की कुछ और स्वतन्त्र शाखाये थीं। उनमे से एक ले० नं० १२४ से मालुम होती है। उक्त लेख मे राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय के राज्यकाल (सन् ८१२) में चालुक्य वंशी किसी विमलादित्य नृप का नाम आता है जो कि यशोवर्म का पुत्र और वलवर्मा का प्रपौत्र था। उसने शनि की बाधा हटाने के लिए अपने जैनधर्मावलम्बी मामा गंगवंशी चाकिराज के कहने से एक जैन मन्दिर के लिए एक गाँव दान मे दिया था। इस राजा का नाम चालुक्यो की किसी वंशावली मे नही मिलता। डा० भण्डारकर की मान्यता है कि पीछे ऐसे राजवंशों की कई शाखाए स्वतन्त्र रूप से राज्य करती थी।

४. चोलवंश —दक्षिण भारत के सबसे प्राचीन वंशों मे से चोल वंश एक था। समय समय पर इससे अनेक शाखाये निकली थीं। कोङ्गाल्व और निडुगल वंश ऐसे ही शाखाओ मे से हैं जिनका परिचय इस भूमिका में दिया गया है। चोलवंश की प्रमुख शाखा के राजाओ का उल्लेख अन्य राजाओं के प्रसंग में जैन लेखो मे कई बार आया है जो कि अनुक्रमणिका एवं लेखों से जाना जा सकता है। प्रस्तुत संग्रह मे १० वे और ११ वे चोल नरेशों के राज्यकाल

---

१. श्रीराजचालुक्यान्वयपरिवारित पट्टवर्धिकान्वयतिलका। गणिकाजनमुखकमलद्युमणिद्युतिरिह चामेकाम्बाभूत्।

के ३ लेख हैं जिनसे विदित होता है कि उक्त साम्राज्य में जैनधर्म सुरक्षित था। चोल परिवार के लोग जैन धर्म में रुचि रखते थे।

ले० नं० १६७ दशवें चोल नरेश राजराज प्रथम के राज्य के ८ वे वर्ष का है। इस लेख से ज्ञात होता है कि उसके अधीनस्थ लाटराज वीर चोल ने अपनी जैन पत्नी की प्रार्थना पर तिरुप्पानमलै देवता के पल्लिच्चन्दम् (जैन चैत्यालय) को एक गाँव की आमदनी बाँध दी थी। यह ले० न० ९९२ ई० का है। इसी तरह ले० न० १७१ उक्त राजा के २१ वें वर्ष का है। इस लेख में उल्लेख है कि तिरुमलै नामक पवित्र पर्वत पर किसी गुणवीर मामुनिवन् ने अपने उपाध्याय के नाम एक नहर या मोरी बनवायी थी। ले० न० १७४ राजराज चोल के उत्तराधिकारी राजेन्द्र चोल प्रथम का है। लेख की महत्ता उसके हिन्दी सार में दे दी गई है। लेख में तिरुमलै पर्वत का वर्णन है तथा उसके ऊपर निर्मित कुन्दव्वे जिनालय के लिए दिये दान का उल्लेख है। उक्त जिनालय कुन्दव्वे नामक जैन महिला ने बनवाया था। कुन्दव्वे राजराज चोल की पुत्री एव राजेन्द्र चोल की बहिन थी। यह पूर्वीय चालुक्य वश के नरेश विमलादित्य को विवाही गई थी। इतिहासज्ञ मानते हैं कि विमलादित्य (सन् १०११-१०१४ ई०) अपने अन्तिम वर्षों में जैन हो गया[1] था।

५. राष्ट्रकूट वश.—राष्ट्र कूट वश के हमारे सग्रह मे बहुत गिने चुने लेख सगृहीत हैं, जिनसे इस वंश की उत्पत्ति के सम्बध म कुछ भी पता नही चलता। कुछ लोग राष्ट्रकूट शब्द की व्युत्पत्ति रट्ट शब्द से मानते हैं और राष्ट्रकूटों को लट्टलूरपुरवराधीश्वर अर्थात् 'श्रेष्ठ नगर लट्टलूर के स्वामी' मानते हैं। पर रट्ट वंश को स्वतन्त्र माना जाता है और इस सग्रह में उनके अनेकों लेख सगृहीत हैं जिनमें उन्हें भी लट्टलूरपुरवराधीश्वर लिखा है।

राष्ट्रकूटों का राज्य आठवीं शताब्दी के मध्य भाग प्रारम्भ से होता है। इस वश के ६ वें राजा दन्तिदुर्ग ने चालुक्य कीर्तिवर्मा द्वितीय से राज्य छीन कर राष्ट्र-

१—वेंकटरमनय्य ईस्टर्न चालुक्याज आफ वेंगी, पृष्ठ २८८.

कूट साम्राज्य की नींव डाली थी। इस राजा के सम्बंध में कहा जाता है कि इसने महान् आचार्य अकलङ्क का अपने दरबार में सम्मान किया था। श्रवणबेलगोल से प्राप्त एक लेख (२६०) में उल्लेख है कि अकलंक ने साहसतुंग के समक्ष उसकी प्रशंसा कर उने अपनी विद्वत्ता से परिचित कराया था। इतिहासज्ञों के मत से साहसतुंग, दन्तिदुर्ग (द्वितीय) का ही विरुद था।

उसके उत्तराधिकारी कृष्ण प्रथम (सन् ७६८-७७२) ने चालुक्यों के सारे प्रदेशों को अपने अधीन कर लिया। कृष्ण के पश्चात् गोविन्द द्वितीय और उसके पुत्र ध्रुव ने राज्य किया। इस संग्रह के ले० नं० १२३ में कृष्ण प्रथम से ही वंशावली प्रारम्भ होती है। लेख में कृष्ण का दूसरा नाम वल्लभ दिया गया है और लिखा है कि उसने चालुक्य कुल से लक्ष्मी छीन ली थी। इस लेख के अनुसार उसका पुत्र धोर हुआ जिसने अपने ज्येष्ठ भाई से लक्ष्मी छीन ली थी। उस की सामरिक विजयों के सम्बन्ध में लिखा है कि उसने गंग, पल्लव, गौड एवं वत्सराज को पराजित किया था। धोर ध्रुव का द्वितीय नाम था। उसी लेख में उसकी निरुपम और कलिवल्लभ, दो उपाधियाँ दी गई हैं।

उक्त लेख में आगे लिखा है कि इसके पुत्र एव उत्तराधिकारी गोविन्द तृतीय के राज्य भार सम्हालते ही राष्ट्रकूट वंश दूसरों से अलंघनीय हो गया उसने अकेले ही तत्कालीन विख्यात बारह नरेशों की शक्ति को नष्ट कर दिया था, तथा गुर्जर, मालव, विन्ध्याद्रि, पल्लव एवं वेंगी के चालुक्य राजाओं को जीत लिया था, गंगवंशी[1] शिवमार द्वितीय को अपने अधीन कर लिया था। इसका दूसरा नाम प्रभूतवर्ष और निरुपम भी था। इसी लेख में लिखा है कि न्यायवलोक शौचकम्भ देव, गोविन्दराज का बड़ा भाई था। इस कम्भदेव ने अपने भाई राजाधिराज प्रभूतवर्ष की आज्ञा से पेर्ब्बडियूर नामक ग्राम को सर्व करों से मुक्त कर महासामन्त श्रीविजय द्वारा निर्मापित मन्दिर के लिए दान में दे दिया। लेख

---

१. जैन शिला ले० प्रथम भाग ले० न० ५४ (६७). पद्य २१.

२. डा० अ० स० अल्तेकर : राष्ट्रकूट और उनका समय, पृष्ठ ४०६.

नं० २६०[1] में लिखा है कि आचार्य परवादिमल्ल ने अपने नाम की सार्थकता कृष्णराज को समझाई थी। उक्त लेख में साहसतुंग और कृष्ण के बीच एक शत्रुभयंकर विरुद वाले राजा का उल्लेख है। विद्वानों का अनुमान है कि उक्त लेख में तिथिक्रम का व्यतिक्रम किया गया है और उक्त लेख के शत्रु भयकर को गोविन्द तृतीय होना चाहिए जिसने अपने पराक्रमसे राष्ट्रकूट वशके गौरवको बढाया था। कृष्ण को कृष्ण द्वितीय होने का अनुमान किया गया है जो कि गोविन्द तृतीय का पूर्ववर्ती नरेश था[2]। लेख नं० १२४ मे प्रभूतवर्ष गोविन्द तृतीय के पूर्वज राजाओं की वंशावली उत्तम संस्कृत काव्य में गोविन्द प्रथम से लेकर उस तक दी गई है। इस गोविन्दराज ने अपने गगवशीय सामन्त चाकिराज की प्रार्थना पर शक स० ७३५ मे जालमगल नामक ग्राम को यापनीय सघ के अन्तर्गत नन्दिसघ के पुन्नागवृक्षमूलगण के अर्ककीर्ति मुनि को दान मे दिया था।

प्रस्तुत सग्रह में इस वश के तीसरे लेख (न० १२७) मे, जो गोविन्द तृतीय के पुत्र अमोघवर्ष प्रथम का है, राष्ट्रकूट वश की एक वंशावली दी गई है जो कि दूसरो वशावलियों से कुछ भिन्न है। लेख के हिन्दी सार मे यह अन्तर दे दिया गया है। डा० दे० रा० भण्डारकर इस अन्तर को विशेष महत्त्व नही देते और इस लेख मे वर्णित कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं की ओर सकेत करते हैं इसके पद्य १७–२४ से ज्ञात होता है कि अमोघ वर्ष के समय में अनेक आन्तरिक विद्रोह हुए थे। और सन् ८६० के पहले शाही ताकत को चुनौती देने के लिए कम से कम तीन ऐसे विद्रोह अवश्य हुए थे। पहला उस समय हुआ था जब कि अमोघवर्ष बालक था, दूसरा जब कि वह गुजरात के अपने चचेरे भाइयों से लड़ रहा था और तीसरा इसके कुछ बाद हुआ था। यद्यपि इन विद्रोहो का वहा विस्तृत विवरण नही दिया गया पर मालुम होता है कि तीसरा विद्रोह बड़ा उग्र

---

१. जैन शिलालेख प्रथम भाग, ले० नं० ५४.
२. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ३६.

था और वनवासी के शासक बङ्केय ने समय पर पहुँच कर उस परिस्थिति का सामना किया। जान पड़ता है कि अमोघवर्ष के उत्तराधिकारी कृष्ण द्वितीय ने भी विद्रोहियों का साथ दिया था, पर जब उसने उनका साथ छोड़ दिया तो उस अकेले ने उन्हें नष्ट कर दिया। लेख का उद्‌देश्य है कि शक सं० ७२० में चन्द्रग्रहण के समय राजा अमोघवर्ष ने बंकेय की महत्त्वपूर्ण सेवा के उपलक्ष्य में, कोलनूर में उसके द्वारा स्थापित जैन मन्दिर के लिए तलेयूर नामक ग्राम तथा कुछ ग्रामों की भूमियाँ दान में दीं। यह बंकेय वह है जिसके नाम से बंकापुर राजधानी बनाई गई थी। इसी बंकेय के पुत्र सामन्त लोकादित्य के समय में जब कि अमोघवर्ष का पुत्र कृष्ण द्वितीय (अकालवर्ष) सार्वभौम था, गुणभद्र कृत उत्तरपुराण की पूजा हुई थी। उत्तरपुराण से हमें मालुम होता है कि अमोघवर्ष परम जैन भक्त था। उसके गुरु महापुराण, जयधवलादि ग्रन्थों के प्रणेता जिनसेनाचार्य थे[1]।

कृष्ण द्वितीय (अकालवर्ष) के राज्य काल का निर्देश करने वाले प्रस्तुत सग्रह में तीन लेख (१३०, १३७, १४०) हैं। १३० वें लेख के अनुसार रट्टवंशीय पृथ्वीराम को प्रमुख अधिपति होने का पद राष्ट्रकूट राजा कृष्ण की अधीनता में मिला था। ऐसा जान पड़ता है कि लेख कृष्णराज के समय में उत्कीर्ण न होकर परवर्ती समय में उत्कीर्ण किया गया है क्योंकि उसमें पृथ्वीराम की ५–६ पीढी बाद के वंशज राजा कन्न के दान का उल्लेख किया गया है। दूसरा लेख (१३७) मूलगुन्द से सन् ६०३ का मिला है। यह लेख अधूरा है इसमें कृष्ण द्वितीय के राज्यकाल में एक जैन मन्दिर के निर्माण एवं भूमिदान का उल्लेख है। ले० नं० १४० से ज्ञात होता है कि सन् ६१२ ई० मे भी इस नरेश का राज्य था। इसके नागार्जुन नामक एक सामन्त की पत्नी सामन्त की मृत्यु के बाद राजा की आज्ञा से शासन करती थी और सन् ६१८ में एक बीमारी के कारण उसने समाधिमरण से देहोत्सर्ग किया था।

---

१. जैन साहित्य और इतिहास द्वितीय संस्करण (१९५६), पृष्ठ १५०

ले० नं० १८२ में अमोघवर्ष के उल्लेख के बाद गंगनरेश शिवमार सैगोट्ट का नाम दिया गया है जिससे मालुम होता है कि यह अमोघवर्ष प्रथम (सन् ८१४–८७७ ई०) के समय का है। पर लेख में गलत रूप से शक स० २६१ दिया गया है और किसी कन्नरस सैगोट्ट गंग का उल्लेख है जिससे लेख जाली मालुम होता है। फ्लीट महोदय इसके उत्तरार्ध भाग को सच्चा मानते हैं।

कृष्ण तृतीय (अकालवर्ष) के पौत्र इन्द्र चतुर्थ के सम्बन्ध में ले० नं०१६३ (सन् ६८२) से ज्ञात होता है कि वह पोलो के खेल में बड़ा निपुण था। उसने श्रवणबेलगोल में सल्लेखनापूर्वक मरण किया था। इस लेख में इन्द्र के अनेक विशेषण दिये गये हैं और कहा गया है कि वह गंग गंगेय (बुतुग द्वितीय) का कन्यापुत्र एवं राजचूड़ामणि का दामाद था। ले० न० १५२[1] से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय के लिए गंग नरेश मारसिंह तृतीय ने गुर्जरप्रदेश को जीता था एवं और कृष्ण तृतीय के पौत्र इन्द्र चतुर्थ का राज्याभिषेक किया था। इन लेखों से ज्ञात होता है कि उस काल में इन दोनों राजवंशों में घनिष्ठता थी।

६. कलचूरि वंशः—ले० न० ४०८ से हमें ज्ञात होता है कि चालुक्य नूर्म्मडि तैल (तैल तृतीय) के बाद चालुक्य राज्य की लक्ष्मी कलचूरितिलक बिज्जल के हाथ चली आई। कलचूरि वंश बहुत प्राचीन है इसका उल्लेख हम एहोले के लेख (१०८) में पाते हैं जहाँ चालुक्य मंगलीश द्वारा उनके परास्त होने का उल्लेख है। कलचूरि वंश के अन्य लेखों से तथा इस संग्रह के लेख नं० ४०८, ४३५ से ज्ञात होता है कि ये अपनी उत्पत्ति उत्तर भारत के कालञ्जर नामक स्थान से मानते थे। लेख नं० ४०८ में बिज्जल की शूर वीरता का वर्णन है। उसका भाई मैलुगिदेव था। लेख से बिज्जल के तीन पुत्रों—सोयिदेव (राय-मुरारि), शंकम (निःशंकमल्ल), आहवमल्ल (रायनारायण)—और पौत्र कन्दार का नाम एवं परिचय मिलता है। उक्त लेख में लिखा है कि राजा बिजल को सप्ताङ्ग सम्पत्ति दिलाने वाला उसका एक जैन सेनापति रेचि था जो

१ जैन शिलालेख, स० भाग १, ले० न० ३८।

'वसुधैकबान्धव' कहलाता था। लेख का विषय है कि आहवमल्ल (रायनारायण) कलचूरि के शासनकाल में उक्त सेनापति ने मागुडि गाँव के रत्नत्रय चैत्यालय के लिए भानुकीर्ति सिद्धान्त देव को तलवे गाव दान में दिया था।

लेख नं ४३५ से मालुम होता है कि बिज्जल के शासनकाल में वीरशैव मत का बोलवाला था। उक्त मत का आचार्य एकान्तदरामय्य जैनों पर अत्याचार कर रहा था (४३५, ४३६)। यद्यपि कलचूरि जैन धर्मानुयायी थे, उनके शासन पत्रों पर तीर्थंकर की पद्मासन मूर्ति, इन्द्रादि सेवकों के साथ बनायी जाती थी, पर बिज्जल समय की गति देखते हुए वीर शैवों की ओर झुका, और कहा जाता है है कि उन्हीं के द्वारा उसकी मृत्यु भी हुई। लेख न० ४६५ से ज्ञात होता है कि उसके सेनापति रेचि ने उसे छोड़ कर जैन धर्मावलम्बी होय्सल नरेश वीर वल्लाल द्वितीय का आश्रय लिया था। लेख नं० ४४८ में उल्लेख है कि कुन्तल देश से बिज्जल के शासन को हटाकर वल्लाल होय्सल ने उसे अपने अधीन कर लिया था। इस तरह दक्षिण भारत में इस वंश का शीघ्र ही अन्त हो गया।

७. होय्सल वंशः—चालुक्यों के पतन के बाद दक्षिण भारत में दो नई शक्तियों का जन्म होता है। ये दोनों अपने को यादव वंश से उत्पन्न मानते हैं। उनमें चालुक्य साम्राज्य के दक्षिण भाग पर अधिकार करने वाले होय्सल थे और उत्तर भाग पर यादव (सेऊण)।

गङ्ग वंश के समान होय्सल वंश के अभ्युदय में जैन प्रतिभा का बड़ा भारी हाथ रहा। जैन गुरुओं ने इस वंश के उत्थान में योग देकर अहिंसा और अनेकान्त की दुन्दुभि को फिर एक बार दक्षिण प्रान्त में बजाया। इस वंश का उत्पत्ति स्थान सोसेवूर (स० शशकपुर) था जिसे राइस सा० ने वर्तमान अङ्गडि (मुडगेरे तालुका, कडूर जिला, मैसूर राज्य) माना है। अगडि से इस वंश से सम्बन्धित अनेकों लेख भी प्राप्त हुए हैं। यहीं इस वंश की कुलदेवता वासन्तिका देवी का मन्दिर अब भी विद्यमान है। सम्भव है यहीं इस वंश की उत्पत्ति से संबधित एक महत्त्वपूर्ण घटना हुई थी जिसका उल्लेख कतिपय जैन

लेखों में मिलता है। श्रवणबेल्गोल से प्राप्त सन् ११२३ के एक लेख[1] से ज्ञात होता है कि एक समय इस वंश के प्रवर्तक प्रथम पुरुष सल से एक जैन मुनि ने एक कराल व्याघ्र को देखकर कहा कि–पोय्सल–हे सल! इसे मारो। लेख नं० ४५७ के अनुसार यह घटना इस प्रकार है:— कुन्तल आदि देशों का अधिपति, यदुकुल के सल को वनवास देश का मुख्य क्षेत्र दान मे देना चाहता था। उस समय सुदत्त मुनिप ने पद्मावती को एक चीते के रूप मे प्रकट करवाया। पद्मावती को चीते के रूप में देखते ही उन्होंने सल से कहा— पोय्सल (सल, मारो)। जिस पर उसने चीते को सल (डण्डे) से मारा और देवी पद्मावती के समक्ष उसके साहस का प्रदर्शन कराया। इससे राजा का नाम पोय्सल पड़ा।

इस घटना के उल्लेख से इतना तो मालुम होता है कि सल उस समय एक होनहार। सरदार था जैन प्रतिमा को राज्याश्रय से वञ्चित होते समय यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह किसी उदीयमान सरदार को आगे बढाये जो जिनधर्म को पुन सरक्षण प्रदान करे। इतिहास हमे बताता है कि सचमुच ही इस वंश ने अपने अन्तिम दिनों तक जैन धर्म को आश्रय प्रदान किया था।

इस वश के उद्गम होने के पहले अगडि एक जैन केन्द्र था यह बात हमें लेख नं० १६६ से ज्ञात होती है। लेख न० २०१ तथा अन्य लेखों से ज्ञात होता होता है कि इस वश के शासक अपने को मले परोल गण्ड (पहाड़ी सामन्तों मे मुख्य) मानते थे, जिससे मालुम होता है कि वे लोग पहाड़ी जाति के थे। यद्यपि प्रस्तुत संग्रह के लेखों से वंश के प्रारम्भ के तीन नरेश—सल, विनयादित्य प्रथम एवं नृपकाम—के सम्बन्ध में विशेष नहीं मालूम होता है पर अन्यत्र उल्लेखों से अनुमान किया जाता है कि ये तीनों नरेश सुदत्त मुनि के प्रभाव में थे[2]। नृपकाम के सम्बन्ध में ले० नं० ३४७ से ज्ञात होता है कि वह विनयादित्य

---

१. जै० शि० सं० प्रथम भाग, ५६; प्रस्तुत सग्रह का २८२ या २८३ वा लेख।

२. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ६४–७३

द्वितीय का पिता था। लेख नं० २७८[1] में नृपकाम होयसल का जैन सेनापति गंग-राज के पिता एचि के संरक्षक के रूप में उल्लेख है। लेख नं० १७८ के आधार पर कुछ इतिहासज्ञ इस नरेश का समय सन् १०२२ या १०४० (?) के लगभग निर्धारित करते हैं, तदनुसार इसका दूसरा नाम राचमल्ल पेर्म्मानडि था जो कि गंगवाडो के मुनियों में प्रसिद्ध था[2]। इसके गुरु द्रविड़संघ के वज्रपाणि ने सोसवूर (अङ्गडि) में अपना जीवन व्यतीत कर अन्त में सन्यासपूर्वक देह त्यागा था। नृपकाम का पुत्र विनयादित्य द्वितीय हुआ जिसने सन् १०४०—११०० के लगभग शासन किया। लेख नं० २६०[3] से ज्ञात होता है कि इसके गुरु शान्तिदेव थे, जिन की चरणसेवा से उसे राज्यलक्ष्मी प्राप्त हुई थी। लेख नं० २८६[4] में उल्लेख है कि उसने अनेक तालाब एव जैन मन्दिर बनवाये थे। लेख नं० १२५ से ज्ञात होता है कि विनयादित्य के राज्यकाल में अङ्गडि में मकर जिनालय नाम से एक प्रसिद्ध चैत्यालय था। ले० नं० २०० के अनुसार उक्त नरेश के गुरु शान्तिदेव सन् १०६२ ई० में दिवंगत हुए थे। उक्त अवसर पर उस नरेश ने और सभी नगरवासियों ने मिलकर उनकी स्मृति मे एक स्मारक बनवाया था। यह नरेश चालुक्य नृप विक्रमादित्य षष्ठ का सामन्त था। उसका बेटा एरेयङ्ग (त्रिभुवनमल्ल) सोमेश्वर तृतीय भूलोकमल्ल चालुक्य का सामन्त था (२१८)। ले० नं० ४०३[5] और ३६३[6] में उसे चालुक्य नरेश का बलद (दक्षिण) भुजादण्ड कहा गया है। ले० नं० ३४८ में कई पद्यों द्वारा इसकी सामरिक वीरता की प्रशंसा

---

१. जै० शि० सं० प्रथम भाग लेख नं० ४४

२. राबर्ट सेवल, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३५१

३. जै० शि० सं० प्रथम भाग, ले० नं० ५४.

४. वही—ले० नं० ५३.

५. वही—ले० नं० १२४.

६. वही—ले० नं० १३७ (?)

की गई है और अनेकों उपाधियाँ दी गई हैं। लेख नं० २३३[1] से, जो कि एरेयंग के राज्यकाल का ही है, ज्ञात होता है कि वह गंग मण्डल पर राज्य करता था। उसने अपने गुरु जैनतार्किक गोपनन्दि को श्रवणबेल्गोल की बसदियों के जीर्णोद्धार के हेतु कुछ ग्राम दान में दिये थे।

इतिहासज्ञों का अन्य लेखों के आधार पर विश्वास है कि एरेयग अपने अन्तिम दिनों तक युवराज बना रहा और उसका वृद्ध पिता विनयादित्य गद्दी पर बैठा रहा। होय्सल वंश में एरेयंग प्रथम व्यक्ति था जिसने वीर गङ्ग उपाधि धारण की। पीछे इसके उत्तराधिकारियों में यह उपाधि बड़ी प्रिय समझी गई।'

लेख नं० २६५ से ज्ञात होता है कि एरेयङ्ग की रानी एचलदेवी से बल्लाल, विष्णुवर्धन (विट्टिग) एवं उदयादित्य नामक तीन पुत्र हुए। लेख नं० २६६ में इसके एक दामाद का उल्लेख है जिसका नाम हेम्माडिदेव था, यह गगवंशोत्पन्न एवं जैन धर्मानुयायी था। लेख नं० २१८ के अनुसार मालुम होता है कि उसके ज्येष्ठ पुत्र बल्लाल ने कुछ समय के लिए शासन किया था यद्यपि उक्त लेख का शक संवत् १००० सन्देहास्पद है। इस लेख में बल्लाल के शौर्य की प्रशसा भी है। लेख नं० ५६६ तथा ६२५ [2] से ज्ञात होता है कि उसके जैन गुरु चारुकीर्ति मुनि थे जिन्होंने इसे असाध्य बीमारी से बचाया था। बल्लाल का शासन काल सन् ११०० से ११०६ ईस्वी तक माना जाता है।

बल्लाल का उत्तराधिकारी उसका भाई विष्णुवर्धन हुआ। यह इस वंश का सबसे बड़ा प्रतापी राजा था। इस राजा ने कर्नाटक देश को चोल आधिपत्य से मुक्त किया था। इस संग्रह में उसके राज्य के अनेकों लेख संग्रहीत हैं। लेख

---

१. वही—ले० नं० ४९२।

२. वही—ले० नं० १०५, १०८

नं० २६३, २६४, २८३, २८७, २८६, ३०४, ३४८, ३६३ एवं ४०३[1] में विष्णुवर्धन के अनेकों विरुदों तथा प्रतापादि का उल्लेख है। उसके आठ जैन सेनापतियों —गङ्गराज, बोप्प, पुणिस, बलदेव, मरियाने, भरत, ऐन्व एवं विष्णु ने अनेकों महत्व के युद्धों में उसे विजय प्रदान कर उसके राज्य को मजबूत बनाया था। लु० राइस महोदय की मान्यता है कि सन् १११६ ई० के पहले विष्णुवर्धन ने जैन धर्म को छोड़कर रामानुजाचार्य के प्रभाव में आकर वैष्णव धर्म ग्रहण कर लिया था। सत्य जो हो पर उसके मन पर जैन प्रभाव और कृतज्ञता इतनी अधिक थी कि जैनत्व के प्रति श्रद्धा एव भक्ति मे उसने कमी नहीं की थी। लेख न० २८७ और ३०१ से ज्ञात होता है कि सन् ११२५ और ११३३ ई० में भी जैन धर्म के प्रति श्रद्धालु था। २८७ वे लेख के अनुसार उसने चोल सामन्त अदियम, पल्लव नरसिंह वर्म, कोङ्ग, कलपाल तथा अङ्गरन के राजाओं को पराजित किया था तथा पीछे वसदियों के जीर्णोद्धार के हेतु तथा ऋषियों को आहार दान देने के लिए अपने जैन गुरु द्रविड़ सघ के श्रीपाल त्रैविद्य देव को चल्य (शल्य) नामक ग्राम दान मे दिया था। लेख न० ३०१ (सन् ११३३) से विदित होता है कि उसके एक सेनापति बोप्पदेव द्वारा हनसोगेवलि के द्रोहघरट्ट जिनालय की स्थापना के बाद जिस समय पुरोहित लोग चढाये हुए भोजन (शेषा) को विष्णुवर्धन के पास बङ्कापुर ले गये, उसी समय वह एक शत्रु पर विजय प्राप्त कर आया था, तथा उसकी रानी लक्ष्मी महादेवी से पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ था। उसने उनका स्वागत कर प्रणाम किया और यह समझकर कि इन्ही पार्श्वनाथ भग०की स्थापना से उसे युद्ध मे विजय, पुत्रोत्पत्ति एवं सुख समृद्धि मिली है, उसने देवता का नाम विजयपार्श्व तथा पुत्र का नाम विजय नरसिंह देव रखा था। ले० नं० २८३[2] से ज्ञात होता है कि उसकी एक पत्नी शान्तलदेवी जैन धर्म परायणा थी। उसकी एक उपाधि थी उद्वृत्तसवतिगन्धवारणे अर्थात् उच्छृङ्खल सौतों के लिए मत्त हाथी। उसने श्रवणबेल्गोल में 'सवति गन्धवारण' वसदि भी बनवायी थी। उसके अनेक

१. वही—(२८३ से क्रमश) ले० न० ५६, ४९३, ५३, १४४, १३८, १२४, १३७

२. वही—ले० नं० ५६

दानादि कार्यों का वर्णन जैन महिलाओं के प्रकरण में दिया गया है। विष्णु-वर्धन से सम्बन्धित प्राय: सभी लेखों में उसके जैन सेनापतियो मन्त्रियों एवं अफसरों की शूर वीरता, दानादि कार्यों का वर्णन है जो कि प्रसगानुसार पृथक् किया गया है।

यद्यपि विष्णुवर्धन ने होय्सल वश को दक्षिण भारत की राजनीति मे समुन्नत बनाया था और अपने वश के पूर्व अधिपति चालुक्य वश से बहुत कुछ स्वतत्र कर लिया था, पर वह सम्राट् का पद धारण न कर सका। लेख न० २६५ से सिद्ध होता है कि वह चालुक्याभरण त्रिभुवनमल्ल (विक्रमादित्य षष्ठ) का आधिपत्य स्वीकार किया था। उसके अन्तिम वर्षों के लेखों (३१८ आदि) में भी उसे महामण्डलेश्वर कहा गया है।

इतिहासज्ञों की मान्यता है कि विष्णुवर्धन सन् ११४० ई० मे दिवगत हुआ और उसका बेटा नरसिंह (प्रथम) गद्दी पर आरूढ हुआ। यद्यपि विष्णु-वर्धन के राज्यकाल का उल्लेख करने वाले लेख सन् ११४६ ई० तक के मिलते हैं पर या तो वे पुराने लेखों की पुनरावृत्ति हैं या जाली हैं। जैन लेखों मे ऐसा ही एक लेख (३१८) उसकी मृत्यु के दो वर्ष बाद का है। विष्णुवर्धन को नर सिंह के अतिरिक्त एक और पुत्र था। ले० न० २९३ (सन् ११३० ई०) से ज्ञात होता है कि उसका ज्येष्ठ पुत्र श्रीमन् त्रिभुवनकुमार बल्लालदेव राज्य कर रहा था। उसकी बहिनों में सबसे बड़ी हरियब्बरसि थी जो जैन धर्मपरायण थी। उक्त राजकुमार के सबंध में इससे अधिक और कुछ ज्ञात नहीं।

नरसिंह प्रथम के राज्यकाल के भी अनेकों लेख इस सग्रह में दिये गये हैं (३२४, ३२८, ३३३, ३३६, ३४७, ३४८, ३५१, ३५२, ३५६, ३६३, ३६७)। ये सामन्तों, सेनापतियों एव अफसरों से सम्बन्धित हैं। लेख न० ३४८[1] से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश के भाण्डागारिक एवं मत्री हुल्ल ने

१. वही-ले० न० १३८.

श्रवणबेल्गोल में चतुर्विंशति जिन मन्दिर निर्माण कराया। यह मन्दिर आज-कल भी भण्डारिबस्ति कहलाता है। उक्त लेख में लिखा है कि एक समय नरसिंह अपनी दिग्विजय के समय श्रवणबेल्गोल आये और उक्त जिनालय को देख प्रसन्न हो उसका नाम भव्य चूड़ामणि रखा। नरसिंह ने उस समय मन्दिर के पूजनादि प्रबन्ध के लिए 'सवणेरु' नामक ग्राम दान में दिया। यही बात ले० नं० ३४८ में भी लिखी है। अन्य लेखों से प्राप्त इसके सेनापतियों एवं महाप्रधानों का वर्णन दूसरे प्रकरण में दिया गया है। इन लेखों से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने शासनकाल में होय्सल वंश की समृद्धि के लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं किये। केवल अपने पिता द्वारा अर्जित राज्य वैभव और उसके यश का ही उपयोग करता रहा। लेख नं० ३३६ में इसकी एक उपाधि 'जगदेकमल्ल' दी गई है जो सूचित करती है कि यह चालुक्यों का आधिपत्य स्वीकार करता था।

नरसिंह का उत्तराधिकारी उसका प्रतापी बेटा बल्लाल द्वितीय हुआ जिसे लेखों मे वीर बल्लाल कहा गया है। यह बड़ा बहादुर राजा था। इसने होय्सल वंश को स्वतन्त्र बनाया और राज्य मे शान्ति एवं सुख समृद्धि स्थापित की। इसका राज्य सन् ११७३ से १२२० ई० तक अर्थात् ४८ वर्ष के लगभग रहा। इस नरेश के राज्यकाल के भी अनेकों लेख इस संग्रह में दिये गये हैं। लेख नं० ३७२ (सन् ११६८) इसकी युवराज अवस्था का है जिससे ज्ञात होता है कि यह अपने पिता के शासनकाल में सक्रिय सहयोग देता था। इसके जैन गुरु का नाम वासुपूज्य सिद्धान्त देव था। लेख नं० ३७६ और ३८१[1] इसके राज्य के प्रथम वर्ष के हैं। ले० नं० ३७६ से विदित होता है कि अपने पट्टबन्धोत्सव में महादान दिये थे। शक स० १०६५ की श्रावण शुक्ला एकादशी (दशमी) रविवार को उसका राज्याभिषेक हुआ था। उस दिन उक्त लेखा-

१. वही—ले० नं० ४६१.

नुसार उसके महासाधिविग्रहिक मंत्री बूचिमय्य ने त्रिकूट जिनालय बनवा कर, उसकी पूजादि के लिए द्रविड सघ के वासुपूज्य सिद्धान्तदेव को मरिकली गाँव भेट किया। इसी तरह लेख न० ३८१ से विदित होता है कि उसका दण्डाधिप हुल्ल था। यह हुल्ल उसके पितामह विष्णुवर्धन के समय से ही उक्त वश की सेवा में था। बल्लाल देव ने उस वर्ष भानुकीर्ति व्रतीन्द्र को पार्श्व और चतुर्विंशति तीर्थंकर की पूजा हेतु मारुहल्लि ग्राम दान में दिया तथा हुल्ल के अनुरोध से वेक्क गाँव भी भेट में दिया। ले० नं० ३६६[1] मे लिखा है कि बल्लाल ने अपने पिता द्वारा दिये गये तीन गाँवों के दान को हुल्ल मत्री द्वारा पूरा कराया।

इस राजा के इस सगह के अनेक लेख उसके सेनापतियों, मन्त्रियों एवं सेठों से सबधित है जिनका वर्णन पीछे प्रकरणों मे दिया गया है। उसकी सामूहिक विजयों के सम्बन्ध में ले० न० ३६४ ने लिखा है कि इसने उच्चगि के किले को जीता था, तथा ले० न० ४३१ से विदित होता है कि उसने सेवुण राजा को हराया और ले० न० ४४८ से ज्ञात होता है कि उसने कुन्तल देश पर कलचूरि बिज्जल के शासन को हटाकर अपने अधीन किया था। ले० न० ४६५ से मालुम होता है कि इसका एक जैन दण्डनायक रेचि था जो कि ४०८ वें ले० में कलचूरि वंश का दण्डाधिनाथ बतलाया गया है। दोनो लेखों का अध्ययन करने से मालुम होता है कलचूरि नरेश के धर्म परिवर्तन के कारण तथा बल्लाल द्वारा अपने स्वामी के परास्त होने पर संभव है वह उसका सेनापति हो गया हो।

बल्लाल द्वितीय के पुत्र नरसिंह द्वितीय के राज्य का केवल एक लेख (४७५)[2] हमारे सग्रह में है जिसमें उसकी पृथ्वीवल्लभ, महाराजाधिराज, सर्वज्ञचूडामणि आदि उपाधियाँ दी गई हैं। लेख में उक्त नरेश के राज्य में एक सेठ द्वारा गोम्मटेश्वर की पूजा के हेतु किये गए दान का उल्लेख है।

---

१ वही—ले० नं० ६०.

२. वही—ले० नं० ८१.

हमें नरसिंह द्वितीय के पुत्र सोमेश्वर के समय के दो लेख (४६५[1] एवं ४६६) मिलते हैं। ले० नं० ४६५ मे सोमेश्वर की विजय एवं कीर्ति का परिचय उनकी उपाधियों से ज्ञात होता है। उक्त नरेश के सेनापति शान्त और उसके पुत्र सातएण ने मनलकेरे मे जैनमन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था। द्वितीय लेख में वीर बल्लाल तक तो ठीक रूप से वंशावली दी गई पर पीछे की वंशावली नहीं। लेख मे काल निर्देशको देखते हुए कहा जा सकता है कि यह उसके समय का है।

सोमेश्वर के राज्य के उत्तराधिकारी उसकी दो रानियों के दो पुत्र, नरसिंह तृतीय एवं रामनाथ हुए। नरसिंह तृतीय के चार लेख प्रस्तुत संग्रह में दिए गये हैं। ले० नं० ४६६ के अन्तर्गत दो लेखों से ज्ञात होता है कि सोमेश के पुत्र नर सिंह ने अपने जीजा द्वारा बनवायी गई चहार दीवारी एव मकान की मरम्मत कराकर विजयपार्श्वदेव की सेवा में अर्पण किया था तथा कुछ महीने बाद अपने उपनयन संस्कार के समय उक्त देव की पूजादि के निमित्त दान दिया था। ले० नं० ५१२[2] मे उक्त नरेश द्वारा तथा होन्नचगेरे के सम्मुदेव द्वारा भूमिदान का उल्लेख है। ले० नं० ५२८[3] में होय्यसलराय शब्द से इस नरेश का निर्देश इसके गुरु महामण्डलाचार्य माघनन्दि का उल्लेख तथा बेल्गोल के जौहरियों द्वारा भूमिदान का कथन है। चूँकि लेख का समय उक्त नरेश के राज्यकाल मे पड़ता है इसलिए होय्सलराय से नरसिंह तृतीय ही समझना चाहिये।

अन्यत्र उल्लेखों से ज्ञात होता है कि रामनाथ तथा नरसिंह के उत्तराधिकारी बल्लाल तृतीय ने भी जैन धर्म को संरक्षण प्रदान किया था[4]।

इस तरह हम देखते हैं कि इस वंश के आदि पुरुष से लेकर अन्तिम राजा तक सभी जैन धर्म के प्रति श्रद्धालु, भक्त एवं उसे संरक्षण प्रदान करने वाले थे।

---

१. वही–ले० न० ४६६.
२. ,, ले० नं० ६६.
३. ,, ले० न० १२६.
४. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ८५–८६

८. विजय नगर राज्य:—होय्सल साम्राज्य १३ वीं शताब्दी तक दक्षिण भारत में विद्यमान रहा पर मुसलमानों के दो तीन हमलों से वह ध्वस्त हो गया। उसका अन्तिम राजा बल्लाल तृतीय, मदुरा के सुल्तान गियासुद्दीन द्वारा मार डाला गया। दक्षिण के अन्य हिन्दू साम्राज्य भी खतरे में थे। वे सब सचेत हो विजय नगर के नायकों के झण्डे के नीचे आये।

विजय नगर साम्राज्य के संस्थापक अपने को यादव वंश का मानते हैं (५८५ श्लो० १५)। इस वंश का संस्थापक था संगमेश्वर या संगम (५६१) जिसके संबंध में हमें विशेष कुछ मालूम नहीं। उसके दो बेटों ने मिलकर हिन्दू शक्ति को नेतृत्व प्रदान किया। हरिहर प्रथम जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह सन् १३३६ में गद्दी पर बैठा था सन् १३५५ तक जीवित रहा। प्रस्तुत संग्रह में उसके समय के दो ले० नं० ५५८, ५५६ हैं जिनमें उसे महामण्डलेश्वर, हिन्दुवराय, सुरताल श्री वीर कहा गया है। उसका उत्तराधिकारी उसका भाई बुक्कराय हुआ जिसने सन् १३५५ से १३७७ ई० तक राज्य किया। उसके राज्य के ६–७ ले० प्रस्तुत संग्रह में दिए गये हैं, जिनमें उसे महामण्डलेश्वर कहा गया है। ले० नं० ५६६ में उसे पूर्व दक्षिण पश्चिम समुद्राधीश्वर तथा ले० नं० ५६२ में अभिनव बुक्कराय कहा गया है। ले० नं० ५६० में उसके एक पुत्र विरुपण्ण वोडेयर का उल्लेख है। ले० नं० ५६१, ५६५,[1] एवं ५६६ में उक्त नरेश की धार्मिक नीति का निरूपण है। तदनुसार वह अपने राज्य में जैन और वैष्णवों में कोई भेद नहीं देखता था और जब कभी विवाद के प्रश्न उठते थे तो दोनों के पारस्परिक मेल मिलाप कराने में उद्यत रहता था। उसके राज्य के शेष लेख प्रायः समाधिमरण के स्मारक हैं।

बुक्कराय का उत्तराधिकारी उसका पुत्र वीर हरिहरराय द्वितीय हुआ जिसने सन् १३७७ से १४०४ ई० तक शासन किया। इसके राज्यकाल के करीब १३

---

१. जैन शि० सं०, प्रथम भाग, ले० नं० १३६.

लेख इस संग्रह मे हैं जो कि प्रायः साधारण जनता, सरदारों एव सेनापतियों से सम्बंधित हैं। ले० नं० ५७६ मे उसके एक जैन सेनापति वैन्चप्प का उल्लेख है जो कि उसके पिता के समय से उक्त पद पर था। उक्त लेख मे उसकी कोंकण देश से लड़ाई का वर्णन है जिसमे वैन्चप्प की जीत हुई थी। ले० न० ५८१ में हरिहर द्वितीय के पुत्र बुक्कराय द्वितीय तथा वैचप्प सेनापति के पुत्र इरुगप्प महामंत्री का उल्लेख है। ले० नं० ५८५ में चैच (वैन्चप) और इरुगप्प की प्रशंसा के साथ बुक्क और हरिहर की प्रशसा है। सन् १३८६ में इरुगप्प ने विजयनगर में एक मन्दिर बनवाया और उसमे कुन्थु जिननाथ की स्थापना की थी। ले० नं० ५८६ मे और उसके बाद के लेखों मे महामण्डलेश्वर के स्थान मे उक्त राजा की अश्वपति, गजपति आदि तथा महाराजाधिराज उपाधिया मिलती हैं। ले० न० ६०२[1] मे हरिहरराय की मृत्यु का उल्लेख है। उक्त लेखानुसार वह सन् १४०४ (शक सं० १३२६ भाद्रपद कृष्ण १० सोमवार) में दिवंगत हुआ था।

हरिहर द्वितीय का उत्तराधिकारी उसका बेटा बुक्क द्वितीय हुआ जिसने १४०४ से १४०६ ई० के बीच राज्य किया था पर उसके राज्य का एक भी जैन लेख प्रस्तुत संग्रह मे नहीं है। उसका उत्तराधिकारी देवराय हुआ जो कि उसका भ्राता था। इसने १४०६ से १४२२ ई० तक राज्य किया। इसके राज्य के ९ लेख प्रस्तुत सग्रह मे हैं। ले० न० ६०४ मे उसकी अधिराट् जैसी उपाधियाँ दी गई हैं तथा ६०५ में इसकी प्रशंसा की गई है। ले० नं० ६०९ मे उसकी अनेक उपाधियों के साथ उसके जैन सेनापति गोप का उल्लेख है। लेख न० ६१५ के अन्तर्गत दो लेखों से विदित होता है कि उसका एक बेटा हरिहरराय था जो कि जैन धर्मानुयायी था। उसने कनकगिरि के विजयनाथ देव की उपासना आदि के लिए मलेयूर ग्राम दान में दिया था।

ले० नं० ६१९ एवं ६२० में इस वंश की वंशावली दी गई है जिससे

---

१. वही—ले० न० १२६

विदित होता है कि देवराय का उत्तराधिकारी विजय अर्थात् बुक्क तृतीय था जिसने कुछ ही महीने राज्य किया था। ले० नं० ६१८ में विजय बुक्कराय के सम्बध में लिखा है कि उसने स्वर्ग प्राप्ति के लिए गुम्मटनाथ स्वामी की पूजा एव सजावट के लिए तोटहल्लि गाँव भेंट में दिया था। वह भगवद् अर्हत् परमेश्वर का आराधक था। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र देवराय द्वितीय हुआ। ले० नं० ६१६ और ६२० में इस वंश की देवराय द्वितीय तक वशावली दी गई है। ले० न० ६१६ के अनुसार उक्त ताम्रपत्रों का दाता यही देवराय था। ६२० में इस वंश के प्रत्येक राजा की प्रशसा में एक एक शार्दूलविक्रीडित छन्द दिया गया है। देवराय द्वितीय की प्रशसा में अनेक छन्द हैं और कहा गया है कि उसने अपने पान सुपारी बगीचे में एक चैत्यालय बनवाया था और मन्दिर में श्री पार्श्वनाथ स्वामी की प्रतिमा विराजमान की थी। इस नरेश ने सन् १४२२ से १४४६ तक राज्य किया। ले० न० ६३५[1] (सन् १४४६ ई०) में इसकी मृत्यु का संवत् दिया गया है।

देवराय द्वितीय का उत्तराधिकारी उसका बेटा मल्लिकार्जुन हुआ पर उसका एक भी लेख प्रस्तुत सग्रह मे नहीं है। इसकी मृत्यु के बाद सन् १४६५ में उसका भाई विरूपाक्ष तृतीय गद्दी पर बैठा। उसका राज्य सन् १४८५ तक था। उसके समय का एक लेख न० ६४६ (सन् १४७२) है जिसमे उसकी अनेक उपाधियाँ—पृथ्वीमनोवल्लभ, महाराजाधिराज, राजपरमेश्वर आदि—दी गई हैं ' यह संगम वश का अन्तिम राजा था। इसके मत्री सालुव नरसिंह ने इसे मार कर राज्य छीन लिया और इस तरह सन् १४८५ में इस वंश का अन्त हो गया। इस वश के बाद विजयनगर पर शासन करने वाले अन्य वश भी हुए हैं। उनमें तुलुव और आरवीडु वंश ख्यात हैं। तुलुव वश के तृतीय नृप कृष्णदेव राय का नाम इतिहास में विशेष प्रसिद्ध है। अन्य उल्लेखों से ज्ञात होता है कि इसने

---

१. वही—ले० नं० १२५

जैन धर्म को अच्छी तरह सरक्षण प्रदान किया था [1]। उसका उत्तराधिकारी उसका भाई अच्युत राय हुआ था। लेख नं० ६६७ में लिखा है कि वादि विद्यानन्द ने नरसिंह के कुमार कृष्णराय के दरबार में परमतवादियों को अपने वाग्बल से परास्त किया था तथा उनके चरण कमलों को कृष्णराय के भाई अच्युतराय अपने मुकुट से पूजते थे।

विजय नगर राज्य पर शासन करने वाले आरवीडु वश के दो नरेशों के राज्य काल के दो लेख नं० ६९१ (सन् १६०८) और ७१० (सन् १६३७) भी इस संग्रह में उपलब्ध है। प्रथम लेख वेङ्कटाद्रि प्रथम के समय का है। जिसमें उसे राजाधिराज आदि उपाधियां दी गई हैं और उल्लेख है कि मेलिगे नामक स्थान में बोम्मरण श्रेष्ठी ने जिन मन्दिर बनवाकर अनन्त जिन की प्रतिष्ठा की थी। इसी तरह दूसरे लेख मे वेङ्कटाद्रि द्वितीय का अनेक उपाधियो के साथ उल्लेख है। उसे कलिकाल अष्टम चक्रवर्ती कहा गया है। इस लेख मे लिंगायत और जैनों के बीच उठे धार्मिक विवाद पर आपसी समझौता होने का उल्लेख है।

विजय नगर राज्य के लेखों को देखने से हमें भली भांति ज्ञात होता है कि जनता के बीच विशेषत नायकों और गोडों के बीच जैन धर्म प्रिय था। वे उसका विधिवत् पालन करते, दान देते तथा अन्त में समाधि विधि पूर्वक देहत्याग करते थे। हिरियावलि एवं नव निधि आदि ऐसे स्थान थे कि जहाँ समाधि विधि साधक आचार्य रहते थे। स्त्रिया अपने पति के मरने के बाद या तो सहगमन [1] (सती होकर) या समाधि विधि से मरण करती थीं। सती प्रथा के दो तीन दृष्टान्तों से ज्ञात होता है कि जैन समाज हिन्दू सस्कारों से प्रभावित होने लगा था। उनके धार्मिक मामलों में वैष्णवों की ओर से भी समय समय पर बाधाएं आने लगी थीं।

९. मैसूर राज्यवंशः—मैसूर राज्य के सम्बंध के इस संग्रह में प्रायः वे ही लेख हैं जो कि जैनशिलालेख संग्रह प्रथम भाग मे वर्णित हैं। केवल दो लेख नं० ७५८

---

१. देखो, लेख न० ५५६, ५७४, ६०५,

(सन् १८२८ केलसुरु से प्राप्त) एवं नं० ७६४ (सन् १८२९) नरसीपुर से प्राप्त नये हैं, जो कि मुम्मुडि कृष्णराव चतुर्थ के राज्यकाल के हैं। इसका राज्य सन् १७९९ से १८३१ ई० तक था। पहले भाग के लेख नं० ४३३, ९८ एवं ४३४ इस संग्रह में लेख नं० ७५२, ७५७ एवं ७६६ के रूप में संग्रहीत हैं, जो कि इसी नरेश के समय के समझने चाहिये, कृष्ण राज तृतीय (राज्य काल ई० १७३४–१७६१) के नहीं।

ई. दक्षिण भारत के छोटे राजवंश एवं सामन्त गण।

१. सेन्द्रक कुल—इस कुल की उत्पत्ति नागवंश से कही जाती है। लेख नं० १०९ में इन्हें भुजगेन्द्रान्वय का कहा गया है। इनका देश नागरखण्ड था जो कि वनवासि प्रान्त का एक भाग था। पहले ये कदम्बों के सामन्त थे पर पीछे कदम्बों के पतन के बाद बादामी के चालुक्यों के सामन्त हो गये। प्रस्तुत संग्रह के लेख नं० १०४, १०६ एवं १०९ से ज्ञात होता है कि ये जैन धर्मानुयायी थे। इस वंश के सामन्त भानुशक्ति राजा ने कदम्ब हरिवर्मा से जैनमन्दिर की पूजा के लिए दान दिलाया था (१०४) तथा चालुक्य जयसिंह (प्रथम) के राज्य में सामन्त सामियार ने एक जैन मन्दिर बनवाया था (१०६)। लेख नं० १०९ से ज्ञात होता है कि चालुक्य रणराग के शासन काल में विजयशक्ति के पौत्र एवं कुन्दशक्ति के पुत्र दुर्गशक्ति ने पुलिगेरे के प्रसिद्ध शंख जिनालय के लिए भूमिदान दिया था।

२. नीगुन्द वंशः—इस वंश का उल्लेख गंगवंश के एक लेख नं० १२१ में मिलता है। वहां लिखा है कि बाणकुल को भयभीत करने वाला दुण्डु नाम का एक नीगुन्द नामक युवराज हुआ। उसका बेटा परगूल पृथ्वी नीगुन्द राज हुआ उसकी पत्नी कुन्दाच्चि थी जिसकी माता पल्लव नरेश की पुत्री थी तथा उसका पिता सगर कुल का मरुवर्मा था। परगूल और उसका पिता दुण्डु दोनों जैन थे। उसकी पत्नी कुन्दाच्चि ने लोक तिलक नामक जैन मन्दिर बनवाया। जिसके लिए

परगूल ने अपने अधिपति नरेश से एक ग्राम दान में दिलाया था। उक्त लेख में दुग्डु के जैन गुरु विमलचन्द्राचार्य का उल्लेख है।

३. शान्तर वंश—दक्षिण भारत में जैन धर्म को शक्तिशाली बनाने मे शान्तरवंशी राजाओं का बड़ा भारी हाथ था। प्रस्तुत संग्रह के अनेक जैन लेख इस बात के प्रमाण हैं।

शान्तर राजाओं के वंश का नाम उग्रवंश था और सातवीं शताब्दी के लगभग पश्चिमी चालुक्य नरेश विनयादित्य के शासनकाल में यह वंश हमारे सामने आता है। राज्य के रूप में इस वंश को स्थापित करने वाले प्रथम पुरुष का नाम जैन लेखों मे, जिनदत्तराय मिलता है। लेख नं० १४६ के अनुसार यह जिनदत्तराय कलस राजाओं के खानदान कनककुल मे उत्पन्न हुआ था। उसने जिनाभिषेक के लिए कुम्बसेपुर नामक गाव दान में दिया था। जिनदत्तराय के प्रताप का वर्णन ले० नं० १६८ में दिया गया है जिससे विदित होता है कि उसने पद्मावती देवी के प्रसाद को प्राप्त कर एक राक्षस के पुत्र को अपने भुजबल से भयभीत कर दिया था। ले० न० २१३ और २४८ से जिनदत्तराय और उसके वंश के सम्बन्ध की अनेक सूचनाये मिलती हैं। इनसे मालुम होता है कि इस वंश की उत्पत्ति उत्तर भारत के मथुरा नगर में हुई थी और जिनदत्तराय ने पद्मावती के प्रसाद से पट्टिपोम्बुच्चपुर (वर्तमान हुम्मच) मे अपना शासन स्थापित किया था। इसके वाद शान्तर लोगों की राजधानी वहुत समय तक हुम्मच ही रही। इस वंश के अनेकों लेख भी हुम्मच से ही प्राप्त हुए हैं।

जिनदत्तराय के वंश में कुछ समय वाद तोलापुरुष विक्रमशान्तर हुआ जिसने मौनिभट्टारक के लिए एक पापाणवसदि (१३२) वनवाई थी। ले० न० २१३ से विदित होता है कि विक्रम शान्तर ने एक महादान देकर सान्तलिगे हजार नाड् नाम का एक भिन्न राज्य स्थापित किया, इससे वह कन्दुकाचार्य, दानविनोद, विक्रमशान्तर इन तीन नामों से प्रसिद्ध हुआ। उसका पुत्र चागि शान्तर हुआ जिसने चागि समुद्र का निर्माण कराया था। उक्त लेख से ज्ञात होता है कि चागि के वाद क्रमशः वीर, कन्नर, कावदेव, त्यागि, नन्नि, गाय, चिक्कवीर अम्मन

तथा तैल, (सन् ८५० ई० के लगभग से १०२५ ई० के लगभग तक) इस वश में उत्पन्न हुए। दुर्भाग्य से इन सबके सम्बन्ध मे कोई लेख नहीं मिलते।

तैल (प्रथम) के तीन पुत्र थे उनमें वीर शान्तर (द्वितीय) ज्येष्ठ था। वही राज्य का अधिकारी हुआ। उसके राज्य के इस सग्रह में दो लेख हैं। ले० न० १६७ में उसके अनेक विरुद दिये गये हैं। ले० न० १६८ से ज्ञात होता है कि उसने समस्त विरोधियों को नष्ट कर अपने राज्य को निष्कण्टक कर दिया था। इस लेख में उसकी पत्नी चागलदेवी द्वारा निर्मापित तोरण एवं मन्दिर आदि कार्यों तथा दानों की प्रशंसा है। वीरशान्तर का अधिराजा त्रैलोक्यमल्ल चालुक्य (सोमेश्वर प्रथम-सन् १०४२–१०६८ ई०) था इसके नाम पर ही वीर शान्तर का दूसरा नाम त्रैलोक्यमल्ल पड़ा (१६७, १६८)। ले० नं० २१३ से ज्ञात होता है कि इसका विवाह जिन भक्त कुल गगवश में हुआ था। उसका ससुर रक्कस गग था। उसकी पत्नी कञ्चलदेवी (वीर महादेवी) से उसे चार पुत्र उत्पन्न हुए—तैल, गोग्गिग, ओड्डुग और बर्म्म। ये सब जैन धर्म के परम भक्त थे। इन भाइयो ने अपनी जैन धर्मपरायणा मौसी चट्टलदेवी के सहयोग से जैन धर्म की प्रभावना के अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये थे। इस सग्रह में तैल-शान्तर के राज्यकाल के ७ लेख (२०३, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २२६) हैं जो सभी हुम्मच से प्राप्त हुए हैं। ले० न० २०३ से ज्ञात होता है कि तैल द्वितीय ने सन् १०६६ में अपनी राजधानी पोम्बुर्च्चपुर में एक जिनालय बनवाया था, जिसका नाम भुजबल शान्तर जिनालय था। अन्य लेखों में उसके भाइयों के धार्मिक कार्यों का उल्लेख है। तैल द्वितीय भी अपने पिता के समान चालुक्य त्रिभुवन मल्ल (विक्रमादित्य षष्ठ) के अधीन था। उसका विरुद भी था त्रिभुवन मल्ल। उसने अपनी माता वीरब्बरसि की स्मृति में, वादिघरट्ट अजित सेन पण्डितदेव का नाम लेकर एक बसदि की नींव रखी थी।

ले० न० २४८ और ३२६ से ज्ञात होता है कि तैल शान्तर के पम्पादेवी नाम की एक पुत्री तथा श्रीवल्लभ नाम का पुत्र था तथा ओड्डुग शान्तर के तैल

(तृतीय) नामका पुत्र था। अन्यत्र उल्लेखों से ज्ञात होता है कि तैल तृतीय श्रीवल्लभ का उत्तराधिकारी हुआ[1]। ले० नं० ३४६ में इस वंश के अन्तिम अंश का वर्णन है। यह लेख तैल चतुर्थ के वर्णन से प्रारम्भ होता है। तैल चतुर्थ, श्रीवल्लभ शान्तर का पुत्र था। इसकी पत्नी अक्कादेवी थी जिससे काम, सिंह और अम्मण ये तीन पुत्र हुए। काम से जगदेव और सिंगिदेव दो पुत्र तथा अलिया देव पुत्री हुई। काम, तैल चतुर्थ का उत्तराधिकारी हुआ और जगदेव कामदेव का। उक्त लेख में अलियादेवी के दान कार्यों का वर्णन है। यह देवी गंगवंश के राजकुमार होन्नेयरस की पत्नी थी।

यद्यपि पीछे के शान्तर नरेश वीर शैवधर्म की ओर झुक गये थे तो भी जैन धर्म की कृतज्ञता के भाव उनके मन में बराबर थे। २-३ शताब्दी बाद भी इस वंश के नायकों को अपने पूर्वजों के धर्म की याद बनी रही। कारकल से प्राप्त दो लेखों (६२४ और ६२७) से हमें ज्ञात होता है कि जिनदत्तराय के वंशज भैरव के पुत्र वीर पाण्ड्य ने कारकल में बाहुबलि की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित कराई थी तथा वहीं जिनभक्त ब्रह्म (क्षेत्रपाल) की प्रतिमा भी प्रतिष्ठापित की थी।

४. कोङ्गाल्ववंशः—कोङ्गाल्ववंश राजाओं का शासन कोङ्गलनाड ८००० प्रान्तपर था जो कि वर्तमान कुर्गके उत्तरीभाग येलुसावीर प्रान्त और मैसूर के हसन जिले के दक्षिणीभाग अर्कलगुद तालुका को शामिल किये था। यहाँ के पूर्व इतिहास का हम पता नहीं पर ११वीं शताब्दी इस्वी से कोङ्गाल्व नरेशों के शिलालेखों से ज्ञात होता है कि उस समय यह क्षेत्र महत्वपूर्ण था।

इस वंश के जो भी लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं उनसे उनके राजवंश का विशेष परिचय नहीं मिलता पर उनकी जैन धर्मपरायणता का परिचय अवश्य मिलता है। सन् १०५८ ई० के लेखों (१८८, १८६, १६०) से मालुम होता है कि राजेन्द्र कोङ्गाल्व ने अपने पिता द्वारा निर्मापित बसदि के लिए भूमिदान दिया था। उसकी मां ने भी एक बसदि बनवाई थी और उसमें अपने गुरु गुणसेन

१—गवर्ट सेवेल, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३६०

पण्डित देव की प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी। ले० नं० १६० में राजेन्द्र का पूरा नाम राजेन्द्र चोल कोङ्गाल्व दिया गया है। सन् १०७० के एक त्रुटित लेख (२०६) मे पृथुवि कोङ्गाल्व नाममात्र मिलता है उसके आगे का अंश नहीं पर ले० न० २२०[1] मे, उसका पूरा नाम राजेन्द्र पृथ्वी कोङ्गाल्व अदटरादित्य दिया गया है। इसने अदटरादित्य नामक चैत्यालय निर्माण कराया था। पहले के उद्धृत लेखों और इस लेख से ज्ञात होता है कि उसका शासन काल कम से कम सन् १०५६ से १०७६ ई० तक अवश्य था। उक्त लेख में राजेन्द्र कोङ्गाल्व की महत्त्वपूर्ण अनेकों उपाधियाँ दी गई हैं जिनसे मालुम होता है कि वे सूर्यवशी थे और चोलवश से उनकी उत्पत्ति हुई थी। उन्हे ओरेयूर पुरवराधीश्वर कहा गया है। ओरेयूर व उरगपुर चोलराज्य की प्राचीन राजधानी थी। इस वश के नरेश प्रारम्भ से ही होय्सल राजाओं के अधीन सामन्त थे तथा पीछे विजय नगर राज्य के अधीन बने रहे।

प्रस्तुत सग्रह मे इस वश के और राजाओं के लेख नहीं आ सके। ले० न० ५६० (सन् १३६१) में कोङ्गाल्ववशी किसी राजा की रानी सुगुण देवी द्वारा प्रतिमा स्थापना एव दानादि कार्यों का उल्लेख है। इससे विदित होता कि इस वंशके नरेश चौदहवीं शताब्दी या उसके बाद तक जैन धर्म पालन करते रहे।

५. चङ्गाल्व वंश — कोङ्गाल्वों के दक्षिण मे चगाल्व वश का राज्य था। पहले वे चंगनाड् (मैसूर रियासत का वर्तमान हुणसूर तालुका) के अधिपति थे। पश्चात् इनका राज्य पश्चिम मैसूर और कुर्ग में फैला था। यद्यपि ये शैव सम्प्रदाय के थे पर प्रस्तुत सग्रह के कुछ लेख यह सिद्ध करते हैं कि ११ वीं शताब्दी के अन्तिम एव १२वी के प्रथम दशकों मे वे जैन धर्मावलम्बी थे। ले० न० १७५, १६५, १६६ एवं २२३ से ज्ञात होता है कि वीर राजेन्द्र चोल नन्नि चगाल्व ने देशियगण, पुस्तक गच्छ के लिए कुछ बसदियाँ बनवायी थी। लेख न० २४० और २४१ में कथन है कि उसी राजेन्द्र चगाल्व ने सन् ११०० मे

१—जैन शिलालेख सग्रह, प्रथम भाग, ले० नं० ५००

चन्द-तीर्थ की वसदि को, जिसे पहले राम ने बनवाया था और जिसको गंगोंने दान में दिया था, फिर से बनवाया।

ले० नं० ३७७ में उल्लेख है कि कदम्बवंशी सोविदेव ने किसी चंगाल्व राजाको हरा दिया था और ४५२ में लिखा है कि होय्सल सेनापति ने चंगाल्व नृप को मार भगाया था। पर इन राजाओं का क्या नाम है, हमें मालुम नहीं। ले० न० ६६१ में सूचना है कि सन् १५१० के लगभग इस वंश के एक नरेश के मंत्री पुत्र ने गोम्मटेश्वर की ऊपरी मञ्जिल का जीर्णोद्धार कराया था।

६. निड्गुगल वंशः—१३ वीं शताब्दी ईस्वी में इस वंश का राज्य उत्तर मैसूर प्रान्त के कुछ हिस्से पर था। ये अपने को चोल महाराज तथा ओरेयूर पुरवराधीश्वर कहते थे। इस वश के दो लेख (४७८ और ५२१) हमारे सग्रह में हैं जिनसे मालुम होता है कि इस वंश के कुछ नरेश जिनधर्म भक्त थे। ले० न० ४७८ मे इस वंश की एक वंशावली दी गई है जो कि तीसरे वंशधर से प्रारम्भ होती है, यथा—चोल राजाओं में हुआ मगि, उससे वन्ति, उससे गोविन्द, उसका पुत्र हुआ इरुङ्गोल (प्रथम)। इरुङ्गोल का पुत्र हुआ भोगनृप जिससे बर्म्म (ब्रह्म) नृप हुआ। उस बर्म्म नृप की रानी वाचालदेवी से इरुगोल द्वितीय हुआ। इस नरेश ने अपने आश्रित एक जैन व्यक्ति गगेयन मारेय के अनुरोध पर पार्श्व जिनवसदि के लिए कुछ भूमियों का दान दिया। उक्त वसदि का निर्माण उक्त जैन ने कराया था। उस वसदि की पूजा आदि के लिए कुछ किसानों ने चन्दा एवं तैलादि दान की व्यवस्था की थी। ले० न० ५२१ में उसकी अनेक उपाधियाँ दी गई हैं तथा उक्त जिन वसदि का नाम ब्रह्म जिनालय दिया गया है जो कि सम्भव है उसके पिता के नाम पर रखा गया था। उक्त वसदि के लिए सन् १२७८ ई० मे मल्लि सेट्टि ने सुपारी के २००० पेड़ों के २ हिस्से दान मे दिये थे। इरुगोल द्वितीय के सम्बन्ध में इतिहासज्ञों की मान्यता है कि वह जैन धर्मावलम्बी था[1]।

१—राबर्ट सेवेल, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३६६

इरुंगोल प्रथम के सम्बंध में श्रवण वेल्गोल से प्राप्त दो लेखों (३४८, ३७८[2]) से ज्ञात होता है वह भी जैन था। उसके गुरु नयकीर्ति सिद्धान्त देव थे तथा वह होय्सल विष्णुवर्धन द्वारा पराजित हुआ था।

७ चेर वंश—चेर वंश की एक शाखा अदिगैमान् का एक लेख (४३४) हमारे संग्रह मे है, जिससे उस वंश का थोड़ा परिचय मिलता है। उक्त लेख में एलिनि उर्फ यवनिका नामक एक अदिगैमान् सरदार का उल्लेख है। दूसरा सरदार राजराज था। उसका पुत्र विडुकादलगिय पेरुमाल अर्थात् व्यामुक्त श्रवणोज्ज्वल था, जिसे लेख में तकटानाथ कहा गया है। अन्यत्र उल्लेखों से मालुम होता है कि वह सन् ११६८–१२०० ई० में जीवित था। उक्त लेख के अनुसार व्यामुक्त श्रवणोज्ज्वल ने अपने पूर्वज यवनिका द्वारा तुण्डीर मण्डल के अर्हंसुगिरि पर प्रतिष्ठापित यक्ष-यक्षिणी की प्रतिमाओं का जीर्णोद्धार कराया तथा एक घण्टा दान मे दिया और एक नाली भी बनवायी थी। लेख से ज्ञात होता है कि इस शाखा के तीनों पुरुष जैन धर्म में रुचि रखते थे।

८. शिलाहार वंश—शिलाहार अपने को जीमूतवाहन का वंशज मानते हैं। प्रस्तुत सग्रह मे पश्चात्कालीन शिलाहारों के केवल तीन लेख सगृहीत हैं, जो कि कोल्हापुर और उसके आसपास प्रदेश में राज्य करते थे। ले० न० ३२० और ३३४ मे इस वंश की वंशावली दी गई है जिसमें जतिग से इस वंश का प्रारम्भ माना गया है। जतिग को नरेन्द्र, क्षितीश कहा गया है। जतिग के चार बेटे थे—गोङ्कल, गूवल, कीर्तिराज और चन्द्रादित्य। इसमें गोङ्कल का पुत्र मारसिंह हुआ जिसके पाँच पुत्र थेः—गूवल, गगदेव, बल्लाल, भोजदेव, गण्डरादित्य। उक्त दोनों लेख गण्डरादित्य के पुत्र विजयादित्य के राज्य के हैं जो कि भूमिदान सबधी है। इन लेखों मे उसके जो विरुद दिये गये हैं उनसे ज्ञात होता है कि वह अपने समय का बड़ा प्रतापी मण्डलेश्वर था। बल्लालदेव और

२—जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, ले० नं० १३८, ४२

गण्डरादित्य के सम्बन्ध मे ले० न० २५० में उल्लेख है कि उसने जैन मुनियों के लिए एक भवन दान मे दिया था। उसकी महामण्डलेश्वर उपाधि थी। भोजदेव के सम्बन्ध में अन्यत्र उल्लेख से मालुम होता है कि उसके दरबार मे रहकर सोमदेव ने शब्दार्णव चन्द्रिका बनायी थी।

६. रट्ट वंश—इस वंश के अनेक लेख इस सग्रह मे दिखाई देते हैं। इस वश के राजे जैन धर्म के संरक्षक राष्ट्रकूट एवं चालुक्य नरेशों के सामन्त थे। फ्लीट महोदय की मान्यता है कि इस वश का व्यवहारो नाम रट्ट था जब कि राष्ट्रकूट अलंकारिक एवं शाही रूप था। जो भी हो, रट्ट लोग राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय के समय से प्रभाव मे आये थे। सौंदत्ति से प्राप्त एक लेख (१३०) से मालुम होता है कि रट्टों मे प्रथम जिसने प्रमुख अधिकारी होने का पद पाया था वह था मेरड का पुत्र पृथ्वीराम। उसे यह पद राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय की अधीनता मे मिला था। उससे पहले वह मैलाप तीर्थ के कारेयगण के इन्द्रकीर्ति स्वामी का शिष्य था। ले० न० १६० मे पृथ्वीराम के पुत्र, प्रपौत्र एव उनकी पत्नियो के नाम दिए गए हैं। सभव है ये सब सामन्त या महासामन्त थे। इसके बाद इस वंश की परम्परा का क्रम कुछ भग हो गया है।

वंशावली का द्वितीय अंश २०५ और २३७ वें लेख मे वर्णित है, जिसमें नन्न से सेन द्वितीय तक वश परम्परा दी गई है। इन लेखों में तथा पीछे के लेखों में कार्तवीर्य को लत्तलूपुरवराधीश्वर तथा महामण्डलेश्वर आदि कहा गया है। ले० नं० ३६६, ४४८, ४४६, ४५३, ४५४ और ४७० इसी वश से सबंधित है जिनमें सेन द्वितीय से ४–५ पीढी तक अर्थात् कार्तवीर्य चतुर्थ, मल्लिकार्जुन और लक्ष्मीदेव द्वितीय तक की वशावली दी गई है। ज्ञात होता है कि इस वश का अभ्युदय ई० सन् ६७८ के लगभग से १२२६ ई० तक रहा। इस वंश के प्रथम पुरुष पृथ्वीराम ने राष्ट्रकूट वंश की अधीनता में वृद्धि की पर उसके उत्तराधिकारी शान्तिवर्मा से लेकर सेन द्वितीय तक कल्याणी के चालुक्यों की

अधीनता में रहे। सेन द्वितीय पीछे स्वतन्त्र हो जाता है और सभव है कि उसके बाद के सभी वंशधर स्वतन्त्र थे।[1]

वश के आदि पुरुष पृथ्वीराम के सम्बन्ध में ले० न० १३० मे कहा गया है वह एक जैन मुनि का विनीत छात्र था। उपर्युक्त लेखों से मालुम होता है कि कार्तवीर्य और मल्लिकार्जुन ने अपने दानों द्वारा जैन धर्म को अच्छी तरह संरक्षित किया था।

१०. यादव वंशः—यह वश अपनी उत्पत्ति विष्णु से मानता है (३१७) गर इसके प्रारम्भिक इतिहास के विषय मे हमें कुछ नहीं मालुम। इस सग्रह के जैन लेखों से ज्ञात होता है कि वे राष्ट्रकूटों के तथा पीछे कल्याणी के चालुक्यों के सामन्त थे। ईस्वी १२ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यह शक्ति कुछ स्वतन्त्र होती दिखती है। प्रारम्भिक यादवों को सेउण देश के यादव भी कहते हैं। पीछे इन्होंने देवगिरि में अपने राज्य को स्थापित किया था।

प्रस्तुत सग्रह में इस वश के राजा सेउणचन्द्र तृतीय से लेकर रामदेव या रामचन्द्र तक के शिला लेख सग्रहीत हैं। ले० न० ३१७ से ज्ञात होता है कि राजा सेउणचन्द्र तृतीय ने चन्द्रप्रभ भगवान् के मन्दिर के खर्च के लिए अजनेरी में तीन दुकानें दान मे दी थीं पर उसकी राजनीतिक स्थिति का पता नहीं चलता। ४२१ वें लेख में उल्लेख है कि होय्सल नृप वीरवल्लाल द्वितीय ने, सन् ११६८ के लगभग सेऊणदेश के किसी राजा को जिसके पास अगणित हाथी घोड़े तथा वीर योद्धा थे, युद्ध में अकेले ही हराया। इतिहास को देखने से पता चलता है कि उस समय वहाँ भिल्लम पञ्चम का बेटा जैत्रपाल (जैतुगि) प्रथम शासन कर रहा था। उसके शौर्यसम्पन्न विशेषणों से ज्ञात होता है कि उस समय तक यादवों का प्रभाव एवं स्थिति अच्छी हो गई थी। जैत्रपाल प्रथम का बेटा सिंहण हुआ जिसका राज्य सन् ११६१ ई० से १२४७ ई० तक था।

---

१ विशेष इतिहास के लिए देखो, दिनकर देसाई, महामण्डलेश्वराज अण्डर दि चालुक्याज आफ कल्याणी, बम्बई, १६५१

इसके ३७ वें वर्ष को द्योतन करने वाला एक समाधिमरण स्मारक लेख (४६०) प्रस्तुत संग्रह में दिया गया है। इसी तरह सिंहण के पौत्र कन्हार देव या कन्धार देव के समय का वैसा ही एक लेख (५०२) इसी संग्रह में है। इस वंश से सम्बन्धित ले० नं० ५११ में वंशावली वाला भाग त्रुटित है, तो भी इससे इतना ज्ञात होता है कि कन्धार देव का सहोदर महदेव था तथा कन्धार-राय का पुत्र रामदेव (रामचन्द्र) था। उक्त लेख के अनुसार दण्डेश कूचिराज ने अपने स्वामी महदेव के करकमलों द्वारा अपनी पत्नी के नाम पर निर्मापित लक्ष्मी जिनालय को कुछ दान दिलवाया था। रामचन्द्र या रामदेव के राज्य काल के ५ लेख (५१३, ५३५, ५३८, ५४०, ५४१) इस संग्रह में हैं जो कि दाताओं द्वारा दिये दान के स्मारक हैं। सन् १२६२-६५ के बीच के ले० नं० ५३८, ५४०, ५४१ में उक्त राजा की भुजबल प्रौढ प्रताप चक्रवर्ती आदि उपाधियाँ दी गयी हैं।

होय्सल वंश के समान ही इनका राज्य मुसलमानों ने नष्ट कर दिया।

११. संगीतपुर के सालुव मण्डलेश्वरः—१५ वीं ई० के उत्तरार्ध से लेकर १६ वीं के उत्तरार्ध तक संगीतपुर के शासक जैन धर्म के नेता के रूप में हमारे सामने आते हैं। तौलव देश (उत्तर कनारा जिला) में संगीतपुर, जिसे हाडुहल्लि भी कहते हैं, एक समृद्ध नगर था। उस नगर के शासक काश्यप गोत्र तथा सोमवंश के कहलाते थे। ले० नं० ६५४ में इस नगर का बड़ा सुन्दर वर्णन है। वहाँ का शासक महामण्डलेश्वर सालुवेन्द्र था जोकि चन्द्रप्रभ भगवान् का भक्त था। लेख में उक्त राजा के अनेक विशेषण दिये गये हैं जिससे विदित होता है कि वह राज्य और जैनधर्म दोनों को अच्छी तरह पालन कर रहा था। उसके मंत्री का नाम पद्म या पद्मण था जो कि शाही खान्दान का था। उसे सन् १४८८ में सालुवेन्द्र महाराज ने एक ग्राम भेंट दिया जिसे उसने जिनधर्म की उन्नति के लिए दान में दे दिया (६५४)। इसी मंत्री ने १० वर्ष बाद सन् १४९८ में पद्माकरपुर में एक चैत्यालय बनवाकर पार्श्व जिन की स्थापना की तथा अनेक दान दिये (६५८)।

महामण्डलेश्वर 'सालुवेन्द्र के पिता का नाम सगिराय था तथा अनुज का नाम कुमार इन्दगरस वोडेयर था। इन्दगरस का दूसरा नाम इम्मडि सालुवेन्द्र था जो कि अपनी शूर वीरता के लिए प्रसिद्ध था (६५६)। वह जैनधर्म का भक्त था और उसने विदिरू में वर्धमान स्वामी की पूजा के निमित्त दान की व्यवस्था की थी।

आगे इस वंश के सालुव मल्लिराय, सालुव देवराय, सालुव कृष्णराय के नाम मिलते हैं जिन्होंने जैनधर्म को सरक्षण प्रदान किया था। सालुव कृष्णराय, सालुव देवराय की बहिन पद्माम्वा का पुत्र था। ले० नं० ६६७ से ज्ञात होता है कि ये तीनों शासक प्रसिद्ध जैन वांदी विद्यानन्द मुनि के भक्त थे। सालुव मल्लिराय और देवराय के दरवारों में उक्त मुनि ने अनेकों प्रतिवादियों को परास्त किया था। ले० न० ६७४ में तीनों राजाओं के पूर्वजों का परिचय तथा एक दूसरे के सम्बन्ध का परिचय दिया गया है। वहाँ उन्हें क्षेमपुर का शासक भी कहा गया है।

५. जैन सेनापति एवं मन्त्रिगण

इन लेखों पर दृष्टिपात करने से यह निश्चय रूप से मालुम होता है कि दक्षिण भारत में जैन धर्म ने अपना व्यावहारिक रूप अच्छी तरह पा लिया था। जैन सन्तों के उपदेश से न केवल व्रत नियमादि पालन कर अन्त में समाधि से देहोत्सर्ग करने वाले व्यक्ति ही प्रभावित थे वल्कि विशाल सेनाओं के नायक दण्डाधिपति एवं राज्यसंचालक मंत्रिगण भी प्रभावित हुए थे। अहिंसा का सन्देश केवल उनकी श्रद्धा का विषय न था, वह तो देश की प्रगति में बाधक होने की जगह साधक था। उसके बिना चाहे धार्मिक क्षेत्र हो या राजनीतिक, स्वतन्त्रता संभव न थी।

इन लेखों मे अनेकों वीर सेनानियों की अमर कहानियाँ भरी पड़ी हैं। उनमें से प्रमुख कुछ का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

१. श्रु तकीर्ति.—जैन धर्म के आश्रयदाता कदम्बों के सेनापति श्रुतकीर्ति और उसके वंशजों की भक्ति उल्लेखनीय है। ये लोग यापनीय संघ के आचार्यों के भक्त थे। पलाशिका (हल्सी) और देवगिरि से प्राप्त लेखों मे इस वश का चरित चित्रित है। ले० न० ६६ से विदित होता है कि श्रु तकीर्ति सेनापति ने अपने कल्याण के लिए बदोवर क्षेत्र को अर्हन्तों के लिए दे दिया था जो कि उसने अपने स्वामी कदम्ब काकुस्थ्यवर्मा से खेटक ग्राम मे प्राप्त किया था। लेख नं० १०० में इसके गुणों की प्रशंसा है और इसे भोजवंश का या भोजक लिखा है। वह काकुस्थ्यवर्मा का विशेष कृपापात्र था। उक्त लेख के अनुसार काकुस्थ्य वर्मा के बेटे शान्तिवर्मा के पुत्र मृगेश ने श्रु तकीर्ति की पत्नी एवं दामकीर्ति की मां को खेटग्राम धर्मार्थ दे दिया था। उसी लेख में लिखा है उस दामकीर्ति का ज्येष्ठ पुत्र जयकीर्ति था जिसके गुरु आचार्य बन्धुषेण थे। उसने अपने माता पिता के पुण्यार्थ खेटक ग्राम को यापनीय सघ के आचार्य कुमारदत्त को दे दिया था। ले० नं० १०१ में दामकीर्ति के छोटे भाई का नाम श्रीकीर्ति था जो कि अपने कुल के अनुरूप धर्मात्मा था। ले० नं० ६७ और ६६ में दामकीर्ति का उल्लेख है जिनसे ज्ञात होता है कि वह कदम्ब शान्तिवर्मा की धार्मिक प्रवृत्तियों का प्रेरक था। उन दिनों पलाशिका (हल्सी) यापनीय संघ का केन्द्र था और श्रु तकीति के वंशज उक्त सघ के अनुयायी थे।

२. चामुण्डराय:—इसका प्रिय नाम 'राय' भी था। इतना शूरवीर, इतना दृढ भक्त एवं इतना स्वामिभक्त मंत्री कर्नाटक के इतिहास मे दूसरा और कोई नहीं दिखाता। उसके समय के अनेकों लेखों और उसकी कन्नड भाषा मे कृति चामुण्डराय पुराण से उसके जीवन का परिचय मिलता है। ले० नं० १६५ (प्रथम भाग, नं० १०६) से ज्ञात होता है कि वह ब्रह्मक्षत्र कुल में पैदा हुआ था। वहाँ उसे 'ब्रह्मक्षत्रकुलोदयाचलशिरोभूषामणि' कहा गया है। यह गंग नरेश राचमल्ल चतुर्थ का सेनापति था पर मालुम होता है कि वह उसके पिता मारसिंह तृतीय के समय भी सेनापति था। मारसिंह के विषय मे लिखा जा चुका है कि वह उस वंश का बड़ा प्रतापी नरेश था। वह राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय

का महासामन्त था। श्रवणबेल्गोला से प्राप्त ले० न० १५२ (प्रथम भाग, ३८) और १६५ (प्रथम भाग, १०६) में इसकी अनेक विजयों का वर्णन किया गया है। ले० न० १५५ (प्रथम भाग, ६१) में वर्णित अनेक विजयों का श्रेय राजा मारसिंह को दिया गया है पर उक्त लेख के कथन को ले० नं० १६५ और चामुण्डराय पुराण के सहारे पढने से वास्तविकता समझ में आ जाती है। राचमल्ल को 'जगदेकवीर' उपाधि सूचित करती है कि ये सब विजयें उसके राज्य में सम्पन्न हो सकी थीं। मारसिंह और राचमल्ल ने ये सब युद्ध अपने अधिराट् राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय और इन्द्र चतुर्थ के लिए सेनापति चामुण्ड राय के द्वारा जीते थे।

उपर्युक्त लेखों में चामुण्डराय की शूरवीरता को सूचित करने वाली अनेक उपाधियाँ दी गई हैं। खेद है कि ले० न० १६५ छः पद्यों के बाद अकस्मात् समाप्त हो जाता है जिससे हमें उसके सम्बन्ध की पूरी जानकारी नहीं हो पाती। उसके जीवन के अन्य पहलुओं को उसकी अमरकृति चामुण्डराय पुराण और उसके आचार्यों के ग्रन्थो से जाना जा सकता है।

उसकी अमर कीर्ति की प्रतीक श्रवणबेल्गोल में बाहुबलि की जगद्विख्यात एक विशाल मूर्ति (५७ फुट ऊँची) प्रतिष्ठित है। इस मूर्ति के निर्माण का हेतु ले० न० ३६५ में वर्णित है जिसका कि अन्यत्र उल्लेख किया गया[1] है। चामुण्डराय के दो गुरु थे एक का नाम था अजितसेन और दूसरे का नाम नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती। श्रवण बेल्गोल के एक लेख (प्रथम भाग, १२२) से ज्ञात होता है कि इस सेनापति ने चिक्क बेट्ट पर एक बसदि बनवाई थी तथा ले० न० १५७ (प्रथम भाग, ६७) से ज्ञात होता है कि उसके पुत्र जिनदेवण्ण ने भी जो कि अजितसेन मुनि का शिष्य था, एक बसदि बनवाई थी।

चामुण्डराय की जैन धर्म के प्रति की गई सेवाओं की छाप दक्षिण भारत में

---

१. देखो, 'जैनधर्म के केन्द्र' प्रकरण।

शताब्दियों तक रही। ले० नं० ३६३ (प्रथम भाग, १३७) में एक प्रसंग में लिखा है कि जिन शासन के स्थिर उद्धार करने में प्रथम कौन है ? तो उत्तर होगा राचमल्ल भूपति के वरमन्त्री राय (चामुण्डराय) (पद्य २२)।

३. शान्तिनाथ—इसके सम्बन्ध में ले० नं० २०४ में लिखा है कि वह सहजकवि, चतुरकवि, निस्सहायकवि ·· नुनमहाकवीन्द्र था। उसकी उपाधि सरस्वतीमुखमुखर थी। उसका यश अति विशद था और वह जिन शासन रूपी सत्सरोजिनी का कलहस था। उसने अपने राजा लक्ष्मनृप से प्रार्थना कर वलि-नगर में लकड़ी के बने जैन मन्दिर को पाषाण का बनवाया। इस मन्दिर का नाम मल्लिकामोद शान्तिनाथ था।

१२ वीं शताब्दी मे होय्सल वंश से सम्बन्धित हम अनेक जैन सेनापतियों को देखते हैं। इस वश का प्रतापी नरेश विष्णुवर्धन था। उसकी अनक विस्तृत विजयों का श्रेय उस नरेश के आठ जैन सेनापतियों को था। ये सेनापति थे—गंगराज, वोप्प, पुणिस, बलदेवण्ण, मरियाने, भरत, ऐच और विष्णु। इन सेना-पतियों के कारण ही होय्सल राज्य दक्षिण भारत की प्रधान शक्तियो मे गिना जाने लगा।

४. गंगराज—इन सेनापतियों मे प्रधान था गंगराज। इसके सम्बन्ध में जैन शिलालेखसंग्रह प्रथम भाग की भूमिका मे पर्याप्त लिखा गया है। इसके जीवन वृत्त को जानने के लिए इस सग्रह मे दो दर्जन से अधिक लेख हैं। प्रस्तुत द्वितीय तृतीय भाग मे इस सेनापति से सम्बन्धित केवल ले० नं० २६३, २६६, २६६, ३०१ और ४११ के मूल पाठ हैं। शेष २८५ (४३) २७८ (४४) २५४ (४६) २५५ (४७) २६० (६५) २८१ (४४६) २८३ (४८६) ३६६ (६०) के मूल पाठ प्रथम भाग मे दिए गये हैं, कोष्ठक मे उन लेखों की सख्या दी गई है। प्रथम भाग के ले० नं० ७५, ७६, ४४७ और ४७८ इन भागों के लेखों की संख्या से नही पहिचाने जा सके। लेख २६३, २६६ और २६६ मे उसकी अनेक सामरिक विजयो का उल्लेख तथा जैन मुनियों और

मन्दिरों को अनेक प्रकार के दानों का उल्लेख है। इन लेखों में उसके दो जैन गुरुओं–मेघचन्द्र सिद्धान्त देव एवं शुभचन्द्र सिद्धान्त देव–का नाम मिलता है। ले० नं० ३०१ में गंगराज की बड़ी प्रशंसा की गई है। उसकी मृत्यु के स्मारक स्वरूप उसके पुत्र बोप्प सेनापति ने दोर समुद्र में एक जिनालय बनवाकर पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की थी। उक्त लेख में लिखा है कि अनेक उपाधियों से विभूषित गंगराज ने अगणित ध्वस्त जैन मन्दिरों का पुनर्निर्माण कराया था। अपने अनवधि दानों से उसने गंगवाडि ९६००० को कोपण के समान चमकाया था। गंगराज के मत से ये ७ नरक थे—झूठ बोलना, युद्ध में भय दिखाना, परदारारत रहना, शरणार्थियों को शरण न देना, अधीनस्थों को अपरितृप्त रखना, जिनको पास में रखना चाहिए उन्हें छोड़ देना और स्वामी से द्रोह करना।

उक्त जिनालय का नाम गङ्गराज की एक विशिष्ट उपाधि पर से द्रोहघरट्ट जिनालय पड़ा था। इसी जिनालय की स्थापना को अपनी सुख समृद्धि के वर्धन में हेतु मानकर होय्सल विष्णुवर्धन ने इसे ग्रामादि दान दिये थे। (३०१)।

५. बोप्प—गंगराज का पुत्र दण्डेश बोप्प देव भी बड़ा ही शूरवीर एवं धर्मिष्ठ था। उसने उपर्युक्त द्रोहघरट्ट जिनालय के सिवाय दो और मन्दिर बनवाये थे, कम्बदहल्लि से शान्तीश्वर बसदि तथा सन् ११३८में त्रैलोक्यरञ्जन बसदि जिसका दूसरा नाम बोप्पण चैत्यालय था (३०३)। इसे ले० न० ३०३ में बुधबन्धु, सतां बन्धुः कहा गया है। इसी तरह ले० ३०१ और ४११ में उसके अनेक विशेषणों के साथ उसकी वीरता की प्रशंसा की गई है। ले० न० ३०४ में उल्लेख है कि सन् ११३४ में उसने शत्रु पर आक्रमण किया और उनकी प्रबल सेना को खदेड़कर अपने भुजबल से कोङ्गों को परास्त किया था।

६. पुणिसः—गंगराज के बहादुर साथियों में पुणिस भी था। उसके पूर्वज अमात्य होते आये थे। उसका पितामह पुणिसम्म चमूप था जो कि सकल शासन वाचक चक्रवति था। उसके ज्येष्ठ पुत्र चामण का पुत्र पुणिस था। यह होय्सल नरेश विष्णुवर्धन का सान्धिविग्रहिक था। ले० नं० २६४ में उसकी सामरिक शूर

वीरता के कार्यों का वर्णन है। उसने अनेकों देश जीतकर होय्सल विष्णुवर्धन को दिये। पुणिस, गंगराज के समान ही विशाल हृदय का था। उसने धर्म और मानवता की समान दृष्टि से सेवा की। ले० नं० २६४ में लिखा है कि युद्ध के कारण जो व्यापारी बिगड़ गये थे, जिन किसानों के पास बीज बोने को नहीं था, जो किरात सरदार हार जाने से अधिकार वंचित हो नौकर हो गए थे, उन्हें तथा उन सबको जिनका जो नष्ट हो गया था, वह सब पुणिस ने दिया और उनके पालन पोषण में मदद की। उक्त लेख में यह भी उल्लेख है कि उसने एरुणेनाड् के अरकोट्टार स्थान में अपने द्वारा बनवाई गई त्रिकूट बसदि से सलग्न बसदियों के लिए भूदान दिया तथा निर्भय होकर गर्गो की तरह गंगवाडि की बसदियों को शोभा से सज्जित किया।

७. बलदेवण्णः—विष्णुवर्धन का चौथा सेनापति बलदेवण्ण था। ले० न० २६६ में इसके सम्बन्ध मे थोड़ा परिचय मिलता है। वह राजा अरसादित्य और आचाम्बिके का तृतीय पुत्र था। उसके दो बड़े भाइयों का नाम पम्पराय और हरिदेव था। लेख में उसके 'मन्त्रियूथाग्रणि, गुणी, सकलसचिवनाथ एव जिनपादाब्ज सेवक' आदि विशेषण दिये गए हैं।

८-६. मरियाने और भरतः—होय्सल विष्णुवर्धन के सेनानायकों में दो भाई-दण्डनायक मरियाने और भरत या भरतेश्वर भी थे। इनके वंश का परिचय ले० नं० ३०७, ३०८ और ४११ में दिया गया है जिससे ज्ञात होता है कि इसके वंशज होय्सल राजवंश से सम्बन्ध रखते थे। इस कारण इन दोनों भाइयों का पद सर्वाधिकारी, माणिकभाण्डारी तथा प्राणाधिकारी था। विष्णुवर्धन ने मरियाने दण्डनायक को अपना पट्टदाने (राज्य गजेन्द्र) समझकर ही उसे सेनापति बनाया था। ये दोनों भाई जैसे शूर वीर थे वैसे ही धर्मिष्ठ थे। लेख में इन्हें 'निरवद्य-स्याद्वादलक्ष्मीरत्नकुण्डल, नित्याभिषेकनिरत, जिनपूजामहोत्साहजनितप्रमोद, चतुर्विधदानविनोद' आदि कहा गया है। ले० नं० ३०७ में भरत के अनेक गुणों की प्रशंसा की गई है। वहाँ लिखा है कि उसका धन जिनमन्दिरों के लिए था, दया सभी प्राणियों के लिए थी, उसका अच्छा मन जिनराज की पूजा

में था, औदार्य सज्जन वर्ग के लिए तथा दान सन्मुनीन्द्रों के लिए था। श्रवण-बेल्गोल से प्राप्त ले० न० ३५४[1] और ३५५[2] से विदित होता है कि उसने श्रवणबेल्गोल में ८० नई वसदियाँ बनवायीं और गंगवाडि की २०० पुरानी वसदियों का जीर्णोद्धार कराया था। इन दोनों भाइयों के गुरु थे देशीगण, पुस्तक गच्छ के आचार्य माघनन्दि के शिष्य गण्डविमुक्त व्रती। ले० न० ४११ से ज्ञात होता है कि ये दोनों भाई विष्णुवर्धन के बेटे नारसिंह के समय में भी विद्यमान थे। इन दोनों ने ५०० होन्नु देकर उक्त नरेश से सिन्दगेरी आदि तीन गाँवों का प्रभुत्व प्राप्त किया था।

१०. ऐचः—गंगराज का भतीजा एवं उसके बड़े भाई का पुत्र ऐच भी विष्णुवर्धन के सेनापतियों में था। उसकी शूरवीरता आदि के सम्बन्ध में विशेष तो नहीं मालुम पर ले० नं० २०४ (प्रथम भाग १४४) में लिखा है कि उसने कोपण, बेल्गुल आदि स्थानों में अनेक जिन मन्दिर बनवाये और सन् ११३५ में सन्यासविधि से प्राणोत्सर्ग किया। गंगराज के पुत्र बोप्प ने अपने चचेरे भाई की स्मृति में निषद्या बनवाई थी।

११ विष्णु दण्डाधिप—ले० न० ३०५ से ज्ञात होता है कि विष्णुवर्धन होय्सल का एक और सेनापति था जिसका नाम विष्णु दण्डाधिप या इम्मडि दण्डनायक विट्टियण्ण था। इसने आधे महीने मे ही दक्षिण प्रान्त की विजय कर ली थी। विष्णुवर्धन होय्सल का यह दाहिना हाथ था। यह बचपन से ही उक्त नरेश का प्यारा था। लेख में लिखा है कि किशोरावस्था प्राप्त होने पर नरेश ने इसका बड़े उत्सव के साथ स्वयं ही उपनयन संस्कार कराया, सात आठ वर्ष की आयु के बाद जब वह समस्त शास्त्र विज्ञान मे पारगत हुआ तब उसको अपने प्रधान मंत्री की सर्व लक्षण सम्पन्न पुत्री ब्याह दी और १०–११ वर्ष की उम्र में महाप्रचण्ड दण्डनाथ तथा सर्वाधिकारी का पद दिया।

---

१. प्रथम भाग, ३६८

२. वही, ११५,

यह सेनापति बड़ा ही धर्मिष्ठ एवं दानी था। इसने कई सार्वजनिक कार्य कराये थे तथा राजधानी दोरसमुद्र में एक जिनालय बनवाया था। इसके गुरु का नाम श्रीपाल त्रैविद्यदेव था जिन्हें उक्त जिनालय के प्रबन्ध और ऋषियों के आहार दान के हेतु उसने एक ग्राम और भूमिया दान में दी थीं।

१२. मादिराज—विष्णु वर्धन का एक जैन मंत्री महाप्रधान मादिराज था। ले० नं० ३१६ में उसके धार्मिक गुणोंकी बड़ी प्रशंसा की गई है। वह श्रीकरण का अधिपति था और अपनी वक्तृता से सभा भवन को प्रभावित किये था। वह कोष का लेखा रखता था। उसके भी गुरु श्रीपाल त्रैविद्यदेव थे। विष्णुवर्धन के उत्तराधिकारी नरसिंह के भी चार सेनापति जैन धर्मावलम्बी थे। वे थे देवराज, हुल्ल, शान्तियण्ण और ईश्वर चमूप।

१३. देवराज—ले० नं० ३२४ में देवराज का उल्लेख है। इसका गोत्र-कौशिक था। लेख में इसे 'श्रीजिनधर्मनिर्मलाम्बरहिमकर' एव 'श्रीहोय्सल महीशराज्यभूमन्निलय मणिप्रदीपकलश' कहा गया है। राजा नरसिंह ने उसकी धर्मबुद्धि और स्वामिभक्ति से प्रसन्न होकर उसे सूरनहल्लि गाँव दिया जहाँ उसने जिन चैत्यालय बनवाया जिसके लिए होय्सलदेव ने अष्टविधार्चन और आहार दान के निमित्त १० होन्नु दान में दिये और गाँव का नाम पार्श्वपुर रख दिया। उक्त ले० में उसके गुरु मुनिचन्द्र का नाम दिया है। उन गुरु की पट्टावली भी उक्त ले० में दी गई है।

१४. हुल्ल—नरसिंह होय्सल का द्वितीय सेनापति हुल्ल या हुल्लप था। उस युग में जैन धर्म के उद्धारकों में चामुण्डराय और गंगराज के बाद हुल्लप का ही नाम आता है। इसके सम्बन्ध में जैन शिलालेख संग्रह प्रथम भाग की भूमिका में पर्याप्त लिखा गया है। इस संग्रह में ये ले० न० ३४८, (१३८) ३६२ (४०) ३६३ (१३७) ३८१ (४६१) ३६६ (६०) इस सेनापति से सम्बन्धित हैं। कोष्ठक में प्रथम भाग के लेखों की संख्या दी गई है। इस सेना-

पति ने होय्सल विष्णुवर्धन, नरसिंह और बल्लाल द्वितीय के राज्य में होय्सल वंश की सेवा की थी।

१५. शान्तियण्ण—ले० न० ३४७ में उक्त नरेश के एक और जैन सेनापति शान्तियण्ण का नाम मिलता है। वह पारिसण्ण और बम्मलदेवी का पुत्र था। पारिसण्ण मरियाने दण्डनायक का दामाद था। लेख में उसे महा-प्रधान, पट्टिस भण्डारि (भालों का अध्यक्ष) कहा गया है। उसने युद्ध में शत्रुओं को परास्त कर अन्त में अपने प्राण दे दिये। उस पर नरसिंह ने उसके पुत्र शान्तियण्ण को करुगुण्ड का स्वामी तथा सेना का दण्डनायक बना दिया। उक्त स्थान में शान्तियण्ण ने अपने पिता की स्मृति में एक बसदि बनवायी और उसकी सुरक्षा के लिए दान दिया। उसके गुरु मल्लिषेण पण्डित थे।

१६. ईश्वर चमूप—ले० न० ३५२में उक्त नरेश के राज्य में एक जैन सेना-पति का और उल्लेख है। वह है महाप्रधान, सर्वाधिकारी, दण्डनायक एरेयङ्ग का पादोपजीवी ईश्वर चमूप। ये दोनों श्वसुर दामाद थे। ईश्वर चमूपति ने जिना-लयों की मरम्मत करवायी और उसकी पत्नी माचियक्क ने मय्दवोलल नामक पवित्र तीर्थ में एक जिन मन्दिर एवं एक तालाब बनवाया। उसके गुरु का नाम गण्डविमुक्त मुनिप था।

नरसिंह के उत्तराधिकारी बल्लाल द्वितीय के समय भी होय्सल राज्य का भाग्य निर्माण करने वाले कुछ जैन सेनापति थे।

१७. रेचरसः—ले० न० ४६५में उल्लेख हैकि बल्लालदेवकी रत्नत्रय और धर्म में दृढता सुनकर कलचुर्य कुल के सचिवोत्तम रेचरस ने बल्लालदेव के चरणों में आश्रय पाकर अरसियकेरे में सहस्रकूट जिन की प्रतिमा स्थापित की और मन्दिर की व्यवस्था के लिए राजा बल्लाल से हन्दरहालु ग्राम प्राप्त कर अपने वंश के गुरु सागरनन्दि सिद्धान्त देव को सौंप दिया। उक्त जिनालय का नाम एल्कोटि जिना-लय था। इस रेचरस के सम्बन्ध में ले० नं० ४०८ में लिखा है कि वह ३६ वर्ष पहले सन् ११८२ में कलचूरिवंश के नरेश बिज्जल का दण्डाधिनाथ था। उक्त लेख में इसकी अनेक विध प्रशंसा एवं वंश का परिचय दिया गया है।

उस लेख में लिखा है कि रेचण को कलचुरि नरेशों से बहुत से देश मिले थे उनमें नागर खण्ड था। वहाँ मागुडि नामक स्थान में, शान्तिनाथ जिनालय के लिए उसने दानादि दिये थे। श्रवणबेल्गोल से प्राप्त एक लेख नं० ४२६ (प्रथम भाग ४७१) से ज्ञात होता है कि उसने सन् १२०० के लगभग शान्तिनाथ भगवान् की प्रतिष्ठा करायी और बसदि को कोल्हापुर के सागरनन्दि को सौंप दिया। लेख मे उसे 'वसुधैकबान्धव' कहा गया है।

१८ बूचिराजः—होय्सल बल्लाल द्वितीय का दूसरा सेनापति बूचिराज था। ले० नं० ३७६ में उसे मन्त्रीश्वर एवं साधिविग्रहिक कहा गया है। उसमें चतुर्विध पाण्डित्य था तथा वह संस्कृत और कन्नड दोनों भाषाओं में कविता कर सकता था। इसके अतिरिक्त उसकी धर्मिष्ठता की अनेक विध प्रशंसा की गई है। उसने सन् ११७३ मे राजा बल्लाल के पट्टबन्धोत्सव के समय सीगेनाड के मारिकलि स्थान में त्रिकूट जिनालय बनवाया और मन्दिर की पूजा, जीर्णोद्धार एवं आहार दान आदि के लिए अपने गुरु वासुपूज्य सिद्धान्त देव को मारिकलि ग्राम भेंट में दिया।

१६. चन्द्रमौलिः—उक्त बल्लाल नरेश के राज्य में जैनधर्म के प्रति उदारता दिखलाने वाला एक शैव मंत्री चंद्रमौलि था। ले० नं० ४०६ (प्रथम भाग ४६४) में वह भारत शास्त्र, आगम, तर्कव्याकरण, उपनिषद्, नाटक, काव्य आदि में विद्वन्मान्य था तथा बल्लालनृप के दाहिने हाथ का दण्डस्वरूप था। यद्यपि वह स्वयं कट्टर शैव था पर उसकी पत्नी आचलदेवी परम जैन धर्मावलम्बिनी थी। उस देवी ने श्रवणबेल्गोल तीर्थपर बड़ी भक्ति के साथ पार्श्वनाथ का मन्दिर निर्माण कराया और मंत्री चंद्रमौलि ने राजा बल्लाल से स्वय प्रार्थना कर उक्त जिनालय की पूजादि के लिए बम्मेयनहल्लि नामक गाँव दान में दिलाया।

२०. नागदेवः—बल्लाल द्वितीय के मंत्रियों में एक जैन मंत्री नागदेव भी था। वह बोम्मदेव सचिव का पुत्र था। ले० नं० ४२८ (प्रथम भाग १३०) में लिखा है कि वह जैन मन्दिरों का प्रतिपालक था तथा राजा ने उसे पट्टन-

स्वामी बनाया था। उसके गुरु का नाम नयकीर्ति सिद्धान्तदेव था। उसने सन् ११९५ मे श्रवणबेल्गोल तीर्थ पर पार्श्वदेव के आगे नृत्यरंगशाला एव शिला-कुट्टिम बनाकर अपने दिवंगत गुरु की स्मृति में एक निषिधि बनवायी थी। जिनधर्म के लिए नागदेव की स्थायी कृति थी श्रवणबेल्गोल में 'श्रीनिलय' नगर-जिनालय का निर्माण तथा उसके लिए भूमिदान। उसके प्रतिपालन के लिए उसने खण्डलि और मूलभद्र के वंशज श्रवणबेल्गोलवासी वणिजों को नियुक्त किया था।

२१. महादेव दण्डनाथ—जैन मन्त्रियों में उस मन्त्री का नाम भी उल्लेखनीय है। वह बल्लाल द्वितीय के महामण्डलेश्वर एक्कलरस का महाप्रधान था। उसके गुरु का नाम सकलचन्द्र भट्टारक था। लेख न० ४३१ में लिखा है कि उसने सन् ११९८ में उद्धरे नामक स्थान में एक अनुपम जिनालय बनवाया और उसका नाम एरग जिनालय रखा और उक्त जिनालय की पूजा, जीर्णोद्धार के हेतु स्वयं बहुत प्रकार के दान दिये तथा एक्कलरस आदि से भी विविधदान दिलाये।

२२. कम्मट माचय्य:—सन् १२०० के लगभग के कुम्बेयनहल्लि ग्राम से प्राप्त एक ले० नं० ४३७ (प्रथम भाग ४९५) में एक और जैन मंत्री का उल्लेख है। वह है महाप्रधान, सर्वाधिकारी, तन्त्राधिष्ठायक, कम्मट माचय्य। उसने उक्त सन् में अपने श्वसुर के साथ कुम्बेयनहल्लि नामक ग्राम में परिवादि-मल्ल जिनालय के लिए दान दिया था। उक्त लेख में यह भी लिखा है कि महा-प्रधान, सर्वाधिकारी हरियण्ण ने कुम्बेयनहल्लि के देव की प्रतिष्ठा की थी।

२३ अमृत.—ले० न० ४५२ से विदित होता है कि बल्लाल द्वितीय के अमृत नाम का एक और दण्डनायक था जो कि महाप्रधान, सर्वाधिकारी, महाप-सायस (आभूषणाध्यक्ष) एव मेरुदन मोत्तदिष्टायक (उपाधिधारियों का अध्यक्ष) था। लेख में उसे कविकुलज और चतुर्थवर्ण (शूद्र) का कहा गया है। उसे धार्मिक, सुमति, पुण्याधिक, मन्त्रिचूडामणि, सौम्यरम्याकृति कहा गया है। उसने लोक्कुलगेरे में सन् १२०३ में एक्कोटि नामक जिनालय बनवाया और सभी

नायकों, नागरिकों और किसानों के समक्ष शान्तिनाथ भगवान् की अष्टविधपूजन और मुनियों को आहारदान देने के लिए भूमि प्रदान की। उसने अपने जन्म स्थान लोक्कुण्डी में अपने भाइयों के साथ एक मंदिर, एक बड़ा तालाब एक सत्र स्थापित किया, एक अग्रहार और एक प्याऊ बैठायी। वह अजैनों के प्रति भी बड़ा उदार था। उसने अपने जन्मस्थान में अमृतेश्वर का एक मन्दिर बनवाया।

२४. ईचणः—सन् १२०५ के एक ले० नं० ४५१ में हम ईचण का नाम पाते हैं। इसने होय्सल बल्लाल द्वितीय के राज्यकाल में बेलगवत्तिनाड में एक ऐसा जिनालय बनवाया जैसा कि उस प्रदेश में न था और इस तरह उस स्थान को कोपण बना दिया।

२५. माधवः—ले० न० ५४० में माधव दण्डनायक का उल्लेख मिलता है। इसे वीरमहदेवण्ण के कुल का बतलाया गया है। उसके गुरु माधवचन्द्र भट्टारक थे। उसने समस्त कौटुम्बिक बन्धनों को छोड़कर, जिनमन्दिर बँधवाकर समाधिमरण पूर्वक स्वर्ग को प्रयाण किया। उक्त लेख में दूसरे दण्डनायक माचि-गौड का भी उल्लेख है। उसके गुरु भी माधवचन्द्र भट्टारक थे। उसने भी समाधिविधि से स्वर्ग प्राप्त किया।

२६. कूचिराजः—ले० नं० ५११ देवगिरि के यादव नरेश महादेव के एक जैन मंत्री कूचिराज का उल्लेख है। वह महसेन मुनि के शिष्य पद्मसेन का शिष्य था। लेख में उक्त मंत्री के वंश का परिचय दिया गया है। उसने अपनी पत्नी लक्ष्मीदेवी के स्वर्गस्थ होने पर उसके नाम पर एक जिनालय बनाकर सेन-गण के पोगले गच्छ को दे दिया तथा अपने नरेश से उक्त जिनालय के प्रबन्ध आदि के लिए एक ग्राम दिलाया और स्थानीय गौड लोगों से मिलकर स्वयं दान दिया और दिलाया।

२७. इरुगप्पः—विजयनगर साम्राज्यके उन्नायकों को भी जैनमंत्रियों और सेना-पतिओं ने अपनी सेवा से उपकृत किया था। उनमें इरुगप्पका नाम विशेष उल्लेखनीय है। इसके सम्बन्ध में प्रथम भाग की भूमिका में पर्याप्त लिखा गया है। इस संग्रह

में इससे सम्बन्धित तीन ले० न० ५८१, ५८५ तथा ५८७ और द्रष्टव्य है। इन लेखों से विदित होता है कि वह महामंत्री और सेनापति दोनों था। ले० न० ५८५ उसके पिता चैच्च (वैचप्प) दण्डेश और उसका परिचय है तथा उसके गुरु सिंहनन्दि की पट्टावली दी गई है। उक्त लेख में उसके द्वारा कुन्थुनाथ जिनालय की स्थापना का उल्लेख है। अन्यत्र उन लेखों से मालुम होता है कि इस मन्त्रिवर ने नानार्थनाममाला की रचना की थी। काञ्चीवरम् के समीप तिरुप्प रुत्तिक्कुण्रु से प्राप्त दो लेखों (५८१ और ५८७) में उसके दान एवं मण्डप निर्माण का उल्लेख है।

२८. गोप—देवराय प्रथम का एक जैन सेनापति गोप था (६०६)। ले० नं० ६१० में इसके वश का परिचय तथा उसे नागरखण्ड का शासक लिखा है। उसके दो जैन गुरु थे पण्डिताचार्य और श्रुत मुनिप, इनमें से एक उसको अनीति के मार्ग से हटाता था तो दूसरा अच्छे मार्ग पर लगाता था। लेख में लिखा है कि गोप ने समाधिविधि से शरीर त्याग किया और मुक्ति प्राप्त की।

इस तरह और भी कितने जैन धर्म भक्त सेनापतियों और मंत्रियों के चरित्र इन लेखों में छिपे पड़े हैं।

६. जनवर्ग एवं जैनधर्म

दक्षिण में जैन धर्म का जब से आगमन हुआ था तब से जैनाचार्यों ने जितना अपने धर्म के प्रसार के लिए प्रयत्न किया उतना ही देशहित के लिए भी। इस कार्य में उन्होंने बुद्धिमत्ता पूर्वक ऐसी नीति अपनायी कि जो जनता की प्रत्येक श्रेणी के लिए उपादेय एव कल्याण कर थी। उन्होंने कई राज्यवशों के उदय होने में सहायक बनकर राजाओं का उदार राजकीय संरक्षण प्राप्त किया था। सामन्तों और सेनापतियों को अपने धर्म से प्रभावित कर प्रान्तीय केन्द्रों में जैन धर्म की नीव दृढ कर ली थी। इसी तरह जन वर्ग को भी जैनधर्म की परिधि के भीतर लाकर जैनधर्म की आधार शिला मजबूत कर दी थी। मध्यमवर्गीय

वाणिज्य संघ-वीर वणिज, मुम्मुरिदण्डनायक, एवं उभय देशीय—तथा प्रकीर्णक वैश्य समाज की प्रचुर धन राशि ने अनेक विशाल जैन मन्दिरों, मठों एवं मूर्तियों के निर्माण मे सहायता दी, जहां से जैनधर्म की जयगाथाये चारों ओर प्रध्वनित हो सकी। जैन मुनियों ने सर्व साधारण के हितार्थ शास्त्र, आहार, औषधि और अभय दानों की माग की जिससे जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

उत्तर भारत मे यद्यपि जैनों को राज्याश्रय बहुत कम मिला है फिर भी जैनधर्म को जाग्रत करने मे जैनाचार्य प्रारम्भ से सचेष्ट थे यह बात मथुरा से प्राप्त अनेकों लेखों से तथा उत्तर एवं पश्चिम भारत से प्राप्त लेखों से भलीभाति विदित होती है। पर दक्षिण भारत में ८वीं ९वीं शताब्दी से जैन धर्म का प्रचार कार्य द्रुतगति से चला था ऐसा प्रस्तुत संग्रह के अनेकों लेखों से ज्ञात होता है।

९ वीं शताब्दी के बाद ऐसे अनेक लेख हैं जिनमें जनवर्ग द्वारा जैनधर्म की सहायता के उदाहरण भरे पड़े हैं। पर इसके पहले भी जनवर्ग का सहयोग था, इसके २–४ उदाहरण लेखो से प्राप्त होते हैं। ले० नं० १०७ से विदित होता है कि दोण गामुण्ड और एल गामुण्ड ने एक जिनालय निर्मापित किया था और पूजा के लिये कुछ खेत आदि लगा दिये थे। ले० न० ११५ और १२० में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं।

ई० सन् ९०३ के एक ले० नं० १३७ मे वैश्यजाति के चन्द्राय के पुत्र चीकार्य का उल्लेख है जिसने मन्दिर बनवाकर भूमिदान दिया था। ले०नं० १९३ से विदित होता है कि एक निरवद्य नामक गृहस्थ ने मेलस चट्टान पर निरवद्य जिनालय खड़ा किया और उसके सरक्षण के लिए, राजा की कृपा से प्राप्त एक गाव लगा दिया तथा एडेमले हजार प्रान्त के कुछ किसानों ने अपने प्रत्येक खेत की फसल से कुछ धान्य दान रूप में उक्त जिनालय को हमेशा के लिए दे दिया।

दक्षिण भारत मे जैन धर्म की उच्च स्थिति का वास्तविक रूप हमें वणिक् वर्ग की उक्त धर्म के प्रति उत्कंठा, आस्था एवं भक्ति में दिखता है। इस तरह हम देखते हैं कि वैश्यवर्ग के एक मुखिया पट्टनस्वामी नोक्कय्यसेट्टि ने सन् १०६२

(१६७) में हुम्मच नामक स्थान में एक जिनालय बनवाया और १०० गद्याण में राजा से एक गाव खरीद उक्त मन्दिर की सुरक्षा के लिये लगा दिया। उक्त ले० में तथा लेख नं० २१२ में नोक्कय्य द्वारा जैन धर्म की सेवाओं का अच्छी तरह वर्णन है।

वणिक् वर्ग का महत्त्व इस बात से भी मालुम होता है कि वे जैन मंदिरों के संरक्षक भी थे। श्रवणबेल्गोल का नगर जिनालय सन् ११६५ में मंत्री नाग देव ने बनवाकर खण्डलि और मूलभद्र के वंशज वीर वणिजों (एक व्यापारी संघ) के प्रतिपालन में दे दिया था (४२८)। यह जिनालय एक सौ वर्षों से अधिक इन्हीं व्यापारियों के प्रतिपालन में बराबर रहा यह बात हमें ले० नं० ५२७, ५३२ से मालुम होती है।

ये सेठ लोग केवल व्यापारी ही न थे, उनमें से बहुत से अच्छे विद्वान् होते थे। कुछ ऐसे विद्वान् सेठों का उल्लेख ले० नं० २१८ में है। उक्त लेख का माचिसेट्टि तर्क व्याकरण में प्रवीण व्याख्या करने में चतुर, धर्म ग्रन्थों के मर्म को जानने वाला तथा धर्म कार्यों में व्यय करने वाला था। उसी तरह उसका छोटा भाई कालिसेट्टि था।

कुछ शिलालेखों में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ कि जैन लोग ब्राह्मणों को भी दान देते थे। ले० नं० २२१ में ऐसे ही एक विरोय बम्मि सेट्टि हैं जिन्होंने इसूर नामक स्थान में एक जिनालय बनवाकर उसे दान दिया और अग्रहार के हजारों ब्राह्मणों के लिए एक सत्र खोल दिया।

दान के ऐसे कार्यों में राज्यकी ओर से भी प्रोत्साहन मिलता था। ले० नं० (सन् १०८५) में लिखा है कि एक दानी सेठ नोकय्य को त्रिभुवन मल्ल गंग पेर्म्मांडि देव ने तट्टकेरे स्थान में आकर उस नगर का सम्पूर्ण शासन उसे सौंप दिया। वहाँ उक्त सेठ ने जैन मन्दिर, तालाब और सत्र बनवाये। उसने अन्य स्थानों में भी दो मन्दिर बनवाये थे। राजा ने उक्त सेठ के इन कार्यों से प्रसन्न होकर उसे राज्य सम्मान से सम्मानित किया और ८ गाँवों का मुखिया बना दिया। इससे उक्त सेठ का उत्साह और बढ़ा और उसने ४ मन्दिर और

बनवाये। राजा ने इस कार्य के लिए अपनी आय का कुछ हिस्सा उसे दे दिया।

दान के ऐसे कार्यों मे राजघराने के व्यापारी और दूसरे पदाधिकारी भी उत्साहपूर्वक भाग लेते थे। ले० नं० २५१ से ज्ञात होता है कि सन् ११११ में शिमोगा के एक जिनालय के लिए बम्म गावुण्ड तथा नाल् प्रभु ने ६ मकान १ तेल की चक्की और कुछ दान दिया था। इसी तरह होय्सल नरेश के राज सेठ पोय्सलसेट्टि और नेमिसेट्टि ने भी अनेक दान दिये थे (२६८)। ले० नं० ३६४ में एक घाट अधिकारी द्वारा दान का उल्लेख है।

मध्यकालीन दक्षिण भारत में जैन गौडों की अपेक्षा वीर वणिजों की धार्मिकता बड़े महत्व की थी। ये लोग अपने सगठन के कारण सब के विश्वासपात्र होते थे और जनता के लिए दोनों के संरक्षक भी यह हमें ले० न० ४२८ (प्र० भा० १३०) से विदित होती है। अपने व्यापार प्रसंग में वे जहा जाते वहा दान देते थे। ले० नं०४०८ से विदित होता है कि चिक्कमागडि के एक मन्दिर के लिए सन् ११८२ में अनेक देशों मे व्यापार करने वाले बनञ्जु और मुम्मुरिदण्ड व्यापारियों ने अपने माल पर की चुंगी दान में दे दी थी।

इस युग में जैन धर्म का उपासक केवल वणिक् वर्ग ही न था बल्कि कृषक वर्ग भी भव्य श्रावक था। ले० नं० ४२६ में लिखा है कि शान्तिनाथ बसदि के दान की रक्षा कोरडुकेरे के किसानों और गाँव के ६० कुटुम्बों ने की थी। इसी तरह ले०न० ४३८ मे उल्लेख है कि बसदि के दानादि की प्रबधक १८ जातियाँ थीं। ले० नं० ३३८, ३६४ और ५२५ में गौड किसानों द्वारा दानादि का उल्लेख है। ले० नं० ४७८ में गाँव के किसानों द्वारा जिन पूजा के लिए सुपारी, पान एवं तेल के दान का उल्लेख है।

जन साधारण में जैन धर्म के प्रति प्रेम एवं भक्ति के परिचायक अनेक लेख प्रस्तुत सग्रह में हैं। ले० नं० २०१ (सन् १०६३) से ज्ञात होता है कि छेनी और बल्ली को पकड़ने वालों में प्रधान अर्थात् पाषाण शिल्पियों में प्रधान विद्यावान् पोय्सलीचारि ने एक बसदि बनवायी थी। ले० नं० ३०१ में उल्लेख है कि

तेलीदास गौण्ड ने भगवान के लिए पुरोहित शान्तिदेव को भूमिदान दिया। इसी तरह ले० नं० ७२४ में एक जैन श्रावक तेली का उल्लेख है। ले०नं० ३३४ में गोलोज नामक एक सुनार को जैन श्रावक बतलाया गया है। ले० नं० १४४ में चामेकाम्बा नामक गणिका को श्रावकी के रूप में लिखा है।

भूमियों को खरीदना तथा उन्हें सब प्रकार के दान से मुक्त कराके जैन संस्थाओं को दान रूप में दे देना, उस युग की विशेषता थी। श्रवणबेल्गोल से प्राप्त ले० नं० ५१२ (प्रथम भाग ९६) में उल्लेख है कि किसी शम्भुदेव ने चन्द्रप्रभ मुनि से कर मुक्त जमीन खरीदकर गोम्मटदेव और चौबीस तीर्थंकरों की दुग्ध पूजा के लिए भेंट में दे दी। इस तरह ले० नं० ५२८ (प्र० भाग १२९) से ज्ञात होता है कि बेल्गोल के समस्त जौहरियों ने नगर जिनालय के आदिदेव की पूजा के लिए सब करों से मुक्त कराकर जमीनें दान में दीं।

दान पूजन के अतिरिक्त जनता के जैन धर्म पर श्रद्धा के और दूसरे उदाहरण मिलते हैं। पुरुष वर्ग तथा स्त्री वर्ग दोनों अपने धार्मिक जीवन को उचित रीति से व्यतीत कर जीवन के अन्तिम क्षणों को जैनधर्म विहित समाधि विधि से समाप्त करते थे। इस विषय को प्रकट करने वाले अनेकों लेख इस संग्रह में हैं उनकी स्मृति में स्मारकपाषाण पर वे लेख उत्कीर्ण पाये गये हैं। ऐसे निमित्तों पर भूमि आदि के दानों का उल्लेख भी इन लेखों में रहता है।

९७. जैनधर्म प्रतिपालक महिलाएँ

जैन धर्म पर असीम एवं दृढ श्रद्धा और भक्ति रखने वाली दक्षिण भारत की अनेक जैन महिलाओं का इतिहास इन लेखों में सुरक्षित पड़ा है। ये महिलाएँ सामान्य वर्ग के सिवाय बड़े बड़े राजघरानों, सामन्त परिवारों, महामंत्रियों और सेनापतियों की गृहलक्ष्मियाँ थीं।

ये महिलाएँ जिनालय बनवाती थीं और उनके इस पुण्य कार्य में उनके पति आदि सहायता करते थे। ले० नं० १२१ से ज्ञात होता है कि निरुगुण्ड

परिवार की एक महिला कुन्दाच्चि ने पुण्य वृद्धि के लिए लोक तिलक नाम का एक जिनालय बनवाया था और उसके लिए उसके पति ने दान दिया था। कुन्दाच्चि पल्लव नरेश की नातिन तथा सगर कुल के राजा मरुवर्मा की पुत्री थी।

इन महिलाओं द्वारा अनेक प्रकार के प्रभावनात्मक कार्यों का उल्लेख भी मिलता है। सन् १०७७ मे कदम्ब वश के राजा कीर्तिदेव की पट्टमहिषी मालल देवी ने कुप्पटूर में पार्श्वदेव चैत्यालय का पद्मनन्दि सिद्धान्त देव से सुसंस्कार कराकर तथा यम, नियम, ध्यान, धारणा, शील, गुण सम्पन्न ब्राह्मणो को बुलाकर उनकी पूजाकर उक्त चैत्यालय का नाम ब्रह्म जिनालय रखा। उक्त रानी ने न केवल उन्हीं से दान दिलवाया बल्कि कोटीश्वर मूल स्थान के पुरोहितों से और कुप्पटूर के पड़ोस के १८ मन्दिरों के पुरोहितों से उक्त चैत्यालय के लिए दान दिलवाया तथा रानी ने राजा कीर्ति देव से भी एक गाव दान में दिलवाया (२०९)।

ऐसे प्रभावनात्मक कार्यों को करने में शान्तरकुल से सम्बन्धित चट्टल देवी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। वह जैन नृप रक्कसगग की बेटी तथा पल्लवराज काडुवेट्टि की पत्नी थी। लेखों से मालुम होता है कि उसके जीवन काल मे उसके पति पुत्रादि मर चुके थे। उसने अपनी मृत छोटी बहिन के पुत्रों को, जो कि शान्तरकुल के राजकुमार थे, अपना स्नेह भाजन बनाया था। उन शान्तर कुमारों के साथ उसने पोम्बुर्च्चपुर (हुम्मच) मे अनेक जिनालय बनवाये, उनमें से एक पंचकूट बसदि था जिसका दूसरा प्रसिद्ध नाम 'उर्वीतिलक जिनालय' था। यह जिनालय उसने उन दिवगत आत्माओं की स्मृति मे बनवाया था। चट्टल देवी के अनेक गुणों और बहुविध दानों की प्रशंसा ले० न० २१३, २१४, २१५ और २१६ मे की गई है। ले० नं० २४८ में उल्लेख है कि सन् ११०३ में उक्त चट्टल देवी ने, जिसे लेख में 'जिन समय कामधेनु, जिनसमयनिदान-दीपवर्ति' कहा गया है, अपने तथाकथित पुत्रों के साथ पञ्चवसदि के लिए एक

गाँव दान में दिया तथा अपनी बहिन वीरब्बरसि की स्मृति में एक बसदि की नींव का पत्थर जमवाया।

ले० नं० ३२६ में शान्तर वंश से सम्बन्धित पम्पादेवी नामक एक महिला का उल्लेख है। उसने एक ही महीने के भीतर उर्वीतिलक जिनालय के समीप शासन देवता का मन्दिर बनवाकर तैयार कराया था। उसकी पुत्री का नाम बाचल देवी था जो दान देने में बहुत उदार थी। उक्त पम्पा देवी, उसके भाई श्रीवल्लभ एव बाचल देवी ने पञ्च बसदि के उत्तरीय पट्टसाले का निर्माण कराया था।

गंग वश की महिलाएँ भी जिन धर्म के लिए उदार दान देने मे प्रसिद्ध थीं। उदाहरण के लिए सन् १११२ के लगभग गङ्ग महादेवी ने, जो कि महामण्डलेश्वर भुजबल गग पेर्म्मडि देव की पट्टरानी थी, अपने छोटे भाई पट्टिगदेव के लिए गङ्गवाडि का मुकुट धारण किया। वह समस्त रानियों और राजाओं में अधिक प्रतिष्ठित थी। भुजबल गंग की दूसरी रानी का नाम बाचल देवी था। उसने बन्निकेरे नामक स्थान मे एक सुन्दर जिनालय बनवाया, उसके लिए उक्त नरेश ने गङ्ग महादेवी, उनके पुत्रों तथा बाचल देवी ने समस्त मन्त्रियों एव नाड् प्रभुओं की उपस्थिति में सब करों एव चुङ्गियों से मुक्त कराकर अनेक प्रकार के दान दिये-(२५३)। ले० न० २६७ में गङ्गदेवी की प्रशसा है।

होय्सल वश की राज महिलाएँ भी जैन धर्म की सेवा में किसी से कम न थीं। इन महिलाओं में शान्तलदेवी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। यह होय्सल वंश के प्रतापी नरेश विष्णुवर्धन की रानी थी। श्रवण बेल्गोल से प्राप्त एक ले० न० २८३ (प्रथम भाग ५६) में और कई दूसरे लेखों में उसके सौन्दर्य, बुद्धि, धार्मिकता एवं भक्ति आदि गुणों की बड़ी प्रशसा की गई है। उसका पिता कट्टर शैव सम्प्रदायी था पर उसकी माँ कट्टर जैन थी। शान्तलदेवी गीत, वाद्य, नृत्य में प्रवीण तथा अपनी सुन्दरता के लिए विख्यात थी (२५७, प्रथम भाग ६२)। उसके गुरु का नाम प्रभाचन्द्र मुनीन्द्र था। उसने सन् ११२३ में शान्ति जिनेन्द्र की प्रतिमा बनवाई और गन्धवारण बसदि का निर्माण कराकर, अभिषेकादि कार्यों

के लिए एक तालाब बनवाया और अपने पति विष्णुवर्धन की आज्ञा से प्रभाचन्द्र मुनीन्द्र को एक गाव दान में दिया। उसे लेख में 'सम्यक्त्व चूडामणि एव जिन-समयसमुदितप्राकार' कहा गया है। जैन मतों के प्रति दृढ़ श्रद्धालु उस देवी ने सन् ११३१ में शिव गंग नामक स्थान में सल्लेखना विधि से देहत्याग किया। ले० नं० २८६ (प्रथम भाग ५३) मे लिखा है कि उसके माता पिता ने शान्तल देवी के पश्चात् शरीर त्यागा था। उसकी माँ के सम्बन्ध मे उक्त लेख से ज्ञात होता है कि उसने श्रवणबेल्गोल में आकर कठोर सन्यसन विधि को धारण कर एक मास तक अनशन करके देहत्याग किया था।

शान्तलदेवी का अनुकरण करने वाली उसी घराने में हरियब्बरसि नामक राजकुमारी थी। वह विष्णु वर्धन की पुत्री और कुमार बल्लाल देव (नरसिंह प्रथम) की बहिनों में सबसे बड़ी थी। उसने सन् ११२९ में (२९३) हन्तियूर नामक स्थान में नाना रत्नों से जटित शिखरों से समन्वित एक विशाल जैन मन्दिर बनवाया था, तथा मन्दिरों को मरम्मत, पूजा प्रबन्ध, ऋषि और वृद्ध स्त्रियों को आहार देने के लिए गुत्ति स्थान के चिन्न नामक व्यक्ति एव बंम्म नामक मह्लुर से खास कीमत देकर जमीन खरीद ली और अपने पिता से सब करों से मुक्त कराकर अपने गुरु गण्डविमुक्त सिद्धान्तदेव को भेंट में दे दी।

राजघरानों की ये महिलाये जैन धर्म की भक्ति में ऐसी ओतप्रोत रहती थीं कि अपने जीवन के अन्तक्षणों को सुधारने के लिए जैन धर्म विहित कठोर सन्यास विधि से देह त्याग करने में भी न हिचकती थीं। ले० नं० १४० की जक्कियब्बे नामक ऐसी ही वीराङ्गना थी। वह राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय के शासन काल में अपने पति सत्तरस नागार्जुन के स्वर्गवास होने पर नागर खण्ड की शासिका नियुक्त की गई। वह जैन शासन और प्रजाशासन में निपुण थी। एक बार वह अनिवार्य रोग से ग्रस्त हो गई। उसने अपनी पुत्री पर शासन का भार सौंप सन्यास विधि से देह त्याग दिया। ले० नं० १५० मे उल्लेख है कि राजा पड़ियर दोरपय्य की ज्येष्ठ रानी एवं बुतुग (गंग नरेश १) की बड़ी बहिन

पाम्बब्बे ने, जो अभयनन्दि पण्डितदेव की शिष्या नाणब्बेकन्ति की शिष्या थी, केशलोंच करने के बाद तप के पूरे ३० वर्ष पूर्ण किए और पाच अणुव्रतों (?) को धारण कर दिवंगत हुई। लेख में उसके व्रत एव तपस्या की प्रशसा है।

कोङ्गाल्व वंश की जैनधर्म के प्रति भक्ति सुविदित है। उक्त वश के राजा राजेन्द्र कोङ्गाल्व की मा पोच्चब्बरसि ने सन् १०५० मे एक वसदि बनवायी थी, और उसमे अपने गुरु गुणसेन पण्डितदेव की मूर्ति स्थापित की थी तथा सन् १०५८ में उसने उक्त वसदि को भूमिदान दिया था (१८८, १८६)। ले० न० ५६० मे कोङ्गाल्व वश की एक और महिला सुगुणिदेवी का नाम दिया गया है जिसने अपनी माता के पुण्यार्थ एक प्रतिमा की स्थापना की और भूमिदान दिया।

जैन सेनापतियों की पत्नियों का भी जैनधर्म की सेवा मे बड़ा हाथ था। इनमें सबसे उल्लेखनीय नाम है सेनापति गगराज की पत्नी लक्कले या लक्ष्मीमती का। वह लक्ष्मीमती दण्डनायकिति कहलाती थी। उसे लेख न०२५८ (प्रथम भाग, ६३) मे गग सेनापति के 'कार्ये नीतिवधू' और 'रणे जयवधू' कहा गया है। उसने सन् १११८ में श्रवणबेल्गोल मे एक जिनालय बनवाया था। ले० नं० २६८ (प्रथम भाग ५६) से ज्ञात होता है कि सेनापति गगराज ने अपने राजा विष्णुवर्धन से एक गाव पारितोषिक रूप मे पाकर अपनी माता पोचल देवी एव अपनी भार्या लक्ष्मी देवी द्वारा निर्मापित जैन मन्दिरों के रक्षार्थ अर्पण किया था। लक्ष्मीमति ने भी आहार, अभय, औषधि और शास्त्र इन चारों दानों को देकर 'सौभाग्यखानि' पद पाया था (२५५, प्रथम भाग, ४७)। ले० न० २७६ (प्रथम भाग, ४८) में लक्ष्मीमति के रूप, गुण, शील आदि की प्रशसा की गई है। इस धर्मपरायण महिला ने सन् ११२१ मे सन्यास विधि पूर्वक शरीर त्यागा था। सेनापति गङ्गराज ने अपनी साध्वी पत्नी की स्मृति में एक निषद्या बनवा दी थी।

गङ्गराज के बड़े भाई का नाम बम्मदेव चमूप था। इसकी पत्नी जक्कणब्बे थी जो कि दण्डनायकीति कहलाती थी। वह सेनापति बोप्प की माता थी तथा शुभचन्द्रदेव की शिष्या थी। प्रथम भाग के ले० न० ४४६ और ४८६ से ज्ञात

होता है कि उसने मोक्षतिलक नामक व्रत किया था और पाषाण पर नयणदेव की मूर्ति खुदवायी थी। उसी वर्ष उसने श्रवणबेल्गोल मे मूर्ति की प्रतिष्ठा करायी एवं वहाँ एक तालाब खुदवाया था। ले० नं० २८५ (प्रथम भाग, ४३) में इस महिला की बड़ी प्रशंसा है।

ले० नं० २८८ से एक और जैनधर्म भक्त महिला का नाम ज्ञात होता है। वह है कालियक्कव्वे, जो कि चालुक्य नरेश त्रिभुवनमल्ल के सामन्त पाण्ड्य भूपाल के सेनापति सूर्य की पत्नी थी। इसने सन् १२२८ में साम्बनूरु मे एक सुन्दर जिनालय बनवाया और पूजा के हेतु तथा पुजारी की आजीविकार्थ मन्दिर के पुरोहित को कुछ भूमि दान में दे दी।

ले० नं० ३१३ मे हमें दानशील तीन महिलाओं के नाम मिलते हैं। गंग नरेश मारसिंह की छोटी बहिन सग्गियव्वरसि ने उद्धरे नामक स्थान में अनेक जैन मुनियों को दान दिलाया और पट्टवसदि जिनालय को सजाया था, तथा वसदि के लिए सवणविलि नामक ग्राम दान में दिया था। उसी लेख में कनकियव्विरसि नामक एक महिला का उल्लेख है। उस महिला ने जहाँ जिन मन्दिर नहीं थे वहाँ जिन मन्दिर बनवाये और जहा जैन यतियों को आमदनी के क्षेत्र नही थे वहा उसने दान दिये। तीसरी महिला शान्तियक्क ने, जो कि बोप्प दण्डेश की भतीजी एवं केतिसेट्टि की पत्नी थी, उद्धरे में एक वसदि बनवायी।

ले० नं० ३३६ में जैन धर्म परायणा दो बहिनों का नाम आता है। वे हैं जक्कव्वे और पद्मियक्क। जक्कव्वे के विषय मे लिखा है कि वह होय्सल नरेश नरसिंह के पुराने सेनापति चाविमय्य की पत्नी थी। उसने हेरगू में एक जिनालय बनवाकर पार्श्वनाथ की प्रतिमा प्रतिष्ठित करायी तथा पूजनादि प्रबन्ध के लिए नरसिंह से भूमि का दान भी ले लिया था। इसी तरह ले०नं० ३५२ में ईश्वर चमूप की पत्नी माचियक्क द्वारा जिन मन्दिर निर्माण एवं भूमिदान का उल्लेख है। ले० नं० मालियक्क को अन्तनून गुणरत्नमण्डन एवं चातुर्वर्ण्यसमुदयैकशरण्य कहा गया है।

जैन धर्म पर अचल श्रद्धा रखने वाली एक विशिष्ट महिला आचल देवी का उल्लेख करना यहाँ आवश्यक है। वह शैव धर्म को मानने वाले सेनापति चन्द्रमौलि की पत्नी थी। वह अपने चार प्रकार के दान के लिए विख्यात थी। उसके इस कार्यों में उसके पति ने कभी बाधा नहीं दी बल्कि धार्मिक उदारता के कारण उसने सहायता ही की है। आचल देवी ने श्रवणबेल्गोल में एक जिनालय बनवाया और उसके पति ने अपने नरेश होय्सल बल्लाल से बम्मेयन हल्लि नामक गाव दान में दिलाया (ले० न० ४०३, प्रथमभाग १२४)। ले० नं० ४०४ (प्रथम भाग १०७) से ज्ञात होता है कि वीर बल्लाल ने उक्त महिला की प्रार्थना पर बेक्क नामक ग्राम भी गोम्मटेश्वर की पूजा के हेतु दिया था।

मंत्री एचण की पत्नी सोमल देवी भी जैन महिलाओं में उल्लेखनीय है। ले० नं० ४५१, ४५५ और ३५६ में उसकी प्रशसा है। उसने बेलवत्त नाडू में एक जैन वसदि का निर्माण कराया और उसके पूजन के हेतु दान भी दिया था।

यह नहीं समझना चाहिए कि राजघराने, सामन्तों एव सेनापतियों की पत्नियों में ही जिन धर्म के प्रति विशेष अनुराग था बल्कि वैसा ही अनुराग नागरिकों की पत्नियों में भी देखने को मिलता है। ले० न० ३५३ में लिखा है कि हेगडि जक्कय्य और उसकी पत्नी जक्कब्बे ने दीडगुरु में एक चैत्यालय बनवाया और पार्श्वनाथ भगवान् की स्थापना करके देवपूजा और ऋषियों के आहार के लिए भूमिदान दिया।

ले० नं० ३८३ में जैनधर्म पर दृढ श्रद्धा रखनेवाली हर्य्यले महासती का उल्लेख है। उक्त लेख में लिखा है कि उक्त सती ने मृत्यु के समय अपने पुत्र मूवय नायक को बुलाकर कहा कि स्वप्न में भी मेरा ख्याल न करना, केवल धर्म का विचार करना। यदि मुझे और तुम्हें पुण्योपार्जन करना है तो जिन मन्दिर बनवाओ ···आदि। इसके बाद जिनेन्द्र के चरणों में पञ्च नमस्कार मंत्र को जपते हुए उसने समाधि से देह त्याग दिया। ले० न० ३८४ से मालुम होता है कि

इसी तरह चन्द्रायण देव की गृहस्थ शिष्या हरिहर देवी भी समाधिमरण से दिवंगत हुई थी। ११वीं शताब्दी के मध्य के नल्लूर से प्राप्त एक लेख (१८३) में जक्कियब्बे नामक श्राविका भी संन्यसन विधि से स्वर्गगत हुई थी।

१२वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और १३वीं के पूर्वार्ध के ऐसे अनेकों लेख इस संग्रह में हैं जिनमें समाधिभावना से देहोत्सर्ग करनेवाली अनेकों महिलाओं का उल्लेख है। ले० नं० ४२३ में शान्तियक्क या शान्तले, ले० नं० ४३६ मे मालब्बे तथा ले० नं० ४२७ में जक्कब्बे का नाम, यहाँ उदाहरण के रूप मे समझना चाहिये।

८. धार्मिक उदारता एवं स हृष्णुता

इन लेखों में सहिष्णुता के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जैनाचार्यों और जैन नेताओं, नरेशों, सामन्तों और सेठों में भारतीय संस्कृति के अनुरूप यह विशेष गुण था और इस भावना का उन्होंने निष्पक्षभाव से प्रदर्शन भी किया।

इन लेखों से जैनाचार्यों की विद्वत्ता एवं इतिहासप्रियता के साथ साथ उनकी विस्तीर्ण हृदयता का परिचय मिलता है। उन्होंने शिलालेखों की रचना ही अपने स्थानों और धर्म और सम्प्रदाय के लेखों के उपयोग के लिए नहीं की प्रत्युत अन्य धर्म और सम्प्रदाय के उपयोग के लिए भी की। उदाहरण स्वरूप दिगम्बराचार्य रामकीर्ति ने चित्तौड़गढ से प्राप्त प्रशस्ति (३३२) वहाँ के तोकलजी के मन्दिर के लिए लिखी थी। बृहद्गच्छ के जयमंगल सूरि ने सुन्ध पहाड़ी से प्राप्त एक लेख (५०७) लिखा जो कि वहा चामुण्डा देवी के मन्दिर से प्राप्त हुआ है। इसी तरह यशोदेव दिगम्बर ने ग्वालियर के कच्छवाहों की प्रशस्ति तथा रत्नप्रभसूरि ने गुहिलोत वंश के घाघसा एवं चिर्वा से प्राप्त लेख लिखे। पीछे के ये लेख इस संग्रह में नहीं है। यहाँ यह न समझना चाहिये कि वे लेख उन स्थानों में जैनों से छीन कर ले लाये गये हैं, प्रत्युत इसके विपरीत, वे लेख विशेषतः उन स्थानों के लिए ही जैनाचार्यों ने लिखे थे, क्योंकि उन लेखों के अन्त में जैनाचार्यों के नाम, गुरु परम्परा, गण, गच्छ के सिवाय हमें ऐसा कुछ नहीं मिलता जो जैनों से सम्बन्धित हो। यहा

तक कि मङ्गलाचरण के पद्य भी अजैन देवी देवताओं के मंगलाचरण से प्रारम्भ होते हैं। हाँ, कुछेक में ॐ सर्वज्ञाय नमः, पद्मनाथाय नमः आदि से उनका प्रारम्भ हुआ है। ये लेख निश्चय रूप से जैनाचार्यों की विशाल हृदयता को सूचित करते हैं।

जैनाचार्यों की इस नीति का अनुसरण जैन नेताओं ने भी किया। ले० नं० १८१ (सन् १०४८) से विदित होता है कि एक जैन महामण्डलेश्वर चामुण्डराय ने बनवसेनाड़ में जिननिवास, विष्णुनिवास, ईश्वरनिवास, और जैन मुनियों के लिए निवास बनवाये थे। इसके समान ही और दूसरे सामन्त थे जो जैन और ब्राह्मणों में भेद नहीं मानते थे। ले० न० २४६ से विदित होता है कि नोलम्बवाड़ी के शासक बम्मरस ने सन् ११०६ में एक जैन मन्दिर तथा सर्पेश्वर देव के लिए चुंगी से प्राप्त आय को तथा कई प्रकार के और दानों को दिया था। सामन्तों की ऐसी रुचि को सूचित करने वाले और भी लेख हैं। ले० न० ३५६ से मालुम होता है कि सामन्त गोव, महेश्वर, बौद्ध, वैष्णव एव अर्हन् इन चार समयों का प्रतिपालक था।

ब्राह्मण और जैनों के बीच असाधारण हार्दिक सम्बन्ध था। ले० नं० ४४८ से ज्ञात होता है कि सन् १२०४ में नागर खण्ड के पाँच अग्रहारों के ब्राह्मणों ने स्थानीय अधिकारियों, सेठों, नागरिकों और किसानों के साथ मिलकर बन्दिलिके के शान्तिनाथ की पूजा के लिए भूमिदान किया।

धार्मिक उदारता के विषय में अदलकुल के सामन्तों का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इस वंश के सामन्त विष्णुवर्धन ने सन् ११४० में अपने ही क्षेत्र में एक शिवमन्दिर तथा अदल जिनालय बनवाया था (३१५)। इसी वंश के एक ले० नं ३३३ का मंगलाचरण सर्वधर्म समन्वय की भावना से ओतप्रोत है (शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे जिनाय तस्मै सकलात्मने नम.)। इस लेख में उदारचेता सामन्त बाचि की विस्तार पूर्वक प्रशंसा की गई है। उक्त सामन्त ने कैदाल नामक स्थान में न केवल जैन मन्दिर ही बनवाया था बल्कि गंगेश्वर, नारायण, चलवरिवरेश्वर तथा रामेश्वर के मन्दिर भी बनवाये थे। उसने अपनी

पत्नी भीमले के नाम पर भीम जिनालय तथा भीम समुद्र नामक विशाल तालाव बनवाकर पार्श्वदेव के नाम पर कर दिया था। उक्त लेख में वाचिराज को चतुः समय-धर्मोद्धार-धौरेय कहा गया है।

हमें अन्य जैन लेखों से मालुम होता है कि १३ वीं शताब्दी के मध्य, तक धार्मिक उदारता की भावना का अच्छा प्रचार था पर तेरहवीं के अन्तिम पाद के वाद १०० वर्षों तक दक्षिण भारत के ऊपर मुस्लिम आक्रमणों के कारण उनसे रक्षा के महत्त्वपूर्ण प्रश्न के आगे धार्मिकता का प्रश्न फीका पड़ गया।

किसी तरह मुस्लिम आतङ्कों का जोर कम करने के लिए विजय नगर साम्राज्य की स्थापना हुई। इस वंश के राजाओं में धार्मिक निष्पक्षता का एक वड़ा महत्त्वपूर्ण गुण था। सन् १३६३ के एक लेख (५६१) से विदित होता है कि वुक्कराय प्रथम के शासन काल में जैन मन्दिर की सीमाओं के विषय में जब हेद्दर नाड के लोगों और मन्दिर के आचार्यों में झगड़ा उठ खड़ा हुआ तो राज्य की ओर से उस मामले की जाँच पड़ताल हुई। राज्य के प्रधान मंत्री नागण्ण ने वृद्धजनों की एक सभा में फैसलाकर मन्दिर की ठीक सीमा वाँधकर शासन पत्र भी लिख दिया।

इसके पाँच वर्ष वाद सन् १३६८ में वुक्कराय के सामने जैनों और भक्तों (श्रीवैष्णवों) के वीच धार्मिक विवाद फिर खड़ा हुआ। ले० नं० ५६५ (प्रथम भाग, १३६) और ले० नं० ५६६ मे इन घटनाओं का चित्रण है। इन लेखों में लिखा है कि जैनों ने अपने ऊपर वैष्णवों द्वारा हुए अन्याय की शिकायत लिखित रूप में वुक्कराय से की तब वुक्कराय ने स्वयं इस वात की जाँच की और जैनों के हाथ को वैष्णवों और उनके आचार्य के हाथ में रखकर कहा कि जैन दर्शन एवं वैष्णव दर्शन में कोई भेद नहीं है। जैन धर्म वाले भी पंच महावाद्य वजा सकते हैं। जैन धर्म की हानिवृद्धिको वैष्णवों को अपनी हानिवृद्धि समझना चाहिये। वैष्णवों को इस विषय के शासन पत्र समस्त वस-दियों में लगाना चाहिये। जब तक सूर्य और चन्द्र हैं तब तक वैष्णव जैन धर्म की रक्षा करेंगे। जो इस नियम को तोड़ेगा वह राजा, संघ एवं समुदाय का द्रोही

होगा। ले० नं० ५६६ के अन्त में लिखा है कि जैनों और वैष्णवों ने मिलकर वसुवि सेट्टिको संघ नायक की उपाधि दी।

उपर्युक्त तीन लेखों से ज्ञात होता है कि विजयनगर नवोदित हिन्दू समाज के अधिनायकों में देश की सुरक्षा और शान्ति के साथ धार्मिक निष्पक्षता का बड़ा ध्यान था। इस बात के प्रमाण अन्य लेखों में भी मिलते हैं जो कि इस संग्रह में नहीं है।

धर्म समभाव की इस भावना का प्रभाव हम कतिपय शिलालेखों के प्रारंभिक मंगल पद्यों में भी पाते हैं। ले० नं० ६४६ पार्श्वनाथ जिनेश्वर के नमस्कार से प्रारम्भ होता है। तत्पश्चात् जिनशासन की प्रशंसा व पञ्चपरमेष्ठियों के नमस्कार के बाद नमस्तुंगशिरः आदि पदों से शम्भु की स्तुति है। उसके बाद वराह और शम्भु की स्तुति की गई है। ले० नं० ६८८ में भी जिनशासन की स्तुति तथा शम्भु की स्तुति साथ साथ की गई है।

जैन और शैवों के परस्पर मेल मिलाप को प्रदर्शन करने वाले एक महत्त्वपूर्ण लेख की ओर भी हम ध्यान दें। ले० नं० ७१० के प्रारम्भ में जिनशासन और शम्भु की स्तुति के बाद एक घटना का उल्लेख है। विजयनगर के आरवीडु वंश के नरेश वेंकटाद्रि द्वितीय के राज्य में एक वीर शिव हुच्चप्प देव ने हलेवीड की विजय पार्श्व बसदि के खम्भे पर लिंग मुद्रा लगा दी थी जिसे विजयप्प नामक जैन ने साफ कर दी। तब पद्मण्ण सेट्टि आदि जैनों ने यह समझा कि इससे दूसरे धर्म वालों की भावना को क्षति पहुँचेगी, वीर शैवों के मुखियों से निवेदन किया। इस पर दोनों सम्प्रदाय के लोग इकट्ठे हुए और उचित जाच के बाद उन्होंने आज्ञा निकाली की कि विभूति और बिल्वपत्र प्रदान करने के बाद जैन लोग आचन्द्रसूर्य अपनी सब धर्म विधि कर सकते हैं। इसके बाद इस शासन पत्र पर राज्य की स्वीकृति ली गई और वह वीर शैवों की ओर से जैनों को समर्पण किया गया। लेख के अन्त में वीर शैव सम्प्रदाय ने अपने उदार भाव दिखलाये हैं कि जो व्यक्ति जैन धर्म का विरोध करेगा वह महामहत्तु के चरणों से निकाल दिया जायगा, वह शिव, जंगम तथा काशी, रामेश्वर के लिंग का द्रोही समझा जायगा।

अन्त में महामहत्तु की स्वीकृति के बाद वर्धतां जिनशासनम् लिखा है।

९. जैनधर्म पर संकट

१२ वीं शताब्दी के बाद दक्षिण भारत में जैन धर्म के पतन के एवं विशृंखलित होने के चार प्रधान कारण थे।

प्रथम तो वह राज्याश्रय से वंचित हो गया था, गंग, राष्ट्रकूट, होय्सल जैसे साम्राज्य नष्ट हो चुके थे।

द्वितीय, पश्चात्कालीन जैन नेता गण ब्राह्मण धर्म के नवोदित रूप वैष्णव और वीर शैव सम्प्रदाय से जैन धर्म की रक्षा करने में उदासीन हो रहे थे। जैनाचार्यों में ऐसे कोई प्रभावक आचार्य न थे जो कि धार्मिक क्षेत्र में प्रतिद्वन्द्वियों को परास्त करते।

तृतीय, जैन मन्दिरों को आश्रय देने वाले व्यापारी संघ, वीर वणिज आदि वीर शैव धर्म के प्रभाव में आकर जैन धर्म को छोड़ चुके थे। शेष सामान्य जन वर्ग में ऐसी शक्ति न थी कि वे संगठित हो विधर्मियों का प्रतिरोध कर सकते।

चतुर्थ, वीर शैव धर्म के आचार्यों ने जैन धर्म के केन्द्रों पर हमला करना प्रारम्भ किया और स्थानीय सामन्तों को अपने धर्म में परिवर्तित कर उनसे ही जैनों का तिरस्कार कराया।

उपर्युक्त बातें जैन लेखों पर दृष्टिपात करने से भलीभाँति सिद्ध होती हैं। इस संग्रह के लेख नं० ४३५ और ४३६ से वीर शैव धर्म के एक आचार्य एकान्तद रामय्य के सम्बन्ध में ज्ञात होता है कि उसने कलचूरि नरेश बिज्जल को अपने प्रभाव में लाकर जैनों पर भयंकर उत्पात किए थे। उसने अब्लूर में जैन-मूर्ति को फेंककर वेदी को ध्वस्त कर दिया और शिवलिंग की स्थापना की। इस पर जैनों ने कलचूरि नरेश बिज्जल से शिकायत की पर वह तो उक्त आचार्य के प्रभाव में था। इसने उनका उपहास किया और एकान्तद रामय्य को प्रोत्साहन देते हुए जय पत्र प्रदान किया (४३५)। उसी लेख से ज्ञात होता है कि चालुक्य वंश का अन्तिम नरेश सोमेश्वर चतुर्थ भी उस मत का अनुयायी हो गया था।

विजय नगर राज्य के ले० न० ५६१,५६५,५६६ और ७१० से विदित होता है कि दूसरे सम्प्रदाय के लोग जैनों पर ज्यादती करते थे पर तत्कालीन राजाओं की उदार एवं निष्पक्ष नीति के कारण उनकी सुरक्षा बनी रही। ले० नं० ७१० से ज्ञात होता है कि जैनों को अपमानजनक शर्तें मानने को भी बाध्य होना पड़ा, पर उन्होंने अपने पड़ोसियों की भावना की रक्षा के लिए वह शर्त भी मान ली। उक्त लेख में लिखा है जैन लोग पहले विभूति और विल्व पत्र बाँटकर अपनी सब धर्म विधि कर सकते हैं। जैनियों ने जब यह शर्त मान ली तो उसका प्रभाव दूसरे धर्म वालों पर तत्काल हुआ और उन्होंने भी प्रतिज्ञा की कि जैन मन्दिरों आदि को कोई क्षति पहुँचावेगा तो वह उनके धर्म से बाहर कर दिया जायगा। जैनियों में उनकी अहिंसा नीति का ही प्रभाव था कि वे परमत सहिष्णु थे और इससे वे आजतक भारत में रह सके।

१०. जैन धर्म के केन्द्र

प्रस्तुत लेख संग्रह को ध्यान से पढने से मालुम होता है कि भारत में उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम सभी ओर अनेक प्रभावक जैन केन्द्र थे। इन केन्द्रों का इतिहास देखने पर विदित होता है कि जैनाचार्यों ने जैन धर्म को राजाओं और सामन्तों के दरबारों तक ही सीमित न रखा था बल्कि साधारण जनता के बीच भी उसे जनप्रिय बनाने के प्रयत्न किये थे। इसीलिए राजाओं और सामन्तों के सतत परिवर्तित होते रहने पर एवं उनके प्रभुत्व का लोप होने पर भी जैन धर्म की नींव भारतवर्ष में अक्षुण्ण बनी रही।

(अ) उत्तर भारत के जैन केन्द्रों में मथुरा एक समय प्रमुख स्थान था। इस सम्बन्ध में हम पर्याप्त लिख चुके हैं। इसके अतिरिक्त, उदयगिरि-खण्डगिरि (उड़ीसा), पभोसा, राजगृह, रामनगर (अहिच्छत्र), उदयगिरि (साँची), देवगढ, दूबकुण्ड, ग्वालियर, बनागंज, बड़नगर, खजुराहो, और महोबा के नाम उल्लेखनीय हैं।

उदयगिरि—खण्डगिरि—उड़ीसा प्रान्त में भुवनेश्वर के पास की उक्त

दो पहाड़िया जैन तीर्थों के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्व की हैं। यहाँ से भारतीय लेखों में महत्वपूर्ण एक लेख (२) हाथी गुम्फा से प्राप्त हुआ है जो जैन सम्राट् खारवेल के इतिहास पर प्रकाश डालता है। उक्त लेख में लिखा है कि यहाँ आदिनाथ भगवान् की एक प्रतिमा थी जिसे मगध का राजा नन्द उठा ले गया था। इसका अर्थ यह हुआ कि नन्दकाल से ही यह स्थान एक जैन केन्द्र था। इस संग्रह में दो और लेख (३ और २४५) इस स्थान के दिये गये हैं। अन्तिम लेख सूचित करता है कि ११वीं शताब्दी में भी यह जैन तीर्थ था। इसका प्राचीन नाम कुमारी पर्वत था। यहाँ से और भी अनेक लेख मिले हैं। जिनकी प्रतिलिपि स्व० वेणीमाधव बरुआ ने ओल्ड ब्राह्मी इन्स्क्रिप्सन्स् नामक ग्रन्थ में दी है।

प्रभोसाः—इलाहाबाद के पास कौशाम्बी जैन और बौद्धों का एक प्राचीन तीर्थस्थान है। कौशाम्बी के पास ही प्रभास पर्वत नाम की एक पहाड़ी है जो प्राचीन काल से ही जैन तीर्थ रही है। इस स्थान के तीन लेख (६, ७ और ७५६) इस संग्रह में दिये गये हैं। प्रथम दो लेख वहाँ की प्राचीन दो गुफाओं से प्राप्त हुए हैं। इन लेखों की लिपि शुंगकालीन है। उनसे मालुम होता है कि अहिच्छत्र के अषाढसेन ने जो कि बहसतिमित्र (मगध नरेश) का मामा था, काश्यपीय अर्न्हतों के उपयोग के लिए ये गुफाएँ बनवायीं। काश्यप, भग० महावीर का गोत्र था। संभव है ये गुफाएं भग० महावीर के अनुयायी भिक्षुओं के लिए बनवायी गई थीं। तीसरा लेख १९ वीं शताब्दी का है। ये तीनों लेख इस बात को सिद्ध करते हैं कि यह स्थान प्राचीन काल से अब तक बराबर जैनों का मान्य तीर्थ है।

राजगृहः—यह स्थान जैन, बौद्ध और हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ है। इस स्थान के तीन जैन लेख (८७,८३९ और ७४३) इस संग्रह में दिये गये हैं। ले० नं० ८७ पाँचवें पर्वत वैभार की तलहटी में एक गुफा से प्राप्त हुआ है जिसे सोन मण्डार कहते हैं। यह लेख बड़े महत्त्व का है और इस प्रकार पढा गया है:—

१. निर्वाण लाभाय तपस्वियोग्ये शुभे गुहेऽर्हत्प्रतिमा प्रतिष्ठे

२. आचार्यरत्न मुनि वैरदेवः विमुक्तयेऽकारयद्दीर्घतेजाः ॥

जिसका भाव है कि किसी मुनि वैरदेव ने निर्वाण प्राप्ति के हेतु दो गुफाएं बनवायीं,

जन० कनिंघम ने आर्क्यॉ० स० रिपो० के प्रथम भाग में इसकी प्रतिलिपि छापी थी और टी० ब्लॉख महोदय ने इसे पढ़कर एपि० इण्डिका के ८ वें भाग में प्रकाशित कराया। ब्लॉख महोदय इसे लिपि विद्या की दृष्टि से तीसरी या चौथी शताब्दी का कहते हैं। इस लेख के आ० वैरदेव कौन थे यह ठीक तरह से नहीं कहा जा सकता। कुछ विद्वान् इसे श्वेताम्बर पट्टावलियों के वज्रस्वामी मानते हैं जिनका समय सन् ५७ ई० है[1]। हमारा अनुमान है कि ये वैरदेव ले० न० ६० (सन् ३६० के लगभग) के वीरदेव होना चाहिये जो कि मूलसंघ के आचार्य थे और जिनके सम्बध में लेख में 'श्रीमद् वीरदेवशासनाम्बरावभासनसहस्रकर' अर्थात् भग० महावीर के शासन रूपी आकाश को प्रकाशित करने वाला सूर्य, विशेषण दिया गया है। लेख की लिपिका समय ३ री ४ थी शताब्दी, हमें वैरदेव से वीरदेव का साम्य स्थापन करने को बाध्य करता था। यदि यह अनुमान ठीक है तो मानना होगा वीरदेव का प्रभाव उत्तर भारत में राजगृह की ओर और दक्षिण भारत में कन्नड प्रान्त में बराबर था।

इस स्थान के दो अन्य लेख १८ वीं शताब्दी के हैं जिनसे सिद्ध होता है कि यह स्थान जैनों का अविच्छिन्न रूप से तीर्थ रहा है।

राम नगरः—(अहिच्छत्र) से प्राप्त अनेकों लेखों में से केवल दो लेख (५३,८४३) इस सग्रह में दिये गये हैं। ले० नं० ८४३ के कोत्तरि शब्द से ज्ञात होता है कि यहाँ अनेकों जैन मन्दिरों के ढेर थे। अब भी वहाँ कोत्तरि के

१—जर० बिहार० रि० सो०, भाग ४६, अंक ४, पृष्ठ ४००–४१२, उमाकान्त प्रेमचन्द शाह—राजगिर की जैन गुफा सोन भण्डार के मुनि वैरदेव।

अपभ्रंश रूप में कतारि खेरा नामक छोटी पहाड़ी है। यह स्थान एक समय दिग० सम्प्रदाय का केन्द्र था[१]।

उदयगिरिः—(साँची) यहाँ की एक अकृत्रिम गुफा से एक लेख (६१) मिला है जो इस स्थान को जैन केन्द्र होने की सूचना देता है।

देवगढ़ से प्राप्त ले० नं० १२८ से ज्ञात होता है कि गुर्जर-प्रतिहार नरेश मिहिर भोज के समय इसका एक नाम लुअच्छगिरि था वहाँ शान्तिनाथ भगवान् का एक मन्दिर था। दो अन्य लेखों (६१७, ६१८) से जो कि १५ वीं शताब्दी के हैं, विदित होता है कि यहाँ मूलसंघान्तर्गत नन्दिसंघ मदसारद गच्छ, बलात्कार गण का अच्छा प्रभाव था।

११ वीं शताब्दी में दुबकुण्ड, काष्ठासंघ के लाटबागट गण का प्रमुख स्थान था। यह स्थान ग्वालियर से ७६ मील दक्षिण पश्चिम दिशा में है। इस क्षेत्र के आसपास कच्छवाहों (कच्छप घाट वंश) का राज्य था। सन् १०८८ ई० में महाराजाधिराज विक्रमसिंह कच्छवाहा ने यहाँ के एक जैन मन्दिर को दान दिया था। उस मन्दिर की स्थापना एक जैन व्यापारी साधु लाहड़ ने की थी जो जायसवाल वंश का था। उसे विक्रमसिंह ने श्रेष्ठि की पदवी दी थी। यहाँ काष्ठासंघ लाटबागट गण के प्रमुख गुरु देवसेन की पादुकाओं की स्थापना सन् १०६५ ई० में की गयी थी (२२८, २३५)।

ग्वालियर से प्राप्त दो लेखों (६३३, ६४०) से विदित होता है कि १५ वीं शताब्दी में तोमर वंशी राजाओं के काल में यह स्थान काञ्चीसंघ (काष्ठासघ का दूसरा नाम) माथुरान्वय, पुष्करगण के भट्टारकों का प्रमुख केन्द्र था। इन लेखो में उक्त संघ के कतिपय भट्टारकों के नाम दिये गये हैं।

बवागंज (मालवा) से प्राप्त १२ वीं शताब्दी से १५ वीं तक के तीन लेखों से विदित होता है कि यह प्रमुख जैन केन्द्रों में एक था। सन् ११६६ में

१—यहाँ से प्राप्त अनेकों लेख, अनेकान्त, वर्ष १० किरण ३-४ में प्रकाशित हुए में।

यहाँ एक प्रभावक जैन मुनि रामचन्द्र थे, जो राज्यमान्य मुनि (भूपतिवृन्दवन्दित-पदः) थे। ये सर्वसंघतिलक देवनन्दि मुनि के शिष्य थे जो कि राज्यमान्य लोकनन्दि मुनि के शिष्य थे (३७०, ३७१)। १५ वीं शताब्दी मे यह स्थान ग्वालियर के भट्टारकों के अधीन था (६४३)।

खजुराहो के जैन और हिन्दू मन्दिर भारतीय शिल्पकला के विशिष्ट नमूने हैं। यहाँ से प्राप्त अनेक लेखों में से केवल १२ मूर्तिलेख इस संग्रह में है इनमें कुछ लेखों से विदित होता है कि यह स्थान ग्रहपति वंश (गहोई वैश्यों) का प्रमुख केन्द्र था। यहाँ के सन् ९५५ के एक लेख से मालुम होता है कि यहाँ जिननाथ का एक प्रसिद्ध मन्दिर था जिसे चन्देल नरेश धंग के राज्य में पाहिल्ल नामक सेठ ने अनेक वाटिकायें बगीचे दान में दिए थे (१४७)।

इसी तरह महोबा भी चन्देल नरेशों के समय में एक जैन केन्द्र था। इस संग्रह में इस स्थान से प्राप्त सं० ११६९ से सं० १२२१ अर्थात् ५२ वर्ष के ८ मूर्ति लेखों से विदित होता है कि यहाँ जैन लोग निर्विघ्न रीति से सोत्साह प्रतिष्ठा आदि कराते थे। ले० नं० ३३७, ३४२ पर चन्देल नरेश मदन वर्म्म का नाम और ले० नं० ३६५ में परमर्दि का नाम एवं राज्य संवत्सर दिया हुआ है।

(आ) इस संग्रह में पश्चिम भारत के संग्रहीत लेखों को देखने से विदित होता है कि इस क्षेत्र में श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अनेक जैन केन्द्र थे जैसे आबू, सिरोही, अजमेर, अनहिलवाड, खम्भात, दोहद, दिलमाल, नड-लाई, नडोले, जैसलमेर, पालनपुर, बयाना आदि। गिरनार से प्राप्त २-३ लेख दिग० सम्प्रदाय के हैं, शेष बहुसख्य लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय के हैं। शत्रुञ्जय से ११८ सग्रहीत लेखों में दिगम्बर सम्प्रदाय का केवल एक लेख (७०२) है जिसमें मूलसंघ, सरस्वतीगच्छ बलात्कारगण कुन्दकुन्द अन्वय के भट्टारकों की पट्टावली दी हुई है। यहां सं० १६८६ में अहमदाबाद के संघपति हुंबड़ जातीय श्री रत्नसी के वशजों ने, जब कि शाहजहाँ का राज्य प्रवर्तमान था, श्री शान्तिनाथ की प्रतिमा स्थापित की थी।

(इ) दक्षिण प्रान्त के प्रमुख जैन तीर्थों और केन्द्रों में श्रवणवेल्गोल, पोदनपुर, पलासिका, पुलिगेरे, कोपण, हनसोगे, हुम्मुच, बल्लिगाम्वे, कुप्पटूर, हलेबीड़, मलेयूर, मुल्लूर, मुंगलूर, अंगड़ी, वन्दालिके, आवलि, उद्रि, कारकल, गेरसोप्पे आदि प्रसिद्ध थे।

श्रवण वेल्गोल—यहाँ के सम्बन्ध में विशेष कुछ नहीं कहना है क्योंकि उसके माहात्म्य को प्रकट करने के लिए जैन शिला लेख के ५०० शिलालेख प्रथम भाग के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं। इस स्थान की परम्परा का सम्बन्ध अनेक विद्वानों के मत से श्रुतकेवली भद्रवाहु और सम्राट् चन्द्रगुप्त से है। कुछ विद्वानों के मत से उज्जयिनी के द्वितीय भद्रवाहु और उनके शिष्य गुप्तिगुप्त से है। जो भी हो पर जै० शि० सं० प्रथम भाग के प्रथम लेख का साधारणतः अर्थ करने से यहां की परम्परा का सम्बन्ध भद्रवाहु द्वितीय से ही मालुम होता है।[1]

---

१. 'जैन परम्परानो इतिहास' के लेखक विद्वान् मुनि श्री दर्शन विजय जी आदि (त्रिपुटी महाराज) ने आर्य सिंहगिरि के उत्तराधिकारी आर्य वज्रस्वामी और भद्रवाहु द्वितीय के जीवन चरित में अनेक प्रकार का साम्य दिखलाया है और संभावना प्रकट की है कि यदि दोनों आचार्यों को एक मान लिया जाय तो श्वेताम्बर दिगम्बर इतिहास संबंधी अनेक गुथिया सरल रीति से उत्कल जा सकती हैं। इन वज्रस्वामी का जन्म वीर संवत् ४९६ में, दीक्षा काल वीर सं० ५०४ में युगप्रधान पद ५४८ में और सं० ५८४ में स्वर्गगमन हुआ था। वे लिखते हैं—दिगम्बर ग्रन्थों में इस अरसे में द्वितीय भद्रवाहु होने का उल्लेख है जिनके दूसरे नाम वज्रयशा (तिलोयपण्णत्ति) महायशा (महापुराण), यशोवाहु (उत्तर पुराण, हरिवंश पुराण), जयवाहु (श्रुतावतार), वज्रर्षि (हरिवंश पुराण स० १ श्लोक ३३), महायशा (आवश्यक निर्युक्ति) मिलते हैं। श्रवणवेल्गोल के चन्द्रगिरि स्थित एक लेख में उल्लेख है कि श्रुतकेवली भद्रवाहु की परम्परा में महानिमित्तज्ञ भद्रवाहु ने उज्जयिनी में रहते हुए १२ वर्षीय दुष्काल को आते देख

दक्षिण कर्नाटक की ओर विहार किया और ७०० शिष्यों के साथ इस पहाड़ी पर आये। उन्होंने यहाँ अपने समाधिमरण की आराधना के लिए केवल एक शिष्य को साथ रख शेष को विसर्जित कर दिया इत्यादि (पृष्ठ २८४–२९२)।

आगे मुनिश्री लिखते हैं कि आर्य वज्रस्वामी ने वि० स० १७४ में अपने शिष्य संघ के साथ बारह वर्ष के दुष्काल में दक्षिण जाकर एक पहाड़ी के ऊपर अनशन किया और समाधि पूर्वक स्वर्गगमन किया। इस भूमि की इन्द्र ने रथ के द्वारा तीन प्रदक्षिणा की इससे इस पहाड़ का नाम 'रथावर्तगिरि' पड़ा।

'इस रथावर्तगिरि' का असली नाम क्या था और 'वर्तमान में उसका नाम क्या है, इस बात का कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। किन्तु हमें लगता है कि आज जो इन्द्रगिरि (विन्ध्यगिरि) के रूप में पहाड़ी बोली जाती है वही वास्तव में रथावर्त गिरि है, और उसके ऊपर जो विशालकाय मूर्ति है वह आर्य द्वितीय भद्रबाहु स्वामी याने वज्रस्वामी की मूर्ति है।

आ० वज्रस्वामी ने अनशन के लिए प्रथम एक पहाड़ी पसन्द किया था अपने एक बालमुनि को भी छोड़ने के लिए उन मुनि को वहीं रख उस पहाड़ी का त्याग कर सामने की दूसरी पहाड़ी पर अनशन किया और बालमुनि ने पहली पहाड़ी पर अनशन किया।

इसके पश्चात् उनके प्रशिष्य आचार्य चन्द्रसूरि यहीं पधारे थे और उनके उपदेश से उसी पहाड़ी की विशाल शिला पर आ० वज्रस्वामी की विशाल काय प्रतिमा बनी। ये दोनों पहाड़ियाँ आज इन्द्रगिरि और चन्द्रगिरि नाम से प्रसिद्ध हैं, इत्यादि।

(देखो, जैन परम्परानो इतिहास, भा० १, लेखक त्रिपुटी महाराज, प्रकाशक–श्री चारित्र स्मारक ग्रन्थ माला, अहमदाबाद, १९५२, पृष्ठ ३३७-३३९)

जो भी हो पर 'अनेकग्रामशतसंख्यं मुदित जन धन कनक सस्य गोमहिषाजावि कुल समाकीर्णं जनपदं प्राप्तवान्" उल्लेख जिस स्थान के लिए किया गया है वह पुन्नाट देश के उत्तरी भाग के सिवाय और कोई दूसरी जगह नहीं है।

पोदनपुर—तीर्थ के सम्बन्ध में हमें ले० नं० ३६५[1] (सन् ११८०) से विदित होता है कि भरत चक्रवर्ती ने पोदनपुर के समीप ५२५ धनुष प्रमाण वाहुवलि की मूर्ति प्रतिष्ठित करायी थी। कुछ काल बीतने पर मूर्ति के आसपास की भूमि कुक्कुट सर्पों से व्याप्त और बीहड़ वन से आच्छादित होकर दुर्गम्य हो गयी थी। राच-मल्ल नृप के मंत्री चामुण्ड राय को वाहुवलि के दर्शन की अभिलाषा हुई पर यात्रा के हेतु जब वे तैयार हुए, तब उनके गुरु ने उनसे कहा कि वह स्थान बहुत दूर और अगम्य है। इस पर चामुण्ड राय ने 'वैसी मूर्ति की प्रतिष्ठा कराने का विचार किया' और उन्होंने वैसा कर डाला।

कहा जाता है कि यह पोदनपुर निजाम हैदराबाद प्रान्त के निजामाबाद जिले का 'बोधन' नामक गाँव है जो कि १० शताब्दी के पूर्वार्ध मे राष्ट्रकूट नरेश इन्द्र चतुर्थ की राजधानी था और वहां वैष्णवों का बोलबाला था तथा वहाँ एक विशाल वैष्णव-मन्दिर भी बनवाया गया था। यहाँ अब भी जैन एव ब्राह्मण पुरातत्त्व की सामग्री मिलती[2] है।

पलासिका:—हलसी या हलसिगे (जिला बेलगाव) से प्राप्त ६ लेखों से ज्ञात होता है कि पाचवी शताब्दी ईस्वी में कदम्बों के राज्यकाल में पलासिका एक प्रमुख जैन केन्द्र था। यहां यापनीय, निर्ग्रन्थ एवं कूर्चक ये तीनों सम्प्रदाय समान भाव से आदृत थे। ले० नं० ६६ में लिखा है कि कदम्ब नरेश काकुस्थवर्मा ने अपने जैन सेनापति श्रुतकीर्ति को धार्मिक कार्य के लिए एक क्षेत्र दान मे दिया था। ले० नं० ६६ के अनुसार कदम्ब मृगेशवर्मा ने अपने पिता की स्मृति में

---

१. जैन शि० ले० संग्रह, नं० ८५.
२. सालेतोरे, मेडीवल, जैनिज्म, पृष्ठ १८६.

यहाँ एक जैन मन्दिर बनाकर यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चकों को दान में दिया था। इसी तरह ले० नं० १०० उल्लेख करता है कि अष्टाह्निका पर्व मनाने के लिए कदम्ब नरेश रविवर्मा और अन्य लोगों ने पुरुखेटक गाव यापनीय संघ को दिया था। ले० नं० १०१-१०२ के अनुसार यहाँ कदम्ब रविवर्मा और उसके छोटे भाई भानुवर्मा द्वारा जिन भगवान् की पूजा के लिए दान दिये गये थे। ले० नं० १०३ से विदित होता है कि कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने पलासिका में सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर में अष्टान्हिका पूजा के लिए और सर्व संघ के भोजन के लिए कूर्चकों के वारिषेणाचार्य संघ के लिए चन्द्रक्षान्त को प्रमुख बनाकर दान दिया था। इसी तरह ले० नं० १०४ के अनुसार अहिरिष्ट नामक श्रमण संघ के लिए सेन्द्रक राजा भानुवर्मा की प्रार्थना पर हरिवर्मा ने दान दिया था। इस तरह कदम्ब राजाओं की ४-५ पीढी तथा पलासिका यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चक सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र रहा है।

पुलिगेरे (लक्ष्मेश्वर):—इस स्थान के सातवीं से दशवीं शताब्दि ईस्वी के संग्रहीत पाँच लेखों से मालुम होता है यह एक जैन तीर्थ था। यहाँ शखवसदि नामक विशाल जैन मन्दिर था जिसकी छत ३६ खम्भों पर थमी थी। इस वसदि के नाम से इस स्थान का नाम शखतीर्थ पड़ा था। ले० नं० १०६ से विदित होता है कि सेन्द्रक राजा दुर्गशक्ति ने शंखजिनेन्द्र की नित्य पूजा के लिये कुछ भूमि दान में दी थी। ले० नं० १११ के अनुसार चालुक्य विनयादित्य सत्याश्रय ने इस मन्दिर को अपने राज्य के ५ वें या ७ वें वर्ष में माघ पूर्णिमा के दिन दान दिया था। ले० नं० ११३ में उल्लेख है कि चालुक्य वंशी विजयादित्य सत्याश्रय ने अपने राज्य के ३४ वें वर्ष में इस मन्दिर के लिए दान दिया था और ले० नं० ११४ से ज्ञात होता है कि सन् ७३४ ई० में विक्रमादित्य ने शखतीर्थ वसदि का जीर्णोद्धार कराया था। यहाँ शंख वसदि के अतिरिक्त एक और जिनालय था, जिसका नाम धवल जिनालय था। ले० न० १४९ इस तीर्थ के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। उक्त लेख के अनुसार सन् ९६८ में इस तीर्थ का विशाल रूप हो गया था। यहाँ गंगराजा मारसिंह गङ्ग-

कन्दर्प ने एक जिनालय बनवाया जो कि शंख वसदि तीर्थ वसदि मण्डल के लिए मण्डन स्वरूप था। उसका नाम उक्त राजा के नाम पर गङ्गकन्दर्प भूपाल जिनेन्द्र मन्दिर रखा गया और उसके लिए दान देते समय सीमा के रूप मे अनेक जैन एवं अजैन वसदियों का उल्लेख है।

कोपणः—यह स्थान श्रवण वेल्गोल के बाद बड़े महत्त्व का जैन तीर्थ रहा है। शिलालेखों के पर्यवेक्षण से प्रतीत होता है कि यह ७ वीं से लेकर १६ वीं शताब्दी तक जैनों का महातीर्थ रहा है। प्रस्तुत संग्रह में कोपण के सम्बन्ध के ११ वीं शताब्दी के पहले के लेख सग्रहीत नही पर उसके बाद के जो भी लेख हैं उनमें उसकी प्रसिद्धि का ही उल्लेख है। ले० नं० १६८ से विदित होता है कि सन् १००० के लगभग कोपण तीर्थ के कुछ यात्री श्रवण वेल्गोल आये थे। ले० न० २९९ में लिखा है कि जैनों के सहस्रों तीर्थों मे प्रमुख तीर्थ कोपण था। ले० न० २५५ में उल्लेख है कि जैन सेनापति गंगराज ने अपनी अनवधिक दानशीलता से गङ्गवाडि ९६००० को कोपण के समान चमका दिया था। यही बात ले० न० ३०१ और ४११ से पुष्ट होती है। ले० न० ३०४ के अनुसार गंगराज के ज्येष्ठ भ्राता बम्मदेव के पुत्र ऐच दण्ड-नायक ने कोपण वेल्गोल आदि स्थानों में अनेक जिन मन्दिर निर्माण कराये थे। उसी लेख में कोपण को 'कोपण आदि तीर्थदलु' अर्थात् एक प्रमुख या आदि तीर्थ के रूप में माना गया है। सन् ११५९ (३५४) में सेनापति हुल्ल ने कोपण महातीर्थ में २४ जैन साधुओं के संघ के लिए अक्षयदान दिया था। ले० न० ४५१ में उल्लेख है कि ऐचण ने वेलगवत्तिनाड् में एक ऐसा जिनालय बनवाया था जैसा उस प्रदेश में और कहीं नहीं था और इस तरह उसने वेलगवत्तिनाड को कोपण के समान बना दिया।

१६ वीं शताब्दी में भी कोपण का महत्व कुछ कम न हुआ था। इस शताब्दी के महान् विद्वान् वादि विद्यानन्द के विषय में ले० न० ६६७ में उल्लेख है कि इन्होंने कोपण तथा अन्य दूसरे तीर्थों मे महोत्सव करके विद्यानन्द नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की।

डा० राइस महोदय कोपण को निजाम हैदराबाद के दक्षिण-पश्चिम में स्थित वर्तमान कोप्पल को मानते हैं। इस विषय में अब सन्देह नहीं है।

चिक्क हनसोगे:—जैन तीर्थों में चिक्क हनसोगे का नाम भी प्रमुख था। इस संग्रह के लेखों से प्रतीत होता है कि उक्त स्थान ११ वीं शताब्दी के पहले से भी जैन धर्म का केन्द्र था। ले० नं० २४० से ज्ञात होता है कि वहां एक समय ६४ बसदियां थीं जो कि अब सब ध्वस्त हालत में हैं पर उन्हें देखने से मालुम होता है कि वे चालुक्य शिल्प की शैली में सुन्दर ढंग से निर्मित हुई थीं। ले० नं० २२३ (लगभग सन् १०८० ई०) से विदित होता है कि दामनन्दि भट्टारक के अधिकार क्षेत्र में पनसोगे के चङ्गाल्व तीर्थ की सारी बसदियाँ थीं, अब्बेय बसदि तथा तोरेनाडु की बसदि भी उनके प्रधान शिष्यगण के अधिकार में थी। ले० नं० १९६, २४० और २४१ से उन बसदियों का एक विचित्र इतिहास मालुम होता है कि इन बसदियों के आदि प्रतिष्ठापक मूलसघ, देशीगण, होत्तगे गच्छ के रामस्वामी थे जो कि दशरथ के पुत्र, लक्ष्मण के भाई सीता के पति और इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न हुए थे। पीछे इन्हीं बसदियों को दान देने वाले क्रमशः शक, नल, विक्रमादित्य, गग और चङ्गाल्व थे। सन् १०६० के लगभग यहां चंगाल्व नरेश राजेन्द्र चोल नन्नि चंगाल्व ने कुछ बसदियों का निर्माण कराया था।

हनसोगे के जैन गुरुओं का बड़ा प्रभाव था। इनकी एक शाखा हनसोगे बलि नाम से प्रसिद्ध थी। सन् १३०३ में हनसोगे के बाहुबलि मलधारि देव के शिष्य पद्मनन्दि भट्टारक ने होन्नेयन हल्लि मे गंध कुटी निर्माण करायी थी तथा १५ गद्याण का दान भी दिया था (५५१)। पन्द्रहवीं शताब्दी के लगभग कारकल के शासकों को जैन धर्म के प्रभाव मे लाने वाले इसी स्थान के गुरु थे। हनसोगे के ललितकीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से शक स० १३५३ फाल्गुन शुक्ल १२ के दिन सोमवश के भैरवेन्द्र के पुत्र पाण्ड्य राय ने कारकल में बाहुबलि की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित करायी थी (६२४)।

हुम्मचः—शान्तर् कुल के संस्थापक जिनदत्तराय के समय (६ वीं शता०) से यह बराबर महत्व पूर्ण जैन तीर्थ रहा है। इस संग्रह के लगभग २२ लेखों से यह बात भली भाँति सिद्ध होती है। यहां की प्राचीन बसदि का नाम पालियक्क बसदि था जो कि सन् ८७८ के लगभग निर्मापित हुई थी। ले० नं० १४५ से से ज्ञात होता है कि तोलापुरुष शान्तर की पत्नी पालियक्क ने अपनी माता की मृत्यु पर उसे पाषाण बसदि के रूप में खड़ा किया था और इसके लिए बहुत से दान दिऐ थे। सन् ८९७ के ले० नं० १३२ में उल्लेख है कि तोलापुरुष विक्रमादित्य ने मौनिसिद्धान्त भट्टारक के लिए एक पाषाण बसदि बनवायी। सन् १०६२ के दो ले० नं० १९७ और १९८ क्रमशः सूले बसदि और पार्श्वनाथ बसदि से प्राप्त हुए हैं। प्रथम लेख में पट्टणस्वामि नोकय्य सेट्टि के दानों का उल्लेख है और दूसरे में वीर शान्तर की पत्नी चागलदेवी के दान कार्यों की प्रशंसा है। सन् १०६५ के एक लेख (२०३) में उल्लेख है कि त्रैलोक्यमल्ल शान्तर ने अपने गुरु कनकनन्दि देव को यहां दान दिया था। सन् १०७७ के ५ लेख उसी तीर्थ से प्राप्त हुए हैं जिनमें से ले० नं० २१२ में तैलह शान्तर के दानों और पट्टणस्वामि नोकय्य सेट्टि की प्रशंसा है। ले० नं० २१३ बहुत ही विशाल लेख है जो कि पञ्चकूट बसदि के प्राङ्गण में एक बड़े पाषाण पर उत्कीर्ण है। पञ्चकूट बसदि प्रसिद्ध , उर्वीतिलक जिनालय का ही नाम है। इस लेख के अनुसार चट्टलदेवी ने अपने पति एवं पुत्रादि की याद में तालाब कुआं, बसदि, मन्दिर, नाली, पवित्र स्नानागार, सत्र, कुंज आदि प्रसिद्ध धर्म एवं पुण्य के कार्यों को सम्पन्न कराया था। चट्टलदेवी शान्तरकुल और गंगवंश से सम्बन्धित कांची की रानी थी। लेख में शान्तर वंश और गंग वंश की वंशावली तथा द्रविड़ संघ, अरुङ्गलान्वय नन्दिगण की पट्टावली भी दी हुई है। इस लेख के अनुसार पंचकूट जिनालय का स्थापना काल शक सं० ९९९ था। ले० नं० २१४ में पंचकूटबसदि के निर्माण कार्य का विशेष इतिहास दिया गया है और मन्दिर के प्रतिष्ठाचार्य श्रेयास देव की (ले० नं० २१३ के समान ही) परम्परा दी गई है। ले० नं० २१५ में नन्नि शान्तर, राजा ओडुग और चट्टलदेवी आदि

नियों की तथा हेमसेन (कनकसेन) दयापाल, पुष्पसेन, वादिराज, अजितसेन आदि आचार्यों की प्रशंसा की गई है। ले० नं० २२६ में शान्तर राजाओं के दान का उल्लेख है। ले० नं० ३२६ में उल्लेख है कि सन् ११४७ में विक्रम शान्तर की बड़ी बहिन पम्पादेवी ने उर्वीतिलक जिनालय के समान ही शासन देवता की मूर्ति निर्माण करायी थी, तथा उसने उसके भाई और पुत्री ने पञ्च-बसदि के उत्तरीय पट्टसाले को बनवाया था। ले० नं० २३८, ४६७, ४६४, ४६७, ५००, ५०३, ५४२, तथा ५६७ समाधिमरण के स्मारक लेख हैं। ले० नं० ६६७ बहुत विशाल है और विजयनगर साम्राज्य के प्रसिद्ध विद्वान् वादि विद्यानन्द तथा तत्कालीन राजाओं पर उनके प्रभाव का सुन्दर वर्णन करता है।

बल्लिगाम्बे :—के भी जैन तीर्थ होने के अनेक लेख प्रमाण हैं। यहाँ सन् १०४८ में जलाहुति शान्तिनाथ से सम्बद्ध बलगारगण के मेघनन्दि भट्टारक के शिष्य केशवनन्दि अष्टोपवासि भट्टारक की बसदि थी। इस बसदि के लिए उक्त सन् में महामण्डलेश्वर चामुण्डराय ने कुछ भूमि का दान दिया था (१८१)। यहाँ सन् १०६८ में जैन सेनापति शान्तिनाथ ने काष्ठ से बनी हुई प्राचीन मल्लिकामोद शान्तिनाथ तीर्थंकर की बसदि को पाषाण की बनवाया था तथा इस मन्दिर के निमित्त वहाँ माघनन्दि भट्टारक को कुछ जमीन दान में दी थी (२०४)। इस लेख में तथा इससे पहले के ले० न० १८१ में उल्लेख है कि यहाँ सभी धर्मों के—जिन, विष्णु, ईश्वर आदि के मन्दिर थे। ले० नं० २०४ की अन्तिम पंक्तियों से यह भी विदित होता है जगदेकमल्ल (जयसिंह तृतीय-जगदेकमल्ल) तथा चालुक्य गग पेर्म्मानडि विक्रमादित्य ने उक्त बसदि को पहले कुछ जमीने दान में दी थीं। ले० नं० २१७ (सन् १०७७) से मालुम होता है कि यहाँ के चालुक्य गग पेर्म्मानडि जिनालय को विक्रमादित्य चतुर्थ ने सेन गण के आचार्य रामसेन को एक गाँव दान में दिया था। सन् ११८६ ई० करीब का एक लेख (४२०) समाधि मरण का स्मारक है। ले० नं० ४५३ और ४५४ (सन् १२०५ ई०) में एक जैन बसदि के लिए एक जैन राजा (सम्भव है रट्ट वंश के राजा)—द्वारा दान का उल्लेख है। इन दोनों लेखों में रट्टवंश के पिछले

राजाओं की वंशावली दी गई है। इस सबसे यही मालुम होता है कि बल्लिगाम्वे ११–१२ वीं शताब्दी के प्रमुख जैन केन्द्रों में एक था।

कुप्पटूर:—के सम्बन्ध में संगृहीत कतिपय लेखों से ज्ञात होता है कि यह स्थान ११ वीं से १५ वीं शताब्दी तक एक महत्त्वपूर्ण जैन केन्द्र था। ले० नं० २०६ से विदित होता है कि कदम्ब राज्ञी मलाल देवी ने सन् १०७७ में पार्श्वदेव चैत्यालय की स्थापना की थी और पद्मनन्दि भट्टारक ने उसकी प्रतिष्ठा करा के उसका नाम वहां के ब्राह्मणों के नाम पर 'ब्रह्म जिनालय' रखा था। यहीं देशी गण के आचार्य देवचन्द्र के शिष्य श्रुत मुनि थे जिन्होंने एक मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था, और सन् १३६७ में समाधिगत हुए थे (५६३)। ले० नं० ५५५ से विदित होता है कि सन् १४०२ में कुप्पटूर एक प्रसिद्ध स्थान था। विजय नगर के सम्राट् हरिहर के समय यहां एक जैन मन्दिर था, जिसमें कदम्बों का एक शासन पत्र मिला था। सन् १४०८ के ले० नं० ६०५ से विदित होता है कि कुप्पटूर नागर खण्ड का तिलक स्वरूप था वहां अनेक जैन रहते थे, तथा अनेक जैन चैत्यालय थे। वहा का शासक जैन धर्मावलम्बी गोपमहाप्रभु था।

अङ्गडि—यह होय्सल वंश का उत्पत्ति स्थान था। इसका दूसरा नाम सोसेवूर था। १० वीं शताब्दी के मध्य से इसके जैन केन्द्र होने के अनेक प्रमाण मिलते हैं। ले० नं० १६६ से ज्ञात होता है कि यहां द्रविड़ संघ के प्रसिद्ध मुनि विमलचन्द्र पण्डित देव थे जिन्होंने सन् ६६० में लगभग संन्यास विधि से मरण किया था और उनकी शिष्याओं ने इस उपलक्ष्य में स्मारक खड़ा किया था। इसी तरह ले० नं० १७८ वज्रपाणि मुनि के समाधिमरण का स्मारक है। ये वज्रपाणि होय्सल नरेश नृपकाय राच मल्ल के गुरु थे। ले० नं० १६४, २०० २४२ भी समाधिमरण के स्मारक हैं। ले० नं० १८५ से मालुम होता है कि ये वज्रपाणि मुनि सरस्थ गण के थे। उनकी शिष्या जाकियब्बे ने कुछ जमीनें वहां के मकर जिनालय के लिए छोड़ दी थीं। इस लेख के समय विनयादित्य होय्सल का राज्य प्रवर्तमान था। ले० नं० २०१ में पाषाणशिल्पियों के प्रधान, माणिक होय्सलाचारि द्वारा निर्मित एक बसदि का उल्लेख है। यह बसदि मुल्लूर के गुणसेन

पण्डितदेव को सौंप दी गई थी। इसी तरह ले० नं० ३६७ (सन् ११६४) में उल्लेख है कि यहाँ एक बसदि पट्टणसामि नागसेट्टि के पुत्र ने बनवायी थी जिसके लिए सन् ११६४ में वीर विजय नरसिंह देव ने दान दिया था। सन् ११-७२ के एक लेख (३७८) में एक होन्नगिय बसदि के लिए किसी कम्बरस नामक व्यक्ति द्वारा दान का उल्लेख है।

बन्दालिके:—इस स्थान की तीर्थ रूप में प्राचीनता यहाँ से प्राप्त सन् ६१८ (ठीक ६११) के एक लेख (१४०) से विदित होती है जहाँ इसे बन्दनिके तीर्थ रूप में लिखा है। उक्त सन् में नागर खण्ड सत्तर की शासिका जक्कियब्बे ने सल्लेखना पूर्वक देहत्याग किया था। सन् १०७५ के एक लेख (२०७) में भी इसका तीर्थ के रूप में उल्लेख है। वहाँ शान्तिनाथ बसदि के लिए चालुक्य नृप सोमेश्वर ने कुछ भूमि दान में दी थी। ले० नं० ४०८ से ज्ञात होता है कि कदम्ब वंश की एक शाखा की अधीनता में इस स्थान की कीर्ति एवं यहां के शान्तिनाथ जिनालय की प्रसिद्धि जगह जगह फैल रही थी। इसी लेख के अनुसार एक बार यहा के जिनालय को देखने होय्सल सेनापति रेचण आया था। उसने इस मन्दिर के दर्शन से प्रसन्न होकर पूजा के खर्च के लिए एक गाँव दान में दिया था। इसी शान्तिनाथ जिनालय में सन् १२०० के लगभग सोमलदेवी नामक महिला ने समाधि मरण किया था (४३३)। ले० नं० ४३८ के अनुसार उक्त बसदि के लिए तीन गाँव दान में दिये गये थे। ले० नं० ४४८ में बन्दालिके (बान्धव नगर) की समृद्धि एवं सौन्दर्य का अच्छा वर्णन है। यहाँ एक सेट्टि ने शान्तिनाथ देव के लिए एक मण्डप खड़ा किया था। ललितकीर्ति सिद्धान्त के शिष्य शुभचन्द्र पण्डित ने इस तीर्थ का प्रबन्ध (पारुपत्य) अपने हाथ लेकर उसे समुन्नत किया था एव नागर खण्ड सत्तर के सभी प्रमुख व्यक्तियों ने, प्रजा ने, और किसानों ने अनेक दान दिये थे और होय्सल सेनापति मल्ल ने उक्त क्षेत्र की रक्षा की थी। उक्त जिनालय के प्रबन्धक शुभचन्द्र देव ने सन् १२१३ में सन्यासपूर्वक देहत्याग किया था (४५६)।

उद्धरे (उद्रि):—इस तीर्थ के १२ वीं से १४ वीं शताब्दी के ही लेख इस संग्रह में हैं जिनसे मालुम होता है कि यहाँ प्रसिद्ध तीन वसदियाँ थीं—पञ्च वसदि, कनक जिनालय एवं एरग जिनालय। सन् ११२९ में यहाँ का शासक गंगनरेश मारसिंह का पुत्र महामण्डलेश्वर एक्कलरस था उसके सेनापति सिंगण का विरुद जैनचूडामणि था (२९१)। यह एक्कलरस नाना देशों के विद्वानों और कवियों के लिए कर्ण के समान दानी था। वह वहाँ की सारी प्रवृत्तियों का संचालक था। उसकी फुआ सुग्गियब्बिरसि ने यहाँ पञ्चवसदि में रहने वाले साधुओं के लिए दान दिया था (३१३)। एक दूसरी महिला कनकब्बिरसि ने वहाँ बहुत से दान दिये (३१३)। इसका अनुकरण कर दूसरी महिलाओं ने भी दान दिये थे। राजा एक्कल ने कनक जिनालय को भूमि दान दिया था। (३१३)। सन् ११९८ के एक लेख (४३१) में उल्लेख है कि होय्सल सेनापति महादेव दण्डनाथ ने वहाँ एरग जिनालय नाम का एक विशाल जिनालय बनवाया था। उसने उक्त मन्दिर के लिए अनेक दान भी दिये थे। इसी लेख मे लिखा है कि उद्धरे वनवासी देश के शासकों के रक्षण और कोष भवन के रूप में अद्वितीय स्थान था। सन् १३८० के एक लेख (५७९) से विदित होता है कि इस स्थान में विजयनगर नरेश हरिहर राय द्वितीय के समय में बैचप नामक एक जैन वीर रहता था। उसने अपने देश को अतातायियों से बचाने के लिए उनसे युद्ध किया और उन्हें परास्त करने में अपने जीवन की बलि दे दी। ले० नं० ५९९ मे बैचप के पुत्र सिरियण्ण की जिनधर्म भक्ति का और उद्धरे की महिमा का वर्णन है। सन् १४०० में सिरियण्ण ने समाधि विधि से देह त्याग किया था। चौदहवीं शताब्दी में उद्धरे अति समुन्नत एवं प्रख्यात स्थान था, यहाँ तक कि इस स्थान के आचार्य ने अपने वंश का नाम उद्धरे वंश रख लिया था। यहाँ के आचार्यों मुनिभद्र देव ने हिसुगल वसदि बनवायी थी तथा मुलगुन्द के जिनेन्द्र मन्दिर का विस्तार कराया था। ले० नं० ५८८ उनके समाधिमरण का स्मारक है।

हलेबीड:—जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण केन्द्र होय्सलों की राजधानी हलेबीड

था। जिसका कि दूसरा नाम उक्त वश के लेखों मे दोरसमुद्र या द्वारावती मिलता है। प्रस्तुत सग्रह मे इस स्थान का पुराना लेख सन् १११७ के लगभग का (२६३) है जो कि विष्णुवर्धन नृप के समय का है। इसमें जैन मत्री गगराज के कार्यों की बड़ी प्रशसा है। सन् ११३३ के ले० न० ३०१ मे विष्णुवर्धन की दिग्विजय का, तथा साथ में सेनापति गंगराज द्वारा अगणित जैन मन्दिरों के जीर्णोद्धार कार्यों का उल्लेख है। गंगराज के पुत्र बोप्प ने दोर समुद्र में पार्श्वनाथ वसदि का निर्माण कराया था और अपने पिता की स्मृति में पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की थी। राजा विष्णुवर्धन को दैवयोग से इसी अवसर पर युद्ध विजय, पुत्रोत्पत्ति और सुख समृद्धि मिली थी। उसने इस मागलिक स्थापन को ही उक्त बातों में निमित्त मान बडी प्रसन्नता से देवता का नाम विजयपार्श्व एवं पुत्र का नाम विजय नारसिंह देव रखा और जावगल नामक गाँव तथा अन्य प्रकार के दान दिये। उक्त लेख से यह भी मालुम होता है कि मन्दिर के पुरोहित नयकीर्ति सिद्धान्तदेव को तेली दास गौंड ने भूमिदान दिया तथा उसने और राम गौण्ड ने उत्तरायण संक्रमण में बहुत से दान दिए। सन् ११६६ के एक लेख (४२६) में यहाँ की शान्तिनाथ वसदि के लिए कुछ किसानों द्वारा गाँव एवं तालाबों के दान का तथा वसदि के आचार्य, स्थानीय किसान वर्ग, एव गाँव के ६० कुटुम्बों द्वारा दान की रक्षा का उल्लेख है। ले० नं० ४६६ के अन्तर्गत दो लेखों का संकलन हुआ है। पहले लेख में होय्सल नरसिंह तृतीय द्वारा जीर्णोद्धार कार्य का तथा दूसरे में उक्त राजा द्वारा अपने उपनयन संस्कार के समय दान का उल्लेख है। सन् १२७४ के एक लेख (५१४) में वालचन्द्र पण्डित देव के चमत्कार पूर्ण समाधि मरण का वर्णन है। उनके स्मारक रूप में भव्य लोगों ने उनको तथा पच परमेश्वर की प्रतिमायें बनाकर प्रतिष्ठित की थीं। इसी तरह ले० न० ५२४ (सन् १२७९) में उक्त वालचन्द्र पण्डितदेव के श्रुतगुरु अभयचन्द्र महासैद्धान्तिक के समाधिमरण का उल्लेख है। ये अभयचन्द्र अनेक शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित थे। इसी तरह इस लेख के २० वर्ष बाद वालचन्द्र पण्डित देव के प्रधान शिष्य रामचन्द्र मलधारि देव के समाधिमरण

का अनोखा वर्णन है (५४८)। ले० नं० ५४९ में एक अद्भुत सूचना है। उसमें उल्लेख है कि वहाँ से ईशान दिशा की ओर १५ बिलस्त के अन्तर पर शान्तिनाथ देव जिनकी ऊँचाई ९ बिलस्त है, जमीन के अन्दर गड़े हैं, कोई भव्य पुरुष उनको बाहर निकालकर उनकी प्रतिष्ठा कर पुण्य लाभ ले। सन् १६३८ के महत्वपूर्ण एक लेख (७१०) में जैन और शैवों की एकता तथा परधर्म सहिष्णुता का वर्णन है।

मलेयूर.—चामराजनगर तालुके में जैन धर्म का एक मजबूत गढ़ मलेयूर था। यहाँ के कनकाचल पर्वत पर अनेक वसदियाँ थीं। सन् ११८१ में यहाँ की पार्श्वनाथ वसदि के लिए अच्युत वीरेन्द्र शिक्यप वैद्य की पत्नी चिक्कतायी ने पूजा प्रबन्ध के लिए, मुनियों के नित्यदान के लिए और हमेशा शास्त्रदान के लिए किन्नरीपुर ग्राम को दान में दिया था (४०१)। यहाँ के १४ वीं से लेकर १९ वीं शताब्दी तक के १० लेखों से विदित होता है कि यहाँ अनेक वसदियाँ थीं।

आवलि नाड:—सोराब तालुके के अनेकों जैन केन्द्रों में प्रसिद्ध केन्द्र आवलिनाड् (हिरिय आवलि) था। मध्य युग में इस स्थान के अनेको सामन्तों ने, उनकी पत्नियों ने तथा नगरवासियों ने अपने उत्साहपूर्ण धर्मसेवन से इस स्थान को अमर बना दिया था। जैनधर्म की दृष्टि से उस स्थान का महत्त्व यद्यपि १२ वीं शताब्दी में भी था (२८६, ३२२) पर विशेषकर यहाँ १४ वीं शताब्दी के मध्य से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रथम दशकों के अनेक लेखों से, जो कि इस संग्रह में दिये गये हैं, विदित होता है कि यहाँ जैन धर्म की धारा अच्छी तरह प्रवाहित थी। इन लेखों में अधिक सख्या समाधिमरण के स्मारक लेखों की है। इन लेखों से ज्ञात होता है कि यहाँ के सामन्त आवलि प्रभु या आवलि महाप्रभु कहलाते थे और अपने जीवन के अन्तिम क्षणों को सुधारने में कितने जागरूक रहते थे।

तवनिधि:—सोराब तालुके का यह स्थान भी एक जैन तीर्थ था। यहाँ से अनेकों जैन लेख मिले हैं पर यहाँ केवल ६ ही लेख संगृहीत हैं जो कि सब समाधिमरण के स्मारक हैं जिनसे ज्ञात होता है कि ऐसे स्थानों में समाधिविधि सम्पन्न कराने वाले आचार्य होते थे जहाँ कि श्रावक जन अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में आकर सन्यासविधि से जीवन त्याग करते थे।

मुल्लुरु:—यह स्थान कुर्ग तालुके में है। यहाँ के ११ वीं से १४ वीं शताब्दी तक के ८ लेख संग्रहीत हैं जिनसे विदित होता है कि यहाँ शान्तीश्वर बसदि, पार्श्वनाथ बसदि एव चन्द्रनाथ बसदि नाम के तीन जिनालय थे। ले० न० १७७, १८८, १६१, २०२, २०६ से विदित होता है कि यह स्थान कोङ्गाल्व नरेशों की श्रद्धा एव विनय का क्षेत्र था। यहा राजेन्द्र चोल, कोंगाल्व के समय में एक प्रसिद्ध आचार्य गुणसेन पण्डित थे, जिनके भक्त, उक्त परिवार के सभी लोग थे। उक्त सभी लेख दान या समाधि के स्मारक हैं। ले० नं० ५६० (सन् १३६१) से सिद्ध होता है कि यहाँ चौदहवीं शताब्दी के अन्तिम दशकों तक कोङ्गाल्व राज्य का अस्तित्व था, और वे लोग जैन धर्म के बराबर भक्त थे। इस लेख में चन्द्रनाथ बसदि की पुनः स्थापना का उल्लेख है।

मुगलूर (मुगुलि):—हसन तालुके का यह स्थान होय्सल राज्य में एक समय जैन धर्म का केन्द्र था। प्रस्तुत संग्रह में यहा के चार लेख सग्रहीत हैं जिन से ज्ञात होता है कि यहाँ १२ वीं शताब्दी में द्रविड़ सघान्तर्गत नन्दिसघ अरुङ्गलान्वय की गद्दी थी। उस गद्दी के अधिकारी श्रीपाल त्रैविद्य के शिष्य वासुपूज्य देव थे। ले० नं० ३२७ से मालुम होता होता है कि यहाँ होय्सल विष्णुवर्धन के राज्य में एल्कोटि जिनालय नामक एक प्रसिद्ध मन्दिर था। यहीं महाप्रभु पेर्म्मानडि के पुत्र गोविन्द ने बड़ी बसदि बनवायी थी। उस मन्दिर के भट्टारक वासुपूज्य देव को उक्त जिनालय के लिए नारसिंह होय्सल देव ने कुछ भूमि का दान दिया था।

कारकल:—तुलु देश में यह महत्त्वपूर्ण जैन केन्द्र है। इस स्थान का इति-

हास हुम्मच के शान्तर वंश के साथ जुड़ा हुआ है। जिनदत्तराय ने ६ वीं शताब्दी में शान्तर राज्य की नींव हुम्मच की राजधानी बनाकर डाली थी और उसी शताब्दी में वह उसे कलस नामक स्थान में ले गया था। ले० नं० ५२२ से विदित होता है कि सन् १२७७ में उक्त राजाओं की राजधानी कलस ही थी। कुछ लेखों से ज्ञात होता है कि चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में शान्तर नरेश अपनी राजधानी कलस से कारकल ले आये थे। इसी शताब्दी में यहाँ के राजाओं पर लिंगायत मत का प्रभाव भी पड़ने लगा था। परन्तु १५ वीं १६ वीं शताब्दी के लेखों से मालुम होता है कि वे जैन धर्म के भी प्रतिपालक थे। सन् १४३२ के एक लेख (६२४) से मालुम होता है कि शक सं० १३५३ के फाल्गुन शुक्ल १२ बुधवार को भैरवेन्द्र के पुत्र वीर पाण्डेयशी या पाण्ड्यराय ने यहाँ बाहुबल की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित करायी थी। यह कार्य उन्होंने देशीगण की पनसोगे शाखा में ललितकीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से किया था। ले० नं० ६२७ में वीर पाण्ड्य की मनो कामना पूर्ण करने के लिए ब्रह्मदेव (जिसकी मूर्ति वहीं थी) से याचना की गई है। ले० नं० ६६४ से मालुम होता है कि सन् १५३० में कारकल की गद्दी पर वीर भैररस वोरेयड थे। उसकी बहिन कालल देवी ने कल्लवस्ति के पार्श्वनाथ के लिए अनेक प्रकार के दान दिये थे। ले० नं० ६८० से ज्ञात होता है कि सन् १५८६ में ललित कीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से भैरव द्वितीय ने चतुर्मुख बसदि बनवायी, जिसके दूसरे नाम त्रिभुवनतिलक जिनालय या सर्वतोभद्र भी थे। इस लेख में भैरव द्वितीय द्वारा अन्य अनेकों मूर्तियों की स्थापना का उल्लेख है।

वेणूर:—कारकल तालुके में इस छोटे से गाँव में गोम्मटस्वामी की एक विशाल मूर्ति मिली है जिसकी स्थापना सन् १६०४ में तिम्मराज ने की थी, जो कि प्रसिद्ध चामुण्डराय के वंशज थे। इस मूर्ति की स्थापना श्रवणबेल्गोल के भट्टारक चारुकीर्ति पण्डितदेव की सलाह से की गई थी (६८६, ६६०)।

१००५ ई० में चोलराजा राज प्रथम के २१ वें वर्ष में एक जैन मुनि गुणवीर ने अपने काव्यादि कला में विशारद गुरु गणिशेखर के नाम पर एक नहर या मोरी बनवायी थी (१७१) । दूसरे लेख नं० १७४ से ज्ञात होता है कि राजेन्द्र चोल प्रथम के १२ वें राज संवत्सर में मझियूर के एक व्यापारी की पत्नी ने तिरुमले में एक जैन मन्दिर की पूजा और दीपक के लिए दान दिया था इस मन्दिर को राजराज चोल की पुत्री कुन्दवै ने बनवाया था इसलिए इसका नाम कुन्दवै जिनालय था। ले० न० ४३४ से विदित होता है कि इस पर्वत को अर्हसुगिरि (अर्हत् का पर्वत) कहते थे जिसका तामिल नाम एणगुणविरै तिरुमले (अर्हत् का पवित्र पर्वत) कहा गया है। यहाँ चेर वंशके राजा अतिगैमान् ने केरल नरेश द्वारा सस्थापित यक्ष यक्षिणी की प्रतिमाओं का जीर्णोद्धार कराकर प्रतिष्ठापित किया था और एक घण्टा दान में दे यहाँ मोरी बनवायी थी। ले० न० ५५७ में उल्लेख है कि राजनारायण शम्बुवराज के १२ वें वर्ष में पोन्नूर निवासी मण्डै पौन्नाण्डै की पुत्री नल्लाताल ने एक जैन प्रतिमा की प्रतिष्ठापना की थी। इसी तरह ८३१ वें लेख में उल्लेख है कि परवादिमल्ल के शिष्य अरिष्टनेमि आचार्य ने एक यक्षी की प्रतिमा बनवाकर स्थापित की थी।

(उ) आन्ध्र देश में जैन धर्म का आगमन संभवत. कलिंग देश से हुआ था वह भी ईशा की दो शताब्दी पूर्व जैन सम्राट् खारवेल के समय में। पर शिलालेखों से जैनधर्म के केन्द्रों के प्रमाण ७ वीं शताब्दी से ही मिलते हैं। इस शताब्दी में यहां जैन धर्म को प्रश्रय कतिपय पूर्वी चौलुक्य नरेशों ने दिया था। प्रस्तुत संग्रह में केवल दो केन्द्रों के लेख ही आ सके हैं।

ले० नं० १४३ से ज्ञात होता है कि नेल्लोर जिले के ओंगले तालुका में मल्लिय पूण्डि ग्राम में कटकाभरण नाम का एक प्रसिद्ध जैन मन्दिर था इसे कृष्णराज के पोत्र दुर्गराज ने बनवाया था। यह स्थान यापनीय संघ नन्दि गच्छ

---

१. संभव है वह राजा राज राज चोल तृतीय का समकालीन था।

का प्रमुख केन्द्र था मन्दिर के अधिष्ठाता धीरदेव मुनि थे, जो कि जिननन्दि के शिष्य थे। उक्त जिनालय के लिए मल्लियपूण्डि ग्राम दान में दिया गया।

इसी तरह अत्तिलिनाड् में कलुचुम्बरु नामक स्थान में एक सर्वलोकाश्रय जिनालय था। ले० नं० १४४ से ज्ञात होता है कि सन् ९४५ से ९७० के लगभग पूर्वी चालुक्य अम्म द्वितीय (विजयादित्य षष्ठ) ने उक्त जैन मन्दिर की भोजन शाला की मरम्मत के लिए दान दिया था। यह दान पट्टवर्धिक वंश की श्राविका चामेकाम्बा की ओर से उसके गुरु अर्हनन्दि को दिलाया गया था। ये मुनि वलिहारिगण अड्डकलि गच्छ के थे।

गुलाबचन्द्र चौधरी

सहायक ग्रन्थ निर्देश

१. पं० नाथू राम प्रेमी, जैन साहित्य और इतिहास, प्रथम, द्वितीय सस्करण, वम्बई.
२. डा० हीरालाल जैन, जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, वम्बई १६२८
३. डा० अनन्त सदाशिव अल्तेकर, राष्ट्रकूटाज् एण्ड देयर टाइम, पूना, १६३४.
४. डा० भास्कर आनन्द सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, वम्बई, १६३४.
५. डा० दिनेशचन्द्र सरकार, सक्सेसर आफ सातवाहनाज्, कलकत्ता, १६३६.
६. डा० वे० मा० वरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इन्स्क्रिप्सन्स्, कलकत्ता, १६२६.
७. डा० मजूमदार और पुसलकर, एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, वम्बई १६५१.
८. „ „ क्लासिकल एज, वम्बई, १६५४
६. डा० गुलाबचन्द्र चौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री आफ् नार्दर्न इण्डिया फ्राम जैन सोर्सेज (७–१२ वीं शताब्दी), बनारस (अप्रकाशित)
१०. राबर्ट सेवेल और कृष्णस्वामी आयंगर, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ सदर्न इण्डिया मद्रास, १६३२.
११. एम० आर० शर्मा, जैनिज्म एण्ड कर्नाटक कल्चर, धारवाड, १०४०
१२. प्रो० नीलकण्ठ शास्त्री, हिस्ट्री आफ साउथ इण्डिया, आक्सफोर्ड १६५४
१३. विलियम कोल्हो, होय्सल वशः वम्बई, १६५०
१४. दिनकर देसाई, मण्डलेश्वराज् अण्डर दि चालुक्याज् आफ कल्याणी, वम्बई, १६५१
१५. वेंकट रमनय्य, ईस्टर्न चालुक्याज आफ वेंगी,
१६. मुनि दर्शन विजय जी, पट्टावली समुच्चय, प्रथम भाग, वीरमगाम, १६३३
१७. त्रिपुटी महाराज, जैन परम्परानो इतिहास, अहमदावाद, १६५२
१८. प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, टीकमगढ़ १६४६
१६. जैन सिद्धान्त भास्कर, आरा, भाग १—२१
२०. अनेकान्त, देहली, १—१०
२१. इण्डियन एण्टीक्वेरी

प्रस्तावना का शुद्धिपत्र

[इसमे केवल उन्हीं अशुद्धियों का निर्देश किया गया है जो कुछ महत्त्व की है। इसके सिवाय जो अशुद्धिया बिन्दियों, मात्राओं और अक्षरों के टूट जाने से तथा यत्र तत्र विरामादि चिन्हों के आ जाने से हुई हैं उन्हें पाठक स्वय सुधार लेने की कृपा करें।]

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	६	उक्त तथा अन्य	उक्त तथा अन्य सामग्री
१४	२३	स्थावरावली	स्थविरावली
१५	२६	कावच्छलिय	का वच्छलिय
२१	२३	की सभावना कि	की सभावना है कि
२३	१९	कूर्चक तथा सम्प्रदायों	कूर्चक सम्प्रदायों
२६	११	इन संघ	इस संघ
२८	१	वही नाग	वही नाम
३०	१९–२०	रूप (वलात्कार)	रूप वलात्कार
४५	२५	एन्टीम्वेरी	एण्टीक्वेरी
४७	२६	भाग, पृष्ठ	भाग १, पृष्ठ
६३	६	लेख नहीं हैं	लेख नहीं मिलते
७०	६	प्रनिविधि	प्रतिनिधि
७०	१८	यह नया पाठ	एक नया पाठ
७४	१६	३५७–५५८	३५७–३५८
८१	१६	संरत्तक	संरक्षक थे
९१	२१	उल्लेख था	उल्लेख है
९६	२३	वड़ा उम्र	वड़ा उग्र
१०३	२३	उच्छृङखल	उच्छृंखल
१०४	६	स्वीकार किया था।	स्वीकार किये था।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१०७	६	सोमेश	सोमेश्वर
११५	१७	येलु सावीर	येलु सोवीर
१२६	६	विष्णुवर्धन के	(नया पैराग्राफ)
१३४	५	उन लेखों	उल्लेखों
१३६	११	अच्छे विद्वान्	अच्छे विद्वान् भी
१३६	२१	नं०	नं० २१६
१३७	११	लिए दोनों के सरक्षक भी	दिये दानों के संरक्षक भी
१३८	१	तेलीदास	तेली दास
१३८	१८	६७.	७.
१५५	५	यहाँ के	यहाँ इसके
१५५	१८	उत्कल	उकल
१५८	११	पीढी तथा	पीढी तक
१६५	२३	आचार्यों	आचार्य
१६६	२२	उनको	उनकी
१६९	१५	वोरेयड	वोडेयर
१७२	१	राज प्रथम	राजराज प्रथम
१७२	१२	शम्भुवराज	शंम्भुवराजे
१७३	६	थे मुनि	ये मुनि

जैन-शिलालेख-संग्रह

तृतीय भाग



३०३

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत ।

[कालनिर्देश रहित]

[जै० शि० सं०, प्र. भा.]

३०४

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[कालनिर्देश रहित]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३०५

बेलूर—कन्नड ।

[शक १०५९ = ११३७ ई०]

[प्राङ्गणमें, सौम्यनायकी मन्दिरकी छतके पत्थरपर]

(ऊपरका भाग नष्ट)

. .. . . प्रभाव ॥

सगरढोलान्त अरसियर विलुद्ध जगुरे तगुल्दवन गन्धमाने . ।
बेङ्गिरिपला-धरणी-मारढोल् साये नरसिंगन वधू-निकरम् गडेदु द् ।
अङ्करननिक्कि विडे सिङ्गलिकन तुलिद गङ्गेश्वरमत्त मगुलदुनर-धरित्री ।

रगद नृपालरनसुङ्गोलेनेरेगङ्ग-नृप-नन्दननवार्यतर-सौर्य्यम् ॥
अन्तुत्तर-दिग्विजयमुत्तरोत्तरमागि सले ।
अतिदीर्घ-घ्राण-हस्त निशित-दशन-दष्टाङ्कुरं पत्त-रत्ना-।
यत-पत्र तार्य्यनन्तोवगिसि तुळियै तन्नाने पाण्ड्यावनीभृत्-।
पूतना-विध्वसनोपार्जित-जय-वधुव विष्णु तुन्छाजि-लब्जा-।
क्षितनान्त चोल-गौड़ासुर-समर-जय-श्री-समालिङ्गिताङ्गम् ॥
अन्तु पाण्ड्यनं वेङ्कोण्डु नोलम्बवाडियं कैकोण्डु ।
सेण्डिन तेरदिं निज-दोर्-दण्डदिनुच्चौटिसि पोलेयलुच्चाङ्गियना-।
खण्डल-विभवं क्षणदिं । कोण्डं श्री-कञ्चिगोण्ड-विक्रम-गङ्गं ॥
तदनन्तर तेलुङ्ग-देशक्केति ।
गज-घटे वेरसिन्द्र ''। भुजित-यशो-धनमुमुन्न कुल-धनमुमना-।
विजिगीषु कवदु कोण्ड । विजय-स्तम्भगळ सेयलेण् -देसेळोलळम् ॥
तदनन्तर राष्ट्र-कण्टकनप्प मसणन निर्म्मूल-प्रळयक्के सलिसि
बनवसेपन्निर-च्छासिरमुम कडितक्के वरिसे ।
तिरिकल्लादुदु विष्णु-भुभुज-भुज-श्रीगावगपे म्पिनोल् ।
नेरेदा-सह्य-नगेन्द्र-नील गळ् ।
पेरतेना-भुज-लक्ष्मिगी-नेगल्द-पानुङ्गल् मुहूर्त्तार्द्धदिं ।
किरिदानुम्मिडिवट्टेनल् मिळिदुं कैसार्त्तप्पुदावद्भुतम् ॥

' बिजनपर '' '' ''नाथ किसुकल्ल कोळनाळोकन मात्रदोळ् कोण्डु जयकेसिय वेंकोण्डु पलसिगे-पन्निर्-च्छासिर् मुमं '' ' ' नूरुम-निक्कु' ' डु ।

मगु-मगुळ्दु पोक्क दुर्ग्गम-। नागळ्गल्दा-वार्द्धि-बेरगमड्ड तिगट ।
तगु-तगुल्दु कोण्डनोवदे । नग-विरुदरनरसि विष्णुवर्द्धन-देवम् ॥
पेसर्गोण्डावाव-देशङ्गलनेणिसुवदावाव-दुर्ग्गङ्गळं नण् -।
णिसि पेळुत्तिप्पु डावावनिपतिगळ लेक्किसुत्तिप्पु देम्बोन्द् ।

ऐसेकं कैगण्मे नाल्कुं-कडल तडि-वरं दिग्जय-कीडेयोळ् साधिसिदं भू-लोकमं क्षत्रिय-कुल-तिलकं वीर-**विष्णु**-क्षितीशम् ॥

आ-महा-क्षत्रियं समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुरवरा**-धीश्वरं यादवकुलाम्बरद्युमणि मण्डलीकचूडामणि श्रीमदच्युतपदाराधनलब्धजिष्णु-प्रभावं दिक्पालकपराक्रमाक्रमणपटुपराक्रमैकस्वभाव शत्रुक्षत्रियकलत्रगर्भस्रावसम्पादक-गभीरविजयशङ्खनादं **वासन्तिकादेवि**लब्धवरप्रसादं समरमुखगृहीताहितमहीकान्त-कामनीजनमुखनिरीक्षणकृतसूर्य्यनिरीक्षणं सकलजनसत्यनित्याशीर्व्वादसामर्थ्यसम्पादित-कल्पायुरारोग्याभिवृद्धियुक्त दुर्द्धरसमरकेलिसंसक्तं दोर्व्वलावलेप दुश्शीलाश्वपति-गज-पति-प्रमुख-राज-लोक-निर्दयनिर्द्दलनोपार्ज्जिताश्व-गजादि-नानाविध-रत्न-निचयरुचिर-राज्य-लक्ष्मी-विलासं सरस्वतीनिवासम् । **चोल**-कुल-प्रलय-भैरव । **चेरम**-स्तम्बेरम-राज-कण्ठीरवम् । **पाण्ड्य**-कुल-पयोधि-वडवानलम् । **पल्लव**-यशो-वल्ली-पल्लव-दावानलम् । **नरसिंहवर्म्म**-सिंह-सरभम् । निश्चल-प्रताप-दीप-पतित-**कलपा-लादि**-नृपाल-शलभम् । **वङ्गाङ्गकलिङ्ग-सिंहल** नृपाल-कुरङ्ग-कुल-पलायन-कारण-कठोर-विजय-धनु-र्दण्ड-टङ्कारम् । सकल-रिपु-नृप-कुल-दलन-जनित-जयालङ्कारम् । निजाज्ञा-चण्ड-डिण्डिमाडम्बरालकृत **काञ्चीपुर** स्वगृहचेटीनियोगयोजितरिपुनृपान्त पुरकरतलक्रोडीकृत **दक्षिणमधुरापुरम्** निजसेनानाथनिर्द्दलित-**जिननाथ-पुरम्** । जगद्-दारिद्र्य-विद्रावण-प्रवीण-कारुण्य-कटाक्ष-निरीक्षणम् । प्रत्यक्ष-पद्मे-क्षणम् । चतुस्समुद्र-मुद्रित-वसुमती-मनोहर-लक्ष्मी-वल्लभम् । भय-लोभ-दुर्ल्लभं, नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम् श्रीमतु कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गङ्ग-वीर-**विष्णुवर्द्धन**-देवरु **गङ्गवाडि**-तोम्भत्तरु-सासिरमु **नोणम्बवाडि**-मूवत्तिर्-च्छासिरमुम वनवसे-पन्निर्-च्छासिरमुम दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालन-पूर्व्वक-मेक-च्छत्र-च्छायेयिं रक्षिसि सुखसंकथाविनोददिं राज्य गेय्युत्तमिरला-क्षत्र-कुल-कुलाचल-चक्रवर्त्तिय पादमूल-प्रभूतनुं तत्कारुण्यामृतरसप्रवाहपरिवर्द्धितनुमागि ।

पेसरं वेत्तेत्तलुम्बेव्वंरिदु वेलदु शाखानुशाखालि नीलूडेण् देसेग तलतोर्पे सर्व्व-र्तंक-सकल-फलैश्वर्य्यंदिं लोकम रक्षिसुतिर्की-पूर्ण-चेतोरथ-युत-कमळा-कल्पवल्ली-विलासावसथं श्रीविष्णु-**दण्डाधिप**-दिविज-कुजात विपश्चिद्विनुतम् ॥ सम-

सन्दक्षुण्ण-पुण्योदयमुदय-नगारुढ-भानु-प्रभा-विभ्रमदिन्द निन्च-निन्च पोसपिसे कमलानन्दम विश्व-नेत्रोपमनेन्दु तेजदिन्द बेलेगुगुमेलेय विष्णु विष्णु-क्षितीश-क्रमं-पङ्केजात-भृङ्ग चपल-रिपु-चमू-नाथ-मत्तेभ-सिङ्गम् ॥ अभिरामाकारदिन्दप्रतिम-भुज-श्लाघोपदिन्दप्रमेय प्रभु-मन्त्रोत्सा (त्सा) ह-शक्ति-त्रितयदिनमर्दुत्साहदिं विष्णु-भू-वल्लभ-सतताङ्गकवाळम्बनवेने नेगल्दक्षुण्ण-पुण्याढ्यनेक प्रभुवा विष्णु-दण्डाधिपनखिल-बुध-प्राण-रक्षा-प्रवीणम् ॥ परिपूर्णेन्दु-प्रभा-विभ्रमदोलमर्दु गङ्गा-पगा-स्फार-रुग्-विस्तरम तल्कयिसि दुग्धार्ण्णव-नव-रुचिय तात्दि नीलदम्बु-दादम् । धरेयी-दिक्-चक्रदिं मन्दर-शिखरदिनत्तल् वियन्मण्डपाग्र । वरेग श्री विष्णु-दण्डाधिप- विपुल-यश - कल्प-वल्ली- विलास ॥ स्वस्ति समन्तभुवनभाग्योदयोत्पन्न नयविनयवीरवितरणादिगुणसम्पन्न श्रीमदर्हत्परमेश्वरपदपयोजभृङ्गचरण विपश्चिज्जनैक-शरण **काश्यपगोत्रशतपत्रवनमित्र** चमूप-चूडारत्न **चिण्णम**-प्रिय-पुत्रं श्रीमत्ता-र्किकचक्रवर्ति- **वादीभसिंहा**-परनामधेय - **श्रीपाल-त्रैविद्य-देव**-पादाराधनालब्ध-सरस्वतीप्रभावसर्व्वस्वं चातुर्य्य चतुराननं समस्तशास्त्रविद्यावडानन सकलशुभलक्ष-णोपलक्षिताक्षय-सौभाग्य-भाग्याभिराम रूपनिर्ज्जितकुसुमचाप विरोधि-वीर-भट-भय-ङ्करं । पर-दुराप दुर्द्धर-प्रताप पञ्चाङ्ग-मन्त्र-प्रपञ्चाञ्चित-सान्निध्य स्वयम्बुद्ध चतु रुपाधाविशुद्ध नाना-नयोपाय-प्रावीण्य प्रत्यक्ष-योगन्धरायण । **विष्णुवर्द्धन-देव** प्राज्य-राज्य-भर- सन्धारण-परायण । स्वामि-भक्ति-युक्त-वैनतेय । स्वामि-हिताञ्जनेय श्रीमत्कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गग-**विष्णुवर्द्धनदेव**- प्रसादासादित-द्विगुण-प्रतिपत्ति-प्रति-ष्ठित-महा-प्रचण्ड- दण्डनाथ-पदवी-पद-राजितललाट-पट्ट । निज-विजय-भुजा-दण्ड-निर्ल्लोठित-रथ-तुरग-करि-घटा-घटित-समर-सघट्ट । **आसाद्ध-सिद्ध-दक्षिण-दिग्जय** दुर्द्धरावस्कन्द-केली-निर्म्मूलित-पारावार-तीर-वीर-राजसमाज- सर्व्वस्वापहरण-समायात-मातङ्ग-घटा-समर्पण-सम्पादित- स्वामि-सर्व्वाङ्गपुलक । दण्डनाथ-मण्डली- मण्डन-माणिक्य-तिलक निज-प्रताप-निर्द्दग्ध-**रायरायपुर**- शिखी-शिखा-कलाप- सन्तापित **चेर-चोल पाण्डय-पल्लव**- नृपान्तरङ्ग । **कोङ्ग**-नरेन्द्र-मस्तक-मस्तिष्क- कुसुमोपहार रञ्जिताजि-रङ्ग । **सह्याचल**-तिलकायमान-दक्षिण-दिग्जयोत्तम्भित-पति-जय-स्तम । सदा-समालिङ्गित-लक्ष्मी-कुच-कुम्भ । समस्तराज-कार्य्य-भर-सहिष्णुता-स्वभावसार

मग्गामधीर । यदु-कुल-ग्रोहर निट्टेलुव नुरिवं मनर्दि नुग्निग्वि । **विष्णुवर्द्धन-देव** दक्षिण-भुजा-दण्डं मनदोलु मच्चनिर गण्ट । नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम श्रीमन्महाप्रधान **निम्मडि-दण्डनायक-विदियण्णं** सर्व्वाश्रयागियुं समस्त-जनोपकारियुमागि सुखमिरे । विरुदर्म्मागरगर्व्वानिरे कादोलगा- कोङ्कितोल् कानमंताल्वरितं नीनेन्दु तन्न नृपति वेमसे पक्षार्द्धदोल् युद्धदोल् नेट्ट-गिरियं वेङ्गु एङ्गु तन्नट्टणमनुगिहि तद्धान्नियं सेरेगोण्डन्तूवरि म्मं गोण्डु तण्डं मड-गज-घटेयं विष्णु-दण्डाधिनाथं ॥ मनर्व्वात कोङ्गु गोळव गड गज-घटेय तर्प्पनीत नटं पोनू-नगेयेम्बुद्दण्डन तपिले पर-नृपर काडि वेङ्कोण्डु कोङ्गम् । कामुल्कोवङ्गळन् साधिसि गज-घटेय तन्न बाहा-कळ कैमिगे तण्डाळदर्गति प्रीतिय-नोदविनिद विष्णुदण्डाधिनाथ ॥ दिग्वीधर्त्तम्म-नम्मिर्द्देडेयोळ,गेदडङ्क्रिम्पिन **चोल-**लाळादिगळार-गोण्डु दुर्ग्गाश्रयगेले मक्लत्र भय-गोण्डु गोलुण्डे-गोलुत्तिर्प्पिन्न-मन्भोनिधि-निकट-महिपालर विष्णु-विक्रान्‌त-गुण वैगण्मे वेङ्गोण्डदटनदर मर्व्वम्वमं सूरेगोण्डन् ॥ उन्दिन्तु **रायरायपुरवा**-पुन्‌र्वाह्नि-शिखा-कलापवा-। पट्टिदुवे कन्ति-यत्तलेनुतं नडे नोडुव **चोल-चेर-पाण्‌ड्यर** बगेयोल् बिगिल्लेने न्नृप-शिखा-मणि-वीर-विष्णु-कनर-चोर्प्र तार-शिखी नोलडु पंटलडुपदगुब्बु पर्ब्बिगल् ॥ अनुपम मन्यो ..ता-। ने नेगळनेयनान्त नल्लनेरडु-कुलनु । जननी-जनकर पोरढालु-। दन पेम्पु पेमन्म नेगळ्तिरनात ॥ आतनन्वय-क्रममेन्तेन्डडे । मावदादि-ब्रह्म-निर्म्मित-मप्प युगावतारदोलु कश्यप-प्रजापतियिं पविन्नाद **काश्यप-**गोत्रदोलु कृत-कृत्यरं सिद्ध-साध्यरुमाप्प महात्मरनेकरिं बलिकवदर णेगर्त्तंश नेगलतेग ताने नेलेयागि ।

पदमवुत्तु ग-गोत्राचल-शिखरदोलोप्पुत्तिगल् तन्न निल्या-
भ्युदयं भू-मण्डलोल्लासन्मनोदविसे सानन्द-सस्मेर-लक्ष्मी-
वदनाब्ज-श्रीयोलोप्पम्बडेये निज-विलासं जगद्वन्द्यमादत्तु ।
उदयादित्य-प्रभावं प्रकटित-भुवनाभोग-तेजो-विलासम् ॥
आतन कुल-वधु भुवन-ख्याते जागृते भाग्य-सौभाग्य-गुणो-
पेते मनोभव-विभव-समेतेपेनल् **शान्तियक्क**नोर्व्वले नोन्तम् ॥

आ-दम्पति-गल भाग्यदि । नादं सत्पुत्रनात्म-गोत्र-पवित्रम् ।
मेदिनिगे ताने सुर-तरु-। वादं श्री-चिण्ण-राज-दण्डाधीशम् ॥
परम ब्राह्मण्य-प्रभाव मनुज-परिवृढाकारम तालिद-तेम्बन् ।
तिरे धरोदात्त-सत्वोन्नति योलमदु नाना-गुणानर्घ्य-रत्नो ॥
त्करमं रत्नाकर तानेने तलेदेरेयङ्गावनीनाथ-धात्री -।
भरमं तालिदद्दनेक-प्रभुवेने भुवनं चिण्ण-दण्डाधिनाथं ॥
आ-विभुविन मनोवल्लभे ।
कुलद पोगल्ते शीलद नेगल्ते मनोभव-राज्य-लक्ष्मिय ॥
निलिसिद गाडिलोकदोलगावगवी-मिगिलन्ददिन्दवग-।
गलिसिद रूढि तन्नोलमदोप्पिरे चिण्ण-चमूप-कान्ते चन्-॥
दले नेरे तालिददल् धरेगगुण्डलेयण्ण गुण-प्रभावमम् ।
फणि-पतिग वचो-विषयमल्लवु माविसे चण्डियक्कनोल-॥
गुणमवु निष्कलंक-निज-रूपदो-लोप्पिरेयु पोगलतेपोल् ।
तणिपदे धात्रि लक्ष्मी रति भारति रेवति सत्य भामे रुग्-
मिणि भुवन-प्रणूते धरणीसुते पेम्बुदु लोकमार्कयम् ।
अवर्गों मगा महा-बल-पराक्रमनन्वय-भूषण मनो ॥
भव-निभनन्य-सैन्य-विपिन-प्रलयानलनर्थि-कल्प-पार् ।
त्थि-वनेने रूढि-चेत्तुदयणं नेगल्द भुवन-प्रणूत-भा- ॥
दव-नृप-राज्य-वारिनिधि-वर्द्धन-पार्व्वण-शार्व्वरीकर [म्] ।

आ-पुण्य-भाजननिं वलिय पलवु स्त्री-रत्नगल पडेदु मत्तमोर्व्व महाबल-क्रमनु पुण्य-निधियुमण्य मगनं पडेयलु जिन-महा-महिमेगल माडि वयसुतिप्पी-र्वतिगे ।

पुट्टिदनप्पुं कूर्पुं नेट्टने तन्नोडने पुट्टे रिपुगलगेभय ।
पुट्टे निज-पतिगे चक्र । पुट्टिदुदेने चिण्णु सु-भट चूडारत्नम् ॥
अन्तु पुट्टि ।

कुवलयमेय्दे तन्नुदयदिं परितोषमनेय्दे विश्व-बान्-।
धव-जन-लोल-लोचन-चकोर-चयं निज-देह-कान्तियिं ।
तवदनुरागम तलेये **काश्यप**-गोत्र-पवित्रनेलगे वा-।
डिवडेल- दिङ्कलन्तनुदिनं बलेदं पिरिदु-विभूतियिम् ॥

अन्तु समस्त-गुणङ्कुमोदवलेयिं बलेवुदुमन्वयागत-प्रधानसन्ततियुं तनगे धर्म्म-सन्ततियुमेम्ब बहुमानदिं श्रीमत्कश्चिगोण्ड विक्रम-गंग-**विष्णुवर्द्धन**-देवं पुत्र-समान-मागे कैकोण्डु नडपि महोत्सवदिनुपनपनोत्सवमं ताने माडे सप्ताष्ट-संवत्सरान्तरदोल् समस्त-शस्त्र-शास्त्र-प्रवीणनागे सकल-शुभ-लक्षणोपेतेयुमभिजातेयुमप्प निज-प्रधान दण्डनाथ-पुत्रियं कन्या-रत्नमं तन्दा-**विष्णुवर्द्धनदेवं** ताने कनक-कलशवनेत्ति कै-नीरेरदु कन्या-दान-फल-परितुष्टनागे विवाहकल्याणमनत्तूण-मनोरथमं तलेदु दशै-कादश-वर्ष-प्रायदोले कुशाग्रीय-बुद्धि-समर्थनु चतुरुपधा-विशुद्धनुमादुदं कोण्डु कोण्डाडि **विष्णुवर्द्धनदेवं** तन्न श्रीहस्तदिं द्विगुण-प्रतिपत्ति-पूर्व्वकं 'महा-प्रचण्ड दण्डनाथ'-पट्टमं कट्टि समस्ताधिकारमुमं कुडे 'सर्व्वाधिकारियु' सकळ-जनोपकारियु-मागि ।

अनुपममप्प दिग्विजयदिं जयनोल् पडियागि त्र्यिनिं ।
तनगपराजितत्वमलवत्तिरे तेजदलुर्कियिं जगज् ॥
जनमनुरागदिन्दमित-तेजनेनल् क्रम-विक्रमाङ्कलिम् ।
नेनेयि [सु] वं पुरातनमहात्मर**निम्मडि-दण्डनायकम्** ॥

आतनारूढ-यौव्वननागि समस्त-नियोग-युक्त-सा.. . दंमननुभविसुत्तुं महा तीर्थ-स्थानङ्कलोळल्लून-धर्म्मम माडिसि श्रीमद्-यादव-राज्य-राजधानी-दोरसमुद्रदोल् ई-**विष्णुवर्द्धन-जिनालयवं** मा . .. महा-पुरुषन गुरु-कुलमेन्तेन्दडे श्रीवर्द्ध-मान-स्वामिगळ तीर्थदोलु केवलिगलु रिद्धि-प्राप्तरु श्रुत-केवलिगलुं पलरु सिद्ध-साध्यरागे तत्. . . .. र्थ्यमं सहस्र-गुणं माडि **समन्तभद्र-स्वामिगलु**

---

१ राजभक्ति, निस्पृहता, संयम (Contineous) और धैर्य ।

सन्दरवरिं बलिक तदीय-श्रीमद्-द्रमिल-सघाग्रेसररप्प **पात्रकेसरि-स्वामिगलिं वक्र-ग्रीवाभि** . रिन्दनन्तरम् ।

यस्य दि.. . न् कीर्त्तिस्त्रैलोक्यमप्यगात् ।
येव स मात्येको **वज्रनन्दी गणाग्रणी** ॥

अवरिं वलिक **सुमति-भट्टारक**रवरिं वलिक . **समय-दीपक** . उन्मीलित-दोष-क . रजनीचर-बलमुन्दोधित-भव्य कमलमाटतुर्ज्जित**मकलङ्क** प्रमाण-तपन स्फु . ॥ अवरिं वलिक **चक्रवर्त्ति-भट्टारकरवरिं** वलिक **कर्म्म-प्रकृति** . , वरिं वलिक पल्लवन गुरुगलु **विमलचन्द्राचार्य्य**रवरि वलिक **परिवादिमल्ल**-देवरवरिं वलि **कनकसेन** श्री-**वादिराज-देव**रवरिं वलिक गग कुल-कमल-मार्त्तण्डनप्प **बूतुग-पेर्म्माडिय** गुरुगलु श्री-**विजय-भट्टारक**रवरिं वलिक चक्रवर्त्ति-**जयसिंह**-देवन गुरुगलागि ।

गत-सर्व्वज्ञाभिमान सुगतनपगतात-प्र ढ **कणाद** ।
कृत-नीति-भ्रान्ति-नश्यन्-निज-नय-नयनालोकन सन्द **लोका-**
यत निन्नी-मर्त्य-मात्रगज नुदिगलोलवेम्बिनं मीरि लोकोन्-
नतमाप्तर्हन्मताम्भोनिधि. विभव **वादिराजेन्द्र**-भाव ॥

अवरिं वलिक यादवान्वय-चूडामणियप्पेरेयङ्ग-देवङ्गे गुरुगलु जगद्गुरुगलु-मेनिसि ।

चरणानुस्मरणा .. य-निकरक्लिष्टार्त्थ-ससिद्धिय ।
तर् वार्च ग्रहण कुमार्ग-युत-वादि-व्रातम तूले दुर्-।
द्धर-चारित्रद दुर्जयोर्ज्जित-वच-श्रीयोलपु तम्मोल् मनो-
हरमागल् तलवस्सर्मन्त**जितसेन स्वामिगल्** कीर्त्तिय ॥ अवर सधर्म्मरु ।
कन्तुवनान्तु मेय् देगेयदोडिसि दुर्म्मद-कर्म्म-वैरि-वि-।
क्रान्तमनेय्दे भञ्जिसि लसत्परमागम-वित्त्वदिन्दिवा- ।
नीन्तन-**तीर्त्थ-नाथरेने** रूढियनान्त **कुमारसेन-सै-**
द्धान्तिक रादमुज्ज्वल ..जिन-धर्म्म-यशो-विलासमम् ॥

अवरि वलिक **श्रीमदजितसेन-स्वामिगल**ग्र-पुत्ररु जगत्पवित्ररुमागि ।

सले सन्द योग्यतेयनगलिसिद दुर्द्धर-तपो-विभूतिय पेम्पिम् ।
कलियुग-गणधररेम्बुदु नेलनेल्ल **मल्लिषेण-मलधारिगल** ॥

अवरिं बलिक **मकलंक**-सिंहासनमनलङ्करिसि तार्किकचक्रवर्त्तिगलु **वादीभ-सिंह** रुमेम्ब पेसरेसेये ।

अवसर्पिण्यर्द्धदिन् [दि] तुलुगडे जिन-जीमूत-सघात-मी भू-
भुवनन् तेङ्काडुवन्न सुरिद सकल-विद्या-नादि-पूरदिन्ती ।
वि विपश्चित्तापसन्तापमनुडुगिसुतिर्द्दग्युदाद मुनीन्द्र- ।
प्रवर-**श्रीपालयोगीश्वर** नेनिय जगत्-सार्थ्यकृत्-पुण्य-तीर्थं ॥
आवन विषयमो पट्-तर्क्कविल-बहु-भगि-सगत **श्रीपाल**- ।
त्रैविद्य-गद्य-पद्य-वाचो-विन्यास निसर्ग्ग-विजय-विलासम् ॥

अन्तु जगद्गुरुगलेनिसिद **श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर** काल कर्च्चि **श्रीमद्-म्मडि-दण्डनायक बिट्टियण्णनो**-बसदिय खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक देवता-पूजेगमिल्लिर्प्प रि(ऋ)षिसमुदायदाहारदानकं **शक-वर्ष १०५९ नेयनल-संवत्सरदुत्तरायण-संक्रान्ति** यन्दु **श्रीविष्णुवर्द्धन-पोय्सल देवर** श्री हस्तदिं धारेयेरेपिसि परमेश्वरदत्ति माडि बिडिसिद ग्राम **मय्से-नाड बीजे-बोललदर** सीमान्तर (आगेकी ६ पंक्तियोंमें सीमाओंका वर्णन है) **दोरसमुद्रद** पट्टण-स्वामि बोण्डादि-सेट्टिय मग **नाडवलसेट्टिय** कय्यलु हिरि-यकेरेयोलगण तावरेयकेरेयोलगाद नेलन मारुगोण्डी-बसदिगे कोट्ट श्री हिरियकेरेय केलगण तावरेयकेरेय बडगण-कोडिय विष्णुभट्टन तोट . सण गलेय लु चतुरस्र १५ गलेय भूमियं मारुगोण्डी-बसदिगेबिट्ट ॥ **द्वादशसोमपुरवाद होलेयब्बेगे-रेय** हन्नेरडुवृत्तियोलगोण्डु वृत्तिय **गोग्गण-पण्डितर** म से **गुलियण्णन** कय्यलु मारुगोण्डी-बसदिगे बिट्ट ॥ (वे ही परिचित श्लोक)

(प्रथम भाग नष्ट हो गया है)

[राजा एरेगंगके पुत्रने अपनी रानियोंका परित्याग करके, राज्य छोड़कर, और चेङ्गिरिके निकटके देशमें मरते वक्त देह त्याग करते हुए नरसिंहकी पत्नियोंके ऊपर अधिकार जमा लिया था, अङ्गरको नष्ट कर दिया या

और गंगाकी ओर मुड़कर उत्तरदेशके राजाओंका सत्यानाश किया। उत्तरके आक्रमणमें सफलता प्राप्त कर उसके हाथीने **पाण्ड्य** राजाकी सेनाको कुचल दिया था, भयङ्कर महान् युद्धोंमें चोल और गौलोंको हराया। कञ्ची-गोण्ड-विक्रम-गंगने पाण्ड्यका पीछा करके नोलम्बवाडिको अधिकृत करके उच्चंगिपर दखल कर लिया। इसके बाद तेलुङ्ग (तैलंग) देशकी तरफ बढ़ा, और इन्द्र. को सारी सम्पत्ति सहित कैद कर लिया। इसके बाद भसणको, जो सारे राष्ट्रका कण्टक था, समूल नष्ट किया और बनवसे बारह हज़ारको अपने कडित (हिसाबकी किताब) में लिख लिया। क्षणार्धमें राजाविष्णुने (एरे-गंगके पुत्रने) प्रसिद्ध पानुङ्गल् ले लिया, किसुकल्पर राज्य करने वाले . .. नाथको अपनी नजरसे ही मार डाला। जयकेसीका पीछा करके पलसिगे १२००० का तथा.. . .५०० पर अधिकार जमा लिया।

इस महानृपति विष्णुवर्द्धन देवके अनेक पद और उपाधियोंमें से कुछेक ये हैं —चोलकुलप्रलय-भैरव, चेरस्तम्बेरमराजकण्ठीरव, पाण्ड्य कुलपयोधिबडवानल, पल्लवयशोवल्लीपल्लवदावानल, नरसिंहवर्म्म-सिंह-सरभ, निश्चलप्रतापदीप-पतित-कलपालादि-नृपाल-शलभ। कञ्चीपर अधिकार करनेवाला (कञ्चि-गोण्ड), विक्रम-गंग वीर-विष्णुवर्द्धनदेव जिस समय इस तरह गगवाडि ९६०००, नोणम्बवाडि ३२००० तथा बनवसे १२००० पर सुख व शान्तिसे राज्य कर रहा था –

उसके पादमूलसे प्रभृत (उत्पन्न) तथा उसके कारुण्यरूपी अमृतप्रवाहसे परिवर्द्धित **विष्णु-दण्डाधिप** था। (उसकी प्रशंसा) विष्णु-दण्डाधिपका नाम **इम्मडि-दण्डनायक चिट्टियण्ण** था। इस दण्डनायकने आधे महीने (१५ दिन) में ही दक्षिण विजय कर ली थी। विष्णुवर्द्धन-देवका यह दाहिना हाथ था। बहुत-सी उपाधियों और पदोंसे युक्त यह महाप्रधान, इम्मडि-दण्डनायक चिट्टियण 'सर्व्वाधिकारी' और सर्वजनोपकारी होता हुआ शान्तिसे समय व्यतीत कर रहा था —

इसके बाद पत्रमें विष्णु-दण्डाधिनाथके उन्हीं पराक्रमोंका वर्णन आता है जिनका वर्णन पहिले गद्यमें हो चुका है।

विष्णु-दण्डाधिपकी भृत-कुल-परम्परा इस प्रकार थी—सबसे पूर्वमें (आदि ब्रह्माके युगमें) काश्यप प्रजापति थे, जिनसे बहुत-से महान् पुरुष उत्पन्न हुए; उनके बाद एक **उदयादित्य** हुए, जिनकी पत्नीका नाम शान्तियक्के था। उनका पुत्र **चिण्ण-राज-दण्डाधीश** था। उसकी पत्नी चन्दले थी, उनका पुत्र **उदयण** था। उदयणका छोटा भाई **विष्णु** हुआ, जो नये चन्द्रमाकी तरह आकार और यशमें बढ़ता ही गया।

इसके किशोरावस्था प्राप्त होने पर स्वयं काञ्चिगोण्ड विक्रमगंग विष्णुवर्द्धन देवने, उसको अपने पुत्रके समान मानकर, बड़े उत्सवसे स्वय ही उसका उपनयन सस्कार किया। सात या आठ वर्षकी उमरके बाद जब वह समस्त शास्त्र-विज्ञानमें पारंगत हो गया तब उसको अपने प्रधान मन्त्रीकी पुत्री ब्याह दी। और १० या ११ वर्षकी उम्रमें बुद्धिमें कुशाग्रकी तरह तीक्ष्ण होने और चार उपाधियों (राजभक्ति, निस्पृहता, संयम और धैर्य) में पूर्ण होने पर विष्णुवर्द्धनदेवने दुगुने विश्वासके साथ उसे 'महा-प्रचण्ड-दण्डनाथ' का पद दिया। और उसे सर्वाधिकार दे देनेसे वह सर्वाधिकारी तथा समस्त जनोका उपकार करने की सामर्थ्य वाला हो गया।

पूर्ण यौवन प्राप्त होने पर समस्त सार्वजनिक कामोंके करनेसे अनुभवकी वृद्धि होनेपर महापवित्र स्थानोंमें दान देनेके बाद, उसने यादव राज्यकी राजधानी दोरसमुद्रमें यह विष्णुवर्द्धन जिनालय बनवाया।

इस महापुरुषके गुरुकी गुरु-परम्परा इस प्रकार थी—वर्द्धमान स्वामीके बाद केवली और श्रुतिकेवलियोंके हो जानेके बाद, जिन शासनके प्रभावको सहस्र-गुणा बढ़ानेवाले समन्त भद्र स्वामी हुए। उनके बाद, उसी द्रमिल-संघके अग्रणी पात्रकेसरी-स्वामी हुए। तत्पश्चात् क्रमसे वक्रग्रीव-वज्रनन्दी गणाग्रणी, सुमतिभट्टारक, जिनसमयदीपक अकलङ्क-चन्द्रकीर्त्ति-भट्टारक-कर्मप्रकृति-पल्लवाधिपगुरु विमलचन्द्राचार्य-परिवादिमल्लदेव, कनकसेन-वादिराजदेव—श्रीविजयभट्टारक (बूतुग-पेर्म्मडिके गुरु-जयसिंहदेवके गुरु वादिराजेन्द्र—जो दर्शन शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् थे)—यादवान्वय-चूड़ामणि एरेयङ्ग-देवके गुरु अजितसेन-स्वामी (उनकी

प्रशगा), इनके एक सतीर्थ्य कुमारसेन-सैद्धान्तिक हुए, जो अपने समयके तीर्थनाथ कहे जाते थे—उनके बाद अजितसेन स्वामीके ज्येष्ठ पुत्र मल्लिषेण-मलधारि हुए, जो कलियुगके गणधर माने जाते थे। तत्पश्चात् वादीभसिंह अकलङ्ककी गद्दी सँभालने वाले मुनीन्द्रप्रवर श्रीपाल-योगीश्वर हुए, जिन्होंने सम्यग् ज्ञानका प्रचार कर अज्ञानके हटानेमें बड़ा काम किया। उन्होंने अनेक तर्कशास्त्रके ग्रन्थ बनाये थे।

इन जगद्गुरु श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके पैरोंका प्रक्षालन करके,—इम्मडि-दण्ड-नायक बिट्टियण्णने 'क्षमदि' की मरम्मत, भगवानकी पूजाके प्रबन्ध, तथा ऋषियोंके आहारदानके लिये, (उक्त मितिको) विष्णुवर्द्धन-पोय्सलदेवके हाथोंसे मरुसे-नाड्में बीजबोललका गाँव प्राप्त किया और उसे परमेश्वरको दानमें दे दिया। इसी तरह दोरसमुद्र-पट्टण-स्वामी (नगरसेठ) बोण्डाडि-सेट्टि के पुत्र नाडवल-सेट्टिसे खरीदी गयी (उक्त) दूसरी भूमि भी उक्त मंदिरको दानमें दे डाली। द्वादश सोमपुरके १२ हिस्सोंमेंसे एक जो होलेयब्बेगेर था—वह भी दानमें दे दिया। (वे ही अन्तिम श्लोक)।]

[EC,V,Bbur tl , No. I7]

३०५ क

अथूँणाका शिलालेख

अथूँणा (उच्छूणक)-संस्कृत ।

[विक्रम सं० ११६६, वैशाख सुदि ३]

१—३० ॥ ॐ नमो वीतरागाय ।

स जयतु जिनभानुर्भव्यराजीवराजी-
जनितवरविकाशो दत्तलोकप्रकाश ।
परसमयतमोभिर्न स्थितं यत्पुरस्तात्
क्षणमपि चपलासद्वादिखद्योतकैश्च ॥ ॥ छ ॥

२—आसीच्छ्रीपरमारवंशजनित· श्रीमण्डलीकाभिध

कन्दस्य ध्वजिनीपतेर्निवनकृच्छ्रीसिंधराजस्य च ।

जज्ञे कीर्तिलतालवालक इतश्चालु डराजो नृपो

योऽवतिप्रभुनाथनानि चतुशो र्हात स्म

३—देशे स्थलौ ॥ २ ॥ श्रीविजयराजनामा तस्य सुतो जयति मति (जगति) विततयशा· । सुभगो जितारिवर्गो गुणरत्नपयोनिधि· शूर· ॥ ३ ॥ देशेऽस्य पत्तनवरं तलपाटकाख्यं पण्याङ्गनाजनजिना—

४—मरसुंदरीकम् । अस्ति प्रशस्तसुरमन्दिरवैजयन्तीविस्तारुद्धदिननाथकर-प्रचारं ॥ ४ ॥

तस्मिन्नागरवंशशेखरमणिर्निःशेषशास्त्राम्बुधि-

जैनेन्द्रागमवासनारससुधाविद्धास्थिमज्जाभवत् ।

५— श्रीमानवरसंज्ञक कलिवहिर्भूतो भिषग्रा (ग्रा) मणी-

गीर्हंस्थे (स्थ्ये)पि निकुंचिताद्यप्रसरो देशव्रतालङ्कृत ॥ ५ ॥ यस्याव [श्य] क [क] र्मनिष्ठितमते श्रेष्ठा वनाते भवन्नंतेवासिवदाहिताञ्ज-लिपुटा ।

६—श्चोस (प्र) कृतोपासना । यस्यानन्यसमानदर्शनगुणैरत्नश्चमत्कारिता शुश्रूषा विदधे रतेव सततं देवी च चक्रेश्वरी ॥ ६ ॥ पापाकस्तस्य सूनु समजनि जनितानेकभव्यप्रमोद· प्रादुर्भू—

७—तप्रभूतप्रविमलधिषणा पारदृश्वा श्रुताना [।] सर्वायुर्वेदवेदी विदितसकल-रुक्क्रान्तलोकानुकम्पो निर्नीताशेषदोषप्रकृतिरपगदस्तत्प्रतीकारसार ॥ ७ ॥ तस्य पुत्रास्त्रयोऽभूवन्भूरिशा-

८—रदिशारदा । आलोकः साहसाख्यश्च लल्लुकाख्य पनोनुज ॥८॥ यत्त-त्राद्य सहजविशदप्रज्ञया भात्मान स्वातादर्शस्फुरितसकलोतिह्यत· ।संसार । सवेगादिस्फुटतरगुणव्य-

९—कसम्यक्प्रभाव तैस्तैर्दानप्रभृतिभिरपि स्वोपयोगी कृतश्री ॥ ९ ॥ आधा [रो] य स्वकुलसमिते साधुवर्गस्य चाभूदग्रे शील सकलजनताह्लादिरूप त्र काये। पात्रीभूत कृतियतिधृतीना

१०—श्रुताना श्रिया च सानन्दाना धुरमुदवहद्भोगिना योगिना च ॥ १० ॥ यो **माथुरान्वय** नमस्तलतिग्ममानोर्व्याख्यानरजितसमस्तसमाजनस्य। श्री-**चक्रसेनसुगुरो**श्चरणारविंदसे—

११—वापरो भवदनन्यमना सदैव ॥ ११॥ तस्य प्रशस्तामलशीलवत्या **हेला**भिधाया वरधर्मपत्न्या। त्रयो बभूवुस्तनया नयाढ्या विवेकवतो भुवि रत्नभूता ॥ १२ ॥ अभवदमल—

१२—बोध **पाहुक**स्तत्र पूर्व कृतगुरुजनभक्ति सत्कुशाग्रीयबुद्धि। जिनवचसि यदीयप्रश्नजाले विशाले गणभृदपि विमुह्येत् कैव वार्ता परस्य ॥ १३ ॥ **करणचरण**रूपानेक—

१३—शास्त्रप्रवीण परिहृतविषयार्थो दानतीर्थप्र [वृत्त]। ग (श) मनियमित-च्चित्तो जातवैराग्यभाव कलिकलिलविमुक्तोपासकीयप्र (व्र) ताढ्य ॥ १४ ॥ कनिष्ठस्तस्याभूद्भुवनविदितो **भूषण** इति श्रिय पात्र—

१४—काते कुलगृहमुमायाश्च वसति। सरस्वत्या क्रीडागिरिरमलबुद्धेरतिवन क्षमा-वल्या कद प्रविततकृपायाश्च निलय ॥ १५ ॥ स्मर (रो) सौ रूपेण प्रवलसु [भ] गत्वेन गणभृत् कुबेर सप—(॥)

१५—त्या समधिकविवेकेन धिषण। महोभत्या मेरुर्जलनिधिरगाधेन मनसा विद-ग्धत्वेनोच्चैर्य इह वरविद्याधर इव ॥१६॥ जैनेन्द्रशासनसरोवरराजहसो मौनी-न्द्रपादकमलद्वय—

१६—चंचरीक। नि शेषशास्त्रनिवहोदक नायनक। सीमतिनीनयनकैरवचारु-चन्द्र ॥१७॥ विदग्धजनवल्लभ सरससारशृगारवानुदारचरितश्च य सुभग-सौम्यमूर्ति सुधीः। प्रसाद—

१७—नपरा नमद्वरविलासिनीकुन्तलव्यपस्तपदपकजद्वितयरेणुरत्युन्नतः ॥ १८ ॥ प्रथमधवलप्राये मेघे गतोपि दिव पुनः। कुलरथभरो येनैकेनाप्यसभ्रममुद्धृवः। गुरुतगविप-

१८—दूगर्त्तग्रावग्रहादुदनादिव (तारि च) स्थिग्मतिमहास्थाम्ना नीतो विभूतिगिरेः शिरः ॥१८॥ द्व भार्ये भूपणस्य स्तः लक्ष्मी सीलीती विश्रुते। पतिव्रतत्वसंयुक्ते चारित्रगुणभूपिते ॥२०॥ स सी-

१६—लिकायामुदपादि पुत्रान् सन्तानयोग्यान् गुरुदेवभक्तः। आलोकसाधारणशातिमुख्यान् स्वबन्धुचित्ताब्जविकाशभानून् ॥२१॥ आयुस्ततमर्हाद्रसारनिहितस्तोकाम्बुवन्नश्वरं

२०—सचिंत्य द्विपकर्णचञ्चलतरा लक्ष्म्याश्च दृष्ट्वा स्थितिं। ज्ञात्वा शास्त्रमुनिश्चयात् स्थिरतरे नूनं यशः श्रेयसी तेनाकारि जिनगृह भूमेरिद भूषणम् ॥ २२ ॥ भूपणस्य क-

२१—निष्ठो यो लल्लाक इति विश्रुतः। देवपूजापरो नित्यं आतुरादेशकृत् सदा ॥ २३ ॥

ज्येष्ठो वाहुकनामा यः सीडकायामजीजनत्
शुभलक्षणसयुक्तं पुत्रमम्वटसज्ञकम् ॥ २४ ॥

२२—वर्पसहस्रे याते षट्षष्ट्युत्तरशतेन संयुक्ते विक्रममानोः काले स्र्थालावयमवति सति विजयराजे ॥ २५ ॥ **विक्रम सवत् ११६६ वैशाख सुदि ३ सोमे** वृषभनाथस्य प्रतिष्ठा ॥

२३—श्री वृषभनाथधाम्नः प्रतिष्ठित भूपणेन बिम्बमिदं। उच्छूणकनगरेस्मिन्निह जगतौ वृषभनाथस्य ॥ २६ ॥ युगल ॥०॥ तुर्यवृत्तात्समारभ्य वृत्तान्येतानि

२४—पोडश। आद्यवृत्तेन-युक्तानि कृतवान् कडुको-बुधः ॥ २५ ॥ माहल्लोवंशेऽभूत्तज्ञः श्रीमान्नटो द्विजः। तत्सूनोर्माडुकस्येयं निःशेषाथ परा कृति ॥ २५ ॥ वालभान्वयकायस्थराजपालस्य

राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क-तार सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि समधिगत-पञ्च-महाशब्द महा-मण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुर**वराधीश्वर **यादवकुला**म्बरद्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेपरोळ् गण्डाद्यनेक-नामावली-समलङ्कृतरप्प श्रीमत् **त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-बनवसेहानुङ्गलु-हलसिगे**-गोण्ड भुजबल **वीरगङ्ग होय्सळ देवरु** श्रीमद्-राजधानि-**दोरसमुद्रद** बीडिनलु सुख-सङ्कथा-विनोददिं पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगळु श्रीमन्महाप्रधानं **हिरिय-मरियाने-दण्डनायंकर** मगं **दाकरस-दण्डनायकर** पुत्ररु द्रोह-घरट्ट-**गङ्गपट्टय-दण्डनायकर बाचरस-दण्डनायकर सोवरस-दण्डनायकर**ळियन्दिरुमप्प श्रीमन्महा-प्रधान हिरिय-भण्डारि-**मरियाने-दण्डनायकरुं** श्रीमन्महाप्रधानं **दण्डनायकं भरतरुम्पणलु शक वर्ष १०६० नेय पिङ्गळ-संवत्सरद पुष्य-सु १० आदिवारदुत्तरायण संक्रान्तियलु तुलापुरुष महादानदलु** तम्म नेलेपूरु **सिन्दङ्गेरेय** बसदिगे श्री**विष्णुवर्द्धन होय्सळ-देवर** कय्यलु धारा-पूर्व्वकं हडेदु बिट्ट **सवणेन-हळ्ळिय** सीमा-सम्बन्धमेन्तेन्दडे (आगेकी २० पंक्तियोंमें सीमाओंकी चर्चा है तथा हमेशा का अन्तिम श्लोक)

(दक्षिण मुख)

जय-जया-शरण रण-क्षिति-हत-क्षत्र हत-क्षत्र- निर्- ।
दय-निर्द्दारित-देह-लोहित-पयश्-शातासि शातासि-दुर्- ।
जय-धारा-चकितारि-रक्षण-भुजा-दण्डं भुजा-दण्ड-को- ।
टि-युवद्-वीर-वधू-प्रमोदि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभं ॥
नय-युक्त-क्रम-विक्रम क्रम-नमद्-भू-मण्डलं मण्डल- ।
प्रिय-वृत्तं प्रिय-वृत्त-सगत-गुण-ग्रामं गुण-ग्रामणी- ।
नयनानन्दकरं करार्प्पित-धनु-ज्र्या-राव-दूरीकृता- ।
रि-यशो-राजि जितोद्धताजि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
अवनी-नूत-यशं यशो-धवलिताशा-मण्डलं मण्डला- ।
ग्र-विलूनारि-बलं बल-प्रभु-नमच्चञ्चच्छिखा-शेखरी- ।

भवदात्माङ्घ्रि-नरवोत्करं कर-गतारि-श्री-विलासं विला- ।
सवती-मानित-मीनकेतु **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
स्मर-लीलं स्मर-लील-लोल-ललित-भ्रू-भ्रू-धनुर्व्विभ्रमो- ।
त्कर-लीलायत-दृष्टि दृष्ट-विलसत्-पुष्पेषु पुष्पेषु-जर्- ।
ज्जरितोन्मत्त-विलासिनी-जन-मनो-मानं मनो-मान-खे- ।
द-रतोत्कण्ठ-वधू-कदम्ब **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
जित-मन्त्रं जित-मन्त्र-नूत-महिम-स्तोमं हिम-स्तोम-शु- ।
भ्रतमात्मीय-यशं यशो-लहरिका-मज्जगत्-तर्प्पि तर्- ।
प्पित-लोक-स्तुत-कीर्त्ति कीर्त्तित-भुज-स्तम्भं भुज-स्तम्भ-सं- ।
भृत-विक्रान्त-वधू-करेणु **भरत**-श्री मच्चमू-वल्लभम् ॥
जित-विद्विष्ट-चमू-चमूप-विलसन्मन्त्रं लसन्मन्त्र-सा- ।
धित-दुर्व्वृत्त महो-महोर्जित-मही-चक्र मही-चक्र-सं- ।
स्तुत-दोर्म्मण्डल मण्डलाग्र-दमितानम्रारि नम्रारि-कीर्- ।
त्तित-दिग्-वर्त्तित-जैत्र-लक्ष्मि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
प्रतिपक्ष-क्षिति-केतु केतु-जनित-द्विड्-भीति भीति-द्रुता- ।
श्रित-रक्षा-निळयं लयानल-लुठत्-तापाग्नि-कोपाग्नि-शो- ।
षित-युद्धोद्धत-जीवनं वन-शिखि-प्रोद्यत्प्रतापं प्रता- ।
प-तत-श्री-परिलब्ध-लक्ष्मि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
करवाळाहत-विद्विषं द्विषदसृक्-पूर-प्लुतेभं प्लुते- ।
भं रथालम्बित-खड्गि खड्गि-निहतश्वौघं हताश्वौघ-जर्- ।
जरिताश्वौघ-विकर्षि-फेरव-रव-व्याजृम्भितं जृम्भितो- ।
द्धुर-दोर्द्दण्ड-मवजिताजि **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
ललनानीकमनो-मनोभव भव-स्फाराळिकाख्यानळो- ।
ज्वळ-तेजो-निज-बाहु बाहु-निहत-द्विड् (द्वि) द्विट्-च्छिरो-देवकीर्- ।
त्ति-लता-वेल्लित-वार्द्धि वार्द्धि-वलय-क्षोणि-तळ-स्तुत्य निन्- ।
न लसद्-वद्ददोळिक्के लक्ष्मि **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥

(पश्चिम मुख)

जिनपति देय्ववाळ्दप ......विष्णु-नृपाळम् तनयनी-जगद्- ।
जन-नुत-मन्त्रि दाकरसनव्वे यशोधिके दुग्गणब्बे स ....।
.. .. ति-बान्धवर्मेरिगनग्रजनेन्द्दे वण्णिस सु...के वल्- ।
लने पेरनुब्बियोळ् भरतनुद्ध-गुणगळोळाद पेम्र्मेयं ॥
सिरि पोस-मुत्तिनेक्कसरदन्तिरे निन्न विशाळ-वत्तदोळ् ।
सरसति वक्त्रदोळ् तिळकदन्तिरे वीरर वीर-लक्ष्मि तोळ्- ।
वेर-गिनोळोप्पे रक्के-वणियन्तिरे निम्र्मळमप्प कीर्त्तियम् ।
भरत-चमूप ताळ्दु शशि-सूर्य्य-कुलाद्रि-चयङ्गळु ल्लिनम् ॥
अनतारि-श्री-समाकर्षणवभिजन-दारिद्र्य-तीव्र-ग्रहोच्चा- ।
टनवत्युग्र-द्विषन्मारणवनुळ-मयार्त्तावनीपाळक-स्तं- ।
भनवुर्व्वी-वश्यवात्मावनि-परिवृढ-शान्त्यर्थं-मन्त्रं जगन्मण्- ।
डन-कीर्त्ति-श्रीश विद्वन्निधि भरत-चमूनाथ नीनोन्दे मन्त्रम् ॥
हरि मरदिन्दे कित्तेळद तारद कल्लेडेयल्लदाग्रहम् ।
वेरसु बुधोत्करम् तिरियदुब्बिगे मध्यमवेम्ब निन्देयोळ् ।
पोरेयद मेरुवेन्दपुदु धारिणी विप्र-कुल-प्रदीपनम् ।
भरत-चमूपन मदन-रूपननप्रतिम-प्रतापनम् ॥
हृदयं कारुण्य-पीयूषद पुटिदोदवाळोकनं चारु-दाक्षि- ।
ण्यद केळी-गेहवास्याम्बुजवरिवळ-कळा-गर्भ-सन्दर्भविष्ट- ।
प्रदबुधद्-भ्रू-लतास्पदवमर-सरित्-पूतवाच्चारवायेम् - ।
बुदेनेन्दन्दन्य-सामान्यने भरत-चमूपं मनोजात-रूपम् ॥
भुज-दर्प्पं शौर्य-गर्भं विलरणवधिक-प्रीति-गर्भं सु-नेत्रं- ।
भुजमुं दाक्षिण्य-गर्भं वदन-शशि कळा-गर्भवाचार-सारम् ।
त्रि-जगत्-सत्स्तोत्र-गर्भं निरुपम-विलसन्मूर्त्ति शृङ्गार-गर्भम् ।
निजमेन्दन्दन्य-सामान्यने भरत -चमूपं मनोजात-रूपम् ॥
मत्ते कृत-युगमे, बन्दन्दु । उत्तम-पुरुषरने पडेवडेनगे दलीतम् ।

विट्टेन्दु कादपं विदि । बित्तरदिं **भरत**-राज-दण्डाधिपनम् ॥

संकण्ण ॥

घनमेल्लं जिन-मन्दिरक्के दयेयेल्लं प्राणि-वर्गक्के सन्- ।
मनमेल्लं जिनराज-पूजेगे समन्त् औदार्य्यमेल्लं विशि- ।
ष्ट-निकायक्केसवन्न-दान-गुणमेल्ल सन्मुनीन्द्राळिगेम्- ।
विनेगं सच्चरितं चमूप-**भरतं** माळ्पं महोत्साहमम् ॥
प्रभविसुगे विभवमीश्वर- । निभ-मूर्त्ति विरोधि-विक्रम-व्रय-केतन ।
शुभ-कृद्-गुण निनगे चमू- । प्रभु **भरत** सहस्र-वत्सर पुगु-विनेगम् ॥
अति-सुभग-सुन्दराकृति । सततं निनगोप्पि **भरत** नीं निजदिन्दम् ।
चित-मदननागे निन. । . य माडिदुदिळा-तळं भूतलदोळ् ॥

(उत्तरी मुख)

श्री-मूल-संगद देशिय-गणद पोस्तक-गच्छद कोण्डकुन्दान्व-यदाचार्य्यरु श्री-कुळचन्द्र-सिद्धान्त-देवरु ॥ अवर शिष्यरु ॥

एळ-मावि वनमव्वदिं तिळि-गोळम्माणिक्यदिं मण्डना- ।
वळि ताराधिपनिं नभं शुभदमागिप्पन्तिरिद्दत्तु निर्- ।
म्मलमीगळ् **कुळचन्द्र-देव**-चरणाम्भोजात-सेवा-विनिश्- ।
चल-सैद्धान्तिक-**माघनन्दि** मुनियिं श्री-कोण्डकुन्दान्वयम् ॥
श्री-**माघनन्दि-देवर** । कोमळ-पद-कमळ-युगळमं स्मरयिपड् ।
आ-मानवरं पोद्दुदु । भीमोरग-विष-रुजा-महोग्रह-दोषम् ॥

अवर शिष्यरु ॥

दण्डित-दण्ड-त्रयरा- । खण्डल-पति-विनुत सत्-तपस्सम्पदनुत् ।
खण्डित-मदनेनलेसेदं । **गण्डविमुक्त-व्रतीश-**राद्धान्तेशम् ॥

(यह लेख यहीं तक पाया जाता है ।)

[जिस समय महाराजाधिराज, परमेश्वर, परम-भट्टारक सत्याश्रय-कुल-तिलक, चालुक्याभरण, श्रीमत्त्रिभुवन मल्लदेवका विजय-राज्य उत्तरोत्तर प्रवर्द्धमान था—

तत्पादपद्मोपजीवी (हमेशा की उपाधियों सहित) तलकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि, नोळम्बवाडि-बनवसे-हानुङ्गल और हलसिगेको अधिकृत करनेवाले, वीरगङ्ग होय्सळ-देव अपनी राजधानी दोरसमुद्रमें विराजमान थे —

तत्पादपद्मोपजीवि,—महाप्रधान प्राचीन मरियाने-दण्डनायकके पुत्र डाकरस-दण्डनायकके पुत्र तथा गङ्गपय्य-दण्डनायक, बाचरस-दण्डनायक और सोवरस-दण्डनायकके दामाद,—महाप्रधान, प्राचीन भण्डारी, मरियाणे-दण्डनायक, और महाप्रधान दण्डनायक भरतमय्यको (उक्त मितिको), विष्णुवर्द्धन-होय्सळ-देवके हाथोंसे सवणेनहल्लिमें उनके निवासस्थान मिन्दङ्गेरेकी 'बसदि' के लिये कुछ ज़मीन (वर्णित) मिली।

(यहाँ भरतकी प्रशसामे बहुत ही साहित्यिक-कला-पूर्ण श्लोक हैं।)

मूलसंघ देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कुन्दकुन्दान्वयके आचार्य कुलचन्द्र-सिद्धान्त-देव; उनके शिष्य (प्रशसा सहित) माघनन्दि मुनि, उनके शिष्य, गण्ड-विमुक्त-व्रतीश थे।]

नोट —लेखमें आया हुआ 'सकण्ण' नाम संभवतः भरत-दण्डनायककी प्रशसा-के श्लोकोंके कर्त्ताका नाम जान पड़ता है।

[EC, VI, chik-magalur U., no. 161]

३०८

सिन्दिगेरे—संस्कृत तथा कन्नड।

[काल-निर्देश रहित, पर सभवतः लगभग ११०३ ई०]

[सिन्दिगेरेमें, बस्तिमें ब्रह्मेश्वर मन्दिरके एक पाषाण पर]

श्रीमत्-परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रय श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परम-भट्टारक सत्याश्रय-कुल-तिलक चालुक्याभरणं श्रीमत्-त्रिभुवनमल्ल-देवर विजय-राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क्क-तारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मो-

पनीवि। स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महाशब्द महा-मण्डलेश्वरं द्वारावती-पुरवराधी-श्वरं **यादवकुला**म्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेपरोळ् गण्डाद्यनेक-नामा-वली समलङ्कतरप्प श्रीमत्-**त्रिभुवनमल्ल विनयादित्यं पोय्सळं कोङ्कण-वाळ् वखडद वयल्-नाड तळेकाड सावमलेयि**नोळगाद भूमियेल्लमं दुष्ट-निग्रहशिष्ट-प्रतिपाळनेयिं।

बलिदडे मलेदडे मलेपर। तलेयोळ् वाळिडुवनुदितभय-रस-वसदिम्।
बलिपद मलेपद मलपर। तलेयोळ् कय्यिडुवनोडने **विनयादित्यम्**॥
आ-मण्डलेश्वरन मनो-नयन-वल्लभे।
परिजनकं पुर-जनकं। परमार्थं ताने पुण्य-देवतेयेनलेम्।
धरेयोळ् नेगल्दलो **केळेयब्बरसि** जनाराध्ये भुवन-वनिता रत्नम्॥

अन्तवरिर्व्वरुं सुख-संकथा-विनोददिं **सोसेवूर** नेलेवीडिनोळ् राज्यं गेय्यु-त्तिर्द्दु-**केळेमल देवियरुं मरियाळे-दण्डनायकनं** तन्न तम्मनेन्दु रक्षिसि **विनयादित्य-पोय्सळ-देवरुं** तानुमिद्र्दु मरियाने-दण्डनायकङ्गे **देकवे-दण्डना-यकितियं** कन्या-दानं माडि **आसन्दि-नाड सिन्दगेरेयं** प्रभुत्व-सहितं नेले-यागि **शक-वर्ष ९६९ नेय सर्व्वजित्-संवत्सरद फाल्गुन-शुद्ध-तदिगे सोमवारदन्दु** कन्या दानमुं भूमि-दानमुं धारा-पूर्व्वकं कोट्टु स्वधर्म्मदिं रक्षिसु-त्तमिरे।

धरणिगे नेगर्द्दा-पोय्सळ। नरपतिगं कमन-कम्बु-कन्धरे केलेयब्-।
रसिगमुदयिसि नेगर्द। धरित्रियोळ् वीर-गङ्ग **नेरेगङ्ग-नृपम्**॥
अनुपम-कीर्त्ति मूरनेय मारुति नाल्कनेयुग्र-वलिनियय्-।
दनेय-समुद्रमारनेय-पू-शणेयेळनेयुव्वरेशनेण्-।
टनेय-कुलाद्रियोम्बननेयुद्गत-दान-समेत-हस्ति पत्।
तनेय-निधि प्रभावनेने पोल्ववरारेरेयङ्ग-देवनम्॥
आ-विभुगं नेगर्द्देचल-। देविगमुदयिसिदरदटरेने **बल्लालक्ष्मावल्लभ-विष्णु-**
धरि-। त्री-वल्लभ-सु-भट-नुतिमदुदयादित्यर॥

एनितित्तडमेनितिरिढड- । मनिताप्पुंम् कूर्प्पंमप्पुवेपेरर्गद्दु केम् ।
मने नोड दिट्के वल्ला- । ल-नृपालने चागि बल्लु-देवने बिर ॥

अन्तु सुख-सकथा-विनोददिं श्रीमद्राजधानि **वेलुहूर** वीडिनोलु राज्यं गेय्युत्त-मिद्र्दुं **मरियाने-दण्डनायकन** द्वितीय-लक्ष्मी-समानेयरप्प **चामवे-दण्डनाय-कितिगं** पुट्टिद **पद्मल-देवि-चावल-देवि बोप्पादेवि**यरिन्ती- मूवरुं शास्त्र-गीत-नृत्यदलु प्रौढेयरु मूरु-राय-कटक-पात्र-जस-दलेयरेनसि वलेयला-मूवरु -कन्यकेयर-नोन्दे हसेयलु **बल्लाल-देवं** विवाहं माडि **शक-वर्षं १०२५ नेय स्वभानु-संवत्सरद कार्त्तिक-शुद्ध १० बृहस्पतिवारदन्दु** मोले-वाल-रिणक्के **मरियाने-दण्डनायकङ्गे सिन्दगेरेय**-नेरेढनेय-पर्यायदलु प्रभुत्व-सहित नेलेयागि पुनर्धारा पूर्व्वक कोट्टु सलुत्तमिरे ।

श्री-कान्ता-नेत्र-नीलोत्पल-वदन-सरोजात-स--स्मेर-लीला-
लोक लोकत्रयोज्जृम्भित-विशद-यशश्चन्द्रिकादोष्प्रताप-
व्याकीर्णां त्यक्तयुक्तक्रमकलितकुभृच्चक्रखेदप्रमोद-।
श्रीक श्री-**विष्णु** भूपं वेळगुगे जगमं राज-मार्त्तण्ड-देव ॥
इनितं कोपावलेप-भ्रुकुटि निटिलदोळ् पुट्टे तेप्पुत्तिव तोप्-
पेने माप्पीयु दिशाधीशरनिदिर दिशाधीशरोळ् तागिक्कु तिप्
पेनेलाशा-दन्ति-यूथङ्गळधिदिर दिशा दन्ति-यूथङ्गळोळ् पुण्-।
मेने तालङ्डुगुं व्योममुमनेलेयुमं **विष्णु** जिष्णु-प्रभाव ॥
पेसर्गोण्डावाव-देशङ्गळनेणिसुवुदावाव-देशङ्गळंव-।
ण्णिसि पेळुत्तिप्पुदावाववनि-पतिगळ लेक्किसुत्तिप्पुदेम्बोन्द् ।
एसकं कैगण्मे नाळ्कुं-कडल तडि-वरं दिग्जय-क्रीडेपोळ् सा- ।
धिसिद भू-लोकमं क्षत्रिय-कुल-तिलकं वीर-**विष्णु**-क्षितीशं ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महामण्डलेश्वरं **द्वारावती-पुरवरेश्वर यादव** कुलोदयाचल-द्युमणि । मण्डलिक-चूडामणि । श्रीमदच्युत-पादाराधनालब्ध-जिष्णु-प्रभावम् । सकल-दिक्पालक-पराक्रमाक्रमण-पटु-पराक्रमैक-स्वभावम् । शत्रु-क्षत्रिय-कलत्र-गर्भ-स्रव-सम्पादक-गभीर-विजय-शङ्ख-नादम् । वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसा-

दम् । प्रतिदिन-निरत-निरुपम-हिरण्यगर्भ-तुलापुरुषादि-क्रतु-सहस्र-समर्पित-पितृ-देव-गुरु-द्विज-समाजम् । निष्प्रतिपक्ष-भुज-बल-प्रभाव-निर्ज्जिताधिराज । विष्णु-ईश्वर-विजय-नारायणाद्यसंख्यात-देव-कुल-कुलाचल-कुल-यादवबलधि - विष्णुसमुद्र-मुद्रित-महीलोक-नवीकरण-चातुर्य्य-चतुराननम् । चतुर्गण-मण्डित-पण्डित-गोष्ठी-षडाननम् । समर-मुख-गृहीताहित-महीकान्त-शुद्धान्त-कान्ता-मुख-निरीक्षण-क्षण-कृत-सूर्य-निरीक्षणम् । नृसिंह-ध्यान-निश्चलीभूत-निर्म्मल-चरित्रम् । पुराङ्गना-पुत्रम् । सकलजन-सत्य-नित्याशीर्व्वाद-सम्पादित-निरन्तराभिवृद्धि-प्रयुक्तम् । दुर्द्धरसमरकेलि-संसक्तम् । दोर्व्वलापलेप-दुश्शीलाश्वपति-गजपति-प्रमुख-राज - लोक-निर्दय - निर्द्दलनोपार्ज्जिताश्व-गजादि-नाना-रत्न-निचय-रुचिर-राज्यलक्ष्मी-विलासम् । सरस्वती-निवासम् । **चोल-कुल**-प्रलय भैरवं । **केरल**-स्तम्बेरम-राज-कण्ठीरवम् । **पाण्ड्य-कुल**-पयोधि-वडवानलम् । **पल्लव**-यशो-वल्ली-पल्लव-दावानलं । **नरसिंह-वर्म्म**-सिंह-शरमम् । निश्चल-प्रताप-दीप-पतित-**कलपालादि-नृपाल**-कुरंग-कुल-पलायन-कारण (म्)-कठोर-विजय-धनुर्द्दण्ड-टङ्कारम् । रिपु-नृप-कुल-दलन-जनित-विजयालंकार-निजाज्ञा-चण्ड-डिण्डिमाडम्बरा-लंकृत-**काञ्ची-पुरम्** । स्व-गृह-चेटिका-नियोग-नियुक्त-रिपु-नृपान्तःपुरम् । कर-तल-क्रोधीकृत-दक्षिण-**मधुरापुरम्** । स्वकीय-सेना-नाथ निर्द्दलित-**जननाथपुरम्** । जगद्-दारिद्र्य-विद्रावण-प्रवीण-कटाक्ष-निरीक्षणम् । प्रत्यक्ष-पद्मेक्षणम् । समुद्र-मेखलालङ्कृत-वसुमती-वल्लभम् । भय-लोभ-दुर्ल्लभम् । नामादि-प्रशस्ति-सहितम् । श्रीमत्-कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गङ्ग**विष्णु-वर्द्धन-देवम्** **गङ्गवाडि-तोम्भत्त(त्ता)**रु-सासिर **नोळम्बवाडि-सूवत्तिर्च्छा**सिर मुमं **बनवसे-**पन्निर्च्छासिरमुमं । दुष्ट-निग्रह-विशिष्ट-प्रतिपालन-पूर्व्वकमाल्दु सुख-सङ्कथा-विनोददिं राज्यं **पन्नि-**गेय्युत्तिरे तत्पादपद्मोपजीविगळु । समस्त-राज्य-भर-निरूपित-महामात्य-पदवी-प्रख्यातरुम् । अभिजातरुम् । श्रीमदर्हत्-परमेश्वर-पद-पयोज-षट्चरणरुम् । रत्नत्रया-लंकृत-शम-दम-नय-विनय-धीर-वितरणादि-गुणाभरणरुम् । कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गग-**विष्णुवर्द्धन**-देवान्वयागत-महा-प्रचण्ड-दण्डनाथ-पदवी-पट्ट-रञ्जित-निटिळाकेन्दु-मण्डलरुम् । निरवद्य-स्याद्वाद-लक्ष्मी-रत्न-कुण्डळरुम् । नित्याभिषेक-निरत-निरुपम-जिन-पूजा-महोत्साह-जनित-प्रमोदरुम् । चतुर्व्विधदानविनोदरुम् । श्रीमदकलङ्क-दर्शन-

लक्ष्मी-नयनोपमानरुम् । परस्पर-स्नेह-मोहाधीनरुमप्प श्रीमन्महा-प्रधानम् **मरि-याने-दण्डनायक-नुं** श्रीमदादि-**भरतेश्वर**नेनिप **भरतेश्वर दण्डनायक**नुम् तम्मोळ-भेद-भावदिं-गुण-गुणि-स्वरूपरागि ।

भीमार्ज्जुन-लव-कुचरिव- । री-माळकेयेनल्के तम्मुतिर्व्वरुमेसदर् ।
श्रीमन्मरियानेयमुद्दाम-गुणं **भरत**-राज-दण्डाधिपरु ॥
एरगि बुध-मधुकरङ्गळु । पेरपिङ्गदे तननेन्दुमोलगिपिनेगं
मरियाने दान-गुणवेडे- । वरियदिरलु पतिगे पट्टदानेयेन्देनिप ॥
मरुवक्रमनोडिसलुं । नेरे राज्य-श्री-विळासमं मेरेयलुवी- ।
मरियाने नेरगुमेन्दर- । करिनोळु पति मेच्चे पट्टदानेयुमाद ॥
उन्नत वंशनुत्सवकरोत्तम-भद्र-गुणान्वितं जगत् ।
सन्नुत-दान-युक्त-विभवं मरियाने रिपु-प्रभेदनोत्- ।
पन्न-च्छायाभिराममनेनपोतने नच्चिन पट्टदानेयेन्द् ।
एम् नेरे नच्चि माडिदनो विष्णु-नृपं ध्वजिनी-पतित्वमम् ॥
एरगुव दिविजर मकुटद । दुरुगिद माणिकद तण्-विसिलुगळ पोलपिम् ।
मिरुगुव जिन-पद-नख-रुचि । मरियानेगे माल्के सकल-महिमास्पदमम् ॥
आतन सति मुन्नेगदो- । सीतेगरुन्धतिगे रतिगे वाणिगे भूभृज्-
जातेगे दोरेयेनलल्लदे । भूतळदोळु जक्कणब्बे गुळिग्गदोरेये ॥
अनुपमवप्प तन्न पति-भक्तिय निर्म्मल-धर्म-युक्तियोळ्- ।
पिनोळमदिर्द्द रूपिन विळासद । विभ्रमदोळपु वंश-वर्- ।
द्धन-करमप्प तत्सुतरिनोप्पुविनं मरियाने-दण्डना- ।
यन वधु-जक्कियक्कने यशोवतिपादलीला-दळाग्रदोल् ॥
तोळनोळगि बेळगि कीर्त्ति [यं] । ग्ळदिनळकट्ट विष्णु-भूपन राज्य- ।
स्थळके मिलुपेसेव हेमद । कलशं केवलमे **भरत**-दण्डाधीशम् ॥
सिरि पोस-मुत्तिनेकसरदन्तिरे निन्न विशाल-वक्षदोळ् ।
सरसति वक्त्रदोळ् तिलकदन्तिरे वीरर वीर-लक्ष्मि तोळ्- ।
वेरदिनोळ्पे रक्के-वपिनन्तिरे निर्म्मळवप्प कीर्त्तियन् ।

भरत-चमूप ताळ्दु शशि-सूर्य्य-कुलाद्रि-चयङ्गळुल्लिनम् ॥
वारिधि-वृत-भू-लोकदो- । ळारयलीविरिव-गुणदोलमम भरतङ्ग ।
आद मणं तोणे यह्लद । धीरर्कलि-युगदोळोगेदे दण्डाधीशर् ॥
लोगर मातवन्तिर्पलि माण् भरतं मुनिदेत्ते मत्ते कोळ्- ।
पोगद वैरि-दुर्ग्गं मुरिदेळद वैरि-पुरङ्गळोळोडि पाळ्- ।
आगद-वैरि-देशमत्ति-भीतियिनुळ्ळुदनित्तु तेत्तु बाळ् ।
आगद-वैरि-वीर-रणमिह्ल दली-दोरे तत्पराक्रमम् ॥
मनेयोळ् चाणिक्यनिन्दम् मिगिलेनिप महा-मन्त्रि नाना-नयज्ञम् ।
मोनेयोळ् सौपर्न्ननिन्दग्गळमेनिप महा-वीरनभ्यस्त-शास्त्रम्
मनेगममरान्तु निन्दोड्डिद मोनेगमिदेम् दत्तनेन्दर्क्करिन्दाळ् ।
दाने तन्नं वण्णिसल्केम् नेगर्दनो **भरतं** खळ्ग-कार्य्यातिधुर्य्यं ॥
भरतेश्वर-चन्द्र श्वर- । चरितमे निज-चरितमेने चमूपति भरते- ।
श्वरनेसेवनन्विताखिल- । पुरुषार्त्थं भव्य-सेव्य-जङ्गम-तीर्त्थ ॥
निरपायं निष्कळङ्कं निहत-रिपु-कुलं निर्भ्भराशा-जय-श्री- ।
परिरम्भारम्भ-शुम्भत्-सुखमयमतितीव्र-प्रताप-प्रकाश- ।
स्फुरितं पद्माकराब्ज-ग्रहण-कठिन--नित्योदयं लोकदोळ्सु-
स्थिरमक्के दोर्-यशश्श्री-रत-भरत भवद्भाग्यचण्डांशुबिम्ब ॥
कान्तं श्री-भव्य-चूडामणि **भरत**-चमूनाथनात्यन्तिक-श्री- ।
कान्तं त्रैलोक्य-नाथं परम-जिनने देय्वं समभ्यस्त-सत्-सि- ।
द्धान्त-श्री **माघणन्दि-व्रतिपरे** गुरुगळ् तन्दे **माराय** रेन्दन्द् ।
एन्तुं ता धन्येयेन्दी-**हरियलेयेने** भू-मण्डळं बिच्चलिक्कुम् ॥

इन्तु तन्न भाग्याभिवृद्धियुं समस्त-जनमुं परसे चतुरुपधा-विशुद्धनुम् जगत्-सेव्य-साचिव्य-स्वयम्बुद्धनुं महा-युद्ध-व्यसन-विरोधि वीर-भटोद्भट-भुज-बळवलेपन-विळोपनाभिनव-**जयकुमार**नु विनेय-जनाधारनुं श्री-जैन-शासनोद्धासनोत्पन्न-सौधर्म्मेन्द्रनुं परम-परोपकार-गुण-खेचरेन्द्रनुम् । श्रीमत्कक्षि-गोण्ड वीर-**विष्णुवर्द्धन-देव**नणुगिन-वर्करिन दण्डनायकनु जगद्वशीकरण-परिणत-सौभाग्य-कुसुमशायकनुमेनिसि **भरत**ण-

दण्डनायकनु-मग्रजं-**मरियाने-दण्डनायक**नुमन्वयागत-महा-प्रधान-पदवियन .,.
रिसि ।

अरियं व्यावर्णिसळान् । अरिवाय्र्यणमेम्ब सद्गुण-त्रितयदोळम् ।
नेरेदरु जसमने जगदोळु । मरेदरु **मरियाने-भरत**-राज-चमूपर् ।
मरियानेय पडेदं जग- । उरुवनुजनकनेम्बुदन्ते भरत-राजने पडेदम् ।
पेरडेम् मूरु-लोकमुव् । उरुवण्णननेम्बुदवरनी-भुवन-जनम् ॥

इन्तु पोगळ्तेगं नेगळ्तेगं नेलेयादा-महानुभावरुत्पत्तियिं पवित्रीभूतमुमाद **भार-द्वाज-गोत्र**दोळु ।

आ-कमळगर्भ-वंशदो- । ळ् एकीकृत-भुवन-मान्य-सौजन्यं ता ।
दाकरसनति-प्रौढ-वि- । वेक-रसं ख्यातनातनन्वय-तिलकम् ॥
स्वीकृत-सद्-गुण-निकरम् । लोक-प्रभु-गंग-राज्य-**पोय्सल**-राज्यक्क् ।
एक प्रभुवेने नेगळ्दं । **डाकरसं** दण्डनाथ-वसुधा-रत्नम् ॥

आतन मनो-वल्लभे **येचियक्क** ।

आ दम्पतिगळ्गात्मज । रादर् **माकण**-चमूप-**मरियाने**गळी- ।
मेदिनी तम्मनिवर्च्चन्- । द्रादित्यरमोघमप्परेने कृत-कृत्यर् ॥
पेसरिन्दं मरियानेयेम्ब-जसवं...दियु वल्लिनिन्द् ।
एसेवेण्दु देसेयानेगळ्गमधिकं तानेम्बिन तन्नोळे र्- ।
ञ्वेसनुं दानमुमोप्पे होय्सळ-नृप गो..........सा- ।
धिसिद श्री-मरियाने पार्थिवर सङ्गरावणी-रङ्गमम् ॥
आ-मरियानेय वधुगळु । भूमिय लक्ष्मिय वोलमर्दति-पेम्पिन्- ।
तामेसेव ग......... । ....गुणवतियर् ॥

अन्तु मद-गजद मद-रेखेगळन्ते **मरियाने**-दण्डनायकनोळोप्पमब्रेदा-वेडङ्गियरिर्व्व
.. .. युमेनिसिद **दण्डनायकिति-देकव्वेगे** ।

सुतराद**भाचि**णनु- । मतदर्य-विक्रान्त-शाळि-**दाकरस**नु
जरु ॥

श्रीमन्माचण-दण्डनायकने कल्पोर्व्वीनमुर्व्वीतळ..... .. ..

....

[जिन शासनकी प्रशंसा। सत्याश्रम-कुल-तिलक, चाळुक्याधीश श्रीमत् त्रिभुवन मल्लका राज्य प्रवर्द्धमान था —तत्र यादव कुलाम्बरद्युमणि त्रिभुवनमल्ल विनयादित्य पोय्सल कोंकण, आल्वखेट, बयल्-नाड्, तलेकाड् और साविमलेसे घिरे हुए भूमि-प्रदेशपर राज्य कर रहे थे। उनकी पत्नी केलेयब्बरसि थी। (दोनोंकी प्रशसा)।

जिस समय ये दोनों राजा-रानी सोसेवूरमें निवास कर रहे थे, केलेयल देवीने विनयादित्य-पोय्सलकी उपस्थितिमें मरियाने-दण्डनायकको देकब्बे-दण्डनायकित्ति-की सगाई कर दी। (शक वर्ष ९६९में)।

उसके बाद पोय्सल राजाओंकी, अन्य शिलालेखोंके समान ही, विष्णुवर्द्धन तककी उत्पत्ति दी है, अर्थात् एरेयङ्ग और उनके तीन लड़के बल्लाल, विष्णु और उदयादित्य।

विष्णुवर्द्धनके दो प्रधान मन्त्री थे: मरियाने दण्डनायक और भरतेश्वर दण्ड-नायक। (इन दोनों की और इनके कुटुम्बकी प्रशसा)। मरियानेकी एक स्त्री जक्कनबे थी। दूसरी पत्नी देकब्बे-दण्डनायकितिसे दो पुत्र उत्पन्न हुए, माचण और डाकरस। माचणकी प्रशंसा।]

[EC, VI, chik magalur U., no. 160]

३०६

श्रवणबेलगोला—कन्नड।

[कालनिर्देश रहित]

[जै० शि० सं०, प्र. भा.]

३१०–३११

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १०६१ (?)= ११३९ ई०]

३१२

बादामी—कन्नड़।

[शक १०६१ (?)= ११३९ ई०]

नम श्री-वासुदेवाय भोगिने योगमूर्त्तये ।
इरेश्वराय सत्याय नित्याय परमात्मने ॥

स्वस्ति समस्त भुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक [सत्या] श्रय-कुळ-तिळक चाळुक्याभरण [श्री] मत्-प्रतापचक्रवर्त्ति जयदेकमल्लदेव [र] विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमा-[च]न्द्रार्कतार वर सलुत्तमिरे [।।] [त]त्पादप[द्मो]पजीवि [।] श्रीवल्लभनमळ' मृ [दे]गाद्रि सरोजभृङ्गनङ्गजकल्प कोविद-शुक-सहकारं देव श्रीकालिदासदण्डाधी[श]म ॥ समधिगतपं[च]महाशब्द महासा[म]न्ता[धि]पति महाप्रचण्डदण्डनायक समस्ताधिकारि मनेवेर्गडे काधम[र]स......ने (?) गल्द (?) कालिदासचमूनाथनाद......................भुवनैकनिळयं श्री-ना...............धीशं ॥ मत्तन्ते काळिमरसद्भुत्तम[1].... ...महादेव-चमूपोत्तमनुदग्रमहिमं मत्तेभमल विनीतनाततश्री(श्री)र्य ॥ दन्तेनिसिद महादेव-दण्डनायकनु पालदेवदण्डनायकनुं चालुक्य-जगदेक मल्लवरिषद पस्वे(ट)नेय सिद्धार्त्थि-संवत्सरद कार्त्तिक सु(शु)द्ध त्रयोदसि (शि) सोमवारदन्दु श्रीमद्योगिजनहृदयानन्दनोनप परमानन्ददेवर मार्टिव(ड) योगेश्वरदेवगों बादामिय सिद्धापदोळगे इतु (त्तु) गद्याण पोन्नु वरिसवरिसक्के कुन्दुएदेन्दाचन्द्रार्क्कस्थायियागे (गि) पेमार्टे-रामदेव-रसन श्रिपदिं बिट्टरु ॥ [कम] दिन्दिदिद [नेय्दे काव पुरुपक्कायु' [जय] श्रीयु [मक्कें] थिर्द कायदें [काय्व पापिगे कुरुक्षेत्रं] गळोळ्, वार

1. सम्भवतः यहाँ पाठ 'उत्तमगुपुत्र मोरोढ' है ।

[णासियोळे र्-कोटि मुनीन्द्रदं कविले] यं चेटाल्यरं कोन्डुदेन्दयश मागु] मि(दें) [डुसारिदपुदी शैलाद्वरं धात्रियोळु ॥]

यह लेख बताता है कि किस तरह, जगदेकमल्लके राज्यके द्वितीय वर्ष सिद्धर्थि संवत्सरमें उसके दो अधीनस्थ दण्डनायक **महादेव** और **पालदेव**ने रामदेव नामके किसी सरदारकी प्रार्थना करने पर मन्दिरको वार्षिक दानके रूपमें १० गद्याण 'सिद्धाय' नामके करकी आयसे दिये।

चालुक्य वंशावलीमें दो जगदेकमल्ल आते हैं: एक तो **जयसिंह द्वितीय** जिसका काल, सर डब्ल्यू ईलियट (Sir W. Elliot) के मतके अनुसार, **शक ९४० से ९६२ (?)** है,—और दूसरा **सोमेश्वर तृतीय का ज्येष्ठ पुत्र एवं उत्तराधिकारी**, जिसकी सिर्फ उपाधि, नाम नहीं, शिलालेखों में आता है और जिसका समय, उसीके अनुसार **शक १०६० से १०७२** है।

इस प्रकार दोनोंके राज्यके प्रारम्भका अन्तराल १२० (१०६०–९४०) वर्ष आता है। यह काल २ युगके बराबर होता है। इसके संवत्सरका नाम तथा राज्यका वर्ष अभी भी लेखको सन्देहापन्न बनाये रखते हैं। लेकिन ईलियटके मैनुस्क्रिप्ट कलैक्शन (Elliot Ms. Collection) से जे. एफ. फ्लीटको इस बातका पता चला कि जयसिंह द्वितीयने 'श्रीमत्प्रतापचक्रवर्त्ति' यह पदवी कभी धारण नहीं की थी, और उधर यह पदवी सोमेश्वर द्वितीयके उत्तराधिकारीकी उपाधियों में हमेशा आती है। अतएव यह लेख द्वितीय जगदेकमल्लके समयका है, और इसकी तिथि **शक १०६१ (११३९–४० ई०)** है, जो कि **'सिद्धार्थ' संवत्सर** था।]

३१३

हुद्रि—संस्कृत तथा कन्नड़।

वर्ष कालयुक्त [११३९ ई० (लू. राइस)।]

[हुद्रिमें, वन-शङ्करी मन्दिरके पूर्वकी ओरके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

भद्रं समन्तभद्रस्य पूज्यपादस्य सन्मते ।
अकलङ्कगुरोर्भूयात् शासनायाघनाशिने ॥
धुरदोळ् चाळुक्य-चक्रेश्वरनधिक-बळं तैलप सत्य-रत्ना- ।
करना-सत्याश्रयं विक्रम-भुज-बलदिं विक्रमादित्य भूपम् ।
वर-तेजं अय्यणं भूतळ-नुत-जयसिंह मनोजात-रूपम् ।
धरेपोळ् त्रैलोक्यमल्लं निरुपमनेसेदं सोमनुर्व्वी-ललामम् ॥
त्रिभुवन-जन-नुतनेसेदम् ।
त्रिभुवनमल्लं विरोधि-बळ-हृत-सेल्लम् ।
विभवद भूलोकमल्लं ।
विभु सले जगदेकमल्ल नाळद धरेयन् ॥
कुन्तळ-विषयक्काधिपति ।
कुन्तळ-चक्रेशनल्लि वनवसे नागेळ् ।
कन्तु-श्री-निळयं सले ।
भ्रान्तेम् जिडुलिगेयल्लियुद्दरेयेसेगुम् ॥
बेळे दिह्ना-गन्ध-शाळी-वन-परिवृतदिम् तेङ्गु-पङ्केज-षण्डड्-
गळि (नो)प्पं पेत्तु तोप्पां-वकुल-तिळकाद चम्पकाशोक-जम्बू- ।
कुळदिं जम्बीर-पूगद्रुम-कुरवकदिं नागवल्ली-लटाकद् - ।
गळिनादं हर्म्यदिन्दुद्दरे बुध-जन-सम्प्रीतियं माळ्पुतिक्कुं म् ॥
धरणीशं गङ्ग-वंशं जन-नुतनिरिवा-चट्टिगं वैरि-भूपा- ।
ळरुमं बेङ्कोण्ड-गण्डं सोगयिसे हरि-वा-कञ्चिगंबाळियिट्टम् ।
मरेयं तान.. नाडोळगण हणवं कोण्डना-मारसिंगम् ।
वर-तेजं कीर्त्ति-राज रण-मुख-रसिकं मारसिंगं नृपेन्द्रम् ॥
गङ्ग-कुळ-कमळ-दिनकरन् ।
अङ्गज-सन्निमननून-दान-विनोदम् ।
भङ्गिसिद वैरिगळम् ।
तुङ्ग-यशं नेगळ्दनोप्पेयेक्कल-भूपम् ।

वृत्त ॥ परमार्त्थं वीर-तीर्त्थं पर-हित-चरितार्त्थं सदा-भावितार्त्थम् ।
तरुणी-सम्मोहनार्त्थं मनसिज-वनितारूप-संशुद्धितार्त्थम् ।
वर-शिष्टानीकरर्त्थं सले कुडे पडेगुं लोक-संरक्षणार्त्थम् ।
पुरुषार्त्थं स्वार्थमेन्देक्कल-नरपति भू-लोककन्ति...विक्कुं म् ॥
बलवद्विद्विष्ट-भूपालरनत्रय[व]र्दि काढि वेङ्कोण्ड-मण्डम् ।
दळवेल्ल बोडे गण्डं विरुद-भटरु वेन्नित्तु पोपल्लि गण्डम् ।
कळनं पेल्दहे गण्डं रिपु-मदहरण गङ्ग-मार्त्तण्ड-देवम् ।
तळेदं भू-कान्तेयं येक्कल-नृप-तिलकं चारु-दोर-दण्डदिन्दम् ॥
क्रूरारातीभ-कुम्भ-स्थळ-विदलन-कण्ठीरवं विश्व-विद्या ।
वरं श्री-भारती-मण्डन-कुच-मणि-हारं मनोजात-रूपा- ।
कारं गम्भीर-नीरकारनमल-गुण सत्य-भाषा-विभूषम् ।
तारा-शुभ्राभ्र-गङ्गा-शशि-विशद-यशङ्कलङ्कोप्पुतिक्कुं म् ॥
अङ्ग-कळिङ्ग-वङ्ग-कुरु-जाङ्गळ-कोशळ-मध्यदेश-भद्- ।
रङ्ग-तुरुष्क-गौड-मगधान्ध्रमवन्ति वराट-चोळ डे- ।
, शङ्गळ पण्डितर् क्कविगमुत्तम-याचकरोघदे कोट्टु कर्- ।
पणङ्गं समानभागे सलेयेक्कलनिच्चपनोप्पे वित्तमम् ॥
श्रमदिंद वरि-चोनलिन्दम् । कमनीयं कल्प-वल्लि पुट्टुव तेरदिम ।
प्रमदा-रत्नं जनियिसल् अमळाङ्गने सुग्गियब्बरसि धारिणियोळ् ॥
परमेष्ठि-स्वामि देय्वं गुरु तनगेसवों माघणन्दि-व्रतीन्द्रम् ।
वर-भ्व्यर् बन्धु-वर्गं निरुपम- मरेयं एरिदा-मारसिङ्गम् ।
नरपाळमण्गना-सुग्गियब्बरसि यतीशर्गे कोट्टन्न-दानम् ।
बरेगोप्पम्बेत्तुदा-पञ्चवसदि वसवं वीरगुं मार्ददिन्दम् ॥
वीर-जिनेन्द्र-पाद-सरसी [रु] ह-राजित-राजहंसेयम् ।
चारु-चरित्रेयं गुण-पवित्रेयनूर्ज्जित-दान-शीलेयम् ।
भारति-कर्णपूरे मुनि-राज-पयो [रु] ह-भृङ्गेयं गुणा- ।
धारद सुग्गियब्बरसियं धरे वर्ण्णिसुतिक्कुं मागळुम् ॥

सवणन-बिळिलोळे विट्टळ् । भुवन-स्तुते मत्तरोप्पे सले पन्नेरडम् ।
भव-हर-पञ्चबसदिगा- । प्रवरान्विते **सुग्गियव्वरसि** धारिणियोल् ॥
कतिपय-कालान्तरित । हितवेनिपा-पूर्व्व-वृत्ति तळेयलु पडेगुम् ।
सततं जिन पूजोत्सव- । रतेयप्पा-**कनकियव्वरसियिं** धरेयोळ् ॥
जिन-पूजेगे जिन-महिमेगे । जिन-शासन भजनक्के जिन-भवनक्कम् ।
जिन-मुनिगेसवी-दानमन् । अनवरत माडुतिक्कुं **कनकियव्वरसि** ॥
जिन-गृहमिल्लदल्लि जिन मन्दिरमं जिन-गेहमागियुम् ।
जिन-मुनिगळ्गे दान-निचयं दोरेकोळ्ळ थाविनल्लिया- ।
मुनि-जनगित्तु कीर्त्ति-लते पल्लविसुत्तिरे लोकदल्लियन्त् ।
अनुपममागला- **कनकियव्वरसियो**प्पुतमिक्कुं धात्रियोळ् ॥
सुर-कुजमनिळिसि **शक्रन** । सुरभियनिन्नेबुदेन्दु चिन्तामणियम् ।
परिहरिसि कुडले वल्लळे । परमार्त्थं **चट्टियव्वरसि** धारिणियोळ् ॥
जनकनु **मारसिङ्ग**-नृपनग्रजनेकल भूप वल्लभम् ।
दिनकर-तेजनोप्पे **दशवर्म्म** नृपङ्गेरेयङ्गनग्र-नन्- ।
दननुजात **केशव**-नृगाळ चतुर्विध-दानदिन्द मान्- ।
तनदोळे **चट्टियव्वरसिय** बुध-मण्डलि मेच्चि वण्णिकुम् ॥
परमाराध्यं जिनेन्द्रं गुरु ऋषि-निवहं **बोप्प-दण्डेश** भावम् ।
निरुतं **बोप्पव्वेयन्ता**-जनति जनकना-**कोटि-सेट्टि** प्रमोदम्- ।
वेरशिर्दी-**शान्तियक्कं** करवेसदिरला-पत्नि सम्यक्त्व-रत्ना- ।
करनप्पी-**केति-सेट्टि** दरेय बसदियं माडिदं पुण्य-पुञ्जम् ॥
विमळ-यशो-विताननकळङ्कनुपार्जित जैन-धर्म्मना- ।
धमिक-जन प्रपूर्ण-विकचाब्ज- सरोवर-राजहंसनेन्द् ।
अमम धरित्रि बण्णिपुदु भव्य-शिखामणि भव्य-बन्धुवम् ।
सुमति-निवासनं नेगळ्द केतननुत्तम-दान-सत्वनम् ॥
परम-**श्री-मूलसंघं** सोगयिसुतिरे श्री-**कोण्डकुन्दान्वयम्** ॥
इरे श्री-**काणूर्गणं** गच्छमेसदिरे सन्दा-**तिन्त्रिणीकाख्यमोघं** ।

वेरसा-श्री-रामणन्दि-व्रति-पतियेसेदं पद्मणन्दि-व्रतीन्द्रम् ।
वर-शिष्यङ्ग्र-शिष्यं नेगळ्दनु मुनिचन्द्राख्य-सिद्धान्त-देवम् ॥
अन्तवर शिष्यनेसेगुं । भ्रान्तेम् श्री-भानुकीर्ति सिद्धान्तेशम् ।
क (श) त्रु-मद-दर्प-दळनम् । सन्तत-बुध-कळग-भुवनेगळ्दं धरेयोळ् ॥
कनक-जिनालयवेसेदिरल् । अनुपमनेक्कल-नृपाळ सवणन विलिलोळ् ।
जन-नुतमेने भानुकीर्त्ति- । मुनिगोप्पिरे चिट्ट मत्तरं पन्नेरडम् ॥
नेगळे चाळुक्य-चक्रि-वर्ष जगदेक-महीश शासिरम् ।
मिगिलरवत्तु-कालयुत-माघ··ध दशमी बृहस्पती ।
सोगयिसे वार पन्नेरडु-मत्तरना कोडगेय्महादमम् ।
तगरदे भानुकीर्त्ति-मुनीगेक्कल त्रिद शशाङ्कनुळि ळनम् ॥
कोटि-पयं कविलेयनेळ्- । कोटि-तपोधनर वेद-विदरं पन्निर् ।
कोटियने कोटि-तीर्थदे । कोटि-महा-दिनटोळ्ळिदनिन्तिदनळिदम् ॥
(इसेशाका अन्तिम श्लोक) श्री-चन्दणिकेश्र तीर्थद प्रतिबद्ध ··॥

[जिन-शासनकी प्रशंसा । पृथ्वीका शासन करनेवाले क्रमश ये राजा हुए:—]

१ चालुक्य-चक्रेश्वर तैलप; २ सत्याश्रय; ३ विक्रमादित्य; ४ अय्यण; ५ जयसिंह; ६ त्रैलोक्यमल्ल; ७ सोम; ८ त्रिभुवनमल्ल; ९ भूलोकमल्ल; १० जगदेकमल्ल ।

कुन्तल-देशमें, बनवसे-नाड्में, बिड्डुलिगेमें उद्धरेके वृक्षों और बगीचोंका वर्णन ।

गंग-वंशके राजा मारसिंगका वर्णन । राजा एक्कलकी प्रशंसा । अङ्गादि नानादेशोंके विद्वान् और कवियोंके लिए वह कर्णके समान दानी था ।

सुग्गियब्बरसिकी प्रशंसा । उसके गुरु माघनन्दि-व्रतीन्द्र थे, राजा मारसिंग उसका बड़ा भाई था । सुग्गियब्बरसिने यतीशोंको आहारदान तथा बढ़िया पञ्च-वसदि दी थी । वसदि के लिए सवणविळिमें भूमिदान किया था ।

कनकियब्बरसिने इस पूँजीमें और भी वृद्धि की । जहाँ जिन-मन्दिर नहीं थे

वहाँ जिन-मन्दिर बनवाये, और जहाँ जिन-मुनियोंको आमदनीका क्षेत्र नहीं था वहा उसने दान दिये।

चट्टियब्बरसि कामधेनु और चिन्तामणिके समान थी। उसके पिता राजा मारसिंग थे, ज्येष्ठ भाई राजा एक्कल, पति राजा दशवर्म्मा था, जिसका एरेयङ्ग ज्येष्ठ-पुत्र था, और उसका छोटा भाई राजा केशव था।

शान्तियक्केके परमदेव जिनेन्द्र थे, गुरु ऋषि-गण थे, बोप्प-दण्डेश उसका चाचा, बोप्पले उसकी मा, कोटि-सेट्टि उसके पिता थे,—उसके पति केति-सेट्टिने उद्द (द्ध) रेकी बसदिका निर्माण कराया।

मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, काणूर-गण और तिन्त्रिणीक-गच्छमें रामणन्दि-व्रति-पति—पद्मणंदि—मुनिचन्द्र सिद्धान्त-देव—भानुकीर्त्ति-सिद्धान्तेश क्रमश शिष्य-परम्परामें हुए। अन्तिम मुनिको राजा एक्कलने कनक-जिनालयके साथ-साथ चालुक्य-चक्री जगदेव राजाके राज्यमें (उक्त मितिको) भूमिदान दिया]

[Ec, VIII, Sorab Tl No. 233]

२१४

रायबाग;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[१]

["रायबाग गाँवमें नरसिंगशेट्टिके जैन मन्दिरके पाषाणखण्ड पर।"]

यह एक चालुक्य शिलालेख है। इसमें **दासिमरसु** सेनानायकके दानका वर्णन है। यह दान **सिद्धार्थी संवत्सर** के आषाढ महीनेकी कृष्णपक्षकी त्रयोदशी, सोमवारको, जबकि सूर्य दक्षिणायन हो रहा था, किया गया था। यही संवत्सर **जगदेकमल्लदेव** राजाके राज्यका दूसरा वर्ष था। यह दान **हूविनबाग** के नरसिंगशेट्टिके जैन मन्दिरके लिये किया गया था। सर डब्ल्यू, ईलियटकी सूची में दो चालुक्य राजाओंकी 'जगदेकमल्ल' उपाधि हैं,—एक तो **जयसिंह द्वितीय** की, जिसका क़रीब-क़रीब काल **शक ९४० से शक ९६२** तक दिया हुआ है,

और दूसरे का नाम तो नहीं दिया हुआ है, परन्तु इतना मालूम है कि वह सोमेश्वर तृतीयका उत्तराधिकारी था। शक वर्ष ६४२, उसी तरह शक वर्ष १०६२ सिद्धार्थी संवत्सर था, और तदनुसार वर्त्तमान लेखका काल सन्देहास्पद है, लेकिन सम्भवत शक १०६२ (११४०-१ ई०) यथार्थकाल है।

[JB, X, P. 183-184, N. o. 10. a.]

३१५

मौंट शिवगङ्गा;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[विना काल-निर्देशका [लगभग ११४० ई० (लू. राइस) ।]

[गङ्गाधरेश्वर मन्दिरके मण्डपके खम्भे पर]

एतन्मित्र-कुळाम्भोज-भास्करस्य यशस् स्थिरम्।
विष्णोरदळ-वंश-श्री नायकस्यैव शासनम्॥
ललितेन्दु-द्युतियं तेरल्मि भवन माडिट्टरो संकरा-।
चळमं मेड् कडिदिट्टरो शिव-गृह माडिट्टरो पुण्य-सङ्-।
कुळमं र्येळिमेनल्के कूतु शिवगङ्गे शाद्रियोळ् माडिदम्।
कुळ-नामं गडिमेन्दु देव-गृहमं सामन्त-कञ्जासनम्॥
अदळ-कुळ-रत्न-भूषणन्। अदळ-कुलाम्भोज-भानुवदळेश्वरमेन्दु।
उदुभव-चरित माडिद-। नुदुव-यशं बिट्टि-देवनी-शिवगृहमम्॥
पूवलि पूजे निवेद्य। दाविंगे जळ गन्ध धूपवत्तते पात्रम्।
पावुळमेनिप्पुवनारैद्। आवगमवं कपके वर्प्प धनमं कोट्टम्॥

अन्तुमल्लदेयुं निज-जनकन पेसरिं ब्रह्मेश्वर-देवालयं वूरं ब्रह्मसमुद्रमं नेगल्द••मत्तम्।

अदळ-जिनालयङ्गळदळेश्वर-देवगृहङ्गळित्तिवेन्द्।
अदळसमुद्रमेन्देसेव विष्णुसमुद्रमिवेन्दु धर्मदिम्।

पुदिदवनन्दु माडिसिद कट्टिसिद केपेयं निजान्वयक्क् ।
उद्भवमागलेन्दद‌ळ-वंश-शिखामणि [वि] ष्णुवर्द्धनम् ॥
अल्लि वळिक तम्मवगे परोक्ष-विनयमागे बोचसमुद्रमेम्ब केपेयं कट्टिसि
शिव-महिमेयेडेगे केशव- । भवनोद्धरणक्के.. ऐ-कोडिगेधर्म्म- ।
प्रवरमों बेडितनितर्- । त्थमनिवनीव बिट्टि-देवनदटर देवम् ॥
स्वस्ति श्री विष्णु-सामन्तं स्थिरं जीवि

[इस लेखमें बताया गया है कि बिट्टि-देव, अपरनाम विष्णुवर्द्धन, शिवगङ्गेशाद्रि (**Mount Shivaganga**) में शिव-मन्दिर बनवाया था। बिट्टि-देव अदळ-कुळका था। उसने, इसके सिवाय, अदळ जिनालय, अदलेश्वर-देवगृह भी बनवाये थे।]

[EC. Ix, Nelamangala U., No. 84]

३१६

मुगुलूर—कन्नड ।

[विना काल-निर्देशका, ११४० ई० (लू. राइस).]

[बस्तिके अन्दर पड़ी हुई मूर्त्ति के पीठस्थलपर]

श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर गुड्डगळु मेळसिन **मारि-सेट्टियरि** नेगर्त्तिय **गोवन-सेट्टियरु सोगे-नाड मुगुळियलु** बसदिय माडिसिदरु ..माडिसि श्री-**पार्श्व**-देवर प्रतिष्ठेयं माडिसि आ-बसदियुम आ-देवर भूमियुम तम्म गुरुगळिगे धारा-पूर्व्वक माडि कोट्टरु ॥

[श्रीपाल- त्रैविद्य-देवके गृहस्थ- शिष्य मारि-सेट्टि और गोवन-सेट्टिने सोगे-नाडमें मुगुळिमें एक 'बसदि' बनवायी और उसमें पार्श्व-देवकी स्थापनाकर, बसदि और उसकी जगह (जमीन) देवताके लिये अपने गुरुको अर्पित करदी।]

[E, C, V. Hassan U. 129.]

२१७

—अञ्जनेरी (नासिक के पास);—संस्कृत

—[शक १०६३=११४२ ई०]

यादववंश शिलालेख

(१) ओं पंच परमेष्ठिभ्यो नमः। स्वस्ति श्री शक संवत् १०६३ दुंदुभिसंवत्सरा-
तर्गत ज्येष्ठ सुदि पंचदश्या सोमे अनु-

(२) राधानक्षत्रे सिद्धयोगे अस्यां संवत्सरमासपक्षदिवसपूर्व्वायां तिथौ समधिगता-
शेषपंचमहाशब्दद्वारावतीपुरपरमे-

(३) श्वर विष्णुवंशोद्भवयादवकुलकमलकलिकाविकासभास्करयादवनारायण
सामंतपितामह सामंतवमरा इत्यादिसमस्त-

(४) निजराजावलीविराजितमहासामंत श्रीसेउणदेवविजयराज्ये तत्पाद-प्रासादा-
वासमहामहत्तम प्रतापसंतापितवैरिवर्गा

(५) संग्रामशौंड [·] शूरवैरिघटाविमर्दनकण्ठीरव अनवरतदानार्द्रीकृतदक्षिणकर-
प्रकोष्ठ निशितनिस्तृंश (निस्त्रिंश) विदारितारा-

(६) तिकरिकुंभस्थलगलितमुक्ताफलमंडितरणागण (रणांगण) मनस्विनीमानो-
न्मूलनकंदर्प दर्प्पांधम्मरं (र) हित सौ (शौ) र्योदार्यदयादाक्षि-

(७) ण्यधर्म्मगुणसत्योत्साह मंत्रशीलसंपन्न [ ] प्रजापालनानंदशत्रुपराजयानंतोषित-
कीर्तिप्लावितदिग्वलयः[१] अनेकराजनीतिशा-

---

१ इस वाक्य का ठीक अर्थ नहीं निकलता। यदि 'पराजयानं' के बाद 'द' लुप्त हुआ मान लें, तो 'शत्रुपराजयानंदतोषित' ऐसा पाठ होगा और जिसका ठीक अर्थ भी निकलेगा।

(८) स्त्रोकविवेकवर्द्धितबुद्धिकौशलसहस्त्रविशानप्रभुत्वमंत्रोत्साहशक्तिसामर्थ्यरूपला-
वण्यविचित्रवक्तव्यताभोगोपभोगराष्ट्रकोश-
(९) लाद्यनेकविषयगुणगणालंकृतशरीर व्यर्थीकृतप्रतिपन्थिमनोरथः समामविजय-
लक्ष्म्यालानस्तम्भ रत्नाय (क) र इव अनंतगां-
(१०) भीर्यंयुक्त हिमादि (द्रि) रिव अपरिमितमहिमान्वितः षाड्गुण्यसपन्नाविपर्य-
यतस्थिष्ठ [1] देवर्द्धिजगुरुवराचाय (र्यं) साधुपूजाभिरत दीनान—(ना)—
(११) थोद्धरणक्षमः रविरिव प्रतिदिवसोपचीयमानोदयः परिहास-प्राकार. ईद्रि
(ईदृग्) गुणविशिष्टश्रापाणुमउटरी सर्व्वव्यापारे कुर्व्व-
(१२) ति सतीत्येतस्मिन्काले प्रवर्त्तमाने श्री मेहणाख्येन महानृपेण प्रधानयुक्तेन
विचार्य भक्तया देवाय चन्द्रप्रभाय प्रदत्तं हट्टद्व-
(१३) यं भारविवर्जितं च श्री साधुवत्सराजेन स्वकुलतिकभूतेन देवद्विजगुरु
वराचार्य पूजाभिरतेन श्री लाहडसाधुना सह दशर-
(१४) थ साधुना स्वकीयं हट्टदानं कृत तथा-गृहदानं च कृतं। चन्द्रप्र (प्र)
भाय देवाय कंदर्पदहनाय च। विशुद्धदेहरूपाय सर्व्वसत्त्वहिताय च॥ त-
(१५) था नगरे वर्षं प्रति द्रम्मपंचकं कृतं आयु. पुत्रा धन सौन्दय (र्यं) सौभाग्यं
राज्यमक्षयं। आभिश्रे (श्रे) ष्टयं यशः स्वर्गं भूमिदो लभते फलं॥ बहु-
(१६) भिर्वसुधा भुक्ता सगरादिश्च [2]। यस्य यस्य यदाभूमिः (मेः) तस्य तस्य तदा
फलम्। दाता चैवानुमता च स्वर्गस्योपरि तिष्ठति। हर्ता हारइ (यि)—
(१७) ता भूमि (मेः) पच्यते रौरवे ध्रुवं॥ स्वदत्तां परदत्ता वा यो हरेच्च
वसुंधरां। षष्टि (ष्टिं) वर्षसहस्राणि विष्ठा (ष्ठा) यां जायते कृमिः॥
श्रीकोलथ्वरपंडितान
(१८) सुतेन दुष्टगणकगजकंठीरवेण साधुगणकचरणारवृंद (विंद) मकरंदलुब्धषट्पदेन
श्रीदिवाकरपंडितेन ताटशासन सै (शै) लपट्टे लिखित-

---

१ इस वाक्य का कुछ भी अर्थ नहीं निकलता।

२ यह व्याकरणकी दृष्टिसे गलत है; ठीक प्रचलित रचना यह है 'राजभि सगरादिभिः।'

(१६) मिति······मंगलं महाश्री.

सारांश

दुन्दुभि संवत्सर शक १०६३ के ज्येष्ठ मासके शुक्ल पक्षकी पञ्चमी तिथि, सोमवारको राजा सेउणचन्द्र (तृतीय) ने नगर (सम्भवतः अञ्जनेरी) में तीन दुकानें आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ भगवानके मन्दिरके खर्चके लिए दीं; तथा वत्सराज नामके एक धनिक व्यापारीने दो और व्यापारियों, जिनके नाम लाहड और दशरथ थे, के साथ-साथ उसी कामके लिए एक दुकान और भवन दिया, जिस नगरमें यह मन्दिर है उसके अधिकारी ऑफीसर 'महामहत्तम[१]' का नाम 'राणुमइठरी' था जो सुननेमें भद्दा मालूम पड़ता है।

अभी तक प्राप्त सामग्रीसे निम्नलिखित यादव वंशावली का निर्णय किया जा सकता है:—

१. दृढ़प्रहार, cir. शक ७४०
|
२. सेउण चन्द्र
|
३. धाडियप्प
|
४. भिल्लम — ६. श्रीराज
|
५. वद्दिग। झञ्झा सिलहार, शक ८३८ की पुत्रीसे विवाहित।

७. तेवुक। गोगिराज की जो कि चालुक्यसामन्त था, पुत्री से विवाहित।

८. भिल्लम (द्वितीय) जो आहवमल्लकी बहिनके द्वारा जयसिंह चालुक्य की पुत्री से विवाहा गया था।

---

१ जिलेके अधिकारीको जिसे आजकल 'कलैक्टर' कहते हैं, 'महामहत्तम' कहा जाता था।

६. सेउणचन्द्र (द्वितीय.) शक ६६१.

... .

. . . .

... ...

(१२ १) सेउणचन्द्र (तृतीय) शक १०१२

[IA, XII, P. 126–128]

३१८

कसलगेरी—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

—[शक १०६४=११४२ ई०]—

[कसलगेरी (देवलापुर परगना) में, कल्लेश्वर मन्दिरके सामनेके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
भद्रमस्तु जिनशासनाय सम्भवता प्रतिविधानहेतवे ।
अन्यवादिमदहस्तिमस्तकस्फोटनाय घटने पटीयसे ॥

स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरं यादव-कुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्वचूडामणि मलेपरोळ् गण्ड कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-तलेकाडुउच्चङ्गि-बनवसे-हानुङ्गल्लु-गोण्ड भुजबळ वीर-गङ्ग-होय्सळ-विष्णु वर्द्धन-देवर विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क्कतारं सल्लुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

स्वस्ति स्वस्तिळकै शुभैश्शुभतमै पुण्याहवै कीर्त्तया ।
स्थाप्यन्ते जिल-पार्श्व जिनपादपङ्कजटळे श्री-ह्री-धृतिर्द्धीयताम् ।
त्वं दत्तं देयात्तु देव-देवभुवने मुक्त्यङ्गनावल्लभो .

सामन्तं जय-जीय-वर्द्धनकरं **सोमं** स्थिरं जीयात् ॥
उदेयं गेय्यमृतं (।) शुविम्ब भुवनक्कुत्साहमं माक्कु विन्-
दु तज्जननिगाचन्द्राक्कतारं यशस्प्रसरं केय्मिगे तन्-
देगे तन्न बाहुबलदिं दोर्दण्डदर्प्पिष्टरं तर्द्दिदं सौ-
ळने सीळ् द् अदर्प्पिदं बेङ्कोण्डनी-सामन्त सोमं धराचक्रदल्लु ॥
प्रळये-प्रक्षोभ-वाताहतदे कदडि मर्य्यादेयं दाण्टि धात्री-
तळकत्यन्तदौर्व्वानळकोपाटोपवेशं कय्मिगे चोळ-
व्ळमल्लकल्लोळमप्पन्तु पिरिदे घळं बन्दु बिट्टम् ।
ह्दुवनकेरेयोळ् **वीर-पेर्म्माडि-देवम्** ॥
मदगन्देभमदान्ध वारिन्वयदिन्देय्तन्दुदाबीडना ।
बिडलासार्त्तन्दुदासार्त्तन्-
दुदेनलु **वीरगङ्ग**नेने भीमाटवी-ह्दु-स्थान-नदी-तीरमन् ।
अय्दे साल्दमोघसरलिदेच्चनाकरियं करियय्कणम् ॥
वोदविद-मदटिन्दिरदेय्तरे बीडनदरं कुम्भस्थळमम् ।
बिरियेच्चु कोन्दनेन्दडे करियय्कणनेम्बुदातनं जगमेल्लम् ॥

अन्तु **वीर-गङ्ग-पेर्म्माडि** ह्दुवनकेरेय **कदुलेय** तडि विडदु चातुर्दन्तबलं बेरसु **चोळन** मेले नडेयुतं वन्दिरे काडेने बीडं कविये पाय् वुदं कण्डु **अय्कणं** करियनेच्चडे **कलुकणिनाडाळ्वं करियय्कण**नेन्दु वीरपट्टमं कट्टि सुखदिन्दिरे ।

करियय्कय-सावन्तन । पिरिय-मगं **नागना**तनग्रतनूजं
सुरधेनुकल्पवृक्षद । दोरेयेनिसिद **सुग्ग-गौण्ड**नदिरद गण्ड ॥
एने नेगल्द सुग्ग-गाउण्डन । तेनेयं **सावन्त-सोम**नाहवभीमम् ।
जिनपादकमळभृङ्गं । जिननाथस्नपनजलपवित्रितगात्रम् ॥
मदवदरातिनायकरनाहवदोळ् तरिदिक्कि कीर्त्तियम् ।
नेरेये दिगन्तरं मेरेदुदारते सिंहनाददिन्द् ।
ओटविद-भीम-सूद्रकनो धनञ्जय-रामनो दुन्दुमारणो ।

नळ-नहुषादि सोमदेवनेने सोवण धन्यनो पन्नगे-वैनतेयनो ॥
मारन सतिगं सीतेगे । रेवतिगनु (रु) न्धतिगे अत्तिमब्बेगे सदृशं पेळु ।
सारगुणं सोमन सतिगुदारगुणं निन्बन्नेयराद मारब्बेगो-धारिणियलु ॥
आतन सतियं पोलिपडी- । भूतळदोळु रूपु अववनितेगे रतिगन्त्
आ-सति पार्सटियेनि- । प जिनतु-पाद-भक्त माचले-नारि ॥

आ-मारब्बे सोमनोडने लीलेयिं . उळ्र कुल-ललनेयेनिसि बळचर-निचय-निचित-कुन्द-कुड्मळ-वदन-वन-दैवतेये वन-लक्ष्मिये कल्प-तरुवेनिसि बहु-पुत्रियरं पडेदु जिन-जननियेने जिनधर्म्मक्काधारी-भूतेयु आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदेयु जिनगन्धोदकपवित्रीकृतोत्तमाङ्गेयु जिनसमयसमुद्धरणेयु पारिश्व-देव-पादाराधकेयुमप्प ।

जिनपति दैव पोरेदाल्दने होय्सळविष्णुभूप सल्-
जननुते मारे माचले गुणान्वितेयर्तनगप्रपुत्ररेन्द् ।
अनुपम-चट्ट-देव कलि-देवने सन्द्-
अनुपम-कीर्त्तियं नेरेंथे ताल्दद-मध्यने सोवणनी-धरित्रियलु ॥

स्वस्ति समस्तगुणसम्पन्ननुं विबुधप्रसन्ननुं आहाराभयभैषज्यशास्त्रदानविनोदनुं जिनगन्धोदकपवित्रीकृतोत्रमाङ्गनुं जिनसमयसमुद्धरणनुं तोडल्द्र डोङ्गियु तोडरे वल्-गण्डनुं नुडिदु मत्तेन्ननुं परनारी-पुत्रनु पार्श्व-देव-पादाराधकनुमप्प कलुकणि-नाडाल्व सामन्त-सोवेय-नायकं भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवर गुड्डं कलुकणि-नाड् आळ्वं हेब्बिडिरुव्वाडियलु उत्तु गचैत्यालयवं माडि श्री पार्श्वदेवरं प्रतिष्ठे माडि श्रीमूलसंघ-सूरस्ट (स्थ)-गणद ब्रह्मदेवर काल कर्च्चि धारापूर्व्वकं माडि , कोट्ट देवर अङ्ग-भोगक्कमाहारदानक्क वसदिय जीर्णोद्धारक्कं बिट्ट दत्ति शक-वर्षं १०६४ नेय दुन्दुभि-संवत्सरद पौष्य-मासदुत्तरायण-संक्रमण-पञ्चमी-बृह (स्पति) वारदन्दु वसदिगे वायव्यद देसेयलु अरुहनहळ्ळिय सीमान्तर वेन्तेन्दडे (अन्तिम ८ पंक्तियोंमें सीमाकी चर्चा है, और इसके बाद अन्तिम पद्य)

[उसी पाषाणके बायीं ओर—]

स्वस्ति **कल्कणि-नाड एक्कोटि-जिनालय** वेन्दु समे...रू कूडि कोट्ट हेसर ॥
स्वस्ति रूवारि-**माचोज** कलुकणिनाड आचार्य्य कलियुग-विश्वकर्म्म

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

जिस समय (अपनी हमेशाकी उपाधियों सहित), भुजबल वीर-गङ्ग-होय्सळ-विष्णुवर्द्धन-देवका विजयी राज्य अपनी वृद्धि पर थाः—तत्पादपद्मोपजीवी **सामन्त-सोम** था (उसकी प्रशंसा) ।

जिससमय वीर-गङ्ग पेम्मीडि चोल राज्य पर आक्रमण करनेके लिये हदुवनकेरीमें कदुले नदीके किनारे-किनारे जा रहे थे, एक जंगली हाथी भागता हुआ आकर सेना पर टूट पड़ा । अय्कणने उस हाथीको अपने बाणोंसे मार दिया, जिसपर कलुकणि-नाड्के शासकने उसे 'करिय्-अय्कण' की उपाधि दी ।

करिय्-अय्कणका सबसे बड़ा पुत्र **नाग** था, उसका ज्येष्ठ पुत्र **सुग्ग-गऊण्ड** था, उसका पुत्र सामन्त-सोम था । उसकी मारव्वे और माचले नामकी पत्नियाँ थीं । मारव्वे की बहुत-सी पुत्री हुईं, पर माचले के पुत्र हुए, जिनमें ज्येष्ठ चट्टदेव और कलि-देव थे ।

कलुकणि-नाड्के शासक, सामन्त-सोवेय-नायक ने (अपनी बहुत-सी उपाधियों सहित), जो कि धार्मिक जैन और भानुकीर्त्ति-सिद्धान्तदेवके गृहस्थ-शिष्य थे, हेव्विदिरूव्वीडिमें एक ऊँचा चैत्यालय बनवाया और उसमें पार्श्व-जिनकी स्थापना करके पूजा-सेवाके खर्चके लिये, मन्दिर की मरम्मत तथा आहारदानके लिये, श्री मूलसंघ तथा सूरस्ट (स्थ) गणके ब्रह्मदेवके पादों को प्रक्षालनपूर्वक '**अरुहन-हल्लि**' नामक गाव दानमें दिया ।

जिनालयका नाम 'कल्क (कलुक) णि का एक्कोटि जिनालय' रक्खा था । शिल्पि का नाम **माचोज** था । यह कलुकणि-नाड् का आचार्य, कलियुग का विश्वकर्म्मा था ।]

[E C, IV, Nagamargala U., no, 94 and 95]

३१६

बोगादि—संस्कृत तथा कन्नड़ भग्न ।

[काल लुप्त, पर प्रायः ११४५ ई०]

[बोगादि (होसकेरी परगना) में, ध्वस्त बस्तिके पासमें पड़े हुए एक पाषाण पर]

··· ··· ···गम्भीर··· · · · · · ··· ·· · · ।
·· ·· ··· ··· ··· ··· ···जिन-शासनम् ॥

··· ··· ··· ····श्रीमन्महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक सत्याश्रयकुल-तिलक चालुक्याभरण··· ··· · ·राज्य ·· ···नव् आ-चन्द्रार्क्कतारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

श्रीकान्तानेत्रनीलोत्पलवदनसरोजात-स ·· ··· · · ··· ।
···लोकत्रयो··· ··· ··· ···चन्द्रिका-दो·—प्रताप- ।
···त्यक्त-युक्त-क्रम-कलित-···न्-चक्र-खेद-प्रमोद- ।
श्रीके श्रीविष्णुभूपं ·· ··· ···मार्त्तण्ड- रूपम् ॥
··· ··· ···। पे मगुल्दा-सेतुविं हिम- बरेगं ।
क्रम-केळियिं तोळ्-वलं । समद-द्विप··· ···नृपालम् ॥

स्वस्ति समधिगत··· ···महा-मण्डलेश्वर···पुर-वरेश्वर यादवकुळाम्बरद्युमणि मण्डलिक-चूडामणि··· ··· ··· ···शार्द्दूळं पाण्ड्यकुळबलधिवडवा (वा) नलं नरसिंग··· ··· ··· ···वंशवन-दावानल ·· ··· ··· घुळ-चिळप···बेङ्गिरि-गिरीन्द्र-वज्र-दण्ड ·· ··· वळ-बहळ-तमः—पटल-मार्त्तण्ड सम-को···न ·· ··· ··· कोप-पावक ·· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· निरवद्य हृद्य-विद्या-विनोदन··· ··· ··· ··· ···सन्तोष ·· ··· · ··· सासिरमु गङ्गवाडि-मू · ··· दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालन ·· ··· रक्षिसि राज्यं गेय्युत्तमिरे । तत्पादपद्मोपजीवि महा-प्रधान ·· ·· ··· ···षाड्गुण्य-नैपुण्य-स्वयम्बुद्ध विष्णुवर्द्धन दे·· ·· ज्य-रत्नाकर-सुधाकर··· ··· ··· · ··महापरमेश्वर-पाद··· ···· ····देवर ···

-जनैक-शरण ··श्रीमदजितसेनभट्टारक-पादाराधना-लब्ध ·· ··· ··· ···विलास -नय-विनयादिविशिष्ट-गुण-गण··· ··· ··· ··· ··· ··· प्रतिदिन-जिन पूजा-जनित-प्रमोद चतुर्व्विधदानविनोदं सरस्वती ·· ·· ··· ··· ·· प्रान्त नियम- ·· ·· ··· अप श्रीमदकलङ्कान्वयवज्र प्राकारं नामादि समस्तप्रशस्ति-सहितं श्रीमन्महाप्रभु ·· ··· ···देव··· ··· ·· ··· ··· भ्युदय-युत ··· ·· ··· ··· दानादि··· ··· नयनदिन् आ-माधवं विश्व ··· ··· ··· ·· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ·· ·· ··· स्तुत्यनादं ·· ··· ··· ··· पुरुष ·· ··· सत्त्व ··· ···· माडि-राजम् ॥ परिपूर्णद ··· ··· ··· ··· ·· ··; ··· श्रीक-रणद-माधवन कीर्ति लोक-त्रयव ··· ··· ··· ··· ई-भोगवतियो ··· ··· ··· ··· महा-भोगं माडि-राज-विभु··· ··· ··· ··· सिदम् ।

श्रीकरणद ··· ··· ··· ··· ·· ··· यमं । श्रीकरवेनलजितसेनमुनिपदविनत, ··· ·· निस ··· ··· नेय । श्रीकरणद् माडि-राज ··· ··· स ··· ··· ॥

अन्ता-महानुभावनन्वय-क्रमद पोगल्तेयु चलदलाद नेगर्त्तेयु आल्यो ··· ··· -यन ··· ··· ··· कुळ-पूजितनाद महानुभावनारल्त वियु अल्लदो ··· ··· ··· -नमयनण्डलेवं भुवन-भूषण ··· ··· मत्तं ··· ··· यनङ्गळ ब्रह्मनेनिसि गङ्ग-मण्डल ·· ·· ··· मनाद जन-नाथ ··· देवं ·· बुध ··· ··· सभे ··· ·· चोळ-नृपाळ ··· ··· ·· जलधि नृप ··· ··· ··· ··· महा-प्रधान-मन —प्रिये ॥ ·· मन-मुख्य-विजय ··· ·· ·· साम्राज्य ··· ··· ··· ··· जग-विनूते वनिता-रत्नम् ॥ भुवन ··· बोणमय्यन तनूज ··· ··· ··· मनोभव-रू ··· ··· ··· भाग्य-शक्तियेने ··· ··· सन्दोड म ··· ··· ··· ··· ·· नारायणं मनु-मार्गा-ग्रणी बोणमय्यनिवर ··· ··· ··· ··· धन्यळे··· ··· इनरिव्वर्म्म न ··· ··· ··· ··· ··· निमद-क्रमनन्तक-नारायणनु भुवननुतं ··· ··· ··· · ·· ·· ··· महत्त्वमनोल्दु राज्यलक्ष्मी ··· ··· ··· अद्भुत-शौर्य्यदोळ् जयश्री-करण ··· ··· नृप ··· ··· ··· ··· राज्यदक्षि निर्व्याजमागि ··· गळवत्तु कळादिकार ··· माधवनु मादेव बोणनेने नेगल्द माधव सम्यग्-दृग्-बोध-चरितगळिं श्रेयो-धरणीशन-वोल् नताग्रणियादनी-गुरु-वन ··· ··· अजितसेन-मुनीश्वरन् इन्द्र-वन्दित-परम-

जिने ··· ··· ··· अवनीश-शिखामणि विष्णुवर्द्धन पोरेदनशेषमव्यरे निज -
··· ··· ··· ··· ··· यनो माडिराजनवनी-तळदोळ् ॥ ··· ··· ··· ··· ···
आतन वल्लमे ॥

वृ० ॥ हावविलास ··· ··· ··· समन्वित ··· समेतेयागियु ।
रेवति ता प्रभाव ··· ··· ··· ··· यागि धर्म्म-स- ।
दावने ··· योळ् विदग्धेयेनिसिद् ··· ··· बुगे वि- ।
स्वावनि ··· उभयव्वेय कीर्तिय ··· ··· ··· ··· ॥

··· ··· ··· ··· सौभाग्य-भाग्यवति ·· ··· द् उमे भारति रति ··· येने सन्दु मूनकं पाटियं ·· ··· ·· ·· ··· ··· कणव्वेयनलु सजन-वन्द्येयेनिसिदुमेयक-ने तळप ··· ··· ·· ··· कुलद चलद गुणदुन्नतिया पुरुषार्त्थं ·· ··· ··· ·· ··· ··· ·· ··· वेळेदवेनलु सच्चरितं श्रीकरण माडिराजनुर्व्वी- ·· ·· ··· वनिजं नेगल्दम् ॥

ई-कलि-कालद मनुजर् अ- । नेकरुमं कणनिन ·· ··· ·· ···।
बुधानीक बण्णिसे, गल्दं । श्रीकरणद् माडि-राजनूर्जित-तेजम् ॥

आतनन्वयगुरुकुळक्रम ।

अवटुतटमटति झटिति स्फुटपटुवाचाट धूर्ज्जटेरपि जिह्वा ।
वादिनि समन्तभद्रे स्थितवति तव सदसि भूप कास्थाऽन्येषाम् ॥१॥
तारा येन विनिर्ज्जिता घटकुटीगूढावतारा समं
बौद्धैर्य्यो धृतपीडपीडितकुदृग् देवार्त्थ-सेवाञ्जलि ।
प्रायश्चित्तमिवाङ्घ्रिवारिजरज स्नानं च यस्याचरद्
दोषाणा सुगतस्य कस्य विषयो देवाकलङ्कः कृती ॥२॥
योऽसौ घातिमलद्विषद्बलशिलास्तम्भावली-खण्डन-
ध्यानासिः पटुरर्हतो भगवतस्सोऽस्यप्रसादीकृतः ।
छात्रस्यापि स सिंहनन्दिमुनिना नो चेत्कथ वा शिला-
स्तम्भो राज्य-रमागमाध्वपरिघस्तेनासि खण्डो घनः ॥३॥

गृहीतपक्षादितरः परस्स्यात् तद्वादिनस्ते परवादिनस्स्यु· ।
तेषां हि मल्लः परवादिमल्लस्तन्नाम मन्नाम वदन्ति सन्त· ॥४॥
···द-जय-कलङ्क कीर्त्तने धर्म्म कीर्त्ति-
र्व्वचसि सुरगुरु ·· ··· ··· ···।
इति समयगुरूणामेकतस्सङ्गताना
प्रतिनिधिरिव देवो राजते वादिराजः ॥५॥
काणाद्रः कोणमेकं भजति, ·· ··· ···गतस्सौगतोऽयम्
मृत्युं ,मीमांसकाद्या· किमिह··· ··· ··· ··· ···।
येनायं न्यायमुद्राप्रतिभटवचस प्रौढिपर्य्यायरूढ़ो
बाढं दुस्तर्क्कगाढग्रथिमपरिवृधा ·· ·· · णेदम् ॥६॥
श्रीमच्चालुक्यचक्रेश्वरजयकटके वाग्वधू जन्मभूमौ
निष्काण्डं डिण्डिम पर्य्यटति पटु-रटोवादिराजस्य जिष्णो ।
जह्युद्वादिदर्पो जहिहि गमकतागर्व्वभूमा जहाहि
व्याहारेर्ष्यो जहीहि रु (स्फु) टमृदुमधुरश्रामकाव्यावलेप ॥७॥
नाहङ्कारवशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा केवल
नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया ।
राज्ञः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनो
बौद्धौघान् सकलान् विजित्य सुगतः पादेन विस्फोटितः ॥८॥
पाताले व्यालराजो वसति सुविदित यस्य जिह्वासहस्र
निर्गन्ता स्वर्गतोऽसौ न भवति धिषणो वज्रभृद्यस्य शिष्यः ।
जीवेता तावदेतौ निलयबलवशाद् वादिनः केऽत्र नान्ये
गर्वं निर्म्मुच्य सर्व्वं जयिनमिनसभे वादिराजं नमन्ति ॥९॥
वाग्देवीं सुचिरप्रयोगसुदृढ़प्रेमाणमप्यादराद्
आदत्ते मम पार्श्वतोऽयमधुना श्री वादिराजो मुनिः ।
भो भो पश्यत पश्यतैष यमिना किं धर्म्म इत्युच्चकै-
रब्रह्मण्यपरः पुरातन मुनेर्व्वाग्वृत्तय पान्तु व ॥१०॥

.... देवो
विदितसकलशास्त्रो निर्जिताशेषवादी ।
विमलतरयशोभिर्धौतदिक् चक्रवालो
विगतसकलसङ्गस्त्यक्तरागादिदोष ॥११॥

एकास्यो ... ... गुणपरिणताननो भारतीनश्च सर्व्वकळाघरो ... .
... ... क्षितितलं तन्मूलमालम्ब ... ...

गुरून् गुणगुरून् परान् परमयोगनिष्ठापरान्
तृणीकृतजगत्त्रयस्फुरितदेवनिन्दाकरान् ।
स्थिरान् नयविशारदान् सकलशास्त्रसूत्राकरान्
नमामि ... दिवाकरान् अजितसेन-योगीश्वरान् ॥१२॥
जगद्भरिमघस्मरस्मरमदान्धगन्धद्विप-
द्विधाकरणकेसरी चरणभूष्यभूभृच्छिरव (च्छिखः)।
द्विषड् गुणवपुस्तपश्चरणचण्डधामोदयो
दयेत मम मल्लिषेण-मलधारिदेवो गुरुः ॥१३॥
नैर्म्मल्याय मलाविलाङ्गमखिलत्रैलोक्यराज्यश्रिये
नैष्किञ्चिन्यमतुच्छतापहृतये न्यञ्चद्धुताशं तप ।
यस्यासौ गुणरत्नरोहणगिरिः श्रीमल्लिषेणो गुरु-
र्वन्द्यो येन विचित्रचारुचरितैर्द्धात्री पवित्रीकृता ॥१४॥
उद्दतप्रतिवादिकुञ्जर ... ... वचनप्रौढ़ि ... ...
... ... मयामलनखक्रूर ... . ।
... . विकल्पविभ्रमधरा ... ...
स्याद्वादाचलमस्तकस्थितिरसौ श्रीपाल कण्ठीरव ॥१५॥

.... गायन्ति ...... शास्ति कथ श्रीपालदेवोऽसौ त्रैविद्य-विद्योदय । श्रीमत्समन्तभद्रस्वामिगल् अकलङ्कदेवरिं बलिक श्रीमत्तपो .... सरि-व्रति-नाथरु । अवरिं बळिक

वृ ॥ आ-वक्रग्रीव-र्य्यं-व्रति-नरिवृद .... व्रतीन्द्रं ।

देवेन्द्रस्तुल्यनादं त्रळिक कनकसेनाह्वयव्वादिराजर् ।
श्रीवाणीवल्लभश्रीविजयमुनि ... ... अजितपालनाथर्
देवर् श्रीवादिराजं वलिकमजितसेन-द्वितीयाकलङ्कर् ॥१६॥
अवरिं वळिक श्रीमत्कुमारस्वामिगळिं मल्लिषेण-भट्टारकरिं तामेसे ... ...
आवन विषयमो पट्टतर्कोविलबहुभङ्गिसङ्गतं श्रीपाळ-
त्रैविद्यगद्यपद्यवचोविन्यासं निसर्गविजयविलासम् ॥
सरसकविकाव्यमकराकरहिमकरननन्तताकिर्कद्विरदन-के-
सरी ... ... रित शाब्दिकसरोजवनमार्त्तण्डम् ॥१७॥
बडमति ... ... निष्ठुरवज्रमुष्टियिं ... ... वचोविभवं विभु-
पद्मनाभन
... ... समन्तभद्रश्रीमत्-
सन्तानदल्लि नेगर्दुद- । नन्तर श्री-द्रमिळ-संघमी-वसुमतियेळ् ।
... ...
... ... विनूतोऽपि त्रिदशकमलामण्डनोऽभूत् क्षणेन ।
पूतं दृष्ट्वा पुनरनुदिनं प्रार्च्चयत्यर्च्चनाद्यै
... ... ॥
... .. शक-वर्षं सासिरदरुवत्तेळनेय रक्ताक्षि-सवत्सरद पौष्यदमावस्ये ... वार-
उत्तरायण-व्यतीपात-ग्रहणवुं कूडिदन्दु तुङ्गभद्रातीरद ... र-देवर ' ...
हेग्गडे मा 'य्य माडिसिद श्रीकरण जिनालयके श्रीमद्धोय्सल-देवर
भोगव ... धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्टरु .. लं सासिरदरुवत्तेळनेयरक्ताक्षि संवत्सर-
दोळे नृप-तुङ्ग' होय्सळ-नृपनोसेदित्त श्रीकरण-जिनालयक्के भो ... ' आ-
वूरिङ्ग सीमा-सम्बन्धवेन्तेन्दडे (आगे की आठ पक्तियोंमें सीमाओं की चर्चा है)
वर्द्धतां जैनशासनम् ॥ (हमेशाकी भाँति अन्तिम श्लोक) ... ..

[जिन शासन की -शसा ।
जिस समय महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक, सत्याश्रयकुल

तिलक, चालुक्याभरण, ••• •• का विजयी राज्य चारों ओर प्रवर्द्धमान था।

विष्णु-भूप की प्रशंसा।

जिस समय (अपनी उपाधियों और पदों सहित) •••••राज्य की रक्षा कर रहे थे —तत्पादपद्मोपजीवी,—महाप्रधान, विष्णुवर्द्धन-देवके राज्यरूपी समुद्रके चन्द्रमा, अजितसेन भट्टारकके पैरोंका आराधक, माधव या माडिराज मुनीम (accountant) था, जो वोणमय्य और••••••का पुत्र था। माडि-राज की पत्नीका नाम उमयब्बे या उमयक्के था।

निम्नलिखित उसके 'गुरु-कुल' का क्रम था:—

१. समन्तभद्र

२. देवाकलङ्क-पण्डित (२ सान्तर श्लोकोंमें महिमाका वर्णन)

३. सिंहनन्दि-मुनि

४. परवादि-मल्ल

५. देव वादिराज (५ श्लोकोंमें इनकी महिमाका वर्णन है।)

६. अजितसेन-योगीश्वर

७. गुरु मल्लिषेण मलधारि-देव (२ निरन्तर श्लोकोंमें वर्णन)

८. श्रीपाल-त्रैविद्य (२ सान्तर श्लोकोंमें महिमाका वर्णन)

गुरु-परम्पराके आचार्योंकी नामावली।

विभुपद्मनाभकी प्रशंसा।

श्री करण-जिनालयको जिसको •• ••हेग्गडे मादय्यने तुङ्गभद्रा नदीके किनारे लोखोक तीर्थमें बनवाया था, होय्सल-देवने धारापूर्व्वक भोगवती (नदी) का दान दिया।]

[Ec, 1V, Nagamangala Tl No., 100]

३२०

कोल्हापुर—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक १०६५=११४३ ई०]

१ श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् [।]
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥
२ स्वस्ति श्रीर्ज्जयश्चाभ्युदयश्च ॥ जयत्यमलनानार्थ-प्रविशक्ति प्रदर्शकं [।] अर्हत-
३ [:] पुरुदेवस्य शासनं मोह-शासनं ॥ स्वस्ति [।] श्री शीलहारमहा-क्षत्रियान्वये विभ-
४ स्ताशेष-रिपु-प्रततिर्ज्जतिगो नाम नरेन्द्रोऽभूत् । तस्य सूनवो गोङ्कलो गूवलः
५ कीर्त्तिराजश्चन्द्रादित्यश्चेति चत्वारः । तत्र गोङ्कल-भूतलपतेर्म्मारसिंहो नाम नन्दन. तस्य तनुजा गूवलो
६ गङ्गदेवः बल्लालदेवः भोजदेवः गण्डरादित्यदे [व] श्चेति पञ्च । तेषु धार्मिक-धर्म्मजस्य वैरि-का-
७ न्ता-वैधव्य-दीक्षा-गुरोः सकल-दर्शन-चक्षुष श्रीमद्-गण्डरादित्यदेवस्य प्रिय-तनयः ।
८ स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरः । नगर-पुर वराधीश्वरः । श्री-शिला
९ हार-नरेन्द्र निज-विलास-विजित-देवेन्द्र. जीमूतवाहनान्वयप्रसूत· । शौर्य्य-विख्यातः ।
१० सुवर्ण्ण-गरुड-ध्वजः युवतिजन-मकरध्वज. निर्द्दलित-रिपुमण्डलीकदर्प्प· । मरुवङ्क-सर्प्पः ।

११ अय्यन-सिंग सकळ-गुण-तुङ्गः । रिपु-मण्डळी (ळि) कमैरव । विद्विष्ट-गज-कण्ठीरवः ।
१२ इडुवरादित्यः । कलियुग-विक्रमादित्य । रूपनारायणः । नीति-विचित्र-चा-
१३ रायण । गिरि-दुर्ग-लङ्घन । विहित-विरोधि-बंधन । शनिवारसिद्धि । धर्म्मैकबुद्धिः । महा-
१४ लक्ष्मीदेवी-लब्ध-वरप्रसादः । सहज-कस्तूरिकामोद । एवमादि-
१५ नामावली-विराजमान-श्रीमद्-विजयादित्यदेवः । वळूवाड-स्थिर-शिबिरे सुख-संकथा-विनोदेन राज्यं कु-
१६ र्व्वाणः । शक-वर्षेषु पञ्चषष्ट्य त्तर-सहस्र-प्रमितेष्वतीतेषु प्रवर्त्त-मान-दुं-
१७ दुभि-संवत्सर-माघ मास-पौर्ण्णमास्यां सोमवारे । सोमग्रहण-पर्व्व-निमि-
१८ त्त माजिरगेखोल्लानुगत-हाविन-हेरिलगे-ग्रामे । सामन्त-कामदेवस्य हृदय
१९ वल्लेन श्री-मूलसङ्घ देशीयगण-पुस्तक-गच्छाधिपतेः क्षुल्लकपुर-श्री रूप-नारायण-जि-
२० नालयाचार्य श्रीमन्माघनन्दिसिद्धान्तदेवस्य प्रिय-च्छा [त्] त्रेण । सकलगुणरत्न-पात्रेण ।
२१ जिन-पदपद्म-भृङ्गेन । विप्रकुल-समुत्तुङ्ग-रङ्गेण । स्वीकृत सद्भावेन । वासुदेवेन
२२ कारितायाः वसतेः श्री-पार्श्वनाथदेवस्याष्टविधार्च्चनार्थं । तच्चैत्यालय-खण्ड-
२३ स्फुटित-जीर्णोद्धारार्थं । तत्रत्य-यतीनामाहारदानार्त्थं च । तत्रैव ग्रामे
२४ कुण्डि-दण्डेन निवर्त्तन-चतुर्थ-भाग-प्रमितं क्षेत्रं । द्वादश-हस्तसम्मितं गृह-निवेशनं
२५ च । तन्माघनन्दिसिद्धान्तदेव-शिष्याना माणिक्यनन्दिपण्डित-देवानां । पादौ प्रक्षाल्य धारा-पू-

२६ र्व्वके सर्व्वनमस्यं सर्व्व-बाधा-परिहारमाचन्द्राक्र्कतारं सशासनं दत्तवान् ॥
२७ तदागामिभिरस्मद्वंश्यैरन्यैश्च । राजभिरात्मसुख-पुण्य-यशस्सन्तति-वृद्धिभिः। स्व-
२८ दत्ति-निर्व्विशेषं प्रतिपादनीयमिति ॥ शान्तरसक्के ताने नेलेयाद
२९ जिन-प्रभु तन्न दैवमश्रान्त-गुणक्के ताने नेलेयाद तपोनिधि माघनन्दि सैद्धान्तिक-
३० योगी तन्न गुरु । तन्नाधिपं विभु कामदेव-सामंतनिदुत्तमत्वमिदु पुण्यमिदुन्नति वासुदेवेन ॥

भावार्थ

[यह शिलालेख कोल्हापुर शहरके शुक्रवार दरवाजेके पासके जैनमन्दिरके सामनेके एक पत्थर पर उत्कीर्ण है ।

शिलालेखमे शीलदार कुलके **महामण्डलेश्वर** विजयादित्य देवके एक भूमिदानका उल्लेख है । पहलेके दो श्लोकोंमें जैनधर्मके यश की गाथा गाई गई है । तत्पश्चात् ३–१५ तक की पंक्तियोंमें दाताकी निम्नलिखित वंशावली और उसका वर्णन है— **शीलदार** क्षत्रिय वंशमें **जतिग** नामका एक युवराज था, जिसके चार लड़के, गोङ्कल गूवल, कीर्त्तिराज, और चन्द्रादित्य थे । राजपुत्र गोङ्कलका लड़का **मारसिंह** था । उसके पुत्र **गूवलगङ्गदेव, बल्लालदेव, भोजदेव,** तथा **गण्डरादित्य-देव** थे । और **गण्डरादित्यदेव**का पुत्र **महामण्डलेश्वर विजयादित्यदेव** था । उनके ये पद थे—'नगरपुरवराधीश्वर, श्री शिलाहारनरेन्द्र, निजविलास-विजितदेवेन्द्र, जीमूतवाहनान्वयप्रसूत, शौर्य्यविख्यात, सुवर्णगरुडध्वज, युवतिजन-मकरध्वज, निर्दलित-रिपुमण्डलीक-दर्प्प, मरुवङ्क-सर्प्प अप्पनसिंग, सकलगुणतुङ्ग, रिपुमण्डलिक-भैरव, विद्विष्टगज कण्ठीरव, इडुवरादित्य, कलियुग-विक्रमादित्य, रूपनारायण, नीतिविजितचारायण, गिरिदुर्गलं

धन; विहितविरोधिविंधन, शनिवारसिद्धि, धर्म्मैकबुद्धि, महालक्ष्मीदेवी-लब्ध-वरप्रसाद, तथा सहजकस्तूरिकामोद।'

पंक्ति १५–२६ में **विजयादित्यने,** अपने **वळवाडके** निवासस्थान पर आरामसे राज्य करते हुए, सोमवारके दिन चन्द्रग्रहण के अवसरपर, दुन्दुभिवर्षकी माघ महीने की पूर्णिमा तिथि सोमवारको भूमिदान किया। यह दुन्दुभिवर्ष शक वर्ष १०६५ के बीत जाने पर ही लगा था। जमीन **कुण्डी** नामक देशी माप से चौथाई **निवर्तन** थी। उसी सालमें १२ हाथका एक मकान भी अर्पण किया था। जमीन और मकान दोनों **आजिरगखोल्ल** नामके जिलेके **हाविन-हेरिलगे** गाँवके थे। यह एक मन्दिरको दान किया गया था जिसे माघनन्दि सिद्धान्तदेवके शिष्य तथा कामदेव-सामन्तके अधीनस्थ वासुदेवने बनवाया था। यह दान मन्दिर के जीर्णोद्धार तथा वहीं रहनेवाले मुनियोंके लिये आहारदानके प्रबन्धके लिये था। माघनन्दि सिद्धान्तदेव **क्षुल्लकपुर** (कोल्हापुर ही का दूसरा नाम) के रूपनारायण जैनमन्दिरके पुजारी (या पुरोहित) थे, मूलसघ, देशीयगणके पुस्तकगच्छ के प्रधान थे। उनके एक दूसरे शिष्य **माणिक्यनन्दि पण्डित-देव** थे। इस दानके करते समय इन्हीं पण्डितदेवके पादोंका प्रक्षालन किया गया था। इस दानको सब करों और बाधाओंसे सदैवके लिये मुक्त किया गया था। २७–२८ की पंक्तियोंमें भविष्यमें होनेवाले राजाओंसे प्रार्थना की गयी है कि वे इस दानकी हमेशा रक्षा या सन्मान करते रहें, क्योंकि यह उन्हीं एक का किया है। और यह शिलालेख अन्तमें पुरानी कर्णाटकलिपिमें वह कहते हुए समाप्त होता है —

शान्तरस प्रधान जिन देव ही मेरे देव हैं, अश्रान्त गुणवाला तपोनिधि, योगी माघनन्दि सैद्धान्तिक ही मेरे गुरू हैं और कामदेव सामन्त ही मेरे राजा या मालिक हैं।']

[EI, IV, No. 27, T and A.]

३२१

मत्तावार—कन्नड़।

—[शक १०६५=११४३ई०]

[मत्तावार (चिकमगलूर परगना) में, पार्श्वनाथ मन्दिर के एक पाषाण पर]

स्वस्ति शक-वरुषद् सामि ६५ सन्द् रुधिरोद्गारि (य)-संवत्सर ... ... दिरेशनिवारदन्दु ... .. य बुध जकवे गन्ति हेग्गेरेय मत्तिकापुरदिन्द् पुरवेय्द्लु। सुव्रत ... . देवेन्द्र बुधम् ॥

श्रावकर तोयेतर बु- । धावळि-परमोपकारि मति-चतुर कळा- ।
कोविदर बन्धु बन-मा- । निदान-पथरण्य सु-कवि-देवेन्द्र-बुधम् ॥

गौजड-वेग्गडेय गुरुगळ् देवेन्द्र-पण्डितरिगे अवर मदमाळिगे देकव्वेय निषदिय कल्लं मत्तवारद गामुण्ड बूचि-वेग्गडे नारणवेग्गडेय्यं पडिकर-माडुव मावलय्य नु निलिसिदरु

[(उक्त मितिको) गौजके वेगाडेके गुरु देवेन्द्र-पण्डित की पत्नी देकव्वे का स्मारक-पाषाण मत्तावारके गामुण्डोंने खड़ा किया था ।]

[Ec, VI, Chik magalur tl, no 162]

३२२

हिरे-आवली—संस्कृत—तथा कन्नड़

[सोरब परगना, हिरे-आवली-गाँव]

[ध्वस्त जैन बस्तिके पास २५ वें पाषाणपर]

स्वस्ति समस्तसुरासुरमस्तकमकुटांशुजाळक्षळितपद प्रस्तुतजिन धर्म्म .. .. मस्तं-भितचंद्रमखिलभव्यजन ... श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनं ॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वरं परमभट्टारकं सत्याश्रयकुळतिळकं चाळुक्याभरणं श्रीमज्जगदेकमल्लदेव ··· निर्म्मळकीर्त्ति चोल्वड ··· मडितवीरश्रीयं निळे उळे नेगर्द्द रजेय ··· नुव्विगे ··· समुद्रदि ·· ··· ··· विपुळकष्टमनेनेतिरुतिर्प्प ··· बनेक चळुक्य-पेर्म्मचसूप ··· ॥

श्रीजगदेकमल्ल महीनाथन लक्ष्मिगे रम्य हर्म्यवि-
भ्राजितमष्ट ' ळगं-मिवदळे निप्पमैमेयं
साजदेताळि्द तत्पतिगे वार्द्धिवरं नेळनं निमिर्चिरा-
'राजित पट्टसाहणियोळोळ्दोरे बम्मणदण्डनायनोळ् ॥ ··· दळं सैरिपु-यकेरगदोळ्पं मीरे तात्रभावददे किडलीय-युगदे यप्पुदें नाडेरदंदिनं तन्नुडि नन्नियागि नडेदोर्दे स्वामिसपच्चिगारपदवाद अनेक विक्रमविलास योगदंडाधिप ॥

॥ - चित्तदळुमल्लदेतन ।
सत्यद गुणविल्ल घनदे नीरेरिकरं ।
नित्तरिसि मूरुलोकम्- ।
नुत्तरिसितु निन्न कीर्त्तिलतेयु' कृतियु ॥
कंद ॥ अय्द जिनपद्गणेशं ।
मेय्देगेयरे मनद धृतिय कामिनियरोळ' - ।
तेय्दि ··· वेससे ··· सुत्तु ।
मय्दुनमल्लरस क नाहवरामं ॥
शकरदे ग्तनूजनु । -
किकरनेनिसिर्द्द स-णदान्वयदोडेयं ।
शंकिसदे धर्म्मदोळवं ।
शंकाधिगुणंगळं ··· यरेयिसिदं ॥

स्वस्ति समस्तप्रशस्तिसहितं श्रीमन्महाप्रधानं योगेश्वरदण्डनायकं बनवसे पन्नि-च्छासिरमनाळुवमिरे जिड्वळिगे पप्पत्तर अधिकारि पेर्ग्गडे मय्दुन माल्लिदेवं । श्रीमच्चाळुक्य विक्रमवर्षद दुंदुभि सवसरद पुष्यसुद्ध सोमवारदंदुत्त-

रायणसंक्रांतिय पर्व्वनिमित्त दंडनायको विन्नपगेय्दु श्रीमदवलिय पार्श्वदेवर्गें कारुगुलियवयल साल माविनल्लि विट्ट केदिर दुण्डिय गलेयलु कम्म 5—1

स्वस्ति समस्तजिनपादाम्भोजवरप्रसादरुमप्प मुद्गाकुंडनुं (others named) अक्कवालेनगरणियोल् ••• प्रतिष्ठेयं माडि समस्तप्रजेगळिद्दु । स्वस्ति यमनियम-स्वाध्यायध्यानधारणमौनानुष्ठान जपगुणसंपन्नरप्प । श्रीमूलसंघद सेनगणद पोगरि गच्छद वीरसेनपंडितदेवर सहधर्म्मिगळप्प माणिक्यसेन पण्डितदेवर कालं कर्च्चि धारापूर्व्वक माडि सर्व्वनमस्यमागि कोट्टरु । ई धर्म्मव प्रतिपालिसिदर् अनन्तपुण्यमनेय्दुवरु इदनळिदवरु अधोगति इळिारु ॥

(इमेशाका अन्तिम श्लोक)

[काल सन् ११४२–४३ ई० । दुन्दुभि वर्ष, पुष्य शुद्ध सोमवारकी उत्तरायण सक्रान्ति । यह लेख पश्चिमी चालुक्य राजा जगदेकमल्ल द्वितीय के राज्यका उल्लेख करता है और उसके वनवसे-१२००० के प्रदेशपर शासन करने वाले योगेश्वर दण्डनायक सेनाध्यक्षकी तारीफ करता है । पेर्गडे मग्दुन मल्लिदेव सेनाध्यक्षकी अनुमतिसे जिड्डुलिगे-७०के राज्य पर शासन कर रहा था और इसने आवलीके भगवान् पार्श्वनाथको एक भूमिका दान दिया था ।

एक और दान, संभवत एक जैन मन्दिरको मुद् गावुण्ड तथा और दूसरे लोगोंके द्वारा किया गया था (इसकी विगत लुप्त है) । ये लोग जैनधर्मके पक्के भक्त थे । यह दान वीरसेन पण्डित देवके सहधर्मा माणिक्यसेन पण्डितदेवके पाद-प्रक्षालन पूर्वक किया गया था । वीरसेन पण्डितदेव मूलसंघ, सेनगण और पोगरि गच्छके थे ।]

[EC, VIII, sorat tl. no 125]

३२३

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०६८=११४५ ई०]

[देखो, जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

३२४

यल्लादहल्लि = संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष क्रोधन = ११२४ ई० (लू० राइस)]

[यल्लादहल्लि (बेलकीकेरी प्रदेश) में, गाँवके दक्षिण-पूर्वमें, ध्वस्त बस्तिके पासके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
यस्य सद्धर्ममाहात्म्यात् सौख्यं जग्मुर्मुनीश्वराः ।
तस्य श्रीपार्श्वनाथस्य शासनं वर्द्धतां चिरम् ॥
जयति विगत-संख्याराति-भूपाल-भूमि-
स्थल-गज-तुरगादीन् संविजित्याग्रहीद्यः ।
सकळ-समय-धर्म्माचार-शौर्य्योरु-विद्वद्-
गुण-मणि-खनि भूभृत् पोय्सळ-क्ष्मापतिस्सः ॥
श्रीकान्तानेत्रनीलोत्पलवदनसरोजात-स-स्मेर-लीला-
लोकं लोकत्रयोज्जृम्भितविशदयशश्चन्द्रिकादोःप्रताप-
व्याकीर्णं त्यक्त-युक्त-क्रम कळिन-कुभृच्चक्रखेद-प्रमोद-
श्रीकं श्रीविष्णुभूपं बेळगुगे जगमं राजमार्त्तण्डरूपम् ॥
जळधि-व्यावेष्टितोर्व्वीपतियेनिसि सुखं बाळो चन्द्रार्कतारं ।
तळकाडं कोण्ड-गण्ड जिगुळर पदेयकूडे वेङ्कोण्ड-गण्डम् ।
तळवारल् तळ्त भूपालर हेडतलेयं थोप्येनल् होय्द गण्डम् ।
बलवद्राज्यङ्गल तन्नलगिन मोनेयोळ् पायु कटकोण्डगण्डम् ॥
तलेमलेयाडियागे निमिर्दं गाण्डगदमनावगम्महा-
बळ-पद-घातदिन्दरेदु सण्णिसुतुं नडेतन्दु तन्दु तन्न दोर
वळ्दलि कोङ्क चेङ्गिरिय मीसेगळं सस्विन्ते विष्णु-दोर्-

व्नलदले कित्तनोत्तिरिसि कळङ्गिन तेगिन तेङ्गिन नन्दनङ्गळं ॥

स्वस्ति समधिगत पञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वर **द्वारावतीपुरवराधीश्वर** । **यादवकुलाम्बरद्य मणि** । मण्डलीक-चूडामणि । श्रीमद्‌अच्युत-पादाराधना-लब्ध-जिष्णु-प्रभावम् । दिक्पालक-पराक्रमाक्रमाक्रमण-पटु-पराक्रमुक-स्वभावम् । शत्रु-क्षत्रिय कलत्र-गर्भस्रव-सम्पादक-गभीर-शङ्ख-नाद । वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसाद । हिरण्यगर्भ-तुलापुरुषादि-महा-क्रतु-सहस्र-सन्तर्पित-पितृ-देव-गुरु-सम ••• निरुपम-क्षत्र-गुण-निर्जित-विराव-विष्णु-**वीर-विजयनारायण-पुराद्यसंख्यात**-देव -कुळ-कुळाचळ-कुळ (कुळ)-यादवजळधि-विष्णुसमुद्र विलास-मुद्रित-मही-लोकन् अविकरण चातुर्थ्य-चतुरानन । चतुर्व्वेदपाडित्य-मण्डितगोष्ठिषडानन समरमुखगृहीताहितमहीकान्त-कामिनीजन-मुखनिरीक्षणक्षणकृतसूर्य्यनिरीक्षण नृसिंहध्याननिश्चलीभूत-निर्मळचरित्र। पराङ्गनापुत्र । सकळजनसत्यनित्याशीर्व्वाद-सामर्थ्य सम्पादितकल्पायुरारोग्याभिवृद्धि-युक्त दुर्द्धरसमरकेळीसंसक्त दोर्व्वळावळेपदुश्शीलाश्वपतिगजपति प्रमुखराज-लोक-निर्द्दयनिर्द्दळनोपार्जिताश्वगजादिनानाविधरत्ननिचय-रुचिरलक्ष्मीविलासम् । सरस्वतीनिवासम् । **चोळकुलप्रलय-भैरवम्** । चेरम-स्तम्बेरम-राजकण्ठीरव । **पाण्ड्य-कुल**पयोधि वडवानल । पल्लवयशोवल्लीपल्लवदावानल । **नरसिंहवर्म्मसिंह** सरभ निश्चल-प्रतापाधिपतित-**कळपाळा**दि-नृपाल-सलभम् । निज-सेना-नाथ-निर्द्दलित **जननाथपुर** जगद्-दारिद्र्य-विदारण-प्रवीण-कारुण्य-कटाक्ष-निरीक्षण प्रत्यक्ष-पक्षेक्षण-चतुस्समुद्र-मुद्रित-वसुमती-मनोहर-लक्ष्मी-वल्लभ । भयलोभदुर्लभ । नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम् श्रीमत्-**कञ्चि-गोण्ड चिक्रमगङ्ग वीर-विष्णु-वर्द्धन-देवरु** गङ्गवाडि-तोम्बत्तरु-शरीरनुं । **नोळम्बवाडि**-मूवत्तिर्-च्छासिरमुं । **वनवसे**-पन्नि-च्छासिरमुं । **हलसिगे**-पन्निच्छासिरमुवेरडरु-नूरुंवरं दुष्टनिग्रह-शिष्ट-प्रतिपालन-पूर्व्वकवेक-च्छत्र-च्छायेयिन्दाळ्दनामहानुभावनिं बळिय ।

कन् ॥ तन्देयल् अच्छोदित-तेरें- । दिन् दवे नेगल्दादिरासिब-पडविगे समनेम्ब् ।
ओन्दु-विभव-प्रभावते- । यिन्दं **नरसिंह**नरसु-गेय्युत्तिर्द्दम् ॥

वृ० ॥ हिमदिं सेतु-वरं तोलल्दु नेलनं निष्कण्टकं मादुव- ।
ळि ळ महोग्रजियोळान्तिदिर्द्दिदर्दिं **चङ्गाल्वनं** कोन्दुवा-

समदेभावळियं इय-प्रततियं चेम्बोङ्गळं नूत्नरत्-
नमुम कोण्डु नृसिंह-भूपनेळेयं ठोस्-स्तम्भदेळ् तालिद्दम् ॥
व ॥ अन्तु समस्त-मण्डलिक-सामन्त सेनानाथ-परिजन-परिवृतनागि दोरसमुद्रद
नेलेवीडिनोळ् समुत्तुंग सिंहासनासीननागि सुखसङ्कथाविनोददिं राज्यं गेय्यु-
त्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि । स्वस्ति समस्तराज्यभरनिरूपितमहामात्यपदवीप्रख्यात
शक्तित्रयसमन्वित श्री-वीर-विष्णुवर्द्धन-देव-प्रताङ्ग-लक्ष्मी-रक्षणाङ्ग- (र)
रक्षक सत्य-शौच-स्वामि-हितादि-सद्-गुण-शिक्षक चतुर्व्वेदमहादाननिरतं श्रीमद-
भिनवमरत श्री वीर विष्णुवर्द्धनदेवमुख्यविजयमण्डितमानवाकारचक्रम् ।
स्वामि-समादेश-साधितसकलदिक्चक्र । कौशिक कुलाम्बरदिवाकरम् । सम्य
क्त्वरत्नाकर । नामादिसमस्त प्रशस्तिसहितम् श्रीमन्महाप्रधानम् ।
वृ० ॥ कुडे नृपमेरे होय्सळ-महीभुजनक्करदुक्केयिन्दे ता ।
पडेदनशेषराज्यकरमारघुरन्धरनेन्दु तन्न-नेग-
गडेतनमं निरन्तरवेनल् प्रभु-शक्तियनान्त पेर्म्मे नूर-
म्मडि मिगिलादुदे-वोरळ्वेनुन्नतियं विभु-देव-राजनम् ॥
अन्तु पति-हितनुं सकळ-नियतनुवेनिसिद देव-राजन गुरुकुलवेन्तेन्दोडे ।
श्लो० ॥ जयत्यमरनागेन्द्रपूजिताङ्घ्रियुग प्रभोः ।
वर्द्धमानजिनेन्द्रस्य शासन कर्म्मनाशनम् ॥
अन्तु श्रीवर्द्धमान-स्वामिगळ दिव्य-तीर्त्थदोळु केवलिगळुं श्रुतकेवलिगळुं बुद्धि-
प्राप्तरुं अप्प परम-मुनिगळु सिद्ध साध्यरुमागे तत्तीर्थसामर्थ्यमं सहस्रगुण माडि
समन्तभद्र स्वामिगळु अकलङ्कदेवरुं । गृद्ध्रपिञ्छाचार्य्यरुं (। व्) आदि-
यागे पलम्बरुं श्रुत-धररु सन्द बलिक्के श्रीमूलसङ्घद श्री कोण्डकुन्दान्वयद देशिय-
गणद पुस्तक-गच्छद विशिष्टरेळगे सागरनन्दि सिद्धांत-देवरभिनव-गणधररे-
निसिदरवर शिष्यरर्हन्नन्दि-मुनि-पुङ्गवरवर शिष्यरु तर्क्क-व्याकरण-सिद्धान्ताम्बुरुह-
वन-दिनकररुमेनिसिद श्रीमन्-नरेन्द्रकीर्त्ति-त्रैविद्यदेवरवर सधर्मर् षट्त्रिंशद्गुण-
मणिमण्डनमण्डितरु पञ्चविधाचार-निरतरुमप्प श्रीमन्मुनिचन्द्र-भट्टारकर श्री-पादार-
विन्दाराधक ।

वृ ॥ मूलं मूलगुणस्तयोत्तरगुणः काण्डं श्रुतं स्कन्धकम्
शाखा शान्तिरथाङ्कुर प्रथमतो धर्म्मो दया मञ्जरी ।
जाता यस्य स कल्प-भू(भ)मवनितो मन्येप्समीष्टं फलम्
शिष्यश्श्रीमुनिचन्द्रदेवयमिनः सम्वर्द्धतां देवण ॥

आ-विशिष्ट-कल्प-द्रुमन वंशावतारवेन्तेन्दोडे श्री-कौशिकमुनीश्वरनिन्दनेकरं
(व्) अनुगमरेसेदरवर ळगे ।

कन् ॥ अनवधिगुणमणिनवनं जिनपदयुगळोदयचलार्क्कं विद्वज्-
जन-वनज-राज-हंसं । जनसंस्तुतनेनिपि देवराजं नेगल्दम् ॥
अ-विमल-यशन कुल-वधु । मूविनुतचरित्रे सकलगुणवति विकचेन्-
दीवर-लोचने पुण्य- । श्री-वन्दिते कामिकब्बे नेगल्दल्लु जगदोळ् ॥
आ-दम्पतिय तनूजं । नूदेव-कुलाम्बरेन्दु निर्म्मल-कीर्त्ति-
श्रीदयितं निरवद्य-गु- । णोदयनुदियिसिदनेत्तेयल्लुदयादित्यम् ॥
एने नेगल्दुदयादित्यन् । वनिते पतिव्रतगुणावलम्बन-योपिद्-
जनविनुते सत्कलागम- । वनितेयेनल्लु किरुगणब्बे नेगल्दल्लु जगदोळ् ॥

वृ ॥ एने नेगल्दिर्द्द दम्पतिगळ-उद्भवमुद्भविपन्ते पुण्य-भा-
जनरोगेदर्त्तनूभवरदाचतेयिं रतुन-त्रयङ्गळी-
जनवि-सरीत-भूतळदोळन्देसेवन्तिरे जैन-धर्म्म-वर्-
द्धनमेने मूवरिन्दमे यशोलते पूर्व्वं दिगन्तराळमं ॥
पेसर्-वेट्टा-मूवरोळ् पेम्र्मेगे मोदले निसिद्दंत्युदात्तप्रभाव-
प्रसवं श्रीदेवराजं विम्ळगुणगणाळम्बनं सोमनाथम् ।
कुसुमास्त्राकार-सार-प्रकटित-विभव-श्रीधरं तानेनल् वर्ठ् ।
तिसिदर्नीहारहारोज्ज्वळतर-यशदिं तीवे दिक्-चक्रवाळम् ॥

- कन् ॥ अवरोळगेनिसुं निज-कुल- । नव- नळिनी-द्युमणि निखिल-भव्यजनैका-
र्णव-पूर्ण-चन्द्रनुद्यत्- । प्रविभासित-कीर्त्ति देवराजं नेगल्दम् ॥

वृ ॥ जनसंस्तुत्यगेळीतनत्यधिकनीतं निश्रुताचारनी-

ननतक्र्यास्पदनीतनुद्‌ध-यशनीतं सत्कलाधारनेन्द् ।
एनितानुं तेरंदिन्दे वण्णिसलिला-लोकं करं पेम्पु वेत्-
तनुटात्त-स्थितियिं सुहृज्जनविपद्-विद्रावण देवणम् ॥
जडजभवनफळेयेनिसुव । गिडु कलु मरनदपरे निपरं पडेदघमं ।
बिडिसलु वेडिये पडेदम् । कडुचरितेय देवराजनं घरेगेसेयल् ।
आ-भव्य-चूडामणिय मनोरमे ।
कन् ॥ अनुपम-महिमाळम्र्विन । जिनपदसरसिरुहभृंगकुन्तले योपिल्-
जनविनुते पूर्ण्णं कळश- । स्तनि कामल-देवि नेगल्दळी-वसुमतियोळ् ॥
वृ ॥ तळिरं केन्दळव् इन्दुवं वदनसुम्भृङ्गाळियं कुन्तळा-
वळी चेम्बोड -गोडनं पोदल्द-मोले मुक्तानीकमं दन्तवुत्-
पळमं लोचनवीचु-चाप-लतेयं भ्रू विभ्रमं पोल्विथ ।
तळेयल् कामल-देवि मन्मथधनुर्व्यालेखेयन्तोप्पिदल् ॥
अन्तु सकुटुम्ब-समेतं श्रीजिनघर्म्मनिर्म्मलाम्बरहिमकरनु श्री-होय्सलमहीशराज्य-भूभृन्निलयमणिप्रदीपकलशनुं मागुत्तिर्द्दडे श्री-होय्सल देवराजन धर्म्मबुद्धिगं स्वामि-भक्तिगं मेच्चि सूरनहल्लियं कोट्टोडल्लि ।
वृ ॥ एनिसुं शुभ्राभ्र-जालं वळसिद रजताद्रीन्द्रमीयिद्दु वेन्देम्-
बिनेग नाना-सुधा-दीधिति वळवळिमुत्तुङ्गकूट त्रिकूटं ।
जिनगेहं शोभिसल् माडिसि निज-जनक गित्त नाल्दोळनिष्टान्-
गनेगित्तं मत्तवोन्दं विबुध-जन-सुरोर्व्वीजनी-देव-राजम् ॥
अन्तमरेन्द्र-भवनमेनिप पार्श्व-जिन-भवनमराल-राष्ट्र-यशो-धन-वृद्ध्यर्थवागि माडिसि श्री-होय्सळ-देवं कुत्तु श्री-पार्श्वदेवरष्टविधार्च्चनेगं (व्) आहारदानक्कं क्रोधन-संवत्सरद उत्तरायण-संक्रमणदन्दिष्ट-देवता-सन्निधानदला-सूरनहल्लिय मोदल नाल्वत्तु होन्नोळगे हत्तु होन मोदल श्रीपार्श्वपुरमं माडि देव-राजङ्गे धारा-पूर्व्वकं माडिया-चन्द्रार्क्कतारं सलुवन्तागि कोट्टदा-भव्य-चिन्तामणि श्रीमन्-मुनिचन्द्र-देवर श्री-पादवं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट भूमिय सीमेयेन्तेन्दोडे देवरकेरेय पडुवण-कोडियिं नट्ट कलुगळिं दोडगट्टद पडुवण-कोडियिं मूड माविनकेरेय दारिचिन्द

केतन-घट्टदिं तेङ्क माविनकेरेंयिं पडुवण-सीमेयिं पडुव तरंगेलेय मोरंडिय हेरड्डे गेवनगट्टद वडगण कोडिय कब्बिनकेरेय मूडण कोडियिन्दवा-चयल मूडनिन्दं मूवत्तु ॥ (हमेशाकी तरह अन्तिम वाक्यावयव और श्लोक) भद्रमस्तु जिन-शासनस्य ॥

[जिन शासन और पार्श्वनाथके सिद्धान्तोंकी प्रशंसा। राजा पोय्सल और राजा विष्णुकी प्रशंसा।

जिस समय (अनेक पदोंसे युक्त) कब्बिको अधिकारमें करनेवाले, विक्रम-गङ्ग, वीर-विष्णुवर्द्धन-देव गङ्गवाडि ९६०००, नोलम्बवाडि ३२०००, बनवसे १२०००, तथा हलसिगे १२००० पर राज्य कर रहे थे :—

उसके बाद, अपने पिता की छापसे जैसे अङ्कित होगये हों, नरसिंह राजा थे। (उसकी प्रशंसा) उनके दोरसमुद्रमें राज्य करते समय, उनके पादपद्मोपजीवी महाप्रधान देवराज हुए। उनके गुरुकी परम्परा निम्नभांति थी:—

वर्धमान जिनेन्द्रके बाद केवली, और 'श्रुतकेवली' हुए। उसके बाद उसी परम्परा में— मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, देशियगण तथा पुस्तकगच्छमें, समन्तभद्रस्वामी, अकलङ्क-देव, गृद्धपिच्छाचार्य तथा और भी बहुत-से श्रुतधर हुए। इनमें एक समरनन्दि-सिद्धान्तदेव हुए जो नये गणधर समझे जाते थे। उनके शिष्य अर्हनन्दि-मुनि थे। उनके शिष्य नरेन्द्र-कीर्त्ति त्रैविद्यदेव थे जो न्याय, व्याकरण और दर्शन में पारङ्गत थे। उन्हींके साथी मुनिचन्द्र-भट्टारक थे।

उनके चरणों का पूजक शिष्य देव था। उसकी परम्परा इस प्रकार रही-— कौशिक-मुनिसे सन्तान चली, जिसमें देवराज था। देवराज का पुत्र उदयादित्य, उसके, तीन पुत्र हुए—देवराज, सोमनाथ और श्रीधर। इनमें से कत्तुचरिते का देवराज प्रधान था।

उसको देवराज-होय्सलने सूरनहल्लि दान में दी। और उसने वहा एक जिन-मन्दिर बनवाया। होय्सल देवने अष्टविधार्च्चन और आहारदानके निमित्त

सुरतहल्लि की ४० होन में से १० होन इसके लिए निकाल दिये और इसका नाम पार्श्वपुर रख दिया। और देवराजने मुनिचन्द्र-देवके पादप्रक्षालन पूर्वक भूमिदान दिया।]

[EC, IV, Nagmangala Tl., No. 76]

३२५

महोवा;—संस्कृत।

[सं० १२०३=११४६ ई०]

इस लेखमें स० १२०३ होनेके अतिरिक्त शिल्पी (इसको खोदनेवाले) लाखनका नाम और दिया हुआ है।

[A. Cnnninghom, Reposts, XXI, p 73, a

३२६

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०६९—११४७ ई०]

[हुम्मचमें, तोरण-बागिलके उत्तर की ओर के खम्भे पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज,परमेश्वर परम-भट्टारकं सत्याश्रय-कुळ-तिळकं चाळुक्याभरणं श्रीमत्-जगदेकमल्ल-देवर विजय-राज्यमुत्त-रोत्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क-तारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि। (पंक्ति ८ में 'समधिगत पञ्च' से लेकर पंक्ति २० में 'महा-मण्डलेश्वरं' तक शि० ले० नं० २१४ की ११ वीं पंक्ति से २५ तक की पंक्तियों से मिलता है।)

कुन्दद लेवप्-प्रसरम् ।
कन्दिसे पर-नृप-यशो-लता-मन्डळमं ।
वन्दिगे वेळपुदनित्तम् ।
कन्दद् बसमेसेये **वीर-देव-नृपाळम्** ॥
आतन हृदयार्द्धाङ्गदोळ् ।
आतत तनु-लतिकेयोन्दे सान्दसे मिक्कल् ।
मातेनो सिरियुमं गिरि- ।
जातेयुमं सतियरोळगे **वीरल-देवि** ॥
अवर्गे तनूभवर् क्रमदिनादरपश्चिम-दिग्-वधूटियोळ् ।
रवि नेरेयल् पोदल्व वेळगुं बहु-रागमुमुग्र-तेजमुम् ।
भुवन-दगुत्तवङ्गळे निपी-गुणदन्तिरे **तैल-भूपनुम्** ।
भुवन-विनूत-गोग्गि-नृपनोड्डुगनग्गद **बम्म-देवनुम्** ॥
निज-भुज-बळदिन्दरि-भू- ।
भुजरं कोन्दोत्तिकोण्डु देशमनन्ता- ।
विजिगीषु-तैल-भूपम् ।
भुजबल-सान्तरनेनिप्प पेसरं पडेदम् ॥
आतन तम्मं तोळ्ळोळि- ।
ळा-तळमं तळेदु तान्दिदं सत्य-वचम् ।
ख्यातं गोग्गि-नृपाळम् ।
भूतळवरियल्के **नन्नि-सान्तर-**वेसर ॥
विक्रम-शान्तर-वेसरम् ।
शक्रङ्गेणेयेनिसि पडेदनुद्दण्ड-मही- ।
चक्रम नेपगिसि दिङ्-मुख- ।
चक्रोज्वळ-कीर्त्ति-कान्तनोड्डुग-भूपम् ॥
पर-नरप-शिरः-श्रङ्गो- ।
त्कर-करि कमळा-पयोधर-द्वय-हारम् ।

स्मर-मूर्त्ति सकल-दिग्-मुख- ।
परिचुम्बित-कीर्त्ति **बम्म-देव-कुमारम्** ॥

अवर तायि ॥

जनकं रक्कस-गङ्ग-भूमिपति काञ्ची-नाथनात्म-प्रियम् ।
विनुतर् श्री-विजयर् सु-शिक्षकरेनल् विद्विष्ट-भूपाळ-सं- ।
हनदि कान्त-यशो-विळास भुज-खड्गोल्लासि ता **गोग्गि** नन- ।
दनना-**चट्टल-देवि**गेन्दोडे यशश्श्रीगिन्तु मुं नोन्तरार् ॥

कुन्तळ-देशदोळोप्पुव ।
सान्तळिगेय नडुवेनिप्प **पोम्बुर्च्च**मिला- ।
कान्तेय पेर-नोसलेनिसे निर ।
न्तरमेसेवोन्दु-तिळकमु**र्व्वी-तिळकम्** ॥

इन्तेनिसिदुर्व्वी-तिळक-जिन-भवनव माडिसिद महा-सतिय प्रिय-पुत्र-नप्प **विक्रम-शान्तरङ्गे** ॥

पुट्टिदनिनङ्गे तेजम् ।
दिट्टि मोगकमदुं चन्द्रमङ्गेळ् तरदिम् ।
पुट्टु ववोलखिळ-वैरि-घ- ।
रट्टं शरदिन्दु-कीर्त्ति **तैल-नृपाळम्** ॥

नळने विनोदि धर्म्मजने धार्म्मिकनब्धिये रत्नदागरम् ।
कुळिशमे शस्त्रमर्ज्जुनने धन्वि सुरेन्द्रने भोगि मन्दरा- ।
चळमे गिरीन्द्रमप्रतिम-राये-भळप्पने चक्रि **तैल**-मण्- ।
डलिकने दानियेन्दु मुडिगिक्किदेनार्प्पवरेत्तिकोळ्ळिरे ॥

त्रिभुवनमल्ल-चक्रि कुडे **तैल** नृपं पडेद नृपोत्तमम् ।
त्रिभुवनमल्ल-सान्तर-निजोचित-नाममनुर्व्वि वण्णिसल् ।
विभु **जगदेकदानि**-बेसरं तळेदं निखिळार्त्थिगादुदोन्द् ।
अभिनवमप्प जङ्गम-सुर-द्रुममेम्बिनमित्तुधात्रियोळ् ॥

आतन वक्षस्थळदोळ् ।

-न् (उत्तर मुख) तन-मणि-हारवेनिसे तनु-रुचि सौमा- ।
ग्यातत-गुणमं तळेदळ् ।
कौतुक-तनु-लतिकेयिन्दे चट्टल-देवि ॥
सम्पन्नोत्सव-भावमं तळेदु लीला-यौवन-श्रीयनान्त् ।
इम्पिन्दा-मिथुनं मनोरथमनान्तिर्प्पन्नेग पुट्टिदर् ।
पम्पा-देवियमुग्रवंश-तिळकं श्रीवल्लभोर्व्वीशनुम् ।
पेर्म्पि पुट्टुववोल् सुधार्ण्णवदोळा-श्रियं सुर-द्रुमाब्जमुम् ॥
पर-भूपाल-समुद्रदोळ् निज-कर-प्रोत्खात-निस्त्रिंश-मन्- ।
दरमं सन्धिसि विक्रमद्-भुज-फणीन्द्रावेष्टित-प्रान्तमम् ।
भरदिन्दं कडेदुग्र-वंश-तिलकं श्री-कान्तेय तन्नपेर्- ।
डरदोळ् ताळ्दे बुधाळियेम् पोगळदो श्रीवल्लभाख्यानमम् ॥
विक्रम-गर्व्वमं तळेदु तागिद वैरि-नृपाळ-जाळ-दोश्- ।
चक्रदोळिर्द्द विक्रम-वधूटियनिळ्कुळिगोण्डु बल्पिनिम् ।
विक्रम-वज्र-वेदि-भुज-मण्डपदोळ् तळेदोल्दु ताळ्दिदम् ।
विक्रम-शाळिगळ् पोगळे विक्रम-शान्तरनेम्ब नाममम् ॥
शौर्यं यस्य सदर्प्प-वैरि-वनिता-वैधव्य-दीक्षा-गुरुः ।
प्रायो दानमनूनमर्त्थि-जनता-दारिद्र्य-विद्रावणम् ।
कीर्त्तिर्द्दिग्वनिता-विलोल-कबरी-कुन्द-प्रतिद्वन्द्विनी ।
सोऽयं सद्गुणरत्नरोहणगिरिः श्रीवल्लभोर्व्वीश्वर ॥
अभय-विशुद्ध-नायक-निबद्ध-निज-क्रम-चूडेयं शिरश्- ।
शु (सु)भग-विभूषेयेन्दु तळेदिर्द्दरिगित्तु समस्त-धात्रियम् ।
विसुसले कोट्टु कट्टिदिरोळान्तहितर्गेहि-नाक-लोकमम् ।
त्रिभुवन-दानियेम्ब पेसरं तळेद बुध-माळे बण्णिसल् ॥
कत्तुरिय बोट्टे मेणिदु ।
पुत्तळिगेयो नीळ-मणिय तोळ्-गम्बदोळेम् ।
तेत्तिसिदुदेनिसि घरेयम् ।

पोत्तुदु भुज-वज्र-कोटि-सिरिवल्लहना ॥
इन्तु कोगोळिपुदोन्दु-व---।
सन्तद सान्तळिगे-सायिरं सन्तविरल् ।
शान्तर-तिळकं विक्रम- ।
शान्तरनेकातपत्रम तळेदिर्द्दम् ॥
आ-भूपतियग्रजेगे ।
त्रैभुवन-व्याप्त-कीर्त्ति-गङ्गा-जळदिम् ।
भू-भुवन-कलि-कळङ्कद ।
वैभवमं-कर्च्चि कळवुदेनच्चरियै ॥
धरेयेल्लं चित्र-चैत्यालय-नव-रचना-चूळकं दिक्-करीन्द्रो- ।
त्कर-कर्ण्ण-श्रेणिमेल्ल जिन-सव-निनदत्-तूर्य्यकोत्ताळ-ताळं ।
स्फुरितोद्यद्-व्योममेल्लं परम-जिनपतीज्या-ध्वज तानेनल् ।
वर-पम्पा देवियेत्त वेळगुवळरुहच्छासन-श्रिय पेम्पम् ।
विनुत-महापुराण जिन-नाथ-कथोक्तिये कर्ण्ण-भूषणम् ।
जिन-मुनिगळ्गे माडुव चतुर्व्विध-दानमे हस्त-कङ्कणम् ।
जिनपति-भक्ति-सूक्ति-नुति-मालेये कच्चुर-कन्थ-मण् (पश्चिम मुख) उनम् ।
तनगेने तैल-भूप-सुते मेच्चुवळे तनु-भार-भूषेयम् ॥
उर्व्वी-तिळकमनिळिपि वि- ।
गुर्व्विसिदवोलोन्दे-तिङ्गळोळ् माडिसिदळेनल्क् ।
ओर्व्वळे शासन-देवते ।
सर्व्वोर्व्वि-वन्द्येयेनिसि पम्पा-देवि ॥
आ-नूतनात्तिमब्बेय ।
भू-नुत-शीळवने तळेदु सौभाग्य-वपुश्- ।
श्री-निधि भोग्य-श्लाघ्य- ।
श्री-निधि पुट्टिदळुदात्ते वाचल-देवि ॥
स्तन-कळशाग्रदोळ् पोळेदु मुत्तिन हारमनोन्दि कर्ण्णदोळ् ।

घन-कुळिशावर्तसमनमर्क्कयनाळ्दु विनीळ-केशदोळ् ।
विनुतवेनिप्प केढगोय शुळियनित्तरुह्मखांशुगळ् ।
दिनमुख-पूजेयोळ् तोडव नीमवे वाचल-देविगावगम् ॥

ई-चरित्र-पवित्रेये ताय शीलद पूक्केयेन्तेन्दोडे ।
रुचि-पूर्व्वेष्ट-विधार्च्चने ।
रुचि-पूर्व्व-महाभिषेकमुं रुचि-पूर्व्वं- ।
प्रचुर-चतुर्-व्यक्तियुमिवे ।
रुचि पम्पा-देविगखिळ-सन्ध्या-त्रयदोळ् ॥

इन्ती मूवरं श्रीमद्-[द] रविळ-संघद नन्दि-गणद रुङ्गळान्वयद वादीभसिंहरेनिपजितसेन-पण्डित-देवर गुड्डुगळप्पुदरिनुर्व्वी-तिळकमेनिसिद पञ्च-वसदिय बडगण पट्टशाळेयं माडिसिदरवर गुरुगळन्वयदाचार्य्यावळि-येन्तेन्दोडे ॥ श्री-वर्द्धमान-स्वामिगळ तीर्त्थं प्रवर्त्तिसे सतर्द्धिसम्पन्नरप्प गौतमर् गणधरदेने त्रि-ज्ञानिगळप्प मुनिगळ् पलवरुं सले अवरिं बळिय चतुरङ्गुळ-ऋद्धि-प्राप्तरेनिप कोण्डकुन्दाचार्य्यरुं श्रुतकेवळिगळेनिप भद्रबाहु-स्वामिगळु मोदलागे इळम्बराचार्य्यर्प्पोदिम्बळियं समन्तभद्र-स्वामिगळु दीर्यसिदरवरनन्तरं गङ्ग-राज्यमं माडिद सिंहनन्द्याचार्य्यर् अवरि जिन-मत-कुवळय-शशाङ्करेनिपकलङ्कदेव-रवरिं राय-राचमल्लन गुरुगळप्प वादिराज-देवरेनिसिद कनकसेन-देव-रुमवर शिष्यरोडेय-देवरुं रूपसिद्धियं माडिद दयापाल-देवरुं वर्त्तिसिदिम्बळियं षट्-तर्क-षण्मुखरुं स्याद्वाद-विद्यापतिगळुं जगदेकमल्ल- वादिगळुमेनिसिद श्री-वादिराज-देवरु ॥

जयिसुवुदे जिनदमुद्धत- ।
चयमं श्री-वादिराज-सूरिगे समेयोळ् ।
जयसिंह-चक्रवर्त्तिगे ।
जय-पत्रं बरेदु कुडुतमिप्पुदे जिनदम् ॥

इन्तप्प वादिराज-देवरिम् । कमळभद्र-देवरवरिं । शब्द-चतुर्म्मुखरुं तार्किकचक्रवर्त्तिगळुं वादीभ-सिंहरुमेनिसिद्जितसेन-पण्डित-देवरवर सधर्म्मर् कुमारसेन-देवरनन्तर वैद्य-गज-केसरियेनिसिद श्रेयान्स-देवरवरिम् ॥

य पूज्यः पृथिवी-तले यमनिशं सन्तस्तुवन्त्यादरात्
येनानङ्ग-धनुर्जितं मुनि-जना यस्मै नमस्कुर्व्वते ।
यस्मादागम-निर्णयस्तनुभृता यस्यास्ति जीवे दया
यस्मिन् श्री-मलधारिणिव्रति-पतौ धर्मोऽस्ति तस्मै नमः ॥
यस्य वागमृतं लोके मिथ्यैकान्त-विषापहम् ।
तस्मै श्रीपाल-देवाय नमस्त्रैविद्य-चक्रिणे ॥

अवर सधर्म्मर् ॥

इच्छा-विधाता भयतो विधाता
नारायणो मौन-परायणोऽसौ ।
महेश्वरो दूर-विनश्वरो ऽस्मिन्
कोऽनन्त वीर्य्ये प्रतिवक्ति वादी ॥

श्रीमत्परम्या-देविरमं श्रीवल्लभ-देवनु राज्यं गेय्युत्तमिरलु स (श) क-वर्ष १०६६ प्रभव-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध-पञ्चमी-बृहस्पतिवारदन्दु बहगण पट्टशालेय प्रतिष्ठेय माडि श्रीवल्लभ-देवं वासुपूज्य-सिद्धान्त देवर कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं कोट्ट वृत्ति आधुदेन्देडो ओडिलवयलु-मूतगद्देयुम सर्व्व-नमस्य माडि कोट्टर् ॥ (वे ही अन्तिम वाक्यावयव और श्लोक) (दक्षिण-मुख) श्री-दुर्म्मति-संवत्सरद पुष्य-शुद्ध-छट्टि-सोमवारदन्दु श्री-वीर-सान्तर-देवर्ग्गे........ इदिरदर देवरस-दण्णायक वरद रूवारि मादेय होयिद श्री-जिनशरणु ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

जब, (उन्हीं चालुक्य पदों सहित), जगदेकमल्ल-देव का विजयी राज्य चारों ओर प्रवर्द्धमान था —

तत्पादपद्मोपजीवी, (शि० ले० नं० २१३ में जो नन्नि-शान्तर के लिये विशेषण प्रयुक्त हुए हैं उन्हीं सहित) राजा वीर-देव था। उसकी रानी वीरल-देवी थी। उनके राजा तैल, राजा गोग्गि, ओड्डुग और बम्मदेव, ये चार पुत्र उत्पन्न हुए थे। तैल का नाम भुजबल-शान्तर पड़ा; गोग्गि का नन्नि-शान्तर, और राजा ओड्डुग का विक्रम-शान्तर। रूपमें कामदेव के समान कुमार बम्म-देव था। इन सबकी मां चट्टल-देवी (वीरल-देवी) थी, जिसके पिता राजा रक्कस-गंग, पिता काञ्ची-अधिपति, गुरु श्रीविजय, पुत्र गोग्गि थे।

कुन्तल-देशमें सुन्दर शान्तळिगे में पृथ्वीदेवी के माथे के समान पोम्बुर्च्च था। उर्व्वी-तिलक जिन मन्दिर को बनानेवाली महादवी के प्रिय-पुत्र विक्रम-शान्तर के राजा तैल उत्पन्न हुआ था। तैलको चक्रवर्त्ती त्रिभुवनमल्लने 'त्रिभुवन-मल्ल-शान्तर' का नाम दिया; 'जगदेकदानी' का भी पद उसको मिला। इसकी रानी चट्टल-देवी थी। इन दोनों के संयोगसे पम्पा-देवी और राजा श्रीवल्लभका जन्म हुआ था। श्रीवल्लभका दूसरा नाम विक्रम-शान्तर था और यह सान्तलिगे हजारका राजा था।

इस राजा की बड़ी बहिन पम्पा-देवी बहुत ही जिनभक्त थी। इसने एक ही महीने में उर्व्वी-तिलक (बसदि) के साथ-साथ शासन-देवता बनवायी थी।

पम्पादेवीसे, नयी अत्तिमब्बे[1] के समान, उदार बाचल-देवीका जन्म हुआ था। उसकी प्रशंसा—

ये तीनों (पम्पा-देवी, श्रीवल्लभदेव तथा बाचल-देवी) वादीभसिंह नामसे

---

१. यह चालुक्य चक्रवर्त्ती तैलके सेनापति मल्लपकी पुत्री नाग-देवकी पत्नी, तथा पडुवल तैलकी माता थी। वह भक्त जैन थी, इसने पोन्नाके 'शान्ति पुराण' की १००० प्रतियाँ अपने खर्चसे लिखवायी थीं, और सोने तथा रत्नोंकी १५०० जिन प्रतिमायें बनवायी थीं।

प्रसिद्ध, द्रविळसंघ, नन्दिगण, और अरुङ्गलान्वयके अजितसेन-पण्डित-देवके गृहस्थ-शिष्य और शिष्या थीं। उन्होंने पञ्च-बसदिके उत्तरीय पट्टशालेको बनवाया था।

इसके बाद अपने गुरुओं की परम्पराके आचार्यों के नाम दिये हैं, वे प्रायः सब वे ही हैं जो पहले के शिलालेख नं० २१३ और २१४ में आ चुके हैं। विशेष इतना है कि अजितसेन-पण्डित-देवके दो सधर्मा थे—कुमारसेन-देव और श्रेयान्स-देव। इनके बाद बहुत बड़े विद्वान् मलधारि, तथा श्रीपाल-देव त्रैविद्य-चक्री हुए। उनके सधर्मा अनन्तवीर्य थे।

जब पम्पा-देवी, और श्रीवल्लभ-देव राज्य कर रहे थे, (उक्त मिति को), उत्तरीय पट्टशाले की स्थापना करने के बाद, वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक निम्न दान दिया,—(यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा है)।

वे ही अन्तिम श्लोक।

इसके बाद ६ पंक्तियाँ हैं (जो बहुत घिसी हुई हैं), जिनमें दुर्म्मति वर्षमें (११४१ ई०) वीर-शान्तर-देवके सम्बन्ध में कुछ उल्लेख है।

देवरस-दण्णायक ने इसे लिखा। शिल्पी मादेय ने इसे उत्कीर्ण किया।)

[Ec, VIII. Nogars U. No.37]

३२७

मुगुलूर—संस्कृत—तथा कन्नड़—भग्न

[वर्ष प्रभव = ११४७ ई० ? (लू० राइस)]

[बस्तिके प्रवेशद्वारके पासके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥
श्रीमद्देल्कोटि-जिनालयमिदु ॥
जयति सकळविद्यादेवतारत्नपीठं

हृदयमनुप्रलेपं यस्य दीर्घं सदैव- ।
जयति तदनु शास्त्रं तस्य यत् सर्व्वं-मिथ्या-
समय-तिमिर-घाति ज्योतिरेकं नराणाम् ॥
श्रीकान्तानेत्रनीळोत्पळवदनसरोजातसस्मेरलीला- ।
लोकं लोकत्रयोज्जृम्भितविशदयशश्चन्द्रिकादोः प्रताप- ।
व्याकीर्णं-त्यक्त-युक्त-क्रमं-कळित-कुभृच्चक्र-खेद-प्रमोद- ।
श्रीकं श्रीविष्णुभूपं बेळगुगे जगमं राज-मार्त्तण्ड-रूपम् ॥
जित-पञ्चेषुत्वदिन्दीश्वरनेनिसियुमुद्यत्सुधाकान्तनत्यू- ।
र्ज्जित-तेजो-लक्ष्मियिं तीव्रकरनेनिसियुं दृश्यरूपं कळा-स- ।
भृत-भास्वद्-वृत्तदिन्दं विधुवेनिसियुमात्मीय-नित्योदयोत्सा-
रित-दोषाशेषनिन्तावनोळमसदृशं धीरविष्णु-क्षितीशम् ॥
अरिसेनाचक्रचक्रं पोरळे रिपुकुभृत्-पुङ्गव-भ्रान्ति वत्तोप्- ।
पिरे तन्नुग्रासियिन्दुच्चळिसि धरेगुरुळ्तप्प विद्विट्-सिरङ्गळ् ।
तरदिं कुम्भङ्गळं पोल्तेसेये नव-घटी-यन्त्रदि विष्णु युद्धा-
जिर-वापी-वैरि-रक्ताम्बुवने निज-यशो-वल्लिगेतुत्त्वविप्पम् ॥
मगु-मगुर्दु पोक्कु दुर्ग्गम- । नगळगळ्दा-वार्धि-वरेगवड्डं तिगटं ।
तगु-तगुळ्दु कोन्दनोवदे । जग-विरुदरनटसि विष्णुवर्द्धन-देवं ॥
हिमदिं सेतुवरं मत्- । ते मगुळ्दा-सेतुविं हिम-बरेगं वि- ।
क्रम-केळियिं तोळल्वं । स-मद-क्षत्रियरनिरिसि विष्णुनृपाळम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्चमहाशब्द- महामण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुरवराधीश्वरं** यादवकुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि । मलेयचक्रवर्त्ति । वर्म्मज-मूर्त्ति श्रीमत्काञ्चीगोण्ड विक्रम-गग **विष्णुवर्द्धन-होय्सळ-देवं** गङ्गवाडि-तोम्भत्तरु-सासिरमुमनेक-छत्रछायेयिं प्रतिपाळिसि सुखं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि । धरामर-कुलतिलकं । जिनेन्द्रपूजाविधान-पात्रदान-प्रवर्द्धित-प्रमोद-पुळकम् । **श्रीमदजितसेन-भट्टारक**-पदाम्भोज-चञ्चरीकं । परमतत्त्वप्रागल्भ्यप्रबळ-विवेकं श्रीमन्महाप्रभु-**पेर्म्माडि**यन्वय-प्रभावं एन्तेन्दडे ॥

नियत-स्याद्वादविद्याविभवभवनमागिर्प्पं निद्धूत-दोष- ।
त्रयमप्युद्यत्तपोलक्ष्मिगे सले नेलेपागिर्प्पं रूढाकलङ्का- ।
न्वयदोळ् भव्याळिगेल्लं मोदलेनिसि करं पेम्पुवेत्तत्तु पेम्मी- ।
डिय वंशं लोकवं कीर्त्तियोळु बेळगितसुज्ज्वळाचार-सारं ॥

अक्कर ॥ नय-विनयमननुकरिसुवननु- ।
नयदिं तेजोधिकननेने नेगट्टं पेम्मीडिय पेम्मंगने श्री- ।
मय्यनातन चित्त-प्रिये देवलब्बे पति-भ- ।
क्तियोळा-सीतेगमरुन्धतिगमेणेयेनिपळ् ॥
अवर्गे मगं समस्त-गुण-रत्न-सुधाम्बुधि मसणि-सेट्टि भू-
भुवन-विनूतनातननुजं नेगर्द प्रभु मारि-सेट्टि वान्- ।
धव-जन-सर्व्व-भव्य-जन-कल्प-महीरुहना-महात्मनी- ।
तवद-विभूतियं पडेदुदर्हतेयं घरेयोळ् निरन्तरम् ॥
दोरसमुद्रद नडुविडु । मेरु-महीधरमेनल्के माडिसिदं श्री- ।
भारमनुत्तुङ्ग-जिना- । गारमनिंदु विश्वकर्म्मं-निर्म्मितमेनिसल् ॥
आ-विभुविनणुग-दम्मं । गोविन्दं मन्दरात्तनीधर-धैर्य्यम् ।
श्री-वनिता-वल्लभना- । गोविन्दनवोल् महीमन प्रियनादम् ॥
वसुधेगे कौस्तुभमेनली- । बसदियनी-मुगुळियल्लि सद्भक्तियिनेत्- ।
तिसिदनेने मत्ते गोविन्द-सेट्टिय पोगलादप्परे बुध-निधियं ॥
भू-विदितने भीमय्य म-हा-विभवे पुत्रि नागियक्कनुभिवरी- ।
गोविन्दन जिन-गृहकति- । पावन-चरितर् निरन्तरं पडि सलिपर् ॥

अवरग्र-तनूभव-नय-शीलनप्रतिम-धर्म्म-सहा (नि) यक्कनरातिपूज्य-दुर्ज्जयनखिलेष्ट-शिष्ट-वन-रक्षण-दक्षनु··· ··सरं नेगळुद महा-प्रभु बेडदे पुण्डा-बिट्टि-सेट्टिय गुण·· ···मं पोग [ळ] ला-चतुरास्यनु··· ··· ··· ··युतं मायोपायक्के पेसवतिधन्यं स्वस्ति य··· ·· ···सलेनल् नाकि-सेट्टिय··· ··· ··· ···सरा-पेम्पुम निमिर्न्चि गोत्र-पवित्रनाद गोविन्द ·· ··· ··· ··समन्तभद्रस्वामिगळ ··· ··· ·· ··· वाचार्य्यरिं कनकसेन-वादिराज-देवरिं वज्रपाळ भट्टारकरिं

श्री··· ··कसेन भट्टारकरिं मलधारि स्वामि ·· ·· · त्रैविद्य-देवरिं श्री-वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरिं · ··देवरिं वन्द द्रमिळ ·· ··· ··विलयमो पट्-तर्कविळ-बहु-भङ्गी-संगत-श्रीपाळ-त्रैविद्य-गद्य-पद्य - वाचो-विन्यास - निसर्गो-विजय-विलासम् ॥

सच्चरित्र-पवि ·· ···विद्या-सशुद्ध-बुद्धये ।
विद्वज्जन-प्रपूज्याय वासुपूज्याय ते नमः ॥

इन्तु नेगल्तेवेत्त तम्म गुरु-कुलद पेम्पं नेगळि गोविन्द-सेट्टि माडिसिदनिन्ती-जिनालयम् ॥

मनु-चरितर् समस्त-भुवन-सावनीय-जिनेन्द्र-धर्म्म-वा-।
रिनिधि-सरोजिनी-प्रभव-राग-विवर्द्धन्य-राजहंसरण् ।
णनुमनुजन्मनुं गुण-युतगुणवजन-पारिजात रा- ।
मनिम्मडियागियुं भरतराज-चमूपनुमेम्बुदी-जगम् ॥
भारतदोळ् कानीनु- । दारतेयोळ् धर्म्म-नन्दनं सत्यदोळा- ।
चारदोळ् सिन्धु-नन्दन । ··· दडे भरत-राज-दण्डाधीशम् ॥

ई- गोविन्द-जिनालयक्के प्रभव-सवत्सरदुत्तरायण-संक्रान्ति व्यतीपातदन्दु ··· रदलि... आगि श्री-नारसिंह-होय्सळ देवं श्रीपाळ त्रैविद्य-देवर शिष्य-रप्प वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर कालं कर्च्चि धारापूर्व्वक श्रीमदग्रहारं मुगुळि-यलि बिट्ट वृत्तिय सीमा-सम्बन्धि हिरियकेरेय केळगे गद्दे (आगेकी चार पक्तियों में दान का विशेष वर्णन है) आ-बेद्दलेयोळगागि देवर सोडरिंगे गाणदलर-वाने ण्णेयूरोळगाव बण्डमारे वडहं गोण्डु विशद वण-सिद्दायवित्तुवल्लि··· एेट्टु-पणवं महाजनं कोडुवरिन्तिनितुवं मूर्वत्तिर्व्वर्म्महा जनगळुं धारापूर्व्वकं माडि कोट्टरु (आगेकी चार पक्तियों में कुछ परिचित वाक्यावयव तथा श्लोक हैं) ई-धर्म्म-वनळिदतेळें [तं] य नरक पुगुवं केरेय म ··· ··· डिमेयं ता-कहिसिद केरेयल्लि कण्डुगगद्देयं देवरिंगे बिट्टनु ॥ अशेष-महाजनङ्गळु मत्तद-केरेयल्लि कण्डुग गद्देयं बिट्टरु । कळ्दनु म-रूळ भट्ट ·· ··· ··· ···

[जिन-शासन की प्रशंसा । यह एल्कोटि-जिनालय है । राजा विष्णुकी प्रशंसा;

जिसने हिमालयसे लगाकर सेतु तक और सेतुसे लगाकर हिमालय तक तमाम शत्रु राजाओं को नष्ट कर दिया।

जिस समय द्वारावतीपुरवराधीश्वर, मलेय-चक्रवर्ती विष्णुवर्द्धन होय्सल देव शान्ति से अपने राज्य का शासन कर रहे थे —

उनके चरण-कमलसे आजीविका करनेवाला, (अन्य-अन्य विशेषणों के साथ) अजितसेन भट्टारक का शिष्य महाप्रभु पेर्म्माडि हुआ। उसकी सन्तति निम्न-लिखित थी —

(अनेक प्रशंसाओं के बाद) पेर्म्माडि का ज्येष्ठ पुत्र भीमय्य था, उसकी पत्नी का नाम देवलब्बे था। उनके पुत्र मसणि-सेट्टि और मारि-सेट्टि थे। दोरसमुद्र के मध्यमें मारमने एक बहुत ऊँचा जिनालय बनवाया। उसका पुत्र गोविन्द था। उसने मुगुली में एक बसदि बनवायी, जिसके लिए भीमय्य और उसकी पुत्री नागियक्कने पूजा का सामान दिया। उसके दो पुत्र थे,—बिट्टि-सेट्टि और नाकि-सेट्टि।

उसके गुरु वासुपूज्य की परम्परा समन्तभद्र स्वामी से लेकर कनकसेन, वादि-राज, धनपाल,······कसेन, कलधारि,······वासुपूज्य,······और श्रीपाल से होकर आई थी। उनके पैरों का प्रक्षालन करके मुगुलि अग्रहार में नारसिंह-होय्सल देव ने गोविन्द जिनालय के लिये उक्त भूमिका दान दिया।]

[Ec, V, Hassn U., no 130.]

३२८

बस्ति;—कन्नड़-भग्न।

[वर्ष प्रभव या पार्थिव (?)]

[बस्ति (चिक्कुरळी प्रदेश) में, जिन्नेदेवर बस्तिके सामने के मानस्तम्भ पर]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वर त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-गोण्ड कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गनाडि-नोणम्बवाडि-बनवासि-हानुङ्गलु-गोण्ड भुज-बल वीर-गङ्ग प्रताप-चक्रवर्त्ति·· श्री-

मद्राजधानी-दोरसमुद्रदल्लु सुखसङ्कथाविनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे ॥ श्रीमन्महा-प्रधानं हेग्गडे शिव-राज··नम्बिह्रडे सोमय्यनु श्रीमतु-माणिकद् ·········· जिनालयक्के पार्थिवसंवत्सरद आषाढ़-सुद्ध-पाडिमि-आदिवार ··· ··· अतितिथिय-राहार-दानक माणिक्यदोळल माडि··· ··· ···चतुस्सीमेयलि गेदे गाचु कम्बळ माळ गाळ नूळु ··· ·· तोरे-मग होले-मग यिनितुमं धारा-पूर्वक-माडि कोट्टदत्ति

वसडिगे विट्टी-धर्मं··· । ··· करं सलिसुतिद्दवर्गं पुण्यं ।
······ अळिद्वर्गं । पसुवुं ब्राह्मणन कोन्द गति समनिसुगुम् ॥

श्रीमतु माणिक्यदोळल मूलस्य चन्द्कक्कोजन सुपुत्रं परवादि-मल्लोजं······ शासनमं ··· ··· वाळिसुवदु ॥ वीतराग नमोऽस्तु मङ्गलमहा श्री

[जिससमय, (अपने वैदिक पदों सहित), प्रताप-चक्रवर्ती (१ नरसिंह-देव) अपने राज्यका सुख और बुद्धिमत्तासे शासन करते हुए राजधानी दोरसमुद्र में विद्यमान थे.—महाप्रधान हेग्गडे शिवराज ··· ··· सोमय्य ने माणिक्य-दोळलु जिनालयको दान दिया।

चण्डकक्कोज, जो माणिक्यदोळलुका मुख्य आदमी था, के पुत्र परवादि मल्लोज इस शासनकी रक्षा करेगा। वीतराग को नमस्कार।]

[Ec, IV Krishnarajapet Tl, no 36]

३२६

खजुराहो-संस्कृत

(विक्रम सं० १२०५, माघ वदी ५)

ॐ ॥ ग्रहपत्यन्वये श्रेष्ठिपाणिधरस्तस्य सुत श्रेष्ठि ति-(त्रि) विक्रम तथा आल्हण । लक्ष्मीधर ॥ संवत् १२०५ । माघ वदि ५ ॥

[यह लेख भी २ इञ्च लम्बी १ ही पंक्ति में है। इसके अक्षरोंका आकार करीब ½ इञ्चका है इसमें श्रेष्ठी (सेठ)-पाणिधरके पुत्रोंका नाम दिया है। उनके नाम हैं—त्रिविक्रम, आल्हण और लक्ष्मीधर।]

El, I, no XIX no7 (P.153)

३३०

खजुराहो—संस्कृत

जैन मन्दिरोंकी प्रतिमाओं परसे तीन शिलालेख

[बिना काल निर्देश का]

१ [ग्र] हपत्यन्वये श्रेष्ठि श्रीपाणिधर [॥]

[यह अधूरा शिलालेख एक ही पक्तिमें है, जो कि ५½ इञ्च लम्बी है। लगभग ½ इञ्च अक्षरोंका आकार है। ग्रहपति—अन्वय। जैसे इस शिलालेखमें है वैसे ही वह आगेके दो शिलालेखोंमें भी आया है।

[EI, I. P. 152.]

३३१

खजुराहो—संस्कृत

[संवत् १२०५=११४८ ई०]

[इस शिलालेख के लेखक का पता नहीं है। इतना ही मालूम है कि यह संवत् १२०५ का है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 68, o, a.]

३३२

चित्तौड़ (राजपूताना);-संस्कृत-भग्न ।

[सं० १२०७ = ११५० ई०]

पं० १. ओं ॥ नम मर्व्वं [शा] य ॥ नमो…[म] प्तार्च्चिदंग्व (ग्ध) संकल्प-
जन्मने । शर्व्वाय परमज्योति [र्द्ध] स्तसकल्पजन्मने ॥ जयतात्स मृड-
श्रीमान् मृडा…[1]

२. दनाम्बु (म्बु) जे । यस्य कण्ठच्छ्वी रेजे से (शे) वालस्येव वल्लरी । यदीय-
शिखरस्थितोल्लसदनल्पदिव्यध्वज समण्डपमहो नृणामपि वि[दू]-

३. रतः पश्यता अनेकभवसंचितं त्वयमियर्त्ति पाप द्रुतं स पातु पदपंकजानतहरिः
समिद्धेश्वरः ॥ यत्रोल्लमत्यद्भुतकारिवाच स्फुर [न्ति चि]-

४. त्ते विदुपा सदा तत् । सारस्वतं ज्योतिरनन्तमन्तर्विस्फूर्ज्जता मे चतजाड्य-
वृत्ति । जयन्त्यजश्र (स्र) पीयूषविन्दुनिष्यन्दिनोमला । कवीना [सम]

५. कीर्त्ती (र्त्ती) ना वाग्विलासा महोदया ॥ न वैरस्य स्थितिः श्रीमान् न
जलानां समाश्रयः । रत्नराशिरपूर्व्वोस्ति चौलुक्यानामिहान्वयः ॥ तत्रो-

६. दपद्यत श्रीमान्सद्वृत्तस्तेजसा निधिः । मूलराजा (ज) महोनाथो मुक्ता-
मणिरिवोज्ज (ज्ज्व) लः ॥ वितन्वति भृशं यत्र चेम (म) सर्व्वत्र सर्व्वथा ।
प्रजा राजन्वती नून (नं) ज-

७. ज्ञेसौ चिरकालत. । तस्यान्वये महति भूपतिषु क्रमेण यातेषु भूरिषु सुपर्व्व-
पतेर्न्निवासं । प्रोर्णु त्य वीध्रयशसा ककुमा मुखानि श्रीसिद्धरा-

८. जनृपति प्रथितो व (ब) भूव ॥ जयश्रिया समाश्लिष्टं यं विलोक्य समंतत ।
भ्रात्वा जगाति यत्कीर्त्तिव (र्व) गा [हि] मरमंदिरम् ॥ तस्मिन्नमरसाम्रा-

९. जां (ज्य) संप्राप्ते नियतेर्व्वसात्[2] कुमारपालदेवोभूत्प्रतापाक्रातशात्रवः ॥
स्वतेजसा प्रसह्येन न पर येन शात्रव । पद भूभृच्छिरस्सूच्चैः कारि-

---

1. छूटे हुए अक्षर 'नीव' हैं ।
2. 'तेर्व्वशात्' पढ़ो ।

१०. तो वं (वं) धुरप्यलं ॥ आज्ञा यस्य महीनाथैश्चतुरम्बु (म्बु) धिमध्यगै। ध्रियते मूर्द्धभिर्न्नम्रे (म्रै) र्देवशेषेव सन्ततम् ॥ महीभृन्निकु (कु) ञ्जेषु शाकंभरी–

११. श ·प्रियापुत्रलोंके न शाकंभरीशः। अपि प्राप्तशत्रुर्भयात्कंप्रभूत. स्थितौ यस्य मत्तेभवाजिप्रभूतः ॥ सपादलक्षमामर्द्य नर्म्माकु–

१२. तमयानकः। [स्व] य [म] यान्महीनाथो ग्रामे शालिपुराभिधे ॥ सन्निवेश्य सि (शि) विरं पृथु तत्र त्रासितासहनभूपतिचक्रम्। चित्रकू–

१३. टगिरिपु [ष्क] लशोभा द्रष्टुमार नृपतिः क्रतुकेन ॥ यदुच्चसुरसद्माग्रोपरि-ष्टात्प्रपतन्सदा। रथं नयत्यतं मदं मदं भंगभयाद्रवि ॥ य–

१४. त्सौधशिखरारूढकामिनीमुखसन्निधौ। वर्त्तमानो निशानाथो लक्ष्यते लक्ष्म-लेखया ॥ प्रफुल्त (ल्ल) राजीवमनोहराननाः विवृत्तपाठीनविलोललोच–

१५. —।[1] ‿—त्त [भङ्गावलिरोमराजयो रथागवक्षोरुहमण्डलश्रियः ॥ परिभ्रम-त्सारसहंसनिस्वना सविभ्रमा हारिमृणालवा (बा) हुका । वृ (वृ)-हन्नितंवा (बा) मलवारि—

१६. —‿—[2] मुदे सता यत्र सदा सरोङ्गनाः ॥ स (सु) रभिकुसुमगंधाकृष्ट-मत्तालिमालाविहितमधुररावो यत्र चाधित्यकाया। स्खलिततरणिभानुः सल्ल—

१७. — —‿— —‿‿ मथिषति शश्वत्कामिनः कामिनीभि ॥ शुभे यद्वने शाखिशाखातराले प्रिया क्रीडया सन्निलीना निकाम। वने [प]—

१८. ‿— —‿— —‿—[णा] [न] नूगंवसक्तालयः सूव (च) यन्ति ॥ प्राप कदापि न या हृदये शं सानुनयं समया हृदयेशं। यद्वनमेत्य सु [सं ?]—

---

१. यहांके त्रुटित अक्षर संभवतः 'नाः । प्रम' हैं।

२. यहांके त्रुटित अक्षर संभवतः 'राशयो' हैं।

१९. ‿ ‿— — — ‿ ‿— ‿ ‿—[र] तरागं ॥ एवमादिगुणे दुर्ग्गे स्वर्गे वा भुवि [स] स्थिते । राजा विष्णु. परप्रीत्या संचरन्निजलील—
२०. या ॥ ति........ [ता ?] श्चर्यसंकुलम् । ददर्शागाधगंभीरस्वच्छं स्वमिव मानसम् ॥ निर्म्मलं सलिलं यत्र पि—
२१. हितं प [द्मि]— ‿— । .. . जे नीलाब्ज (ब्ज) राग [भू] श्रियम् ॥ विमुच्य व्योम पातालरसा यत्र त्रिमार्गगा । लोका—
२२. न् पु [नाति]... ..... ‿— ‿— ॥ [त] स्योत्तरतटेऽ द्राक्षीन्न-म्रामरसमर्चितं । श्रीसमिद्धेश्वरं देवं प्रसिद्धं—
२३. जगती ‿— ॥... ...... ‿— ‿ ते । त्रैसंध्य [तु] यंनादेन कलि (लिं) निर्मत्संयन्निव ॥ य [स्त ?] वस्याधिपत्येस्थान्पुरा भ—
२४. ट्टारिकोत्त [मा ।] .. [वी] नृपाभ्य [र्च्यो ?].. ‿— ‿— ॥ तस्याः शिष्याभवत्साध्वी सुव्रतवात भूषिता । गौरदेवीति वि [ख्या]... [ता ?] कृतोद्यमा ॥ सु [मनो ?]—
२५. ससेव्या [मा ?]...श्वविनाशिनी । दुर्गा हि........ ‿— ‿[ता] ॥ यत्तप पावन वीक्ष्य पवित्रीकृतसज्जनं । सस्मरु पूर्व्वयमि... ‿— ‿— ॥ शिवं प्रपूज्य त [त्प]—
२६. .. [म] रामत्प्रभुः । प्रणम्य [तावुभौ ?] भक्त्या सि (शि) रसा ‿— ‿— ॥...[तस्मा] तः पूजार्थं हरपादयोः । कुमारपाल-देवोदाद्ग्रामं श्री ‿— ‿— ॥.. ...स्या—
२७ टा दक्षिणपूर्व्वोत्तरपश्चिमत सरःपाली भूणादित्य...राज...दीपार्थं घाण-कमेक सज्जनोप्यदात् दंडनाथ.. .. मेतद्दानम—
२८. श्री ज [य] कीर्ति शिष्येण दिगंव (ब) रगणेशिना । प्रशस्तिरीदृशी चक्रे...श्वरामकीर्तिना ॥ संवत् १२०७ सूत्रधा......[1]

1. इस पंक्तिके नीचे भी कुछ अक्षर खोदे गये थे; लेकिन प्रतिलिपिमें वे बिलकुल पढ़ने योग्य नहीं हैं।

[(२८ वीं पंक्ति में) लेखका काल सं० १२०७ दिया हुआ है, जो, विक्रम संवत् मान लेनेसे, ११४९-५० या ११५०-५१ ई० ठहरता है; और इसका उद्देश्य चालुक्य राजा कुमारपालकी चित्रकूट पर्वत, आधुनिक 'चित्तौडगढ़', की यात्रा, तथा वहाँ उसके द्वारा उस समय पर्वत पर 'समिद्धेश्वर [शिव]' देवके मन्दिरके लिये किये गये कुछ दानोंका उल्लेख करना है।

"ॐ नमः सर्व्वज्ञाय" इन शब्दों के बाद, लेखमे पाँच श्लोक हैं। इनमेंसे शर्व, मृड, और समिद्धेश्वरके नामसे शिव परमात्माकी स्तुति करते हैं, जबकि अन्य दो सरस्वतीकी सहायताकी कामना, तथा कवियोंकी रचनाओंकी यशोगाथा गाते हैं। [पं० ५ में] लेखक चालुक्योंके वंशकी प्रशंसा करता है। उस अन्वय [वंश] मे मूलराज राजा उत्पन्न हुआ था [पं० ६], और उसके तथा उसके बादके अन्य राजाओंके स्वर्गारोहणके बाद राजा सिद्धराज आये [पं० ७], जिनके उत्तराधिकारी कुमारपाल देव हुए [पं० ८]। जब इस राजाने शाकम्भरी (वर्तमान साँभर) के राजाको हरा दिया [पं० १०] और सपादलक्ष देशको मर्दन कर दिया [पं० ११], वह शालिपुर नामके स्थानमें गया (पं० १२), और वहाँ अपनी छावनी (Camp) डालकर वह चित्रकूट [चित्तौड़गढ] पर्वतकी सुन्दरताको देखने आया; वहाके मन्दिरों, राज-प्रासादों, झीलों या तालाबों, ढाल और जगलोंका वर्णन १३-१९ की पंक्तियोमें है। कुमारपालने वहाँ जो कुछ देखा उससे उसका चित्त प्रसन्न हुआ, और उत्तर दिशाकी तरफ ढालपर बने हुए 'समिद्धेश्वर' देवके मन्दिरमें आकर [पं० २२] उसने शिव ईश्वर और उसकी पत्नीकी पूजाकी, और मन्दिरके लिये एक गाँव दानमें दिया जिसका नाम सुरक्षित न रह सका [पं० २६]। पं० २७ में अन्य दान [एक 'घाणक' या कोल्हू दिये चलानेके लिये, आदि] बनाये गये हैं; और पंक्ति २८ बताती है कि जयकीर्तिके शिष्य रामकीर्तिने जो दिगम्बर सम्प्रदाय के मुख्य थे, यह 'प्रशस्ति' लिखी है, और लेखके उपर्युक्त कालका निर्देश करती है।]

[EI, II, no xxxiii, Tl-421-424]

२३३

कैदाल;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १०७२–११५० ई०]

[कैदाळ (गूलूरु परगना) में, प्रसन्न-गङ्गाधर मन्दिर में पाषाणों पर]

(पहला पाषाण) ।

जयन्ति यस्यावदतोऽपि भारती-विभूतयस्तीर्थकृतोऽपि••।
शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे जिनाय तस्मै सकळात्मने नमः ॥
दिनकृत्-तेजक्के तेजं समनेसवदटुद्वृत्त-कण्ठीरवक्रान्त् ।
एनसु मादश्यवार्पन्तमर-कुजके मापण्डलं नोळपडन्ता- ।
घन-त्राहाटोप-भीमार्ज्जुन-नृग-नल-भूपालरोळ् णाटियेन्दी- ।
जनमेल्ल कीर्त्तिसल् धात्रिगे पतियेसेद **नारसिंघ-क्षितीशम्** ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वर **द्वारावती पुर**-वराधीश्वर यदु-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूड़ामणि श्रीमत्-**त्रिभुवन-मल्ल तळकाडु कोङ्गु-नङ्गलि गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-बनवसे हानुङ्गलु-हलसिगे - बेळवाल**-वुच्चङ्गि-गोण्ड भुजबळ-वीर-गङ्ग विष्णुवर्द्धन-श्री-**नारसिंघ-देवरु** दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळनं माडि **दोरसमुद्रद** नेलवीडिनोळु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेयुत्तमिरे तत्पाद-पद्मोपजीवि ॥ स्वस्ति समधिगत-मञ्च महा-शब्द महा-सामन्तं वीर-लक्ष्मी-कान्तं नाल्वत-नाल्वर गण्ड **मान्यखेड-पुर**-वराधीश्वरं चतुर्मुख दायिग-गोन्दळं बडिवं तोडर्दर डोङ्किपदळरादित्यं **मरुगरे-नाडाळवं** सामन्त-**गूळि-बाचिगे** ।

जिन-पति कूर्तु बेळ्य सुख-सम्पदमं हरनोल्दु कीर्त्तियम् ।
कनक-सरोद्भव वर-चिरायुवमिम्बिनलि ईगळच्युतम् ।
मनमोसेदोप्पुतिपं सिरियं वर-बुध जयाभिवृद्धियम् ।
मनसिज-रूप-बाचि निनगीगे शशाङ्क-कुळाद्रियुल्लिनम् ॥

सिंगद सौर्य्यंवङ्कजन रूपु मुरारिय शक्तियागडुम् ।
पिङ्गदे कर्ण्णनीव-गुणविन्द्रन लीलो भुजङ्ग-राजनोळ् ।
सङ्गळिसिदं पेर्मे सुरशैलद विण्पुवोपल्दु निन्दवी- ।
गङ्गन पुत्रनोळ् सुभट-वाचियोळूर्जित-सव्यसाचियोळ् ॥
धरेपोळ् चागद पेम्पिनिं रवि-सुतं संग्राममदोळ् रामनिं ।
पिरियं सौचदोळञ्जना-तनयनोळ् सादृश्यवे······ ।
निरुतं निर्म्मळ-धर्म्म-सूनुवेळे योळ् तानाद नाल्क्त-ना- ।
ल्वर-गण्डङ्गिदिराम्य गण्डरोळरे विश्वम्भरा-भागदोळ् ॥
अदळ-कुळ-कमळ-हंसन- ।
नदळान्वय-राज्य-भवन-मणि-तोरणन- ।
प्पदळर रामं बाग्रिय ।
विदिताम्नायमनलम्पिनिम् प्रकटिसुवे ॥
श्री-रमणी-प्रियं जगदोळूर्ज्जित-तेजनपार-पौरुषम् ।
वीर-रस-प्रियं जसके नङ्गनुदारनदेन्तु नोळ्पडम् ।
धारिणियल्लि ताने सुभटाग्रणि एम्बिनमोप्पिगोण्डदम् ।
वारिज-नाभनन्तदळ-वंश-कुळाम्बर-भानु बासयम् ॥
बासणिसि जगमणोळिपम् । भासुरतरमेनिप कीर्ति-दुकुलदिनात ।
सासिर्म्मडि भीमङ्गेने । बासेयनन्तेसेदनावनुर्व्वी-तलदोळ् ॥
आतङ्गे तनयनादं । भूतलदोळ् राम भीमनिन्दर्जुननिम् ।
मातेनो सुभटनधिक-वि- । नूत ता नेगर्दनेळगो गङ्गद-गङ्ग ।
ओवदिदिरान्त वैरियन् ।
आवगवान्तिरिदु गेल्दु जयदुन्नतियिम् ।
रावणनिं मिगिलेनिपम् ।
केवळमे जसदिनेसेद गङ्गद-गङ्ग ॥
अन्तेनिसि नेगर्द गङ्गन ।
सन्तति कलि-युग-धनञ्जयं कुल-तिलकम् ।

चिन्तामणि तानेनिपम् ।
भ्रान्तिल्लदे बेळ्प बनके नायक-बसव ॥
तत्-तनेयनान्त वैरिथ ।
नेत्तरना-भूत-कोटिगेष्दुत्सवदिम् ।
शुत्तनुमनिळिसिदं जयद् ।
उत्तरदिं सुत्ति हरिव गङ्गं घरेयोळ् ॥
मत्त-गज-वैरि५निपं । बित्तरदिन्दान्त शत्रुगं रूपिनोळा- ।
चित्त नेळिपं गुण ।
दुत्तरदिं सुत्ति परिव गङ्गं जगदोळ् ॥
अवन मगनधिक-बलनी- ।
भुवनकाश्चर्यवागे तन्नेय सौम्यम् ।
नव-लंश्वर बसवेयन् । अवितथ-वाक्यक्के ताने मोदलेनिसिदं ॥
असदलवेनिसिद कीर्त्ति- । प्रसरतेथं तळेदु खेचरङ्गेणेयादम् ।
वसु…पोगळल्के नायक- । बसवं त्रैलोक्य-वीर मणेयुगे काव ॥
कुलवे सेयल्लु बलवेसेयल्लु । चलवेसेयल् तेजवेसेयल्लुर्व्वी-तळदोळ् ।
कलि-बसवङ्गनुनयदिं । चलवषिवं तनेयनादनुत्सवदिन्दम् ॥
अट्टे कुणिदाडे रणदोळ् । निट्टुर-गति तोहदंरङ्कुशं रण-धीरम् ।
क ˙ ळहितरिगे भयं । बुदल् चलवषिवनिषिवनान्तरि-बलवम् ॥
. सामन्तं चलवषिवङ्गा-मद-करि-गमन तनेयनादं मुददिम् ।
भीम-भुज…अदळर । रामं श्री-गङ्गनमळ-लक्ष्मी-सङ्गम् ॥
भीमङ्गेणे भुज-बळदिं । रामङ्गेणे शौर्यदेळगेपिं रुपिनोळा- ।
कामङ्गेणेयेनलोप्पि ˙ । ई-महियोळ् गङ्गनमळ-लक्ष्मी-सङ्गं ॥
आतन पराक्रममदेन्तेन्दोडे ।
अदटप्पुंण्डरि-नायकप्पुंलबरन्दोन्दागि ‥ ।
मददिं निन्दोडवन्दिरं जवनवोळ् सामन्त-काळानलम् ।
मिदुळं नेत्तर घारे सूसे मडळादंय्यय्य जीयेम्बिनम् । .

कदनोद्योगदे गङ्गन••गेल्दनान्ताराति-सन्दोहमम् ॥
येडरिदरातियेम्ब्वन वंशमनुग्र-कुठारदिन्दवम् ।
कडिदु विरोधि-पर्व्वतमनागडे तन्न भुजा••वज्रदिम् ।
किडिसि जयाङ्गना-रमणनूर्जित-गङ्गनिळा-तळाग्रदोळ् ।
तोडर्दर-डोङ्कियार्बिसिदनुन्नतिसँ शशि-सूर्य्यरुळ्ळिनम् ॥
एरेदङ्गा-सुर-धेनुवं मिगुत्तनान्तर्ग्गीवियोळ् रोपदिम् ।
नरनिन्दं घन-शौर्य्यनङ्कमवन रोडाडिपं रूपिनिम् ।
पिरिपाळ् शक्र-विळासदि••भळर ••नोडे नाल्नत्त नाल्- ।
वर गण्ड कलि-गङ्गनार्ग्गवधिक सामन्त-कण्ठीरवम् ॥
आतन सति वेनवाम्बिके । सीतेगरुन्धतिगे रतिगे••• ।
ख्यातिगे गुणदुन्नतिगं । मातेम् ता पिरिपवल्ते धात्री-तळदोळ् ॥
कन्तु-शर-श (स) दश-रूपिं । चिन्तामणि विबुध-जनकव् ••जनकं
भ्रान्तिङ्गदेम्•••••। अमर्दु नेगल्द वेनकाम्बिकेयम् ।

आ—दम्पतिगळ्गे ।

हरिग गोमिनि-कान्तेगं मनसिजं रुद्रङ्गे रुद्राणिगम् ।
परमोत्साहदे षण्मुखं जनि [यि] पन्ती-धीर-गङ्ग••• ।
• लक्ष्मीपतियप्प श्री-वेनविका- मादेविगं पुट्टिदम् ।
हर-पादाम्बुज-बृं (भृं) ग-वाचय•••••• • •• ॥
अदळ-कुळमेम्ब कुलदोळग् । उदयसिदं दिनपनन्ते तेजोनिलयन् ।
कदन-धनञ्जयनहितर । मद-हरण शूर-वचि तोडर्दर डोङ्के ॥
तोडर्दं विरोधिगन्तकनु वेडिदवङ्गे कल्प-भूरुहम् ।
तडेयदे बन्दु कण्ड शरणार्तिगे वज्रद कोटेयेम्बुदी- ।
पोडवि निरन्तरं जसके नल्लननम्बुजनाभनन्ननम् ।
तोडर्दर डोङ्केयं सुभट-वाचियनूर्जित-सव्यसाचियम् ।
अदळ-कुलाम्बर-द्युमणि दायिगरन् • ले गेल्द लीलेयिन्द् ।
ओदविद मान्यखेड-पुरदीशनुदारनपार-पौरुषम् ।

कदन-धनञ्जय··· ··साहस-गङ्गनुर्व्वियोळ् ।
मदनन रूपिनिन्देसेद वाञ्चिये धन्यनदेन्तु नोळ्पडम् ॥
तोडर्दर गण्ड वैरिगळ गण्ड मदान्धर गण्ड वीरदिन्द् ।
एडर्वर गण्ड मेच्चदर गण्ड पिसुण्वर गण्डनेन्दुदम् ।
तोडेयद गण्डनाहवके सोलद गण्डनदेन्तु नोल्पडम् ।
तोडर्दर दोङ्गे वाञ्चि निनगार द्वारे गण्डरिवा-तळाग्रदोळ् ॥
उरदोळ् श्री-वधु कौस्तुभम्बोलेसेव्ळ् वाग्-वाणि·····यिम् ।
परमानन्ददे वक्त्रदाळ् विलक्ष्मं पाल्तिर्य्यळन्तोल्दु तोळ् - ।
वेरगिं वीरर वीर-लाक्ष्म नयदि कूतिक्कुं नाल्वत्त-नाळ् - ।
वर गण्डं कलि-वाचियोळ् सुवगनोळ् सामन्त-सङ्क्रन्दनोळ् ।
हरियं मार्कोळुगुं मयङ्गोळुविनं दिग्-दन्ति-दन्तङ्गळम् ।
पिरिदाश्चर्य्यदे कित्तुं तोक्कूवदटिं दिक्पाळ-सन्दोहमम् ।
करेदिन्तिन्तिा·वेङ्गु तन्न व्ळदि नोळ्पाग नाल्वत्त-नाळ् - ।
वर-गण्ड कळि वाच-देवनाधकं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
धरेयं धीद् ।दनेश-सूनु-सदृशं त्यागक्के शौर्य्यक्के तान् ।
अरविन्दोदरनल्ते पाट निज-रूप···पुष्पायुधम् ।
दोरे तामादरेनल्के शौचदळं ताळिर्द्दं नल्वत्त-नाळ्- ।
वर गण्डं कलि-वाञ्चि-देवनेसेद-सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
भरदिन्दान्त विरोधिय रण-मुख-व्यापारदोळ् तन्न दुर्- ।
द्धर-बाहा-बळदिं पडल्वदिसेयुं भूताळियु काळिगुम् ।
नोरे-नेत्तर-ण्णोणनेम्बिव नोणोयुतन्तेद्र्डि नाळ्वत्त-नाळ्- ।
वर गण्डं कळि-वाचि-देव गेलुगुं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
सुर-भूजावळि पण्तुदेव्दे नयदिं धात्री-तळक्केम्बिनम् ।
निरुतं दान-विनोदि कीर्त्ति-निळयं वैरीभ-पञ्चाननम् ।
स्मर-रूपं करेदीवनागर्वधिकं तानाद नाल्वत्त-नाळ् - ।
वर-गण्डं कल्ल्-वेचि-देवनधिकं सामन्त-सङ्क्रन्दनन् ॥

सामन्तं सुर-धेनुवित्तु तणिपळ् विश्वम्भरा-भागमम् ।
सामन्तं रिपु-सैन्यमं तरियला-प्रत्यक्ष-वीरार्ज्जुनम् ।
सामन्तं शरणेन्दवङ्गे दयेयिं गम्भीर-रत्नाकरम् ।
सामन्तं कलि-बाचियार्गां त्रधिक वैरीभ-पञ्चाननम् ॥
मरुगरे-नाडाळ्वं गुण- । देरेयं सामन्त-बाचियदळर रामम् ।
मरुगरे-नाडोळगे हे- । ररिकेय कच्छाळदल्लि धर्म्मोन्नतियम् ॥
आ—कच्दाळद विळासापदवदेन्तेन्दोडे ।
तुरुगिद् मामरदिं बेळेद् । एरगिद सौगन्धि-शाळियिं पू-गोळदिं ।
केरेयिं देवाळयदिं । नेरे सोगयिस तोक्खु लीलेयिं कच्चालम् ॥
विविधालङ्कृत-देव-सौध-तळदिं वेश्याङ्गना-वाटदिम् ।
कवि-राज-प्रवरर्क्कळिं सुळिव नाना-गेय-चातुर्य्यदिम् ।
नव-देशीय-विळासदिं सुब्रगिनिं कच्छाळमोप्पिप्पुदा- ।
दिविजेन्द्रोन्नत-लोकम नगुवबोल् तन्नुद्ध-सौन्दर्यदिम् ॥
धनदनुमनिळिप परदरि ।
मनुगळनिळिप मुनिगळिं बगेवागळ् ।
मनसिजननिलिप विटरिम् ।
बनितेयरिं नाडे सोगयिकुं कच्छाळम् ॥

(दूसरा पाषाण) ।

अन्तनेक-विळासकावासमुं सकल-लक्ष्मी-निवासमुमेनिसि सोगायिसुव कच्छाळदोळ् ।

कन्द ॥ उद्धरिसि जैन-भवनमन् । उद्धरिसि सि(शि)वालयङ्गळं मुददिन्दन्तु ।
उद्धरिसि विष्णु-गेहमन् । उद्धरिसिदनल्ते बाचि जसदुन्नतियम् ॥
सोगयिप कामधेनु जिन-शासन-वृद्धिगगे कल्प भूरुहम् ।
मृगधर-भूषणागम-तपस्विगे सिध-रस-प्रवाहमेम् ।
नेगेदुदु बुद्ध-कोटिगेने चिन्तिसदीव महांबु-रत्नवा- ।

नगधरनागमशरिगमेन्दोडे वाचियिदेम् कृतार्थनो ॥
धरेगेमेव नाल्कु-समेपद । छिरि कल्यावनिरुह बुध-जनकेम् ।
टोरंवेत्त पेण्डिन्दं । पिरियं धर्मावतार गद्दन पुत्रम् ॥
श्री-लीलायतनक्के ताने नेरेयाय्तेम्बोन्दु संनेब्यदिम् ।
नीलग्रीव-पटाब्ज-भृङ्गनधिकं श्री-वाचि-देवं यश- ।
लोलं वीर-गुणाम्बुराशि मुददि बध्दाळटोळ चेल्विनिम् ।
कैलासक्केणेयागि माडिसिदनी शङ्करेश्वरावासमम् ॥
श्री-नारायण-गृहमं । श्री-नारी-रमणनडळ-वंश-कुलाम्बर- ।
मानुर्वोनसिदं वाचिय- । नूनं माडिसिदनलुते तोदर्दर डोळ्कि ॥
चलवरिचेश्वरमं गुण- । जलधि जय-श्रीगधिप बुध-जनकं तां ।
वलियेनिप वाचि-देवं । कुल नगमं मिगुव पेम्पिनिं माडिसिदम् ॥
श्री-महिमं गुण निळयं । भीम-पराक्रमनु वाचि देवं मुददिम् ।
रामेश्वर-सदनमना- । हेमाद्रिगे मिगिलिदेम्बिन माडळ्सिदम् ॥
भाग्नदोळ्ळादुदीग बुग्गेळविदेम्ब मनोनुरागांधम् ।
धरे पोगळन्तु सन्दळ-वंश-शिखामणि वाचि देव ताम् ।
वर-जिन-मन्दिरजळने माडिसि लोकदोळोल्दु कीर्तिगा- ।
म(भा)रतनो गुत्तनो शिविगो खेचरनो वलि चारुदत्तनो ॥
रामन बाणदिन्दे लवुचादुदु नोप्पंड मत्त वानरर् ।
प्रेमदे पर्व्वत-प्रततियिदमे कट्टिद सिन्धु तब्बनी- ।
भीम-पराक्रम मुददे कट्टिसिदोळ्ळिपन पेर्म्पिनिन्दे ताम् ।
भीम समुद्रवेळिपु [दु] वार्धिय गुण्दिन पण्दनेल्लोयम् ॥
उदधिय गुणगल्त्य-मुनि-पुङ्गवनिन्दमे निन्दुदागियुम् ।
मदनहर-प्रताप रघु-रामन रामन बाण-घातदिन्द् ॥
उरिदुददेवुदेन्दु मुमटाग्रणि वाय पेण्दिनन्ददिन्द् ।
अदळसमुद्रवेळिपुदु तन्न महत्वदिनम्बुराशिय ॥
दिव्वूरं वेप्राळिगे । सर्व्वज्ञ-पदारविन्दनदळर रामम् ।

दोर्-बळ-विमासि बाचम् । सर्व्वाबाधं परिहारवेनिसियै कोट्ट ॥

इन्तु चतुस्-समय-धर्म्मोद्धार-धौरेयं श्रीमन् महा-सामन्त-गूलि-बाचि-देवननेक-देवालय-बसदि-विष्णु-गृहङ्गळं माडिसियुं महा-तटाकङ्गळं कट्टिसियुं स [श] क-वर्षं १०७२ डेनेय प्रमोद-संवत्सरद फाल्गुन-मासदमास्ये-यादित्यवार-सूर्यग्रहण व्यतीपातदन्दु तम्मण्य सामन्त-गंगैयगे परोक्ष-विनेयवागि श्रीगङ्गेश्वर-देव...यन पेसरलु देगुल माडिसि देवर प्रतिष्ठे माडिया-गङ्गेश्वर-देवरङ्ग-भोगक्कमष्ट-विधार्चनेगे-तपोधनराहार-दानक्क देगुलद खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारक्कं हिरिय-केरेय केळगे बिट्ट गर्द्दे सलगे ३ मानियलु बिट्ट गर्द्दे सलगे ३ बेद्दले सलगे १ मन्नवायङ्गे दिव्वूरं परोक्ष-विनेयवागि स-ब्राह्मणरिगे सर्व्वाबाधा-परिहारवागि धारा-पूर्व्वकं माडि भूमि-दानव कोट्टं मत्तं श्री-केशव-देव-रङ्ग भोगकमष्ट-विधार्च्चनेगं ब्राह्मणराहार-दानक देगुलद खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारकं दिव्वूर केरेय केळगे किट्ट गद्दे सलगे १० आगद्देय बळिय तोण्ट बेद्दलेयुद्दं सलु-वुदु मत्तं तम्म मुत्तय्य सामन्तं चलवरिकङ्गे परोक्ष-विनेयवागि कित्तगळियलु चलवरेश्वरमेन्दाय(त)न पेसरलु देगुलव माडिसि आ-चलवरेश्वर-देवरङ्ग-भोगक्कं अष्टविधार्च्चनेगं तपोधनराहार-दानक्क देगुलद खण्ड स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कमा-कित्तगळिय केरेय केळगे बिट्ट गर्द्दे सलगे ३ बेद्दले सलगे १ मत्तं तन्न मगळ कुमारि चेन्नवे-नायकितिगे परोक्ष-विनेयवागि श्री-रामेश्वर देवर देवालयमं माडिसि आ-देवरङ्ग-भोगक्कमष्ट-विधार्च्चनेगं तपोधनराहार दानक्क देगुलद खण्ड-स्फुट जीर्णोद्धारक्कं हिरिय-केरेय केळगेयुम् गर्द्दे सलगे ३ मानियलु गर्द्दे सलगे ३ बेद्दले सलगे १ मत्तं रामेश्वर-देवर नन्दा-दिविगेगे सर्व्व-बाधा-परिहारवागि बिट्ट येत्तु-गाण १ मत्त सामन्त-बाचि-देवन मनस्-सरोवरालंकार राजहंसिनि ॥

कन्द ॥ भूमिगे सरि पेम्पिन्दं । कामाङ्गनेगधिकवेसेव शौचोन्नतियिम् ।

भीमले एन्दतिमुददिन्द् । ई-महि बण्णिपुदु बाचि देवन सतियं ॥

जिन-पतिदेय्य तन्दे कलि योद्देरे-नाकनोल्पनान्त तन्-।

जननि विनूते चिम्बले महासति गूळिय-बाचि-देव सन्-।

घन-नुत वीर तन्न पतियन्दोडे पोल्ववरार् धरित्रियोळ् ।
वनितेय · ···भीमलेयोळूर्जित-पुण्य-गुणाभिगमेयोळ् ॥
रतिगं गोमिनिगं पा-। र्वतिगं मिगिलु सुत्रगिनिं सम्तदर्टिं तान् ।
अतिशय-रूपोन्नतियिं । क्षितियोळे ले वाच्चियरमि भीमले-नारि ॥

इन्तु नेगर्द्द महा-सौभाग्य शील-सौन्दर्य्यं-सम्पन्नेयप्पं परिवार-सुरभि भीमचे-नाय-कितियर्गे परोक्ष-विनेयवागि श्रीमन्महा-सामन्त-वाच्चि-देवं भीम-जिनालयमेन्दु बसदियं माडिसियुं भीमसमुद्रमेन्दु कन्ने-गेरेयं कट्टिसियुमा-केरेय केळगे भीम-जिनालयद श्री-चन्न-पार्श्व-देवरङ्ग-भोगक्कमष्ट-विधानार्च्चनेग ऋषियराहार-दानक्कं बसदिय खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारक्कं कोट्टु बिट्ट गर्द्दे सलगे ८ मत्तमा-भीमसमुद्रद होल-दल्लु बेद्दले सलगे २ मत्तं सम्यक्त्व-चूडामणियेनिसिद सेनबोव-मारमय्यं सामन्त-गूलि-वाच्चिदेवन कैय्यलु भूमिय पडेदु मुदुगेरे-गर्गाळद बागिनोळ् मारसमुद्रमेन्दु कन्ने-गेरेयं कट्टिसि आ-केरेयं भीम-जिनालयद श्री-चन्न-पार्श्व-देवरङ्ग-भोगक्कमष्ट-विधार्च्चनेगं ऋषियराहार-दानक्कं बसदिय खण्ड स्फुट-जीर्णोद्धारक्कं कोट्टु बिट्टरिन्ती-मारसमुद्रमाडियागि समस्त देवालय-विष्णु-गृह-बसदिगे बिट्ट-भूमियं कुरुक्षेत्र वाणरा(रणा)सि-प्रयागे-अर्घ्यंतीर्थमेन्दु प्रतिपालिसुवुदु ॥

मत्त ॥ परमानन्ददे वाच्चि-देवनभयं दिव्यं-लै-गण्डुगम् ।
दोरेवेत्तगद गर्द्दे-बेद्दलयनन्ता-तोण्ट-सद्-गेहमं ।
स्थिर-तेजं कुडलिन्तुदात्त-पडेदं चातुर्य्य-चन्द्रेश्वरम् ।
वर-विद्या-निधि वाच्चि-राजविबुधं चन्द्रार्करुळ्ळन्नेगम् ॥
सुरगिरिमुळ्ळनं जलधिमुळ्ळन तारनगेन्द्रमुळ्ळनम् ।
सुरनदिमुळ्ळन शिरियुमुळ्ळनवगद सूर्य्यरुळ्ळनम् ।
सुर-सभेमुळ्ळनं वरदे भारतियु··· ··तारेमुळ्ळनम् ।
धरे शशिमुळ्ळनं निळ्के गूलिय-वाच्चिय धर्म्म-शासनम् ॥

(वही अन्तिम श्लोक) ।

[जिस समय, द्वारावतीपुरवराधीश्वर, यदुकुलाम्बरद्युमणि, तलकाडु कोङ्गु नङ्गलि गङ्गवाडि नोलम्बवाडि बनवसे हानुङ्गल् हलसिगे बेल्वोळ और उच्चंगि

पर कब्जा करने वाले भुजबल-वीर-गङ्ग विष्णुवर्द्धन नारसिंघ-देव, शान्ति से राज्य करते हुए, दोरसमुद्र के निवासस्थल पर थे —

तत्पादपद्मोपजीवी मान्यरवेडपुरवराधीश्वर, अदल लोगोंके लिये सूर्य, मरुगरे-नाड्का अधिपति सामन्त गूळि-बाचि था। उसकी प्रशंसायें, गङ्ग-पुत्रके रूप में उसका वर्णन। उसका पुत्र गुद्धद गङ्ग था। उसके कुलमें नायक बसव हुआ। उसका पुत्र गङ्ग था, जिसने गुत्तको हराया था। उसका पुत्र बसवेय था। उसका पुत्र चलवरिव था। उसका पुत्र गङ्ग था, जिसकी स्त्री बेनवाम्बिके थी, और उनका पुत्र मान्यरवेड-पुरका अधीश बाचय या बाचि था उसकी विस्तार-पूर्वक प्रशसा।

मरुगरे-नाड्का अधीश, अदल-राम, सामन्त-बाचि मरुगरे-नाड् के कयूदाल (कैदाल) में अतीव उच्च धर्मका पालन कर रहा था। कयूदाळकी शोभा का वर्णन। वहाँ उसने जिन मन्दिर, शिव मन्दिर और विष्णु मन्दिर सभी को सहारा दिया। और वहाँ उसने यह गङ्गेश्वर मन्दिर, एक नारायण मन्दिर, एक चलवरिवेश्वर मन्दिर, एक रामेश्वर मन्दिर, और जिन मन्दिर बनवाये। तथा उसने भीमसमुद्र और अडळ समुद्र नाम के तालाब बनवाये। तथा दिब्बूर ब्राह्मणोंको दिया।

इस प्रकार चार मतोंके धर्मको बढ़ाते हुए, सामन्त गूळि-बाचि-देवने, बहुत-से मन्दिर, बसदि, और विष्णु-मन्दिर, तथा बड़े-बड़े तालाब बनवा कर,—(उक्त मितिको), सूर्य-ग्रहणके समय, अपने पिता सामन्त गङ्गैयकी मृत्युके स्मारकमें, उनके नामसे एक मन्दिर बनवाकर उसमे गङ्गेश्वर-देवको स्थापना की, और मन्दिरकी मरम्मत, पूजा-विधि, तथा मुनियोंके आहारके लिये (उक्त) हिरिय-केरेकी ज़मीन दी।

इस तरह केशव-देव, चलवरिवेश्वर-देव, रामेश्वर-देवके लिये भी भूमियाँ प्रदान कीं। तथा अपनी पत्नी **भीमले**के नामपर,—जिसका देव जिनपति था, पिता याद्धरे-नाक और माता चिम्मले थीं,—भीम जिनालय नामकी बसदि बनु-

बांधी, भीम समुद्र नामका पवित्र (Virgin) तालाब बनवाया और उस तालाबकी सारी जमीन चन्न-पारिस्व देवके लिये प्रदान कर दी।

तथा सेनबोव मारमय्यने, सामन्त गूळि-बाचि-देवसे भूमि प्राप्त करके, मार-समुद्र नामका पवित्र तालाब बनवाकर भीम जिनालयके पार्श्व-देवके नाम कर दिया।

इन विभिन्न दानोंको बाणार(राण)सी, प्रयाग इत्यादि पवित्र तीर्थोंके समान समझा जाय। ये सब दान विद्या-निधि मा (वा) चि-राजके अधीन किये गये थे। शासन हमेशा कायम रहे, इसकी कामना।]

[Ec, XII. Tumkur Tl, No. 9.]

३३४

वामणी;—संस्कृत और कन्नड़।

[शक १०७३—११५० ई०]

१. स्वस्ति ॥ जयत्यमळ-नानार्थ-प्रतिपत्ति-प्रदर्शकम्। अर्हंत पुर [,] दे [व]-
२. स्य शासनं मोह-शासनम् ॥ श्री-शीलहार-वंशे जतिगो नाम [चि]-
३. तीशास्समभवातस्तत्पुत्रौ गोङ्कल गूवलौ। तत्र गोङ्कलस्य स [नु]-
४. र्म्मारसिंहदेवस्तदपत्य गण्डरादित्यदेव तस्य नन्दनः। समधिग-
५. तपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरः। नगर-पुर-
६. वराधीश्वरः। श्री शीलहार-वंश-स (न) रेन्द्र। जीमूतवाहनान्वय-
७. प्रसूतः। सुवर्ण्ण गरुड-ध्वजः। मरुवक्क-सर्पः। अय्यनसिंघ-
८. ग। रिपु-मण्डलिक-भैरव। विद्विष्ट-[ग]ज-कण्ठीरव। इडुवरादित्यः।
९. कलियुग-विक्रमादित्यः। रूप-नारायणः। गिरि-दुर्ग्ग-लंघन। श-
१०. निवार-सिद्धि। श्री-महालक्ष्मी-लब्ध-वरप्रसाद इत्यादि-नामावलि-विराजमान।
११. श्रीमद्-विजयादित्यदेव। वळवाड-स्थिर-शिबिरे सुख-संकथा-वि-
१२. नोदेन विजय-राज्यं कुर्व्वन्। शक-वर्षेषु त्रिसप्तत्युत्तरसह-

१३. स्र-प्रमितेष्वतीतेषु अङ्कतोऽपि १०७२ प्रवर्त्तमान-प्रमोद-संव-[त्स]-
१४. र भाद्रपद-पूर्णमासी-शुक्रवारे सोमग्रहण-पर्व्व-निमित्तं-
१५. णवु [क] गेगोल्लानुगत-मडलूर-ग्रामे सणगमय्य-चं [घ]-
१६. व्वयो पुत्रेण। पुन्नकव्वायाः पत्या जेन्तगावुण्ड-हेम्म-
१७. गावुण्डयोः पित्रा चोघोरे-कामगावुण्डेन कारितायाः।
१८. श्री पार्श्वनाथवसतेर्द्देवानामष्टवि [ध] ार्च्चन-निमित्तं। वसते ख-
१९. ण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारार्त्थं। तत्रस्थित-यतीनामहा-
२०. र-दानार्त्थं च तस्मिन्नेवग्रामे कुण्डिद्देश-दण्डेन निव-
२१. र्त्तन-चतुर्थ-भाग-प्रमित-क्षेत्रम्। तेनैव दण्डेन त्रिं-
२२. शस्तम्भ-प्रमाण पुष्पवाटीं। द्वादशहस्तप्रमाण-
२३. गृह-निवेशन च स राजा निज-मातुल-लक्ष्मण-सामन्त-विज्ञा-
२४. पनेन तस्यैव गोत्रदानार्त्थं श्री-मूलसंघ-देशीयग-
२५. ण-पुस्तकगच्छ-क्षुल्लकपुर-श्री-रूपनारायण-चैत्याल[य]-
२६. स्याचार्य्यः॥ श्री-माघनन्दिसिद्धान्तदेवो विश्व-मही-
२७. स्तुतः। कुलचन्द्रमुनेः शिष्य कुन्दकुन्दान्वया---
२८. शुमान्॥ अपि च॥ रोदो-मण्डलमङ्ग किं स्व-वपुषा
२९. व्याप्नोति शक्रद्विपः किं क्षाराम्बुधिरावृणोति भुवनं गङ्गाम्बु
३०. किं वेष्टते। स्थानाऽय प्रिय-सुस्थिर समरुन्नत् कि सान्द्र-चन्द्रात-
३१. पो यत्कीर्त्यैत्थमनूद्धतक्क्षणमसौ श्री-माघनन्दी जयत्॥त-
३२. न्मुनीन्द्रस्यान्तेवासिना महेनन्दि सिद्धान्तदेवाना पादौ
३३. प्रक्षाल्य धारा-पूर्व्वक सर्व्व-नमस्य सर्व्व-बाधा-परिहारमाच-
३४. न्द्रार्क्कतारं स-शा [स] नं दत्तवान्।@॥ स्वदत्ता परदत्ता वा यो हरेत वसु-
३५. न्धरा। षष्टि वर्षसहस्राणि विष्ठाया जायते कृमि.॥ न विषं विषमि-
३६. त्याहुर्व्वह्मस्वं विषमुच्यते। विषमेकाकिनं हन्ति देवस्व पु-

३७. त्र-यौत्रकम् । अपि च ॥ सक्त्वां कपिलां शस्त्र्या हत्वास्था
३८. मांस-शोणिते । गङ्गाग्नां सोऽस्ति यो गृण्हात्यमुं धर्म्मोन्तरा
३९. नरः ॥ तत्पातकफलेनासौ यावच्चन्द्रदिवाकरं । तावद्घोरतरं दुःख-
४०. मश्नुते नरकावनौ ॥ अन्यच्च ॥@॥ मातुस्साद्रं-कपालेन सोऽस्ति मा-
४१. तम-वेश्मसु [।] श्व-मांसं मित्तया लब्धं गये (?) यो धर्म्मंमूहर. ॥@॥
४२. भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥ सम्पद्यतां प्रतिविधानहेतवे । अन्य-
४३. वादि-मदहस्ति-मस्तक-स्फाटनाय घटने पटीयसे ॥@॥ अक्कसाले वं-
४४. म्मयोजन पुत्र । अभिनन्ददेवर गुड्ड गोम्योजन खडरगे ॥@@@॥

सारांश

[यह शिलालेख एक पत्थर पर उत्कीर्ण है। यह पत्थर बामणी गांवके जैनमन्दिरके दरवाजे पर अवस्थित है। बामणी गाँव कागल शहरसे दक्षिण-पश्चिम ५ मील पर है। कागल कोल्हापुर रियासतका एक मुख्य शहर है।

इस शिलालेखमें शीलहार वंशके महामण्डलेश्वर विजयादित्यदेव के एक दूसरे दानका उल्लेख है। २-१० की पंक्तियोंमें दाताकी वही वंशावली और वर्णन है जो नं० ३२० के कोल्हापुरके शिलालेखमें है, सिर्फ इसमें दूरके अपने ६ सम्बन्धियों (कीर्तिराज, चन्द्रादित्य, गूवल द्वितीय, गङ्गदेव, बल्लालदेव और भोजदेव) तथा नौ अपने कम महत्त्वके विरुदों (पदों) को छोड़ दिया है। पंक्ति ११-२४ में उल्लेख है कि अपने निवासस्थान वळवाड़ में रहकर ही शासन करनेवाले विजयादित्य देव ने अपने मामा सामन्त लक्ष्मणके कहनेसे तथा अपने गोत्रदानके लिये, जब कि प्रमोद वर्ष चालू था, अर्थात् १०७३ शक वर्षके व्यतीत होने पर, भाद्रपद महीनेकी पूर्णिमा तिथिके शुक्रवारको चन्द्रग्रहणके निमित्तसे—एक भूमिका दान किया। यह भूमि कुण्डिके नापसे नापमें चौथाई निवर्तन थी। साथमें तीस खम्भ (खम्भे) प्रमाण पुष्पवाटिका, १२ हाथका एक मकान भी थे। यह सब भूमि वगैर ···णवु [क] गेगोल्ल जिलेके मडलूर गाँवकी थी। इस दानका प्रयोजन यह था कि

इससे चौथौरे कामगाकुण्डके बनवाये हुए उसी गावके मन्दिर की पार्श्वनाथ भगवानकी अष्टविध पूजन होती रहे, जो कुछ मन्दिरके मकानका बिगाड़ हो वह सुधरता रहे तथा वहा रहनेवाले मुनिजनोंके लिये उससे उनके उपहारका प्रबन्ध-होता रहे। यह दान शिलालेख नं० ३२० में वर्णित श्री माघनन्दि सिद्धान्तदेव के ही एक और शिष्य श्री अर्हनन्दि सिद्धान्तदेवके पैरोंका प्रक्षालन करके किया गया था। इस शिलालेखमें, नं० ३२० के कोल्हापुर वाले शिलालेखमें न मिलनेवाली एक नई बात श्री माघनन्दिसिद्धातदेव के विषयमें यह है कि उन्हें यहाँ कुल चन्द्रमुनिका शिष्य तथा 'कुन्दकुन्दके अन्वय का एक सूर्य' बतलाया है। अन्तमें पक्ति ४३-४४ में पुरानी कनड़में यह बताया है कि इस लेखको सुनार बम्योजके पुत्र तथा अभिनन्दनदेवके शिष्य गोळोजने खोदा था।]

[EI, III, No. 28, T. R. A.]

३३५

कोन्नूर,-संस्कृत।

—[बिना काल-निर्देशका, पर १२ वीं शताब्दिका मध्य (कीलहार्न) ।]—

५६. मिथ्याभाव-भवातिदर्प्प-पर-तद्दुश्शासनोच्छेदकम् प्राशाशा-वशवर्त्तमा-

६०. न-जनता-सत्सौख्यसम्पादकम् [।] नानारूप-विशिष्ट-वस्तु-परम-स्याद्वाद-लक्ष्मी-पदम् जेजीयाज्जिन-राजशासनमिदं स्वाचार-सार-प्रदम् ॥ [४४]

६१. सिद्धान्तामृत-वार्द्धि-तारकपतिस्तर्कान्बुजाहर्प्पतिः शब्दो-द्यानघनामृतैक-सरणि-र्य्योगीन्द्र-चूडामणि [।] त्रैविद्याधर-सार्त्थ-

६२. नाम-विभवः प्रोद्भूत-चेतोभवः[1] जीयादन्यमता-वनीभृदशनि श्री-मेघचन्द्रो मुनि ॥ [४५] इदे हंसी-वृंद-मीम्टल्वगेदपुदु

६३. चकोरी-चयम् चञ्चुविन्दं कर्दुकल्साद्दंप्पुदीशं जडेयो-ळिरिसलेन्दिर्द्दपं सेज्जेगेर-ल्पदेदर्प्पं कृष्णनेम्बन्तेसेदु बिस-लसत्-कन्दली-कं-

---

1. 'भवो' पढ़ो।

६४. द-क्रान्तम् पुदिद्त्ती मेघचन्द्र-त्र (त्र) तितिळक-जगद्वर्त्ति-कीर्त्ति-प्रकाशम् ॥ [४६] वैदग्ध्य-श्री-वधूटी-पतिरखिळ-गुणालंकृतिर्म्मेघचं-

६५. द्र-त्रै विद्यस्थात्मजातो मदन-महिभृतो भेदने वज्रपात [।] सैद्धाताव्यू-(व्यू) ह-चूडामणिरनुपळ (म)-चिन्तामणि-

६६. र्भू (र्भू) जनानाम् योऽभूत् सौजन्य-रुन्द्र-श्रियमवति महौ वीरनन्दी मुनीद्रः ॥ [४७] यश्शब्दज्ञ-नभस्थली-दिनमणिः काव्यज्ञ-चूडाम-

६७. णिर्व्यस्तक्र्कस्थिति-कौमुदी-हिमकरस्तूर्य्यंत्रयाब्जाकरः [।] यस्सिद्धान्त-विचार-सार-धिषणो रत्न-त्रयी-भूषणः स्ये-

६८. याद्द्धत-वादि-भूभृद्शनिः श्री-वीरनन्दि-मुनि ॥ [४८] यन्मूर्त्तिर्ज्जगता जनस्य नयने कर्प्पूरपूरायते यद्वृत्तिर्व्विदुषा त-

६९. तेश्श्रवणयोर्म्माणिक्यभूषायते [।] यत्कीर्त्ति ककुभा श्रिय कचभरे मल्लील-तातायते जेजीयाद् भुवि वीरनन्दि-मुनिपस्सै-

७०. द्धात-चक्राधिपः ॥ [४९] * श्री-कोण्डकुन्दान्वयाम्बर-द्युमणि विद्वज्जन-शिरोमणि समस्तानवद्य-विद्याविलासिनी-विलास-मूर्त्ति श्री-वीरनन्दि-सै [द्धा]-

७१. न्तिक-चक्रवर्त्तिळु श्रीमन्-महास्थानं कोळनूर महाप्रभु-हुलियमरसनुं मूरु-पुर-पञ्च-मठ-स्थानङ्गळु ताम्र-शासन [मं]

७२. नोडि वरेयिसिमेनलका शाधनदोळेन्तिद्दुदन्ती शिलाशासनमं बरेयि सि [सु] दरु [॥] मङ्गळ महा-श्री श्री श्री नमो[1] ......[॥]

[इस लेखमें (जो मूल लेख की पं० ५६-७२ तकमें है), जैनधर्म तथा मेघचन्द्र-त्रैविद्य और उनके पुत्र वीरनन्दी इन दो मुनियोंकी प्रशंसाके बाद, बताया गया है कि कोळनूरके 'महाप्रभु' हुलियमरस तथा और लोगों नापर वीरनन्दीने एक ताम्र-शासनको फिरसे यहाँपर शिला-शासनके इस ताम्र-शासनको इन लोगोंने स्वयं उनके पास देखा था

---

१. यहाँपर कुछ अक्षर (कमसे-कम छः) घिस

श्रवण-बेल्गोलके एक शिलालेखसे हम जानते हैं कि माघचन्द्र-त्रैविद्यका स्वर्गारोहण बृहस्पतिवार, २ दिसम्बर १११५ ई० को हुआ था; और श्री पाठकके[1] द्वारा प्रकाशित एक सूचनाके अनुसार, वीरनन्दीने अपने 'आचारसार' ग्रंथकी समाप्ति उस तिथिको की है जिसे एफ कीलहॉर्नने यूरोपियन क्लैण्डर के अनुसार सोमवार, २५ मई ११५३ ई० नियत की है। उपर्युक्त लेखके कथनानुसार इस लेखके पूर्वभाग (पंक्ति १-५६) की जब नकल की गई थी और जब यह शिलालेख उत्कीर्ण किया गया था वह काल, उक्त दोनों मुनियोंके काल निर्णयके प्रकाश में, करीब-करीब १२ वीं शताब्दिका मध्य ठहरता है।

[EI, VI, no 4 (II part; line 59-72).] T L Tr.

३३६

लण्डन (हॉर्निमन म्यूज़ियम) संस्कृत

सं० १२०८ = ११५२ ई०

[जिन मिस्टर हॉर्निमन (Mr Horniman) के म्यूज़ियम में यह मूर्ति-लेख मिला है उसकी मूर्ति उन्होंने म्यूज़ियम के क्यूरेटर (Curator) मि० क्विक (Mr. Quick) के कथनानुसार, सन् १८९५ में लण्डन में ख़रीदी थी :—Rh. D.]

मूर्ति जैनोंके बयालीसवें तीर्थङ्कर नेमिनाथ की है। चरण-पाषाणपर बहुत ही सुरक्षित तीन पंक्तियोंका एक लेख है। लेख नागरी अक्षरों और व्याकरण की अशुद्धियों से भरी हुई संस्कृत में है। लेख और अनुवाद निम्न है, —

---

१. देखो Ind. Art. Vol. XIV. p. 14. श्री पाठकने जो तिथि दी है वह यह है 'शक १०७६, श्रीमुख संवत्सर, सोमवार, द्वितीय ज्येष्ठ सुदी प्रतिपद्।'

लेख

१. ॐ संवत् १२०८ वैशाख वदि ५ गुरौ ॥ मण्डिल पुरात् ग्रहपत्यन्वे (न्वये) श्रेष्ठि-माहुल तस्य सुत श्रेष्ठि-श्री-महीपति भ्रातु जाल्हे महीपति-सुत पापे कूके साल्हू-देदू [आल्हू ?]
२. विवोके सवपते सर्व्वे नित्यं
३. प्रणमंति (मंति) स [ह] ॥॥

अनुवाद :—ॐ ! संवत् १२०८, वैशाख वदी ५, गुरुवारको । मण्डिलपुर (बुन्देलखण्डका एक नगर) से, ग्रहपति वंशके श्रेष्ठी माहुल; उसके पुत्र श्रेष्ठी महीपति; उसके भाई जाल्ह; और महीपतिके पुत्र पापे, कूके, साल्हू, देदू, [आल्हू ?], विवीके और सवपते—ये सब मिलकर नित्य (रोज़) इस प्रतिमा-को वन्दना करते हैं ।

[JRAS, 1898, p 101-102] T. L. Tr.

३३७

महोवा;—संस्कृत ।

[सं० १२११ = ११५४ ई०]

श्रीमान् मदनवर्म्मदेव राज्ये,
सं० १२११, आषाढ सुदि ३, सनौ,
देवश्री नेमिनाथ—रूपाकार लाखण ।

इस शिलालेखमें २ पंक्तियाँ हैं, जिसमेंकी नीचेकी केवल एक पंक्ति ही ऊपरके लेखमें आयी है । मूर्तिके चरण तल पर शंखका चिह्न है, जिससे जाना जाता है कि यह श्री नेमिनाथकी मूर्ति है ।

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 73, T.]

३३८

होलल्केरे;—संस्कृत ।

वर्ष श्रीमुख [११५४ ई० (लू राइस) ।]

[होळल्केरेमें, सेट्टर नागप्पसे प्राप्त एक ताम्र पत्र पर]

श्रीमत्-पञ्च-कल्याण-वैभवाय नमः ॥

श्रीमत्परम-गम्भीर-इत्यादि ॥

स्वस्ति श्री यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-तप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरुमप्प ओ.. ...कडियाण-परिग्रहादित्यरु मध्याह्न-कल्प-वृक्षरुमप्प पारिश्व (पार्श्व) सेन-भट्टारक-स्वामियवरु । होळलकेरेय श्री-शातिनाथ-देवर जीर्णालयमं.. द्धारमं माडिसिदरु ॥ श्री-मूल-सघद् बोद्दण्ण-गौड-मुन्तादवरु माडिसिद धर्म्मवु विघ्नवागिरलु आ-गौडर सत्-पुत्रराद सोमण्ण-गौड शान्तण्ण-गौड आदण्ण-गौडं-मुन्तादवरु । प्रताप-नायकरिगे नूरु-गद्याणवनित्तिक्कि बेडिकोण्डुतु हिरिय-केरेय हिन्दण-तोटमु गद्देयुम बेद्दलमं नम्मवर मनेय-काणिकेयुमं सर्व्व-बाधा-परिहारवागि श्री-अमृत-पडिगे गुरुगळ आहार-दानक्के शक-वर्ष १०७६ नेय श्रीमुख संवत्सरद माघ-शुद्ध १० शुक्रवार विट्ट दत्ति ॥ यिदक्के देवता-महोत्सवद विवर । भाव-नाम-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध-तदिगे-सोम-वार विमान-शुधि (द्धि) वास्तु-विधि नान्दी-मङ्गल ध्वजारोहण भेरी-ताडन अङ्कुरार्प्पण बृहच्छान्तिक मन्त्र-न्यास अङ्ग-न्यास केवल-ज्ञानद महा-होम । महा-स्नपनाभिषेकक्के अग्रोदक-प्रभावने-यन्तु कलश-प्रभावनेयन्तु माडिसि पुण्योपार्ज्जने-यनु माडिसिकोण्डरु । वर्ष प्रति अक्षय-तदि [गे] यल्लि नडेयुव महोत्सव-प्रभा-वनेगे:..अष्टाह्निक-पर्व्वंगळिगे श्रवण-पौर्णमी-वुत्सवक्के भाद्रपद-शुद्ध-चतुर्द्दशि-अनन्त-नोहि-कलश-प्रभावने महा-आराधने-मुन्ताद्दक्के । कार्त्तिक-मासदल्लि कृत्ति-कोत्सवक्के माघ-ब, चतुर्द्दशियल्लु जिनरात्रे-महोत्सवक्के । चतुस्-सीमे-विवर । तोटक्के मूडलु हिरे-केरे । तेङ्कलु हेद्दारि । पडुवलु नेट्ट-कल्लु । बडगलु हुट्टरे । गद्देगळ चतुस्-सीमेगे नाल्कु-दिक्किगु नाल्कु-मुक्कोडे सह नाल्कु-नेट्ट कल्लु । बेद्दलु-भूमिगु

इदे-गुरिवु। सुजनरु यी-धर्म्मव नडेसिकोण्डु बरवडु। (वे ही अन्तिम श्लोक) शासनक्के भद्रं भूयाद् वर्द्धतां जिन शासनम् ॥

[पाँच कल्याण-वैभव जिसके होते हैं उसके लिये नमस्कार।]

जिन शासनकी प्रशंसा।

स्वस्ति। साधुके गुणोंसे युक्त पारिश्वसेन-भट्टारक-स्वामीने होळलकेरेके शान्तिनाथ-देवके ध्वस्त मन्दिरको फिरसे सुधरवाया था। श्री मूलसंघके बोद्दण्ण-गौड और दूसरे लोगोंके द्वारा दिया गया दान जो रुक गया था उसके लिये उस गौडके पुत्रों (जिनके नाम दिये हैं) और अन्य लोगोंने १०० गद्याण सहित प्रताप-नायकको भेंट में देते हुए प्रार्थना-पत्र दिया, तब पारिश्वसेन-भट्टारक-स्वामी-ने हिरिय-केरेके पीछेकी जमीन और लोगोंके घरोंसे मिली हुई भेंटे, सर्वकरोंसे मुक्त करके, देवकी पूजा और गुरुओंके आहार-प्रबन्धके लिये (उक्त दिन) दान-में दे दीं। इसके बाद देवता-महोत्सवकी एक सूची और भूमिकी सीमाएँ आती हैं। वे ही अन्तिम श्लोक।]

[EC, XI, Hōlalere tl., no. 1]

३३६

हेरगू;—संस्कृत तथा कन्नड़।

—[शक १०७७–११५५ ई०]—

[हेरगू (आलूरु परगना), जैन-बस्तिके सामनेके पाषाणपर]

श्रीमत्पवित्रमकलंकमनन्तकल्पं
स्वायम्भुवं सकलमंगलमादि-तीर्त्थम्।
नित्योत्सवं मणिमयं नियतं जनानाम्
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥

श्री-वीतराग ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महामण्डलेश्वरं द्वारावती-पुरवराधीश्वरं यादव वंशोद्भव कोङ्गु-नङ्गलि-गंगवाडि-नोणम्बवाडि- बनवसे-हानुंगल्लु- हलसिगे-गोण्ड भुज-बलवीर-गंग जगदेकमल्ल होय्सळ-वीर-नारसिंह-देवरु श्रीमद्राजधानी-दोरसमुद्रद नेलवीडिनलु दुष्ट-निग्रह शिष्ट-प्रतिपालनव माडि सुख-संकथा-विनोददिं पृथ्वीराज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्माराधकं पर-बळ-साधक-नामादि-समस्त-प्रशस्ति सहितं श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-हडवळं चाविमय्यन नेगर्चेयेन्तेन्दडे।

इननं तेजदोळ् इन्द्रनं विभवदोळ् चाणक्यन नीतियोळ्।
मनुवं चारु-चरित्रदोळ् जळधियं गाम्भीर्य्यदोळ् धैर्य्यदोळ्।
कनकाद्रीन्द्रमनेय्दे पोल्वनदरिं त्रैलोक्यमं मेच्चिद-
र्ज्जुननं श्री-पडवल्ल-चामनेनलिन्नेवण्णिपं वण्णिपं॥
वर-वनिता-जनङ्गळ मनं कुसुमास्त्र-शारक्के सन्दुघो-
त्कर-कर-पङ्कजं बहु-सुवर्ण्ण-चयक्जिनाथ-मन्दिरम्।
स्थिरतर-राज्य-लक्ष्मिगेडेयादवु रूप-विलासदेळ्गेयिम्।
निरुपम-दानदिं पति-हितोन्नतियिं पडवळ्ळ चामन॥
अनुपममप्प बन्धु-निवहं निज-पत्नमनर्घ-रत्न-म-।
जन-तति पञ्च-वर्ण्णमखिळोग्र-मुखासिये चञ्चु दुष्ट-दु-
र्ज्जन-रिपु-भूभुजर्भुजगरागे नेगर्त्तेयनात विट्टि-दे-।
वन गरुडं समन्तेसेदनी-धरेपोळ् पडवल्ल-चामणम्॥
इन्तु पोगर्त्तेगं नेगर्त्तेगं नेलेयाद हिरिय-। हडवल्ळ-चाविमय्।
यन सर्व्वांग-लक्ष्मी हिरिय-हडवळिति जक्कव्वेयर नेगर्त्तेय् एन्तेन्दडे।
निरुतं पूजिन देय्वमोप्पुव जिनं सिद्धान्त-चक्रेश्वरम्।
गुरु मत्ता-नयकीर्त्ति-देव-यति ताय् आचव्वे बम्मय्यनुं।
... ...प्रेमद तन्दे मिक्क सुमदिं लोकैक-रत्ना-त्ममम्।
पुरुषं श्री-पडवल्ल-चामनेनलिं जक्कव्वेयिं धन्यरार्॥
रतियवळु रूपिं भा-। रतियवळु वाग्विलासदिं सौष्ठवदिं।
क्षितियवळु पेर्म्मेगरुन्-। धतियुनळ जक्कियव्वे कान्ता-रत्नम्।

कोमळवागि ताने शुभ-लक्षण-युक्तमेनिप्प मूर्त्तियिम् ।
व्योममनेय्दे पर्व्वि दिगु-दन्ति-व्रजं निमिर्दिर्द्दं कीर्त्तियिम् ।
श्री-मुखदिन्दमुद्धविप सत्यद मेल्-नुडियिन्दे गोत्र-चि- ।
न्तामणि जक्कियब्बे सले रञ्जिसिदळ् साचि-देवियन्ददिम् ॥
चन्देरेये वन्दि-जनमा-। नन्ददिना-क्षणदे कल्प-कुजदारवेयी-।
वन्ददिनीवळ् बेळपुद- । नेन्दुं जक्कब्बे-देवि जगती-तळदोळ् ॥
तक्कळ मिक्क सोर्मुडिय वृत्त-कुचंगळ······ ·····नो - ।
टक्कलरञ्जिवेम्ब नगे-गङ्गळ रोक्कमेनिप्प होन्न-व- ।
ण्णक्के विशेषमप्पधर-कान्तिय जक्कल-नारियोन्दु भा- ।
वक्के गुणक्के वाग्विभवदुन्नतिगार् दोरे पेण्डिरुर्व्वियोळ् ॥
जिन-राजाङ्घ्रियनोप्पुवर्च्चनेगळि सद्भक्तियिन्दर्च्चिपळ ।
विनयं गुन्ददे-लोक-पूज्यरेनिसिर्प्पाचार्यरं प्रीतिय-
प्प नवान्यामृतदन्नदिं तणिपुवळ् श्री-जैन-गेहङ्गळम् ।
मनदुत्साहदे माळ्पाळी-धरणियोळ् जक्कब्बेयिन्तप्परार् ॥
तळदोळशोकेयोप्पुव तळिर्म्मुख-पङ्कजदोळ् सरोजवा-
सुळि-गुरुळोळियोळ् मधुप-संकुलमोळ्नुडिगळ्गे मिक्क-को-
क्किळ-मरि थानदोळ् गज-समुच्चयमुद्ध-पयोधरक्के पो- ।
ङ्कळशमेनिप्पिवेन्दोरेये जक्कले-नारिय रूपिनेळ्गेयोळ् ॥
रव अक्कम् (अवरक्कम्) ।

जिन-राजननतिमुददिन्द् ।
अनेकवेनिपर्च्चनङ्गळिन्दर्च्चिसि सन् ।
जनरोळ् मिगिलेने नेगळ्दा- ।
विनयद कणि पद्मियक्कनेने मेन्वदरार् ॥

अवर गुरुगळु ।

सकळ-व्याकरणार्थ-शास्त्र-चयदोळ् काव्यङ्गळोळ् मिक्कना-
टिकदोळ् वस्तु-कवित्वदोळ् नेगल्द सिद्धान्तङ्गळोळ् पारमा- ।

त्थिकदोळ्‌ ''किकदोळ्‌ समस्त-कळेयोळ्‌ पाङ्गिन नडेयू-
घिकनादं **नयकीर्त्ति-देव**-यतिपं सिद्धान्त-चक्रेश्वरम्‌ ॥
हेरगोळिळतेन्देल्लं । निरुतं बिन्नविसे केळ्दु बसदियनत्या- ।
दरदिन्दे माडि बक्कले । घरेयं धर्म्मक्के कोट्टु बसमं पडेदळ्‌ ॥

अदेन्तेन्दडे **शक-वर्षं १०७७ नेय युव-संवत्सरद पुष्यदमावास्ये** आदिवारवुत्तरायण-सङ्क्रान्तियन्दु श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-हडवळं चाविमय्यन सर्व्वाङ्ग-लक्ष्मी हिरिय-हडवळति श्री-मूल-संग (घ) द देशिय-गणद पुस्तक-गच्छद कोण्ड कुन्दान्वयदाचार्य्यर श्री-**नय-कीर्त्ति**-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळ गुड्डि **बक्कव्वेयरु** महोत्साहदिं तावु हेरगिनल्लु प्रतिष्ठेयं माडिसिद श्री-चेन्न-पार्श्वनाथ-स्वामिगळ श्री-पाद-पद्माष्ट-विधार्च्चनक्कं उत्तुंग-चैत्यालयद खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारणक्कं रिषिय-राहार-दानक्कवेन्दु श्रीमत्तु हेरगिन प्रभुगळू-रोडेय-सोमनाथिमय्य बूविमय्य सिङ्ग-गावुण्डनोळगाद समस्त-प्रभुगळ समस्त-प्रधानर सन्निधानदल्लु श्रीमन्महामण्डलेश्वर-**नारसिंह-देवगें** बिन्नहं गेय्दु हिरिय-केरेय कीलेरियल्लि कल्ल-बुम्बिन समीपदल्लु बिडिसिद गद्दे सलगेयय्दु बेद्दलेयल्लि स्थलवोन्दु ।

[जिस समय (अपने सर्वपदों सहित) होय्सल वीर-नारसिंह-देव अपने वास-स्थल शाही नगर दोरसमुद्रमें रहते थे और शान्ति एवं बुद्धिमत्तासे अपने राज्यका शासन कर रहे थे :—

उनके पादपद्मका उपजीवी पुराने सेनापति चाविमय्य थे, जिनकी प्रशंसामें कहा गया है कि वे बिट्टिदेवके गरुड़ थे। उनकी पत्नीका नाम बक्कव्वे था। उसकी बड़ी बहिन (उसकी प्रशंसा) पद्मिनक्क थी। दोनोंके गुरु सिद्धान्त-चक्रेश्वर नयकीर्त्ति-देव-यतिप थे।

हेरगू की अच्छा स्थान होनेकी सबसे प्रशंसा सुनकर, बक्कलेने इच्छापूर्वक एक मन्दिर वहाँ बनवाया, और इसे भूमिदान भी दिया। इससे उसकी बहुत प्रसिद्धि हुई।

(निर्दिष्ट मितिको) महाप्रधान, पुराने सेनापति चाविमय्यकी पत्नी, श्रीमूल-संघ, देशिय-गण, पुस्तक गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके आचार्य नयकीर्त्ति-सिद्ध

चक्रवर्त्ती की शिष्या (श्राविक), जक्कव्वेने, बहुत हर्षके साथ भगवान् चेन्न-पार्श्वनाथकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करवाके,—अष्टविध पूजनको चालू रखने, उसके ऊँचे मन्दिरकी मरम्मत आदिके लिये, और ऋषियोंको आहार-दान देनेके लिये, हेरगूके सरदारोंकी उपस्थितिमें, महामण्डलेश्वर नारसिंह-देवसे प्रार्थना करके, (निर्दिष्ट) भूमिका दान दिया।]

[EC, V, Hassan Tl., No. 57.]

३४०

खजुराहो—संस्कृत।

[सं० १२१२=११२५ ई०]

[इस शिलालेखके भी लेखका पता नहीं है। श्री वीरनाथ (महावीर स्वामी) की प्रतिमाके चरण-पाषाणमें यह लेख अङ्कित है। शिल्पीका नाम कुमार सिंह (या सिनहा) लिखा हुआ है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 68, P. A.]

३४१

महोवा;—संस्कृत।

[सं० १२१३=११२६ ई०]

"संवत् १२११, माघ सुदि ५ गुरन् (गुरौ)।"

इस प्रतिमा पर चकोरका चिह्न है; इससे यह प्रतिमा सुमतिनाथकी है। लेख एक ही लम्बी पंक्तिका है। सबसे पहले उक्त कालका उल्लेख है। इसमें किसी राजाका नाम नहीं दिया हुआ है, और इसके अन्तमे शिल्पी रूकार (रूपकार) लाखनका नाम आता है।

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 73, A.]

३४२

महोबा;—संस्कृत।

[सं० १२१५=११५८ ई०]

श्रीमन्मदनवर्म्मदेव विजय राज्ये। संवत् १२१५ पौष सुदि १०।

"श्रीमान् मदनवर्म्मके विजय राज्य सं० १२१५ पौष सुदि १० के दिन।"

[JASB, XLVIII, P. 288, A.]

३४३

खजुराहो—संस्कृत।

[विक्रम सं० १२१२, माघ सुदी २]

ॐ॥ संवत् १२१५ माघ सुदि ५ श्रीमन्मदनवर्म्मदेवप्रवर्द्धमानविजय-राज्ये॥ ग्रहपतिवंसे (शे) श्रेष्ठिदेदूतत्पुत्र पाहिल्लः। पाहिल्लागरहसाधु-साल्हे [ते] नेदं (यं) प्रतिमा कारितेति॥ ॥ तत्पुत्रा महागण। महीचन्द्र। सि [रि] चंद्र। जितचद्र। उदयचंद्रप्रभृति। संभवनाथं प्रणंमति[2] नित्यं॥ मंग [लं] महाश्री [:]॥ रूपकाररामदेवः [·]॥

[यह शिलालेख एक जैन प्रतिमा (संभवनाथ स्वामीकी) के चरण-पाषाण पर एक ही पंक्तिमें अङ्कित है। इसके लेखके समय मदनवर्मदेवका राज्य था। लेखाङ्कित प्रतिमाकी स्थापना साधु साल्हेने कराई थी। इसका कुल गृहपति था। यह पाहिल्लका पुत्र था, पाहिल्ल श्रेष्ठी देदूका पुत्र था। साल्हेके पुत्रोंका नाम, महागण, महीचन्द्र, सिरि (श्री) चन्द्र, जितचन्द्र, उदयचन्द्र इत्यादि था। ये हमेशा संभवनाथ तीर्थंकरकी वन्दना करते थे। प्रतिमा बनानेवालेका नाम रामदेव था। पाहिल्लका नाम हमें पहले शिलालेखमें भी मिल चुका है।]

[F. Kielhares, EI, I, No XIX, No. 8 (P. 153)

---

१. यह अक्षर, या इससे पहलेके और भी अक्षर, यदि वे हों तो, टूट गये हैं। २ शुद्ध पद 'प्रणमंति' है।

३४४

खजुराहे—संस्कृत ।

[सं० १२१५ = ११५८ ई०]

[इसके भी लेखका पता नहीं है । यह लेख मदनवर्मा के राज्यकाल-का है ।]

[A. C. Reports, XXI. P. 68, Q. A.]

३४५

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १२१५ = ११५८ ई०]

यह लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका है ।

[Ant. Kathiawad and Kachh (ASWI, II) p. 169, tr.]

३४६

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १२१५ = ११५८ ई०]

[नेमिनाथ मन्दिरके दक्षिणकी तरफ पश्चिम दिशाकी दीवाल पर]

संवत् १२१५ वर्षे चैत्र शुदि ८ रवावद्येह श्रीमदुज्जयततीर्थे जगतीसमस्त-देवकुलिकासत्कछाजाकुवा लिसंविरणसंघविठ सालवाहण प्रतिपत्या सू० जसहड ठ० सावद (दे) वेन परिपूर्णा कृता ॥ तथा ठ. भरथसुत द. पंडि [त] सालि-वाहणेन नागजरिसिरायापरितः कारित [भाग] चत्वारि त्रिबीकृत कुंडकमांतर तदधिष्ठात्री श्रीअंबिकादेवीप्रतिमा देवकुलिका च निष्पादिता ॥

अनुवादः—सं० १२१५ के वर्षमें, चैत सुदी ८, रविवारके शुभ दिन । इस दिन यहाँ श्रीमत् उज्जयन्त तीर्थ पर संघवी ठाकुर सालिवाहनकी सम्मतिसे राज

(मिस्त्री), जसहड और सावदेवने समस्त जैन देवताओंकी प्रतिमा बनाकर पूर्ण की; तथा भरथके पुत्र पण्डित सालिवाहनने 'नागझ (झ) रि सिरा' (Elephant Fount) के चारों ओर एक दिवाल खेंच दी, जिसमें चार बिम्ब पधराये गये।

कुण्ड बन जानके बाद, उसकी अधिष्ठात्री देवी श्री अम्बिकादेवीकी मूर्ति (प्रतिमा) और अन्य देवोंकी मूर्त्तियाँ उसके ऊपर बनाईं गईं।

[ASI, XVI, P. 356, no. 16]

३४७

करुगुण्ड-संस्कृत और कन्नड़।

—[शक १०८०=११५८ ई०]—

[करुगुण्डमें, जैन-बस्तिके दाहिनी ओर एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीमद्-द्रविळ-संघेऽस्मिन् नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गळः ।
अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि-पारगैः ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वर द्वारावती पुरवराधीश्वर यादव-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलपरोळ्-गण्डाद्यनेक-नामादि-प्रशस्ति-सहितनप्प श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वरं नृप-काम-होय्सळनातन तनेय ॥

बलिदडे मलेदडे मलेपर् ।
तलेयोळ् बाळिडुवनुदित-मय-रस-नसदिं ।
बलियद मलेपद मलेपर ।
तलेयोळ् कै यिडुवनोडने विनयादित्य ॥
आतङ्गं केळेयब्बरसिग पुट्टिदम् ॥
आनतरागद्रिपु-नृपर् ।
आनन-सरसीरुह-नाळमं खण्डिसलेन्द् ।

आनिळुकुमदानिळुकुम- ।
दानिळुकुमदेरग-नृपन भुजदसि-हंस ।।

आतन सति एचल-देविगे तत्पुत्ररु बल्लाल-देव विट्टि-देव-नुदयादित्य-देव ॥ अवरोळगे ॥

तुळु-नाडं मले-नाडं ।
तळकाडु कोण्डु मतेयुं तणियदे भू- ।
तळमं कञ्चि-वरं कोण्डु ।
अळवडिसिद विष्णु-भूभुजं केवळमे ॥

आतङ्गं लक्ष्मा-देविगं पुट्टिद ॥

तरळ-विलोचनाञ्चळके केम्पिनितुं वरे वक्कुं वागळन्त् ।
अरि-नरपाळ-सङ्कुळद पन्कले कैगे तुरङ्ग-राजि मन्- ।
दुरके गजाळि शालेगे घन निज-कोश-गृहान्तरक्के तद्- ।
धरे कडितक्कवुण्डेगेगवोळे गवी-नरसिंह-देवन ॥

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमन्महामण्लेश्वरं त्रिभुवनमल्ल तळेकाडु-गङ्ग-वाडि-नोणम्बवाडि-बनवसे-हानुङ्गलुगोण्ड भुजबल वीर-गङ्ग प्रताप-नरसिंह-होय्सळ-देवरु श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद नेलेवीडिनलु सुख-सङ्कथा-विनोददिं पृथ्वीराज्यं गेय्युत्तमिरे ॥ तत्पादपद्मोपजीवि स्वस्ति समस्त-राज्य-भर-निरूपित-माहात्म्य-पदवी-विराजमान-मानोन्नत-प्रभु-मन्त्रोत्साह-शक्ति-त्रय-शील-गुण-संपन्नरप्प श्रीमन्-महा-प्रधान ॥

काश्यप-गोत्रजनम्बुरु- ।
हास्यनलन्दापुर-प्रभु प्रकट-यशो- ।
भास्यखिळ-कळेगळोळुचतु- ।
रास्यं दण्डाधिनाथ-भद्रादित्यम् ॥

आतनग्र-तनूज ॥

एरेदहिदन्य-वधुगं ।
नेरेदान्त-विरोधि जनद कण्णुं मनमम्

परिकिसे सोलवेनल्कि ।
धरेपोळ दोरेयारो तैल-दण्डाधिपनोळ् ॥
आतन तनेय ॥
आ-वाव गुणङ्गळोळम् ।
भाविसुवडे नोड जगदोळु उप्परवट्टम् ।
केवळमे सन्धि-विग्रहि ।
चावुण्ड गुण-करण्डनमृतद पिण्ड ॥
आतन अग्र-तनूज ॥
वनधि-व्यावेष्टितोर्वीतळ-विनुत-यशं भद्र-राजात्मजातं ।
जनकं चावुण्डरायं सकल-गुण-गणालंकृत नागिराजा- ।
ङ्कन मम्मंळ् रक्कसाज्यौमजे जननि सरोजाक्षि यक्षाम्बिका ।
सज्जन-रत्नं तानेनल् माधवनुभयकुलख्यातनत्यन्त-पूतं ॥
बिन्न समस्त-गुण-सम्- ।
पन्नं शिष्टेष्ट-ततिगे कै तीविरे चेम्- ।
बोन्नं कुडुवेडेगिन-सुत- ।
नन्नं पर-हितदोळा-वियच्चरनन्नम् ॥
वर-वनितेयर्गे रिपुग- ।
ळगेरेदर्थि-जनक्के तैल-दण्डाधीशम् ।
[1]हरि-तनेयं [2]हरि-तनेय ।
[3]हरि-तनेयं धरेयोळेन्दु पोगळदरोलरे ॥
रवेचरनुदारदिन्दं ।
वाचस्पति बुद्धियिन्दे विभवोदयदिम् ।
प्राची-दिशा-पति हेग्गडे- ।
देचमनेनुतिप्पुदेन्दुमी-भूचक्रम् ॥

---

१. मन्मथ, २. अर्जुन, ३. कर्ण ।

पुट्टिद भूमियोळिन्तोळ्प ।
इट्टळमेनिसल्के नेगळ्द् पार्श्वं मुददिम् ।
निट्टूखु माडिसिदं ।
पुट्टिसे चेल्वं समन्तु चैत्यालयमम् ॥
आतननुजं रकसिमय्य ॥
अवरोळगं जिन-देवने ।
सु-विदित-सकळार्थ-शास्त्र-कोविदनिन्ती- ।
भुवन-प्रख्यातं वाग्- ।
युवति-वदनाम्बुजात-मधुपं नेगळ्द्म् ॥
आतन सति हनेयब्बेगम् ॥
पर-हितरल्लद पुरुषार ।
चरितमनिळिकेय्दु बुधरनावगवाप्पिम् ।
पोरवेडगे चौण्ड-रायम् ।
पर-हितमं केणि-गोण्डनाव्यर कय्योळु ॥
चावुण्ड-राजननुजम् ।
तामरस-निभास्यनुतुपळाक्षं मदवत्- ।
सामज-गमनं नेगळ्द्म् ।
वामननवनो-विनूत शशि-विशद-यशम् ॥
आ-चावुण्डमय्यन कुल-वनिते ॥
आतन सति मुन्नेगळदा- ।
सीतेगरुन्धतिगे रतिगे वाणिगे भूभृत्- ।
जातेगे दोरेयेनलल्लदे ।
भूतळदोळु देकणब्बेगुळिदर्दोरेये ॥
आ-यिर्व्वर्गं तनूज ।
श्री-सुतनं विळासदोदविं मकराकरमं गमीरदिं ।
भासुर-तेजदिं दिनपनं चतुरत्वदिनम्बुजगर्भनम् ।

केसरिथं पराक्रमदिनर्ज्जुननं सार-विद्येयिन्दे प- ।
ट्टिसद-पारिसण्णनभिमान-धानं नगुवं निरन्तरम् ॥

आतन सति ॥

पति-भक्तियोळ-मळिन-बिन- ।
पनि-भक्तियोळत्तिमव्वेयेन्दी-भुवनं स- ।
ततं बम्मल-देवियन् ।
अति-मुददिं पोगळुतिप्पुंकिरुळुं पगलुं ॥

जनकं श्रीमरियाने-मन्त्रि-तिळकं जक्कव्वे तायू विश्व-भू-
वन-चिन्तामणि दण्डनाथ-भरतं धैर्य्यान्वितं शौर्य्य-शा- ।
ळि-नयज्ञं किरियय्यनङ्गज-निभं श्री-पार्श्वनाथं निजे-
शनेनल् बिम्मल-देवि धन्येये दश-विश्वम्भरा-भागदोळ् ॥

तोरेदुदु कामधेनु फळवादुदु कल्प-महीजमेम्बिनम् ।
करदु बुधाळिगित्तु हर-हास-निभोज्वळ-कीर्त्तियं सवि- ।
स्तरिपेडेगीगळन्यर पेसर्द्दिदिं मरियानेयम्बुदो ।
भरतणनेम्बुदो खचरनेम्बुदो भानुतनूजनेम्बुदो ॥

भू-विनुतेयेनिप बम्मल- ।
देविगवा-नेगळ्द पारिसण्णङ्गं वि- ।
द्याविदनुदयिसिदनि- ।
ळा-विनुतं शान्तनुदित-लक्ष्मी-कान्त ॥

आतन गुरु-कुल श्री-वर्द्धमान-स्वामिगळ तीर्त्थ-प्रवर्त्तन-दोळु गौतम-स्वामि-गण-धराचार्य्यर धर्म-सन्तानदोळु श्रुतकेवळिगळु भद्रबाहु-स्वामिगळिन्दकळङ्क-देवरिं वक्रग्रीवाचार्य्यरिं सिंहनन्द्याचार्य्यरिं कनकसेन-वादिराज-देवरिं श्री-वर्द्धमान-जगदेकमल्ल-वादिराज-देवर ॥

आदित्यन केलदोळु चन्- ।
द्रोदयमेसेयदवोली-धरा-मण्डलदोळु ।
वादिगळेवेम्ब टुण्टुक- ।

वादिगळेसेदपरे वादिराजन सभेयोळु ॥

अवर शिष्यरु **अजितसेन-पण्डित-देवरु** ॥ अवर शिष्यरु ॥

सले सन्द योग्यतेयिनग्- ।
गलिसिद दुर्द्धर-तपो-विभूतिय पेम्पिम् ।
कलि-युग-गणधररेम्बुदु ।
नेलनेल्लं **मल्लिषेण-मलधारिगळम्** ॥

अवरु शिष्यरु अकलङ्क-सिंहासनारूढरुं तार्किक-चक्रवर्त्तिगळु ॥

आवन विषयमो पट्-त- ।
र्क्कविळ-वहु-भङ्गि-सङ्गतं **श्रीपाळ-** ।
त्रैविद्य - गद्य-पद्य-व- ।
चो-विन्यासं निसर्ग्ग-विजय-विळासम् ॥

अवरु शिष्यरु **वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरु** ॥ अवर गुड्डुं श्रीमन्महा-प्रधानं पट्टिस-भण्डारि-**पारिसय्यनाङ्कुमल्लन** केळेगदलु आन्तु मार्व्वलमं तविसि श्री-नारसिंह-होय्सळ-देवनवसरक्के तलेगोट्टिल्लि **निरुगुण्ड-नाड कारिगुण्डयं** प्रमुख-सहितं धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्टनल्लि पारिसण्णङ्गे परोक्ष-विनयवागि आतन पुत्रं **शान्तियण-दण्डनायकं** बसदियं माडिसि आ-बसदिगे । विट्ट तळवृत्ति अरुह-गट्टमुमं विट्टरु आ-केरेय केळगण एरेय केय्युमं केरेयिं मूडलेरडु मत्तरु केङ्काडुमं केरेय-कल्योळगण हू-दोटमुम देवर सोडरिङ्गोन्दु गाणमुमं आ-वूर तिप्पे-सुङ्कमुमं कळ-वत्तमुमं **मल्ल-गौण्डनोळगाद** समस्त-प्रजेगळुविद्दुं विट्टरु **शक-वर्ष १०८० नेय बहुधान्य-संवत्सरद उत्तरायण-संक्रमणं व्यतीपातदन्दु** खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारण-देवता-पूजेगं ऋषियराहार-दानक्कं **श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर** शिष्यरु **वासुपूज्य**-सिद्धान्त-देवरवर शिष्यरप्प **मल्लिषेण-पण्डितर्गे** धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्टरु । (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

पुट्दोळु गो-ग्रहणमसुत्- ।
कट्मागिरे बरेदु मेच्चिपुदरि कापिम् ।
दिट्दिं मूरुं रायर ।

कटकद विरुदर्ग लेखकोपाध्याय ॥

ई-शासनमं माळोजन मग रूवारि-मल्लोज खण्डरिसिद ॥

[नारसिंह-देवतककी संक्षिप्त वंशावली। जिस समय नारसिंह-होय्सल-देव राज्य करते हुए राजधानी दोरसमुद्र में विद्यमान थे —

तत्पादपद्मोपजीवी दण्डनाथ-भद्रादित्य था। यह राज्यकी धुरीको वहन करने वाला काश्यपगोत्री महाप्रधान (मंत्री) था। उसका ज्येष्ठ पुत्र तैल-दण्डाधिप हुआ। उसका पुत्र चावुण्ड सन्धि-वैग्रहिक मंत्री था। उसका ज्येष्ठ पुत्र माधव था। जिनकी प्रशंसा। तैल-दण्डाधीशकी प्रशंसा।

पार्श्वने नित्तूरमें एक चैत्यालय बनाया। उसका अनुज रकसिमय्य था। चावुण्डरायका अनुज वामन था। चावुण्डरायकी पत्नी देकणब्बे थी। इन दोनोंका पुत्र पारिसण्ण था। उसकी पत्नी बम्मल-देवी थी। इन दोनोंसे शान्त नामका पुत्र उत्पन्न हुआ था।

उसके गुरुओंकी परम्परा,—वर्धमानस्वामी के तीर्थमें गौतमस्वामी गणधराचार्यकी धर्मसन्तानमें, भद्रबाहु, श्रुतकेवली, अकलङ्क देव, चक्रग्रीवाचार्य, सिंहनन्द्याचार्य, कनकसेन वादिराज-देव हुए। वादिराज की प्रशंसा। उनके शिष्य अजितसेन-पण्डित-देव हुए। इनके शिष्य मल्लिषेण-मलधारि हुए, जिन्हें उनकी योग्यता और तपश्चरण के कारण कलियुगी-गणधर कहा जाता था। उनके शिष्य तार्किकप्रवर अकलङ्कसम श्रीमाल-त्रैविध हुए, जो गद्य-पद्य दोनोंमें निपुण थे। उनके शिष्य वासुपूज्य-सिद्धान्त-देव थे।

इनके गृहस्थ-शिष्य महाप्रधान पारिसण्णको निरुगुण्डनाडमें करिकुण्ड मिला था। ये उसके मालिक थे। पारिसण्णकी मृत्युके उपलक्ष्यमें उसके पुत्र शान्तियण दण्डनायकने एक 'बसदि' बनवायी; और उस बसदिके लिये (उक्त) भूमिका दान किया और दीपके लिये एक तेलकी चक्की भी दानमें दी। मल्लगौण्ड और समस्त प्रजाने उस गाँवके घाटकी आमदनी तथा 'कळवत्त' (धानसे अनाज निकालते समय अनाजका हिस्सा) भी दिया। (उक्त मितिको) उन्हीं तीन

प्रसिद्ध कारणोंसे उन्होंने श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके शिष्य वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवके शिष्य मल्लिषेण-पण्डितको ये दान दिये।

यह शासन शिल्पी मल्लोज ने लिखा था।]

[EC, V, Arsikere Tl., No. 141.]

३४८

श्रवणबेल्गोला—सं०, त तथा कन्नड़।

[शक १०८१ = ११५६ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३४९

हेरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०८१ = ११२६ ई०]

[हेरेकेरीमें, वस्तिके पाषाण पर]

श्रीमत्पवित्रमकलङ्कमनन्तकल्पम्।
स्वायम्भुवं सकळ-मङ्गलमादि-तीर्थम्।
नित्योत्सवं मणिमयं निळयं जिनानाम्।
त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये॥
श्रीमत्परम-गम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्।

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं सत्याश्रय-कुल-तिलकं चाळुक्याभरणं श्रीमत्-त्रिभुवनमल्ल-देवन विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क्क-तारमम्बरं सलुत्तमिरे॥ तत्पाद-पद्मोपजीवि॥ स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं पट्टि-पोम्बुच्चपुर-वराधीश्वर शान्तर-कुळ-कमलिनी-दिनाधिनायकन् तेङ्क-मधुराधिनायक शान्तरादित्यं सकळ

वम-स्तुत्यं चलदङ्करामं गण्डर-भीम समर-प्रचण्ड नेव्वॅर गण्ड-नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमत्तु राय-तैलपदेव ।

उदधि-परीत-भूमि-रमणी-रमणीय-मुखारविन्ददन्- ।
ददे सोगयिप्प सान्तळिगे-सासिरमं सुख-संकथा-विनो- ।
ददिनतिदुष्ट-निग्रहं-विशिष्ट-कुल-प्रतिपाळनार्यवाळ्ड ।
ओदविद पुण्य-पुञ्जरेसदर् नृप-तैलह-राय-भूमुनर् ॥
समद-रिपु-नृपति-दुर्द्दम- ।
तममं बेङ्कोण्डु शान्तयादित्य-नृपम् ।
क्षमेयं पाळिसि लोको- ।
त्तमनादं स्थैर्य्यं-मेरु-शैलं तैलम् ॥
अदटिनळुक्कें मय्मेय निमिर्क्कें यशोधन देक्कें राज- ।
शद कडुदेळ्पु दान-गुणदोळ्पु गुणङ्गळ तळ्पु राज्य-सम्- ।
पदद पोदळ्के तेजद तेरळ्के विरोधिय बाळ्के तन्नदेम्- ।
बुदनेने पेर्म्मेयं तळेदनो नृपरोल् नृप-तैल-शान्तरम् ॥
तत्तलने नन्नि-शान्तर- ।
वल्लभननुजाते सीतेयंगेलेवन्दळ् ।
वल्लभ-भक्तियोळं जिन- ।
वल्लभ-भक्तियोळनोन्दिदोलिपं तेळ्पम् ॥
अन्तेनिपक्कला-देवी- ।
कान्तेगवा-तैल-शान्तर-क्षितिपतिगम् ।
सन्तोषं पुट्टुववोल् ।
कन्तु-निभर् पुट्टिदर् क्कुमारर् म्मूवर् ॥
मूवरे लोकदोळ् कदन-कर्क्कश-बाहुगळेन्तु नोर्प्पडम् ।
मूवरे धात्रियोळ् भुवन-मुम्मुक-दानिगळुर्व्वराग्रदोळ् ।
मूवरे राज-नीति-निळयर् धरेयोळ् सुचरित्र-पात्ररम् ।
मूवरे काम-भूमिपति-सिंह-नृपास्मण-भूमिपालकर् ॥

कलियें सिंहाम्रनातं विमळ-कुळवने पार्श्वनाथान्वनाथै- ।
क-ललामं तीव्र-तेजोनिधियें भुवनदोळ् शान्तयादित्य-देवम् ।
ललना-सन्दोह-सम्मोहन-करने दिटं ताने दल् कामनेन्दल्- ।
देले काळेय-क्षितीशा-प्रकरदळवियें कामनुद्दाम-धामम् ॥
आ-नृप-सति पाण्ड्य-कुलाम्- ।
भोनिधि-वर्द्धन-सुधांशु-लेखे चरित्र- ।
श्री-निधि बुध-निधि ताने द- ।
या-निधि विजयवति पुण्यवति वसुमतियोळ् ।
जिन-चरणाम्बुजं तळनळिर्प्पं सरोज-वनं मनं जगज्- ।
जन-कृत-पुण्य-मूर्त्ति निज-निर्म्मळ-मूर्त्ति दया-रसैक-पा- ।
वन-घन-पात्रवुन्मीलित-नेत्रवेनल् सवनारो भव्य-मण्- ।
डने येनिसिद्दं शीलवति विज्जळ-देविगिळा-तळाग्रदोळ् ॥
आ-विजयावती-देविगन् ।
आ-विभु-काम-क्षितीश्वरङ्गं वंशा- ।
भीवर्द्धनरोगेदर् जगा- ।
देवं श्री-सिङ्कि-देवनेम्ब तनूजर् ॥
इव्वरे दोर्व्वळ-पुवळरिव्वरे दान-विनोदिगळ् समन्त् ।
इव्वरे शस्त्र-शास्त्र-कुशलर् न्नेगळिदव्वं [रे] सत्-कुळर् दिटक्क् ।
इ [व्वं] रे सच्चरित्र-युतरिव्वरे भू-भुवन-स्तुतर् ज्जगक्क् ।
इव्वरे चेल्वरेय्दे जगदेवनुक्मगाद सिङ्कि-देवनुम् ॥
अदिरद वीररिल्लळदि गुण्डद मन्नेयरिल्ल कूगडड् - ।
गद नरनाथरिल्ल नी नलिसेनद राज-कुमररिल्ल चा- ।
गद बळवन्तरिल्ला किडेदोड्डिदि पोगद दुर्ग्ग-वर्गविल्ल् ।
ओदविद शौर्य्य-शक्तिगो दिटं जगदोळ् जगदेव-भूपन ॥
उन्नति मेरुविङ्गे मणि-माळिकेयादुदु सर्व्व-शास्त्र-सं ।
पन्नते भारती-वचनवादुदु दान-गुणं समस्त-वि- ।

द्धन्निकरक्के कैपिडियोलादुदु तन जयं जगक्के कैयू- ।
गन्नडियादुदेन्देसेदनो बगदोळ् जगदेव-मूभुजम् ॥
समदारात्यङ्गना-मङ्गळ-कटक-हृदित्-कर्ण्ण-पर्ण्णापहं वि- ।
क्रमवी-काळेय-दोषापह ··मळ-चरित्रं···विशिष्टे- ।
ष्ट-मनस्-तापापहं तन्नवुळ-वितरणोद्यागवेन्दन्दे लोको- ।
त्तमनादं सिङ्गि-देवं जग-विरुदरळेवं समग्र-प्रभावम् ॥
अवरोडने पुट्टिदळु भू- ।
भुवनं वित्तरिसु वत्तिमव्वेयो पेळेम् ।
बवोलेसदळळिया दे- ।
वि विशुद्धाचारदिं विनिर्म्मळ-गुणदिम् ॥
खर-पुरदोळ् नेरे सेनुव-।
पुरदोळ् माडिसिदळेसेव जिन-भवनमनन्त् ।
एरडमळिया-देवियवो- ।
लरसियरार् प्पुण्यवति [थ] री-वसुमतियोळ् ॥
सते शोभाकरवागे सेतुविनोळत्युत्साहदिं भव्य-मण्- ।
डळि बाप्पेम्बिन वोन्दे कण्ठदोळे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-निर्-
म्मल-चारित्र-गुण-प्रयुक्ते जिन-राजागारमं भक्तियिम् ।
अळिया-देवि समन्तु माडिसिदळुर्व्वी-स्तुत्यमं नित्यमम् ॥
चतुरे चतुर्व्विध-दानो- ।
न्नतियोळ् जिन-राज-भवनम माडिसि भू- ।
नुत-कीर्त्ति होन्नेयरसन ।
सति अळिया-देवि नेगळ्दळवनी-तळदोळ् ॥
भुज-बल-भीम भीम-सम-विक्रम कोङ्कण-रत्तपाल वि- ।
श्व-जन-विनूत निर्म्मल-कदम्ब-कुळोज्वल गङ्ग-तुङ्ग-वं-
शज-नृप-होस पोज-महिपाळन मर्म्म जिनेन्द्र-पाद-पद्- ।
कज-मद-भृङ्ग निन्नोरेगे वप्पुवनावनिळा-तळाग्रदोळ् ॥

यी-दोरेय होन-नृपतिगवू ।
आ-दुरित-विदूरे अळिय-देविगवोगेदम् ।
मेदिनि बण्णिसलखिळ-गु- ।
णोदधि जयकेशि-देवनेम्व कुमारम् ॥
नेगळ्दा-श्री-जयकेशि-देवनमरी-सन्दोह-संभोग-का- ।
व्वेगे मेय्दन्दडे पेत्त-तायळिय-देवी-कान्ते मोहार्थदिन्- ।
दे गुणाम्भोनिधिगा-मगङ्गे विपुल-श्रेयो-निमित्त जगम् ।
पोगळल् सेतुविनोळु विनिर्म्मिसिदळुद्ध-श्री-जिनागारमम् ॥

स्वस्ति समस्त··प्रख्यात-सीतेयुं विज्जल-देव तनूजातेयुमप्प अळिया-देवियरु शक-वर्ष १०८१ नेय प्रमाथि-संवत्सरद पुष्य-शुद्ध-चतुर्दशी-शुक्रवारदन्दु । उत्तरायण-संक्रान्तिय-पुण्य-दिनदोळ्······गुळिलळिया-देवियरुं होन्नेयरसरुं तम्म धर्म्मक्के बिट्ट भूमियावुदेन्दडे (यहाँ दानकी विशेष चर्चा आती है) मूल-संघद काणूर-गणद तिन्त्रिणि-गच्छद वन्दणिकेय तीर्त्थदाचार्य्यर् भानुकीर्ति-सिद्धान्त-देवर कालं कर्चि धारा-पूर्व्वकं माडि चारु-पूजा-निमित्तं कोट्टरु (हमेशाका अन्तिम श्लोक) ।

[जिन शासनकी प्रशंसा] ।

जिस समय (स्वाभाविक चालुक्य पदों सहित) त्रिभुवन मल्लदेवका विजयी राज्य प्रवर्द्धमान था :—

तत्पादपद्मोपजीवी, पट्टि-पोम्बुच्चपुरवराधीश्वर, दक्षिण-मधुराका अधिनायक राय-तैलह (प)-देव सान्तलिगे हजार पर शासन कर रहा था । राजा तैल-शान्तरकी प्रशंसा । उसकी पत्नी अक्कला-देवी थी, जो नन्नि शान्तरकी छोटी बहिन थी । और उसके तीन पुत्र थे,—काम, सिंह, और अम्मण । सबमें बड़े कामकी प्रशंसा । उसकी पत्नी बिज्जल देवी थी । इनके पुत्र जगदेव और सिङ्गि-देव थे । उनकी प्रशंसायें । उनकी बहिन अळिया-देवी थी । उन्होंने सेतुमें एक बढ़िया जिन मन्दिर बनवाया था । वह होन्नेयरसकी पत्नी थी । यह होन्नेयरस

(अपर नाम होन्न पोन्न) कदम्ब-कुलका प्रकाश, तथा गङ्ग-वंशमें उत्पन्न हुआ था। उस और अलिया-देवीसे जयकेशी-देव उत्पन्न हुये थे और उन्होंने सेतुमें जिन मन्दिर बनवाया था। तथा विज्जल देवीकी पुत्री अलिया-देवीने, (उक्त मितिको), होन्नेयरसके साथ, इस मन्दिरके लिये (उक्त) भूमियोंका दान दिया। यह दान दो "सिवने" का था। यह दान उन्होंने मूलसंघ, काणूर्-गण तथा तिन्त्रिणि-गच्छके भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवके, जो वन्दनिके तीर्थके आचार्य थे, पाद-प्रक्षालनपूर्वक किया गया था। हमेशाका अन्तिम श्लोक।]

[EC. VIII, Sagar Tl., No. 159]

३५०

पालनपुर—संस्कृत तथा गुजराती।

[सं० १२१७ = ११६० ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[EI, II, No. V, No. 10 (P 28), T. L, A.]

३५१

कवली;—संस्कृत तथा कन्नड़।

शक १०८२=११६० ई०

[कवला (सकेपट्टण परगना) में पुराने गांवकी जगह पर एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द-महामण्डलेश्वरम् द्वारावतीपुरवराधीश्वरम्। शशाङ्कपुर-नि [वास]-वासन्तिका-देवी-लब्ध-
वर-प्रसादनुम्। निजासि-दण्ड-खण्डित-प्रचण्ड-दायादनुम्।
श्वेतातपत्र-शीतकिरण-विकसित-सकळ-जन-नयन-कुवळयनुं-।

निज-भुज-भुजंगराज-सन्धारित-वसुन्धरा-वळयनुम् ।
यदु-कुल-कमल-कमलिनी-कमनीय-तरुण-तरणियुम् ।

सम्यक्त्व-चूड़ामणियुं । कनक-धारा-वर्ष-परिपूरित-सकळ-याचक-चातक-चक्रवाल-वल्लभनुं । शार्दूल-लाञ्छननुम् । हर-हसित-विशाद-कीर्त्ति-वर्त्तित-ब्रह्माण्डनुं । मलेपरोळ् गण्डनुं । मद-मुदित-मधुकर-निकुरम्ब-चुम्बित-कट-तट-विराजमान-सामज-समाजनुम् । मले-राज-राजनुम् । लक्ष्मीरमण-रमणीय-चरण-सरसिरुह-संचरण-चतुर-षट्चरणनुम् । निज-निजय-राज्य-राज-लक्ष्मी-मणिमयाभरणनुम् । सु-कवि-शुक्ति संकयाकर्ण्णनोदीर्ण्ण-पुलक-दन्तुरित-कपोळफळकनुम् । नीति-नितम्बिनी-ललाट-तिळक-नुम् । सु-रुचिर-चरण-नरवर-मणि-दर्प्पण-प्रतिफळित-विनत-रिपु-नृपोत्तमांगनुव् । अन्तु पोगळ्तेगं नेगळ्तेगं जन्म-भूमियागि ।

मटदिं मेलेत्तिदा-माळवन पदकमं कोण्डवं **चक्रकूटम्** ।
वेदरल् वेङ्कोण्डु **सोमेश्वरन** करिगळं कोण्डवं माण्तने पेळ् ।
टुदनेम्बो गेय्नुदिल्लेन्द्दिगननुरे वेङ्कोण्डु कोण्डं जय-श्री- ।
सदनं तद्देशमं तत्-**तळवन-पुरमं** जिष्णु-विष्णु-क्षितीशम् ॥
तळकाडोल् सुळिदाडि तुङ्ग-नगवप्प **उच्चंगियं** साद्दंना- ।
कुळ-चित्तं **बनवासेयागे** नडेदार्प्पिं **बेळ्वलं** गोन्डु निश्- ।
चलितं **पेर्द्दोरेगेम्** स-तोषदोसेदा-**हानुङ्गलोल्** तु होय् - ।
सळ-भूपालन शौर्य्य-सिंहवसुद्दद्-भूपर् भयङ्गोळ्विनं ॥

अन्तेनिसिदाश्चर्य्य-शौर्य्यदिं कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-वनवासे-हानुं-गल्लु-हलसिगे-वेळ्वलवोळगागि कञ्चियादि-यागि हेद्दोरे-पर्य्यन्तवाद स······सङ्गळं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळनं माडि भुज-बल वीर-गङ्ग **त्रिभुवनमल्ल होय्सळ-विष्णुवर्द्धन-देव**··· ·········राजधानि-**दोर-समुद्रदोळु** सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

सरसति निनगिनितु कळा- । परिणते नेगळ्**दजितसेन-भट्टारकरिम्** ।
दोरेवेत्तु देवियाद्दिर् - । पिरियतनं निन्नदल्तुदवर महत्वम् ॥

सले सन्दा-योग्यतेय-अगलिसिद दुर्द्धर-तपो-विभूतिय पेन्विम् ।
कलि-युग-गणधररेम्बुदु । नेळनेळल्ं मल्लिषेण-मलधारिगळम् ॥
आवनविषयमो पट्टु-त-। कींविळ-बहु-भंगि-सगतश्रीपाल-।
त्रैविद्य-गद्य-पद्य-व-। चो-विन्यासं निसर्ग-विलय-विळासं ॥
आळापं बेड माण् मार्-मलेयदिरेले नीं वादि बन्दिर्द्दपं भू-।
पाळोच्चद्-मौळि-माला-विळसित [·········] पदाम्भोज-युग्मम् ।
चोळ-क्षत्रादि-भूभृत्-सभेयोळु पलरं गेल्दु वेङ्कोण्डनी-श्री-
पाल-त्रैविद्य-देव पर-मत-कुधरानीक-दम्भोळि-दण्डम् ॥
जिन-धर्माम्बर-तिग्म- रोचि सु-चरित्रं भव्य-नीरेज-नन्-।
दन-मित्रं मद-मान-माय-विजितं चन्द्रप्रभेन्द्रात्मजम् ।
विनयाम्भोनिधि-वर्द्धनं बन-नुतं तानेन्दु संवर्ण्णिसल् ।
मुनि-नाथं सले वासुपूज्यनेसेदं सिद्धान्त-रत्नाकरम् ॥

श्री-भूतबळि-पुष्पदन्त-भट्टारकरिं । समन्तभद्र-स्वामिगळिन्दकलंक-देवरिम् । चक्रग्रीवाचार्य्यरिम् । वज्रणन्दि-भट्टारकरि कनकसेन-वादि-राज-देवरिं । श्री-विजय-भट्टारकरिं । दयापाळ-भट्टारकरिं । श्री-वादिराज-देवरिन्द् । अजितसेन-भट्टारकरिं । मल्लिषेण-मलधारि-स्वामिगळिं । श्रीपाल-त्रैविद्य-देवरिम् । श्री-वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरिम् । उत्तरोत्तरमागि बन्द श्रीमद्द्रविळ - संघदरुङ्गळान्वयद गुड्डरप्प श्रीमतु-चारसिंघ-होय्सळ-चावुण्डम् ॥

पदनरिदासे दर्प्पिसदे बेळ्पर बेळ्पुदनित्तु सद्गुणा- ।
स्पदनेनिसल्के निन्न पेसरेम् गळ होय्सळ-गौण्डनेम्बुदे ।
[··] शिबियेम्बुदे खचर-नायकनेम्बुदे चारुदत्तनेम्-।
बुदे बलियेम्बुदे रवितनूभवनेम्बुदे गुत्तनेम्बुदे ॥
जिनपति-भक्तियान्त पति-भक्तिबुदारते शक्ति सज्जन-।
[··] कृत-युक्तियय्दे गुणवय्दे-गुणङ्गळनावगं पोग-।
ळ्दनवरतं निमिर्च्चुतिरे होय्सळ-गौण्डिन चित्त-वार्धिवर्-।

द्धन-कर-चन्द्र-लक्ष्मियेने वर्णिसलोप्पदे केळ्ळेगौण्डियम् ॥
कुल-धात्रीधर-धैर्य्यंनब्धि-वर-गाम्भीर्य्यं समस्तावनी- ।
वळय-व्यापित-चारु-कीर्त्ति वनिता-कामं गुण-स्तोमनुज्-
ज्वळ-वाणी-स्तन-हारनर्थ्यतिशयाधारं करं पेम्पनिन्त् ।
एळेयोळ् ताळ्दिदतो जगन्नुत-गुणं श्री-कदम्ब-शेट्टि-प्रभु ॥
आतन चित्त-प्रिये वि- । ख्यातियनान्तद्रिसुतेगमम्बुधि-सुतेगम् ।
सीता-वधुगं रतिगव- । देतेरदिं चट्टियक्कनगळवेनिपळ् ॥
रतिगवरुन्धतिगं सर- । सतिगं रेवतिगमेसेव पार्व्वतिगं श्री-
सतिगं समनेनिसि महा- । सति चट्टियक्क तोळगि बेळगि-र्दाळ्ळेयम् ॥

भावकनेन्दु सच्चरित्रनेन्दु समुन्नतनेन्दु सत्पुरुषनेन्दु समुज्ज्वळ-कीर्त्तियेन्दु सर्व्वावनि सन्ततं सले पोगळवुदु नन्नि-शेट्टियम् । लोक-गावुण्डगं माकवे-गवुण्डिगं हुट्टिद मगळु चट्टवे-गवुण्डिय मगं होय्सळ-गवुण्ड तम्मल्वेगे परोक्षवागि बसदियं माडिसिदम् । होय्सळ-गवुण्डनुं ऊर समस्त-प्रजे-गावुण्डुगळुविद्दुं बसदिगं देवालयक्कं भूमि समानवागि बसदिगे उत्तरायण-संक्रमण-व्यतीपातदन्दु अहोबल-पण्डित रिगे कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट गद्दे सलगे नाल्कु बेद्दले मत्तरु नाल्कु माने येरडु कळनोन्दु केरेय केळगण तोण्ट ओन्दु गाण ओन्दु ॥ १०८२ नेय प्रमादि-संवत्सरद पौष्य-मास-उत्तरायण-संक्रान्ति-व्यतीपातदन्दु-नारसिंह-होय्सल-देवर कय्यलु धारा-पूर्व्वकं माडिसि-कोण्डु बसदिगे भूमियं बिट्टरु ॥ (आगेकी चार पंक्तियोंमें हमेशाके अन्तिम श्लोक हैं) कन्नळिय भूमि-पुत्रकरप्प गौडु-गळ पेसरं पेळवे (कुछ नामोंके बाद) समस्त-प्रजे-येल्लविद्दुं बसदिगे धारा-पूर्व्वकम्माडिदरु । इन्तिवरुम्यानुमतदिं बरेद नेल्कुदुरेय-ऊरोडेय कलि-देवु माणि-बोज ॥

[जिन शासनकी प्रशंसाके बाद, विष्णुवर्द्धनके अनेक पद और उपाधियाँ । उसने मालवका केन्द्रीय नगर हस्तगत कर लिया; चक्रकूटको डराकर उसने सोमेश्वरके हाथियोंका पीछाकर उन्हें पकड़ लिया । अदिगका पीछा करके उसके देश तथा राजधानी तळवनपुरको अधिकृत कर लिया । इस राजाने तळकाडु, उच्चंगि,

बनवासे, वेळ्वल, पेर्दोरे और हानुङ्गल सभी पर अधिकार जमाकर शत्रु-राजाओंमें भय उत्पन्न कर दिया।

जब, भुज-बल वीर-गङ्ग त्रिभुवन मल्ल होय्सल विष्णुवर्द्धन-देव राजधानी दोर-समुद्रमें बैठकर शान्ति और बुद्धिमत्तासे राज चला रहा था —

तत्पादपद्मोपजीवी,—अजितसेन-भट्टारक, मल्लिषेण-मलधारी (कलियुगी गणधर), श्रीपाल-त्रैविद्य-देव और चन्द्रप्रभके पुत्र मुनिनाथ वासुपूज्य-सिद्धान्त-देव थे।

द्रमिल-सघके अरुङ्गलान्वयका एक गृहस्थ-शिष्य **नारसिंह-होय्सळ-चामुण्ड** था। (उसकी प्रशंसा)। उसकी पत्नी केल्ले-गौण्डि थी। कदम्ब-सेट्टि-की प्रशंसा, जिसकी पत्नी चट्टियक्क थी। नन्नि-सेट्टिकी प्रशसा।

लोक-गवुण्ड और माकवे-गवुण्डीकी पुत्री चट्टवे-गवुण्डीके पुत्र होय्सल-गवुण्ड-ने, अपनी माताकी स्मृतिमें, एक बसदि खड़ी की, और उस नगरके समस्त प्रजा तथा किसानोंके सामने, (उक्त) कुछ भूमि बराबर-बराबर बसदि और मन्दिरको बाँट दी। यह सब अह्योबल-पण्डितके पाद-प्रक्षालनपूर्वक किया। और (उक्त मितिको) बसदिको वह सब भूमि दे दी जो उसे नारसिंह-होय्सल-देवसे मिली थी।

यह दोनों पार्टियोंकी सम्मतिसे नेल्कुदरेके प्रधान, कलिदेव-माणिवोज-ने लिखा।]

[EC, VI, Kadur, Tl., No., 69.]

३५२

पण्डितरहळ्ळि;—संस्कृत तथा कन्नड।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग ११६० ई० का]

[पण्डितरहळ्ळि (कडतोरे परगना) में, मन्दरगिरि-बस्तिके प्राङ्गणमें एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

नमो वीतरागाय ।

श्रीयं श्री-वल्लदोळ् सुस्थिरमेनिसि जगं वण्णिसल् तारिंद वीर- ।
श्रीयं दो-र्दण्डदोळ् सा (शा) स्वत (श्वत) मेने तळेदी-लोक-संस्तुत्य-वाणि- ।
श्रीयं वक्त्राब्जदोळ् वाग्-वरनेने मेरेदं यादवाम्नाय-राज्य- ।
श्रीयं स्वाङ्गीकृतं माडिद नृप-तिळकं नारसिंह-क्षितीशम् ॥

स्वस्ति समाधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं द्वारावती पुर-वराधीश्वर यादव-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलपरोळु-गण्डाद्यनेक-नामावली-समालङ्कृतरप्प श्रीमत् · ··मल्ल तलकाडुकोङ्गु-नङ्गलि-बनवसे-उच्चङ्गि-हानुङ्गल् गोण्ड भुजबल वीर-गंग होय्सळ-नारसिंह-देवरु श्रीमद्-राजधानि-दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ॥

स्फुरदुरु-दीधिति-प्रकटितोग्र-भुज··विळासि-दुर्- ।
धरतर-विक्रम-क्रमदोळादतिवर्त्तियेनल्के सन्दनी- ।
धरे पोगळल्के रूढियें··चमूपति-रत्नना-नृपे- ।
श्वरन नेगळ्ते-वेत्त मनेगं मोनेगं नेगळ्देक-मुख्यदिम् ॥
एरगदराति-राय·· ··परवोङ्क्येप्पिनम् ।
किरिपि भुजासियं जसमनेण्-देसेयानेय··गोम्बिनोळ् ।
निरिसि समग्र-साहसमनी-धरेयोळ् मेरेयुत्तमिर्प्पं हेर्- ।
अरिकेय दण्डनाथनेरेयङ्गनेनल् नेगल्दं धरित्रियोळ् ॥

[स्] वस्ति श्रीमन्महा-प्रधानं सर्व्वाधिकारि सेनापति-दण्डनायक एरेयङ्गमय्यङ्गळ पाद पद्मोपजीवि ॥

स्थिरमेने गोत्र-मित्र-विबुधाश्रय··मं निमिर्च्चि वन्- ।
धुर-महिमोन्नतिक्केगेडेयागिकरं चेलुवागि भूभृद्-उद्- ।
धुर-लक्ष्मी-प्रधाननेसेदिर्द्दभिमान-मन्दरम् ।
पिरिदेनिसिर्द्दनीश्वर-चमूपति मन्दरदिं निरन्तरम् ॥
मन्निपनेन्न निन्न ··नेगल्दिम्मडि-दण्डनाथनोल्द् ।
एन्नेय भाव नान् निनगे मावनेनेन्तुमवश्य-पोण्र··।

•••नदे सन्द विक्रमदळुक्केयगुर्व्विनोळाळ्द्नीश्वरम् ।
तन्नदरिन्दवादं परेयङ्ग-चमूपन चित्त-वृत्तियम् ॥
मत्तमा-प्रधान-चूडारत्नन विषयाधिकारि••नेगल्तेय पोगल्तेयं पेळ्वडे ।
करेवदु कामधेनुवेने धेनु पोलं सले पन्नि धान्यमम् ।
नेरदळदंग्घंमुमळतेयुं पिरिदादुददेन्तु नोळपडम् ।
तेरे विपरीतविक्ष नुडियोळ्तोदळिल्लेनल् ••श्वरम् ।
मरुवलि-मण्णे-तेङ्गरे-नेगळतेय-कल्वळियेम्ब नाळ्गळम् ॥
कन्दिरे मुं चिरन्तनर जीर्ण्ण-जिनालयं मोदल्-।
गोण्डु निरन्तरं मेरेये माडिसि रूढियनीतनन्ते कम्-।
कोण्डवनावनीश्वरने धर्म-गुणोन्नतनातनिर्द्दं भू-।
मण्डलमावगं स-फलमादुदेवं द्विज-वंश-मण्डनम् ॥
आ-महानुभावन सति ।
लावण्याम्भोधिय वे-। ला-वन-वन-लते-सुधाब्धि-संभव-लक्ष्मी-।
देवतेयेनिसुवल् ईश्वर-। देवन वधु माचियक्कनवळा-रत्नम् ॥
आ-पुण्यवतियन्वय-प्रभावमेन्तेन्दडे ॥
श्रीगे निवासवागि पेसर-वेत्तनेगळ्तेय नाकि-सेट्टिगम्
नागवेगं तनूभवनगुर्व्विनसोहणि बिट्टिगाङ्गना-।
भोग-पुरन्दरङ्गे सति चन्द्रवे तत्सुते माचियक्कनेन्द् ।
आगळुमर्क्करिं विबुध-मण्डलि बण्णिसलोप्पि तोरिदळ् ॥
निरुपम-कीर्त्तियं तळेदु पेर्म्मेगे ताय्-मनेयागि सत्-कळा-।
धर-मुखियाद चन्द्रदेगे पेर-म्मगळागि समस्त-लोकमम् ।
पोरेदनमोघनीश्वरनोळिर्देनुतं तरुणी-विलासमम् ।
धरियिसि पुट्टिदळ् लकुमि-देविये माचवेयेम्ब नामदिम् ॥
द्विगुणिसुतिर्प्पुदाद ।दर-हास-विळास-नवीन-चन्द्रिका- ।
प्रगुण-गुणङ्गळिं कुवळयक्के विळासमनेन्दोंडुदुध-ली- ।
लीगे नेलेयाद माचलेयनून-लसद्-वदनेन्दु ••रू- ।

ढिगे नेगळिदन्दु-मण्डलदोळिद्दं कळङ्कमनीगलागुमे ॥
कळ्रिसलोरे·········। वल्पर मातिरखि पोलरीश्वरनेम्बी-।
कळ्र-महीशमनप्पिद । कल्प-लता-ललिते··**माचिपक**······॥
परमाप्तं जिननासनिन्तु जनकं श्री-**विट्टिगाङ्कं** गुणो-।
द्धुर तन्नभ्विके **चन्दिकब्बे** येनिसिर्द्दी-**माचियक्क**ङ्गे सद्-।
गुरुगळ् पोस्तक-गच्छ-देशिय-गण-श्रीकोण्डकुन्दान्वयो-।
द्धरणर् **गण्डविमुक्त-देव-मुनिवर** श्री-मूल-सङ्घोत्तमर् ॥

अन्तनून-गुण-रत्न-मण्डनेमुं चातुर-वर्ण्ण-समुदयैक-शरणेयुमेनिसि नेगल्द श्रीमत्-पेर्-गडिति **माचियक्कं** श्री-**मय्दवोळल** दिव्य-तीर्थदोळ् सत्-धर्म्मापचेयिम् ।

नोडलिदु शित-विमानदे । नाडेयु मिगिलेनिसि नेगळ्द जिन-मन्दिरमं ।
कूडे घरे पोगळे माचवे । माडिसिदलगण्य-पुण्य- युवती-रत्न ॥

अन्तु माडिसि ॥

श्री-वधु-**माचवे** सले प-। श्रावतिगेरेयेम्व केरेय कट्टिसि कोट्टळ् ।
माविसे वसदिगे तन्न य-। शो-वधु दिग्-वधुगळोडने नलिदाडुविनम् ॥

मत्तमा-तीर्त्थद वसदिय देवरिगे मुन्न नडेव वृत्तिय सीमा-सम्बन्धमेन्तेन्दडे (यहाँ दानकी विशेष विगत आती है) मङ्गळ महा श्री । (वही अन्तिम श्लोक)······

[जिन-शासनकी प्रशंसा ।

जब भुजबळ वीर-गङ्ग होय्सळ नारसिंह-देव, शान्ति और बुद्धिमत्तासे शासन करते हुए, राजधानी दोरसमुद्रमें विराजमान थे —तत्पादपद्मोपजीवी,–(प्रशंसा सहित) दण्डनाथ–एरेयङ्ग था। दण्डनायक-एरेयङ्गमय्यका पादोपजीवी ईश्वर-चमूपति था। वे दोनों आपसमें श्वसुर और दामाद थे। (उनकी प्रशंसायें), और उसने जिनालयकी मरम्मत करवायी थी। उसकी (ईश्वर-चमूपतिकी) पत्नी माचियक्क थी, जो नाकि-सेट्टि और नागवेके पुत्र साहणि-विट्टिगके चन्दवेकी ज्येष्ठ पुत्री थी; उसकी प्रशसायें। जिनपति उसके इष्टदेव, पिता विट्टिग, माँ चन्दिकब्वे थीं। माचियक्कके गुरु पुस्तक-गच्छ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा मूलसंघके गण्डविमुक्त-देव-मुनिप थे।

सर करुळोळ् चिमिल्लिमि चिमिल्चिमिलेम्बुदु कोप-वह्निदुर्- ।
घरतरवेन्दोडल्कुरदे कादुवरार् मले-राज-राजनोळ् ॥

तत्पुत्र ॥

नो तीव्रो वडवानलो जळनिधेरद्यापि सद्भावतो-
भर्गाभीळ-ललाट-लोचन वृहद्भानुर्यथा श्रूयते ।
कामोऽनङ्ग इति त्रिलोचन-गळे स्वस्थं च हाळाहळम्
तानेवं हसति प्रताप-दहनस्ते **विष्णु-भूपाळक** ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुर**-वराधीश्वरं **यादव**-कुलाम्बर-द्यु-मणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलपरोल् गण्ड तळकाडु-गोण्ड वीर-भुजबळ **विष्णु वर्द्धन-होय्सल**-राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धियिं प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क्क-तारं-बरं सलुत्तमिरे । तत्-तनयनेन्तप्पनेन्दोडे ।

देवो देव-सहत्त-भोग-निलयस् सम्पूर्ण-लक.(च्च) मो-धवो
देव त्वद्द्विप-राज-राजित-मही-कान्ता-प्रियोऽसौ बभौ ।
देवशत्रु-धा (ध) रापति-प्रकर-कुम्भि-व्रात-कण्ठीरवो
देव श्री-**नरसिंह-भूप** विजय-श्रीश प्रणूतो भव ॥

तत्पादाराधकम् । स्वस्त्यनवरत-विनतानेक-नाक-लोकपाळालीळ-मौलिजाळ-खचित-मणि-गण-मयूखोल्लेखारुणित-जिन-चरण-हेम-सरसिज-सौरभासक्त-चित्त-मत्त-मधुकर । सम्यक्त्व-रत्नाकर । जिनार्च्चना-समय-समुद्गत-काळागुरु-धूप-धूम-स्यामळित-व्योम-रङ्ग । शिष्टेष्ट-जन-वनज-वन-पतङ्ग । गङ्गा-तरङ्ग-जनित-फेन-कुन्देन्दु-हर-हास-सुर-गज-ताराचल-द्युति-विशद-विशाल-दिग्-विवर-वर्त्तित-कीर्त्ति-प्रेम । सङ्ग्राम-भीम । अप्रतिहत-प्रताप-प्रचुर-प्रभाव-प्रसरत्-प्रचण्ड-प्रबळ-प्रस्फुरोदग्र-निशितासि-दोर्-मण्डि-ताडम्बर । अहित-दिशापट्ट संगर-विजय-लक्ष्मी-स्वयम्बर । अघनानळ-दन्दह्यमान-बुध-कुधर-सन्तर्प्पण-सुवर्ण-वर्षं पयोधर । हर-वृषभ-कन्धर । शरणागत-कुभृत्-सन्तान-परिरक्षण-क्षमार्प्प-तरवारि-धारा-वारि-पारावार-पूर । रण-रङ्ग-धीर । समुद्दण्ड-सामन्त-वेदण्ड-तुण्ड-खण्डन-प्रचण्ड-मृगेश्वर । **दुळियेर-पुर**-वराधीश्वर । **शान्तल-देवी-**

गर्भ-पयःपयोधि-सञ्जात-जङ्गम-कल्प-भुज । सामन्त-चट्ट-तनूज । अति-बळ-विरोधि-सामन्त-बळ-बहळ-तमःपटल-पूर्व्व-कुभृन्-मस्तकोदय-बाल-रवि-बिम्ब । गर्व्वि-ताराति-सामन्त-गर्व्व-पर्व्वत-निर्भेदन-तीव्रतर-शम्ब । निज-प्रताप-तरणि-किरण-विघ-टित-पर-बळान्धकार । वैरि-कुल-संहार । निज-भुज······दण्ड-प्रचण्डादि,सामन्त-मद-शुण्डाळ-मस्तक-विदारण-विनोद ललित मृगमदामोद । "मम कान्तं रक्ष रक्ष"-स्वर-चय-कम्पितान्त-विरोधि-सामन्त-सीमन्तिनी-सीमन्त-कुङ्कुम-रेणु-शोणित-पद-पद्म-श्री-केळि-विलास-हृदय-सद्म षोडश याचक-जन-मनोभिलषित-फल-प्रदायक । सन्नद्ध सामन्त-हृदय-सायक । रण-रसिक-चपल-सु-भट-कटक-पेटिका-मौळि-माणिक्य । नीति-चाणिक्य । चतुर-सीमन्तिनी-सम्मोहन-लतान्तकोदण्ड । रिपु-कुल-कळत्र-नळिन-नेत्र-मार्त्तण्ड । नवरस-भरित-मृदु-मधुर-गद्य-पद्यालंकृत-महा-काव्य-रसावेश-सञ्जात-सर्व्वाङ्ग-हर्ष-पुळक । मळेय-मानिनी-निटिल-तट-रचित-मलयज-तिलक । चोळी-कपोळ-मृगमद-मकरिकापत्र । लाटी-रघूटी-कटि-सूत्र । आन्ध्री-नीरन्ध्र-बन्धुर-स्तन-हार । गूर्ज्जर-नितम्बिनी-रत्न-केयूर । गौड-प्रौढ़-कान्ता-मुख-कमळ-चुम्बन-मधुव्रत । अनवरत-स्तुत्य-सत्य-व्रत । कर्ण्णाट-कामिनी-राशि-वदन-मणिमय-मुकुर । स-मद-रिपु-भयङ्कर । गेळङ्क-तळ-प्रहारि । तोडर्-डर मारि । टोङ्कङ्क-बडिव । जग-वनण्डलेव । सितगार-गण्ड रिपु-शरभ-भेरुण्ड । सामन्त-घरणि । बुध-जन-चिन्ता-मणि । अय्यन-गन्ध-वारण । दुरित-निवारण । सकल-लक्ष्मी-कान्त । श्री-चिट्टिद-देव-सामन्त स्थिरं जीयात् ॥

चित्रलते ॥ नलिदुलिदट्टिकोण्डु कवितप्प विरोधि-बलक्के भीतियिम् ।
तेलवोलनेन्नदक्कदिंदु पेर्व्वलवेन्नदे दोः-प्रतापदिम् ।
गिलिगिलि-गर्म्बवाडिसुवनाहवडोळ् कलि विट्टि-देव निन्-।
नेलेगळनङ्के सङ्करदोळाम्पने गाम्पनवार्य-शौर्यनोळ् ॥
होडेव बर-सिडिल कालन ।
कुडु-दाडेय हरन नोसल कण्ण पोडर्प्पम् ।
पडेवुदु समरदोळेडरिद ।
कडु गलिगळ कड्डे विट्टि-देवन सवल ॥

शार्दूलविक्रीडित ॥

बाळं तूगदिरुळ्दुदं कवर्दुकोळ् मद्-वल्लभर् विश्व श्री- ।
ळालोळिङ्गेणेयेक्करेके मुनिवै नीं कारण बेड निन्- ।
नाळापक्के एर्देगेट्टर् एन्दु नुडिगु तद्-वैरि-कान्ता-जनम् ।
हेळेनेम्बुदो बिट्टि-देवनलघु (र्-द्) दोर्-व्विक्रम-क्रीडेयम् ॥

इन्तेनिसि नेगळ्द बिट्टि-देवान्वयवदेन्तेन्दोडे ॥

स्थिर-गम्भीर नोळम्बनग्र-महिषि-श्री-देवियं तद्-द्विषोत्- ।
करमन्तागडे बन्दु बन्दिविडियल् तद्-वैरि-सघातमम् ।
भरदिन्देय्दे तळ-प्रहारदोळे कोन्दन्दित्तन-भूपना- ।
दरदि वीर-तळ-प्रहारि-वेसर धात्री-तळ बण्णिसल् ॥

चाळुक्याहवमल्ल-नृ- ।
पालन कटकदोळे कोन्दु दोड्डङ्कमुमम् ।
लीलेयोळे पडेदनदटम् ।
पाळिसि दोड्डङ्क-बडिवनेम्बी-बिरुदम् ॥

अन्तातन मगनप्पाहवमल्लग पोय्सळेग पुट्टिद सामन्त-भोमनेन्तेन्दोडे ॥

अतिमदराति-सिन्धुर-घटा-निघटोग्र-मृगेन्द्र विष्णु-भू- ।
पतिय मनक्के रागवोदवुत्तिरलातन बिडिनल्लि ताम् ।
सितगर-गण्डन परिदु कोन्ददटिं पडेदं महीपनिम् ।
सितगर-गण्डनेम्ब बिरुदं कलि भीमनिळा-तळाग्रदोळ् ॥
जनक मामन्त-भीम प्रथित-गुण-गणोद्भासि ता चट्टियक्कम् ।
जननि प्रख्यात-माचं समर-जय-वधू-कान्त सामन्त-चट्टङ्- ।
गनुज सामन्त-मल्लं निरुपम-सु-चरित्रान्वित गोवि देवम् ।
विनुत-श्री-जैन-मार्ग-स्थगित-गुण-कलाळापनुयत्-प्रतापम् ॥
मीरि कडाङ्ग होङ्गि मदवेरि चलं तले-दोरि बिल्लनाद्- ।
देरिसि नीवि जे-वोडेदु संगर-रङ्गदोळान्तु पच्चळम् ।
दोरदे निन्दरप्पोडिदनोन्दने वेळ् ववनुण्डवीर्णदिम् ।

कारिदनेम्बवोलहितरं कोल् [ड] वं हुळियेर-चट्टमम् ॥
करवाळघातदिन्दम् रिपु-करि-शीर-सन्दोह-सद्-रक्त-मुक्तोद्- ।
कर-वीर-व्रात-निष्पीडित-निबिड-कबन्धङ्गलिं रक्त-धारा- ।
धर-हस्त-व्यस्त-भूतावळि-पिशित-रसोद्रिक्त-सन्तृसियिं रौ- ।
द्र-रस पोण्मल्के कोन्दं रणदोळहितरं कूडे सामन्त-चट्टम् ॥
आतन तम्मम् ॥
येरेदवर्गित्त चागवदु वित्तेनलीश्वरनद्रि-मध्यदोळ् ।
गिरिजेयपाङ्ग-वीक्षणदोळङ्कुरिसि द्युनदी-प्रवाहदिम् ।
परिकरदिन्दे पल्लविसि दिग्-गज-दन्तवडर्प्पेनल्के भा- ।
सुरवेने गोवि-देवन यशो-लते पर्व्विदुदेय्दे लोकमम् ॥
घन-दर्प्पोग्गद्ध-बद्ध-भ्रुकुटि-कुटिल-रोषातुरावेश-शात्रर् ।
जनितोद्दण्ड-प्रतापानळ-बहळ-शिखारूपरेम्बन्ददिन्दम् ।
मोनेयोळ् मारान्त-वैरि-प्रबळ-बळ-पयोजात-हेमन्तनाशाग्- ।
जन-दन्ताळिङ्गितेन्दु-द्युति-विशद-यशो-लक्ष्मणं गोवि-देवम् ॥
मत्तं सामन्त-चट्टन सतियेन्तप्पळेन्दोडे ॥
मरकत-वर्ण्णम तरुण-वेणु-तनु-च्छवियिन्देवक्त्रमम् ।
सु-रुचिरवप्प मुत्तेनिप दन्त-चयङ्गळझेन्दु-कान्तियिन्- ।
दुरग-सहत्त्ववप्प कचदिं हरिनीळबनोप्पडिन्दे होल्- ।
तिरे सरि रत्नदोन्देणेगे बन्दळु शान्तळे-नारि रूपिनोळ् ॥
स्थिर-गम्भीर-उदात्त-सद्-गुण-सदाचारत्वमेम्बी-गुणोन् ।
नतिय ताळ्दिद् महेश्वरागम-जिन-श्री-धर्म्म-सद्-वैष्णवा- ।
श्रित-बौद्धागमवेम्ब नाल्कु-समय-व्यापारम मार्प्प-स- ।
गत-चातुर्य्यदे कान्ते-शान्तलेगे पेळारु समं बप्परे ॥
मत्तम् ॥
पोरदाळ्दं नरसिंह-देव-महिपं सामन्त-गोविन्दनिम् ।
हिरियं चट्टमनेयनात्म-जननि प्रख्याते सातब्बे मन् ।

दर-धैर्य्यं विभु माचि-देव हिरियय्यं मुत्तेयं भीमनिम् ।
दोरेमारेन्देले निन्चलुं पोगळवुदी-श्री-विष्णुसामन्तनम् ॥
रजताद्रि-प्रतिम-यशम् ।
निजवेनलेसदिर्द्द बिट्टि-देवङ्गिन्ती- ।
भुज-बळ-नृसिंह-महिपम् ।
गज-भयकेन्दु हेग्गणगेरेयं कोट्टम् ॥

इन्तु स्वस्ति श्री मूल-संघद देशिय-गणद पुस्तक-गच्छद कोण्डकुन्दान्वयद श्री-चान्द्रायण-देवर गुड्डम् । श्रीमन्-महा-सामन्त-गोचि-देवं तन्न सति महा-देवि-नायकितिगे परोक्ष-विनेयवागि माडिसि गुणचन्द्र-सिद्धान्त-देवर शिष्य-रप्प श्री-माणिकनन्दि-सिद्धान्त-देवर कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वक माडि कोट्ट हेग्गेरेय चेन्न-पार्श्व-देवर बसदिय । अष्टविधार्च्चने-ऋषियराहार-दानक्केन्दु शान्तल-देविय सु-पुत्रनप्प सामन्त-बिट्टि-देवम् तनगे श्रेयोऽर्थवागि १०८३ चाळुक्य-विक्रम-संवत्सरद जेष्ट-शुद्ध-पञ्चमी-सोमवार सङ्क्रमणदन्दु बसदिगे बिट्ट सवणुगेरेय सीमा-सम्बन्धवेन्तेदडे (यहाँ सीमाओं और दानकी विगत दी हुई है) इन्ती-धर्म्मंव प्रतिपालिपगक्कु जय-श्रीयु शुभ-मङ्गळम् ॥ श्री श्री श्री (वही अन्तिम श्लोक) ।

उचित-पदालङ्कारम् ।
प्रचुर-रसं नेगळलिन्तु जिन-शासनमम् ।
रचियिसिर्द हर-हास- ।
रुचिर-यश देवभद्र-मुनिपोत्तमम् ॥
मेरेव-बुधाळिगाश्रित-जनक्कनुरागदोळित्तु मत्तवा- ।
दरिसुव दानदिन्दे सुर-भूजवनेणिपळेन्दे वण्णिकुम् ।
परम-जिनेन्द्र-पाद-कमळार्च्चन-निर्भर-भक्ति-युक्तेयम् ।
हरिहर देवियं नेगळ्द शासन-देवियनी-धरा-तळम् ॥

(बायीं ओर) स्वस्ति श्रीमन्-महा-सामन्त बल्लय्य-नायकनु हेग्गेरेय बस दिगे स्थळ-वृत्तियागि हिरिय-केरेय केळगे बिट्ट गद्दे स ६ बेद्दले मत्तरु १

[जिन शासनकी प्रशंसा। पृथ्वीसे चार अङ्गुल ऊपर आकाशमें चलनेवाले कोण्डकुन्द नामके [आचार्य] जिन शासनमें हुए, इस बातका उल्लेख।

स्वस्ति। जिस समय, (अपने चालुक्य पदों सहित), भूवल्लभ-राय- पेर्म्माडि-देव अपने कल्याणके निवासस्थानमें थे और सप्तार्द्ध-लक्ष-भूमिपर शासन कर रहे थे :—

तत्पादपद्मोपजीवी,—उसका पुत्र (प्रशंसा सहित) विष्णु-भूपालक था। जिस समय, (अपने पदों सहित), विष्णुवर्द्धन-होय्सळका राज्य चारों और प्रवर्द्धमान था, उसका पुत्र (प्रशंसा सहित) नरसिंह-भूप था।

तत्पादाराधक हुळियेर-पुरवराधीश्वर, शान्तल-देवीकी कुक्षिसे उत्पन्न, सामन्त-चट्टका पुत्र बिट्टि-देव-सामन्त था। उसके पराक्रमकी प्रशंसा। उसकी उत्पत्तिका वर्णन :—स्थिरगम्भीर (वीर-तळ-प्रहारी तथा दोड्डङ्क-त्रडिव ये दो उसके विरुद्ध थे)-आहवमल्ल-सामन्त-भीम; इसके चार लड़के हुए :—माच, सामन्त-चट्ट, सामन्तमल्ल, और गोवि-देव। सामन्त-चट्टकी पत्नी शान्तल देवी थी। इन्हीं दोनों का पुत्र विष्णु-सामन्त या बिट्टि-देव था। इसी बिट्टि-देवको राजा नरसिंहने हाथियोंके खर्चके लिए हेण्णगेरे दिया था।

स्वस्ति। श्री-मूल-संघ देशिय-गण पुस्तक-गच्छ, तथा कोण्डकुन्दान्वयके गृहस्थ-शिष्य महा-सामन्त गोवि-देवने, अपनी पत्नी महादेवि-नायकितिकी मृत्युकी स्मृतिमें हेग्गेरेकी चन्न-पार्श्व बसदि बनवायी थी। अष्टविध पूजनके लिये, ऋषियों के आहारके लिये,—गुणचन्द्र-सिद्धान्त-देवके शिष्य माणिक्नन्दि-सिद्धान्त-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक,—शान्तलदेवीके पुत्र सामन्त बिट्टि-देवने, अपनी समृद्धिके लिये, (उक्त मितिको), (उक्त) भूमि-दान किये; काली मिर्च, अखरोट और पानोंके गट्ठों पर जो दाम आये वे भी दिये।

तथा हेग्गडे जक्कणने अपनी सास महादेवी-नायकितिकी स्मृतिमें, बसदिके लिये (उक्त) भूमियाँ प्रदान कीं। शाप।

उचित शब्दों और रस-बहुलताके लिये, यह जिन शासन (लेख) प्रसिद्ध देवभद्र-मुनिपके द्वारा रचा गया था।

हरिहर-देवी[1] की प्रशंसा।

स्वस्ति। महा-सामन्त वल्लय्य-नायकने (उक्त) भूमि हेग्गेरेकी बसदिके लिये 'स्थल-वृत्ति' के रूपमें दी।]

[EC, XII, Chik-nayakan halli tl., no. 21]

३५७-३५८

नडोले (Nadole) (Raj Putana)—संस्कृत

[सं० १२१८=११६१ ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालुम पड़ता है।

[EI, IX, no 9, A, T. L A.]

and [EI, IX, no 9, B, T. L. A.]

३५९

खजुराहो—संस्कृत।

[यह लेख अजितनाथ भगवान के चरण-पाषाण पर अङ्कित है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, L. 69, R a]

३६०

महोबा;—संस्कृत।

[सं० १२२० = ११६३ ई०]

"संवत् १२२०, ज्येष्ठ सुदि ८ रवौ साधु देव ग नतस्य पुत्र रत्नपाल प्रणमति नित्यम्॥"

---

१. विप्तूरके शिलालेख नं० ३८३, ३८४ देखो।

इस लेख पर हाथी का चिह्न है जिससे जाना जाता है कि यह प्रतिमा अजितनाथ की रही। इसमें दो पंक्तिया हैं, जिसमें काल और पूजक का नाम दिया हुआ है

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 74 a]

३६१

महोबा,—संस्कृत ।

[बिना काल-निर्देशका]

१. सांगम्य समा तत्पुत्र साधु श्री रत्नपाल। तस्य भार्या लाखा। पुत्र कीर्त्तिपाल

२. तथा अजयपाल। तथा वस्तपाल। तथा त्रिभुवनपाल। प्रणमति नित्यम् (म)-

३. जितनाथाय

[इस लेख में पूर्व लेख के पूजक रत्नपाल नाम, उसकी भार्या और चार पुत्रोंके नाम सहित, दिया हुआ है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 74, t.]

३६२

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक १०८४=११६३ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३६३

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३६४

हेग्गेरे;—कन्नड़।

[शक १०८५=११६३ ई०]

[हेग्गेरेमें, उसी बस्तिमें दूसरे पाषाण पर]

योऽर्हन् सोऽव्यात् स्वस्ति शक-वर्ष स १०८५ सुभानु-संवत्सरद आषाढ़-शुद्ध १० बुधवारदन्दु स्वस्ति श्री मूल-संघद देशियगणद पुस्तक-गच्छद कोण्डकुन्दान्वयद श्री-माणिक्यनन्दिसिद्धान्त-देवर शिष्यरप्प मेघचन्द्र-भट्टारक-देवरु सन्यसनविधियिं समाधि-वोडेदु स्वर्गापवर्ग-प्राप्तरादरु

[जो अर्हत् हो वह हमारी रक्षा करे। स्वस्ति। (उक्त मितिको), श्री-मूलसंघ देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके माणिक्यनन्दि-सिद्धान्त-देवके शिष्य मेघचन्द्र-भट्टारक-देव ने, सन्यसनकी विधिपूर्वक स्वर्गप्राप्त कर पुन-र्जन्मसे मुक्ति प्राप्त की।]

[E C, XII, Chik-Nayakanhalli tl., no 23.]

३६५

महोबा,—संस्कृत-भग्न।

[सं० १२२१ = ११६४ ई०]

सं० १२२४ आषाढ सुदि २ रवन् (रवौ) ॥ (कालञ्जराधिपति श्रीमत् परमार्द्दिदेवपाद्-नाम प्रवर्द्धमान कल्याण नि (वि) जय राज्ये।

यह लेख अधूरा है। परमार्द्दिदेवके राज्यकालाका है। इसमें एक लम्बी पंक्ति है।

[A Cunningham, Reports, XXI, p. 74, a.]

---

१. लेखमें संवत् १२२४ है, परन्तु A. Guerinot में सं० १२२१ दिया हुआ है। किसकी भूल है सो छानबीन करनी चाहिये। हमारी समझ से A. Guerinot की ही भूल है, गल्तीसे '४' की जगह '१' छप गया है।

३६६

बेल-होङ्गल (जि० बेलगाँव);—कन्नड।

तारण संवत्सर = शक (१०८६=११६४ ई०)

बेल-होङ्गलका मन्दिर जो दीवालोंसे परे शहरकी उत्तर दिशामें अवस्थित है, इस समय लिङ्ग की वेदी बना हुआ है, लेकिन मूलतः वह एक जैन इमारत मालूम पड़ती है। इसमें इसी मन्दिरसे सम्बन्ध रखनेवाले दो शिलालेख हैं।

उनमेंसे प्रस्तुत लेख दूसरा है और पुरानी कन्नड़ लिपि और भाषामें है। इसमें कुल ५१ पंक्तियाँ हैं और प्रत्येक पक्तिमें करीब ३६ अक्षर हैं। यह लेख एक पाषाणमयी साफ-सुथरी चट्टान पर लिखित है। यह चट्टान शहर के बाहर झाड़ियोंमें पड़ी हुई थी. इसको जे. एफ. फ्लीटने मन्दिरके सामने बायीं ओर रखवा दी थी। पाषाणके सिरे पर ये चिह्न हैं —मध्यमें पद्मासनस्थ जिनेन्द्र प्रतिमा; इसके दाहिनीं ओर एक खड्गासनस्थ प्रतिमा, इसके बिल्कुल सामने ऊपर चन्द्रमा है; तथा इसके बायीं ओर एक गाय और बछड़ा हैं, इनके ऊपर सूर्य है। पाषाणका लेख इतना मिटा हुआ है कि इसका प्रतिलेख (Transcription) नहीं दिया जा सकता है। यह स्पष्टतः एक रट्ट (राष्ट्रकूट) शिलालेख है, जैसा कि इसके कार्तवीर्य नामके एक राजाके उल्लेखसे मालूम पड़ता है। इसका काल ३६ वीं पंक्तिमें दिया हुआ है और वह शक वर्ष १०८६ (ई० ११६४-६५), तारण संवत्सर है। इस लेखमें वर्णित कार्तवीर्य जे. एफ. फ्लीटकी रट्टों की सूचीमें तीसरे नं० का है। आगे लेखमें एक जैन बसदिका जिक्र आता है, और संभवतः उसी भवनका उल्लेख करता है जिससे कि यह अभी सटा हुआ है और इसीको दान करनेका संकेत है।

[IA, IV, p. 116, no 2, a]

३६७

अङ्गडि—कन्नड भग्न।

वर्ष तारण [= ११९४ ई० (लू० राइस) ।]

[अङ्गडि (गोणीबीडु परगना) में, पाँचवें पाषाणपर]

... ...श्री स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारक यादवकुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेराज-राज मलेपरोळु गण्ड गण्ड-भेरुण्ड कदन-प्रचण्डनस्हाय-शूर सनिवार-सिद्धि गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदङ्कराम... ... ...वीर-विजय नारसिंह-देवनुम् ॥ तारण-संवत्सरद चैत्र-सुद्ध... ... ... अन्दु सोसेवूर पट्टणसामि नागि-शेट्टिय... ... ...मय्यनुं ... ... माडिद बसदि इदके कोट्ट... ... ...विट्ट दत्ति ।

[(अपनी उपाधियों सहित) वीर-विजय-नरसिंह-देवने (उक्त मितिको) उस 'बसदि' के लिये जिसे सोसवूर के 'पट्टण-सामि' नाग सेट्टि [के पुत्र]... मय्यने बनवायी थी, दान दिया ।]

[EC, VI, Mudgere tl., no 15.]

३६८

गिरनार—संस्कृत ।

—[शक १२१२-११६९ ई०]—

यह लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम पड़ता है ।

[Revised Lists art. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 359, no 27, t and tr.]

३६९

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

नं० ३६८ के अन्तका लेख है। उसीका अन्तिम भाग है।

[op. cit. p. 369, no 30, *t* and tr.]

३७०

बघेरा़ज (मालवा);—संस्कृत।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

मन्दिरके पूर्वकी ओर

यस्य स्वच्छतुषारकुन्दविशदा कीर्तिर्गुणानां निधिः

श्रीमान् भूपतिवृन्दवन्दितपदः श्रीरामचन्द्रो मुनिः।

विश्वद्माभृद्खर्वशेखरशिखा सञ्चारिणी हारिणी

उर्व्यां शत्रुजितो जिनस्य भवनव्याजेन विस्फूर्जति ॥१॥

रामचन्द्रमुनेः कीर्तिं सङ्कीर्णं भुवनं किल।

अनेकलोकसङ्घर्षाद् गता सवितुरन्तिकं ॥

संवत् १२२३ वर्षे भाद्रपदवदि १४ शुक्रवार।

लेख स्पष्ट है।

[JASB, XVIII, p. 950-952, no 1, *t* and tr.]

३७१

बघेराज मालवा; संस्कृत।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

मन्दिरके दक्षिणकी ओर

ॐ नमो वीतरागाय॥

आसीद्यः कलिकालकल्मषकरिध्वंसैककंठीरवो
वेनद्क्ष्मापतिमौलिचुम्बितपद यो **लोकनन्दो मुनिः**
शिष्यस्तस्य समस्तसङ्घतिलकः **श्रीदेवनन्दोमुनि**
धर्मज्ञानतपोनिधिर्यतिगुणग्राम सुवाचा निधिः ॥१॥
वंशे तस्मिन् विपुलतपसां सम्मतः सत्त्वनिष्ठो
वृत्तिं पापां विमलमनसा त्यज्यविद्याविवेकः ।
रम्यं हर्म्यं सुरपतिजितः कारितं येन विद्या
शेषा कीर्त्तिर्भ्रमति भुवने **रामचन्द्रः** स एषः ॥

संवत् १२२३ वर्षे ।

स्पष्ट है ।

[JASB, XVIII, p. 951-952, no 2, t. and tr.]

३७२

कम्बदहल्लि—कन्नड़ ।

[शक १०८६=११६७ ई०]

[कम्बदहल्लि (बिण्डिगनवले प्रदेश) में, जैन बस्तिके रङ्ग-मण्डपमें]

स्वस्ति श्रीयुतमूलसंघमदु ता शङ्घं गणं देसियम् ।
पोस्थज् गच्छमदन्वयं बेळे समं ता कोण्डकुन्दान्वयम् ।
भू-स्तुत्यं **इनसोगे**-दिव्य-मुनिगं पादार्चनक्कं कळा-
भ्यस्तरगं निज-वंशजर्गंमिदु ता श्री-**पार्श्व**-दान-स्थळम् ॥
धरे तन्नं बण्णिसल् बिण्डिगनविलेयोळ् आ-**नेम-दण्डेश**-दिक्-कुञ्-
जरनर्थ्यं पेट्ट-ताय् **मुद्दरसि** विमळ-गङ्गान्वय-ख्यातेयागल् ।
दोरेवेत्तो-**पार्श्व**-देव-प्रभु कलि-युग-मामाई-गेहादि-जीर्णो-
द्धरणं गेय्दावग सोभिसे सोवे-वेसनं गेय्सिदं पुण्य-पुञ्जं ॥
सले देव-क्षेत्रदोळ् **बिण्डिगनविलेयोळिर्प्पं**तु-नाल्-कण्डुग नीर्-
णेलनन्तव्यत्तर बेद्दलेयनति-व्रळं नेम-मन्त्रीश-पुत्रम् ।

कुलकं ता पार्श्वन्देवं सले कलि-युग-भोमार्हं-सत्-पूजेगोल्टी-
ये लसद्वंश्यजे दिव्य-व्रति-समितिगे विद्यार्थिगुल्गाइदित्तम् ॥
शक-वर्ष १०८६ नेय सर्व्वजितु-संवत्सरद माघ व० ५ शुक्रवार-
दन्दु पार्श्व-देव चतुर्विध-दानकें बिट्ट दत्ति ॥

[यही स्थान है जो पार्श्वने श्री मूलसघ देशिय-गण, पोस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके इनसोगेके दिव्य मुनिके चरणोंकी पूजाके लिये, विद्वानोंके लिये तथा निजवंशजोंके लिये दिया था।

पार्श्वदेव-प्रभुने,—जिनके पिता नेम-दण्डेश थे और माता मुद्दरसि थीं जो विमल गङ्ग वंशमें प्रख्यात थीं,—बिण्डिगनविलेके जैन मन्दिरको सुधरवाया, और उसके लिये कुछ जमीन अपने वंशजोंके लिये, दिव्य व्रतियोंके लिये, और विद्यार्थियोंके उपयोगके लिये दी।]

[EC, IV, Nagmangala Tl. No. 20]

३७२

वन्दूर—संस्कृत और कन्नड़

[शक १०६०=११६८ ई०]

[बन्दूर (जावगल्लु परगने) में, जैन-बस्तिके स्थलपर एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
जयति सकलविद्यादेवतारत्नपीठं
हृदयमनुपलेपं यस्य दीर्घं स देव ।
जयति तदनु शास्त्रं तस्य यत् सर्व-मिथ्या-
समय-तिमिर-हारि ज्योतिरेकं नराणाम् ॥
श्री-कान्तर्य्यदु-कुळ-र
रत्नाकरदोळ् कौस्तुभादिगळ्-वोल् पलरं ।

लोकोपकार-परिणत- ।
रेकीकृत-सकल-राज-गुणरप्पिनेगम् ।
सळनेम्बनागे यादव- ।
कुळदोळ् पुलि पाये कण्डु मुनि पुलियं पोय् ।
सळ एने पोय्दुदरिं पोय्- ।
सळ-वेसरवनिन्दवागे तद्वंशजरोळ् ॥
विनयं प्रतापमेम्बी- ।
जननाथोचित-चरित्र-युगदिं जगमं ।
जन-नयनवेनिसि नेगळ्द ।
विनयादित्यं समस्त-भुवन-स्तुत्यम् ॥
आतङ्कति-महिमं हिम- ।
सेतु-समाख्यात-कीर्त्ति सन्मूर्त्ति-मनो- ।
जातं मर्दित-रिपु-नृप- ।
जातं तनुजातनादनेरेयङ्ग-नृपम् ।
बल्लिदरवनीपतिगळो- ।
ळेल्लं धर्म्मार्त्थ-काम-सिद्धि-योलवनी- ।
वल्लभरातन तनयर् ।
ब्बल्लाळं बिट्टि-देवनुदयादित्यम् ॥
मूवररुगळोळं ता ।
भाविसे मध्यमनदागियु नृप-गुण-सद्- ।
भावदिनुत्तमनादम् ।
भावि-भवद्-भूत-जिष्णु विष्णु नृपालम् ॥
मलेयं साधिसि माण्डने तळवनं काञ्ची-पुरं कोयतूर् ।
म्मले-नाडा-तुळु नाडु नीलगिरिया-कोळालना-कोङ्गनं ।
गलियुच्चंगि-विराट-राज-नगरं वल्लूरिवेल्ल भुजा- ।
बलदिं लीलेये साध्यवादुदेणेयार् ब्विष्णु-क्ष्मापाळनोळ् ॥

अन्तेनिसिद विष्णु-मही- ।
कान्तन तनयं नयानुरूपोपायम् ।
सन्तत-भुज-प्रतापा- ।
क्रान्त-परं **नारसिंह**नाहव-सिंहम् ॥
आ-**नारसिंह**-नृपतिय ।
मानस-कळ-हंसे पट्ट-**माडेविगे**-धा- ।
त्री-नुतेगेचल-**देविगे** ।
नाना-गुण-गणद कणिगे चिन्तामणिवोल् ॥
सकळ-कळा-परिपूर्ण ।
सकळोर्व्वी-नयन-सुख-दन-कळङ्कं तान् ।
अ-कुटिळनपूर्व्व-नव-मी- ।
नकरं **बल्लाळ-देव**नुदयं गेय्दम् ॥
विनय-श्री-निधियं विवेक-निधियं ब्रह्मण्यनं पूर्ण-पु- ।
ण्यननुद्दाम-यशोत्थियं जित-जगत्-प्रत्यर्थियं सर्व-सज्- ।
जन-सस्तुत्यननुद्भवद्-वितरण-श्री-**विक्रमादित्य**नं ।
मनुजेशर् मलेराज-राजननदेन्**बल्लाळ**नं पोल्वरे ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं । **द्वारावतीपुर**वराधीश्वरम् । **यादवा**न्वय-सुधा-वार्धि-वर्द्धन-माकर-सान्द्र-चन्द्रम् । विमत्राधरीकृतामरेन्द्रम् । वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसादम् । विरचित-वीर-वितरण-विनोदम् । रिपु-राज-कदली-षण्ड-खण्डन-प्रचण्ड-मद-वेदण्ड । मलपरोळ्-गण्ड-मण्डलिक-गिरि-वज्र-दण्ड । गण्ड-भेरुण्ड । रण-रंग-धीर । जगदेक-वीरक-नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम् । तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि - हुलिगेरे-हलसिगे - बनवसे-हानुङ्गल् गोण्ड भुज-बल वीर-गङ्ग-प्रताप **होय्सळ-बल्लाळ-देवं** दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तदन्वय-गुरु-कुळ-क्रममदेन्तेने ।

श्रीमद्-**द्रमिळ**-सङ्घेऽस्मिन्नन्दि-संघेऽस्त्यरुङ्गळ ।
अन्वयो भाति योऽशेष-शास्त्र-वारासि-पारगैः ॥

श्री-वर्द्धमान-स्वामिगळ धर्म्मतीर्थं प्रवर्त्तिसुवल्लि गणधररेनिसिद **गौतम-स्वामि**गळिन्दं। **भद्रबाहु-भट्टारक**रिन्दं **भूतबळि-पुष्पदन्त-स्वामि**गळिन्दम् **एकसन्धि-सुमति-भट्टारक**रिन्दम्। **समन्तभद्रस्वामि**गळिन्दम्। **भट्टाकलंकदेव**रिन्दम्। **वक्रग्रीवाचार्य्य**रिन्दं। **वज्रणन्दि-भट्टारक**रिन्दम्। **सिंहणन्द्याचार्य**रिन्दम्। **पर-वादिमल्ल-श्रीपाळ-देव**रिन्दम्। **कनकसेन-श्रीवादिराज**रिन्दम्। **श्री-विजय-देव**रिन्दम्। **श्री-वादिराज-देव**रिन्दम्। **अजितसेन-पण्डितदेव**रिन्दम्। **मल्लिषेण-मळधारि-स्वामि**गळिन्दनन्तरम्।

तमगाज्ञा-वशमादुद्धत-महीभृत्-कोटि वम्मिन्दे त्रिणप।
अमर्द्दत्ती-धरेगेय्दे तम्म मुखदोळ् पट्-तर्क्क-वाराशि-त्रि-।
श्रममापोषन-मात्रमादुदेनलिं मातेनगस्त्य-प्रभा-।
वसुमं कीळ्पडिसित्तु पेम्पिनेसर्क **श्रीपाल-योगीन्द्ररं**॥

अवरग्र-शिष्यर्॥

श्रीपाळ-त्रैविद्य-विद्या-पति-पद-कमलाराधना-लब्ध-बुद्धिः।
सिद्धान्ताम्भोनिधान-प्रविसरदमृतास्वाद-पुष्ट-प्रमोदः।
दीक्षा-शिक्षा-सु-रक्षा-क्रम-कृति-निपुणः सन्ततं भव्य-सेव्य।
सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्ज्जगति विजयते **वासुपूज्य-व्रतीन्द्रः**॥

अवर गुड्डुगळ् रत्न-त्रय-समन्वितर् **ब···-देव**नानन वधु **सावियक्कम्**॥

अवर्गे तनूभवं जित-मनोभव-रूप-नपार-पौरुषम्।
विविध-कळा-विळास-भवनं प्रभु **बेळ्ळिळय-दासि-सेट्टि** भू-।
भुवनमनेय्दे रक्षिसुव दानद-धर्म्मद पेम्पिनिं सुधा-।
र्ण्णवदेणेयप्प कीर्त्तियनुपार्ज्जिसदं विबुधैक-बान्धवम्॥

पडेवं सद्-धर्म्म-मर्य्यादेयोळे परदु-गेय्दर्थमं न्यायदिन्दम्।
पडेदर्थं देवता-पूजेगे बसदिगे शिष्टेष्ट-दानक्के निच्चम्।
कुडे भर्त्तं तन्न भाग्यं तव-निधियेने नीळ्दुणिम कैगणमे पेम्पम्।
पडेदं देसं वियन्मण्डप-कळित-यशःकल्पवल्ली-विलासम्॥

आतन सति **वोकियक्क** ॥ अवर सोदरळियन्दिर् **हेग्गडे मादिराजनुं संकर-सेट्टियरुं** ॥ आ-वेळ्ळिय-दासि-सेट्टि दोरसमुद्रदल् माडिसिद होय्सळ-जिनालयक्के बिट्ट **वन्दवुरदल्लि** माडिराजनुं सङ्कर-सेट्टियुं माडिसिद पार्श्व-देवर्गे बसदियं **पुष्पसेन-देव**र्म्माडिसिदरादेवरष्ट-विधार्च्चनेगं ऋषिगळाहारदानक्कं जीर्णोद्धार-क्कनागि **वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरुं** अवर शिष्य **पुष्पसेन-देवरुं माडि-राजनुं संकर-सेट्टियुं** समस्त-प्रजे-गावुण्डुगळुं सरागदिन्दा-चन्द्रार्क्क नडेवन्तागि शक-वर्षं १०९० सोन्दनेय सर्व्वधारि-संवत्सरदुत्तरायण-संक्रमण-ग्रहण-व्यतीपातदन्दु धारा-पूर्व्वकं बिट्ट तळ-वृत्ति ॥ (आगे की ६ पंक्तियोंमें दानकी विशेष चर्चा है) सुङ्कद हेगडेगळ् बिट्ट नन्दा-दीविगेगे कै-गाण वोन्दु इन्तु वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर्त्तम्म शिष्य **वृषभनाथ-पण्डित**र्गिनितुवं धारा-पूर्व्वकं कोट्टर् (वे ही अन्तिम वाक्या-वयव और श्लोक)

त्रैविद्य-देव-शिष्यम् ।
देवार्च्चन-दान-धर्म्म-निरतं सततम् ।
देवव्रत-परिशुद्धम् ।
भू-विदितं **पुष्पसेन मुनि**-जन-विनुतम् ॥

[सर्व प्रथम जिन शासनकी प्रशंसामें दो श्लोक हैं। पहलेकी ही तरह होय्सल राजाओंकी उन्नतिका वर्णन। विष्णुके विषयमें कहा गया है,—मलेको अधीन करके क्या वह चुप रहा ? तळवन, काञ्चीपुर, कोयटूर, मलेनाड्, तुळु-नाड्, नीलगिरि, कोळाळ, कोङ्गु, नङ्गलि, उच्चंगि, विराट्-राजा का नगर, वल्लूर,—इन सबको अपने भुजाबलसे, लीलामात्रमें जीत लिया।

जिस समय (अपनी सर्व उपाधियों सहित), होय्सळ वल्लाल-देव दोरसमुद्रमें निवास कर रहे थे —उसके 'गुरुकुल' की परम्परा निम्नभाँति थीः—

द्रमिलसंघान्तर्गत नन्दिसंघमें एक अरुङ्गळ-अन्वय है, उसमें बड़े-बड़े शास्त्र-पारग विद्वान् आचार्य हो गये हैं। वर्द्धमान स्वामीके तीर्थमें क्रमसे इन लोगोंके द्वारा धर्मतीर्थका विकास हुआ,—गणधर गौतम स्वामी, भद्रबाहु-भट्टारक, भूतबलि

और पुष्पदन्त-स्वामी, एकसन्धि सुमति-भट्टारक, समन्तभद्र स्वामी, भट्टाकलंक-देव, वक्रग्रीवाचार्य्य, वज्रनन्दि-भट्टारक, सिंहनंद्याचार्य, परवादि-मल्ल श्रीपाल-देव, कनकसेन श्री-वादिराज, श्री-विजय-देव, श्री-वादिराज-देव, अजितसेन-पण्डित-देव, और मल्लिषेण-मलधारि-स्वामिः तदनन्तर श्रीपाल-योगीन्द्र हुए (इनकी प्रशंसा)। इनके मुख्य शिष्य वासुपूज्य-व्रतीन्द्र हुए (इनकी प्रशसा)।

इनके गृहस्थ-शिष्य, रत्नत्रयके समान, ब···देव, उसकी पत्नी सावियक्क, और इनका पुत्र (प्रशंसा पूर्वक) वेल्लिमें दासि-सेट्टि थे। इसकी पत्नी चोकियक्क थी। इन दोनोंकी बहिनके लड़के हेग्गड़े मादिराज तथा सकर-सेट्टि थे।

चन्दवुरमें मादिराज और संक-सेट्टिने पार्श्व-देवके लिये एक मन्दिरका निर्माण कराया, और पुष्पसेन-देवने पार्श्व-देवकी मूर्त्ति बनवायी। उन देवकी अष्टविध पूजनके लिये, मुनियोंको आहार देनेके लिये, तथा मन्दिरकी मरम्मतके लिये,— वासुपूज्य सिद्धन्ति-देव, उनके शिष्य पुष्पसेन देव, मादिराज, संकर-सेट्टि, तथा सभी प्रजा और किसानोंने (उक्त मिति को) ग्रहणके समय, ३२ बिलस्तके एक डण्डेसे नापकर भूमि-दान किया (भूमिका वर्णन)। 'चुङ्क' (या चुङ्गी)के हेग्गडेने हमेशा जलनेके लिये एक हाथकी तेलकी चक्की दी।

इस तरह यह सब वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवने अपने शिष्य वृषभनाथ-पण्डितको सौंप दिया। हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक। पुष्पसेन-मुनिकी प्रशंसा।]

[EC. V, Arsikere Tl., No. 1.]

३७४

बिजोली;—संस्कृत।

[सं० १२२६ = ११७० ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय का मालूम होता है।

[JASB, LV, p. 27–32, Tr ; p. 40–46, t.]

३७५

मूडहल्लि;—संस्कृत तथा गुजराती ।

[कालनिर्देश नहीं, पर सम्भवतः लगभग ११७० ई० (लू. राइस)]

[मूडहल्लि (हर्दिनाड प्रदेश) में, चन्न-केशवके मन्दिरकी दीवाल-स्तम्भके ऊपर]

... ... अति पूजित-यति वर्द्धमान अपश्चिम-तीर्थनाथ ममात्मना दिश... ...पततं... ... ...

श्रीमद्द्रमिल-संघेऽस्मिन्नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गलः ।

अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि पारगैः ॥

(दूसरी तरफ)... ... ... अजितसेन-देव-मुनिपो ह्याचार्यतां प्राप्तवान् ।

[इस लेखमें द्रमिलसंघान्तर्गत नन्दिसंघके अरुङ्गल अन्वयकी तारीफ है । इस अन्वयमें प्रायः सभी आचार्य या मुनि 'निश्शेष-शास्त्र-वाराशि-पारग' थे ।... ... अजितसेन-देव मुनिने आचार्य पदवी प्राप्त की ।]

[EC, III, Nanjangud Tl., No. 133.]

३७६

हुल्लीगेरी—संस्कृत

[बिना काल-निर्देशका, पर संभवतः लगभग ११७० ई० (?)]

[हुल्लीगेरीपुर (कुन्देगुल्डी ताल्लुक) में, बसन मन्दिर के सामनेके स्तम्भ पर]

श्रीम... ...सर्व्वं ने...-...रं सायया मनेय मण्डुद्या... ...नित्य पूजा...ण

आसीत् संयमिना पृथ्व्या होमेनान्यन्महातप ।

तच्छंशिना शील-स्तम्भो जिनचन्द्रेण निर्मित ॥

[इस पृथ्वी पर पशु-यज्ञके सिवाय संयमीके द्वारा प्रत्येक महातप विद्यमान था; इसी बातको सर्वविदित करानेके लिये जिनचन्द्रने यह पाषाण-स्तम्भ खड़ा किया था ।]

[EC, III, Mandya., Tl, No. 34.]

३७७

तेवरतेप्प—संस्कृत तथा कन्नड़।

११७१ ई०

[तेवरतेप्पमें, वीरभद्र मन्दिरके सामनेके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिन-शासनम्॥
सागर-वारि-वेष्टित-समस्त-धरा-रमणी-घन-स्तना-।
भोग विदेम्बिन विदित-विस्तृत-शारताराग्रहारदिम्।
नागरखण्ड-पत्र-परिवेष्टन्दिम् जन-नेत्र-पुत्रिका-।
रागमनित्तु माण्दुदे मनस्-सुख-दं बनवासि-मण्डळम्॥
बळसिद नन्दनावळिगळिं शुक-सङ्कुळदिं पिकाळियिम्।
बळेदेरगिर्द्द शाळि-वनदिं भ्रमराळियिनित्तु-वाटियिम्।
वि ळिगोळदिं लता-भवनदिं कमळाकरदिं कुमुद्वती-।
कुळदिनिदेम् मनङ्गोळिपुदो सततं बनवासि-मण्डळम्॥
अदनाळ्वनखिळ-रिपु-नृप-।
मद-मर्द्दननर्स्थिगर्त्थम पदेदीवम्।
पद-नत-रत्ना-दत्तम्।
विदित-यशं सोवि-देव-भूतळनाथ॥
आ-कादम्ब-कुळ-तिळकन विक्रम-प्रक्रमवेन्तेन्दडे॥
अदटम्मेंच्चिक्के वीरर्व्विहदनुळिदु कुम्बिक्के विद्विष्ट-भूपर्।
म्मदवं बिदिक्के शेषाद्वतमनोसेवरोतिक्के सर्व्वस्वमं ब-।
ळ्ळिदवं तन्दिक्के मारान्तवनिप-सतियर् कण्ण-नीरिक्के पूण्डि-
क्किदना-चङ्गाळ्व-धात्रीपतिगे निगळवं सोवि-देव-क्षितीश॥
(क)॥ मदवदरातिथं तविसलग्गळ-गण्ण कदम्ब-रुद्रनेम्-।

बुदे पेसरुग्र-मण्डळिक-गण्डर दावणियेम्बुदे दिटक्क् ।
अदिरदराति- मण्डलिक-भैरवनेम्बुदे सोवि-देवनेम्- ।
बुदे निगळंकमल्ल-नृपनेम्बुदे सत्य-पताकनेम्बुदे ॥
क ॥ पर-नृप-बन्धकने गण्-।
डर दावणि कलिये मण्डळिक-भैरवनेम् ।
स्थिर-सत्य-वाक्यने हुसि- ।
वर शूलं सोवि-देवननुपम-भावम् ॥
नागरखण्डं बनवनेग् ।
आगिक्कुं भूषण-वोलन्तदरोळगिम्- ।
बागि सले तेवरतेप्पम् ।
नाग-लता-पूग-वनदिनसदळवेसेगुम् ॥
आ-तेवरतेप्पदधिपति ।
भूतळपति सोवि-देव-पद-युगळ सरो- ।
जात-मद-मधुक वि- ।
ख्यात-यशं बोप्प-गौण्डनाहव-शौण्ड ॥
वृत्त ॥ अमरेज्यं मन्त्रदोळ् शौचदोळमरनदीजं प्रजा-पाळन-प्र- ।
क्रमदोळ् धर्म्मात्मजं सप्रभुतेयोळमळाब्जेक्षणं निश्चयं ता-
ने महो-लोकाग्रदोळ् गावण-कुळ-तिलकं वोप्प-गावुण्डनेन्देन्- ।
दु मनस्-सम्प्रीतियिं बण्णिपुदखिळ-धरा-चक्रवानन्ददिन्दं ॥
आ-तेवरतेप्पद्धिप- ।
ख्यातिय नानेननेननभिवर्ण्णिसुवेम् ।
भूतळमे ताने बण्णिपुद् ।
ईतने गुणियेन्दु बोप्प-गौडननिशम् ॥
आ-विभुविन सति लक्ष्मी- ।
देविगे सौभाग्य-भाग्य-लक्षण-गुण-सद्- ।
भावाकृतियिन्दं मेल् ।

भू-विदितं चाविकब्बे-गवुंडि नितान्त ॥
वृत्त ॥ सण्डद बम्मि-सेट्टि-गुणि-भव्य-शिखामणि-कल्लि-सेट्टिगळ् ।
मण्डळ-वन्द्यरप्परोडवुत्तिदळेम्बिनितल्ल बोप्प-गा- ।
वुण्डन पेर्म्मे-वेत्त सति सर्व्व-गुणान्विते चाविकब्बे-गा- ।
वुण्डियेनल्के बण्णिसदरार् भुवनान्तरदोळ् निरन्तरम् ।
आ-महा-प्रभुवेनिप्प तेवरतेप्पद बोप्प-गावुण्डगं चाविकब्बे-गावुण्डिगम् ॥
क ॥ उदय-गिरिय दिनाधिपन् ।
उदधियिनमृतांशु-मण्डलं शुक्तिकेयिन्द् ।
ओदविद मौक्तकवोगेवन्त् ।
उदयिसिदं लोक-गौण्डनेम्ब महात्म ॥
वृत्त ॥ आतन माते मातु घरेगातन पूज्येये मिक्क पूज्ये सन्द्- ।
आतन बण्टे बण्टु नेगळ्दातन बुद्धिये शुद्ध-बुद्धि मिक्क्- ।
आतन साहसं नेरेये साहसवेन्दभिवर्ण्णिकुं धरि- ।
त्रीतळवागळु तेवरतेप्पद नाळ्-प्रभु लोक-गौण्डन ॥
वृत्त ॥ एत्तिसिदं जिनेन्द्र-गृहमं धरे बण्णिसलेय्दे तन्न भेय्- ।
वर्त्तिसिदं प्रजा-प्रकरवं रिपु-वर्ग्गद बाय बागिलोळ् ।
तेत्तिसिदं पलर् ब्बेदरे कूरलगं निज-कीर्त्ति-वल्लियम् ।
पत्तिसिदं दिगन्तवनिदेम् कृतकृत्यनो लोकनुर्व्वियोळ् ॥
क ॥ केरे बावि देवता-गृहव् ।
अरवन्तिगे सत्रवेम्बिवं पडि सलिपम् ।
नेरेये पर-हितविदेन्दिद् ।
अरिकेय नाळ्-गौडनेनिप लोक-गवुण्डम् ॥
व ॥ आ-महा-प्रभुविन सतिय शील-गुणवेन्तेन्दडे ॥
क ॥ तोत्तूर गोय्द-गवुडन ।
हेत्त-मगळ् काळिकब्बे-गावुण्डि जगम् ।
बिट्टरिसे सकळ-शील-गु- ।

णोत्तमे नेगळ्दत्तिमब्बेयं गेलेवन्दळ् ॥
आ-**कालिकब्बे**-गवुडि क- ।
ळा-कुशले जिनेन्द्र-धर्म्म-निर्म्मळे सततम् ।
लोक-गवुण्डन कुल-वधु ।
लोक-प्रख्याते सीतेयन्तेसेदिप्पळ् ॥

स्वस्ति श्रीमत्-कळचुर्य्य-चक्रवर्त्ति-राय-मुरारि भुज-बळ-मल्ल **सोयि-देव-वरिषद** नाल्केनेय **विकृत-संवत्सरद पौष्य-शुद्ध-पुण्णमी-सोमवार** उत्तरायण-संक्रमण-पुण्य-दिनदोळु **तेवरतेप्पद लोक-गावुण्डं** तन्न माडिसिद रत्नत्रय-देवर अष्ट-विधार्च्चनक्कं बन्द होद ऋषियराहार-दानक्कं श्रीमनु-महा-मण्डलाचार्य्यरप्प **भानु-कीर्त्ति-सैद्धान्तिक-देवर्गे** कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट गद्दे (यहाँ पर दानकी विशेष चर्चा और वे ही अन्तिम वाक्यावयव आते हैं) आ-महा-प्रभु-विन पिरिय-गुरुगळप्प **मुनिचन्द्र-देवर** तप —प्रभावमेन्तेन्दडे ॥

वृत्त ॥ मन्तणमेम् समस्त-परमागमदोळ् पद-शास्त्रदोळ् प्रमा- ।
णान्तरदोळ् समस्त-गणितङ्गळोळोर्व्वने तज्ज्ञनागि चै- ।
रन्तन-मार्गदिं नडदु विश्व-नुतं **मुनिचन्द्र-देव-सै-** ।
द्धान्तिक-चक्रवर्त्ति जसमं देसेयन्तु-वरं निमिर्च्चिदम् ॥

आ-दिव्य-मुनीन्द्रर प्रिय-शिष्यरप्प मन्त्रवादि-**भानुकीर्त्ति-सैद्धान्तिकर** गुण-प्रभावमेन्तेन्दडे ॥

पेसर्वेत्तुग्र-समग्र-देवतेयरुं तं तम्म पीठाग्रदिम् ।
पेसर्गोळाल् बिदतोडिपोगि नडुगुत्तिप्पर् ध्करं यक्ष-रा- ।
क्षस-गन्धर्व्व-पिशाच-भूत-फणि वेताळादि-तीव्र-ग्रहम् ।
बेसनेनेम्बुदु **भानुकीर्त्ति**-मुनिपाज्ञा-शक्ति सामान्यमेम् ॥
उरगोग्र-ग्रह-शाकिनी-विहग-भूत-प्रेत-रण्टङ्ग-भेन् ।
तर-पैशाच-निशाचराद्भुत-गणं भू-चक्रदोळ् तोरलु- ।
द्धारिसित्तमत्तदे यन्त्र ओदिदुदे मन्त्रं कोट्ट बेर् तन्त्रव- ।

न्वरि सैद्धान्तिक-भानुकीर्त्ति-मुनिनाथोग्राशे सामान्यमे ॥
श्रीमन्मूल-गदादि-सङ्घ-तिलके श्री-कुण्डकुन्दान्वये ।
काणूर्-न्नाम-गणोत्त-गत्त-शुभगे भू-तिन्त्रिणीकाह्वये ।
शिष्य श्री-मुनिचन्द्र-देव-यमिनः सिद्धान्त-पारङ्गमो ।
जीयाद् बन्दणिका-पुरेश्वरतया श्री-भानुकीर्तिर्म्मुनिः ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । बनवासि-मण्डलमें नागरखण्डका स्थान वही था जोकि स्त्रीके शरीरमें स्तन्यका होता है । बनवासि-मण्डलका वर्णन । इसके शासक सोवि-देव थे, जो कि कादम्ब-कुलके तिलक थे । उसके पराक्रमकी प्रशंसा,—चङ्गाळ्व राजाको हराकर जञ्जीरोंसे जकड़ दिया था । इससे उसका नाम कदम्ब-रुद्र, गण्डर-दावणि, मण्डलिक-भैरव, निगलंक मल्ल, तथा सत्यपताक पड़ गया था ।

नागरखण्डकी ही तरह, तेवरतप्पे भी बनवसेका तिलक (भूषण) था, और उसमें नागकी लतायें तथा पूग (सुपारी) के बगीचे थे । सोवि-देव राजाके चरण कमलोंका भ्रमर, तेवरतेप्पका अधिपति बोप्प-गौण्ड था, उसकी प्रशंसायें । उसकी पत्नी चाविकव्वे-गवुडि थी, जिसके भाई बम्मि-सेट्टि तथा कल्लि-सेट्टि थे । बोप्प-गावुण्ड और चाविकव्वे-गावुण्डिके लोक-गवुण्ड उत्पन्न हुआ था, जो तेवरतेप्पका नाळ्-प्रभु था । उसने एक जिनेन्द्र-मन्दिर बनवाया था, एक तालाब, एक कुँआ, और मन्दिरके लिय एक चहबच्चा (Water shed) तथा एक सत्र भी खोला था । उसकी पत्नी जो तोतूर गोय्ड-गवुड तथा काळिकव्वे-गावुण्डिकी पुत्रि थी—ने प्रसिद्ध अत्तिमव्वेकी ही भाँति दुनियाँमें प्रशंसा प्राप्त की थी; उसकी प्रशंसायें ।

कळसूर्य्य-चक्रवर्त्ति राय-मुरारि भुजबळ-मल्ल सोवि-देवके चौथे सालमें (उक्त-मितिको),—तेवरतप्प लोक-गावुण्डने महा-मण्डलाचार्य्य भानुकीर्त्ति-सैद्धान्तिक-देवके चरणोंका प्रक्षालन कर (उक्त) भूमि दान दिया । हमेशाके अन्तिम श्लोक ।

गुरु मुनिचन्द्र-देव और उनके शिष्य भानुकीर्त्ति-सैद्धान्तिक की प्रशंसा । भानुकीर्त्ति-मुनि यन्त्र, मन्त्र और तन्त्र में बहुत हुशियार थे ।

मूलसंघ, कुण्डकुन्दान्वय-काणूर्-गण तथा तिन्त्रीणि-गाला (गच्छ) के मुनि-चन्द्र-देव-यमीके शिष्य भानुकीर्त्ति-मुनि—जो बन्दणिका-पुरके अधिपति थे—जयवन्त हों ।]

[EC, VIII, Sorab. Tl., No. 345.]

३७८

अङ्गडि—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

[शक १०९४=११७२ ई०]

[अङ्गडि (गोणीबीडु परगना) में, बसदिके पासके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्री-नन्दि-ना·········· होसंगिय बसदियरं आन्वङ्गे············होसतूर-कम्वरस मा · ··न्तङ्गनिर्डिसिद शक···१०९४ नन्दन-संवत्सर (यहाँ खत्म हो जाता है ।)

[जिन शासन की प्रशसा । होसतूरके कम्वरसने (उक्त मितिको) होनङ्गीकी बसदिके लिये दान दिया ।]

[EC, VI, Mudgere tl., no 12.]

३७९

मर्कुली—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

[शक १०९५ = ११७३ ई०]

(मर्कुली [ग्राम परगना] में, किलेके अन्दरकी बस्तिके पाषाणपर)

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीमद्द्रमिलसंघेऽस्मिन् नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गलः ।

अन्वयो भाति निश्शेप-शास्त्र-वाराशि-पारगैः ॥
श्री-कान्तर् य्यदुकुल-र- । त्नाकरदोळ् कौस्तुभादिगळवोल् पलरं ।
लोकोपकार-परिणत- । रेकीकृत-सकळ-राज-गुणरप्पिनेगं ॥
सळनेम्बनागे यादव - । कुळदोळ् पुलि पाये कण्डु मुनि पुलियं पोय् ।
सळयेने पोय्दुदरिं पोय्- । सळ-वेसरवनिन्दमागे तद्वंशजरोळ् ॥
विनय प्रतापमेम्बी । जननाथोचित-चरित्र-युगदिं जगदोळ् ।
जन-नयनमेनिसि नेगल्दं । विनयादित्यं समस्त-भुवन-स्तुत्यं ॥
आतंगति महिम हिम- । सेतु-समाख्यात-कीर्त्ति सन्मूर्त्ति-मनो- ।
जातं मर्द्दित-रिपु-नृप- । जातं तनुजातनादनेरेयङ्ग-नृपम् ॥
एरेगिद् जनकके पोम्-मुगि- । ळेरगिदवोळु लोकवङ्गमेने पोम्मळेयं ।
करेवनुरदेरगदहितगेरगिद वर-सिडिळेनिप्पनेरेयङ्ग-नृपं ॥
बल्लिदरवनीपतिगळो- । ळेल्लं धर्म्मार्थकामसिद्धिवोलवनी- ।
वल्लभरातन तनयर् । बल्लाळ चिट्टि-देवनुदयादित्यम् ॥
मूवररसुगळोळ तं । मावसे मध्यमनवागियु नृप-गुण-सद्- ।
भावदिनुत्तमनाद । भावि-स्वब्द्-भूत-विष्णु-विष्णु नृपगळम् ॥
मलेय साधिसि माण्डने तळवनं काञ्चीपुरं कोयतूर् ।
म्मळेनाडा-तूळ् नाडु नीलगिरिया-कोळालमा-कोङ्गु नं- ।
गलियुच्चंगि विराट-राज-नगरं वल्लूरि वेल्ल ल-दोर्- ।
म्बलदिं लीलेये साध्यमादुवेणेयार् विष्णु-क्ष्मापाळनोळ् ॥
पडुवण तेङ्कण मूडण । गडिगळ् तत्काळव-नेलके मूरु-समुद्रं ।
बडगळ् पेद्दोरे तां गडि । गडियिल्ला- विष्णु किडसिदाहितगेन्तुम् ॥
मण्डलमं निजम द्विज- । मण्डलिगं देवतालयक्क कोट्टम् ।
खण्डेय वट्टलेथिं पर- । मण्डलम वीर-विष्णुवर्द्धननाळ्दम् ॥
अन्तेनिसिद विष्णु मही- । कान्तन तनयं नयानुरूपोपायम् ।
सन्तत-भुज-प्रतापा- । क्रान्त-पदं नारसिंहनाहव-सिंहम् ॥
रिपु-सर्प्पद्-दर्प्प-दावानळ-वहळ-शिखा-जाळ-काळाम्बुवाहं ।

रिपु-भूपाळ-प्रदीप-प्रकर-पटुतर-स्फार-झञ्झा-समीरम् ।
रिपु-नागानीक-तार्क्ष्यं रिपु-नृप-नळिनी-षण्ड-वेतण्ड-रूपं ।
रिपु-भूभृद्-भूरि-वज्रं रिपु-नृप-मद-मातंग-सिंहं नृसिंहम् ॥
स्थिरने भूभृदधीश्वरं स-धनने लक्ष्मी-सुतं मूर्त्ति-भा- ।
सुरने विष्णु-तनूभवं सुभटने ता नारसिंहं गडम् ।
स्थिर-तेजस्विये विश्व-विक्रम-गुण नैसर्गिकं नाळ्पडी- ।
नरसिंहङ्गेणे····· गुणाद्यारोप-भूपाळकर् ॥
आ-विभुविन पट्ट-महा- । देवी पतिव्रते चरित्रदिन्दं सीता- ।
देविगे मिगिलादेचल- । देवी समस्तार्थ-कल्पवल्लियेनिप्पळ् ॥
अन्तेचलदेचल-देविय- । नन्तयशो-गर्भ-गर्भ-दुग्धाम्बुधियिं ।
कान्ताङ्गनत्रि-पुत्रन । कान्तिहर ध्वान्तहारि कुवलय-मित्रम् ॥
सकळ-कळा-परिपूर्णं । सकलोर्व्वी-नयन-सुखदनकळंकं मत्- ।
तकुटिळनपूर्व्व-नव-शी । तकरं बल्लाळ-देवनुद गेय्दं ॥
विनयं विक्रान्ति पुण्योदयमिवरोळगे लोकैक-सन्धान-सम्पत्- ।
बनितैकायत्त-राज्यं सुहृद्धर्मेनिपुदी-स्थैर्य्य-सत्-कीर्त्ति-सम्पत्- ।
त्ति-निमित्तं पेट्टु मुं मुप्पुरि-वडेदु भयायत्त···दि बल्ला- ।
ळन राज्यं राम-राज्यं सकळ-जन-मनः-प्राज्यमत्यन्त-पूज्यम् ॥
विनय-श्री-निधियं विवेक-निधिय ब्रह्मण्यनं पूर्ण्ण-पु- ।
ण्यनतुद्दाम-यशोर्त्थियं जित-जगत्-प्रत्यर्त्थियं सर्व्व-सज्- ।
जन-संस्तुत्यननुद्भवद्वितरण-श्री-विक्रमादित्यनम् ।
मनुजेशर् यदु-राज-राजननदेम्बल्लाळनं पोल्वरे ॥
इदु सर्व्व-ग्रासं गोळ्- । पुदु भास्वद्राज-मण्डळङ्गळ निर्मो- ।
चद···म्त्रिनमी- । यदुपति बल्लाळ-बाहु-राहु विचित्रम् ॥
दिगिभङ्गळ् मद-विह्वळंगळ् अचळं कल् कूर्म्मनिन्तोम्मेयुं ।
मोगमीयं भुजगाधिपं विष-धरं सारल्कयोग्यङ्गळेन्- ।
दु गुणोदग्र-समग्र-लक्षण-लसद्दोर्द्दण्डदोळ् सन्तोसं ।

मिगे भू-कामिनियिर्द्दपळ्……बल्लाळ-भूपालना ॥
आ-बल्लाणन राज्य- । श्री……… ‥ ।
श्री-बूचि-राजनेसदनि-ळा-बुधवर्गनिमित्त-बान्धव ‥॥

‥ कुळित-श्रीपाद-परम ‥ विनुत-श्रीपाल-त्रैविद्य-सेवा-सम्पादित-सकल-शास्त्रालोकं……गुणवति · देवनय्यनेसेवा-सुगव्वे तायि ‥ ……दक्कुला-ङ्गने · चलदिं · गुण-सम्पन्नर् स्सुतरु राय… ‥मल्लियणदेवनुं ……वरदं…॥ ‥ शास्त्रद… आश्रिताशेष-विघ्नम परिहरि…प्पभीष्टव…अतीत-नयं कोन्दु कय्योळा …गणि प्रधानते वृषान्वितेया · समुद्भव स्थिरतर शक्तिये…सुतं …

सर्व्वजनसम्मदप्रद- । नुर्व्वीश्वर-मन्त्रि-मण्डलालङ्कारम् ।
सर्व्वोपका……च- । तुर्व्विध-पाण्डित्य-मण्डित बूचरसं ॥
वाचक-वाचस्पति…। ‥चार्य्य श्राव्य-काव्य-रस ……अर्थि- ।
लोचन-चक्षु परार्त्थद । · …प्रिय-हितार्त्थ-वाचं बूचम् ॥
कन्नडदोळ् सस्कृतदोळ् । चन्नमेने………मे- ।
णिन्निनितुमिं पेररेने ।……उभयकवितेयिं बूचणनोळ् ॥
सिद्धान्तार्त्थमशेषं । शुद्धान्त‥यादवं चतुरुपधा- ।
शुद्धं तत्त्वार्थसंग्रह- ।‥ग्रह-कृतार्त्थनो बूचरसं ॥
पडेदर्त्थं जिन पूजेग…अभिषवक्काहार-दानक्के शी- ।
लोडेयर्गाश्रितगर्त्थिगळगे विबुधर्ग्गिष्टर्गे शिष्टर्गे…।
…गे जिनालयक्के सततं सम्पूर्णमागिप्पुडेन्- ।
दोडे मन्त्रीश्वर-बूचि-राजने वळं धन्यं पेरर् ढन्यरे ॥
आङ्गिरस-गोत्र‥ । …निळयं विनूत-जननं परिशुद्- ।
धाङ्गिरस-बुद्धि कलि-का-।। लाङ्गिरस जाति‥ढं बूचरसं ॥
आ-पुरुष-रत्नमे… । …नृप-बल्लाळ-मन्त्रि-बूचङ्गे नृप-।
श्री-पूर्ण्ण-पुण्ये शान्तले । रूपातिशयानुरूप-मति सतियादळ् ॥
पति-भक्तियिन्दे दान-गुणदुन्- । नतियिं जिनपूजनाभिषवणोत्सवदिं ।
दिति-सुतेयं…मव्वेय । नतिशयदिं शान्तियक्कनुळिदवरळ्वे ॥

······नयमं । विनेय-ततिगिन्तु पूर्ण्ण-यशमं पेट्टल्म्य ।
जन-विनुते शान्तियक्कं । जिन-गुण-सम्पत्ति नोम्पियुद्यापने··॥
···आराध्यननून-दान-गुणदिं विक्रान्तियिं सर्व्व-सज्-।
जन-मान्यर् मरियानेयुं भरततुं दण्डाधिपर् तन्देविर् ।
तनगि······जन-प्रस्तुत्यनन्तत्रि··· ·· ।
···पुण्यात्मन धर्म्म-पत्निगेणेयार् स्वान्तव्वेगी-कान्तेयर् ॥
आ-शान्तल-देविगमति ।···गुरु मन्त्रि-चूचणङ्गं रा-।
···राज पुट्टिद-। नानि यवोळुमेगवा-रुद्रङ्गम् ॥
रवियं तेजदिन् इन्द्र-भूरुह···दत्तिय्······ ।
भवदिं··· ······शाक्यङ्गळन् ।
पुवु···न पेङ्गळिं निमिगदिं धर्म्मङ्गळं कूडे मा-।
··· ·· ····· ··············· ······॥
······किरियं । तोयधि-गम्भीरनाहितोत्तम-दान-।
श्रेया ·····वि । नेयोपायं········॥
······विस-। लरि ··पर-वधु परात्थमेन्ददळिपल् ।
केरेयं वेडिद वन्दिगे । मरेदुं··· ·· ·· ॥

······स्वस्ति समाधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरं यादवकुळाम्बरद्युमणि सम्यक्त्व चूडामणि मलेपरोळ् गण्ड तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-बनवसे-हानुङ्गल्-गोण्ड······नसहाय-शूर निश्शङ्क-प्रताप-होय्सळ-वल्लाळदेवरु श्रीमद्राजधानी दोरसमुद्रदल्लि शक-वर्ष १०६५ नेय विजय-संवत्सरद श्रावण शुद्ध ११ आदिवारदन्दु तम्म पट्ट-बन्धोत्सवदोळ् महा-दानङ्गळं माडुत्तमिप्प समयदोळ् श्रीमत्सन्धिविग्रही··मय्यङ्गळ् सोगेनाडोळगण मरिकलि योळ् तावु माडिसिद त्रिकूट-जिनालयक्कावूरं देव-पूजेगमाहार-दानक्क जीर्ण्णोद्धारक्कमा-चन्द्रार्क्कतारं-बरं नडवन्तागि पादपूजेयं तेत्तु सर्व्व-नमस्यवागि दत्तियं धारा पूर्व्वकं माडिदु श्रीमद्-द्रमिळ-सघदरुङ्गळान्वयद श्रीपाळ-त्रैविद्य-देवर शिष्यरप्प श्रीमद्वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर कालं कच्चि

धारेयेरेदु कोट्टरन्तु देव-दा······(६ अस्पष्ट पंक्तियोंके बाद वे ही अन्तिम श्लोक आते हैं) भद्रमस्तु जिन-शासनाय। मङ्गळमहा श्री श्री श्री श्री विजय-संव-त्सरद कार्त्तिक शु० ८ ··वारदन्दु केम्मटद माचय्यनुं · अधिकारिगळगिलेय··· सोमेयनुं बाळचन्द्र-देवर गुड्डु हेग्गडे-चल्लय्यनु मरिकलिय त्रिकूटजिनालयक्का-वूर·········आगन्तुक-मदुवे-वण्णिगे-मगा-गाण-वोळवारु-होरवारोळगागि समस्त-सुङ्कवमा-चन्द्रार्क्क तारं-बरं नडवन्तागि धारेयेरेदु बिट्टरु (वे ही अन्तिम वाक्यावयव) ।

[जिन शासनकी प्रशंसाके बाद द्रमिल-संघके अन्तर्गत नन्दिसंघके अरुङ्ग-लान्वयकी भी प्रशंसा ।

यदुकुलके राजाओंमेंसे एक 'सल' नामका राजा था। इसका मुनि के 'पोयूसल' कहनेसे चीतेको मारनेसे 'पोय्सळ' नाम पड़ा । उसीके वंशमें (प्रशंसाओंको छोड़कर) विनयादित्य हुआ, जिसका पुत्र एरेयङ्ग हुआ। उसके तीन पुत्र—बल्लाल, बिट्टिदेव (विष्णुवर्द्धन) और उदयादित्य हुए। इनमेंसे बीचका विष्णु प्रधान हो गया। मलेयको लेकर क्या वह चुप बैठा? तळवन, काञ्चीपुर, कोयतूर, मले-नाड्, तुळु-नाड्, नीलगिरि, कोळाल, कोङ्गु, नङ्गलि, उच्चंगि, विराट-राजका नगर वल्लूर,—इन सबको, जैसे लीलामात्रमें ही, अपने भुजबलसे अधीनस्थ कर लिया। पूर्व, दक्षिण और पश्चिममें उसके राज्यकी सीमा समुद्र था, उत्तरमें पेदोरेको उसने अपनी सीमा बनाया। उसने अपना निजी देश ब्राह्मणों और देवोंको दे दिया, और स्वयं अपनी तलवारके बलसे जीते हुए विदेशी देशों पर राज्य करने लगा। उसका पुत्र नारसिंह था, जिसकी पत्नीका नाम एचल-देवी था। उन दोनोंका पुत्र बल्लाल-देव हुआ, जिसका राज्य रामके राज्यकी तरह समृद्ध था।

उसके राज्यमें बूचि-राज (प्रशंसा सहित) बड़े प्रधानकी तरह चमका। ये दोनों ही भाषा—कन्नड़ और संस्कृतके जानकार तथा दोनों ही कविताकी रचना करते थे। उसकी पत्नी शान्तल थी, जिसके पिता (और चाचा)

मरियाणे और भरत थे। शान्तलदेवी और मन्त्री बूचनसे रा······राव उत्पन्न हुआ था।

जब (अपनी उपाधियों सहित) होय्सळ-बल्लाल-देव (उक्त मितिको) राजधानी दोरसमुद्रमें था और अपने राज्याभिषेकके उत्सवमें बहुत दान (भेटें) बाँट रहा था, सन्धिविग्रही मन्त्री बूचिमय्यने, सिगेनाड्में मरिकलोमें त्रिकूट-जिनालय बनवाकर उस गाँवको, देवताकी पूजाके प्रबन्धके लिये, आहार दान देने तथा मन्दिरकी मरम्मतके लिये द्रमिल संघके अरुङ्गळान्वयके श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके शिष्य वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवके चरणोंका प्रक्षालन करके उनकों भेंट कर दिया। (वे ही अन्तिम श्लोक।)

तथा हेग्गडे-चल्लय्यने मन्दिरके लिये उस गाँवमें शादी, मृत्यु, करघे और कोल्हुओंके ऊपर लगे हुए कर, सालमें आयात माल पर तथा स्थानीय बिक्री पर लगी हुई चुङ्गीका पैसा भी दिया।]

[E C, V, Hassan tl., no 119.]

३८०

मुगुलूर;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[वर्ष उद्गारी ?]

[मुगुळूर् (बेळहळ्ळि परगने) में, बस्तीके सामनेके पाषाणपर]

जयति सकल-विद्या-देवता-रत्न-पीठं
हृदयमनुपलेप यस्य दीर्घं स देवः।
तदनु जयति शास्त्रं तस्य यत् सर्व्व-मिथ्या-
समय-तिमिर-घाति ज्योतिरेकं नराणम् ॥
श्रीमद्द्रमिळ-संघेऽस्मिन्नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गळः।
अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि-पारगैः ॥
श्रीमत्त्रैविद्यविद्यापतिपदकमलाराधनालब्धबुद्धिः

सिद्धान्ताम्भोनिधानं-प्रविसरदमृतास्वादपुष्ट प्रमोदः ।
दीक्षा-शिक्षा-सुरक्षाक्रमकृतिनिपुणस्सन्ततं भव्य-सेव्यः
सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्ज्जगति विजयते वासुपूज्य-व्रतीन्द्रः ॥
श्रीमत्-वज्रणंदि-देवर शिष्यरु मुगुळिय पारुश्व-देवरु रुधिरोद्गारि-संवत्सरद् भाद्रपद-व १३ ब्र ॥... ... ...

लेख स्पष्ट है।

[EC. V, Harsam Tl., No. 128.]

३८१

बेकः—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०९५ = ११७३ ई०]

[जै. शि. सं०, प्र. भा.]

३८२

दोहद;—संस्कृत-भग्न

[श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख]

[IA, X, p 158, t.]

३८३

करडालु;—कन्नड ।

[काल निर्देश रहित, पर ११७४ ई० ? (लू. राइस) ।]

[करडालुमें, ध्वस्त बस्तिमें एक खम्भेपर]

अनुपम-पुण्य-भाजने जिनेन्द्र-पदाब्ज-विलीन-चित्ते पा- ।
वन-सु-चरित्रे हर्य्यले-महासति तत्तवसान-कालदोळ् ।

मनुज-मनोवनं करेदु बूवय-नायक केम्मगेन नीम् ।
कनसिनोळप्पडं नेनेयदिर्नेने साल्तमप्प धर्म्ममम् ॥
धर्म्ममनागळुं मुददे माल्पुदु माडिदोडप्पुदावुदा- ।
धर्म्मदिनेम्बेयप्पोडे सुरेन्द्र-नरेन्द्र-फणीन्द्र-राज्यमन्- ।
तोरद्मोदलप्पुदागि कडेयोळ् वर-मुक्तियनीवुदन्तरिम् ।
धर्म्मे दनागु सत्य-निधि बूवय-नायक बेडिकोण्डे नाम् ॥
एननगनुमोदन-पुण्यम् ।
निनगं निस्सीममप्प पुण्यं साग्गुम् ।
मनमोसेदु माडिसोन्दम् ।
जिन-गृहमं बूवि-देव धर्म-धुरीणा ॥
एन्देन्दळेन देवर- ।
नेण्टर्कं नीने पूजिसि चिक्कयनम् ।
कुन्दि करिगन्द दन्ता- ।
नन्ददे रक्षिपुदुपेक्षे गेय्दडे दोषम् ॥
तदनन्तरमभिषवमं ।
मुडदिं जिन-पतिगे माडि गन्धोदकमम् ।
सदमळ-चरित्रे कोण्डळ् ।
बेदरिपेनघ-बलमनेम्बी-मनदुत्सवदिम् ॥
तोरेदु जिनेन्द्र-चन्द्र-पद-सन्निधियोळ् पदे-पद्मकङ्कळम् ।
मरेयदे भोरेनुच्चरिसुतुं नेरे सुत्तिद मोह-पाशमम् ।
परिदु बगळनं पोगळे हर्म्यदले नारि समन्तु सैय्पु कण् - ।
दरेदवोलेम् समाधि-विधियिन्दिरदेय्दिदळिन्द्र-लोकमम् ॥
वरदं केळदमरावती-पुरद-देवी-सङ्कुळं बन्दु नू- ।
पुरमम्मुत्तिन हारमं कटकमं केयूरमं वज्रदुड्- ।
गुरमं माणिकदोलेयं तुडिसि वेगं देवि नीनेरु रा- ।
गा-रसं··· ···मिगली-विमानमनेनुत्तं तन्दवर् स्वाक्षिदर ॥

येरि विमानमं वरे सुराङ्गनेयर् नळि-तो [ळ]··· ···
त्तोरविनं महोत्सवदे सेसर्यनिक्के सुरानक-स्वनम् ।
मीरे घनाघन-ध्वनियनेत्तिद सत्तिगे चन्द्र-बिम्बमम् ।
बीरे विलासदिं बिडिदु चामरमिक्कि समन्तु पोकळा- ।
नीरे महानुभावे सति ह्य्यंल-देवि सुरेन्द्र-लोकमम् ॥

[(प्रशंसा सहित) महासती ह्य्यंलेने अपनी मृत्युके समय, अपने पुत्र बूवय-नायकको बुलाकर कहा,—स्वप्न में भी मेरा ख़याल न करना, लेकिन धर्मका ही विचार करना । हमेशा धर्म करो, क्योंकि ऐसा करने से तुम्हें इनाम (जिनके नाम दिये हैं) मिलेगा । हे बूवि-देव । यदि मुझे और तुझे दोनोंको पुण्योपार्जन करना है, तो जिन मन्दिर बनवाओ । मेरे देवके मित्रोंका (?) हमेशा आदर करना और अपने लघु चाचाका हमेशा खयाल रखना । इसके बाद, जिनपतिपर लेप करके, उसने चन्दनका जल लिया इस निश्चयसे कि वह अपने तमाम पापोंको धो दे ।

तब, जिनेन्द्रके चरणोंकी उपस्थितिमें, बिना भूले पाँच शब्दों (पञ्च नमस्कार मंत्र) को बहुत जोरसे उच्चारण करते हुए, जिन इच्छाओंके जालसे वह घिरी हुई थी, उसे तोड़ते हुए, स्त्री ह्य्यंलेने, समाधिके आश्रयसे इन्द्रलोकमें प्रवेश किया ।]

[EC, XII, Tiptur Tl, No. 93]

३८४

करडालु;—कन्नड़ ।

वर्ष जय [= ११७४ ई० ? (लु. राइस) ।]

[करडालुमें, ध्वस्त बस्तिमें एक खम्भेपर]

··· ··· श्री-चान्द्रायण-देवर··· ··· ह-(हरि)हर-देवि ॥
स (श) तपत्र-व्रजदिं सरोवर-कुलं मेरु प्र-कूट-प्रमोन्- ।

नतियिन्दद्रिजेयिं मदेभ-घटेयि सैन्याळि सन्-मार्गं··· ··· ।
··· ··· काव्य-निबन्धमेन्तेरगुमेन्ती-लोकदोळ् लोक-सं- ।
स्तुत चन्द्रायण-देवरिन्देसेगुवी-श्री-कोण्डकुन्दान्वयम् ॥
एरेव बुधाळिगाश्रित-जनक्कनुरागदोळित्तु भक्तवा- ।
दरिसुव दानदिन्दे सुर-भूजमनेळिपळेन्दे वण्णिक्कुम् ।
परम-जिनेन्द्र-पाद-कमळार्च्चन-निभर-भक्ति-युक्तेयम् ।
हरिहर-देवियं नेगळ्द शासन-देवियनी-धरा-तळम् ॥
वर-जय-(सं) वत्सरं विनुत-जेष्ठ-युतं सित-पक्षमष्टमी- ।
परिगतमिन्दुवारदोळनिन्दित-पञ्च-पदङ्गळं सुखोत्- ।
कर-निळयङ्गळं नेरेये तन्नोळे··· ···युतं समाधियिम् ।
हरिहर-देवि-विश्व-विबुध-स्तुतेयेय्दिदळिन्द्र-लोकमम् ॥
निरुपमेयं चरित्र-युतेयं वनिता-जन-रत्नेयं मनो- ।
हर-जिन-मार्ग-वारिनिधि-चन्द्रिकेयं सुकृतैक-पुञ्जेयम् ।
पर-हित-चित्तेयं वगेयदन्तकनेम्ब दुरात्मनोय्दनी- ।
हरिहर-देवियं विबुध-वन्दितेयं भुवनाभिरामेयम् ॥

जिनेश्वर नमो वीतरागाय शान्तये नमोऽस्तु ॥

[कौण्डकुन्दान्वयके चन्द्रायण-देवकी प्रशंसा,—जिनकी गृहस्थ-शिष्या हरिहर-देवी थी। उसकी भक्तिकी प्रशंसा। (उक्त सालमें), पञ्च-नमस्कार मन्त्रका उच्चारण करते हुए, समाधिके द्वारा, उसने इन्द्रलोक प्राप्त किया। जिनेश्वर, वीतराग और शान्तके लिये नमस्कार हो।]

[EC, XII, Tiptur, Tl, No, 94.].

३८५

हेरगु;—संस्कृत तथा कन्नड़।

वर्ष जय [११७४ ई० । (लू० राईस)]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरनुं कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-बनवसे-हानुङ्गलु-गोण्ड भुजबल वीरगङ्गनसहायशूर निश्शङ्क-प्रताप होय्सळ-श्रीबल्लाळ-देवरु दोरसमुद्रद राजधानीयल्लि सुख-सङ्कथा-विनोददिं पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे जयसंवत्सरद पुष्यदमावासे-मंगळवार-व्यतीपात-उत्तराषाढ़ा-नक्षत्रदन्दु हेरगिन बसदिगे मोदलु गद्यान १ क्कं बळि-सहित्वागि गद्याणविप्पत्त-नाल्कक्कं भूमियं धारापूर्वकं माडि बिट्ट स्थल हिरिय-केरेय किल्ब-यललु बिट्टिग-गट्टवोन्दु ऊरिन्द हडुवण होलदल्लि बेद्दले नाल्वत्तेरडु गेण गळेयलु कम्म ३२½ बिट्ट दत्ति ॥

गतलीलं लाळनाळम्बित-बहळ-भयोग्र-ज्वरं गूर्ज्जरं सन- ।
धृतशूलं गौळनङ्गीकृत-कृशतर-सम्पल्लवं पल्लवं चू- ।
र्ण्णित-चूळं चोळनादं कदन-वदनदोळ् भेरियं पोय्सेवीरा- ।
हित-भूभृज्जाळ-काळानळनतुलबलं वीर-बल्लाल-देवम् ।
मनमोल्दुद्यद्यशश्रीपति नेले मोदलागल् सल्वन्तेरळ्-पोन्- ।
ननपारौदार्य-पर्य्युत्ततनुसुदधियुं मेरुवा-चन्द्रनुं निल्- ।
विनवस्युत्साहदिन्दं पेरगिन जिनगेहक्के बिट्टं पुरन्ध्रो- ।
घन-लीलानङ्ग-रूपं मथन-जय-भुजं वीर-बल्लाल-देवम् ।
अतिशोभाकरमप्प विष्णुविन वक्षस्थानदोळ् लक्ष्मियुन्- ।
नति वेत्तिर्प्पवोलिक्कें कीर्त्ति-युतनोळ् श्री-चामनोळ् कूडि सं- ।
गत-सल्लव्बृ-पुत्ररं पडेवुतं जक्कव्वे चन्द्रार्क्करं ।
क्षितियुं मेरु-नगेन्द्रमुळ्ळनेगमिं भद्रं शुभं मङ्गळम् ॥
इवनीयन्ददिनेय्दे पालिसिदवर्गिष्टार्त्थं-संसिद्धि सं- ।

भविकुं कोण्डळिदङ्गे गङ्गे गये केदारं कुरुक्षेत्रमेम्ब् ।
इवरोळ् पेसदे पार्वरं गोरवरं गो-वृन्दमं पेण्डिरम् ।
तवे कोन्दिक्किद पापमेय्दुगुमवं बीळ्गुं निगोदङ्गळोळ ॥
स्वदत्तां परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥

[इस लेखमें बताया गया है कि जब (अपनी उपाधियों सहित) होय्सल वल्लाल-देव शाही नगर दोरसमुद्रमें था, और शान्ति से राज्य कर रहा था—(उक्त मितिको) हेरगूकी बसदिके लिये (उपर्युक्त) भूमि-दान किया । (उसकी प्रशंसा, जिनमेंसे एक यह भी है) जब वह प्रयाण करता था, तो लाड़, गुर्ज्जर, गौल (ड), पल्लव, और चोल राजाओंको भयका सञ्चार हो जाता था ।]

[EC, V, Hassan, Tl., No. 58.]

३८६

बिजोली—संस्कृत

[सं० १२३२ = ११७५ ई०]

लेख श्वेताम्बर संप्रदायका मालूम होता है ।

[JRAS, 1906, p. 700-701.]

३८७

क्यातनहल्लि—कन्नड ।

मन्मथवर्ष [११७५ ई० (लू० राइस)]

(क्यातनहल्लि तालुके) में, कोदण्डराम मन्दिरके पत्थर पर]

श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्लेश्वर तळकाडु-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-बनवासि-हानुङ्गलु-

गोण्ड भुज-बल वीर-गङ्ग असहायशूर निःशङ्कप्रताप होय्सळ-वीर-बल्लालदेव श्रीमद्-राजधानी दोरसमुद्रद नेलवाडिनलु सुक (ख)-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तिइ(रे) मन्मथ-संवत्सरद मार्ग्गसिर-सु १ आदिवारदन्दु श्रीयादव-नारायण-चतुर्व्वेदि-मङ्गलदलु श्रीकरणद कलियणन कोडगेयोळु अय्वत्तु-कोळग गद्देयं साहिर-कोळग बेद्दलेयं श्रीकरणद हेमाडे ··ळय्यणन कय्यलु बल्लाळन्दे ··गे क्रयद होन कोट्ट सर्व्व-बाधा-परिहारवागि कोडेहाळ-बसदिगे चन्द्रार्क्क-तारम्बर सल्वन्तागि धारापूर्व्वकं माडि येरेयण बिट्ट दत्ति।

[जिस समय होय्सळ वीर-बल्लाल-देव राजधानी दोरसमुद्रमें रहते हुए शासन कर रहे थे, उस समय कोडेहाल-बसदिके लिये कुछ जमीन यादव-नारायण अग्रहारमें खरीदी गयी थी और वह बिना किरायेके दी गयी थी।]

[EC, III, Srirangapatan Tl., No. 146]

३८८

श्रवणबेलोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०११ = ११७६ ई० (कीलहौर्न)].

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३८९

एलेवाल,—कन्नड़-भग्न

[शक १०११ = १२३७ ई०]

[एलेवालमें, बरम-देव मन्दिरके पासके पाषाणपर]

··· ··· ··· ··· सेतु॥ ··· ··· ··· ··· सोकदिन्दं बळसिद्दु ··· ··· ···

·· ·· ···नागवर्ति-कुळदिं बम्बीरदिन्दं ··· ··· ··· एदं बनियिसे नन्दन-नदिन्दन् ··· ··· ··· ··· ···प्पनी-बनप ··· ··· ··· ··· नागर-खण्डद

……… बरिसि चन्दादित्यरळ्ळन्नेगं चिर-लग्नं बरे-पट्ट ……… लि धारिणियोळु च्चोद्यमेनलु कडम्ब……धिपति सोयि-देव-भूपति-तिळकं जन-नुत-कदम्ब-वंश स …… तिक्कुं बिरुदर बिरुदं भिट्टु मेयिक्कुतिक्कुं कदनक्किरा ……… ल्लं यिदे पुल्लं कर्चि नीरं पुगुतरलु पेण्णागि पुत्तेरुगुं ……… यि-देव-प्रतापम् ॥

अदटर बेर कित्तु सुभटोत्तमरं बेदर् ……।
………… णनेम्बुद- ।
ल्लदे रण-रङ्ग-शूद्रकन साहस-भीमन सोयि ……।
………… नं सले विश्व-धात्रियोळ् ॥
बनवसे-नाडधिकारं । जन-नुत- ……।
………… लन्तामान् । तनदन्दं-पडेद विक्रमादित्य-नृपम् ॥
वीरायतिग …………।
…… सले शौल्दु नुङ्कि नोणेगुं दोर्-द्दण्ड-चण्डासियिम् ।
मोरेन्दा …………।
धीरोदात्तन वण्णिकुं बुध-जन श्री-विक्रमादित्य
……… … निट्टदे हव्वे कोङ्कणम् ।
बेडगिन गङ्गवाडि तुळुनाडे ……।
…………बेसनेवेद भूभुजरारु कप्पमम् ।
कुडदवनीशर् ………… त्रियोळ् ॥

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमन्-महा-म……… …… से पन्निच्छा-सिरमनाळुत्तुं सुख-सङ्कथा-विनोददि राजयं …… ॥

…………।
…………।
……… एलेवल्लि कौङ्ग नारङ्ग-फलम् ।
रागदेळ………।

... ... सत्-पङ्केज-षण्डङ्गलि कुवलयदिं नाग-पुन्नागदिन्दम् ।
बळ ... ... ।
तिळक-श्री-चम्पकामोददिनेसगु सदा नागवल्लि-विलासम् ।
... ... प्राज्य-लक्ष्मी-निवासम् ॥
गावणिग-कुलदे पुट्टिद ।
भाविसे केरेय ... ... ।
... ... य पोगळे पुट्टिद ।
केवळमे देकि-सेट्टि बुध-सुर-भूज ॥
सङ्क-ग ... ... ।
... ... सेट्टि कृतात्थम् ।
बिङ्कदेळव्वळिळयोळम् ।
भोङ्कने जिन-गृहमम् माडि कीर्त्तिय ... ... ॥
... ... ति गुरुवी-भानुकीर्त्ति-व्रतीन्द्रम् ।
... ... ति गुरुवी-भानुकीर्त्ति-व्रतीन्द्रम् ।
जननि प्रख्यातेयादी .. .. दम् ।
तनगन्ता-पत्नि शङ्काम्बिके जन-नुत-नी-शङ्क-गावुण्ड मावं ।
जन-वन्द्यं दे ... ... लक्ष्मी-विळासम् ॥
केरेयम-सेट्टिय सुतरेम् ।
किव-कुळरे केतमल्ल ... ... ।
... ... कल्प महीजम् ।
नेरेयेसेगं देकि-सेट्टि यनुबरु धरेयोळ् ।
... ... पाद-सरोज-भृङ्गनम् ।
सु-कवि-जन-स्तुतं विबुध-कल्प-महीजन बणिकुं स .. .
... ... शा-करि-दन्तव मुट्टे पल्वुगुम् ।
विकसित-भव्य-पङ्कज-दिवाकरनेन् .. ... . ॥
... ... न-पद-पङ्कज-भृङ्गम् ।

जिन-महिमोत्तुंग विश्व-लक्ष्मी-सङ्गम् ।
जिन-महिम ... ... ।
... ... देकि-सेट्टि कीर्त्ति-विळासम् ॥
जिन-समय-वार्धि-हिमकर ।
जिन-मत-ल ... ... ।
... ... नम-निदानं तनगेने ।
जन-नुत-नी-देकि-सेट्टि धारिणिगेसेदम् ॥

अवर गुरु ... .. दडे ॥

कुन्तळ-गौड-माळव-जनाहुति-दोहळि पोट्टियाण था ।
... ... विदर्भणदिन्दे वन्दु सै- ।
द्धान्तिक-पद्मणन्दि-सुतनी-मुनिचन्द्रनोळेय्दे .. ।
... ... यिन्तु हरेदत्तु समस्त-धरा-तळाग्रदोळ् ॥
अतितीव्रानल-काळकूट ... ... जिननुङ्किडुद- ।
वतनं माणदे ... नाडिसुव कन्दर्प्पं वरल्कम्मने ।
... ... वयत्तुगे ... ... वी- ।
र-तप-श्री-मुनिचन्द्र-देव-मुनियङ्गक्कुं पेरङ्गक्कोमे ॥
आरैवडे मेचक्कम् ।
बारह ... ... गणित-स्थिति तत्- ।
सारतर-सूक्ष्म-तत्त्व-वि- ।
चारं मुनिचन्द्र-यतिगे हस्तामळकम् ॥

अवर ... ... तेन्तडे ॥

श्रीमन्मूल-पदादि-सङ्घ-तिळके श्री-कोण्डकुन्दान्वये ।
कानूर् नाम-गणो ... ... तिन्त्रिणीकाह्वये ।
शिष्य श्री-मुनिचन्द्र-देव-यमिनः सैद्धान्त-पारङ्गमो ।
जीयाद् ... ... श्री-भानुकीर्त्तिर्म्मुनिः ॥

उरगोग्र-ग्रह-शाकिनी-विहग-भूत-प्रेत ··· ग-मी- ।
कर-मेता ··· ··· ··· गणं भू-चक्रदोळ् तोरलु- ।
द्धरिसित्तन्तदे यन्त्र ओदिदुदे मन्त्रं कोट्ट वेर् तन्त्रव- ।
च्चरि सैद्धा ··· ··· ·· ··· नि नाथोग्राशे सामान्यमे ॥

स्वस्ति श्रीमत्-स (श) क-नृप-कालातीत-संवत्सर-सतंग ·· ··· अत्तेनेय १०९९ नेय श्रीमत्-कळचुर्य्य-भुज-बळ-चक्रवर्त्ति राय ··· ··· नेय हेमळम्बि-संवत्सरद ज्येष्ठ-शुद्ध-दशमियादिवारदन्दु ··· ··· ण-सङ्क्रान्ति-व्यती ··· ··· ··· थियोळु श्रीमद्-एळम्बळिय देकि-सेट्टि तन्न माडिसिद शान्तिनाथ ·· ··· उदिय खण्ड-स्फुटित ··· ··· यर-जीयराहार-दानकं चातुर्व्वर्ण्ण-श्रवण-सघकेन्दु श्रीमन्मूल-संघद काणूर्-ग्ग ··· ·· गच्छद कोण्डकुन्दान्वयद तुम्ब-वंशद वीर-बळ-माळातिशय (शय)-त्रयोत्कृष्टानादि-सिद्ध ··· ··· पुराधिनाथ-श्री-शान्तिनाथ-घटिकास्थानद मण्डळाचार्य्यरप्प श्री-भानुकीर्त्ति-सि ··· ··· कालं कर्चि धारा-पूर्व्वकं माडि गोळिकेरेय बयललु (यहाँ पर दानकी विगत दी है) अन्ता-स्थानमं तम्म शिष्यरप्प मंत्रवादि-मकरध्वज श्रुत ··· ·· रिगे कोट्टरु ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक और वाक्यावयव)।

[(शिलालेखका अधिकांश मिटा हुआ है)।

नागवल्लि-कुल और नागरखण्डका वर्णन । कदम्ब राजा सोयि देवकी प्रशंसा । बनवसे-नाड्का शासन विक्रमादित्यको मिला था, जिसे हय्वे, कोंकण, प्रसिद्ध गङ्गवाडि, और तुळु ··· ··· के राजा आकर भेंट देते थे ।

जिस समय, अपने समस्त पदों सहित, महा-म [ण्डलेश्वर] ··· बनवसे १२००० पर शासन कर रहे थे —नागवल्लिके आकर्षणोंका वर्णन । गावणिग कुलमें उत्पन्न हुआ केरेय [म-सेट्टि] था, जिसका पुत्र देकि-सेट्टि था । सङ्क-गवुण्डने देकि-सेट्टिके साथ मिलकर एलम्बळ्ळिमें एक जिनमन्दिर बनवाया । उसके (सङ्क-गवुण्डके) भानुकीर्त्ति-यतीन्द्र गुरु थे, माँ प्रसिद्ध ··· ··, पत्नी गङ्गाम्बिके

और उसका श्वसुर विश्व-विख्यात ······ था। केरेयम-सेट्टिके केतमल्ल और देकि-सेट्टि पुत्रोंमेंसे देकि-सेट्टिकी जैनधर्मके महान् संपुष्टिदाताके रूपमें प्रशंसा।

मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, काणूर्-गण, तथा तिन्त्रिणिक-गच्छके मुनिचन्द्र-देवके शिष्य भानुकीर्त्ति-मुनिकी प्रशंसा (जैसा कि क्रमाङ्क ३७७ वें शिला-लेखमें है।

(उक्त मितिको), एलम्ब्रळ्ळि देकि-सेट्टिने, अपने द्वारा बनायी हुई शान्ति-नाथ-बसदिकी मरम्मतके लिये, जीयस् तथा श्रवणोंकी चारों जातियोंके भोजन-प्रबन्ध (या आहार-दान) के लिये, शान्तिनाथ-घटिका-स्थान-मण्डळाचार्य्य भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवके पाद-प्रक्षालन-पूर्व्वक,—(उक्त) भूमिका दान दिया। और वह 'स्थान' उसने अपने शिष्य मन्त्रवादी मकरध्वजको अर्प्पण कर दिया।

हमेशाके अन्तिम श्लोक।]

[EC, VIII, Sorab, Tl., No. 384.]

३६०

हेरगू;—संस्कृत तथा कन्नड़।

वर्ष दुर्मुखी [११७७ ई० (लू० राइस)]

स्वस्ति श्रीमतु-दुर्म्मुखि-संवत्सरद चैत्र-सुद्ध-दसमी-सोमवार-दन्दु हेरगिन चेन्न-पार्श्व-देवर नन्दा-दीविगेगे श्रीमतु सुङ्कद हेगडे हेरगिन बाचरस-गट्टियरस-बम्म-देव-बल्लय्यङ्गळु सुङ्कवं बिट्टरु एत्तु-गाण ओन्दक्कं आ-तेल्लिगर मने-देरे ओन्दुवं ऊरोडेय-नारसिंगण्ण मार-गवुण्ड सेनबोव-सोमय्यनोळगाद समस्त-प्रजे-गळिद्दुं बिट्ट धर्म्मं॥

[(उक्त मितिको) चुङ्गीके अध्यक्ष (नाम दिया है) ने हेरगूके भगवान चेन्न-पार्श्व (पार्श्व) के हमेशा जलनेवाले दीपके लिये चुङ्गीके दाम छोड़ दिये। और चौकीदार (Headman) सेनबोव (जिन दोनोंके नाम दिये हैं)

और समस्त प्रजा एक बैलके कोल्हूका कर तथा एक तेलीके घरका कर देती थी (?)।]

[EC, V, Hassan, Tl., No 69.]

३९१

अजमेर;—प्राकृत।

[सं० १२३४ = ११७७ ई०]

संवत् १२३४ जेठ सुद १३ बुधदिने साधुधुल्हा पुत्रवान हालू पार्स्व (र्श्व) नाम देवपाल प्रणमतिमिहा।

अर्थ स्पष्ट है।

[JASB, VII, p. 52, No. 3, t.]

३९२

खजुराहो;—संस्कृत।

[सं० १२३४=११७७ ई०]

[यह लेख किसी जैन प्रतिमाके अध पाषाणपर उत्कीर्ण है और खजुराहोमें पाये जानेवाले जैन-शिला-लेखोंमें सबसे पीछेके (उत्तरवर्ती) कालका है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 69, 5, a.]

३९३

श्रवणबेलगोला; संस्कृत तथा कन्नड।

[वर्ष हेवणन्दि = ११७७ ई० ? (लू० राइस)]

[जै. शि. सं, प्र. भा.]

३४६

हट्टण—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक ११०० = ११७८ ई०]

[हट्टण (नेल्लीकेरी परगना) में, वीरभद्र मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीपति-जन्मदिन्देसेव यादव-वंशदोळाद दक्षिणोर्-
व्वीपतियप्पनोर्व्वं सळनेम्ब नृपं सळेयिन्दे कोपन- ।
द्वीपियनोन्दनोर्व्वं मुनि पोय्सळ येन्दडे पोय्दु गेल्दु दिग्-
व्यापि-यशं नेगळ्ते-वडेदं गड पोय्सळनेम्ब नामदिं ॥
स्वस्ति श्रीजन्मगेहं विधृत-निरुपमोदात्त-तेजो-महोर्व्वम् ।
विस्तारान्तः-कृतोर्व्वी-तळभवनतं-भूभृत्-कुल-त्राण-दक्षम् ।
वस्तु-व्रातोद्भव-स्थानकममलयशश्चन्द्रसम्भूतिधामं-
प्रस्तुत्यं नित्यमम्भोनिधि-निभमेसेगुं पोय्सळोर्व्वीश-वंशम् ॥
अदरोळ् कौस्तुभदोन्दनर्घ्य-गुणमं देवेमदुद्दाम-स-
त्त्वदगुर्व्वं हिमरश्मियुज्वलकलासम्पत्तियं पारिजा-
तदुदारत्वद पेम्पनोर्व्वने नितान्तं ताळ्दि तानल्ते पु-
ट्टिदनुद्वृत्त-तामो-विसेदि विनयादित्यावनीपालकम् ॥
कन्द ॥ विनयं बुधरं रञ्जिसे । घन-तेजं वैरि-बलमनञ्जिसे नेगळ्दं ।
विनयादित्य-नृपालकन् । अनुगत-नामार्त्थनमल-कीर्त्ति-समर्त्थं ॥
बुध-निधि विनयादित्यन । वध्रु केळेयब्बरसियेम्बळात्मास्यविमा-
विधुरित-विधु परिजन-का- । मधेनु नेगळ्दळ् सुशीलगुणगणधामं ॥
आ-दम्पतिगे तनूभवनादं तनगेरेगदरि-नृपाळरनं भो-
··द बोळेरगिपोनाहव- । मेदिनियोळे नेगळ्दनेरेयनेळेरेयङ्गम् ॥
वृ ॥ आतं चालुक्य-चक्रेशन बलद भुजा-दण्डमुद्दण्ड-भूप-

व्रात-प्रोत्तुङ्ग-मूर्द्धद्दिदळनकुलिशं वन्दि-सस्यौघ-मेघम् ।
श्वेताम्भोजात-देव-द्विरद-सुर-नदी-दुग्ध-वारासि-चन्द्र-
द्योत-प्रस्पर्द्धि-भा-भासुर-विशद-यशं राज-मान्धातृ-भूपम् ॥
कन ॥ आ-चारु-मूर्त्तिगसम-शा- । रोचित-नामङ्गे भुवन-जयिगेरेयङ्गळ ।
प्रचल देविये सरसिज- । लोचनॆ करविनेयळादळतनुगॆ रतिवोल् ॥
एने नेगळदा-यिर्व्वर्गं । तनुजर्व्वॆनिर्यिसिदरल्ते बल्लाळं वि-
ष्णु-नृपालकनुदयादि- । त्यनेम्ब मूवरुमुदारराहव-धीरर् ॥
वृ ॥ अवरोळ् मध्यमनागियुं धरणीयं पूर्व्वापराम्भोधियेय्-
दुविन कूडे निमिर्च्चुवेन्दु निज-निःप्रत्यूह-विक्रान्तदुद्-
भवदिन्दुत्तमनादनुत्तम-गुण-भ्राजिष्णु लक्ष्मी-वधू-
धवनुद्वृत्त-विरोधि-दैत्य-मथनं तद्विष्णुभूपालकम् ॥
बनवासी-पुरमा-विराटनगरं बल्लारि बल्लुर्व्वलि-
छ्ळिरुङ्गोळनकेरे कारुकनकोळल्ं कुम्मटं-चिञ्चिलुर्-
व्विनदा-पेम्मॆन धाचवूमुंदुगनूरेन्दिन्तसङ्ख्यात-दुर्-
ग्गं-निकायं नेरॆ भग्नमादुदु बळं भ्रूभङ्गदिं विष्णुव ॥
इनिति दुर्ग्गम-वैरि-दुर्ग्ग-चयम कोण्डं निजाक्षेपदिन्द् ।
इनिबल्भूपरलाजियोळ् तविसिदनुत्तन्तुग्र-बाणाळियिन्द् ।
इनिबर्ग्गानतर्गित्तनुद्घ-पदमं कारुण्यदिं विष्णुवेन्द् ।
अनितं लेक्किसि नोरॆपडञ्जभवनुं विभ्रान्तनप्प बलम् ॥
कन् ॥ बिट्टप्रहार-निवहं । कट्टिसिदरॆ-गोरॆय ब्ळगमेत्तिसिद मुगिल्-
मुट्टुव देगुलमनितं । निट्टिसुवडे···बिट्टि-देवन पेम्पम् ॥
लक्ष्मी-देवि लसन्मृग- । लक्ष्माननॆ विष्णुगग्र-वधुवेनॆ नेगल्दळ ॥
वृ ॥ अवनि-मनोजनन्ते सुदती-जन-चित्तमन् इल्कोळल्के साल्व-
अवयव-शोभेयिन्दतनुवेम्बभिधानमनानदङ्गना-
निवहमनेच्चु मुय्वनणमानदे वीरनॆनेच्चु युद्धदोळ ।
तविसुवनादनात्मभवनप्रतिमं नरसिंह-भूभुजम् ॥

विभवेन्द्रं खल-वह्नि दण्डध्वरनत्युद्धृत्त-दैत्याधिप ।
शुभ-रत्नागर-नायकं नतजगत्प्राणं बुध-श्रीदनै-
स्य-मवं तानेने लोक-पाळतेयनेकायत्तमं माडि निन्द् ।
अभिरूपं सुतनादनल्ते **नरसिंह**-क्षोणिपालोत्तम ॥
अरि-दैत्याधिप-वक्षमं खर-नखानीकङ्गळिं होळ्दु वल्-
गरुळं तोड्सिद नारसिंहनेनलक्कु वैरि-वीरावनी-
श्वर-वक्षस्स्थळमं स्व-खडग-नखर-व्याघातदिं पोळ्दु वल्-
गरुळं तोडुव **नरसिंह**-नृपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
कन् ॥ समनिसे रागं तम्मोळ् । दमयन्ति नळङ्गे सीते रघुबङ्गेन्तन्त् ।
अमर्देचल-देवि नृसिं- । ह-महीरमणङ्गे लक्ष्मिवोल् वधुवादळ् ॥
अवर्गे सुतनादनभिजन- । धवळं गिरि-दुर्ग्ग-मल्लनिभ-पति-दशदिग्-
धवलित-कीर्त्ति-वधूटी- । धवनखिलविजयपाण्ड्यनुत्त्तुंगिय-दुर् ।
गमनुरवणीयि कोण्डन- । समतेजोमूर्त्ति **वीर-बल्लाळ**-नृपम् ॥
वृ० ॥ केळ वसन्त-वाळ-सहकारद तण्-नेळल् आश्रिताळिगा-
भीळ-लयाहि-निष्ठुर-फणीघद मेय्-नेळलुद्धतारिगुन्-
मीळित-पुण्डरीकद नेळल् जयलक्ष्मिगेनिप्प **वीर-बल्** ।
लाळन तोळ-बाळ्ळ नेळलादुदु धात्रिगे वज्र-पञ्जरम् ॥
मनु-चारित्रं चरित्रं मनसिज-ललिताकारमाकारमञ्जा-
क्षन मन्त्रं मन्त्रमिन्द्रात्मजनदटद् अदट् अन्तीशनाप्पीप्पु भास्वन्-
वन तेज तेजमम्भोजजनरविरविन्द्र-प्रभावं प्रभावम् ।
तनगात्मायत्त मिन्ती-जगदोळेनिसिदं **वीर-बल्लाल-देवम्** ॥
स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरम् । द्वारावतीपुरवराधीश्वर । तळुव-बळबळधिवड्वानल । दायाद-दावानल । **पाण्ड्य**-कुल-कमळ-वन-वेदण्ड । गण्ड-भेरुण्ड । मण्डलिक-वेण्टेकारं । **चोळ**-कटक-सूरेकारं । सकळ-वन्दि-वृन्द-सन्तर्प्पण-समग्र-वितरण - विनोद । **शशकपुर**-कृत-निवास-वासन्तिका-देवी-लब्धवर-प्रसाद । **यादवकुलाम्बरद्युमणि** । मण्डळिक-मकुट-चूडामणि । कदन-प्रचण्ड । मलपरोळ-

गण्ड-नामादि-प्रशस्ति-सहित कोङ्गु-नङ्गलि-तलेकाडु-नोळम्बवाडि-बनवासे-हानुङ्गल्-
गोण्ड भुजबळ वीर-गङ्गासहाय-शूर शनिवारसिद्धि गिरिदुर्ग्ग-मल्ल निश्शंकप्रताप
होय्सल-वीर-बल्लाळ-देवर् दक्षिणमहीमण्डळमं सद्धर्म्मदिन्दे पालिसुत्तं दोरसमुद्रद
नेलेवीडिनोळ् सुख सङ्कथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

वृ० ॥ मुन्तिदिरान्तनन्त-रिपु-सैनिकरं सिडिलन्ते सिङ्गदन्त् ।
अन्तकनन्ते सङ्गरदोळ् ओवदे कीरगेयोक्किलिक्कि सा-
मन्त-ललामनी-नेगळ्द-तेङ्कण-रायनेनल्केनिप्प पेम्-
पं तळेदं प्रताप-निळयं धरेयोळ् नरसिंग-नायकम् ॥

तदाश्रयवर्त्तियप्प सोवि-सेट्टियन्वयमेन्तेन्दोडे ।

कन्द ॥ बसदि केरें देगुलं मळि- । गे सुरासुर-युद्ध-कथेयिवं मुदुवोळलोळ् ।
पोसतागे मेरेंविन निर्म्मिसि पडेदं जसद नेरेंवनेळेगेरेंगाङ्कम् ॥

वृ० ॥ सङ्गत-पुण्यनप्रतिमनप्प एरेंगाङ्कन वंशजं प्रधा-
नं गुणि बम्मि-सेट्टियवनात्ममनोहरे माचियक्कना-
तङ्गमवळामुद्भविसिदं कुल-वर्द्धन बम्मि-सेट्टि तन्-
ङ्गियवङ्गे शीलवति मारुति माकवे कान्ते लक्ष्मिवोल् ॥

कन्द ॥ विगत-कुमत गतमल गं- । भिग-सेट्टिगममल-शीलव्रति माकवेगं ।
अगुणगुणगणनिधानं । मगनादं सोमगुरु-चरित्रारामम् ॥
परनारीपुत्रं वण- । टर-भावं केळतिसयनचळितनयनूर्-
व्वर दण्डे सेट्टि सोमं । सरणागत-वज्र-पञ्जरं, गुणधामम् ॥
अपरिमित-दानि निज-सम- । य-पताकं देसियक्कारंनसहन- ।
द्वीप-केसरि वढबर वे- । लि पत्तनस्वामि सोवि-सेट्टि जितात्मम् ॥
नव-तत्वविदं वितरण- । रविसुतनभिमान-मेरु शशि-विशद-यशो-
धवळित-दिशाळि निजकुल- । कुवळय-विधु सोवि-सेट्टि सज्जन-मित्रम् ॥
परम-जिन-पद-कमल-मधु- । करि दान-विनोदे गोत्र-चिन्तामणि बन्-
धुरिम-गुणि सोवि-सेट्टिगे । मरुदेवि सुशील-पुण्यवती सतियादळ् ॥

वृ० ॥ गुणधाम मरुदेवि कान्ते तनुजातग्गोङ्गगं नारसिं- ।

वणनुं सिंगणनुं विशुद्धगुणरिन्र्व्वंबूंचणङ्गळ् जगत्- ।
प्रणुतर् निर्म्मळ-धर्म्मदोळ्पु जिनमार्ग-भोगळंकार-द्र्-
प्पणमाग्तेन्द्डे सोवि-सेट्टियवोळावो म्पुण्य-पञ्जोदयम् ॥
कन् ॥ वनधि-निभ-तटाक-त्रय- । मनमरगिरि-तुङ्ग-पार्श्व-जिन-गृहमं सज्-
जन-भूत-निज-नामद-पत्- । तनदोळ् माडिसि कृतार्थनादं सोमम् ॥
स्वस्ति परम-जिन-शासन-शस्त-श्री-मूलसङ्घ-देशियगण- ।
प्रस्तुत-पुस्तकगच्छ-स- । विस्ततर-कीर्त्ति-कुन्दकुन्दान्वयदोळ् ॥
विदित-गुणचन्द्र-सिद्धान्- । त-देव-सुतरन्य-वादि-तिमिरार्क्कर् वित्-
बुदा-नयकीर्त्ति-सिद्धान्- । त-देवरखिळावनीश-नत-पद-कमळर् ॥
वृ० ॥ ससियिन्दम्बरमब्जदिं तिळि-गोळं नेत्रङ्गळिन्दाननं-
पोस-भाविं वनमिन्द्रनिं त्रिदिवमा-शेषं मणि-व्रातदिन्द् ।
ऐसेवन्ती-नयकीर्त्ति-देवं-मुनियिं राद्धान्त-चक्रेशनिन्द् ।
एसेगुं श्रीजिनधर्ममेन्दोरे वळिक्के-वर्ण्णियोम् बण्णियोम् ॥
कन् ॥ घन-नुत-नयकीर्त्ति-मुनी- । शन शिष्य नेगल्द दामनन्दि-त्रैवि- ।
द्यनखिळ-पर-वादि-कुमृद्- । घनवज्रं विरुद-वादि-मदन-महेशम् ॥
अ-मदं पितामहं वीत-मलं मदनारि मूकना-विपताकम् ।
दमितान्य-वादियेने सन्- । द मान-निधि-दामनन्दि-मुनि-सन्निधियोळ् ॥
तदनुजनखिळ-कळा-को- । विदनात्माधीननमळ-रत्न-त्रितया-
स्पदनपगत-तन्द्र दो- । ष-दूरनध्यात्मि बाळचन्द्र-मुनीन्द्रम् ॥
नत-भुवननीश-चूडाम्- । चिताङ्घ्रि चन्द्रप्रभाङ्घ्रि-सेवा-निरतन् ।
नुत-वर्त्तमान-त्रोधा- । मृतरुचियेने बालचन्द्र-देव नेगल्दम् ॥
गद्य ॥ स्वति प्रताप-होय्सळ-पट्टण-स्वामि-सोमि(वि)-सेट्टि तां माडिसिद श्री-जिन-पार्श्व-देवरष्टविधार्च्चनेगं खण्ड-स्फुटित-जीर्ण्णोद्धारक्कं जिन-मुनिगळ्-आहार-दानक्कं वसदिय नाल्देसेय बेद्दलेयुमं वडगण नगरसमुद्रमुमं पट्टणदिं मूडण होय्सळसमुद्रद मोदलेरियोळ् ओर्-खण्डुग नीर्व्वरेयुमं तेङ्कण सेट्टियकेरेय मोदलेरियोळ् ओर्-खण्डुग गद्देयुमनूर॰मेण्टि सुङ्क सकळ-धान्य गोळग मूरुं चऊमावेय प्रभु-गावुण्डुगळ

सामन्त-नरसिंग-नायकननुमतदिं शकवर्षद सासिरद-नूरैनेय हेमळम्बि-संवत्स-रद पौष्य-सुद्ध-तृतीयार्क्कदिन-व्यतीपातोत्तरायण-संक्रान्तियन्दु **वीर-वल्लाल-होय्सळ देव**-राज्याभ्युदयात्थँन् निज-गुरुगळ् अप्पाध्यात्मि-**बाळचन्द्र-देव**र कालं तोळेदु धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट सीमेयेन्तेन्दोडे पूर्व्वमुं आग्नेयमु होय्सळसमुद्रद गद्दे-वरं बसदियिं तेङ्क मूवत्त भूण हन्नेरडु गद्दे-वरं नैॠत्यदोळ् बळ्ळेयकेरेय कोडि पडुवला-केरेय गद्दे-वरं वायव्योत्तरङ्गळ् नगरसमुद्रद निर्गोडु बडगण कोडियुं ईशान्यदोळ् जलारकेरे-वरं सीमे ॥

महाप्रधान **माधव-दण्डनायक**र बेसदि बहित्रद **नारन-वेग्गडे** नन्दा-दीविजे-गमष्टविधार्च्चनेगं ओन्दु गाणमुमं हेरिन सुङ्कद दशवन्दमुमं विट्ट (हमेशा की तरह अन्तिम वाक्यावयव और श्लोक) भद्रमस्तु । श्री

[इस लेखमे सर्वप्रथम जिन-शासनकी प्रशंसा है। इसके अनन्तर सळका 'पोय्सळ' नाम कैसे पड़ा, इसके उल्लेखपूर्वक 'उसकी आगेकी वशपरम्परामें विनयादित्य, एरेयङ्ग, विष्णुवर्द्धन हुए। विष्णुवर्द्धनने अपनी भ्रकुटिमात्रसे बन-वासीपुर, विराटनगर, बल्लारि, वल्लूर, प्रबल इरुङ्गोळका किला, करुककी चट्टान, कुम्मट, चिञ्चिलु, पेर्म्मका बाचवूर, मुदुगनूर, ये और अगणित दूसरे किले ले लिये। उसने बहुत-से विरोधी राजाओंको पराजित किया। उसने बहुतसे अग्रहार दानमें दिये, सर्वजनोपयोगी तालाब खुदवाये, और बहुतसे गगनचुम्बी मन्दिर बनवाये। विष्णुवर्द्धनकी पट्टरानीका नाम लक्ष्मीदेवी था, उनका **नारसिंह** नामका लड़का हुआ। उस लड़केकी पत्नी **एचल-देवी** है, जिससे **वीर-बल्लाळ** नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने दूसरी विजयोंके साथ-साथ उच्चाङ्गिके विजय-पाण्ड्यके किलेको भी जीत लिया।

जिस समय, (अपने पदों सहित), होय्सल-वीर-बल्लालदेव इस पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे, उस समय उनका पादपद्मोपजीवी दक्षिणका राजा **नरसिंग-नायक** था।

उसका आश्रित **सोवि-सेट्टि** था, जिसकी सन्तान-परम्परा इस तरह थीः— इसका पुत्र था **एरेगङ्क**। इसने एक तालाब, एक 'बसदि', एक मन्दिर, एक

अण्डागार, तथा मुद्दुवोळल्में दैत्य और दानवोंके चित्र बनवाये थे। उसका पुत्र बम्मि-सेट्टि हुआ। उसकी पत्नीका नाम माचियक था। उनका पुत्र बन्धि-सेट्टि हुआ, उसकी पत्नीका नाम माकव था। उनका पुत्र सोम हुआ। पट्टण-स्वामी सोविसेट्टिकी एक भार्या मरु-देवी थी, जिसके तीन (चार ?) लड़के थे— राझग, नारसिंग, सिंगण, और बूचण। सोवि-सेट्टिने समुद्रके समान तीन तालाब, एक पार्श्व-जिनमन्दिर अपने ही नामको धारण करनेवाले नगरमें बनवाये।

मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कुन्दकुन्दान्वयमें गुणचन्द्र-सिद्धान्त-देवके पुत्र नयकीर्त्ति-सिद्धान्त-देव हुए। उनके शिष्य दामनन्दि-त्रैविद्य हुए, जिनके छोटे भाई चन्द्रप्रम-पादपूजक बालचन्द्र-मुनीन्द्र थे।

इस प्रताप-होय्सल-पट्टण-स्वामी सोमि (वि)-सेट्टिने पार्श्व-जिनकी अष्टविध पूजन, मन्दिरकी मरम्मत, तथा जिन-मुनियोंके आहारदानके लिये चउगावेके प्रभु और किसानों तथा सामन्त-नरसिंग-नायककी स्वीकृतिसे कुछ भूमिका दान किया। और इस हेतुसे वीर-बल्लाळ-होय्सल-देवके राज्यकी वृद्धि होती रहे, कुछ दूसरी भूमि अपने गुरु बालचन्द्रदेवको उनके पादप्रक्षालनपूर्वक समर्पित की।

माधव-दण्डनायककी आज्ञासे घाट-अधिकारी नारण-बेर्गडेने हमेशा एक दीपके जलते रहनेके लिये तथा अष्टविधपूजनके लिये एक तेलका मिल (चक्की) और घाटपर उतरनेवाले सामान के ऊपर लगनेवाली चुङ्गीका $\frac{1}{10}$ वाँ हिस्सा दिया।]

[EC, IV, Nagamangala Tl. No. 70]

३९५-४०९

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़

[कालनिर्देश रहित]

[जै. शि. सं., प्र. भा.]

४०१

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११०३ = ११८१ ई०]

[पार्श्वनाथ-बस्ति के प्राङ्गणमें छुप्पर-मण्टपके पाषाणपर]

श्रीविद्यानन्द-स्वामिनः । चिक्क-तायिगळु ।
श्रीमदच्युत-राजेन्द्राद् दीयमान-सुतो वर ।
श्रीमदच्युत-वीरेन्द्र-शिक्यपाख्यो नृपाग्रणीः ॥

तस्य भिषग्वरः ।

कमलज-कुल-जातो जैनधर्म्मान्न-भानु-
र्विदित-सकल-शास्त्रस्सद्-बुध-स्तोम-सेव्य ।
मुनिजनपद्मभक्तो बन्धु-सत्कार-दक्षो-
धरणिय-वर-वैद्यो भाति पृथ्वीतलेऽस्मिन् ॥

तस्य कुलवनिता ।

त्रिवर्गसंसाधनसावधाना साध्वी शुभाकारयुता सुशीला ।
जिनेन्द्रपादाम्बुजभक्तियुक्ता श्रीचिक्कतायीति महाप्रसिद्धा ॥
प्लवाब्देऽप्याश्विने शुक्ल-दशम्या गुरुवासरे ।
कनकाचल-पार्श्वेश-पूजार्त्थं-पञ्च-पर्व्वसु ॥
मुनीना नित्य-दानार्त्थं शास्त्रदानाय सन्ततं ।
चिक्क-तायीति विख्याता दत्तश्री-किन्नरीपुरा ॥

तयो पुत्र ।

विद्याधारस्सदाकारस्सुमना बन्धु-पोषकः ।
हृदयः पूज्यो भिषग्-राजस्तत्त्वशीलो विराजते ॥

(हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

ई-शासनद शकवर्ष ११०३ ने प्लव-सं ॥

[विद्यानन्द-स्वामी, चिक्कतायी के द्वारा।

अच्युत-राजेन्द्रसे अच्युत-वीरेन्द्र-शिक्यप-नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। वैद्यके रूपमें उसकी प्रशंसा। उसकी स्त्री चिक्कतायीने, पाँच वर्षोंमें कनकाचलमें स्थित पार्श्वेशकी पूजाके प्रबन्धके लिये, मुनियोंके नित्यदानके लिये, और हमेशाके शास्त्रदान (उपदेश)के लिये, किन्नरीपुरका दान दिया। उनके पुत्रकी वैद्यके रूपमें प्रशंसा।]

[EC, IV, Chamarajnagar, Tl., No. 158]

४०२

तेरदल;—कन्नड।

[शक ११०४=११८१ ई०]

स्वस्ति समस्त-भुवन-विख्यात-पञ्च-शत-वीर-शासन-लब्धानेक-गुणगणालङ्कृत-सत्य-शौच-आचार-चारु-चरित्र-नय-विनय-विज्ञान-वीरवणञ्जु-धर्म्म-प्रतिपालन-विशुद्ध-गुड्ड-ध्वज-विराजितानेकसाहसलक्ष्मीसमालिङ्गितवक्ष स्थळ भुवनपराक्रमोन्नतरुं मलपट्टि-गुरूत्पत्ति-बलदेव-वासुदेव-खण्डलि-मूलभद्र-वंशोद्भवरुं पद्मावती-देवी-लब्ध-वर-प्रसादरुमप्प श्रीमद्-अय्यावळेयय्नूर्वं [र] स्वामिगळ् कुन्तळ-विषयदोळ ग्राम-नगर-खेड-कर्व्वड-मडम्ब-द्रोणामुख-पत्तणंगळिंदमनेक-माटकूट-प्रासाद-देवायतनंगळिं-दमोप्पुवग्रहार पट्टणङ्गळिंदमतिशयवप्प श्रीमत्-कूण्डि-मूरुसासिरदोळगे इन्नेरडक्कं मोदल-वाडं वणञ्जु-पट्टणं नडवेयमने तेरिदाळदल् शकवर्षं ११०४ नेय प्लव-संवत्सरद आश्वयुज बहुळ ३ आदिवारदळ् द्वात्रिंशत्-वेळापुरमुमष्टादश-पट्टणमुं बासष्टि-योग-पीठमुमरुवत्तनाल्कु-घटिक-स्थानमुं नानादेशाभ्यन्तरद गवरे-गात्रिगरुं सेट्टियरुं-सेट्टि-गुत्तरुं महानाडागि नेरदा स्थळदळ् श्रीमन्मण्डळिकं गोङ्क-देवरसं माडिसिद नेमि-तीर्त्थेश्वरन चैत्यालयमं कण्डु बलं-गोण्डु पोडेवट्टु हर्षचित्तरागि देवरष्टविधार्च्चनें [आ] चन्द्रार्क्क तारं बरं नडेवन्तागि कोट्ट शासन-

मर्य्यादियेन्तेन्दोडे चतुस्समुद्रपर्य्यंन्तं बरं नडवन्तागि १२० नूरिप्पत्तेतुकत्ते-कोण-मण्डि-मैत्र-दोणि-दुर्गि-गळ-पथमत्रेयळ् नडेवद मुङ्क-परिहारवागि कोट्टर् मत्तं शासन-परिहारिगरेन्नदे वोकल लोन्दु पणवं विट्टर् ॥ यिन्ती केयि-मने-तोट-मुख्य-समस्त आय-दायवेल्लमं सर्व्वबाधापरिहारवागि धारा-पूर्व्वकं माडि विट्टर् ॥ स्वस्ति श्रीमत्-कोण्डकुन्दाचार्य्या-न्वयद श्री-मूल-संघद देशीय-गणद पोस्तक-गच्छद श्री-कोल्लापुरद जिनदेव-सावन्त मडिसिद श्री-रूपनारायण-देवर बसदिय प्रति-बद्धमप्प तेरिदाळद गोङ्क-जिनेन्द्र-मन्दिरक्के कोल्लापुरदगस्त्येश्वरद कणगिलेश्वरद महालक्ष्मी-देविय गोकागेय महालिङ्ग-देवर यिन्ती घटिक-स्थानदाचार्य्यर मुख्य-एळ्-कोटि-पुव-संख्यात-गणगळ् महामण्डलियागि तेरिदाळद मूल-स्थानद कलिदेव-स्वामिगे प्रतिबद्धं माडि आ नेमिनाथ-स्वामिय प्रतिष्ठाकालदला गोङ्क-जिनालयदाचार्य्यरप्प प्रभाचन्द्र-पण्डित-देवरिगिदेम्म जोग-वट्टिगेय स्थानमेन्दु जोगवट्टिगेय निक्किदर् ॥ वसदिय मेले शूद्रकन सिंहद चक्रद चिह्नमेम्बिवं तिसुळद घण्टेयं परेय नागदेनिंप्पवनेळु-कोटि- तापसर्गो महा-विरोधि-यवनीश्वर-वैरियेनुत्तविक्किदर्म्मिसुगुव जोग-वट्टिगेयना मुनि- सकेय कोटि-तापसर् ॥

[IA, XIV, p. 14–26, (line 56–68)] t. and. tr.

४०३

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक ११०४ = ११८१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०४

श्रवणबेलगोला—कन्नड ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०५

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०६-४०७

श्रवणबेल्गोला—कन्नड-भग्न ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०८

चिक्क-मागडि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक [१] १०४ = ११८२ ई०]

[चिक्क मागडिमें, बसवण्ण मन्दिरके प्राङ्गणमें एक स्तम्भ पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीराजिप्पुदु धर्म्मदिं नियत-धर्म्मं शान्तियिं शान्ति-वि- ।

स्तारं कुन्थु ··· ··· ··· ··· ··· ·· ··· ।

··· यकर् विनुत-धर्म्मं शान्ति सत्-कुन्थुवेम्ब- ।

ई-रत्नत्रय-देवरूजितमेनल् दीर्ग्घायुमं श्रीयुमम् ॥

प्रकटं व्यास ··· ··· ··· ··· स्वरूपं नित्य-भावं विकर्- ।

त्रिकमावेष्टित-मारुत-त्रितयवा-षड्-द्रव्य-सम्पन्न-व- ।

त्तंकमोप्पिदुदु नोडे नाडेयुवधो-मध्योर्ध्व-लोक ··· ।

··· लोककेसेदिप्पुदन्तुमय-कर्म्मोद्योग-निर्म्माण-सल्- ।

लीलं द्वीप-समुद्र-वर्गं-बळयीभूत-प्रभूत-स्थळी- ।
माळाळ ··· ···, भू-रमणं जगद्धितनी-महत्त्वक्केनल्केम् ।
णडुवोप्पं बेत्तुदो तां लवण-जलधि रजम्मणल् लव्दिम नीर्- ।
वेण्णोडरिप्पा-कल्प-वृत्त-प्रसव ··· ··· देवेळ्वेनोळ्पम् ॥

कं ॥ वार्-वळय-निकरवेम्बा- ।
नीर्वेलिय नडुवे नेरवु जम्बू-चिह्नम् ।
सार्विनवीप्सित-फळमम् ।
पार्विनवेळेगिम्बिदाय्तु जम्बू-द्वीपम् ॥
इदु जम्बू-द्वीप ··· निदु सुरोर्व्वीरुहौदार्य्यदिन्दिन्त् ।
इदु राजद्वैर्य्यदिन्दिन्तिदु जनित-जिन-स्थान-भोग्योपयोगा- ।
भ्युदय-श्री-लीलेयिं राचरसन तेरदिन्दुन्नतत्वक्के पक्का- ।
दुदेवेनुत्तं चन्द्र-सूर्य्यौ ··· ··· राराजिसिक्कुम् ॥
दोरेवेत्ता-मेरुविन् तेङ्कण-देशेयोळदेनोळ्पुवेत्तिदर्दुदो श्री- ।
भरत क्षेत्रं करं तुम्बिगळ मधुर-मन्द्र-स्वरोद्गीतदिं मे- ।
ल्ले-रलिगळ्ळाडुवेल्लेल्लेलेम ··· ··· पुष्पाञ्जळि हण्ण-गोञ्चल्- ।
वेरगिन्दं चूतवल्ली-विततिगळेसेदा-लास्य-सारस्यदिन्दम् ॥
कं ॥ श्रीमज्जनदिं सुमनो- । धामतेयिं भ्रमर-शोभेयिं कर्णाट- ।
सीमेयना-भरत-श्री- । ··· तोप्पुं नाडे कुन्तळ-देशम् ॥

वचन ॥ मत्तमल्लि जनद कोण्टेयुं गुणद व्यवहारमुं विनदद व्यवसायमुं रसद तोरे-गणिनेसेव केळी-वनङ्गळुं बिरयिगळ कामनयिक्के···रेयं गोण्डिप्पं ळीळेयिं नेरेद-कमळिनिगळुं वसन्तकेळिगे समेद पोण्डोणिगळ-गोण्डळमुं धर्म्मक्के नेम्मंमुं भोगक्कागरमुमाद घटिका-स्थानमुं रत्न-समृद्धिगे सोल्लु स ·· ··· भगळ गोण्डुदेनिप परिखेयिं राजमण्डलसमाजमेनिप कामिनीयर मुख-कमळ-निकरमुं ग्राम-नगर-खेड-खर्व्वण-मडम्ब-द्रोणामुख-पुर-पत्तन-राजधानिगळ वन ··· ··· ··· मेल्लि नोळ्वडवल्लि मेरेदु नव-विधमागि तोप्पं कुन्तळ-देसक्के ॥

क ॥ क्रमदिं विक्रमदिं दा- । न-मनोहर-वृत्तियिं चाळुक्य-नृपाळे- ।
त्तमरात्म-कीर्त्तिया-भू- । रमणिगे मुत्तुगळ तोडवेनल् प्रियरादर् ॥
चाळुक्य-भूभुजर्ङ्गिवि- । केळिपोळिरे पेरगे नेरेये काम्पुवोलिर्द्दर् ।
भू-वधुगे रट्टरवरं । सोलुचं तैलनाल्दिदं नेरे पररेयम् ॥
अवर्दा-तैलङ्ग सत्याश्रयने मगनवङ्गात्मजं विक्रमन् तान् ।
अवनिन्द त्तय्यणं तां किरियने जयसिंहाङ्कनुं तम्मनन्ता- ।
हवमल्लं तत्सुतं तत्-तनयनेसेव सोमेश्वरं तन्महीशं- ।
गे सळं पेर्म्मडि-देवं मगनवन मग ताने भूलोकमल्लम् ॥
समनिसितवङ्गे जगदे- ।
कमल्लनेनिसिर्द्द पुत्र-रूपदे तेलो- ।
रमणीयतेयवननुजम् ।
रमणं मेरेदं जगक्के नूर्म्मडि-तैलम् ॥
वळिकं नलविं शार्द्दूल् । चाळुक्य-राज्य-रामे बिज्जळोर्व्वीपतियं ।
कळचूरि-तिळकननेम् पेड् । गळ चित्तं होसतनरसुतिर्प्पुदु होसते ॥

वृ ॥ दाडेगळुण्टिवङ्गे रणदोळ् सले मूडुववेरिदानेयोळ् ।
कोडुगळुण्टु मत्तेरडवङ्कुसदन ··· ··· ग ।
··· ··· डोळवन्तवन्य-नृप-रक्त-विसिञ्चनवेन्दराति ··· ।
द्दोडदे निल्वनावनेनुतिर्प्पुदु बिज्जलनं जगज्जनम् ॥
असि लते कूडे गण्डु मगुळ्दत्तहितावनिपाळ-भूमि-पेण् ।
मसगिदुदञ्जदान्तवरोळा-सुर-कान्तेयगान्त-वेट्टु- ।
व्वसवेनिसित्तु कादिदेडे नेत्तर-चौगिने केसोरन्तेयम् ।
पसरिसितेन्दु बन्दु शरणेम्बुदु बिज्जलनं द्विषज्जनम् ॥
वळेदन्ता-बिज्जळङ्गेनदटेसेट्टुदो पेळ् सिंहलाधीश्वरं बे- ।
त्तळिगं नेपाळकं घट्टिऽकलनडपदाळ् केरळं गुज्जरं कं- ।
मळिगं मत्ता-तुरुष्कं कुदुरे वेसदवं लालनादञ्चुळाय्तं ।

हेळेयं **पाण्ड्य** **कळिङ्ग** करि-गरिचरनागाळ्तेसेङ्गेय्ये निच्चं [।]॥
जगमं सम्प्रीतियिं **बिज्जल**-नृपतिय तम्मं भुजा-गर्व्वदिं **मै**- ।
ळुगि-देवं पाळिसुत्तं मेरेद वळिकवा-**बिज्जळो**र्व्वीश-पौत्रम् ।
त्रिगुणीभूत-प्रतापं तळेदनेळेय ... **कन्दार**-क्षोणिपं तन्-।
जगती-नाथानुतातं बळिकमवनियं ताळ्दिदं **सोवि-देवम्** ॥
क्रमदिं **कर्ण्णाट**मं **कुन्तळ**मनोलविनिं तीळिद तळकय्यि रम्यां- ।
गमनिम्बिम्बिम्बिपोळ्पं पडेदु पृथुल-**लाट**क्के **काञ्ची**प्रदेश- ।
क्के मनम्बेत्तेय्दे राग बुदिद-कर-सरोजातमं नीडिया-**रा**- ।
यमुरारि-क्षोणिपं मेदिनियनिनिसु वन्देक-भोग्यक्के दन्दम् ॥
आतन तम्मनर्जित-गुणं विसु-**मैलुगि-देव**नाळ्दिदम् ।
भू-तळमं बळिक्कमवनिं किरियातनेनिप्पनादोडम् ।
ख्यातिथिनार्ग्गवल्ते हिरियातनेनल् घरे **शङ्क**मोर्व्वीप- ।
भ्रात-नुतं धरा-वळयमं परिरक्षिसुतिर्द्दनोळ्मेयिम् ॥

कं ॥ शङ्कन कीर्त्ति-प्रमेयिन्- ।
द कामिनि भूमि गौर-रुचियिन्देसेदेम् ।
शङ्किनियादळो गीता- ।
लङ्कृत-नाना-विनोद-विळसित-गतियिम् ॥

वृ ॥ सवनार् **निश्शङ्कमल्ल**-क्षितिपतिगे तच्चक्रियिन्दं वळिक्का ।
हवमल्लं राय-नारायणनधिक-गुण **शङ्क**-भूपानुजं भू- ।
भुवनाराध्यं धरा-मण्डलमनतुळ-दोर्द्दण्डदिन् ताळ्दिदं नोळ- ।
पवर्गक-च्छत्रम मेय्धिरि मेरेविनेगं प्राज्य-साम्राज्यदिन्द ॥
क्रमदिन्दा-**बिज्जळो**र्व्वीपतिगे पडेदु सप्ताग-सम्पत्तियं म- ।
त्तमदं तच्चक्रियिन्दित्तळुमोदविद राजावळी-ळीलेगं तन्- ।
दुमिदे सप्ताङ्गम काणिसिदनेने जगं मन्त्रदिं तन्त्रदिं वि- ।
क्रमदिं श्रीयिं सदाचारदिनोसेदेसेदं **रेचि-दण्डाधिनाथम्** ॥
कळचूर्य्य-क्षितिपाळ-राज्य-लते पव्वल् तन दोष-शाखेयं ।

विळसन्मन्दर-सानुगं विबुध-सेव्यं विस्तृत-च्छायन- ।
स्खळितौदार्य्य-विळास-भासि सुमनस्-संपूर्णनुद्यद्यशः- ।
फळदिं रेचण-दण्डनाथनेसेदं लोकैक-कल्प-द्रुमम् ॥
जिननं तन्न मनमं मनः-प्रकृतियं सद्-विद्येया-विद्येयम् ।
तनुवन्ता-तनुव विळासवदनुघल्-लक्ष्मिया-लक्ष्मियम् ।
विनुतौदार्य्यवदं जगं जगमनिम्बी-कीर्त्तियालिङ्गिसल् ।
जन-वन्द्यं विभु-रेचिराजनेसेदं चारित्र-रत्नाकरम् ॥
कवि-तति वल्मेगोलगिसे कामिनियर् सोत्रगिङ्के सोले वेळ्-
पवर्गळुदार-वृत्तिगोलविं नर-शासनवागे राज्यमुद्- ।
भवदिनोदर्ञ्चि जैन-समयाम्बुधि कीर्त्ति-सुधांशुविं पोदळ्- ।
के वडेये रेचिराजनेसेदं जसदिं वसुधैक-बान्धवम् ॥
नडेद-नेलं रणोर्व्वरेयोळन्तनितुं तनगज-पुञ्जरिम् ।
पडेद-नेलन्दलेम्बनसिगन्य-नृपाळरनिक्कदुन्ते किळ्- ।
तडे कडु-दोसवेम्बनसहं मिगे बेङ्कुडे पट्टे ताने वेड- ।
गुडुववोलेम्बनेनटदनो कलि-रेचण दण्डनायकम् ॥
अनुपम-दान-शौच-रण-शौर्य्यमने-त्रोगळ्दप्पेनाम् द्विपन्- ।
जनपरोळोन्दुवच्चरसियर्गे सथम्बरवागे सग्गदोळ् ।
जनियिसितिन्द्र-भूरुहके तोरणदिन्तविलेम्बुदेय्दे मे- ।
दिनि वसुधैक-बान्धव-चमूपति रेचणनेम् कृतार्त्थनो ॥
पेडे-वणि शेषनोळ् सरसिजोदरनम्बुधियोळ् मृगाङ्कचन्द्र ।
उडुपनोळद्रिजार्द्धभवाङ्गदोळा-मद-लुब्ध-भृङ्ग विर- ।
प्पेडे दिगि-भङ्गळोळ् कुरुपु दोर्म्पिनेगं जगमं मुसुङ्कितिड्- ।
गडलेने कीर्त्ति रेचनेसेदं जसदिं वसुधैक-बान्धवम् ॥
श्रीवर्द्धं सिरियिं समृद्धनेसेवा-नागाम्बिका-सूनु-भो- ।
गावासं वसुधैक-बान्धवनुदारं स्तुत्य-गौरी-सुख- ।
श्री-विष्टं वृषभध्वज-प्रियतमं नारायणात्मोद्भवम् ।

भा ' वेत्तिरे चेल्वनेन्देनिसिदं श्री-रेचि-दण्डाधिपम् ॥
तरदि देशङ्गळु श्री-कळचूरि-कुळ-चक्रेशरि पेत्तुदी-ना- ।
गर-खण्डकार्त्यवट्टा-नृपरोळ् पडेदिम्बिन्दबाळ्डिप्पंना- रे- ।
चरसं तानेन्दोडे-वण्णिपुदो निसदवी-देशदिन्दोळ्मेयं बि- ।
त्तरदिं पङ्केज-रूपं बलवसेयादरोळ् श्रीय-वोलिप्पुदेम्बेम् ॥
कुसुम-रजं रसावळि तोळर् सोव डाङ्गुव कीर-जाळवेम्ब् ।
एसकदे चल्वुवेरिदं-नेलं नेले-वेर्च्चिद पूगोळम्बिसुर्- ।
प्पेसगद-नुण्-बिसल् सुळिव कम्मेलरीद्विसे इच्चनोप्पुवा- ।
गसवेसेयल्के नाडेसवुदेन्तु बसन्तद सृष्टियेम्बिनम् ॥

कं ॥ आ-नागर-खण्डमना- ।
ल्पा-नृप-विनुत-कदम्बरन्ता-नृप-स- ।
न्तानाम्बुजदोळे सकल-क- ।
ळा-निळयं ब्रह्म भूपुवं जनियिसिदं ॥
आ-विभुविङ्गं चट्टल- ।
देविगवुदायिसिदनखिळ-नीति-क्रम-सं- ।
भावित-राजाचारं ।
श्री-वधुगेसेयल्के शौर्य्यदोप्पं बोप्पम् ॥
मेदिनिगे बोप्प-देवनित् ।
आदुदु हगे हुगद बाळ बाळ्वेलियवङ्ग् ।
आदळ् वल्लभे विनुत- ।
श्री-देवियवर्गो पुट्टिदं सोम-नृपम् ॥

वृ ॥ नुडिगललन्दे मुद्दु-नुडि सत्य-पताकनेनिप्पुदोप्पिद- ।
ट्टदि निगळंक-मल्लनेने राजिपुदोजे कडम्ब-रुद्रनेम्ब- ।
ओडेतनवं नेगळ्चिदुदु गण्डर-डावणियेम्ब्-नाममम् ।
पडेदुदु सोम मभिपन शौर्य्य-गुणावलियेम् कृतार्त्थनो ॥
निनगन्ता-काममोगळ् केळेयनेनिपुदं तोप्पुंवोलेम्मनेर्च्चे- ।

च्चु नितान्तं निज पादक्केरगिपनेनुतं कान्तेयर्ब्बोले काळ्गा- ।
नन-काश्मीर-द्रवं पट्टिद निगळद् चाङ्गाळ्वनङ्गक्के सेवा- ।
वनितारागम्बोळागळ् मेरेवुदनुदिनं सोम-भूमीश-पादम् ॥
भुनिदोडे-सोम-भूपनमागर्प्पेडेया-वनवासेयन्तदन्त् ।
अनितुमदीगळातन भुजासि-लता-वृत्तवाय्तु पोक्कुसिल्- ।
किनोळिरे पोक्तदेन्दधितरोडि समुद्रद वेळेगण्डु ताव् ।
अनुमिसि वेळेगोण्डु सुखमिर्प्परिदेनर्दाटद्दे नोन्तनो ॥
विरुदर् व्भीतोर्व्विपाळर् म्मदन-परवशीभूतेयर् विद्येयुळ्ळर् ।
श्शरणेन्दर् स्सेवकर् व्वेळ्पवर्गोल्दीवनी-सोम-भूमी- ।
श्वरनेन्दुं रागदिं सङ्गतमनभयमं वेटवं तुष्टिय सथ्- ।
इरवं सम्प्रीतियं वेळ्पुदनेने जनवौदार्य्यदिं वर्य्यनादम् ॥
तोळ तोडप्पुं मच्चिपेर्डे-वत्तुंगे चुम्बिसुविम्बु सोम-भू- ।
पाळनोळेक-भोग्यवेनिसल् तनगागिरला-स्थळङ्गळम् ।
पाळिप कापु वीर-सिरि लक्ष्मि सरस्वतियेन्दे सैरिपळ् ।
मेळिसलीवळे पेररनेन्देने लक्खल-देवियोप्पुवळ् ॥
एनिपा-दम्पतियोल्मेगग्गळिसलोप्पं प्राज्य-साम्राज्य-का- ।
मिनि माडल् विगियप्पनेय्तरे परोर्व्वीपाळरि कप्पविन्त् ।
इनिसुं माडदिरल्के दुष्ट-तति तप्पं पुट्टिदं बोप्पनेम्ब्- ॥
इनेगं बोप्प-नृपाळनप्रतिम-पुण्यं राचिसित्तुर्व्वियोळ् ॥
कं ॥ ई-बोप्पं देवकिगाद्- । आ-बोप्पं तप्पदप्पनरिदेम् कीर्त्ति- ।
श्री-वाय्-देरेदोडे काणल्क् ।
ई-वन्दुदे भुवन-निकरवेने पेसर्वडेदम् ॥
॥ नगेयल्तेयेमे यिकतिर्द्द-हदिनेण्ट्-अक्षोहिणी-सेनेगन्द् ।
उगुरिं सत्त हिरण्यकाचकनेनिप्पङ्गन्ददेम् विट्ट-कङ्ग् ।
अविदन्ता-भयदिन्दे वेन्द मदनङ्गन्दा-महाभारण्- ।
मुगेयेन्दी विभु-बोप्प-देवनले सत्वाधिकान्यौघमम् ॥

कदन-क्रीडेयोळुळ्ळ मिन्न दयेयेकिन्तोर्म्मेयुं तोरदी- ।
मदन-क्रीडेयोळुद्द मरेदई नीर्-चोकड नाण पुत्त्- ।
उदलोन्दिर्द्दुर्दविचोडं तलेयने सम्प्रीतियं तोरेयेन्द् ।
ओदर्वि मेळिपे कान्तेयर् म्मेरेवनी-श्री-बोप्प-भूपाळकम् ॥
क ॥ सिरियिन्दोप्पुव बान्धव- ।
पुरवातन राजधानियन्ता-पुरदोळ ।
सुर-खचरोरग-मणि-मकु- ।
ट-रचित-पद-कान्ति शान्तिनाथं मेरेवम् ॥
वृ ॥ पाळभिषेकवन्तेनितदादडर्वाह्नियदृश्यमप्प पू- ।
माले पदक्के जानुवरविक्किदोडं निर्मिर्द्धुण्ण-तोयदिम् ।
लीलेयि मज्जनक्केरेये ग्रामदे शीतळवागि वर्प्पवेम् ।
सालवे शान्तिनाथन महा-महिमत्वमनोल्दु बण्णसल ॥
कं ॥ एनिपास्थानाचार्य्यम् ।
मुनि विनुतं भानुकीर्त्ति-सिद्धान्ति जगज्- ।
जन-वन्द्य निज-गुरु-कुळ- ।
वनज-विकाशमनोडर्चुव तपदिन्दम् ॥
अलदुंददेन्तेनला-गुरु- ।
कुळवा-गौतमनेनिप्पं गणधरनिन्दित्- ।
तलनेक-मूलसंघा- ।
विळ-यति-पतियाद कोण्डकुन्दान्वयदोळ् ॥
श्री-रावणन्दि-सिद्धा- ।
न्ताराव-चरोवरक्के तोडवेनिपं वाक्- ।
श्री-रम्य-पद्मणन्दि-त- ।
पो-रमे पिडिदिर्द्द पद्ममेने तच्छिष्यम् ॥
तन्मुनि-नाथन शिष्यं ।
मन्मथ-सह वक्षदङ्गना-रति सुखमम् ।

सन्मुनि-सद्गुरु-कुवळय-।
भ्रन्मति पोसतेनिसि नेगळ्दना-मुनिचन्द्रम् ॥
वृ ॥ लोकमनावगं बेळगिदं ससदिं मुनिचन्द्र-देवन-।
प्राकृत-जैन-योग-निळयं प्रकटीकृत-[त]त्व-निर्णयम् ।
स्वीकृत-शब्द-शास्त्रनुररीकृत-तर्क-कला-कळापन्-
रीकृत-काव्य-नाटकनघ कृत-मीनपताक-विक्रमम् ॥
कं ॥ तच्छिष्यं प्रकटीकृत-कीर्-
त्ति-च्छत्रं भानुकीर्त्ति क्राणूर-गण-भू-।
मि-च्छत्र तिन्त्रिणीक-सु-।
गच्छं श्री-तुम्ब-वंशनेसेदं जगदोळ् ॥
वृ ॥ शान्त-रसीत्थ-मूर्त्ति दिगिभ-व्रज-मस्तक-वर्ति-कीर्त्ति सैद्-।
धान्तिक-चक्रवर्त्ति जिन-पाद-निधान-सुदीप-वर्त्ति चै-।
रन्तन-जैन-योगिसम-वर्त्तियेनल् मुनि-भानुकीर्त्ति पेम्-
पं तळेदं स्व-मन्त्रि-गति-धूर्त्त-जनक्कतिवर्त्तियेम्बिनम् ॥
नियत तन्मुनिनाथ-शिष्यनेसेदं सन्मार्ग-सम्पत्तियिम् ।
नयकीर्त्ति-व्रति-नायकं विबुध-वाञ्छा-दायकं जैन-स-।
स्व-यथार्थागम-कायकं कृत-यशस्-संस्नायकं ध्वंसिता-।
भय-निस्यन्दित-पुष्पसायकनुदग्रौदार्य-सन्दायकम् ॥
कन्द ॥ अन्तेसेदाचार्य्यावळिय्-।
इ तिळिदागमङ्गळं जिन-समयोच्-।
चिन्तामणि सं(शं)कर-सा-।
मन्तं शान्तियने माडि शङ्करनेनिपम् ॥
विदित-पराक्रमनेनिपा-।
कदम्ब-नृप-तिळक बोप्प-देवन राज्या-।
भ्युदयक्के ताने मोदलेनि-।
सिदना-सामन्त-शङ्करं नयदिन्दम् ॥

सामन्त-शङ्करनिन्दुद- ।
दामते-वडेदिर्द्द नण्डु-वंशद सिरि मुन्न्- ।
ए-माल्केयेम्बोडन्वय- ।
रामेगे तोडवादनमळ-सङ्ग सिङ्गम् ॥
सिङ्गल कान्तेयल्ते सिरियातन केसर-माळेयम्न चेल् - ।
विङ्केडेगोण्डु माळनवर्गादनवङ्गेणेयागे माणियक- ।
अं गुण-युक्ति-कान्तेयनर्गिम्बिने पुट्टिदनेकनेक्के-गो- ।
ङ्गनुजातना-केरेयमं मेरेद स्तुति-जीवनोदयम् ॥
क ॥ अनुदिनमवरिच्छा-जनि- ।
त-फलं बळये तन्न कालगळनाश्र- ।
यिस नितान्त केरेयमना- ।
दनवरेसव्वे नन्नळावळु नलविम् ॥
वृ ॥ अवरिर्व्वर्गावुदात्तनप्पनेनिसिर्द्दा-बोप्पगावुण्डनु -
द्भवमुं तानु-श्रुदात्त-वृत्तियुमनूनौदार्य्यमुं पेम्र्मेयो- ।
प्पवुदागरे पुट्टि कीर्त्ति-पडेदं तानिन्त्वेवोळ् चाकि-गो- ।
ह्वि विनूताङ्गज-वार्द्धियोळ् पडेये सत्-पुण्याङ्कन लक्कनम् ॥
वर-वनिता-वशङ्करनराति-नृपाळ-भयङ्करं जिने- ।
श्वर-यति-किङ्करं स्वपति-चित्त-मढंकरनिष्टवर्गं-शं- ।
करनखिळार्त्थ-शास्त्र-सु-दृढंकरनात्म-सुखंकरं मनो- ।
हरनेने शकरं पडेदनोप्पे चरित्रदोळं ··· ··· र्त्तियम् ॥
दिनमेल्लं दान-केळि-समयमे तनगेन्देम्बिनं नीतियेल्लम् ।
तनगेन्दागिर्द्दवेन्देम्बिनबरि-कुळवेल्लं स्व-खड्गाहत-शा- ।
किनियर्गेन्दादुदेन्देम्बिन बोडमेयदल्लं जगत्-पोषणक्कम्- ।
बिनवा-सामन्त-मुख्यं नेगळ्दनेळेगवातङ्कवागल्के तन्निम् ॥
पथिकङ्गिष्टाङ्के शिष्टंगघननेनिपवङ्गार्त्ति-यादङ्गे नित्या ।
तिथिगाळ्गन्यङ्गे मान्यङ्गववनिबेळेय ··· ··· ह-गोट्टङ्गे भार- ।

ग्रथितङ्गेन्तेभ्रवङ्गेनेनुतेनुदिसिदङ्गाग्गंवोल्दित्तु दौस्थ्य- ।
व्यथेयं माणिप्पनेम् मान्तनद कणियो सामन्तरोळ् सकराङ्कम् ॥
पति-मन्त्र-प्रौढि सेवक-तति निरहङ्कारमं मान्यरोळ्पम् ।
च्चिति-सन् मर्य्यादेयं बन्धुगळनुदिन-सन्-मानवं धार्म्मिकर् सन्-
मतियं कान्ताजनं मेय्वळियनखिळ-वन्दि-व्रजं धा- ।
... ... वण्णिकुं पुण्यद तवरो दिटं नोडे सामन्त-शङ्कम् ॥

कं ॥ करेयेनिप सुरभिगेलेगळ ।
मरेयेनिसिद कळ्प-वृक्ष-फळ-ततिगेणेये ।
करेव ... ... दारते ।
मेरेवुदु सामन्त-शङ्करनोळनवरतम् ॥

वृ ॥ विनेय-रसङ्गळिं तणिपि याचकरं मनेगोय्दु सन्ततं ।
कनकद बाडनित्तु मिगे सोकिसि सेव्यर ... ... ।
... ... आ मारुगोण्डवर नालेगेयं प्रभु-शंकरं यशो- ।
घननेनिसिर्द्दनल्लदोडे मारुवरे रसना-निकायमम् ॥

क ॥ एनिसिद शङ्कर-साम- ।
न्तन कान्तेय .. .. यिन्दुणे सस्या- ।
वनि जक्कणव्वेयुं का- ।
मन सिरि कं-देरदळेम्विने सोगेयिसिदर् ॥
शान्तेय सूनु शङ्कर-तनूद्भवनुद्ध-कदम्ब-रुद्र सा- ।
मन्त ... ... समय प्रणुतं वसुधैक-बान्धवङ्ग् ।
अन्तेसेदास-मन्त्रि विभु-व्रोप्पनोडर्चिदमोळ्मेगोप्पमम् ।
शान्तते दानवण्मु चरितं सिरि कोमळ-रूपवोप्पिरल् ॥
... ... न देवतेयेन्द् ।
एने नेगळ्दा-जक्कणव्वे-तनुविं मनदि ।
मनसिजनुं जिननुं तन्न् ।

इनियङ्गुभय-भव-सुखवदेने करवेसेदळ् ॥
जिन-समय-भक्तियिं स- ।
••• ••• सुपुत्रर्व्विरिनेणे शा- ।
सन-देविगे वल्लभन- ।
त्यनुवशनी-जक्कणब्बे-गिदुवे विशेषम् ॥
आ-जक्कणब्बेयः-त- ।
नूजं मेरेदं जगक्के सुजन-मनोजम् ।
पूजि ••• ••• ••• ।
••• • सकळ-गुण-निकर-धामं सोमम् ॥

वृत्त ॥ तनु पुण्योदय-शोभितं निमिर्दंतोळौदार्य-रम्य मुखम् ।
जन-सम्मोहन-सत्य-वृत्त वलगन् दाक्षिण्य-दीर्घा • ।
••• ••• ति रूपके यथा रूप तथा शीलवेन्द् ।
एने सामन्त-ललाम-सोमनेसेदं सौन्दर्य्य-चातुर्य्यदिम् ॥
करदिन्दं तेगेयल् सशक्ति नी • • वन्दा • ।
र-पुत्रं-नुत-जक्कणब्बेय मगं कण्ठीरवारोहरण- ।
क्केरेवं सोम-सहोदरं शिशुतेयोळ् मुद्दय्य मुद्दय्यना- ।
दरदिं कळप-कुजतमं पडेवनेन्दा-चूतमं वर्द्धिपम् ॥

कं ॥ अन्तेनिसल् शङ्कर-सा- ।
मन्तं सकळत्र-पुत्र-बान्धव-मित्रा- ।
नन्त: वयनेसेदं निश्- ।
चिन्त धर्म्मार्थ-काम-वर्ग-सुमार्गम् ॥
अनुपमिताश्चर्य्य शा- ।
न्तिनाथनेन्दा-स्थळानुबन्धदिनिम्बिम् ।
जिन-गृहमं माशुडियोळ् ।
विनुतं सामन्य(त)-शङ्करम्माडिसिदम् ॥

वृ ॥ प्रतिविम्बं पद-गतमं कळेवुदा-रङ्गके कम्मको छद्-।
गतमं माळ्पुदु शालभञ्जिकेगळं चित्रिप्पुदा-भित्ति-सन्-।
ततियं जङ्गम-चित्रदिन्देने जनं सामन्थ-शङ्कं जगन्-।
नुतमं माडिसिदं जिनेन्द्र-गृहमं मागुण्डियोळ् रागदिम् ॥
आ-भुवनैक-मण्डन-जिनालयमं नलेविन्दे नोडि सू-
र्य्याभरणाह्वय बलिपुरि-त्रिपुरान्तक-सूरि-संस्तुतम् ।
शोभिसुतिर्द्दुदी-वसदि तीर्थंकरर् सूशिव-सत् पदस्थरेन्द् ।
[आ-भुवनैक-मण्डन-जिनालयम नलेविन्दे नोडि सू -।
र्य्याभरणाह्वयं बलिपुरि-त्रिपुरान्तक-सूरि-संस्तुतम् ।
शोभिसुतिर्द्दुदो-वसदि तीर्त्थंकरर् सूशिव-सत्पदस्थरेन्द् । १]
आ-भव-भावदिम्मुनिवरं स्थळ-वृत्तियनित्तनुत्तमम् ॥

कं ॥ स्थिरवागिरित्तनडकेय । मरनय्नूरुळ्ळ-तोण्टवा-पूडोण्टम् ।
बेरसु सुभूमिय मत्तर् । व्वरे गर्द्देयदोन्दु-गाणवेन्दित्तिनितम् ॥

वृ ॥ अन्ता-धर्म्म-निकायम सुळिसुतं न्यायार्जित-द्रव्यदिन्द् ।
अन्तीवृत्तखिळाशेयं सदुपभोगानीकमं भोगिसुत्त् ।
अन्ता-शङ्कम-देव-चक्रि नडेदं वल्लाळ-भूपाळनम् ।
सन्तं तन्न पदाब्ज-सेवेगे-दरल् शौर्य्यार्ण्णवं घूर्ण्णिसल् ।

कं ॥ नडेदातन लक्ष्मिय् कय्-।
पिडिदोडगोण्डखिळ-दण्डनाथ-समेतम् ।
नडेतन्दु लाणगुन्ददृ ।
नडे-वीडिनोळ् इर्द्दनर्त्थियिं पल-रैवसम् ॥
इरे रेचण-दण्डाधी-।
श्वरं जिनेश्वर-पदाभिवन्दने एन्दोप्प्-।
इरे बन्दं मागुडिगा-।
दरदिं श्री-चोप्प-भूप शङ्कर-सहितम् ॥

वन्दु जिनेश्वर-पदमं ।
वन्दिास जिन-मुनि-पद्माम्बुजकेरगि जिनो-
न्मदिरमं नोडि दढा- ।
नन्दं वसुधैक-बान्धवं बण्णिसिदम् ॥
अन्तु पोगळ्दु त्रि-भोगा- ।
भ्यन्तरवागिर्द्द तळवेर्य्यं सर्व-नम- ।
स्यं तेजो-साम्य-समे- ।
तं तज्जिन-पूजेगेन्दु परिकल्पिसिदं ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराज कालाञ्जनपुर-वराधीश्वरं प्रताप-लङ्केश्वरं शौर्य्य-पञ्चाननं गीता-चतुराननं शुमतरादित्यं विज्ज-भूभुजापत्यं गज-सामन्त जय-कामिनी-कान्तं सुवर्ण्ण-वृषभ-ध्वजं कळचूर्य्य-राज्य-लक्ष्मी-प्रतिष्ठिताय-भुजं रायनारायणं भरतागमाम्भोधि-पारायण गिरिदुर्ग्गं-मल्ल श्रीमदाहवमल्लं मोदेगनूर नेलेवीडिनलु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि श्रीमन्महा-प्रधानं बाहत्तर-नियोगाधिपति महा-प्रचण्ड-दण्डनायकं रेचि-देवरसना-भागुणळिय रत्नत्रय-देवर बसदियाचार्य्यर् भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवरं बरिसि मुन्न समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महामण्डलेश्वरं बनवासिपुर-वराधीश्वरं पद्मावती-देवी-लब्ध-वर-प्रसाद मृगमदा-मोदं मार्कोल-भैरवं कादम्ब-कण्ठी ··· ··· कामिनी-लोलं हुसिवर शूलं निगळंक-मल्लनसु-हृत्-सेल्ल गण्डर-दावणि सुभट-शिरोमणि इत्य-खिल-नामावळी-समालंकृतनप्प बोप्प-देव ··· · · बळिय वाडं तळवेर्य्यं त्रि-भोगाभ्यन्तर-विशुद्धिय सर्व्व-बाधा-परिहारं सर्व्वं-नमश्यवागि परिकल्पिसिदुदं शक-वर्ष-नूर-नाल्कनेय ··· ·· ··· ··· शुद्ध-पञ्चमी-बुधवारदन्दा-रत्नत्रय देवरभिषेकाद्यङ्ग-भोग-रङ्ग-भोगक्क ऋषियराहार-दानक्क विद्यार्थिगळ ··· ··· ··· ··· बसदि पेस ·· ·· · खण्ड-स्पु(स्फु)टित-जीर्णोद्धारक्कवेन्दु आ-श्रीमन्मूल-संघद क्राणूर्-गणद तिन्त्रिक-गच्छद तुम्ब-वंशद श्रीमद्-भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त ··· ··· ··· कोट्टु ··· ··· ··· महा प्रधानं कृत-जयाकर्षण-विधान धनु-

विद्या-धनञ्जयनाकर्ण्णित-रण-रमस-मीत-भू··· ··· ··· द-विद्याधरं काव्य-कळा-धर-नेनिप मुरारि-केशव-देवङ्गे धर्म्मं-प्रतिपाळनमं समर्पिसिदनातन प्रभावमेन्तेन्दोडे ॥

वृ ॥ गिरीशन दृष्टि ··· ··· ··· ··· मनुमत ।
शर-यष्टि-पार्त्थननुदन्वित-चन्धुर-वेग-मुष्टियोन्द् ।
इरे गरिवेत्त तन्न शरलिं गरि मूडि दिवक्के पारि-दुस्- ।
स्तर-रिपु कादि ग ··· न ··· ··· मुरारि केशव ॥

···, ··· आ-वसदियलोम्मे नाना-देशद व्यवहारिगळ् तन्द-मण्डद क्रयक्के नाल्कुं स्थळद बणञ्जु-मुम्मुरि-दण्डमुं ·· ·· ··· ··· त ··· ··· कन मृदु-हृदयरागि या-स्थळवं पोक्कु मारिद मण्डद पोञ्के वीस मळवेगे हाग जवळक्के वेळे इन्तिनितुमं ··· ··· ··· ··· धर्म्ममं प्रति ·· दरनेक-जन्मार्जित-पाप-बाधेयं परि-हरिसि नाना-सुकक्कणननुमविसुवर् प्रतिपालिसदे किडिसदवरेळेनेय-नरकमं पोक्कु··· ··· ··· ··· वर् ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

(प्रथम माग का अधिकांश बहुत बिगड़ गया है) ।

[जिन शासनकी प्रशंसा । धर्म्म, शान्ति और कुन्थु, ये तीन 'रत्नत्रय देवता'के नामसे उल्लिखित हुये हैं । अधो, मध्य और ऊर्ध्व लोकका वर्णन । जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र और कुन्तल देशका क्रमश वर्णन । कुन्तल-देशका ग्राम, नगर, खेड, कर्व्वण, मडम्ब, द्रोणमुख, पुर, पट्टन और राजधानी, इन ९ विभागोंमें विभाजन ।

प्रथम पृथ्वीका भोग चालुक्य राजाओंके द्वारा; पुन रट्ट राजाओं द्वारा हुआ; उनको हटाकर तैलने पृथ्वीका शासन किया । तैलका पुत्र सत्याश्रय; उसका पुत्र विक्रम; जिसका छोटा भाई अय्यण था; उसका भी छोटा भाई जयसिंह; उसका (जयसिंहका) पुत्र आहवमल्ल; उसका पुत्र सोमेश्वर; उस राजाका पुत्र पेर्म्माडि-देव; जिसका पुत्र भूलोकमल्ल; उसका पुत्र जगदेकमल्ल; जिसका छोटा भाई नूर्म्मडि तैल था ।

इसके बाद, चालुक्य राज्यकी लक्ष्मी कळचूरि-तिलक बिज्जलके हाथमें आयी। उसकी बहादुरीके श्लोक। बिज्जलकी महत्ता (बडप्पन) कैसे बढी, इसके लिये कहा है —सिंहल राजा, नेपाल राजा, केरल, गुर्ज्जर, तुरुष्क, लाळ, पाण्ड्य, कलिंग,—ये उसके किसी-न-किसी दैनिक कार्यको करके उसकी सेवा बजाते थे। राजा बिज्जलके छोटे भाई मैलुगि-देवने प्रेम और शक्ति-बलसे पृथ्वीकी रक्षा की; इसके बाद उस बिजल राजाके पौत्र राजा कन्धारने पृथ्वीका पालन किया, इसके बाद, उस (कन्दार) राजाके अनुतात (छोटे चाचा), सोयिदेवने पृथ्वीका पालन किया। राजा रायमुरारिने क्रमशः कर्णाट और कुन्तलको एक में मिलानेके बाद उसी राज्यमें लाट और काञ्ची-प्रदेशको भी मिला लिया। उसके छोटे भाई मैलुगि-देवने पृथ्वीका शासन किया; उसके बाद उसके छोटे भाई, लेकिन कीर्त्तिमें सबसे बड़े, राजा शंकमने पृथ्वीकी रक्षा की। उसकी प्रशंसा। (इस) निश्शंकमल्लके बराबर दूसरा कौन था? उसके बाद राजा शंकका छोटा भाई राय-नारायण आहवमल्लने पृथ्वीका शासन किया।

क्रमशः, राजा बिज्जलको सातगुनी सम्पत्तिके दिलानेवाले उनके दण्डाधिनाथ रेच या रेचि थे। उसके प्रशंसा-व्यञ्जक बहुत-से श्लोक, जिनमें उसे 'वसुधैक-बान्धवम्' कहा गया गया है। नागाम्बिका और नारायण के ये पुत्र थे, उनकी पत्नी गौरी थी, वृषभ-चिह्नवाला उनका झण्डा था।

उस रेचरस (रेच-दण्डाधिनाथ) को कळचुरि सम्राटों से क्रमशः बहुत-से देश मिले थे; उनमें एक नागर-खण्ड था।

कदम्ब-कुल-कमलमें, उस नागर-खण्डका शासक राजा ब्रह्म था। उससे और चट्टल-देवीसे बोप्प उत्पन्न हुआ था। बोप्प-देवकी पत्नी श्री देवी थी। उसका पुत्र राजा सोम हुआ। जब वह कुछ बोलने लगा, तो उसके आकर्षक शब्दों के कारण उसका नाम 'सत्य-पताक' पड़ गया; जब उसने इधर-उधर चलना शुरू किया, उसे लोग 'निगलंक-मल्ल' कहने लगे; जब उसकी शक्ति प्रकट होने लगी, तो उस 'कदम्ब-रुद्र' कहा जाने लगा; जब उसे राज्य मिला, तो उसे 'गण्डर-

दावणि (शूर लोगोंके लिये पशु-रज्जू)' कहने लगे। इस तरह उसकी बहादुरीके गुणोंकी कितनी लम्बी सूची थी। एक दूसरे श्लोकमें उसकी उदारताकी प्रशंसा है। उसकी पत्नी लच्चल-देवी थी। इनसे बोप्पका जन्म हुआ था। उसका कृष्णसे मिलान किया है और कहा है कि उसके १८ अक्षौहिणी सेना थी।

उसकी राजधानी समृद्ध बान्धव-पुर था, जिसमें शान्तिनाथ भगवान्‌का मन्दिर था।

उस मन्दिरमें भानुकीर्त्ति-सिद्धान्ती आचार्य थे। इनके गुरुकुलमें कोण्डकुन्दान्वयके मूल-संघके कई यतिपति थे। रात्रणन्दि-सिद्धान्तीके शिष्य पद्मनन्दि थे। उनके शिष्य मुनिचन्द्र थे। ये सर्वविद्याओंके बड़े प्रकाण्ड पण्डित थे। इनके शिष्य काणूर-गण, तिन्त्रिणिक-गच्छ और तुन्न-वंशके भानुकीर्त्ति थे। ये सैद्धान्तिक चक्रवर्त्ती थे। इनके शिष्य (प्रशंसा सहित) नयकीर्त्ति-व्रती थे।

इस परम्पराके गुरुओंसे 'आगम' सीखकर, जिन-समयके 'चिन्तामणि' शंकर-सामन्त थे। कदम्ब-राजा बोप्पदेवके राज्यको बढ़ानेके लिये शंकर ही उचित रूपसे प्रथम व्यक्ति कहे जाते थे। सामन्त-शंक द्वारा सुशोभित नण्डु वंशमें उस कुलका तिलक, सिङ्गम् उत्पन्न हुआ। उसकी पत्नी मालियक्क थी, जिसका पुत्र एक्क-गौड था, जिसका छोटा भाई केरेयम था। केरेयमकी पत्नी रेसव्वे थी, और उनका बोप्प गावुण्ड हुआ। उसकी पत्नी चाकि-गौडि थी, और उनका पुत्र शंक या सामन्त-शंक था। उसकी प्रशंसामें कई श्लोक। उसकी पत्नी चक्कणब्बे थी। उसका ज्येष्ठ पुत्र सोम, जिसका छोटा भाई मुद्दय्य था।

इस प्रकार सम्मानित शंकर-सामन्तने मागुडिमें, उस स्थानसे सम्बन्ध होनेके कारण, शान्तिनाथ भगवान्‌के लिये एक बढ़िया जिन-मन्दिर बनवाया। इस मन्दिरके चमत्कारका वर्णन। बलिपुरके त्रिपुरान्तक-सूरि, जिनका नाम सूर्याभरण था, उन्होंने इस कारण कि यह मन्दिर तीर्थंकर और शिवके भक्तोंको एक-सा

प्यारा था, इसके लिये ५०० सुपारीके वृक्षोंका बाग तथा एक पुष्प-उद्यान, अच्छी धान्य (चावल) की भूमि तथा एक कोल्हूके रूपमें एक अच्छी 'स्थल-वृत्ति' दी।

उस गुणी कार्यको जारी रखनेके लिये, और अपनी न्याय-प्राप्त सम्पत्तिका अपने आश्रितोंकी आवश्यकताओंकी पूर्त्तिके लिये शंकर-देव-चक्रीने राजा वल्लाल-का आश्रय लिया। वह (१ राजा) कुछ दिनोंके लिये ताणगुण्डके निवास-स्थान-में था। वहाँ रहते हुए, रेचण-दण्डाधीश्वर, राजा बोप्प और शकरके साथ, मागुडिमें जिनेश्वरके पूजनके लिये आया। वहाँ आकर उसने जिन-मन्दिरसे बहुत प्रसन्न होकर जिनकी पूजाके लिये तलवे (गाँव) दिया।

जब, कालञ्जर-पुर वराधीश,-राजा विज्जकी सन्तान, राय-नारायण, आहवमल्ल मोदेगनूरके अपने निवास-स्थानसे शान्ति और बुद्धिमानीसे राज्य कर रहे थे:—

तत्पादपद्मोपजीवी रेचि-देवरसने मागुण्डिके रत्नत्रयदेवकी बसदिके पुरोहित भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवको बुलाकर, (उक्त मितिको)[1] मूलसघ, क्राणूर्-गण, तिन्त्रिक-गच्छ, और पुस्त-वशके भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवको बेलेय-बाड ... ... में तळवे दिया। यही तळवे तीन पीढ़ियों तकके लिये, सब करोंसे मुक्त करके बोप्प-देवने दिया था।

और इस कामके संरक्षणका भार उसने प्रधान-मन्त्री मुरारि-केशव-देवको सौंप दिया। उसकी (मुरारि-केशवकी) प्रशंसा।

और उस बस्तिमें, एक समय चार स्थानोंके बनञ्जु तथा मुम्मुरिदण्डने (उक्त) कुछ चुङ्गी दी।]

[E C, VII, Shikarpur tl., no 197]

१—'शक-वर्ष नूर-नाल्कने (शक वर्ष १०४)' इतना ही रह जानेके कारण और वर्षका नाम मिट जानेसे, निःसन्देह ११०४का मतलब दीखता है। एक हजारका उल्लेख मिट गया है।

४०६

बोम्मनहल्लि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक ११०४ = ११८२ ई०]

[जै. शि. सं., प्र. भा.]

४१०

[जोडि] बसवनपुर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० ११०५ = ११८३ ई०]

[जोडि बसवनपुरमें, हुण्डि-सिद्दन चिक्कके खेतके किनारेके एक पाषाणपर]

(प्रथम बाजू)

निर्द्धूय-पूति-मल-लेपमल कलङ्कमालोकतस्त्रि-जगति प्रतिपूजितो ह्य ।
श्री वर्द्धमान इति पश्चिमतीर्त्थनाथो भव्यात्मना दिशतु सन्ततमिष्टपुष्टिम ॥
श्री-वर्द्धमानजिनवक्त्रसमुत्थमर्त्थं-सार्थं समस्तमपि सूत्रगतं-चकार ।
यस्सर्वभव्यजनकण्ठविभूषणार्त्थं श्रीगौतमो गणधरोऽस्तु स नः प्रसिद्धयै ॥
गुरूणां कीर्त्तिमन्मूर्त्तिर्व्वाग्निपद्या विराजते ।
तद्विप्रयोगशोकार्त्तभक्तचित्तप्रशान्तये ।
श्रीमद्द्रामिळसङ्घेस्मिन्नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गळः ।
अन्वयो भाति निःशेषशास्त्रवाराशिपारगै ॥
समन्तभद्रस्संस्तुत्य· कस्य न स्यान्मुनीश्वरः ।
वारणासीश्वरस्याग्रे निर्जिता येन विद्विषः ॥
उपेत्य सम्यग्दिशि दक्षिणस्या कुमारसेनो मुनिरस्तमाप ।
तत्रैव चित्रं जगदेकभानोस्तिष्ठत्यसौ तस्य तथा प्रकाशः ॥
कृत्वा चिन्तामणिं काव्यमभीष्टार्थं-समर्त्थनं ।

चिन्तामणिश्मूलाम्ना भव्यचिन्तामणिर्गु••• ॥
विद्वच्चूडामणिश्चूडामणिकाव्यकृते ••• ।
चूडामणिसमाग्हयोऽमूलच्य-लच ••• लक्षण ॥
यस्य सप्ततिमहावादविजयी वन्द्य एव स ।
ब्रह्म-राक्षस-वन्द्याङ्घ्रिम्र्म्महेश्वरमुनीश्वरः ॥
आशान्त-वर्त्तिनी-कीर्त्तिस्तपश्श्रुतसमुद्भवा ।
यस्यानवद्य-शान्तात्मा शान्तिदेवमुनीश्वरः ॥
तस्याकलङ्कदेवस्य महिमा केन वर्ण्यते ।
यद्वाक्यखड्गघातेन हतो बुद्धो विबुद्धिसः ॥
श्रीपुष्पसेनमुनिरेव पद महिम्नो देवस्सयस्य समभूत्स भवान् सधर्म्मा ।
श्रीविभ्रमस्य भवन तनु पद्ममेव पुष्पेषुमित्रमिह यस्य सहस्रधामा ॥
कीर्त्तिर्व्विमळचन्द्रस्य चन्द्रांशु-विशदा बभौ ।
यद्वाक्यलालितोल्लासमत्र शोकोऽयमीदृश· ॥
पत्र शत्रुभयंकरोरु-भवन-द्वारे सदा सञ्चरन् ।
नाना-राब-करीन्द्र-वृन्द-तुरग-व्राताकुळे स्थापितम् ।
शैवान् पाशुपतांस्तथागतमतान् कापालिकान् कापिलान् ।
उद्दिश्योद्धतचेतसान् विमळचन्द्राशाम्बरेणादरात् ॥
इन्द्रनन्दिमुनीन्द्रोऽयं वन्द्यो येन प्रकल्पितौ ।
प्रतिष्ठा-ज्वालिनी-कल्पौ कल्पान्तर-कृत-स्थिती ॥
परवादि-मल्ल-देवो देवी यद्भाग्य- दि ••• प्रवृत्ता कृष्णराजाग्रे स्वनामादेश-देशिनी ॥
गृहीत-पक्षादितरैः परस्स्यात् तद्वादिनस्ते पर-वादिनस्स्यु ।
तेषां हि मल्लः परवादिमल्लस्तन्नाम मन्नाम वदन्ति सन्त ॥

(दूसरी बाजू)

सन्मतिः सत्यनामा •• ••• ••• ••• ••
••• ••• ••• ना गौतमा ••• ••• ।

··· ··· ··· तस्य चातो भट्टारक · ··· ·· ·

(३१ पंक्तियाँ यहाँ नष्ट हैं)

··· ··· ··· श्रीमलधारि ··· ··· ··· ···

श्रीमद्-द्रमिल-संघ ··· ··· ··· ···

(तीसरी बाजू)

··· ··· ··· ऽजितसेन-पण्डित ·· ·· ·

··· ··· ··· दिवौक-स्तुतः

तर्क्क-व्याकरणागमादि-विदित स्त्रैविद्यविद्यापति

··· मूल-प्रतिपालको गुण-गुरुर्विद्यागुरुर्य्यस्य सः ।

श्रीचन्द्रप्रभनामतो मुनिपतेस्सिद्धान्त-पारङ्गतो

··· चन्द्रोऽजितसेन-देव-मुनिपो व ··· म्यतां प्रासवान् ॥

श्रीमत्त्रैविद्यविद्यापतिपद-कमलाराधना-लब्धबुद्धि-

स्सिद्धा ·· णिधान विसरदमृतस्वादु ··· ष्ट-प्रमोद· ।

टीका-रक्षा-सु-वक्षा ··· मकृति-निपुणस्सन्ततं भव्य सेव्य-

स्सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्जगति विजयते वासुपूज्य-व्रतीन्द्रः ॥

नम

··· तिमिर-मित्रस्सद्-गुरुस्सच्चरित्रः

विबुध-वन-सु-चैत्रः पुण्य-सम्पूर्ण-गात्रः ।

जिन-निगदित-सूत्र-पा ··· सा सत्पवित्र-

स्स जयति गुण ··· शाम-चन्द्रप्रभोऽत्रः ॥

य ··· म-कलाप. ध्वस्तनि शेषताप ।

··· सकळ-भूपो निर्ज्जित· पुष्पचापः ॥

गळित-सकल-कोपस्सन्मुनिस्सत् ··· पस्

स जयति गुण-रूपस्सूरि-चन्द्रप्रभाङ्कः ॥

नमोऽस्तु

(चौथी बाजू)

स्वपरमतविकासश्श्रीयुते कण्ठपाशो
नमितमुनिगणेश भव्यबोधोपदेशः ।
श्रुत-परम-निवेशश्शुद्धमुक्त्यङ्गनेश
जयति वर-मुनीशस्सूरिचन्द्रप्रभेशः ॥
समयदिवाकरदेवो तच्छिष्य परम-तार्किकाम्बुज-मित्रः
चन्द्रप्रभमुनिनाथो कृत्वा सल्लेखन शुभतनुत्यागम् ॥
शाके सायक-खेन्दु-भूमि-गणिते-संवत्सरे शोभकृन्-
नाम्नोष्टे कुजवार-शुद्ध-दशमी-प्राप्तोत्तराषाढ़के ।
मासे भाद्रपदे प्रभातसमये चन्द्रप्रभाख्यो मुनि-
स्सन्यसने समाधिना सुमरण से ··· गणी द्रागभूत् ॥
यस्यार्यस्य गुरुस्सता गुणगुरुस्त्रैविद्यविद्यानिधिः
ख्यातोऽसौ समये दिवाकर इति स्यादीच्चया शिष्यकैः ।
तैर्दत्तं सकलं ˙ त श्रुतगुणं रत्नत्रयाख्यं क्रमाद्
आराध ··· त्य-समाध ··· ʼपातिश्चन्द्रप्रभाख्योऽभवत् ॥
य ··· ··· प ··· दशविधो धर्म्मं क्षमा ··· ···
कर गणागमे परिणतिस्साहित्य ··· ··· ···
श्राजन्ते स भवान् समाधि-विधिना ··· ··· चार्यो दिवं
यातो ध्यानबलान्वितः ··· ··· रागद्वेषमोहास्थिर ॥
यस्तत्वो ··· ··· ··· ··· वर्द्धन-विधुः कामेभ-कण्ठीरवः
श्रीमद्-द्राविडसंघभूषणमणिस्सद्ज्ञानचिन्तामणिः ।
धृत्वा चारुतपश्चरित्रममलं स्मृत्वा जिनाङ्घ्रिद्वयं
कृत्वा सन्यसनं जिनालयगतो चन्द्रप्रभस्सन्मुनि ॥
लोके दुष्टजनाकुले हतकुले लोभातुरे निष्ठुरे
सालङ्कारपरे मनोहरतरे साहित्य-लीलाधरे ।
भद्रे देवि सरस्वती गुणनिधिः काले कलौ साम्प्रतं

कं यास्यत्यभिमानरत्ननिळयं चन्द्रप्रभार्य्यं विना ॥
साहित्योन्नतपादपं क्षितितले दुष्कर्मणा पातितं ।
वाग्देवी-पृथु-वक्ष-मण्डनमहो सञ्छिद्य निर्नासितं ।
सर्व्वज्ञागम-सार-भूधरमिदं द्वेषेण निर्लोठितं ।
श्रीचन्द्रप्रभदेव-देव-मरणे शास्त्रार्णवं शोषितम् ॥

नमोऽस्तु

[इस लेखमें द्रमिल-संघगत नन्दि-संघके अरुङ्गल-अन्वयकी समन्तभद्र-मुनीश्वरसे लेकर चन्द्रप्रभ-मुनिनाथ तककी पट्टावली या शिष्य परम्परा दी हुई है। वह क्रमसे इस प्रकार है :—

१. **समन्तभद्र** मुनीश्वर—वारणासी (वाराणसी = बनारस) में राजाके सामने विपक्षियोंको हराया ।

२. **कुमारसेन**—दक्षिणमें आकरके उनकी मृत्यु हुई, परन्तु मृत्युके बाद भी उनकी कीर्त्ति सारे भारतमें सूर्यकी तरह प्रकाशित हो रही थी।

३. गुरु **चिन्तामणि**—चिन्तामणि काव्यकी रचना की थी। जिनभक्तोंके लिये वास्तवमें ही 'चिन्तामणि' थे ।

४. **चूडामणि**—चूडामणि काव्यकी रचना की थी, जिसमें काव्यगत अलङ्कारोंका वर्णन था। वे वास्तवमें विद्वच्चूडामणि थे ।

५. मुनीश्वर **महेश्वर**—इन्होंने महान् सत्तर ७० शास्त्रार्थोंमें विजय पायी थी। उनके पैर ब्रह्म-राक्षस भी पूजते थे ।

६. **शान्तिदेव** मुनीश्वर—दिशाओंके अन्ततक तपसे समुद्भूत उनकी कीर्त्ति फैली हुई थी। वे बहुत शान्तमूर्ति थे ।

७. **अकलङ्कदेव**—उनकी कीर्त्तिका वर्णन कौन कर सकता है। इनके प्रबल विजयी शास्त्रार्थों से बौद्ध पण्डितोंको मृत्युतकका आलिङ्गन कराया गया था।

८. **पुष्पसेन** मुनि—यह अकलङ्कदेवके साथी (सधर्मा) थे।

आ-विभुग नेगळ्द्रेचल- । देविगमुदियिसिदरटटरेने बल्लाळ- ।
क्ष्मा-वल्लभ विष्णु-धरि- । श्री-वल्लभ सुभटनुदितनुदेयादित्यम् ॥
एनितित्तडमेनितिर्रिडम् । अनितोप्पुं कूप्पुंमप्पुवे पेरंगाद्विकेम्-
मने नोड दिटरे बळ्ळा- । ळ-नृगाळने चागि वल्लु-देवने वीर ॥

अन्तु सुख-सकथा-विनोददिं श्रीमद्राजधानी बेलुहुर-वीडिनोळु राज्यं गेय्युत्तं इर्द्दु मरियाने-दण्डनायकन द्वितियलक्ष्मी-समानेयरप्प चामवे-दण्डनायकितिगं पुट्टिद पद्मल-देवि चामल-देवि बोप्पा-देविगरिन्ती-मूवुरं शास्त्रगीत-नृत्यदलु प्रवुडेयरुं मूरुं-राय-कटक-पात्र-वस-दळेयरेनेसि वळेयला-मूवरु कन्यकेयरनोन्दे-हसे-योळ् बल्लाळ-देवं विवाहमाडि सक वर्षं १०२५ नेय सुभानु-संवत्सरद कार्त्तिक-शुद्धदशमि-बृह(स्पति)वारदन्दु मोलेवाल-रिणक्के मरियाने-दण्ड-नायकङ्गे सिन्दगेरेय एरडनेय-पर्यायदलु प्रभुत्व-सहितं नेलेयागि पुनर्द्धारापूर्व्वक कोट्टु सलिसुत्तमिरे ।

तुळु-देशं (चक्र) चक्रगोट्टं तळवनपुर उच्चंगि कोळाल पळुं-
मले वङ्कक्कंचि कङ्किमुत्र हुडिय-घट्टं बयल् नाडु नीला ।
चळ-दुर्ग्गं रायरायोत्तम-पुर तेरेयूरूकोयतूर्गोण्डवाडि-
स्थळव भ्रू-भङ्गदि गेल्दतुळ-भुज-बळातोपदि विष्णु-भूपं ॥
अरि नृपरं तडङ्गडिदु वेलियनिक्कि पट्टु प्रतापवुर-
क्किरे तळकाड नोड्ड-गडिदल्कुरें सुट्टु तुरङ्गदळि-सञ्-
चरणदिनुत्त वीर-रसदिं हदनाडे कूडे त्रिसितिदम् ।
सु-रुचिर-कीर्त्तियं नृप-सिखामणि साहस-गङ्ग-होय्सळम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु काञ्चि-गोण्ड विक्रम-गङ्ग विष्णवर्द्धनदेवं दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळु पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगळप्प हिरिय-मरियाने-दण्डनायकन मय्दुननप्प गङ्गराजदण्डाधीशम् ।

भत्तिन-मातवत्तिरलि जीर्ण्णं-जिनालय-कोटियं क्रमं-
बेट्टिरे मुन्निनन्ते पल-वूर्गळुमं नेरें माडिसुत्तवत्-

युत्तम-पात्र-दानदोळवं मेरेवुत्तिरे गङ्गवाडि-तोम्-
भट्टरु-सासिरं कोपणवादुदु गङ्गण-दण्डनाथनिम् ॥
उत्तनय ॥ कदनदोळान्तरं गेलुवडेम् गळ निन्न पेसर्ब्बितारियेम्-
बुदे बुध-बन्धुवेम्बुदे जनाश्रयियेम्बुदे बोप्प-देवनेम्-
बुदे कलियेचि-राज-विभुवेम्बुदे गङ्गन गन्ध-हस्तियेम्-
बुदे रण-रङ्ग-पाण्डु-सुतनेम्बुदे वैरि-घरट्टनेम्बुदे ॥

आतन मटदुनरु संस्त (समस्त) राज्यभरनिरूपितमहामात्यपदवीप्रख्यातरुमभिजातरुं श्रीमदर्हत्परमेश्वरपदपयोजषट्चरणरुं । रत्नत्रयाळङ्कृतरुमप्प श्रीमन्महाप्रधानं **मरियाने-दण्डनायकनु** श्रीमद्वाडि-भरतेश्वर नेनिप **भरतेश्वर-दण्डनायकनु** तम्मोळभेद-मार्वदिं गुणि-गुण-स्वरूपरागि ।

उन्नतवंशनुत्सव-कुलोत्तम भद्र-गुणान्वितं जगत्-
सन्नुतदानयुक्तविभवं मरियाने रिपु-प्रभेदनोत्-
पन्न-जयाभिरामनेनगोतने नच्चिन पट्टदानेयेन्द् ।
एम् नेरें नच्चि माडिदनो विष्णु-नृप ध्वजिनी-पतित्वमम् ॥
जिनपति देय्वमात्म-जनक-प्रभु पेर्ग्गडे देचि-राजनोळ्-
पिन कणि तन्न ताय् नेगळ्द नागल-देवि चमूप-चक्र-चन्-
दन-तिळकं [...] मरियाने-चमूपति नाथनिन्तु सज्-
जन-विनुतान्वयोन्नतिये जक्कल-देवियें धन्ये धात्रियोळ् ॥
-तोळतोळगि बेळगि कीर्त्ति-। वळयदिनळवट्ट विष्णु-भूपन राज्य-
-स्तळके मिसुपेसेव-हेमद । कळस केवळमे भरत-दण्डाधीशं ॥
कान्तं श्रीमच्चचूडामणि भरतचमूनाथनात्यन्तिक-श्री-
कान्तं त्रैलोक्यनाथं परम-जिनने देवं समभ्यस्त-सद्-सिद्-
धान्तं श्रीमाघनन्दिव्रतिपति गुरुगळ् तन्दे मारैयन् एन्दन्द् ।
एन्तुं तां धन्येयेन्दी-हरियलेयेने भूमण्डलं विच्चळिक्कुम् ॥
एणिकेय लोकद-गाणिकेयर् । एणेयप्पर नोडे चिक्क-हरियळे गारुम् ।
गुणदोळु शासन-देवियर् । एणेयप्परु भरत-राजनर्द्धाङ्गनेयम् ॥

इन्तु पोगळ्तेगे नेलेयाद कौण्डिल्य-गोत्रद डाकरस-दण्डनायकन एचव-दण्णायकितिय मक्कलु नाकण-दण्डनायकनुं मरियाने-दण्डनायकनुं अवर मक्कलु माचण दण्डनायकनातन सति डुम्मवे दण्णायकितियुं डाकरस-दण्डनायक आतन-सति दुग्गव्वे-दण्णायकिति अवर मक्कळु मरियाने-दण्डनायकन् भरतिम्मेय-दण्डनायकनुमवर तङ्गे ।

जिन-पद-पद्म-भक्ते सुचरित्र-नियुक्ते विनीते माचि-रा-
जन सुते काव-राजन मन· प्रिये चाकले्ष्दधूजना-
नन-विळसल्ललामे मरियानेय सद्भरतेश-दण्डना-
थन किरि-दङ्गे मन्मथन विक्रम-लक्ष्मियोलाटमोप्पुवळ् ॥

श्रीमत्काञ्चि-गोण्ड विक्रम-गङ्ग विष्णुवर्द्धन-देवनन्वयद मरियाने-दण्डनायकनु भरतण-दण्डनायकनुं सर्व्वाधिकारिगळुं माणिकभण्डारिगळुं प्राणाधिकारिगळुं आगि सुखदिं सलुत्तमिरे । विष्णुवर्द्धनदेवं श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद नेले-वीडिनोळु पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे उत्तरायण-संक्रमानदोळ ··नदोळु तम्म मगनं बिट्टि-देवन हेसरनिट्टु १००० होन्नं पाद-पूजेयं कोट्टु आसन्दि-नाड सिन्दगेरेयुमं बायु-वेण्णेगे बग्गवळ्ळियुम कलिकणि-नाड दिण्डिगनकेरेय प्रभुत्वमुमं बिट्टि-देवन स्वहस्तदिं धारा-पूर्व्वकं हडदु सुखदिनिरे ।

जनियिसिदं विष्णु-मही- । शन वधु लक्ष्मा-देविगनुपम-नारसिंघा- ।
वनिपं नतरिपुभूपा- । ळ-निकाय-ललाट-तटाघट्टित-चरणम् ॥

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर नारसिंघ-देवरु राज्यं गेयुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगळु महाप्रधान मरियाने-दण्डनायकरुं भरतिम्मेय-दण्डनायकरुं तम्मन्वयद सिन्दगेरेय बग्गवळ्ळिय दडिगनकेरेय प्रभुत्वके ५०० होन्न पाद-पूजेयं कोट्टु नारसिंघ-देवर कैयलु पुनर्द्दत्तियागि हडदु सुखन्दिनिरे ।

काल-निभ-प्रतापि नरसिंघ-महीपतिगं मदेभ-ली-
लालस याने कम्बुनिभकन्धरे एचल देविग जय- ।

श्री-ललनेशनीतनेने पुट्टिदनूर्ज्जित-पुण्य-मूर्त्ति बल्-
लाल-नृपाळकं समदवैरिमहीभुजदर्प्पभञ्जनम् ॥
कलिकालस्तत्रपुत्रप्रबळनरदुराचारसन्दोहदिन्दम् ।
पोले पोर्द्दल् पेसि वेसत्तळरळिद् मही-कान्तेयं रक्षिसल्का-
ललनादं ताने वन्दिल्लवतरिसिदबोला-वीर-बल्लाल-देवम् ।
कुलजात्याचारसारं नृपवरनुदय-गेय्दनाश्चर्यसौर्य्यम् ॥

श्रीमन्महामण्डलेश्वरन् असहायशूर निश्शङ्कप्रताप होय्सळ-वीर-बल्लाल-देवर तत्पादपद्मोपजीविगळप्प श्रीमन्महाप्रधानं भरतिमय्य-दण्डनायकरुं श्रीमन्महाप्रधान बाहुबलि-दण्डनायकरुं सर्व्वाधिकारिगळु माणिक-भण्डारिगळुं प्राणाधिकारिगळुमागि सुखादिं सलुत्तमिरे ।

भरतचमूपतिगमुचितान्वय-चारु-चरितदोप्पुवा-
हरियले-दण्डनायकितिगं गुणरत्नपयोधि पुट्टिदम् ।
परिचित-नीति-शास्त्र निखिळास्त्र-विशारदनिष्ट-विशिष्ट-भा-
सुर-निधि विट्टि-देवनखिळावनि-मण्डन-मौळि-मण्डनम् ॥
सेनापति मरियानेगे । भानुगे कानीननादशेल् सुतनादम् ।
भानु-सम-द्युति विबुध-नि- । धानं गुणरत्नराशियप्पं बोप्पम् ॥
मरियाने-दण्डनाथङ्गरिविन कणियेनिसि पुट्टिदं जन-विनुतम् ।
करमेरेयिल्लद जसदिं । नेरेदं जित-वीर-वैरि हेग्गडे देवम् ॥
भरत-चमूपन पुत्रं । पुरुषार्थम्बोधि मान-कनक-नागेन्द्रम् ।
पु···खचर मनु-मुनि- । चरितं मरियाने-देवनदटर गोवम् ॥
अनुपम-दण्डनाथ-भरतात्मजे भू-नुत- ··· नेचि-राजनङ्-
गने विभु-राय-देव-मरियानेगळम्बिके सिन्दघट्टदोळ् ।
घनतर-कूट-कोटि-युत-पार्श्व-जिनेश्वर-गेहमं जगज्-
जन-नुतमागे माडिसिदं शान्तल-देवि कृतार्थे धात्रियोळ् ॥
जिन-जननिगेणेये बम्मवे । जननि गड तण्डे नेगळ्द हेग्गडे-मारङ्ग् ।
अनुनयदे पुत्रनाद । दिन-पतिगे ··· ··· निप-तेजदातं शान्तं ॥

अवर तङ्गेयरु हेमल-देवि दुग्गिल-देवियरु ।
भरत-चमूपर्ने पिरियना-मरियाने-चमूपना-भू- ।
वर॰॰श महाप्रभु महागुणि वीर्य्यद धैर्य्यदागरं ।
भरत-चमूपनङ्गभव-रूपनपास्त-रवि-प्रतापनुद्-
धराळवि विक्रम क्रम-विनिर्जित-शत्रु-पराक्रमाक्रमम् ।
अन्तेनिप भरतसेना- । कान्तन कडु-होल कान्ते बूचले भू-च- ।
कान्त-स्थापित-शशि-मणि- । कान्ति-लसत्-कीर्त्ति-मूर्त्ति मति रति-यशद् ॥
भरत-चमूपगे तम्मं । स्थिर-गुणनभिमतनेने बाहुबलि-दण्डेशम् ।
पुरुपार्थ-सार्थ-तीर्थं । पर-हित-विद्याधरेन्द्रनिर्लेप्य-निभम् ॥
आ-विभुविन सति नागल- । देवि जगत्ख्याते सीते पति-हितदिन्दम् ।
भावभवाङ्गने रूपि । माविसे ता बान्मेयिन्द लक्ष्म्येनिप्पळ् ॥
ओदवद-रूपिनिन्दे नयदिन्द्॰॰नोडुव कण्ग बे ॰ ता ।
पदेदनुरागदिन्द चमूपति भरतनेम्ब महा-गजेन्द्रमम् ।
पुडिदळु तन्न यौव्वनद कम्बदे (आ-) बाचले-नारि॰॰॰ ।
पदे जिनभक्ते पुण्यवति दान-विनोदे पतिव्रता-गुणि ॥
वेसन बल्लाळ-भूपम्बेससे भरत-दण्डाधिपं रागदिं बा- ।
गु-सुत रामाङ्गेयिन्दं नडव-वेरदे बीळ्कोण्डु सामग्रियिन्दन्द् ।
असुहृद्देशङ्गळं केसुरिगे नेरेये बिट्टन्ते निष्कण्टकं भू- ।
प्रसरं तानाग्तघोशङ्केनिसि पगेय चिन्तिल्लदन्तागे कोण्डम् ॥
ताङ्गदे युद्ध-रङ्गदोळिदिर्च्चुवने ॰॰॰ ॰॰॰ गर्व्वदिम् ।
॰॰॰ मलेवन्दडवर्नं ॰॰॰ ॰॰ ओन्दे थट्टि वीररम् ।
तुङ्ग-भुजासियं तविसि विक्रम-लक्ष्मीगे गण्डनाद पेम्-
पिङ्गे जगज्जनं पोगळ्वुदी-भरतेश्वर-दण्डनाथन ॥
कुदुरेयनेरलक्कर्णगडिग्रयनोय्यने नीडे वैरिगळ् ।
कदन-पराङ्मुखर्प्परिदु वेट्टमनेरिदरुळ्दुदिक्किदर् ।
नदिगळोळद्दरक्कुळिगळं नेरें कञ्चिदरेय्दे हुत्तने-

रिटरिदु दण्डनाथ भरतात्मज बाहुबलि ··· ··· दर्श ॥
नाभि-सुत-सुतर तेरॅदे स- । नाभिगळ् आदि-प्रभाव-चरितप्रभवर् ।
श्शोभित-शुभ-मति-युतर- । सोभितगी-भरत-बाहुबलि-दण्डेशर् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-बनवसे-उच्चङ्गि-हानुङ्गलु-गोण्ड भुजबळ वीरगङ्गन् असहाय-शूर शनिवार-सिद्धि गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदङ्कराम निश्शंकप्रताप होय्सळ-वीर-वल्लाळ-देवरु श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळु सुख-सङ्कथाविनोददिं पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे शक वर्ष ११०५ नेय शुभकृत्संवत्सरद मार्ग्गशिर-शुद्ध-पाडिव सोमवारदन्दु कुमार-वीरनारसिंघ-देवं जन्मोत्सव-महा-दानदोळ् तम्मन्वयद सिन्दगेरॅय वळ्ळवळ्ळिय कलुकणि-नाड दडिगणकेरॅय अणुवसमुद्रद प्रमुखनुमं अणुवसमुद्रदलु कन्नेबसदियागि माडिसि आ-बसदिगं चाकेयनहळ्ळिय बसदिगं देवपूजे आहारदानं नडवन्तागि सेसेयं तेत्तु अणुवसमुद्रद सिद्धायद मोदल होन्नोळगे इप्पत्तु-होन्नं बळिसहित नाल्वत्तु-होन्न स्वाण सहित गळिहि श्रीमन्महाप्रधान भरतिमय्य दण्डनायकरु श्रीमन्महाप्रधानं बाहुबलि दण्डनायकरुं वल्लाल देवन श्रीहस्तदलु धारा-पूर्व्वकं हडदु श्रीमूलसंघ देशियगण पोस्तक-गच्छ कोण्डकुन्दान्वय इङ्गळेश्वरद बळि कोल्लापुरद सावन्तन-बसदिय प्रतिबद्ध श्रीमाघनन्दि-सिद्धांत-देवर शिष्यरु श्रीगंधविमुक्त-सिद्धांत-देवरु अवर शिष्यरु श्री-देवकीर्तिपण्डितदेवरु अवर शिष्यरप्प श्री-देवचंद्र-पण्डितदेवर्गे शक वर्ष ११०६ नेय शोभकृत्संवत्सरद पुष्य शुद्ध-दशमी सोमवारद उत्तरायण-संक्रमण-महादानदलु धारा-पूर्व्वक माड काट्ट दत्तिगळ वृत्ति ॥ (आगेकी ६ पंक्तियोंमें दानकी विशेष चर्चा और हमेशाकी तरह अन्तिम वाक्यावली तथा श्लोक हैं)

[इस लेखमें सबसे पहले जिनशासनकी प्रशंसा है। वीतराग। (अपने पदों सहित) त्रिभुवनमल्ल विनेयादित्य-होय्सळने कोङ्कण, आळ्वखेड, बयल्नाड्, तलेकाड् और साविमलेसे घिरी हुई तमाम भूमिमें दुष्टनिग्रह-शिष्ट प्रतिपालन किया था।

यादव वंशमें सळ हुआ था। एक चीतेको किसीपर शिकार करनेके लिये उछलते हुए देखकर और किसी मुनिके यह कहनेपर कि "मारो (पोय्) सळ!" सळने इसे मारकर 'पोय्सळ' नाम प्राप्त किया था और यह नाम आगे चलकर उसके तमाम वंशका द्योतक हुआ। यदुवंशमें सळके बाद बहुत-से प्रबल राजा हुए, उन्हींमें एक विनेयादित्य हुआ। उसकी रानीका नाम केलेयब्बरसि था।

जिस समयमें दोनों (विनेयादित्य और केलेयब्बरसि) सोसवोरुमें रहते हुए सुख और बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे शक स० ९६७ में केलेयल-देवीने मरियाने दण्डनायकसे देकवे-दण्डनायकितिको ब्याह दिया और भेंटमें आसन्दिनाड्के सिन्दगेरीको उसे दिया।

विनेयादित्य पोय्सळ और रानी केळेयब्बेसे राजा वीर-गङ्ग-एरेयङ्ग उत्पन्न हुआ। वीर-गङ्ग एरेयङ्ग और एचल-देवीसे बल्लाल, विष्णु और उदयादित्य उत्पन्न हुए थे। बल्लाल या बल्लु-देवकी प्रशसा।

जिस समय बल्लालदेव अपनी राजधानी वेलुहुरुमें रहकर सुख-शान्तिसे राज्य कर रहे थे, मरियाने-दण्डनायककी दूसरी पत्नी चामवे दण्डनायकितिसे पदुमलदेवी, चामलदेवी और बोप्पदेवी उत्पन्न हुई थीं। बल्लालदेवने इन तीनों कन्याओंका विवाह एक ही मण्डपमें शक सं० १०२५ में विभिन्न तीन राजाओंकी राजधानियोंमें कर दिया और उनकी दूध पिलाई (wet nursing) की तनखाके रूपमें द्वितीय पीढीके मरियाने-दण्डनायकको पुन सिन्दगेरीका स्वामित्व दे दिया।

राजा विष्णुने तुलु देश, चक्रगोट्ट, तळवनपुर, उच्चंगि, कोळाळ, सप्तमले, बल्लूर, कञ्चि, कोङ्गु, हडिय-घट्ट, बयलु-नाड, नीलाचल-दुर्ग, रायरायपुर, तेरेपूर कोयत्तूर और गौण्डवाडि-स्थल,—इन सब प्रदेशोंको जीता था। साहस-गङ्ग-होय्सलने विरोधी राजाओंका नाश करके तलकाड्को (खादके लिये) जलाकर घोड़ोंके खुरोंसे उसे जोतकर अपने वीररसकी नदीसे उसे सींचकर अपने यशके अच्छे बीजसे इसे बोया।

जिस समय कञ्चिको अधीनस्थ करनेवाले विक्रय-गङ्ग-विष्णुवर्द्धनदेव राज्य करते हुए अपने निवासस्थान दोरसमुद्रमें थे, उनका पादपद्मोपजीवी, ज्येष्ठ मरियाने-दण्डनायकका साला **गङ्गराज-दण्डाधीश** था। गङ्ग-दण्डनाथने अनेक जिन-मन्दिरों की पुनस्स्थापना की थी, अनेकों ध्वस्त नगरों को फिर से बसाया और अनेकों दानवितरण किये थे, इस कारण गङ्गवाड़ि ९६०००, कोपणके समान, चमक रही थी। उसका पुत्र (प्रशंसा सहित) **बोप्पदेव** था। उसके साले या सीवा मरियाने दण्डनायक और भरतेश्वर दण्डनायक थे।

विष्णुवर्द्धन ने मरियाने को अपनी सेना का सेनापति बनाया था।

कौण्डिल्यगोत्रीय डाकरस-दण्डनायक और एचव-दण्डनायकितिके पुत्र नाकण-दण्डनायक और मरियाने दण्डनायक थे। डाकरस-दण्डनायक की पत्नी दुग्गव्वे-दण्डनायकित्ति थी और इन दोनों के पुत्र मरियाने-दण्डनायक और भरतिम्मेय-दण्डनायक थे।

जिस समय मरियाने-दण्डनायक और भरतण-दण्डनायक 'सर्व्वाधिकारी' के पद पर थे, तब उन्होंने अपने पुत्र का नाम **बिट्टिदेव** रक्खा और उसे १००० 'होन्नु' देकर, बिट्टिदेवसे उसके ही हाथ से आसन्दि-नाड् की सिन्दनेरी बगवळ्ळी सहित तथा कलिकणि-नाड् में दिण्डिगणकेरी का प्रभुत्व प्राप्त किया।

राजा विष्णु की रानी लक्ष्मी-देवी से **नारसिंघ** उत्पन्न हुआ था। जिस समय वह शासक था, उस समय मरियाने-दण्डनायक और भरतिम्मेय-दण्डनायक ने ५०० 'होन्नु' देकर के उसके हाथ से सिन्दगेरी, बगवळ्ळी और दडिगनकेरीके प्रभुत्वका नया दान प्राप्त किया।

राजा नारसिंघ और एचलं देवीसे **वीर-वल्लाल-देव** (प्रशंसा सहित) उत्पन्न हुये थे।

भरत-चमूपति और हरियले-दण्डनाथकिति से बिट्टिदेव उत्पन्न हुआ था। मरियाने-सेनापति से बोप्प उत्पन्न हुआ था; मरियाने-दण्डनायकसे हेग्गाड-देक

उत्पन्न हुआ था; और भरत-चमूपसे एक पुत्र मर्रियाने-देव उत्पन्न हुआ था। भरत-दण्डनाथकी पुत्री, एचि-राजाकी पत्नी, तथा रायदेव और मर्रियानेकी माँ शान्तल-देवीने सिन्दघट्टमें एक पार्श्व जिनमन्दिर बनवाया।

अन्तमें इस लेखमें बताया है कि जिस समय, (अपने पटोंसहित), निःशंक-प्रताप-होय्सल वीर-बल्लाल-देव अपनी राजधानी दोरसमुद्रमें थे और अपने राज्य का शासन कर रहे थे :—शकवर्ष ११०५में, जब कि उन्होंने अपने पुत्र वीर-नारसिंध-देवके जन्म-समयमें अनेक दान दिये तब महाप्रधान भरतिमय्य-दण्ड-नायक और महाप्रधान बाहुबली-दण्डनायकने बल्लालदेवके हाथों से अपने कुलकी सिन्दगेरी, बळ्ळवळ्ळी तथा दडिगनकेरि और कलुकणी-नाडूमें अणुवसमुद्रके साथ-साथ उसके लगानमेंसे कुछ दान प्राप्त किया। यह दान उन्होंने अणुवसमुद्र और नाकेयनहळ्ळिकी बसदियोंके लिये लिया था। अणुव-समुद्रकी बसदि उन्होंने ही बनवायी थी। शकवर्ष ११०६में यह दान उन्होंने देवचन्द्र-पण्डित-देवको समर्पित कर दिया। वे देवकीर्त्ति-पण्डित-देवके शिष्य थे, ये गन्धविमुक्त-सिद्धान्त-देवके शिष्य थे, जो माघनन्दि-सिद्धान्तदेवके शिष्य थे। माघनन्दि-सि०-देव श्रीमूलसंघ, देशिय-गण, कुन्दकुन्दान्वय तथा इङ्गु-लेश्वरबलिके कोल्लापुर की सावन्त बसदिके थे।]

[EC, IV, Nagamangala tl.,no 32]

४१२

चिक-मगलूर-कन्नड।

वर्ष क्रोधन [= ११८४ ई० (लु० राइस).]

[चिक-मगलूर में, जलके अन्दर पड़े हुए पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमत् क्रोधन-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध-सप्तमी आदिवारदन्दु श्री-वीर-बल्लाळ-देव पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तिरे किरियमुगुळिय कट्टिद-कालदल्लु मुद्दगौडन मग बम्मय्य कादि बिद्दु सुर-लोक-प्राप्तनाद।

[(उक्त मितिको), जब वीर-बल्लाल-देव पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे :—
किरिय-मुगुळिकी सीमाके युद्धमें मुद्द-गौडका पुत्र बम्मय्य युद्धमें लड़ा और मरकर स्वर्ग को प्राप्त किया ।]

[EC, VI Chickmagalur tl., no 5]

४१३

अजमेर;-प्राकृत ।

[सं० १२४३=११८६ ई०]

सवत् १२४३ वैशाष सुदी १ श्रीमूलसंघे (वे) देव श्रीवासुपूज्यः प्रतिमा साव्हुहालण सुतवर्द्धमान तथा यांत देव तथा साधुपुत्रमादिपाल देवप्रतिमा प्रतिष्ठापितमिती ।

अर्थ स्पष्ट है ।

[JASB, VII, 52, no2.]

४१४

तेरदल;—कन्नड ।

[शक ११०६=११८७ ई०]

वीर-कणिङ्गराय-गज-केसरि सिंहणराय शैळ-निर्घारणवज्र माम्मलेव गूर्ज्जर-राय-भुज-प्रताप-नीरेरुह-वन्य-दं (ट) न्तियेने पेर्म्मेयनोम्मेयुमान्तु गण्ड-पेण्डारनुदारनुर्विगेसेवं विमु तेजुगि-दण्ड-नायकन् ॥ समदारि-क्षितिभृत्-कदम्बकदोळत्यामील-वज्राग्नि तेजमनुन्मत्तमहीशवंशवनदोळ् दुर्व्वार-दावाग्नि-तेजमनन्योर्व्विप-सैन्य-सागरदोळुद्यद्-वाडवोग्राग्नि-तेजमनोरन्तिरे तोरि विश्व-धरेगिन्ती गण्डपेण्डारनग्रमदिन्दं मेरेदं निच-प्रचण्ड-बाहु-तेजमं तेजमन् ॥[1]

---

1. पाँच पादोंका यह श्लोक है ।

भूरि-त्यागं विपश्चिज्जनजनितविपत्त्यागनुग्रप्रतापम्
क्रूरार (रा) ति-प्रतापं मृदु मधुर, वच.-सम्पदं साधु सत्य-
श्री-रामा-सम्पदं तानेनिसि जन-नुतं तेज-दण्डाधिनाथम्
पारावारावृतोर्व्वीवलयदोळतिविख्यातिवेत्तोप्पुतिप्पन् ॥

आतन तनय विनयोपेतं विद्विष्ट-दण्डनाथ-कुमारव्रातावळ-पविदण्ड-ख्यातं श्री-भायिदेवनेसेवं जगदोळ् ॥

परदण्डाधिपनन्दनर्प्पलबर पुट्टल्कमुं-पुट्टुगुम्
गुरु-गोत्रक्कपसद्दयशं परिजनक्कुद्वेगमिन्तो चमू-
वर-तेजात्मज-भायिप पदपिनि पुट्टल्क पुट्टित्तु बन्धुर-
हर्षं स्वकुलक्क तीव्र-परिताप शत्रुमळ्गा ळणम् ॥
क्रूरारातिनृपप्रधान-तनुजातानीकमं गण्ड-पेण्-
डारं तेजुगि-दण्डनाथतनयं श्री- भायिदेवं जगद्-
वीरं लीलेकरासियिं पुगिसुवं स्वस्थानमं तानन-
ल्कारान्पक्कदनैक-वीरननेकाम्भोधि-गम्भीरनन् ॥

आसुरवागे तागिदहितर्क्कळनाहवरङ्गभूमियोळ् पेसददिर्व्वं मिक्क किरु-गण्टकरं सुरदिक्कि कुन्दि-मू-साशिरमं जसं निमिरे सुस्थिरदिं नृपनीयलाळ्वने सासिय-भायि-देव-पृतना-पति तेजुगि-देव-नन्दनम् ॥

पर-भूभृत्-कुळमं तगुळ्दु शरणायातर्क्कळं कादु पुण्-
डेर दर्म्मिन्तु समस्त-देव-सदनक्कं विप्र-सघक्कदा-
दरदिं भू-गृह-दानमं दयेयिनादं माडि कीर्त्यङ्गना-
वारङ्गल् विभु-भायिदेव-सचिवं बह्वं परर्वल्लरे ॥

कडलनेड-गलिसि शेषन पडयोळ् दिक्-कुम्भि-कुम्भदोळ् सुर-सभेयोळ् विडदे कलि-भायिदेवन तोडवेनिसिद कीर्त्तिनर्त्तिपळ् नलविन्द ॥ अन्तु दशदिशावळय-वर्त्तित कीर्त्तिकान्तनेनिसिद कुन्तळ-मही-वल्लाभनीये कूण्डि-मूरु-सासिरमुमं नि कण्ट-कदिन्दाळुत्तं राय-दण्डनाथ-गण्ड-पेण्डारं कुमारं भायिदेव दण्डनायकर् श्रीमत्-

तेरिनाळद गोङ्क-जिनालयद श्रीनेमि-तीर्थेश्वरन अङ्ग-रङ्ग-भोगक्कं ऋषियराहार-दानक्कं खण्डस्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं शक-वर्ष ११०९ नेय प्लवंगसंवत्सरद चैत्र सु १० बृहस्पतिवारदन्दु मुन्न गोङ्करसर् बिट्ट पूर्व्ववृत्तियेप्पत्तेरडु आ ७२रिं बड-गला कोलल् सर्व्वबाधापरिहारिवागि बिट्ट मत्त् मूवत्तार ३६ मत्तं धवलारक्के अङ्कडि-गेरि-पर्य्यन्त-निवेशनमं बिट्टु शासनद कल्लुगळं प्रतिष्ठेयं माडिदर् ।

मद्वंशजाः परमहीपतिवंशजा वा
पापादपेतमनसो भुवि भावि-भूपाः ।
ये पालयन्ति मम धर्म्ममिदं समस्तं
तेषां मया विरचितोऽञ्जलिरेष मूर्ध्नि ॥

इदु तानैहिक-पारमार्थिक-सुखक्कावासवी धर्म्ममिन्तिदनुल्लंघिसिदातनुग्रनरको-दीर्ण्णान्त-संवर्त्त-गर्त्तदोळाळ्गुं परिरक्षे गेय्वनुपेन्द्राहिन्द्रा-देवेन्द्र-सम्पददोळ् कूडुगुम-ल्लिजयुं पडेगुमाकल्पायुमं श्रीयुमम् ॥ प्रियदिन्दमिदनेय्दे काद पुरुषङ्गायु महा श्रीयुमक्कुविदं कायद पातकंगे पिरिदुं गङ्गा-गया-वारणासि-कुरुक्षेत्र (त्रा) दि पुण्य-गो-वृन्द-मुनि-व्रातंगळं कोन्द पातकमक्कुं विढदिक्कुमा पुरुषनेन्दुं रौरवस्थानमम् ॥ शासनमिदावुदे ल्लिय शासनमारित्तरेके सलिसुवेनानो शासनमनेम्ब पातकना सकळ रौरवक्के गळङ्कनिळिगुम् ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥

[IA, XIV, p. 14-26 (lines 68-85)] t. and tr.

४१५-४१६

पर्वत आबू—संस्कृत

[सं० १२४१ = ११८८ ई०]

श्वेताम्बर लेख मालूम होते हैं ।

[Asiat. Res., XVI, p. 312, no XXII, a.]

४१७

अजमेर;—प्राकृत।

[सं० १२४६ = ११८९ ई०]

संवत् १२३१ *फा सुदी ४ शुक्रे साधूलाहड पतनी तोलोत घासेही वहुविल वितसी लषमसी महासीमल्लिनाथप्रतिमाकारपिता ।

अर्थ स्पष्ट है।

[JASB, VII, p. 52, no 1, t.]

४१८

अजमेर,—प्राकृत।

सं० १२४६=११८९ ई०]

संवत् १२३९ फा वदि ४ शुक्रे आचार्य माणिक्यदेव-सिष्यसोमदेव अजि-कामदन श्रीसर्वगोष्ठिका प्रणमति ।

इसमें बताया है कि आचार्य माणिक्यदेवके शिष्य सोमदेवकी मूर्ति किसी अर्जिका मदन श्रीने प्रतिष्ठापित की और वह उसकी रोज वन्दना करती है।

नोटः—ये सब लेख अजमेरवाले १२ वीं शताब्दिको जैनलिपिमें लिखे गये हैं।

[JASB, VII, p. 52, no 5, t.]

---

* इस लेखमें और अगले लेखमें संवत् १२३१ है, लेकिन ए. गैरिनो (A. Guerinot) ने संवत् १२४६ कैसे दिया है, सो समझमें नहीं आता।

४१९

तलगुण्ड;—कन्नड़-भग्न ।

[काल लुप्त,—पर लगभग ११८६ ई० ?]

नोट—इसका लेख नहीं है; मात्र 'Mysore ins. Trnsalated' में नं० १०१ शिलाशासनमें (पृ० १८८) लु० राइसके द्वारा अनुवाद दिया हुआ है, जो निम्न प्रकार है:—

स्वस्ति ! जबकि पृथ्वी और भाग्यका कृपापात्र, महामण्डलेश्वर, सर्वोपरि शासक, सम्राटोंमें प्रथम··· ··· ··· ···बिल्लहराज शान्ति और बुद्धिमानीसे बनवसे नाड्के ऊपर शासन कर रहा था—शक नृपके संवत्सर, स ·· ··· ··· वर्षमें ·· ··· ···

अक्षर बहुत अस्पष्ट हैं ।

(यहाँ आकर लेख बिल्कुल पढ़नेमें नहीं आता ।)

[Mysore ins. Translated, no 101.]

४२०

बलगाम्बे;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[काल लुप्त, पर सम्भवतः ११८६ ई० ?]

[बलगाम्बेमें, काशीमठके दरवाज़ेमें वीरकल् ( ) पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
प्रिय-सुचरित्रे भव्य-जन-बान्धवे ··· ···सामि मालि-से- ।
ट्टिय सति जैन-धर्मद तवर्म्मनेया-पति-भक्तियल्लि सी- ।
तेय-नेगळ्द तिमौवेय समान नेगळ्तेये पश्चिमक्कनो- ।
म्मेये ··· ··· समाधि-विधियिं पडेदळ् सुर-लोक-सौख्यमम् ॥

अर्ह ॥ स्वस्ति श्रीमतु यादव-चक्रवर्ति वीर-बल्लाळ-देव-वसदि १६ रे नेय विश्वावसु-संवत्सरदुत्तरायणद संक्रान्ति-पुस्य(ष्य) दमावासे-आदित्य-वारदन्दु पट्टणस्वामि माळि-सेट्टियर मदवळिमे पद्मौवे सुचित्तदिं समाधि कूडि स्वर्ग-प्राप्तेयादळु मंगळ महा श्री श्रीवीतरागाय नम ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । पद्मियक्केकी प्रशंसा, जिसने समाधिमरणकी विधिसे परलोकका सुख प्राप्त किया । यादव-चक्रवर्त्ति वीर-बल्लाळ-देवके १६वें वर्षमें 'पट्टण-स्वामि' माळिसेट्टिकी स्त्री पद्मौवेने, स्वयं अपनी इच्छासे समाधि धारण करके स्वर्ग प्राप्त किया ।]

[EC, VII, Shikarpur, tl, No. 148.]

४२१

अजमेर;—प्राकृत ।

[सं० १२४७ = ११९० ई०]

सं० १२४७ वैसाष सुद १५ श्रीमूलसंये(घे) साधु बहुमानपत्नी आस्त कर्म्म-क्षयार्थे प्रतिष्ठापित श्री पार्स्वनाथ प्रतिमा पुत्रमहीपालदेव ।

इसमें पार्श्वनाथकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठापना की गयी है । 'साधु' उपनामधारी किसीकी बहुत आदरवाली पत्नी 'आस्त' थी, उसीने प्रतिष्ठा करायी थी । उसके पुत्रका नाम महीपाल देव था ।

[JASB, VII, p. 52, No. 4. t.]

४२२

चिक्क-मागडि;—कन्नड भग्न ।

[काल लुप्त, पर सम्भवतः लगभग]

[चिक्कमागडिमें, वस्तिके पासके पाषाणपर]

श्री स्वस्ति श्रीमतु यादव नारायण-प्रताप-चक्रवर्त्ति ······ धाविसंवत्सरद

आश्वयुज-बहुळ ५ सोमवार ··· ··· सन-समाधियिं पडेदु सुगति-प्रासनाद मग ··· ··· विरोधि-संवत्सरद् चैत्र शु २ शुक्रवारदन्दु बीरोज मुडिपि सुगति-प्रासनाद ॥ मङ्गळ महा श्री श्री ··· ··· वेस्पतिवारदन्दु चोम्मळे सन्नसन-समाधियं ··· ··· आदळु मङ्गल महा श्री ॥

[बीरोज और चोमव्वेकी समाधिका स्मारक ।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 201.]

४२३

चिक्क-मागडि,—कन्नड ।

[बिना कालनिर्देशका, पर लगभग ११६० ई० का]

[चिक्क-मगडिमें, बस्तिके पासके पाषाणपर]

श्रीमज्जैन-पदाम्बुजात-जनित-श्री-कान्तेयेम्बन्टदिम् ।
भूमि-प्रस्तुते दान-धर्म्म ··· ··· ··· ··· ।
कामाक्ष-प्रनिमासि-रूपिनलेव ··· ··· सान्तियकं जग- ।
क्के मातन्दिन सीतेयि ··· ··· वाग्-देवियिन्दग्गळम् ॥
जनकं सकय-नायकं जननि वां मुद्दव्वे शान्तीश्वरम् ।
जिननाथं तनगिष्ट-देव्यवेसेवा-सद् भव्यरे गोत्रर्दि ।
मुनि-नाथं नयकीर्त्ति-देव-मुनिपाराध्यं दलेन्दन्दड् आर् ।
व्वनिता-रत्नमेनिप्प सान्तलेयनोल् धन्यर्कळी-धात्रियल् ॥
दानद गुणदुन्नतियिम् ।
तानी-धरेगधिकेयेनिसि सान्तवे सुखदिम् ।
ध्यानिसि जिन-पति-पदमम् ।
तानैदिदळमर-लोकमं हलररियल् ॥

[सान्तियक्क या सान्तले स्त्रीकी समाधि का स्मारक। इसके पिता संकय-नायक, माँ मुद्दव्वे, इष्ट-देव शान्तीश्वर-जिननाथ और गुरु नयकीर्त्ति-देव मुनि थे।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 200.]

३२४

चिक्क-मागडि;—कन्नड़।

[बिना कालनिर्देशका, पर लगभग १२११ (?) ई० का]

[चिक्क-मागडिमें, बस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु यादव-नारायणं भुज-बळ-प्रताप-चक्रवर्त्ति होयसळ-वीर-वल्लाळ-देव-वरुषद २१ नेय प्रजापति-संवत्सरद मार्ग्गशिर-सुद्ध ७ आदिवारदन्दु ॥

श्री-जिन-राज-राजित-पद-द्वयमं नलविन्दमोर्पेमुम्।
पूजिसि ··· ··· तज्जिन-स्मरणदिं गत-जीविते मल्ले-गवुण्डि ताम्।
पूजित-देवराज-पदेयादळिदच्चरियल्तु मुक्तियम्।
साजदिनीयलार्प्पं जिन-भक्तियदेनुमनीयलारदे ॥
गुरु सकळचन्द्र-मुनिपर्।
परमागममागमं जिनेन्द्रं. देव्यम्।
परहितमेने शुभ-चरितम्।
वर-गुणि मल्लव्वे-गौडिगेने बोप्पदरार् ॥

[स्वस्ति। यादवनाराण, भुजबल-प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सळ वीर-बल्लाल-देवके २१वें वर्षमें, मल्ले-गवुण्डि (स्त्री) ने 'मुक्ति' प्राप्त की। उसके गुरु सकळचन्द्र मुनिप-देव जिनेन्द्र थे।

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 202.]

४२५

गुण्डलूपेट—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक १११८=११९६ ई०]

[गुण्डलूपेट किलेमें, बस्ति-माळमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्रीपृथी (थ्वी) वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक यादवकुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्वचूडामणि मलेपरोळ् गण्ड कदन-प्रचण्डन् असहायसूर शनिवारसिद्धि गिरिदुर्ग्गमल्ल चलदङ्कराम निःशङ्कप्रताप भुजबलचक्रवर्त्ति होय्सळ-वीर-बल्लाळ-देवरु बडग हेड्डोरें-पर्यन्त साधिसि दोरसमुद्र नेलवीडिनोळु सुखसङ्कथाविनोददिं राज्यं गेयुत्तमिरे तत्पाद-पद्मोपजीवि ।

पुरुष-विधान-रूप होरलाधि-कुलाग्रणी लोकसंस्तुतं
गोरव-गवुण्डनग्र- तनयं विनयाम्बुधि कीर्त्ति-सम्पदं ।
इरद-गवुण्डनातन सुतं वर-बिट्टि-गवुण्डनोल्दु ताम्
निरुपमप्प तुप्पूर-जिनालयमं भरदिन्दे माडिदं ॥
विनयनिधि सत्य···धर । मनुचरित वदान्यमूर्त्ति मन्दरधैर्य्यं ।
जनता- संस्तुतनेम्बोन्द् । अनुपमगुण रणवितान बिट्टि-गवुण्डं ।
श्रीमद्-द्रमिळ-सङ्घेऽस्मिन्नन्दिसङ्घेऽस्त्यरुङ्गळ ।
अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि- पारगैः ॥

स्वस्ति श्रीमन्महाप्रधानं कुमार-लक्ष्मण-दण्णायकराधिकारं माडुत्तिप्पंन्दातन सन्नि-धानदलु स्वस्ति समस्त-गुण-सम्पन्नरप्प कुडुग-नाड-मुन्नूरं समस्त-प्रभु-गावुण्डु-गळिद्दुं तुप्पूर बिट्टि-जिनालयक्का-चूर मडहळ्ळिळ्ळ सर्व्व-बाधापरिहारवागि शक-वर्ष ११९८ नळ-संवत्सरद ज्येष्ट-सुद्द १३ बद्दवारदन्दु धारा-पूर्व्वकं माडि बिट्ट दत्ति । बसदिय बडग दिशा-भागदलेरडु वेलि भूमियु खण्ड-स्फुटित-

जीर्णोद्धारके देवरष्टविवाच्चंने··· ··· ··· ··· ··· ··· ·· ··· ···ब्राह्मण··· ···
··· ··· ··· ··· ·· ···कोन्द पापके ·· ··· ··· ··· ···(हमेशा की तरह अन्तिम श्लोक) स्वस्ति श्री समस्त-कोटि-जिनालयं भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

जिस समय, (अपने पदों सहित), होय्सळ वीर-बल्लाल-देव हेद्दुरें (कृष्णा नदी) तक उत्तरकी ओर पृथ्वीको स्वाधीन करके सुख और शान्तिसे राज्य करते हुए अपने निवासस्थान दोरसमुद्रमें थे:—तत्पादपद्मोपजीवी होरलाधिकुलाग्रणी एक **गोरव-गवुण्ड** थे । उन्होंने तिप्पूरमें एक जिनालय बनवाया । वह मन्दिर द्रमिलसंघ, नन्दिसंघके आरुङ्गल अन्वयका था । जिनालयकी मरम्मत तथा पूजाके प्रबन्धके लिये उसने मदहल्लि गाँव का, बसदिके उत्तरकी ओरकी जमीन सहित, दान किया था ।]

[EC, IV, Guudlupet, tl., No. 27.]

४२६

हलेबीड—कन्नड ।

वर्ष नल [शक १११८=११९६ (कीलहार्न)]

[पार्श्वनाथ बस्तिके प्रवेशद्वारके पासके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्री-मूलसंघ-कमलाकर-राजहंसो
देशीय-सद्-गणि··· ···रावतंसः ।
जीयाज्जिनेन्द्रसमयार्णव-पूर्ण-चन्द्रः
श्री-वक्र-गच्छ-तिलको मुनि-बालचन्द्र ॥

स्वस्ति श्रीमद्-भुजबळ-चक्रवर्त्ति यादव-नारायण-वीर-बल्लाल-देवर् सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे। **नळसंवत्सरद कार्त्तिक-शुद्ध-पडिव बृहस्पतिवा-**

रदन्तु श्रीमन्महा-वड्ड-व्यवहारि कवडमय्यन देवि-सेट्टियरु माडिसिद श्री-शान्तिनाथ-देवर बसदियूरु कोरडुकेरेय कालुहल्लि माचियहल्लिय बम्मतिगट्टव इट्टगेय मल्लरसय्यंगण मक्कळु अप्पय्य-गोपय्य-बाचय्यङ्गळु -आ-शान्तिनाथ-देवर बसदिय परिसूत्रदोळगण तम्म माडिसिद पट्टशालेय श्री-मल्लिनाथ ··वरष्ट-विधार्च्चनेगं खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारकं ऋषियर्क्कळाहार-दानक्कं पर्व्वदिनपूजेगं श्रीमन्महामण्डलाचार्य्यर् माण्डविय बाळचन्द्र-सिद्धान्तदेवर शिष्यर् रामचन्द्र-देवर्गे अरुवत्तु-गद्याण होन्नं क्रयवागि कोट्टु कोण्डरा-बम्मतिगट्ट सीमा-सम्बन्धवेन्तेने (आगेकी ३ पक्तियोंमें सीमाकी चर्चा है) आ-केरेयनिप्पत्तु-होनं कोट्टु कट्टिसिदर् देवर नित्य-पूजा-क्रममेन्तेने ॥ (आगेकी ६ पंक्तियोंमें दानकी चर्चा है) इन्ति नितुमं सर्व्व-बाधा-परिहारवागि श्री-शान्तिनाथ-देवर बसदिय-आचार्य्यरारोर्व्वरिद्दरिद्दवरुं कोरडुकेरेय गौडुगळु ऊरवरुवचोक्कलु अरुवण्णबोळगाद अन्यायवेनु बन्दडं तावे तेत्तु सलिसुवरु ई-धर्म्मवं नरवरंगळारैय्दु प्रतिपाळिसुवरु ॥ (इमेशाका अन्तिम श्लोक) मंगल महा श्री ॥

[इस लेखमें सबसे पहले मुनि बालचन्द्रकी प्रशंसा है। वे मूलसंघ, देशियगण और वक्र-गच्छके थे। जिस समय यादव-नारायण वीर-बल्लालदेव शान्ति और बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे—(उक्त मितिको) बहुत पुराने व्यापारी कवडमय्य और देवि-सेट्टिने शान्तिनाथ-देवकी बसदिके लिए कोरडुकेरेके एक छोटे गांव माचियहल्लिके बम्मटिगट्टको बनाया और इट्टगे मल्लरसय्यके पुत्र अप्पय, गोपय्य और बाचय्यने, शान्तिनाथ-बसदिके घेरेके अन्दर अपने द्वारा बनाये गये पट्टशाले के मल्लिनाथ-देवकी अष्टविध पूजाके लिये, महामण्डलाचार्य माण्डवि बालचन्द्र-सिद्धान्त-देवके शिष्य रामचन्द्रदेवको ५० होन्नु देकर उस बम्मटिगट्ट (उसकी सीमायें) खरीदकर भेंट कर दिया; और २० होन्नु देकरके एक तालाब बनवा दिया। इस दानकी रक्षा शान्तिनाथ बसदिके आचार्य, कोरडुकेरेके किसान, और गाँवके ६० कुटुम्ब करेंगे।]

[EC, V, Belur, tl., No. 129]

४२७

चिक्क-मागडि,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[संभवतः लगभग १२१२ (?) ई०]

[चिक्कमागडि में, बसवण्ण मन्दिर के प्राङ्गणमें एक खम्भे पर]

(पूर्व मुख) स्वस्ति श्रीमत्-प्रताप-चक्रवर्त्ति यादव-नारायण होय्सल-वीर-बल्लाळ-देव-वर्षद २३ नेय ॥

दोरेवेत्ताङ्गिर··त्सर नेगळ्द-मास श्रवणं शुद्ध-वा- ।
सरमळ् देरिसि शुक्रवारमु··· पुण्य-घस-सा- ।
ध्यू··सु···बहयाषाढ़······ ··परं वि··,··सत्-
करणं तैतिलमि····'न्दिद विमात कूडें पु··यिम् ॥
जिन-वाक्यामृत-सेवयिं मनद मिथ्यात्वामयं पिङ्गे द- ।
र्शन-संशुद्धते-वेत्त चित्तदोदविन्दन्तमंही··प्ति ··। ।
अनितुं तन्नविवक्षवेम्···बगेयं बिट्ट-कुश-··त्म-श्रु- । ,
द्ध-नयं तन्न ··देव ताळिद् गुणमं जक्कव्वे निश्चय्सुतम् ॥
मति-बिन-पाद-पङ्कजदोळ् अन्वितमादुदु दृष्टि नासिका- ।
ग्रतेयोळे निन्दुवागम-पदङ्गळनालिसुतिदर्दुवागळुम् ।
श्रुति-युगळं···दृष्टि-युत-सन्यसनं नेरेदोप्पे नाक-सं- ।
गति-वडेदळ् समाधि-विधियिं वरे जक्कलेयेम् कृतार्त्थेयो ॥
सले···भानु-ज्योतियिन्दं विकचिसियदरोळ् देव-देवेशनं निश्- ।
श्चळमागिर्द्द ··सन्तोषदोळे जिनपन बानिसुत्ता-लता-को- ।
मळे बिट्टळ् बक्कियक्कं तनुवनुळिदराप्पोळवरेम्बन्तु तन्नम् ॥
त्रयमं मिथ्यात्व-कर्म्मक्रमदं गुणद सम्यक्त्व-सं··सम्बू- ।
द्धियुमं मुम्मण्डि देश-श्रुतमननितुमं कोण्डु निर्मोहे ताथ्-तन्- ।
देयुमं बिट्टन्दे सन्यासमनमळिनवं पून्दु जैनेन्द्र-पाद- ।
द्वयमं चित्तय्सि जक्कव्वे दलेसे···अ·········॥

···त-दर्शने विस्तारित-सु···········र-कळेवर जक्कले-नारिबनाङ्···· ति············नेनेयुत जक्कले तनुवं विट्टागवन्ते सुकुम···सुधाशन-पूज्य-समवशरणमननाकुळं पोक्कु जिननमिवन्दिसुव·······

(दक्षिण ओर)

श्रीमत्पुण्य-फलादभूद् भुवि सुता सामन्त-मुख्यस्य या
सा सर्व्वज्ञ-पदारविन्दमसकृत् सम्पूज्य भक्त्यादिशत् ।
शुद्ध-ध्यान-विशोधि-बोधित-मनःपूर्व्वं समाधि-क्रमैस्
साश्चर्यं त्यजति स्व-देहमणुवच्छ्री-जक्कलाम्बा सती ।
चित्तं विस्तार्य पुण्याश्रव-करण-विधौ सर्व्व-कर्म्माणि नाशी- ।
कर्त्तुं त्यक्त्वा विमोहं समयमुपशमं प्राप्य चात्मोपयोगम् ।
शुद्ध-ध्यानामृताम्भ-प्लुत-म · जिनेन्द्रस्य पादारविन्दम्
प्रस्थाप्यालोक्य देहं त्यजति तृणमिव श्रीमती जक्कलाम्बा ॥
नित्यानन्द-सुखामृताम्बुधि-पयःपूर्व्वावगाहोत्सुका
स्वात्मानुष्ठित-सम्यमात्त-विळसत्-सम्यक्त्व-पोतेन या ।
संसारार्ण्णव-पारमाशु तरणोद्योगं समुत्पादिनी
चित्रं देव-गतिं प्रति त्यजति किं देहं तु जक्काम्बिका ॥
निखिल-वनज-वल्ली-पुष्प-माला-कदम्बैः
घृत-दधि-वर-दुग्धैराभिषिच्याच्चर्य तीर्त्थान् ।
न भवति हृदि तृप्तिं जक्कलाम्बा स्व-देहात्
समवशरण-नाथं द्रष्टुकामा प्रयाति ॥
दानान्वितेति गुण-रत्न-विभूषितेति
शान्तेति सर्व्व-जनतासु दया-परेति ।
जैनागमोक्त-चरितानुगतेति भव्य·
के न स्तुवन्ति भुवि जक्कल-योषितं ते ॥

(पश्चिम ओर)

श्री-विबुधेन्द्र-वन्दित-जिनेन्द्र-महा-महिमार्च्चना-शची- ।

देवियेनिप्प जक्कल-महा-सतियुद्ध-चरित्रमं कला- ।
श्री-विमवङ्गळं विविध-दानमनात्त-जिनेन्द्र-भक्ति-सं- ।
भावित-सत्-समाधि-मृतियिं सुकृतार्त्थिगळारो कीर्त्तिसर् ॥
वनिता-भूषणे सच्-चरित्रवति ताय् लच्छव्वे सामन्त-मण- ।
डन-मुद्दं जनकं विनूत-भरतं कान्तं सुतत्त्वोपदे- ।
शनना-श्रीमदनन्तकीर्त्ति-मुनिपं पूज्यं जिन-स्वामियेन्द् ।
एने जक्क··· ··वंश-शील······सम्यक्त्वं जगत्-पावन ॥
·········ढिगे जिनाग···जिनमतं मतिगा-जिन-सू···सत्पदम् ।
नडेगोडनाडियाय्तेने जिनोक्तियनोदि तदागमार्त्थमम् ।
नडे तिळिदन्ते मुक्तिगिरदेय्दिप शील-गुण-व्रताव्वदोळ् ।
नडेदेडेगोय्दवाल्के गड जक्कले नारि महेन्द्र-कल्पदोळ् ॥
नेरेये मुनीन्द्ररुं पोगळदूणं तले दुगे परिग्रहङ्गळम् ।
तोरेदु गृहीत-सन्यसनदिं निज-बान्धव-मोह-पाशमम् ।
परिदु सुवृत्ते जक्कले महा-सति चित्तमनाप्त-तत्त्वदोळ् ।
नरिसि समाधियिं नेरेये साधिसिदळ् सुर-लोक-सौख्यमम् ॥
तळर्दिरदेक-पार्श्वं-नियम-स्थिति दृष्टि सु-नासिकाग्रदिम् ।
कळिवेडे बल्पु बळ्करदे मेय् मिडुकाडदे जैन-भक्ति सग्- ।
गळिसदे माणदुच्चरिसि पञ्च-पदङ्गळगानात्म-तत्त्वदोळ् ।
नेलसिद सत्-समाधि-विधि जक्कले-नारिगिदेक-लावणम् ॥

उत्तरकी ओर) श्री-जिनेन्द्र ॥

त्यक्त्वा देहं विमोहाद् व्रत-गुण-चरित-श्रेणि-निश्रेणि-मार्गाद्
आरुह्य स्वर्ग-दुर्गं निज-भवन-बलादेव यत् तद् गृहीत्वा ।
याहं जक्काम्बिकास्मिन् दिवि दिविजवरोऽभूवमात्म-प्रसादाद्
इत्थं तुष्टाव गत्वा समवसरण-भूस्थं नतेन्द्रं जिनेन्द्रम् ॥
जिन नाथाभिषवङ्गळिं जिन-गुण-स्तोत्रङ्गळिन्दं जिनार्- ।

र्च्चनेयिन्दं जिन-भक्तियिं जिन-मुनीन्द्राहार-दानङ्गळिम् ।
जिन-वाक्यात्थं-विचारदिन्दलेदु मिथ्या-मार्ग्गमं तत्त्व-मा-।
र्ग्गवनेयिं पेट्टमरल्वदिन्देरगिदळ् जक्कव्वे जैनाब्धि-शोळ् ॥
तत्त्वमना-जिनेन्द्र-मतदिं तिळिदुज्ज्वळमाद शुद्ध-द-।
ष्टित्व-गुणार्कनिन्दलरे शील-गुण-व्रत-वारिजाळि मि-।
थ्यात्व-तमस्-तमं परेये सत्पथ-वर्त्तिनियागि शुद्ध-सं-।
वित्वदिनेय्दिदळ् नेगळ्द जक्कले नारि सुरेन्द्र-लोकमम् ॥
ललित-पतिव्रताचरण-चारु-नदी-सलिल-प्रवाहदिम् ।
कलि-मलमं कळल्चि निज-निर्म्मळ-कीर्त्ति-लता-वितानमम् ।
बळेयिसि-शील-शालि-वनमं परिवर्द्धिसि पुण्य-नन्दनङ्-।
गळने निमिर्च्चि जक्कले वलं पडेदळ् सुमनो-विभूतियम् ॥
परिकिसि सद्-बुधर् प्पोगळे तन्न चरित्र-गुणाङ्क-मालेयम् ।
विरचिसि सुप्रबन्धमने दिक्-कुळ-भित्तिगळोळ् तेरळ्चि मुं-।
बरेदुदनीगळा-दिविज-लोकदळोप्पुव लेख-जाळदोळ् ।
बरेयिपनेन्दु जक्कले महा-सतियेरिदळल्ते सग्गमम् ॥
पुगेयवसर्प्पणं भरतदार्य्यंयोळन्वितमाद भोग-भू-।
मिगळ विरामदोळ् सुकृत-दुष्कृत-वर्त्तनेयागि सन्द का-।
ल-गात-च···तु ··· ळन्त्यदोळे पञ्चम-कालदोळेन्दिदन्द··।
महात्मरोळ् गुणमे जक्कले-नारियोळुत्तरोत्तरम् ॥

[प्रताप-चक्रवर्त्ति-यादव-नारायण होय्सल वीर-बल्लाल-देवके २३वें वर्षमें उक्त मितिको जिसका बहुत विस्तृत वर्णन है, परन्तु जो बहुत घिस गया है।

जक्कव्वे (जक्कले)-ने समाधिमरण धारणकर स्वर्ग प्राप्त किया।

(सम्पूर्ण लेख उसकी भक्ति और तपकी प्रशंसासे भरा हुआ है, कुछ भाग संस्कृत में है और कुछ कन्नड़में है)। उसकी माता लक्कव्वे, पिता मण्डनगुद,

पति विख्यात भरत, तप-साधक उपदेष्टा (गुरु) अनन्तकीर्त्ति-मुनिप। उसने अपना जीवन, शील और उपाधियाँ पद्यमें गुम्फित करा लीं थीं।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 196,]

४२८

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १११८=११९६ ई०]

[जै० शि० सं, प्र० भा०]

४२९-४३०

श्रवणबेल्गोला—कन्नड।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४३१

अद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक १११९=११९७ ई०]

[अद्रिमें, बन-शङ्करी मन्दिरके सामनेके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं यादव-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेराज-राज मलपरोळ् गण्ड कदन-प्रचण्डनेकाङ्क-वीरनसहाय-शूर शनिवार-सिद्धि गिरिदुर्ग्ग-मल्ल चलदङ्क-राम निश्शंक-प्रताप चक्रवर्त्ति होय्सळ-वीर-बल्लाल-देवर राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्कं-तारम्बरं सलुत्तमिरे॥

भुवनं भू-चक्र-चक्रायुधनेने नेगळ्दं वीर-बल्लाळनुर्व्वी- ।
स्तवनीय-प्राशु-मत्स्प-च्छवि सुचरित-कूर्म्मोदयं सार-सूकरि- ।
य विळासं विक्रम-श्री-नरहरि-परमं त्रिक्रमं राम रामो- ।
त्सव-रामानन्दि विद्या-लुगतमति-कलि-प्राभव-प्रौढ़-तेजम् ॥
बळवद्-बल्लाळनुग्राहव-पटह-रवं कर्ण्णवन्ताये विद्युत् (विद्विट्)-
कुळ-कान्ता-कर्ण्ण-पुत्रं केडवुदणकवल्तोन्दे केळ् विस्मयं कण्-
मलरिं बाष्पाम्बु कय्यि कडगवडिगळिं नूपुरं वक्त्रदिं सुय् ।
तले-कट्टिं माले-बूवाकेगळ गळकदि विळ्वुदुत्तार-हारम् ॥
जित-धात्री-चक्र चक्राधिप नृप-वर बल्लाळ केळ् निनु ओळान्तु- ।
द्धत-वीराराति-यूथं विगत-विभवमागिर्द्दं रञ्जिकुं वि- ।
श्रुत-नाना-वाहिनी-सङ्कुळ-परिगत-शोभानुकूल्यं सदा-से- ।
वित-राजद्राज-वंशं सकळ-कवि-निकाय-स्वनाकीर्ण्ण-कर्ण्णम् ॥
एनसुं तीव्र-प्रतापकगिदु दिनकरं मित्रनागिर्द्दपं ने- ।
हने राजं राज-नामं तनगे पगेयेनिप्पुम्मळं पेर्च्चि कन्दिर- ॥
प्पनवं मत्तावनप्पं मेरेवनदटनिं तोर्प्पनावं महोग्रा- ।
रि-नृपाळं विश्व-भू-चक्रदोळेले चलदिं वीरबल्लाळ निन्नोळ् ॥
आनोलविन्द् वण्णिसटडेम् गळ दक्षिण-चक्रि युद्धदोळ् ।
तानसहाय-शूरनेनिपुन्नतियं रिपु-राय-सेव्रुणा- ।
नून-गजाश्व-सद्भट-बलङ्गळनळ्कुरदोन्दे-मय्योळोन्द्- ।
दानेयोळोक्किळिक्कि पराक्रमदुन्नति ताने हेळदे ॥

व॥ अन्ता-प्रताप-चक्रवर्त्तियेनिसिद धीरं वीर-बल्लाळ-देवं निज-
भुज-बळदिन्दुण्डिगे साध्यं माडि चलदिन्दाळद् पलवुं देशङ्गळोळ् ॥

वृ॥ पलवुं पूर्ण्ण-तटाकदि बलेद-नाना-शालि-केदारदोळ्- ।
पोलदिं वारिज-षण्डदिं परिमळ-भ्रान्ताळि-माळोदय-पु- ।
ष्पलता-सङ्कुळदिं फलोन्नमित-चूतादि-द्रुमाबङ्गळिम् ।

नेलेयागिप्पुदु मन्मथाङ्गे बनवासी-देशवेत्तेचलुम् ॥

क॥ एने नेगळ्दा-बनवासी- ।
वनिता-मुख-तिळकवेनिप जिड्डुलिगेयना- ।
नृपाळ-प्रकरद शो- ।
र्य्य-निधान-स्थानमेसेवुदुद्धरेय-पुरम् ॥

वृ॥ अदेन्तेन्दडे ॥
सरसिज-वक्त्रदिं कुमुद-लोचनदिं विळसल्लताङ्गदिम् ।
सुरुचिर- पल्लवाधरदिना-शुक-भावण्डदिन्दे मल्लिका- ।
परिमलदिं मदाळि-कुळ-कुन्तळदिं वन-लक्ष्मि-रूपनुद्- ।
धरेय पुरोपकण्ठ-वनदोळ् पडेदोप्पुवळावळाव-कालमुम् ॥

मत्तमल्लि ॥
सले तत्-पुराधिनाथर् ।
पलरुं मुन्नेगळद्रवरोळतुळिन-शौर्य्यम् ।
चलदर्त्थि-गण्डनेनिपोळ्- ।
गलि बट्टीगनिरिव बिट्टिगं पेसर्-वडेदम् ॥
परियिट्टु वरि-भूपा- ।
ळर पुरवं सुट्टु हरिव कञ्चिगनादम् ॥
बिरुदिं तन्नृप-तनयम् ।
धरेयोळ् जयदुत्तरंगनपगत-भङ्गम् ॥
गङ्ग-कुळोत्तमं मरेयनेरिद मेयूगलि मारसिंग-भू- ।
पंगे तनूभवं नेगळद् कीर्त्ति-नृपाळकना-नृपङ्गे पु- ।
त्रं गड मारसिंगनवनग्र-तनूभवमेन्तोडानदा- ।
वङ्गेणे माळ्पेनप्रतिम-रूपननेक्कल-देव-भूपनम् ॥
आ-नेगळ्देक्कल-देव-म- ।
हि-नाथन तङ्गे दसवमरसन सति धा- ।
त्री-नुते चट्टल-देवि क ।

ळा-निधि पडेदळ् पवित्र-पुण्य-प्रयमम् ॥
पर-भूपाळ-पुर-त्रिनेत्रनेरगा-क्ष्मापाळकं वैरि-दुर्- ।
धर-दैत्य-प्रकर-प्रताप-हरणोद्यत्केशवं केशवम् ।
सरसोदार-कवित्व-तत्त्व-चतुरास्यं सिंगदेवं महा- ।
पुरुष-श्री-पुरुषत्नम तळेदरन्ता-भूवदं भूवरर् ॥
अवरोळ् पिरियनेनिपि ॥
मरेदु पर-सतिगर्- ।
करोलच्युननलदन्य-देव्यदार्प्पम् ।
मरेयिप निज-घन-लोमक ।
एरगानेरगनेरग-नृपनेने नेगळ्दम् ॥
एने नेगळ्देरग-नृपाळकन्- ।
अनुजं कोळाल-पुर-वराधीशं पा- ।
वनतर नन्निय-गङ्गम् ।
विनुत-गुणोत्तुंगनवनी-पति नरसिंगम् ॥
आ-त्रिभुविन सति लकमा- ।
देवि मुकुन्दङ्गे लच्मि परमेष्ठिगे वा- ।
णी-वधु रुद्रङ्गद्रिजे ।
देवेन्द्राङ्गेसेव-सचियेनल्पेसर्-वडेदळ् ॥
आ-रमणी-विशाळ-विनुतोदार-पद्यदोळ्जगमेनन्त् ।
आ-रमणी-निजामळिन-गर्भ-पयोधियोळिन्दु रागदिन्द् ।
आ-रमणी-लसज्-जठर-बाहवियोळ् सुरसिन्धु-वं स-वि- ।
स्तारदे पुट्टुवन्ददोळे पुट्टिदनेक्कल-भूमिपाळकम् ॥
अदेन्तेन्दोडे ॥ स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरम् कोळाळपुर वराधीश्वरं गङ्ग-कुल-कमल-मार्त्तण्डं विरुद-मण्डलिक-शरभ-भेरुण्डं जयदुत्तरंगं नन्निय-गङ्गं विराजित-मयूर-पिञ्छध्वजं भूप-रूप-मकरध्वजं श्रीमदच्युत-चरणालिप्त-

चन्दनचर्च्चिताङ्गं विप्राशीर्व्वाद-सत-सहस्र-सम्भूत-शेषाक्षत-पवित्रीकृतोत्तमाङ्ग भूमि-कन्या-स्वर्णान्न-दान-विनोदं सकळ-जन-मनोह्लादमेनिसि देक्कल-देवन प्रतापमं पेळ्वडे ॥

जवनं बक्कुलिपं कडङ्गि सिडिलं माक्कोंळ्वनामीळ-का- ।
ळ-विषोग्राहियनेत्ति मारिढुवनोर्व्वं-व्वळेयं मग्गिपम् ।
तविपं तीव्र-निषाद्दग्गळिकेयं तानेन्दोडिन्दुक्किनि- ।
क्कुवमारान्तपरेक्कल-क्षितिपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
दवरूपं रिपु-काननक्के पवि-रूपं शत्रु-शैळक्के बा- ।
डव-रूपं [द्] विषदर्णवक्के निज-तीव्रात्युग्र-कोप-प्ररू- ।
पवेनल् पोङ्गि कडङ्गि निन्दतुळ-बाहा-गर्व्वदिन्दाम्परार् ।
अवनीपाळकरेक्कल-क्षितिपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
इ बेसेगोळ्वुदेनो सुभटोत्तमनेक्कल-देवनिष्टरोळ् ।
नम्बुगे दप्पिदन्दु पर-कान्तेयोळोल् [द्] ओडगुडिदन्दु लो- ।
बम्बिडिदर्त्थदत्तळिपिदन्दिदिरान्तडे कोल्लदन्दु केळ् ।
अम्बुधि मेरेयिं तोलगुगुं तळगुं नेळेयिं कुराचळम् ॥
तक्कतनक्के मिक्क पर-कामिनियक्कळनेम्म तङ्गेयेम्म- ।
अक्कनेनुत्ते नम्बे मोरेगोण्डोडगुडुव साधु-गळ्ळरे- ।
तक्कुपायोम्यवा-महीपरेम् गळ पोल्वरे शौचदेळोयिन्द् ।
एक्कल-भूपनं पर-वधू-विनुतोदार-पद्म-गर्भनम् ॥
गति-भावं चारि सूत्रं निरिसळवि बळं काङ्के बल्योजे कायुपु-
न्नति गादं लागु बेगं तेरपु पसरवारैके तेरक्के कूप्पड- ।
कितवाकारं तडं किर्त्तडवेनिप भृगु-प्रौढियिं कोल्वतुग्रा- ।
हितनं मारक्कवं मार्म्मलेदडे चलदिन्देक्कल-क्षोणिपाळम् ।
आ-नृपाळनन्वयागत-प्रधानरोळ ॥
स्तुति-वेत्तं विश्व-लोकोन्नत-वितरण-शीलं रिपु-क्षोणिपाळ- ।
प्रतति-प्रख्यात-दण्डाधिप-कुल-विळयोदग्र-काळं मही-चत्-

दित-भास्वत्-सच्चरित्र-व्रत-युत-गुण-लोळं जगत्-सेव्य-भव्य-
प्रतिपाळं स्वीकृत-प्राकट-वर-बुध-जाळं **चमूनाथ-माळम्** ॥
आ-विभुविङ्ग सति-**मा**- ।
देविगमोगेदं प्रताप-निधि वैरि-जय- ।
श्री-वरनहित-वनोद्यद्- ।
दावानळनप्प **बोप्प देव-चमूपम्** ॥
एरेदर्त्थिर्त्थि-चयक्के कळ्प-कुजविप्पन्तिप्पनं बोप्पनम् ।
वर-वंशाम्बुधि-वर्द्धनक्के शशियिप्पन्तिप्पन बोप्पनम् ।
आ-सेनापति-सति-जिन- ।
शासन-देवते समस्त-चतुर्कोटि कळोद्- ।
भासित-पद्मावति जग- ।
ती-संस्तुतेयेनिप **बोप्पियक्कं** नेगळ्द्ळ् ॥
आ-दिव्य-सतियेनिप **बो**- ।
प्पा-देविगममळ-कीर्त्ति-बोप्पङ्गं पुण् ।
योदयदिनोगेदनमृत-म- ।
होदधियोळ् सोमनेगेव-तेरदिं **सोमम्** ॥
धरे बण्णिपुदु मन्त्रि-बोप्पन तनूजारामनं प्रेमदिम् ।
निरवद्यामळ-नामन प्रणुत-विद्व[त्]-स्तोमनं प्रोल्लसद्- ।
वर-नारी-जन-कामन विनय लक्ष्मी-धामनं भव्य-जन्- ।
धुर-धर्म्म-व्रत-नेमनं बहु-कळा-निस्सीमनं सोमन ॥
सुरि-चकोर-सोमननवद्य-कळागम-सोमनुद्धतो- ।
गारि-सरोज-सोमनतिनिर्म्मळ वंश-पयोधि-सोमना- ।
चार-वन-प्रवर्द्धन-वसन्तक-सोमनशेष-भव्य-हृत्- ।
कैरव-सोमनेन्देनिप **सोम**-चमूपनिदेनुदात्तनो ॥
आ-महिमास्पदनोनासद- ।
सोम-चमूपङ्गे पात-हिताख्न्धति सु- ।

प्रेमान्विते सतियादळु ।

सोवल-मादेवि सविगे ससि-लेखेयवोल् ॥
पडेमातेम् विळसत्कळा-परिणत विद्या-गुणोद्भासि हेग्- ।
गडे-सोमं पति सामि-वज्रकर गण्डं दण्डनाथ नसक् ।
ओडेयं श्री-महादेवनात्म-सुतनेन्दन्दिन्दु मत्तन्यरार् ।
प्पडेदर् स्सोमल-देवियन्ते सतियर् स्सौभाग्यमं भाग्यमम् ॥
एने नेगळ्द मंत्रि-सोमन ।
वनितेगे पति-हितेगे सत्-कुल-प्रभवेगे सन्- ।

जन-नुते-सोवल-देविगे ।
तनयर् म्महदेव-राम-केशवरोगेदर् ॥
आ-मूवरोळं मध्यमन् ।
ईं-महियोळु ताने पलरोळुत्तमनेनिपम् ।
रामं यशोभिरामम् ।

सोमात्मजनमळ-धर्म्म-कर्म्म-प्रेमम् ।
पर-सेना-जय-विक्रमोन्नतियोळादं भीमनुं रामनुं ।
धरणी-स्तुत्य-कळा-विळासदोळविन्दा-सोमनुं रामनुम् ।
वर-नारी-जन-मोहनाकृतियोळुद्यत्-कामनुं रामनुम् ।
सरियेन्दी-जगवेय्दे बण्णिपुदु कीर्त्ति प्रेमनं रामनम् ॥

श्री-रामननुजनेनिसिदन् ।
आ-राम-चमूपननुजनुरु-लक्ष्मण-वि-।
स्तार-सुमित्राधिक-पुण्-।
यारामं केशवं जगजन-विनुतम् ॥
एरेदन्दागळे माणिपं बुध-विपत्-संक्लेशवं केशवम् ।
विरुदिन्दान्तरनेय्दिपं स्फुरदरण्योद्देशवं केशवम् ।
शरणागेन्दडे नीडुवं वहळ-माहा-पाशवं केशवम् ।

चिर-कीर्त्ति-प्रमेयिं बेळप्पनखिळाशाकाशवं केशवम् ॥
कडु गलि माधवङ्गे मुनिदेळ्वर गोण्मुरि मन्त्रि-माधवङ्ग ।
एडवरनोक्किलिक्कुव जवं सले माधव-दण्डनाथ नोळ
तोडवर मृत्तु माधव-चमूपनोळणिमन मचक्के मार् -।
न्नुडिवर मारि केशव-चमूपतियण्णन गन्ध-वारणम् ॥
तरुणी-लोचन-काम-देवनकळङ्काचार-विस्तारनक्-।
करिगग्गाश्रयनाश्रितैक-शरणं प्रोद्वृत्त-वीरारि-सिन्-।
धुर-सिंहं सकळागम-प्रणुत-जैनानून-वारासि-वन-।
धुर-चन्द्रं महदेव-मन्त्रियनुजं दण्डाधिपं केशवम् ॥
आ-नेगळ्दनुज-द्वितयम् ।
पीन-भुजाकृतियिनात्म-भुजदोळ् तवुळ्र्-।
ब्बी-नुतमेनिसल्केसेदम् ।
ताने चतुर्म्मुखनेनल्के माधव-देवम् ॥
मरवि परात्थमं तेगेव मेळ्किसि पोर्द्दि पराङ्गना-रतक् ।
एरगुव नम्बिदाळ्दनिरे मत्ते पतित्वमनासेगेय्दु वे-।
सरनुसिवंन्य-मन्त्रि-निकरक्कदटिं तोडरिकदं गडेन् ।
अरियिरे सामि-वञ्चकर गण्डननी-महदेव-मंत्रियम् ॥
-पर-वधु रम्भेगं रतिगवगळवोप्पुवडं परात्थवी- ।
श्वर-सखनत्थदिं वरुणनत्थदिनूर्ज्जितवागि बप्पडम् ।
पर-नृपनोल्दु मन्त्रिसुवडं पिरिदीवडवत्त चित्तवो- ।
सरिसदिदेम् महत्वदोदवो महियोळ् महदेव-मन्त्रियम् ॥
बहु-वक्त्रं पद्मगर्ब्भं तनुज-गुरु गुरु-द्वेषि जीवं सुराघी- ।
श-हितात्मं सु-प्रबुद्धोद्धवनेनिपवनुं तानकार्य्यं-प्रयुक्तं ।
महियोळ् पोल्वन्ननावं तनगेने नेगळ्दं विश्व-लोक-प्रसिद्धम्
महदेवं मन्त्रिमुख्यं मनु-मुनि-चरितं मन्त्र-युद्ध-प्रवीणम् ॥
गेडेगोण्डं धन्यनोल्दालगिसिदने कृतात्थं मनं बेट्ट मेय्-सार्-

द्दोडनुण्डं पुण्य-पुञ्ज पोरेव-नृपने नैर्म्मल्य-धर्म्मानुसङ्गम् ।
नुडि-गल्लं विश्व-विद्वज्जन-विनुत-कळा-प्रौढनेन्दन्दु तन्नोळ्
पडियावं मन्त्रि-वर्य्यं बुध-निधि महदेवङ्गे मत्तोर्व्वनन्यम् ॥
मति कूर्त्तगळ्गे दृष्टियेनिसिप्पुदु तन्नय सूक्ति-शक्ति भा- ।
रतिगे विवेकवं कलिसुवोजुवोलिप्पुदु चारु-सत्-कळा- ।
ज्ञते चतुराननङ्गरिवनीवेरवट्टेनिसिप्पुदेन्दु वन्- ।
दि-तति निरन्तरं पडेवु बण्णिपुदी-महदेव-मन्त्रियम् ॥
वनदोळ् हुट्टिद-भद्र-जाति-नृपम मुण्डट्टु ता पट्टवर्- ।
द्धन-प्पन्तिरे चक्रवर्त्तिगे चळ गोण्डेकल-त्तोणिपा- ।
ळन दुर्ग्गं-विडिदिद्दुं दोर्व्वळद बल्प तोरि वज्राळ-दे- ।
वन सेनापतियादनूर्ज्जित-भुज दण्डाधिपं माधवम् ॥
परिकिपडुम्म-वस्तु हदिनारवरोळु तुदियिं निवृत्ति तळ्त् ।
एरडेरडुत्तरोत्तरमनेय्दे मोदल् परवा-जिनेन्द्र-मा- ।
सुर-पद-पूजेयोळ् फळदिनित्त बळम्बरवोन्दु माणद्डे ।
निरुपमवल्ते माधव-चमूपन जैन-जन-स्तुत-व्रतम् ॥

अदेन्तेन्दडे । श्रीमन्महा-प्रधानम् । पुरुष-निधानम् सोवल-देवी-जठर-आहवि-समुद्भूत शौच-गाङ्गेयम् । अणु-व्रतादि-सुव्रताचरण-नियमागण्य-पुण्य-कायम् । निखिल-समय समुत्पादन-प्रकटीकृत-ज्ञानानून-जैनागम-शिक्षा-क्षम-सकल-चन्द्र-भट्टारक-देव-चरण-सरसीरुह-परिमळ-परितोष-समुल्लसित- षट्चरणं । जिन-समय-समुद्धरण-परिणतान्तःकरणम् । भुवन-विनुत-भव-रहित-जिन-भवन-विनिर्म्मा-पणो-द्वृत्त-चित्त-नित्याह्लादम् । आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदम् । श्रीम-देक्कल देव-राज्याभुदय-करण-कारणम् । त्रि-शक्ति-चतुरुपाय पञ्चाग-मन्त्र-प्रवीणम् । सामि-वञ्चकर गण्डम् । निखिळ-गुण-गण-करण्डम् । पर-नारी-सहोदरम् । साहस-वृकोदरम् तानेनिसि नेगळ्द-महदेव-दण्डनायन महा-सतिय महत्त्वमं पेळ्वडे ॥

आतनु मन -प्रियं रतिगे लक्ष्मिगे भाविपोडोर्व्वं गोवळम् ।
पति गिरिराज-पुत्रिगे मरुळ्गेरेयं वरनेन्न कान्तन- ।

लदे नाल्कुं गतियिन्दवोसरिसि मूरुम्मूडवं विट्टु ता-
ने दया-वल्लभनादनी-सकळचद्रं-चारु-भट्टारकम् ॥
श्री-वनितेगे मोगवित्तु त- ।
पो-वनितेगे मेय्यनोड्डि मुक्त्यङ्गनेयम् ।
भाविसुव बम्मचारियन् ।
ए-वोगुळ्वुदो सकळचन्द्र-भट्टारकरम् ॥
सकळागम-कोविदरम् ।
सकळ जगद्-भरित-कीर्त्ति-लक्ष्मीश्वरम् ।
सकळात्मकरं पोगळ्गुम् ।
सकळ-जनं सकळचन्द्र-भट्टारकरम् ॥

स्वस्ति श्री सक-वर्ष १११६ नेय पिङ्गल-संवत्सरद माघ-शुद्ध १२ वड्डवार वुत्तरायण-सङ्क्रान्ति-व्यतीपातदन्दु श्रीमन्महा-प्रधानं महदेव दण्डनायकर्म्माडिसिदेरग-जिनालयद शान्तिनाथ-देवर प्रतिष्ठेयं माडिदल्लि श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर येक्कलरसरुं समस्त-परिवारङ्गळुमिद्दु वसदिय खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक ऋषियराहार-दानकं देवरष्ट-विधार्च्चनाभिषेकक्कङ्ग-भोग-रङ्ग-भोगकं श्री-मूलसंघद काणूर्-गणद तिन्त्रिणी-गच्छद श्री-सकलचन्द्र-भट्टारक-देवर कालं कर्चि धारा-पूर्व्वक माडिसि सर्व्व-नमस्यमागि कोट्ट स्थळ-वृत्ति (शेषमें दान और सीमाओंकी विशेष चर्चा है ।)

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय, (अपने पदों सहित), होय्सळ-वीर-बल्लाल-देवका राज्य प्रवर्द्धमान था —उसकी बहादुरी को कहनेवाले श्लोक, जिनका अन्तिम कथन यह है कि उसने राजा सेवुणको, जिसके पासमें अगणित हाथी, घोड़े, तथा अच्छे योद्धा थे, युद्धमें अकेले ही हराया ।

प्रताप-चक्रवर्त्ति वीर-बल्लाल-देवके द्वारा जीते गये बहुत-से देशोंमें से एक बनवासी-देश या जो काम-देवका स्थान था । इस देशका तिलक-स्थानीय जिड्डु-लिगे था; जिसके शासकोंके पास रक्षण और कोष-भवनके तौर पर उद्धरे था;

इसकी सुन्दरताका वर्णन । इसके शासक बहुतसे प्रसिद्ध व्यक्ति हुए, पर उन सबमें सबसे ज्यादा नाम त्रिट्टिगका हुआ । युद्धसे भाग जानेवाले शत्रु-राजाओंके नगरको जलानेसे उसे 'हरिवकञ्चिग' (ध्वंसक कञ्चिग-असुर) की उपाधि मिली थी। उस राजाका पुत्र, जोकि गङ्ग-कुलका अग्रणी था, राजा मारसिंग था; जिसका पुत्र राजा कीर्त्ति था, जिसका पुत्र मारसिग, जिसका ज्येष्ठ पुत्र राजा एक्कल-देव था। उस विख्यात एक्कल-देवकी छोटी बहिन दमवमरसकी पत्नी, संसार-प्रसिद्ध चट्टल-देवी थी जिसके तीन लड़के थे,—एरग, केशव और सिंग-देव। एरगकी प्रशंसा। उसका लघुभ्राता कोळाल-पुरका अधिपति, नन्नियं गंग, नरसिंग था, जिसकी पत्नी लक्मा-देवी थी। और उससे राजा एक्कल उत्पन्न हुआ था। उसके पद। युद्धमें उसके पराक्रमकी प्रशंसा करने वाले श्लोक।

उसके मन्त्रियोंमें, (प्रशंसापूर्वक), चमूनाथ-माल था। उस और उसकी पत्नी मादेवीसे बोप्प-देव-चमूप उत्पन्न हुआ था। उसकी पत्नी बोप्पियक्क या बोप्पा-देवी थी, और उनका पुत्र सोम-चमूप था, जिसकी पत्नी सोवल-मादेवी थी। उसके महादेव, राम और केशव पुत्र थे। इनमेंसे राम और केशवकी प्रशंसा। महादेव-मन्त्रीकी प्रशंसायें। यह सकळचंद्रभट्टारक-देवका भक्त था।

उसके (महादेव-दण्डनाथके) गुरु सकलचन्द्र-भट्टारक-देवकी गुरुपरम्पराः—पद्मणन्दि-मुनिपके शिष्य रामणन्दि यतिप, जिनकी क्रमगत शिष्य परम्परा ये थी —मुनिचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रेश, कुलभूषण-व्रति त्रैविद्य-विद्याधर, इनके शिष्य सकळ चन्द्र-भट्टारक थे; उनकी प्रशंसा। (उक्त मितिको), महाप्रधान महादेव-दण्डनायकने एरग जिनालय बनवाकर और उसमें शान्तिनाथ भगवान्‌की प्रतिष्ठा करके, महामण्डलेश्वर एक्कलरसकी उपस्थितिमें, मूलसंघ, काणूर-गण तथा तिन्त्रिणी गच्छके सकलचन्द्र-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक, हिडगण तालाबके नीचे 'भेरुण्ड' दण्डेसे नापकर ३ मत्तल चावलकी भूमि, दो कोल्हू, एक दुकानका दान किया। कुछ दानोंका और भी जिक्र है। मन्दिर-भूमिकी सीमायें।]

[EC, VIII, Sorab, tl., No. 140]

४३२

यिडगूरु;—कन्नड-भग्न ।

[बिना काल—निर्देशका, पर लगभग १२०० ई०]

[यीडगूरु (चिक्कनहल्लि परगना) में, तालावकी मोरी पर एक टूटे हुए पाषाणपर]

······र्थं रत्नसिद्धान्त-देवर कुमुदचन्द्र-देवर गुम्म-सेट्टि यिवं [प-] रोक्षविन··· ··· ···निनिरिघ··· ··· ···

[रत्नसिद्धान्त-देवके (शिष्य) कुमुदचन्द्र-देवके गृहस्थ-शिष्य गुम्म-सेट्टिका स्मारक ।]

[E C, XII, Gubbi tl, No 36]

४३३

बन्दलिके;—संस्कृत तथा कन्नड—भग्न ।

—[बिना काल-निर्देश का, पर सम्भवतः लगभग १२०० ई० का]—

[शान्तीश्वर बस्तिके आँगनमें, उत्तरकी ओर के समाधि-पाषाणपर]

लेख बहुत घिसा हुआ है)······शासन के एसवी-शासन-देवि जिनेन्द्र-पूजे··· ···जित-देव-कान्ते जिन-योगि-निकाय-समग्र··· ···व्रतेयु···तिम्बे विबुधालिगे ता सुर धेनु येमू··· ···नेगळ्द सोमल-देवि··· ·· पूजेगं मुनि··· ··· व्रज····· प्रवृत्ति-जिन-पादाम्भोज-सद्-भक्तियोळ···व्रतादि-गुण-सन्दोह···तन्देगे··· बगारू द्दोरे एणे भू-चक्रदलि कान्तेयरु ॥

श्रीमद्-भ··रोत्तम-लसत्- श्री-तीर्थ-शान्तीश्वरो-।
द्दाम-स्तान ··माळ्पोन्दु सद्-दानदिन्द् ।
एमन्ता-शुभचन्द्र···थुं नोळ्पडी-।
रामा-रत्नवेनिप्प सोमवे लोक-त्रय··· ···॥

··· ···त-देवि जैन-पद-पूजा-दान-शीलादियि-।
··· ···रोत्तरं सन्दिर्द्द सम्यक्त्वदिम् ।
सन्तर् व्रणिणसे··· ···दं कालान्तदल् निर्म्मळम् ।
शान्तं चित्तवेनल्के वि··· ···देवत्वमं ताळिदळ् ॥

[लेख बहुत बिगड़ा हुआ है । इसमें शान्तीश्वर बसदिमें जैन विधियों के पालन पूर्व्वक सोमल-देवी या सोमव्वेकी मृत्युका उल्लेख है । उसके गुरु शुभचन्द्र थे, और लेखमें उसकी उदारता तथा जिनभक्तिकी प्रशंसा की गयी ।]

[E C, VII, Shikarpur tl., No 232,]

४४३

—विना काल-निर्देशका—तिरुमलै—संस्कृत और तामिल ।

१ स्वस्ति श्री [॥] चेर-वंशत्तु अतिगैमान् (इ] पळिनि शेय्द धर्मं-
२ यत्त [र्] युं यक्षियारैयुमेळुन्द [रु] ळुवित्तु एरिमणियुमि-
३ दुक्के उप्पेरि-क्का [लु] ळुण्डु कुडुत्त् [ा] न् ॥ श्रीमत्केरलभूभृ-
४ ता यवनिकानाम्ना सु-धर्मात्मना तुण्डीराह्वयमण्डलार्हृसु-
५ गिरौ यक्षेश्वरौ कल्पितौ [।] पश्चात्तत्कुलभूषणाधिक-
६ नृप श्रीराजराजात्मज व्यामुक्तश्रवणोज्ज्वलेन तकटानाथेन जीर्णो-
७ च्छ्रितौ ॥ वञ्जियर् कुलपति योणिनि वगुत्तवियक्करियक्कियरो-
८ डेळ्ळियवळित्तु तिरुत्तियि वेणुगुणविरै तिरुमलैवैत्तान् अ,
९ ळितन् वळि वरुम् वन् वळि मुदलि कलि अतिकनवकन् नृळ् विञ्चैयर्
१० स्थल पुनै तकमैयर् कावलन् विडुकादळगिय प्पेरुमाळेय् [॥]

दूसरा शिलालेख

[यह शिलालेख पूर्व शिलालेखका संस्कृतमात्र श्लोक है । मूल लेखमें यही श्लोक छोटी-छोटी १५ पंक्तियोंमें दिया हुआ है । हम यहाँ इसे ४ पंक्तियोंमें ही देते हैं ।]

श्रीमत्केरलभूभृता यवनिका-नाम्ना सुधर्म्मात्मना
तुण्डीराख्य-मण्डलार्हसुगिरौ यक्षेश्वरौ कल्पितौ [।।]
पश्चात्तत्कुलभूषणाधिकनृपश्रीराजराजात्मज
व्यामुक्तश्रवणोज्ज्वलेन तकटानाथेन जीर्णोच्छ्रितौ [।]

[यह लेख बहुत घिसा हुआ है। इसमें एक तामिल गद्यका प्रघट्टक (Passage), शार्दूल छन्दमें एक संस्कृत श्लोक, और दूसरा एक और तामिल पद्यका प्रघट्टक है। इसमें व्यामुक्त-श्रवणोज्ज्वलके या (तामिलमें) 'विडु-कादरगिय-पेरुमाळ्', उर्फ चेर-वंशका अतिगैमान्के दानोंका उल्लेख है। इस युवराजकी राजधानीका नाम 'तकटा' मालूम देता है। वह किसी राजराजका पुत्र था और केरलके राजा किसी यवनिका, या (तामिलमें) वञ्जिके राजा एरिणि, की सन्तान। राजाने यवनिकाके द्वारा कल्पित (स्थापित) यक्ष और यक्षिणीकी प्रतिमाओंका जीर्णोद्धार कराया उनको तिरुमलै पर्वतपर प्रतिष्ठापित किया, एक घण्टा दिया और एक नाली बनवायी। लेखमें तिरुमलै पर्वतको 'अर्हत्सुगिरि (अर्हत्का उत्तम पर्वत)' कहा गया है; इसीको तामिलमें 'एणगुण-विरै तिरुमलै (अर्हत्का पवित्र पर्वत)' कहा है। संस्कृतके श्लोकके अनुसार यह पर्वत 'तुण्डीर-मण्डल'मे था; यह प्रसिद्ध 'तोण्डै-मण्डलम्'का संस्कृतीय रूप है।

[South India ins., I, no 75 and 76
(p. 106-107), t. and tr.]

४३५

अल्लूर;—संस्कृत और कन्नड़।

बिना कालनिर्देशका [ई० १२०० (फ्लीट)]

१ ओं [।।] नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तंभाय शंभवे ॥

श्रीमद्-गङ्गा-तरङ्गो-

२ च्छलित-जल-कण-श्रेणि-पुःपाळि-शोभा-धामम् चञ्चजटा-पल्लवममृतकरोदयत्फलम् बाहु-शाखा-रामं गौरी-लता-

३ लिङ्गितममरनुत शंभुकल्पद्रुवाद रामंगोगर्त्थियिं वाञ्छितफळचयमं सन्ततो-त्साहदिन्दम् ॥ श्रीकण्ठं रामदेवं गनुपम-

४ महिमंगीगे सम्पचनेन्दुम् (णना) नाकौकानीकमौळि-प्रकरमणिगणश्रेणिशोणांशु-जाळ-व्याकीर्ण्णाङ्घ्रि-द्वयालंकृतनमरवरं शीतशैलेन्द्र-

५ कन्यालोकाशु-श्री-निवासं सकलगणवृतं वीर-सोमेशनीशम् ॥ चलदुग्रग्राहव-क्त्रच्युततिमिनिकरातुच्छपुच्छाग्रघाता-कुलितां-

६ भ -कुम्भि-यूथ-प्रकर-सलल-फूत्कार-हस्ताभ्र-माला-मिलितं सुत्तुर्प्पुदुद्यन्मणिगण-किरणस्फारमुक्तांशु वेळाचलमाळं

७ भू-रमा-मण्डन-विपुल-कटीदेश-मुद्रं समुद्रम् ॥ व ॥ अन्तनेकजलचरनिवासमुं समुत्तुंगलहरीनिवासमुमेनिसि सोगयिसुव

८ लवणसमुद्रदिं परिवृतवाद जम्बूद्वीपदि तेङ्कलु नील-निषध-हिमवन्त-पर्व्वतङ्गळोळवक्षि ॥ वृ ॥ एसेगुं पूर्व्वापरांभोनिधि-मि [ति]-

९ वितताचायामदिं सिद्ध-कन्या-विसरानंगोरुकेळी-श्रम-शम-महिमा-कन्दरं स्वर्धुनी-वा -प्रसरोपक्षुण्ण-नाना-[नग-नि]-

१० कर-गलद्गण्डशैलालिमाला-विसरं प्रस्फार-शीतद्युति-रुचि-निचय-भ्राजितं शीत-शैलम् ॥ व ॥ आ हिमगिरीन्द्रद दक्षिणपार्श्ववर्त्ति-

११ यत्तिप्प भारतवर्षदोळु कुन्तल-देशवेम्बुदधिकशोभेवेत्तेसेवुदक्षि ॥ क ॥ सोगयिपुदल्लन्देयेम्बुद नगरं चेलुवेसेदु नाडेयम-

१२ रावतिगं मिगिलेनिसि विबुधजनदिन्दगणितधनधान्य-जल-समृद्धियिनेन्दुम् ॥मत्ता॥ प्रकटितकमरावतियोळु सुकेशियुं मञ्जुघोषेयुं तामिर्व्वं स-

१३ कलवधूततियेल्ल सुकेशियमम्ञ्जु-घोषेयर्त्तपुरदोळ् ॥ वृ ॥ अदु नानाविध-गन्धशालि-वनदिं सर्व्वर्त्तु कोद्यान-नन्दनदिं पूर्ण्ण-तटाक-कूप-

१४ सरसी-सन्दोहदिम् सारसोन्मद-भृङ्गि - पिक-कोक-केकि-शुक-सघानीक-शाकुन्त-नाददिनेत्तम् गणिका-विनोद-कृत-वीणा-नाददिदोप्पुगुम् ॥ व ॥ अन्तपरि-मित-के-

१५ दार-भूमिगुमपारजलाश्रयाभिराममुं बहुजनाकीर्ण्णमुमनेय-गणिका-निवासमुमग-णितवणिग्जनाश्रयमुमेनिसि शोभानिवासमागे ॥

१६ वृ ॥ अवतरिसिद्दंनल्लि रजताचलदि गिरिजा-समेतमुत्सवदोळे सोमनाथनखिला मरमौलिविनद्धरत्नसंभवकिरणप्रभापटलपुञ्जपरागपद्माञ्जनत्थियिन्द-

१७ वनत-भाक्तिकाभिमतसिद्धिफलोदयकल्पभूरुहम् ॥क॥ आ सोमनाथपुर-संवासि-तरोळु ब्रह्मपुरिगळोळ् विप्ररोळा व्यास-शुक-वामदेव-पराशर-कपि-लादि-सदृशनो-

१८ र्व्वन्नेगळद्म् ॥क॥ श्रीवत्स-गोत्रनुर्व्वीदेवनुतं निखिलवेदवेदाङ्गविदं पावन-चरित्रगुणसद्भावं पुरुषोत्तम द्विजोत्तमनेनिपम् ॥क॥ आ विप्रन सति सीता-देविगवा [स] त्य-

१९ तपन-सतिग गुण-सद्भावदे पद्माम्बिके सले पावन-सुचरित्रे पतिहित-व्रतेये-निपळ् ॥ आ दम्पतिगळ् पलकालवनपत्यरागिद्दोंन्दु देवस नापुत्रस्य लोकोस्ति येम्ब वेदवाक्यमम् ति-

२० [ळिदु] ॥क॥ पुत्रात्थवागि सत्यपवित्राचरणं नेगळदपुरुषोत्तमनापत्राणनी-शनेन्दु कलत्रान्वितनागि शम्भुवं पूजिसिदन् ॥व॥ अम्नेगमित्त दिविज-दनुज-वृन्द-वन्दित-पादारविन्द-

२१ [नप्प] महेश्वरं कैलास-पर्व्वतद रम्यभूमियोळु केशव-वासवाब्जभवरोलगि-सलसंख्यातगणपरिवृतनुमासहित वोड्डोलगदोळु सुखसकथा-

२२ विनोददिन्दमिरे नारदनेम्ब गणेश्वरनिन्तेन्द ॥वृ॥ ओहिल दास चेन्न-सिरियाळ हलायुध बाणनुद्भटदेंहदोळोन्दि बन्द मलयेश्वर केशवराजरा-दिया गैहि-

२३ क-सौख्यमं विबुदसंख्यगणं निजवाद भक्ति-मद्गेहदोळिल्लिरलु समयमुत्करवादुदु (दु) जैन-बौद्धरोळळ ॥ एम्बुदुं महेश्वरं दर-हसित-वदनारविं-

२४ दनागि वीरभद्रनं नीं मनुष्य-लोकदोळु निन्नंशदोळोर्व्वनं पुट्टिसि पर-समयगळं नियामिसेम्बुदुं वीरभद्रनुं पुरुषो-

२५ त्तम-भट्टर्गे स्वप्नदोळ्वापस-रूपदिं बन्दु पुत्रं पर-समय-नियामकं निमगे पुट्टुगुमेन्दु मत्तमिन्तेन्दं ॥ श्लोक ॥ जैनमार्गेषु ये था-

२६ ता बहवो दक्षिणापथे ते। दूषिता भवन्तु सर्व्वे रामेण तत्र सूनुना ॥ व ॥ एन्दु व (प) रम-प्रसादं-माडि पोपुदुं पुरुषोत्तम-भट्टरु

२७ कि (कृ) तार्त्थरागि सन्तं-बट्टु मगनं पडेदु जातकर्मादि-क्रियेगळं माडि देवतोद्देशदिं रामनेन्दु पेसरनिट्टरातनु तन्न दिव्य-जन्मानुरूपमा-

२८ गे शिव-योग-युक्तनागि निस्पृह त्रि (वृ) त्तियिं चरियिसुत्तुम् ॥ कन्द ॥ एकाग्र-भक्ति-योगदिनेकाक्रियेनल्के सन्दु शिवनं पिरिदप्पेकान्तदोळाराधि-

२९ सियेकान्तद-रामनेम्ब पेसर पडदम् ॥ वृ ॥ सतत सन्दु शिवागमोक्त-विविध क्षेत्रङ्गळोळु शाम्भवायतनानेक-नदी-नद-प्रकरदोळु गौरि (री) वराङ्ध्रिद्व[1]

३० याश्रित-वाक्कायमनोनुगं चरियिसुत्तुं बन्दु कण्ड सुरार्च्चितन दक्षिण-सोमनाथ-ननघौघ-त्रासिदं प्रीतियिम् ॥ व ॥ अन्तु बन्दनवर-

३१ त-विनमदमर-नर-मौळि-मणि-किरण - मञ्जरी - रञ्जिताङ्घ्रियुग्मनप्प हुलिगेरेय सोमनाथननाराधि-सुत्तमिप्पुदुमा परमेश्वरं प्रत्यक्षवागि ॥

३२ अत्र श्लोकद्वयम् ॥ अब्बलूरु-वर ग्रामं गत्वा राम ममाज्ञया [।] तत्र वास कुरु स्वस्थं यज मा भक्ति-योगत ॥ जैनैः सह विवादं च शङ्कां हित्वा कु-

३३ रुष्व य । स्वशिरोपि पणं कि (कृ) त्वा पुत्र त्वं विजयी भव ॥ एन्दु सोम-

---

१ अङ्घ्रिद्वय ।

नाथ-देवर्वेलसिदडेकान्तद-रामय्यनब्बळूर् ब्रह्मेश्वर-स्थानदोळु निस्पृहवृत्तियिन्द-
मिरे ॥ क । (॥)

३४ यु (ड) लिदळ्ळि-यन्दु जैनपंलरन्ता सङ्क-गौण्ड-सहित पिरिदुं चलदि
कैवारिसिदत्तोंलगदे जिन देवनेन्दु शिव-सधियोळु ॥ व ॥ आदं केळूदे-
कान्तद-रामय्य-

३५ नति-क्रुद्धनागि शिव-सन्निधियोळन्य-देवता-स्तवनं माडलागदेन्ददं माणदे
नुडियुत्तिरलिन्तेन्दम् ॥ वृ ॥ जगमं माडुवनावनावनावनदना-

३६ पत्का [ल] दोळ्कावनि मिगे कोपं तनगागे सहरिसलावं दक्षणा शम्भु सर्व्वं-
गनिदंन्ते गत-प्रभाव वैभाव ससारदोळु श्रिद्दु दंदुगदोळु बद्दुं तपक्के साद्दुं

३७ सुखमं पोद्दिप्पंनु देवने ॥ क ॥ हरनन्तिरीवने निम्मरुह मुं-कोट्टिटावुदावुदु
मुन्न हरनोळ् पडदरनेकर्व्वंरम वाण दिनिशाळ-भक्त-गणङ्गळु ॥ क ॥ एने जै-

३८ नरेङ्ग नीं मुम्निन हिवरं हेळलेके निम्नय शि (शि) रम बनमरियलरिदु
फोट्टातनोळि पडे नोने भक्तनातने देवम् ॥ क ॥ एनलेकान्तद-रामं
मनसिब-रिपुगित्त तलेय

३९ नाम् पडेदडे नीवेंनगीव पणमदेनेने मुनिदेन्दर्जिनन किन्तु शिवन निलिपेवु
॥ क ॥ एने कुडुवुदोलेयं नीवेनगेन्दित्तोले गोण्डु शिरमं ता भोङ्कनवरिदु
कुडुव पददो-

४० ळु शिवनं सान्निध्यमाडि रामं नुडिगुं ॥ वृ ॥ उडुगदे शंभु नीने शरणेम्न-
दद मनमन्यवा (भा) वदोळोडदंडमी कि (कृ) पाणमुखदिं तले पोगदे
निल्कदल्लदि-

४१ दंडे शिव निम्न मुन्नडिगुवळुगेनुतं फलि रामनादुदुं केय्गिडदरिंदिहळारयि-
सिदं शिरमं शिवनङ्घ्रि-युग्मदोळु ॥ वृ ॥ अरे-गायु-गोण्डने किन्तु नोडिदने
कूप्पंङ्ग-

४२ ळुकि मेपि (मेयू) गाय्दने सेरगं पादंने बाळ्गे भक्तरेनुतं बल्लाळ रामं

स्व-कन्धरमं चक्केने डुल्लं कट्टनरिवन्तक्केशटिन्दागळन्तरिदीशाङ्ग्रियोळि [र्कि शंकर-] गणक्कानन्द-

४३ व माडिदम् ॥ क ॥ अरिद तलेयेळु-देवसं बरेगं मेरदिं बळिक्कवित्तं हरना-दरटिं तले कलेयिल्लदे तिरवाडुदु लोकवळि (रि) ये रामं पडेदं ॥ क ॥ वेर-

४४ गागि जैनरेल्लं मरिगि जिन-प्रळे (ळ) यवेम्बुदं माडदिरिम्नेडेरगि काळ्वि-डिये माणदे बरसिडिळन्तेरागि जिनन तलेयं मुग्दिम् ॥ वृ ॥ वद्दिगोण्डोर्व्वने सोक्कि वाळे-

४५ वनमं काडाने पोक्कन्तिरलु कडगलु कापीन वीररं तुरगमं सामन्तरं तूळ्दु मार्प्पडेगळु जैनर मारि वन्दुदेनुतुं वेड्नोट्टु पोगलु जिन कडेवंनं बडि-दल्ल कैको-

४६ ळिसिदं श्री-वीर-सोमेशनं ॥ वृ ॥ अदनेल्लं नेरे पोगि बिज्जण-महीपाळङ्गे जैनक्कंळक्किवटिं पेल्दु विरोधवागे पिरिदुं दूरुन्तिरलु कोप-दुर्म्मदना बिज्जण भूभुवं मुनिसिनिम्

४७ रामय्यनं कण्डु नीनिदनन्यायमनेके माडिदेयेनल्कोट्टोलेयं तोरिदम् ॥ क ॥ अवरित्त योलेयिदे नीनवधरिसुवुदिक्कु निम्न मण्डारदोळिम्-

४८ नवरोड्डुविरलियिन्नोड्डुवुदार्प्पडे निम्न मुन्दे जिनरं पलरम् ॥ [व] ॥ अन्त-प्पडी तलेयनरिदवर कैयोळोड्डुवेनवरद मुट्टिम्त्रळिकवा पडुवेनेनगाने-सेज्जेय-वस-

४९ दि मुख्यवागियेन्नुरुव (एन्नु-नुरु-) वसदिय जिनरं पलरनोड्डुवुदेने बिज्जण रायं नामी कौतुकमं नोडुवेवेन्दु वसदिगळ पण्डितरुमं जैनरुमं करदु नीमप्पडे

५० वसदिगळं पणं-माडि ओलेयं कुडिवेन्ददवरावी-मुन्नोडद वसदियं दूरल् वन्देवल्लदिनोड्डि जिन-प्रलयं-माटलु वन्दवरल्लवेने बिज्जण-रायं नक्कु नीविम्नुसि-

५१ रदे पोगि सुखदिनिंरिवेन्दवरं कळिपि रामय्यंगळिगेळ्तवरिये जयपत्रम कोट्टम् ॥ वृ ॥ अरि-राय-क्षितिभृं-नगारियरिरायाम्भोधि-कुम्भोद्भ-

५२ वं अरि-रायेन्धन-तीव्र-वह्नि अरि-रायानङ्ग-मावेक्षण अरि-रायोग्र-भुजङ्ग-भूरि गरुडं श्री-बिज्जणं वैरि-राज-रमाकर्षण-दोलितासि-सुद्दढं कीर्त्यङ्गनावल्लभं ॥

५३ चोळननिक्कि लाळननवक्करिसि स्थिति-हीन-माडि नेपाळननन्ध्रनं तुळिदु गुर्ज्जरनं सेरेयिट्टु चेदि-भूपाळन मैमेयं मुरिदु वङ्गन वीसिसि कादि कोन्दु वं-

५४ गाल-कलिंग-मागध-पटस्वर-माळव-भूमिपाळरं पालिसिदं धरा-वळयमं कलि बिज्जणराय-भूभुजम् ॥ क ॥ कोडदोळगे पुट्टि कडलं कुडिद घटयोनि पुट्टि कलचूर्य्यं-

५५ रोळोगडिसदे च (चा) लुक्यरन्वय-गडलं कुडिदुक्कुं सजनं बिज्जणनोळु ॥ व ॥ स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरं । कालञ्जर-पुरवराधीश्वरं [।] सुवर्ण-वृष-

५६ भ-ध्वजम् । डमरुग-तूर्य्यं-निर्ग्घोषणम् । कलचूर्य्य-कुल-कमल-मार्त्तण्डम् । कदन-प्रचण्डम् । मोने-मुट्टे-गण्डम् । सुभटरादित्यम् । कलिगळङ्कुशम् । गज-सा-

५७ मन्त-शरणागत-वज्र-पञ्जरम् । प्रताप-लङ्केश्वरम् । परनारी-सहोद,म् । स (श) निवार-सिद्धि । गिरि-दुर्गा-मल्लम् । चलदङ्क-रामम् । निस्स (श्श) ङ्क-मल्ल-नित्यखिल-नामादि-स-

५८ मस्त-प्रशस्ति-सहितम् । श्रीमतु बिज्जणदेवं रामय्यङ्गळु माडिद परम-साहसकम् निरतिशयवप्प मा (म) हेश्वर-भक्तिगं मेच्चि वीर-सोमनाथ-देवर देगुल-

५९ द माट-कूठ-प्राकार[१]-खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं देवरंगभोग-नैवेद्यक्कं बन-वसे-पन्निर्च्छासिरद कम्पणं सत्तलिगेय् एप्पत्तर मन्नेय चट्टरसनुमा (मन्) कम्पणदग्रायित-प्र-

१ यहाँ भी सदाकी भाँति 'प्रासाद' पाठ होगा।

६० भु-गौण्डुगळुमं मुण्डिट्टु श्रीमदु-बिज्जनदेवं सत्तलिगेयेप्पत्तरोळगे मळ्-गुन्दर्दि तेङ्कण गोगावेयेम्ब ग्राममं प्रसिद्ध-सीमा-सहितं त्रिभोगमुमं

६१. श्रीमदेकान्तद-रामय्यङ्गळ काल कर्च्चि धारापूर्व्वकं माडि कोट्टु प्रति-पालिसिदम् ॥ ओम् [॥] श्री-नुत-कीर्ति-विक्रमदोळेन्दिद सोम-कुलैकभूषणं तानेनिपी ।

६२. चलुक्य-नृपरन्वयदोळु वसुधाधिनाथराख्यान-पराक्रमकेळिये धात्रिपरा-हतेयागे तैलपं ताने चलुक्य-धात्रि-कुलशैलनेनल्लु मुददिन्दे ताळ्दिदं ॥

६३. अन्ता तैलपदेवङ्गे सत्याश्रयदेवनेम्ब मगं पुट्टिदं तत्तन विक्रमदेवं तदनुजं दशवर्म्मदेवनातन मगं जयसिंगराय-नातन मगनाहव-

६४. मल्लनातन मगं त्रिभुवनमल्ल-पेर्म्माडिरायनातन मगं भूलोकमल्ल-सोमेश्वरदेवनातन मगं प्रतापचक्रवर्ति जगदेकमल्लनातन तम्मं त्रैलो-

६५. क्यमल्ल-नूर्म्मडि-तैलपनातन मगं त्रिभुवनमल्ल-सोमेश्वरदेवनातन पराक्रम-प्रभावमेन्तेन्दडे ॥ वृ ॥ कोडुळ्ळुग्र-मदेभवोन्देरडेनल्केम्बत्तुमोङ्घा-गिरल्कोडि-

६६. ट्टानदे तल्तु कादि गेल्दं (लदं) कोडिळ्ळदोन्दानेयिं नाडं बीडनिमङ्गळं तुरगमं सोमेश्वरं बिल्लमं नोडल्का कळचू(चु)र्य्य-वंशमनदं निर्मूळवं माडिदं ॥ वृ ॥ द (ध)—

६७. रे निस्सापत्न्यवागलु सिरि निजवस (श) दिं सन्दुदारक्के तानागरवागल्लु कीर्त्ति दिग्पाळक-निकर-मुख-आदेशवागल्लु जया-सौन्दरि निच्चन्तोळ बाळं सेरे-विडिदिरे साम्राज्यमं ताळ्दिर्द्द दु-

६८. र्द्धर-शौर्य्यं वीर-सोमेश्वरनहित-वधू-नेत्र-नीरेजसोमं ॥ अन्वतमवेनिप कळचुर्य्य-आन्वं मसुळल्के तम्न जेतदे धरेगनुवन्धं तम्नोळे सले सम्मं-

६९. धिसे **चालुक्य-राय-सोमं**, नेगल्दम् ॥ व ॥ अन्ता **त्रिभुवनमल्ल-सोमेश्वरदेवं** सकल-चमूनाथ-शिरोमणियुं चाळुक्य-राज्य-प्रतिष्ठापक-नप्प कु-

७०. मार-**बम्मयनुं** तानुं **सेलेयहळ्ळिय-कोप्पदोळु** सुखसंकथा-विनोद-दिनिर्द्दोन्दु देवसं धर्म्म-गोष्टि (ष्ठि) योलिर्दुं पुरातन-नूतनरप्प शिवभक्तर गु-

७१. ण-स्तवनं-माडुत्तमिर्दं **कान्तद-रामय्यङ्गळब्बलूर**-लिद्दल्लि जैनरेल्लं नेरदु बन्दु महाविवादम्माडि नीं तलेयनरिदु-कोण्डु शिवन कैयोळ्पड देयप्पडे जिन-

७२. ननोडेदु शिवनं प्रतिष्ठे-माडुवेन्दोडुमनोड्डियोलेयं कोट्टडेवरु कोट्टोलेयं कोण्डु तन्न तलेयनरिदु-कोण्डु शिवङ्गे पूजे माडि बळिका तळेयं येळु-

७३. देवसके मुन्निनन्ते तलेय[1] पो (?)ले-वीळवन्तु पडेदु **बिज्जण-देवन** कैय्यलु जय-पत्रवं पूजे-सहितं कोण्डुदुमं जिननोडेदु बसदियनळिदु बिडु-

७४. टु नेलनं खडिसि[2] वीर-सोमनाथ-देवरं प्रतिष्ठेमाडि शिवागमोक्तवागे पर्व्वत-प्रमाणद देगुलमं त्रिकूटवागे माडिसिदरेम्बुदं केळ्दु **त्रिभुवन-मल्ल-सो-**

७५. **मेश्वरदेवं** विस्मयं-बि (व) ट्टु नोडुवर्त्थियिं बिन्नवत्तलेय बरयिसि बरिसियवरनिडिर्-गोण्डु तन्नं[3] मनेगोड-गोण्डु पोगि पिरिदुं सत्कारदिं पूजि-

७६. सि श्रीमद्-वीर-सोमनाथ-देवर देगुलद माट-कूटप्राकार-खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं देवर अङ्गभोग रङ्गभोग-नैवेद्यक्कं चैत्र-

---

१ इस शब्दकी अनावश्यक पुनरावृत्ति मालूम पड़ती है।

२ शायद 'मिडिसि।'

३ 'तन्न' या 'तन्नाय' पढ़ो।

७७. पवित्र-वसन्तोत्सवादि-पर्व्वंगळिगवन्नदान-विद्यादानकं **बनवसे**-पन्निच्छांसिरट कम्पणम् **नागरखण्ड**-वेप्पत्तरोळगण अल्लूरना देवर्गा वूराग-

७८. लु-वेळ्कुवेन्दु परमभक्तियिन्दा कम्पणद मन्नेय **मल्लिदेवन** मुन्दिट्टा वूर मेलाळिके-मन्नेय-सुङ्क दण्डदोष-निधिनिक्षेप-सहितवागि **एकान्त**-

७९. द-**रामय्यङ्ग्ळ** कालं कर्च्चि पूर्व्वं-प्रसिद्ध-सीमा-सहितं त्रिभोग-सहितं धारा-पूर्व्वंकम्माडि परमेश्वर-दत्तियागे (गि) ताम्र (ताम्र)-शासनम कोट्टानेयनेळि (रि) सि मे-

८०. रयिसि परम-भक्तियिं प्रतिपाळिसिदम् [॥] ॐ [॥] श्रीकण्ठ-पदाम्बुजमन-नाकुल-चित्तदोळे पूबिपं शिव-समय-प्राकारनेळ (नि) सि सले नेगळ्-**देकान्तद-राम**-नीश-

८१. भक्ति-प्रेमम् ॥ ॐ [॥] श्रियं दीर्घायुवं कीर्त्तियननुदिनवुं माळ्के गीर्व्वाण-वृन्द-ज्यायं श्री-वीर-सोमं विध्रि (धृ) त-हिमकरं **कामदेवङ्गु**दार-श्री-युक्तं—

८२. गद्रिजा-सम्मित-सित-तरळाजोल- विस्तार- लीला-नेय् (त्र) आळेकोद्ध-(?) त-श्री-ललित-रति-काळा-लास्य-शैलूष-वेषं ॥ स्वस्ति समधिगतपञ्च-महाशब्द-महामं-

८३. डलेश्वरं **वनवासि**-पुरवराधीश्वरं **जयन्ती**-मधुकेश्वर-देव-लब्ध-वर-प्रसादं विद्वज्जनाह्लादकं **मयूरवर्म्मकुल**भूषणं **कदम्ब**-कण्ठीरवं कदन-प्रचण्डं साह-

८४. सोत्तुङ्ग कलिगळङ्कुशं सत्य-राधेयं शरणागत-वज्र-पञ्जरं याचक-कामधेनुवित्य-खिळ-नामावळि-सहितनप्प श्रीमन्महामण्डलेश्वरं **कामदेवरस**-

८५. र्पानुङ्गल्लयनूरं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनदिनाळुचमिर्द्द-**ल्लूर** वीर-सोमनाथ-देवरं वन्दु कण्डु **रामय्यङ्गळु** शिवागवा (म)-विधा-

८६. नदिं माडिसिद पर्व्वतोपमानमप्प देगुलमं कण्डवरु माडिस साहसमं स-विस्त केळ्दु मेचि परम-प्रीतियिन्दोड-गोण्डु पोगि

८७. पानुङ्गल नेलेवीडिनोळ् प्रधानरुं तानुं मदुकेय-मण्डलिक-सहितं सुख-
सङ्कथा-विनोददिं कुळ्ळिर्द्दु परम-भक्तियिं वीर-सोमनाथ—

८८. देवर्गे पानुङ्गल्-अय्यनूररोळगण कम्पणं होसनोड् प्पट्टरोळगे मुण्ड-
गोड समीपद जोगेसरदिं बडगण मल्लवळ्ळियेम्ब ग्राममं प्रसिद्ध-सी-

८९. मा-सहितवागि त्रिभोगाभ्यन्तरं नमस्यमाडिया देवर देगुलद खण्ड-स्फुटित-
जीर्णोद्धारकं देव-रङ्गभोग-रङ्गभोग-नैवेद्य [क्रम] चैत्र-

९०. पवित्र-वसन्तोत्सवादि-पर्व्वंगळ्गमन्नदानक्कवेन्दु रामय्यङ्गळ कालं कर्च्चि
धारा-पूर्व्वकं-माडि-परम-भक्तियिं कोट्टु धर्म्ममं प्रतिपालिसिदम् । (॥)
स्वस्त्यस्तु ओम् ॥

९१. इन्ती धर्म्मङ्गळं प्रतिपाळिसिदवरु श्री-वारणासि प्रयागे कुरुक्षेत्र अर्घ्यतीर्थं
श्रीपर्व्वतादि-पुण्य-क्षेत्रदल्लि सायिर कविलेगळ कोट्टं

९२. कोळगुवं होन्नोळ्कट्टिसि चतुर्व्वेद-पारगरप्प सु-ब्राह्मणर्गे सूर्य्यग्रहण-सोमग्रहण-
व्यतीपात-संक्रमणादि-पुण्य-कालदोळ्विधि-युक्तवागे कोट्ट

९३. प (फ) लवं पडेवरु ई धर्म्मंवनळिदवरा गङ्गे वारणासि कुरुक्षेत्र-प्रयागादि-
पुण्य-क्षेत्रङ्गळोळा कविलेगळुवं ब्राह्मणरुवं कोन्द पापमं पडेवरीयर्त्थं सं-

९४. देह विल्लेम्बुदं मुक्षं मनु-वाक्यङ्गळु (ळं) पेळ्गुं ॥
श्लोक ॥ बहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभि सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥
गण्यन्ते पांसवो

९५. भूमेर्गण्यन्ते वृष्टिबिन्दवः ।
न गण्यते विधात्रापि धर्म्म-संरक्षणे फलम् ॥
स्वदत्तां परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टि-वर्षं-सहस्राणि विष्ठायां जा-

९६. थते कृमिः ॥
कर्म्मणा मनसा वाचा य· समर्त्थोप्युपेक्षते ।
सम्यस्तथैव चाण्डालः सर्व्व-धर्म्म-बहिष्कृतः ॥
कुलानि तारयेत् कर्त्ता सप्त सप्त च सप्त च ॥
अघोवपा—

९७ तयेद्धर्त्ता सप्त सप्त च सप्त च ॥
श्लोक ॥ अपि गङ्गादितीर्थेषु हन्तुगामथवा द्विजम् (।)
निष्कृति ( ) स्यान्न देवस्व-ब्रह्मस्व-हरणे, नृणाम् ॥
सामान्योयं धर्म्म-सेतु—

९८. नृपाणाम्
काले-काले पालनीयो भवद्भिः (।)
सर्व्वानेतान् भाविन पार्त्थिवेन्द्रान्
भूयो भूयो याचते रामचन्द्रः ॥
स्वस्त्यस्तु मंगलं च । श्रीश्च ॥ ओम्

९९ ओम् [॥] हरनोळ्तवनिबियन्ताम् दरबुरविल्लेनिसि पडेदु देगुलवं पुरहरन कैळासदन्तिरे वीरर्चिसिदं शम्भु-भक्ति-धामं **राममम्** ॥ वृ ॥ देगुलकेन्दु भक्त-

१००. बनवादरदिन्दिदिरेद्दं कोट्टड (दं) हागवनादड कळदुकोळ्ळदे बेडदे नाडे द्दे (दे) न्यदिं पोगि नृपाळरं शिवननुग्रहवत्तथवागे माडिदं देगुल [व] म् हराद्रिगेणे-

१०१. यागिरे **रामन्निदेम्** कि (कृ) तार्त्थनो ॥ क ॥ **केशवराज**चमूपं शासनवं पेळ्दनन्तदं तिर्दि निरायासने वरदनीशन दासं शिव-चरणकमल-शरणं सरणम् ॥ ॐ [॥]

१०२. स्वस्ति श्रीमतु-हर-चरणी-प्रसृत-**मुक्कण्ण-कादम्ब**- [वंश] रं **बनवासि**-पुरवराधीश्वररं श्री-मदु (धु) कनाथदेवर दिव्य-श्री-पाद-

१०३. पद्माराधकरं मल्लिदेवरायरं नागरखण्डेय··· ··· ··· ··· ···
रिगे-नाडुमं··· ···

१०४. ··· ··· ··· ··· ··कोट्टरु ॥

[इस प्रकाशित अभिलेखकी कहानीका सन्क्षेप इस प्रकार है:—

कुन्तल देशके आलन्दे (या आलन्द) नामक नगरका निवासी श्रीवत्स गोत्रका पुरुषोत्तमभट्ट नामका एक शैव ब्राह्मण था। उसके राम नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। कालान्तरमें, शिवकी अधिक भक्ति करनेके कारण, इसका नाम 'एकान्तद-रामय्य' पड़ गया। उसने बहुत-से शैव तीर्थस्थानोंकी यात्रा की। और अन्तमें वह हुळिगेरे (लक्ष्मेश्वर) आया जहाँकि 'दक्षिणका सोमनाथ' इस नामसे प्रसिद्ध एक शैव मन्दिर था, इसके बाद अब्लूर जहाँ कि, जैनधर्मके एक मज़बूत गढ़ होनेके सिवाय, ब्रह्मेश्वरके मन्दिरमें एक महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली शैव केन्द्र भी था। अब्लूरमें वह जैनोंके साथ विवादमें फँस गया। जैनोंने वहाँ शङ्कगौण्ड नामके ग्रामणीके अधिनायकत्वमें उसकी भक्तिका अन्त कर दिया। कुछ शर्तें रक्खी गईं और यह एक ताड़-पत्र पर लिख दी गई। शर्त यह थी कि हारनेपर जैन लोग अपने जिन देवकी जगह शिवकी प्रतिमा स्थापित कर देंगे। एकान्तद-रामय्य शर्तमें विजयी हुआ। इस पर जैनोंने उपर्युक्त शर्तनामेकी शर्तोंका पालन करनेसे इन्कार कर दिया। तब जैनोंके रक्षक, घुड़सवार, सरदार, तथा उनके सैनिकोंके विरोधमें होते हुए भी, उस अकेलेने जिनको उठाकर (फेंककर) वेदीको ध्वस्त कर दिया, और, जैसाकि आगेके लेखसे प्रकट होता है, उसकी जगहपर पर्वत सरीखा एक 'वीर-सोमनाथ' नामसे शिवालय खड़ा कर दिया। इसपर जैन लोग बिज्जलके पास गये और उससे एकान्तद-रामय्यकी शिकायत की। राजाने एकान्तद-रामय्यको बुलवाया और उससे प्रश्न किया कि उसने जैनोंका यह भयकर नुकसान क्यों किया। इसपर एकान्तद-रामय्यने वही ताड़-पत्र वाला शर्तनामा पेश कर दिया, और बिज्जलसे उसे अपने खजानेमें जमा कर देनेको कहा तथा यह बात भी कही कि अगर जैन लोग अपने

८०० मन्दिरोंको जिनमें आनेसेज्जेयबसदि भी शामिल रहेगी, शर्तपर लगादें तो वह फिरसे वही चमत्कार[1] (feat) दिखलायेगा जिसे कि उसने अभी ही दिखलाया था। इस दृश्यको देखनेकी इच्छासे विज्जलने जैन मन्दिरोंके जितने विद्वान् थे उन सबको बुलाया और उसी शर्तनामेकी शर्तको दुहरानेके लिए अपने तमाम मन्दिरोंको शर्तपर रख देनेके लिये कहा। जैनोंने यह कहते हुए कि वे अपनी शिकायतकी क्षतिको मिटानेके लिये उसके पास आये हैं न कि उस क्षतिको और बढ़ानेके लिये, दूसरे बारकी इस परीक्षाको माननेसे इन्कार कर दिया। इसपर विज्जलने उनका उपहास किया और यह शिक्षा देते हुए कि इसके बाद तुम लोगोंको अपने पड़ोसियोंके साथ शान्तिसे रहना चाहिये, उन्हें बरखास्त कर दिया, और एकान्तद-रामय्यको खुली सभामें जयपत्र दिया। तथा, जिस अद्वितीय साहससे एकान्तद-रामय्यने अपनी शिवभक्ति प्रकट की थी उससे प्रसन्न होकर, उसने उसके पैर धोये और वीर-सोमनाथके मन्दिरको गोगाव नामका गाँव, जो बनवासी १२००० में सत्तलिगे-सत्तरके मळुगुण्डके दक्षिणमें है, दानमें दिया।

इसके बाद लेख कहता है कि जिस समय पश्चिमी चालुक्य राजा सोमेश्वर चतुर्थ और उनके सेनापति ब्रह्म शेलेयहळ्ळियकोप्पमें थे, एक ग्रामसभा की गई जिसमें पुराने और नये शैव-सन्तोंके गुणोंका वाचन किया गया था। जब एकान्तद-रामय्यका किस्सा उससे कहा गया तो सोमेश्वर चतुर्थने एक पत्र लिखकर एकान्तद-रामय्यको अपने पास अपने राजमहलमें आनेके लिये कहा। वहाँ उसने उसके पैर धोये और उसी मन्दिरको स्वयं अब्लूर ग्राम ही भेंट किया। यह अब्लूर-ग्राम नागरखण्ड-सत्तरमें है जो बनवासी बारह हजारमें है। और अन्तमें, महामण्डलेश्वर कामदेवने उस मन्दिरको जाकर देखा, सब कहानी सुनी,

---

१. यह चमत्कार और कुछ नहीं- सिर्फ कटे हुए सिरको जोड़ देना है। एकान्तद-रामय्यने अपना सिर काट दिया था और फिर शिवकी कृपासे उसे पुनः जोड़ दिया था।

एकान्तद-रामय्यको हान्गल बुलाया, और वहां उसके पैर धोये और मल्लवल्ली नामका गाँव मन्दिरको दानमें दिया। यह मल्लवल्ली गाँव पानुङ्गल-पाँच सौ में होसनाड्-सत्तरमें मुण्डगोडके पास जोगेसरके दक्षिणमें है।]

[EI, V, No. 25, E.]

४३६

अब्लूर—कन्नड।

[बिना काल निर्देशका]

१. श्री-ब्रह्मेश्वर-देवरल्लि **एकान्तद-रामय्य** वसदिय जिननोड्डुवागि तलेयनरिदु इडेद टावु ॥ संक-गावुण्ड वसदिय नोडेयलीयदे (दे) आळुं कुदुरेयु ·· ··

२. नोडिरलु **एकान्तद-रामय्य** कादि गेल्दु जिननोडेदु लि [ङ्गमं प्रतिष्ठे-माडिदम् ॥]

अनुवाद :—ब्रह्मेश्वर भगवान्‌के पवित्र मन्दिरमें, जब कि एक मन्दिरके 'जिन' शर्त (दाव) पर रख दिये गये थे, एकान्तद-रामय्यने अपना सिर काट डाला और इसको फिरसे प्राप्त कर लिया। जब सङ्कगावुण्डने उसे (एकान्तद-रामय्यको) मन्दिर या वेदीको ध्वस्त नहीं करने दिया और अपने आदमियों तथा घुड़सवारोंको (उस वेदीकी रक्षाके लिये)··· ··· ··· ··· एकान्तद-रामय्यने लड़ाई लड़ी और उसमें विजय प्राप्त की तथा 'जिन'को भग्न करके 'लिङ्ग' की प्रतिष्ठा की।

[EI, V, No. 25, F.]

४३७

कब्बेनहल्लि,—संस्कृत तथा कन्नड।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४१८

यन्दलिके:—संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका, पर संभवतः लगभग १२०० ई०]

[शान्तीश्वर बस्तिके रङ्गमण्डपके दक्षिण-पश्चिम खम्भे पर]

(पश्चिम-मुख) स्वस्ति श्रीमतु **अभयचन्द्र-सिद्धान्ति-देवरगळ्** शिष्यरु ···कन अदर **मुरारि-देव-दान-प्रतिपालक-वंशोद्भवरु चारुकीर्ति-पण्डित-देवरु हिरिय-महलिगेय पञ्च-वस्तिय** जीर्णोद्धारव माडिदरु। आ-स्थानक्के अरसिन्दलु नाडिन्दलु बिडिसिकोण्ड वृत्ति आ-**ताळगुप्पेय** बस्तिगे पूर्व्वं तोडगि सन्दु बहुदु। **बलेयगारु। बाळेयहळ्ळि। तगुडवत्तिगे** यी-मूरु-ऊरु सर्व्वमान्य अरसियकेरेय केळगे ताळगुप्पेय गऊडुगळु बिट्टदु ४ हाद। मुरवत्तूर गौडुगळु वीर गौण्डन केरेय केळगे बिट्टदु ४ हाद। बिदळ २ सासव हेरवडे १० येत्तु हदिनेण्टु कम्पण-दलु सलुऊदु। बत्तियकेरी सर्व्वमान्य। बलेयगारलि गुरुगळु बिट्ट भूमि अक्षिय मूलस्थानके ४ हाद। इच्चड १० मान्य येत्तु इच्चड सर्व्वमान्य समेय-समुच्चयद भोगवट्टिगेय पञ्च-वस्ति यी-धर्म्मक्के ·· ··· रुदरुखन हदिनेण्टु समेयवु कर्त्तरु ॥ श्री श्री

[स्वस्ति। मुरारि-देवके दानके प्रतिपालक वंशमें उत्पन्न, अभयचन्द्र-सिद्धान्ती देवके शिष्य चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवने हिरिय-महलिगेकी पञ्च-वस्तिको सुधारा। राजा और नाड्से जो दान पहले ताळगुप्पेकी बस्तिके लिये मिला था, अर्थात् बलेयगारु, बळेयहळ्ळि और तगडुवत्तिगे,—ये तीन गाँव, सब करोंसे मुक्त, उस मन्दिरके लिये भी लागू हो सकते हैं। (उक्त) कुछ भूमि भी दानमें दी थी।

इस गुणी कार्यके लिये १८ जातियाँ प्रबन्धक हैं।]

[EC, VII, Shikarpur, tl, No. 227.]

४३९

निट्टूर;—कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १२०० ई० का]

[निट्टूर (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर बस्तिकी उत्तरीय दीवालमें एक पाषाण पर]

श्री-मूल-संघ-देशिय-गण-पुस्तक-गच्छ-कोण्डकुन्दान्वयद श्री (मु) अभयचन्द्र-सिद्धान्तिक-चक्रवर्त्तिगळ प्रिय-शिष्यरागमाम्बुनिधिगळुं सकळ-गुणाकळितरुमप्प बाळचन्द्र-पण्डित-देवर प्रिय-गुड्डियर ॥

विनय-निधि माळियक्कं । अनुपम-गुणमन्ते बामि-सेट्टिगळं ताम् ।
जिन-भक्तियिन्दे पडेदळु । जिन-भक्तर्प्पडेव पडवुयोगळलळुम्बम् ॥
शीळान्विते चौडलेगं । माळवेय तनूज मल्लि-सेट्टिगे सुतेया- ।
व्याळ-राज-गमने पद्मले । बाळक-माळिक्य मल्ल-माळात्मजरुम् ॥
मुळिदु यमं माळवेयुमन् । उळिहदे सोसे चौडियक्कनं माडिपलु स्त्री- ।
कुळ-साहस-षड्-गुणदोन्द्- । अळव समाधियोळे मेरेदु मुडिपिदरलुते ॥

माळव्वेयुं चौडियक्कनुमेम्बिर्व्वर निषिधि ॥

[श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके अभयचन्द्र-सिद्धान्तिक-चक्रवर्त्तीके शिष्य बालचन्द्र-पण्डित-देवकी प्रिय गृहस्थ-शिष्या,—माळियक्के थी।

चौडले और माळवेके पुत्र मल्लि-सेट्टिकी पद्मले और मल्लम दो पुत्रियाँ उत्पन्न हुई थीं। जब यम (मृत्यु) ने क्रुद्ध होकर, मालवेको न बचाकर, उसकी पुत्रवधू चौडियक्कको भी मारा वह समाधिको प्राप्त हुई, और स्त्रियोचित भक्तिके ६ गुणोंको प्रदर्शित कर दिवंगत हुई। यह स्मारक (निषिधि) मालव्वे और चौडियक्क दोनोंका है।]

[E C, XII, Gubbi tl., No 5]

४४०

नित्तूरु;–कन्नड ।

[विना काल-निर्देशका, पर संभवतः १२०० ई० का ?]

[नित्तूरु (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर बस्तिकी उत्तरीय दीवालमें एक पाषाणके बायी ओर की तरफ]

माळब्बेय मग बामि-सेट्टिय मदवळिगे बूचब्बेय निषिधि ॥

[माळब्बेयके पुत्र बामि-सेट्टिकी पत्नी बूचब्बेकी निषिधि (स्मारक) यह है ।]

[E C, XII, Gubbi tl., No 6]

४४१

नित्तूरु;–कन्नड ।

[विना काल निर्देशका पर संभवतः १२०० ई० ? का]

[नित्तूरु (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर बस्तिको उत्तरोय दीवालमें एक पाषाणके दाहिनी ओर]

माळब्बेय मल्लिळ-सेट्टिय तन्दे गुणद बेडङ्ग मल्लि-सेट्टियुमातन प्रिय-पुत्र माळेय्यनुमेन्द् इर्व्वर निषिधि ॥

[मालब्बेके पिता मल्लिसेट्टि, और मल्लि-सेट्टिके प्रिय पुत्र माळय्य दोनोंकी स्मारक यह है ।]

[E.C., XII, Gubbi, tl., No. 7]

४४२

कडकोल;—कन्नड़।

वर्ष खर [=११वीं या १२वीं ई० (फ्लीट)।]

[१] श्रीमत्-खर-संवत्सरदन्दु
[२] कत्तेय-ऐचि सेट्टि [ट्] य म-
[४] ग चंद्यन निषिधिगेय क-
[५] ल् [लु] ठ ॥

अनुवाद—श्रीवाले खर संवत्सरमें,—(व्यापारी) कत्तेय-ऐचिसेट्टि के पुत्र चन्दयके निषिधिगे' का पाषाण।

[IA, XII, P. 101, No 3] t. and tr.

४४३

सिग्गाम्वे (जिला धारवाड़);—कन्नड़।

वर्ष व्यय [=११वीं या १२वीं शताब्दि ई० (फ्लीट)।]

[धारवाड़ जिलेमें बङ्कापुर तालुकाका तालुका स्टेशन सिग्गाम्वे है। यहाँके कलमेश्वर मन्दिरके सामनेके स्मारक पाषाण पर यह अभिलेख है।]

[१] स्वस्ति श्रीमद्व-व्यय-संवत्सरद मार्ग्ग-
[२] सि (शि) र ब ११ सु (शु)। देसी (शी) य-गणद बाळचं-
[३] द्रत्रैविद्यदेवर गु [ड्] ड सव (?) रसिंगि-से [ट्] टि
[४] यरु स्वर्ग्ग-प्राप्तनादनु ॥

अनुवाद स्वस्ति! देशीयगणके बाळचन्द्रत्रैविद्यदेवके गुड्ड (शिष्य या अनुयायी) (व्यापारी) (?) सवरसिङ्गिसेट्टिने, शोभनीक व्यय संवत्सर मार्गशिर (महीने) के कृष्ण पक्षकी एकादशी, शुक्रवारको स्वर्ग प्राप्त किया।

[IA, XII, P. 102, No, 5.] t. and tr.

४४४

एहोले—कन्नड़

[बिना कालनिर्देशका; १२वीं या १३वीं ई० शताब्दि (फ्लीट).]

[१] श्री-मूलसङ्घ-बलो (ला) त्कारगणद कुमुदन्दुगळ गुड्डु पेचि-सेट्टि

[२] यर मग येरम्बरगे-नाड सेट्टिगुत्त रामि-सेट्टियर निपीधि ॥

अनुवाद रामिसेट्टि जोकि एरम्बरगे[1] जिलेका सेट्टिगुत्त था—श्रीमूलसङ्घके बलो (ला) त्कारगणके कुमुदन्दु का गुड्डु (शिष्य) था; और पेचिसेट्टि (व्यापारी) का पुत्र था, उसकी यह निपीधि (निषद्या) है।

[इं ए०, १२, पृ० ९९]

४४५

गिरनार—संस्कृत भग्न ।

[बिना काल—निर्देशका]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका है

[Revised list and Rem. Bombay (ASI, XVI), p. 351-352, No 8, t. and tr.]

४४६

रायबाग;—संस्कृत ।

[शक ११२४ = १२०१ ई०]

[मूल लेखका अब पता नहीं है।]

इस शिलालेखका प्रारम्भ उस राजा कृष्णके वर्णनसे शुरू होता है, जिससे रट्टवंश यशस्वी हुआ था। तदनन्तर राजा सेनका वर्णन है, जो रट्ट राजाओंकी सूची में 'सेन'-नामधारी राजाओं में द्वितीय संख्याका सेन है। इसके बाद

1. यह नाम 'एरम्बिरगे' भी लिखा जा सकता है।

वंशावली (Genealogy) कार्त्तवीर्य चतुर्थ और मल्लिकार्जुन तककी दी हुई है। कार्त्तवीर्य चतुर्थका समकालीन एक राजा यादववंशी रेच[1] नामका था। इसके बाद लेख में कुछ दोनोंका उल्लेख आता है जो 'दुर्म्मति संवत्सर' शक ११२४ में किये गये थे। दान करने का दिन वैशाख शुदी पूर्णिमा, शुक्रवार 'व्यतीपात' का समय था। ये दान राजा कार्त्तवीर्यदेवने अपनी माता चन्द्रिका-महादेवीके द्वारा बनाये गये रट्टोंके जैन मन्दिरके लिये तत्कालीन गुरु शुभचन्द्र भट्टारक देवके लिये थे। सीमाओंके निर्धारण में बहुतसे गाँवों और शहरोंके नाम आये हैं।

[JB. X, P. 183, No 9, a.]

४४७

रोहो—संस्कृत तथा गुजराती

[सं० १२५९=१२०२ ई०]

लेख भग्न है और श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम पड़ता है।

[EI, II, No. 5, No 12 (P. 28-29) t, and tr.]

४४८

बन्दलिके:—संस्कृत तथा कन्नड़।

—[शक ११२५=१२०३ ई०]—

[बन्दलिकेमें, शान्तीश्वर बस्तिके सामनेके पाषाण पर]

कवि-निवह-स्तुतं नेगळ्द रेच-चमूपतियिं वळिक्कमा-।
भुवनदोळिन्तनन्त-जिन-धर्म्मंनघुद्धरिपर्द्द-रेचनम्।
सुविदितमागे बान्धव-पुराधिप शान्ति-जिनेश-तीर्थमम्।
कवडेय बोप्पनुद्धरिसिदं यदु-नम्रम-राज्य-भूत्रणम्॥

१—कलहो की के शिलालेखमें भी 'रेच' नाम आया है। पर यहाँका रेच उस रेचसे भिन्न है (जे. एफ. फ्लीट)।

महिगिडलेन्देम् धनमं ।
पडेवने नाळ्-देरद दानमं माडलुकेन्-।
दोडमेथनर्चिपनारिम् ।
कडु-माणं भव्यरोळगे कवडेय बोप्पम् ॥
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
वसुधा-कान्तेय कुन्तलोपममेनिप्पी-कुन्तल-क्षोणियम् ।
पेसर्वेत्ता-नव-नन्द-गुप्त-कुल-मौर्य्य-क्ष्मापरळ्दर् प्रसन्-।
नसदाणमर् कलि-रट्टराळ्दरवरिं चाळुक्यरळ्दर् ब्बळिक् ।
एसेदिर्द्दा-कळचूर्य्य वंशबरोळाळ्दं बिज्जल-क्षोणिपम् ॥
अर्ल्लि बळिक्के धरेयोळ् ।
त्वल्लिदरं तरिदु निज-भुजासिथिनदटं ।
बल्लाळ-नृप धरेयं ।
सल्लीलेयिनाळ्दनखिळ-देशं पोगळल् ॥

आतन वंशावतारमेन्तेने ॥

वृत्तम् ॥ कृष्णन नाभि-पङ्कजजनप्पजनिं बोगेदत्रियत्रिजम् ।
विष्णुवदामार्गि ससि पुट्टिदनातन वंश-सम्भवम् ।
बिष्णु-पराक्रमं पुरु पुरूरवना-नहुषं ययाति रा-।
जिष्णु यदुत्तमं क्रमदे तत्तदपत्यरेनल्के पुट्टिदर् ॥
सळनादं यदु-वंशदोळ् मुडदवं वासन्तिका-देविया ।
चळनारावनेयं प्रोणंर्चि शशकोपद्-ग्रामदोळ् पायटोडा-।
गळे ता पेट्-न्बुलि पोय्सळेन्दु सेळेयं जैन-व्रतीन्द्रं जपत्-।
तिळकं कोट्टोडे पोय्दे होय्सळ-नेगर् चानादुडी- धात्रियोळ् ॥
सेळे सिन्दद कावागिरे ।
मुळिसिर्द्द पाय्द पुलिये पुलियागिरे ताम् ।

तोळतोळ तळ्दपुदु यदु-नृप-।
बळदोळ् पुलियेसेव-सिन्दवन्दिन्दित्तल् ॥
सळनिन्दं बळिकं नृपाळकरनेकर् य्याढवेशर् म्महो-।
तळमं पाळिसिदर् ब्बळिके विनयादित्यङ्गे पुत्रं जगत्-।
तिळकं नुग्गरेयङ्गनाढनेरेयङ्गङ्गोप्पे बल्लाळनुम् ।
विळसद्-विष्णुवुमर्क्क-तेजनुदयादित्याङ्कनुं पुट्टिदर् ॥
अवरोळ् रक्षिप विष्णु-बर्द्धन-नृपङ्गादं सुतं मेदिनी-।
घवनप्पा-नरसिंह-भूपनदटं तङ्गारसिंहङ्गसुत्-।
सवदिन्देचळ-देविगं यदु-कुल-प्रोत्तंसनादं सुतम् ।
भुवनानन्दन-मूर्त्ति कीर्त्ति-निळयं बल्लाळ-भूपालकम् ॥
निरिदिदिरान्तवरं निज- ।
चरणक्केरगिदरनोसेदु रक्षिसि धरेयम् ।
परिपाळिसुतं सुखदिन्द् ।
इरे विजयसमुद्रदोळिया- बल्लाळम् ॥
धरणी-कान्तेय मुखदन्त् ।
इरे बनवसे-नाडु रक्षिसुवुददरोळ् ना- ।
गर-खण्डं तिळकदवोल् ।
परिशोभिपुदाव-कालमुं सिरियोदविम् ॥
ऊरून्नंन्दनदिं लता-भवनदिन्दूरूत्तंटाकङ्गळिन्द् ।
ऊरूत्तंळ्तेले-वळ्ळियिं कोळगळिन्दूरूर् प्पळोब्बींजदिन्द् ।
ऊरूर् काञ्चिन तोण्टदिं कळवेयिन्दूरूर् प्रजा-व्रातदिन्द् ।
ऊरूर् देव-गृहङ्गळिं विबुधरिन्दूरूर् करं रञ्जिकुम् ॥
परलोळ् पदस धेनूत्- ।
करदोळ् सुर-धेनु नन्दनदोळमर-कुजम् ॥
करमेसेवन्तिरे सले ना- ।
गर-खण्डदोळेसेवुदेसेव बान्धव-नागरम् ॥

वृ ॥ अदु बळसिर्द नन्दनदिनम्बुज-षण्डदिनोळ-गर्बुगिनिम् ।
पुडिदेले-वळ्ळियिं,वेळद्-शालियिनोप्पुव,कोण्टेयिं समन्त्
ओदविद-लक्ष्मियिं विभवदिं,विळसज्जनदिं सु-देव-गे- ।
हद् कडु-चेल्विनिन्दमळका-पुरमं नगुतिप्पुदोर्म्मेयुम् ॥
अदनाळ्वं प्रजे मेच्चे गण्डनदट कादम्ब-वशोद्भवम् ।
मुदर्दि सोम-नृपात्मजातनेनिसिर्द्दो-बोप्प-देवङ्गे पुट्ट् ।
इद सत्पुत्रननून-शौर्य्य-निळयं-कन्दर्प्प-सन्-मूर्त्तिय- ।
भ्युदयालङ्कृतनात्त-कीर्त्ति-रमणं श्री-ब्रह्म-भूपाळकम् ॥
आ- बन्दणिकेय शान्तिनाथ-देवर मण्टपमं माडिसि कवडेय बोप्पि-सेट्टियरु सर्व्व-नमस्यमं माडिदम् ॥

नागर-खण्डदोळ् हरन वक्त्रदवोल् नेगळ्दग्रहारमय्द् ।
आगळुमोप्पुगुं निखिळ-वेद-पुराण-सुनीति-शास्त्र-तर्क्क- ।
आगम-काव्य-नाटक-कथा-स्मृति-यज्ञ-विधानमं मनो- ।
रागदिनोदुवोदिसुवशेष-महाजनदोन्दु-प्पोषदिं ॥
प्रत्येक-बृहस्पतिगळ् ।
नित्यानुष्ठान-चारु-चारित्र-परर् ।
सत्य-युतर् प्तेजदोळा- ।
दित्य-सट्टशरत्तियिर्प्पं माजनवेर्ड्डं ॥
केरेयूर शम्भु-देवनेथ् ।
अरितर्क्कं सकळ-विद्वगळ्गं सले कण्- ।
दरवीयेनिसिप्पनवनम् ।
नेरे पोलल्तु नेरेयनवनुमा-भारतियुम् ॥
उरदे वणञ्जु-धर्म्मदोळगं नयदिं नडेयुत्तमिर्प्परम् ।
तरिदु सु-धर्म्मदिं नडेवरं प्रतिपाळिप सेट्टिकव्वेयक्- ।
कारिन-सुतङ्गे पुण्य-निधि शंकर-सेट्टिगे सेट्टि-गुत्तरार् ।
प्पेररेणे सत्यदिं विभवदिं नुत-शौर्य्यदिनुद्ध-धैर्य्यदिम् ॥

तनगय्यं शङ्करं तज्जननि नेगळ्द् जक्कब्वेयाप्तं जिनं सन्-।
मुनि-वन्द्यं भानुकीर्त्ति-व्रति-पति गुरु बल्लाळलनाळ्दं विनेपर् ।
त्तनगिष्टर् कान्ते लच्छाम्बिके सति सति-नुते जक्कब्वे-मल्लब्वेगळ् नन्-
दनेयर् ब्बल्लाळ-देवं सुतनेनेयेसेदं वीर- सामन्त-मुद्दम् ॥
कविगळ मुद्दनाश्रितर मुद्दननाथर मुद्दनिष्टनप्प्-।
अवर्गळ मुद्दनर्त्थिगळ मुद्दनेडर्न्नेलें-गोण्ड शिष्ट-बान्-
धवरेसेवोन्दु-मुद्दनेनसुं परिवारद मुद्दनङ्गना-।
निवहद मुद्दनेय्दे सलियं प्रभु-मुद्दनिळा-तळाग्रदोळ् ॥
स्वच्छतर-कीर्त्तियिन्दम् । -
कच्छवियूरडेय बिट्टियरसं जगमम् ।
प्रच्छादिशिदनवङ्गति-।
तुच्छरेनिप्पूरडेयरदेम् पेळेणेये ॥
सागर-वळयित-धरणी-।
भागदोळ्युन्नतिकेयिं वर्त्तिप सत्-।
त्यागदिनरिविन्देणेये ।
बेगूर प्रभुगे माळ-गौडङ्गन्यर् ॥
सोगयिप्प कण्णसोगेय ।
नेगळ्दिर्द्देरकाटि-गौडनरितवनाप्पम् ।
मृग-रिपु-विक्रममं नेरे ।
पोगळल्का-बललमवनुमेनाचं (पं) पने ॥
मळवल्लि येरह-गौडङ्।
एळेयोळ् समनप्परुण्टे सत्यदिनरिविम् ।
बीळसत्न्त्यागदिनत्युन्-।
न्नळ-कीर्त्तियिनधिक-शौर्य्यदिं सद्-गुणदिम्
न्नलद नेले त्यागदागरं ।
अलघु-गुळङ्गळ निधानमरितद तवरुन्-।

ज्वळ-कीर्त्तिय कवचेनिपम् ।
सले इलरिं दुब्बळर् सोम-गवुण्डम् ।
मुददे मुनिचन्द्र-सिद्धान्-।
त-देवरळ्करिण-शिष्यरनुपम-विद्यर्
म्मद-रहितर् स्सलेनेगळ्दर् ।
व्विदित-गुणर् ल्ललितकीर्त्ति-सिद्धान्तेशर् ॥
अवरानन्दन-नन्दनन् ।
अवनी-संस्तुत्यमेनिप काणूर्ग्गण-कै-।
रव-चन्द्रनेनिसि नेगळ्दम् ।
विवेकि शुभचन्द्र-विनुत-पण्डित-देवम् ।
मळिनते इल्लद कुन्दम् ।
तळेयद सले राहु-पीडे येददे दोषा-।
वळियोळ् परियिसदस्ता-।
चळकेळसद चन्द्रनेनिसुवं शुभचन्द्रम् ॥
चन्द्रणिकेय तीर्थवना-।
नन्दाचार्य्यरवोलुद्धरिसिदं जगदा-।
नन्दकर-ललितकीर्तिय ।
नन्दन शुभचन्द्र-विनुत-पण्डित-देवम् ।
कुसुम-व्रातदोळम्बुजं जळधियोळ् दुग्धाब्धि ताराळियोळ् ।
ससि चिन्तामणि कल्गळोळ् तरुगळोळ् कल्पोर्व्विपं रत्नदोळ्
मिसुपा-कौस्तुभमोप्पुवन्ते जिन-योगि-व्रातदोळ् रञ्जिनम् ।
जसदाण्म शुभचन्द्र-देव-मुनिपं कानूर्ग्गणोद्धारकम् ॥
इन्तिदु चित्रमेम्बिनेगमेय्दे मोसर् प्योरसे पाल्गळोर्-।
अन्तिरे पुत्तिनोळ् पुगे वज्रातिशयं नव-पुष्प-मालिका-।
सन्ततियिन्दमाटतिशयं-बेरलोप्पुव शान्तिनाथ-वीर्-।
स्थान्तर-पारिपत्यदेसेवं शुभचन्द्र-मुनीन्द्रनोर्म्मेयुम् ॥

श्रीमद्-बल्लाळभूपालकन विनुत-सन्-मंत्रि विप्रान्वयाब्ज-।
स्तोमोद्यद्-भानु नारायण-पद-कमल-द्वन्द्व-भृङ्गं यशश्-श्री-।
धामं साहित्य-विद्याधरनखिळ-गुणालंकृतं मान्तन-प्रो-।
द्दामं श्री-मल्लनी-बन्दणिकेयनोलविं पालिसुत्तिप्पंनोळिपं ॥
कडिवं मारान्तरं बेगदे करगिसुवं शत्रु-सैन्यङ्गळं सड-।
गडकेल्लं धैर्य-वर्ण-क्रम···णसेये तां तोरुवं कीर्त्तियल्दम् ।
कडु-चेल्वप्पन्तिरल्वोत्तुनखिळ दिशा-दन्ति-दन्तङ्गळोळ् नोळ्-।
पडे सन्नं कम्मठकन्तोडेयनेनिसुवं मल्ल-दण्डाधिनाथम् ॥
आ-कम्मठद श्री-मल्लन प्रधाननेनिप ॥

वृ ॥ अलरे विरोधि-सन्तमसमळिकरेयाटविकोद्ध-कैरवम् ।
सले पोडल्देय्दे सज्जन-विसं प्रविकासमनेय्दे रागमग्-।
गळिसिरे मित्र-चक्र-चयदोळ् बेळेयं नुत-विश्व-धात्रियम् ।
सललित-मूर्त्ति कीर्त्ति-निधि सूर्य्य-चमूपति सूर्य्यनन्ददिम् ॥

अन्तु पोगळ्ते-वडेदधिकारि मल्लि-सेट्टियरु द्विज-वंश-कमळ सूर्य्य-नप्प सूर्य्य-देवनु यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-धारण-मौनानुष्ठान-जप-समाधि-शील-सम्पन्नरप्प नागरखण्डदय्दग्रहारदशेष-महाजनङ्गळुं सकळ-साहित्य-विद्या - विलासिनी - विलास-मूर्त्तियेनिप केरेयूर यूरडेयं शम्भुदेवनुं खच्छाच्छ-गाङ्गाम्भ-सदृश-कीर्त्ति-वल्लभ-नेनिप कच्छावियूरडेय बिट्टियरसनु बणञ्जु-धर्म्म-वार्द्धि-वर्द्धन-चन्द्र-लेखेयेनिप त्रिभुवनमल्ल-सेट्टिकब्बेयुं तदपत्य शौर्य्य-निधाननप्प शङ्कर-सेट्टि सकळ-याचक-जन-मनोभिलषित - फळ-प्रदामर-कुज - सद्द्वनप्प शंकर-सामन्तानन्दन-नन्दनं भव्य - जन - बान्धवनप्प नाळ् - प्रभु सामन्त - मुद्दय्यनु रत्नत्रया-भरण-भूषितनप्प बेगूर माळ गौडनुं देव-द्विज-गुरु भक्तनप्प कण्णसोगेय परकाटि-गौडनु निखिळ-गुणाळङ्कृतनप्प मळवल्लि-एरह-गौडनु विनेय-गुण-निधाननप्पब्बलूर सोम-गौडनुमिन्तिनितरु मुख्यवागि नागर-खण्डवेप्पत्तर समस्त प्रभु-गावुण्डुगळेकस्थरागिद्दु शक-वर्ष ११२५ सले रुधिरोद्गारि-संवत्सरदुत्तरायण - संक्रमण - निमित्तवागि बन्दणिकेय श्री - शान्ति

नाथ-देव - रभिषेकाष्ट - विधार्च्चने - पूजा - विधानोचित अयकं अल्लिय पात्र-पात्रुळक्क खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं चातुर्व्वर्णदाहार-दानक्कमेन्दल्लिय तीर्त्थाचार्य्यं शुभचन्द्र-पण्डित-देवर काल कच्चि सर्व्वाबाध-परिहारवागि तम्मनितरं-धारा-पूर्व्वकं माडि बिट्ट दति येन्तेदडे दण्डियहल्लियु बावलियु गङ्कळ्ळिळयुं स्थळवृत्तियुं ऊरुरलु नन्दादीचिगेगे नाल्कु-पणमं सुट्टेय-सावन्तं चिक्क-मागुण्डिय बल्गणोणियिं पडुवलु ५०० मरद अडके-दोटमु इन्तिनितुमं बिट्टरु धर्म्मदि प्रतिपाळिसुवन्तप्पवरु गङ्गेय तडियलु सहस्र-कविलेयं नवरत्न-भूषगं माडि सहस्र-ब्राह्मणरिगे दानं माडिद फल-वीधर्म्मक्कळिवनवयमं मनदोळ् चिन्तिसिदनावोनातननितु-कविलेयुमननितु-ब्राह्मणरुमं गाङ्गेय तडियोळळिड पाप ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक)।

[विख्यात रेच-चमूपति; उसके बाद यदुवल्लभराज्यभूषण, वान्धव-पुराधिप कडवे बोप्पने शान्ति-जिन तीर्थ (बन्दलिके) की उन्नति की ।[1]

जिनशासन की प्रशंसा ।

कुन्तल-देश नव नन्दों, गुप्त-कुल मौर्य्य राजाओं; इसके बाद पराक्रमी रहों; इसके बाद चालुक्यों; तदनु कलचूरि-वंशके राजा बिजल द्वारा शासन किया गया । तत्पश्चात् इस देशपर राजा बल्लालने शासन किया ।

उसके वंशका अवतार (परम्परा):—होय्सल राजाओंका उदय और बल्लाल तककी वंशावली ही वर्णित है जो पिछले कई शिलालेखोंमें आ चुकी है ।

पृथ्वी रूपी स्त्रीका बनवसे-नाड् चेहरा था, जिसमें नागर खण्ड तिलकके समान मालूम पड़ता था। इसके कुञ्जों, बगीचों और तालावों इत्यादिका वर्णन । नागरखण्डमें उत्तम बान्धव-नगर चमक रहा था । इसके आकर्पणका वर्णन । इसके शासक कदम्ब-वंशके थे; वे सोम-राजाके पुत्र बोप-देव थे । उनका

१. यह सब शासनके पूरे लिखे जानेके बाद जोड़ा गया मालूम पड़ता है ।

ब्रह्मभूपालक नामका लड़का था। कन्नडेय बोप-सेट्टिने उस बन्दिणिकेके शान्तिनाथ-देवके लिये एक मण्डप खड़ा किया और विधिपूर्वक यह उसे समर्पण कर दिया।

नागरखण्डमें, हरके मुखोंके समान, पाँच अग्रहार थे, जिनसे ब्राह्मणोंके वेद आदि विद्याओंके पढ़ने-पढ़ानेकी ध्वनि निकलती थी। वहाँके ब्राह्मणोंकी प्रशंसा। केरेयूर, शम्भु-देवकी समस्त विद्याओंमें अद्वितीय निपुणता। सेट्टिकव्वेके पुत्र बनञ्जु-धर्म-निवासी संकर-सेट्टिकी; सामन्त-मुद्दकी, जिसके पिता शंकर, मां बक्कव्वे मित्र जिन, गुरु भानुकीर्त्ति-व्रतिपति थे, शासक बल्लाल, पत्नी लच्चाम्बिके, पुत्रियां बक्कव्वे और मल्लव्वे, पुत्र बल्लाल-देव था, कच्छवियूरके मालिक बिट्टि-यरसकी; बेगूरके प्रभु-माळ-गौडकी; कण्णसोगेके एरकाटि-गौडकी; मळवळ्ळिके एरह-गौडकी; तथा अब्लूरके सोम-गौडकी प्रशंसामें श्लोक।

मुनिचन्द्र-सिद्धान्त-देवके प्रिय शिष्य ललित कीर्त्ति-सिद्धान्ती थे। उनके पुत्र, काणूर-गण समुद्रके चन्द्रमा, शुभचन्द्र-पण्डित-देव थे। उन्होंने शान्तिनाथ-तीर्थ (बन्दलिके) का प्रबन्ध अपने हाथमें लिया।

राजा बल्लालका प्रसिद्ध मन्त्री मल्ल या कम्मट मल्ल-दण्डाधिनाथ था। उसने बन्दलिकेकी बहुत प्रेमके साथ रक्षा की थी। उसके पराक्रमकी प्रशंसा। उसका मंत्री सूर्य्य-चमूपति था।

नागरखण्ड सत्तरके इन सब मुख्य-मुख्य व्यक्तियोंने, प्रजाने और किसानोंने (उक्त मितिको) तीर्थके पुरोहित शुभचन्द्र-पण्डित-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक (उक्त) दान दिया।]

[EC VII Shikarpur tl No 225]

४४९

कलहोली,—कन्नड़

[शक ११२७=१२०४ ई०]

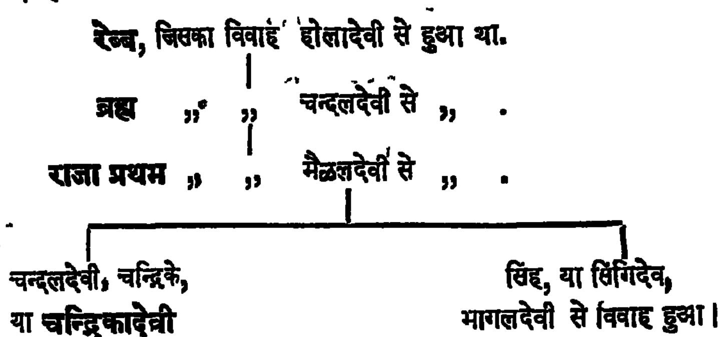
लेख-परिचय

यह लेख कलहोलीके एक पुराने मन्दिर—जो कि अब एक लिङ्ग-मन्दिरके रूपमें, जैसा कि इस भागके सभी जैन मन्दिरोंका हुआ है, परिवर्त्तित है—के पाषाण-तलसे लिया हुआ है। कलहोली बेलगाँव जिलेके **गोकाक** ताल्लुकामें है। इसका पुराना नाम **कलपोडे** है। हम देखते हैं कि रट्टोंकी राजधानी इस समय **वेणुग्राम**, आधुनिक **बेलगाँव** थी। सबसे पहले राजा **सेन**का वर्णन आया है, जो शि० ले० नं० १३० में द्वितीय क्रमपर वर्णित है। इन दोनोंके इस ऐक्यका कथन आगेके किसी भी अन्य आधुनिक शिलालेखमें नहीं दिया गया है, लेकिन कालोंकी तुलना इस निष्कर्ष पर पहुँचाती है। दूसरे, शि० ले० नं० १३० की ३८वीं पंक्तिका 'बृहद्दण्ड' [1] विशेषण इस शिलालेखकी चतुर्थ पंक्तिमें सेनके लिये दिये गये प्रथम विशेषणसे मिलता-जुलता है। इसमें सेनके बादसे तीसरी पीढ़ी तकका उल्लेख है। और अन्तमें कुछ दान आते हैं, जो शक ११२७ (ई० १२०५,६) में, कार्त्तवीर्य चतुर्थकी आज्ञासे **सिन्दन-कलपोडे**में बने हुए जैनमन्दिरकी ओरसे किये गये थे। यह गांव उन गांवोंमें से एक था जो **कुरुम्बेट्ट** **'कम्पण'** के नामसे विख्यात थे। यह कुरुम्बेट्ट कुण्डी-तीन हजार जिलेमें शामिल था। लेखसे पता चलता है कि कार्तवीर्य चतुर्थको अपने शासनमें अपने छोटे भाई 'युवराज' **मल्लिकार्जुन**से सहायता मिलती थी। प्रसंगवश लेखमें एक यादव सरदारोंके कुटुम्बका भी उल्लेख आता है जो उस समय **हगरटगे** जिले पर शासन कर रहे थे। आजकल यह किस जिले

---

1. जिसके पास बड़ी भारी या शक्तिशालिनी सेना हो।

या स्थानका नाम है, इसका पता नहीं चलता। यादव कुटुम्बकी वंशावली यों दी है:—



राजा प्रथमकी पुत्री **चन्द्रिकादेवी** रट्ट सरदार लक्ष्मण या लक्ष्मीदेव प्रथमकी पत्नी हुई, तथा कार्त्तवीर्य चतुर्थ और मल्लिकार्जुनकी माता हुई। उल्लेखित दान-प्रदत्त जैनमन्दिरको राज द्वितीयने बनवाया था। मन्दिरके गुरू मूल कुन्दकुन्दा-म्नायकी इनसोगे शाखाके थे; उनमेंसे तीनके नाम यहा दिये हैं:—मलधारी, उनके शिष्य सैद्धान्तिकनेमिचन्द्र, उनके शिष्य शुभचन्द्र थे।

ओं नमः सिद्धेभ्य· [॥] श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाञ्छनं [।] जीयात्त्रै (त्रै) लोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनं [॥] श्री जन्मभूमि वरसुरभूजं क्षीरा-म्बुराशि (शी) यन्ते गभीरं श्री जैन शासनं सले राजिसुतिर्क्कमळ राजपूजित-महिमं ॥ विळसित विपुळामृत गोकुलदिंदं सकलसत्य संपददिं निर्म्मळवर्ण्णं दिन्दे विधु मण्डळदंतिरे, कूण्डिमण्डळं कण्णोळिकं ॥ अदनाळ्वं सेनं साहस भीमसेनन सकृद्विद्या विळासेन ना शानरि प्रियवल्लभ प्रथुसभं तीव्रा (त्रा) शुतेजप्रमं नाना-दानि कीर्तंगने **कार्त्तवीर्य**नखिलोर्व्वीचक्रमं चक्रयंतरे दोर्दण्डदोळान्तनच्युतगुणं श्रीरट्टनारायणं मेरु नभस्तळं बळधि मु (म) त्पतियं नति सन्महत्व (त्व) गम्भीरगुणक्के मच्चरिपुवेन्द मराद्रियनिक्के मेट्टिया नीरदमार्ग्गमं पुदिदु वारिधियं

मिगेदाणंट कीर्तिया शारमणर्म्मो वंणिपुदु पंपिन लंपिने कार्त्तवीर्य्यन अर्जिततेजनिर्जित-यशं परितर्जितराष्ट्रकंटकं निर्जितदुर्ज्जयारिनिवहं कमळाधिपनन्ते दानि नागार्ज्जुननन्ते रावणविदारण कारणरामनन्ते मिक्कर्ज्जुननन्ते रंबिपनिळेश शिखामणि मल्लिका-र्जुनं ॥ श्रीचक्रवर्त्तितनुजे कळाचतुरे विशाळलोळलोचने येनिसिदँचलदेवि सतीत्वलोचने येने कार्त्तवीर्य्यवधू पेसर्वंडदेळ् ॥ स्वस्ति समधिगत पंच महाशब्द महामण्डलेश्वरं सत्तनूर्प्पुरवराधि ईश्वरं त्रिवलीतूर्य्यनिर्ग्घोषणं रट्टकुळभूषणं सिन्दूरलाञ्छनं सफळीकृतविद्वज्जनाभिवाञ्छनं वीरकथाकर्ण्णनजातरोमांचं साहित्य-विद्याविरिंचं सुवर्ण्णगरुडध्वजं सहजमकरध्वज संग्राम कौतूहळीकृतगदादण्डं कदनप्रचंडं सिन्धुरारातिबन्धुरकबन्धनर्त्तनसूत्रधारं वैरिमण्डलिकगण्डतळप्रहार परवधू-नंदनं विभवसंक्रन्दनं साहसोत्तुंग समाराधितमहाशिंग निडु मोदलादनेकनामा-वळिविराजितं श्री कार्त्तवीर्य्यदेवं निजानुज युवराज वीर मल्लिकार्ज्जुनदेवं वेरसु वेणुग्राम स्कन्धावारदोळ् सुखदिं साम्राज्यलक्ष्मीयननुर्भाविसुत्तमिरे ॥ श्रीकवि विबुध श्रीरत्नाकळितं जळधियंददिं यदुकुल लक्ष्मीकान्तं श्रितकमळानीकं इगरटो नाडु जगदोळगेसेगुं ॥ आ नाडनाळ्वं यदुवशं श्रित राजहंस मेसेदिक्कुं व्योमदन्त-क्लियमुदय बेत्त करात्तमृतनुक्तेवं कीर्तिमार्ब समुद्यदिळेव्यं सुमनस्पूज्यनमळ-स्वान्तं जितध्वान्तन्तेप्पिदनादं कमलाधिप प्रभुतेयिं श्रीरव्वनुर्व्वीश्वरं ॥ आ रेव्व-प्रभुविंगमग्रवधु हीलादेविग स्वान्वयोद्धारं धीरनुदारनुद्गुणसारं शुंभदंभोधिगम्भीरं वाग्वनितास्तन स्थगितहारं सौख्यसंपादककाचारं ब्रह्मनवोलतक्र्यमहिमं ब्रह्माह्वगं पुट्टिदं ॥ जळधिगभीरभूतभूमळय ब्रह्मगं मुन्वितवेलोपम चन्दलदेवीगमागेदं मण्डल-नाथं राजनन्ददिं राजरसं । पुदिदिरे रागदिं सकळमण्डलमप्रतिमप्रसाद संपदमखिळा-शेपनेळ्ये पुरिसि जैनमतामृतार्ण्णव पडेदमिवृद्धियं तळेये तन्न पेसर्गनुरूप मागेयम्यु-दयमलेयिन्दं विमळवृत्त विराजित राजभूभुजं ॥ क्षितिपतिराजराजन मनोरमे मैळलदेवि ता यशस्वति नुतियोग्य भाग्यवति दानदयावति सत्कळासरस्वति य-भिरूप रूपमळभावति जैनपदाम्बुजार्च्चनावति पुरुपुण्य पुत्रवति रंजिसुवळ् सुविशा-ळ शीळदिं ॥ कुलविस्तारक राज राज विभुगं श्रीरोहिणी मूर्ति मैळलभादेवी गभा-दमजर्प्पतिहित श्री चन्द्रिकादेवी निर्म्मळचक्चन्द्रिकेयन्ते सिंहमहिपं साम्भम्नो-

लादम्मंहीतळपूज्यर् विबुधेज्यरुज्वळगुण श्रीकान्त रात्यन्तिकं ॥ अनुपमशौर्य्यशाळी यदुवश शिरोमणि राजराजनन्दने विबुधाभिनंदने घटोदरसुस्थित सर्प्पदर्प्प भुजने पतिचिन्तरंचने जगंनुत जैनमतामृताभिवर्धनकरचारुचंद्रिके महासति चन्द्रिके धन्ये धात्रियोळ् ॥ श्रीपति लक्ष्मीदेवमहीवल्लभवल्लभे कार्त्तवीर्यं धात्रीपति मल्लिकार्ज्जुन महीश्वर मातृ महासतीत्व सीतोपमे जैनपूजनसुरेन्द्रवधूपमे रूपकेतु–कान्तोपमे रंजिपळ् नेगळ्द चन्दळदेवि समस्तधात्रियोळ् ।

स्फुरितानर्घ्यमणि-प्रणूतकटित प्रख्यातदानेन्द्र भूमि -।
रुहोर्व्वीतळधारितुंगशिखर श्रीमद्भुजादण्डमं-॥
दरदिं वैरि बळाब्धियं मथियिसुत्तुद्यजय श्री वधू -।
वरनादं यदुवंशभाळतिळकं सिंहावनीपाळकं ॥
सबळं गोण्डु समग्रसिंहमहिपं मेल्पातिसल्पा जिमं ।
सबळं वैरिवल जवंगे कबळं बेताळबावक्के कोट्ट् ॥
पिरि श्रोणि बळारिगित्त बडिनं हाद्दिर्द्दं हद्दंगे नेद्दुं ।
मृककेत्तिदवुत्तियेदोड हितम्मेंव्योलि महाम्परे ॥

जनपति सिंगिदेवन मन प्रिये भागलदेवी भाग्यमेदिनि गुणयूथनाथ मुनिदान विनोदिनि संश्रितार्त्तिभेदिनि विबुधप्रमोदिनि कळागममेदिनी नित्यसत्यवादिनि दुरितापनोदिनि पतिव्रते पूजितरूपे रंजिपळ् ॥ भोगपुरन्दर-प्रतिम सिंहामहीपतिगं जिनार्च्चनोद्योग सचेचरित्रवति भागलदेवीगनाद नात्मजं रागसमागमप्रद सुमूर्त्ति जयंत नतिप्रसिद्ध जैनागमवार्द्धिवर्धनकळानिधि राजरसं समंजसं ॥ जिनपूजाविबुधाधिपं विपुळतेजं प्रासधर्मप्रभावनयं पुण्यजनोत्तमं गुणगणांभोरासि वैरीप्रभंजनन्र्व्वीवनदं महीश्वरनेनिप्पी पेपिनिं लोकपाळनिळं राजिरसं जगद्वळयमं पाळिप्पु देनोप्पुदे । क्षिति सले कूत्तु कीर्तिपुदु मूर्ति मनोभवराजनं समर्च्चितजिनराजनं यदुकुळामृत वारिधिराजनं समुन्नतिगिरिराजनं गुणविराजितनूजसिंहभूपति सुतराजनं विषमवाजि सुशिक्षणवत्सराजनं ॥ पिंगदवार्यशौर्यमसुद्धंनरलोक जगद्वळंगे राजंगे जगत्प्रमोदजनकाभ्युदयं यदुवंश संभवोत्तुंग-गुणाच्युतंगे विजयप्रियवृत्तिनृपाळ सिंह जातंगे पराक्रमं पोसते बंणिसुबन्दु समस्त-

घात्रियोळ् ॥ द्यूतमृगय्यि मांसगणिकापरदारखळप्रसंग चौर्य्यातुळमल्लमेषखगयुद्ध-निषिद्ध विनोदनोद्यतम्भूतळ नाथरम्मरदु माण्दु जिनस्तवनार्च्चनाम होल्यातमुनीन्द्र-दानरतप्परे राजनृपाळ निंनवोळ् ॥ सति चन्द्ळदेवि पतिव्रते लक्ष्मीदेवि-मेम्बरीर्वरू मवनीपति राजनृपन राणियरतिशयगुणयुतयरेनिसि नेगळ्दर्ज्जगदोळ् ॥ स्वस्ति समस्तप्रशस्ति सहित श्रीमन्महामण्डळेश्वरं कुपणपुरवराधीश्वरं यदुकुळावरद्युमणि बुधजनचिन्तामणि निजभुजासिनिर्द्दळितरिपुनृपकंठकदळं नरलोकजगद्दळं अनवरत जिनसवनसुरभि सलिलपवित्रीकृतोत्तमाङ्गं धर्मकथाप्रसङ्गं जिनसमयसुधार्ण्णवसुधाकरं सम्यक्त्वरत्नाकरंनेनिसि नेगल्द क्षत्रियमस्तकामरणराजनृपं विभुसिंहसूनरत्नं त्रयमूर्तिं निर्म्मळिन धर्म्ममेनुत्तदनोल्दु पेळ्ववोल् धात्रिगे मिक्क कल्पोळेयोळेत्तिसिदं जिनशासतिगेहमं नेत्रविचित्रमं महितें (तिं) रीट मनप्रतिकूटमं ॥ अन्तनन्तसुख श्रीकान्त (तं) शान्तिनाथ समुत्तुंग भृत्य निधानम कनककळश मकरतोरण मानस्तंभविराजमाननं राजरसंदनकल्पोळेयल्लि माडिसि तन्न गुरुगळुं जगद्गुरुगळुवेनिसिद शुभचन्द्रभट्टारकदेवर्गे कोट्टनवर गुरुकुळक्रममेंतेने ॥ जयनिळय कुण्डकुन्दान्वय विश्रुत मूलसंघदेशि पूर्णोदय पुस्तक गच्छदोळतिशयमेने इनसोगेयेम्ब वळि वगेगोळिकुं । गुरुकुळतिळकप्पविन चरितग्गुंणभरितरल्लि नेगल्दन्त्रीजितस्मर मलधारि मुनीन्द्रच्चरणाम्बुजनतनरेन्द्ररपगततन्द्रर् ॥ पदनखसंकुळं विषमबाणविषाहिमहाविषापहारद मणि नामदक्करमे मोहपट्टग्रहभेदिमंत्रमंगद भटमाजमंजनरुजाहरणौषधमेन्दोडेननेम्बुदो मळधारि मुनिपोत्तम प्रभावतपःप्रभावमं ॥ शान्तरसावतार मळधारिमुनीश्वरराग्रशिष्य सैद्धान्तिक नेमिचन्द्रगुरुधर्म्मरथ श्रुतवाद्धि नेमिचन्द्रं तममं निवारिप कळागुणभद्रनमानुषामृतस्वान्त समन्तभद्रनेने वंणिसरारकळंकमृत्तनं । आ सैद्धान्तिक नेमिचन्द्रयतिवर्य्याचार्य्यं शिष्यग्गुंणावास श्रीशुभचन्द्रभासुर यशोभट्टारक ब्बीश्वाधात्रि सपूजित शीलधारकरुदग्रानंगसंहारकर् श्रीसद्दर्शन बोधमृत्त(धामृत)पदवीविस्तार निस्तारकर ॥ शुभचन्द्रं स्वगुणोल्लसत्कुवळयं श्रीचन्द्रिकाशुद्धवृत्तिभवप्रभावदिं दिगम्बरश्रीवृद्धियं मण्डळप्रमुसंपूजितपादनुज्वळ गुणाढ्य शान्तरूपं कळाविभवात्युंनतभूतनम्युदययुक्तं माळ्पदेनोप्पदे ॥ मारमदापहारिफ्रमोग्रतपश्शुभचन्द्रदेव भट्टारकशिष्यरी ललित-

कीर्त्ति समुन्नतनामधेय भट्टारकरिन्दु सल्ललित कीर्त्तिगळन्वित शान्तमार्त्तिगळ् सार-चतुष्टयात्रयवेदिगळुत्तम, सत्यवादिगळ् ॥ स्वस्ति समस्त गुण सपन्नरु मन्यप्रसन्नरुं चन्द्रललदेविवन्दित पदारविन्दरुं निजात्मभावनाभिस्पन्द (द)रुं श्रीराजनृपाळ सुप्रतिष्ठित शान्तिनाथदेवर बसदियाचार्य्यरुं मण्डळाचार्य्यरुमप्प शुभचन्द्र भट्टारकदेवर्गे श्री-कार्त्तवीर्य्य देवं आ शान्तिनाथदेवरंगभोगक्कं रंगभोगक्कमा बसदिय खण्डस्फुटित जीर्णोद्धारणक्कमल्लिप्पं मुनिजनगळाहाराभयभैषज्यशास्त्रदानक्कं शकवर्ष ११२७ नेय रक्ताक्षिसंवत्सरद पौष्य शुद्ध बिदिगे शनिवारदन्दुत्तरायणसंक्रमणदल्लि कूण्डि-मूरुसासिरद बळिय कुलंबेट्टंगंपणदोळगण सिंदनकल्पोळेयल्लिय कळगडियर सिन्द-गाऊण्डं मुख्यवागि इंनीव्वं गाऊण्डुगळ्ळेये इन्नेरडु तप्पडिय कुचुम्मेह गोलिंदेर-डु सहस्र कब केय्यं धारापूर्व्वकं सर्व्वंसमस्यवागि कोट्टन्त केय्य सीमे [।] ऊरिं बडगल् कंकणनूर हेद्दारियिं मूडलविलहळ्ळद मुरुविनल्लि नैरुत्य कोणल्नेट्ट कल्लल्लिं बडगमुखं विळियबाविथिं मूडलागि पडुवणसीमे नडियल्कें भोरांडयल्लि वायव्यद कोणल्नेट्ट कल्लल्लि मूडमुख बडगण सीमे नडियलीशान्यद कोणल्नेट्ट कल्लल्लि तेंकमुख पंचवसदिय मान्यदिं पडुवळागि मूडणसीमे मडियल् नविलहळ्ळदल्लि आग्नेयको-णल्नेट्ट कल्लल्लिं पडुमुख तेंकणसीमे नविलहळ्ळं [।] आ बसदियिं संमन्धद मनेय निवेशनविंमोळनुं गेणु [।] बाचेयविडिय राजहस्तदला वसदियिं बडगळ् राजवीथियिं मूडल् पडुवणे क्केय हस्तं नाल्वत्तु सिरिवागिल कल्लिं मूडळ् पंचवसदिय केरियल्लिगे बडगणेक्केय हस्तविप्पत्तारु आ केरियिं पडुवण भागं विडिदु मूडणेक्केय हस्त नाल्वत्तु तेंकणेक्केय हस्त ऐवत्तेरडा मान्य दोळगणगडि नल्कु गाणवोन्दा बसदिय वणबेय निवेशनवय्दु [।] ऊरिं पडुवळ् हूदोटद कंब मूवत्तु [॥] मत्तमा ऊर सन्तेय माडल् वेडिचे ळगले मुख्यवागि नल्कुंपट्टणद सेट्टियरुं महानाडागि नेरेदिद्दल्लि आ शान्तिनाथदेवर नित्याभिषेकक्कमष्टविधार्च्चनेग सर्व्वंबाधापरिहारवागि विट्ट एत्तु कत्ते कोण मोदळादवरवत्तु ६० ॥ मत्तमेळुवरे इनोन्दुवरेय समस्त मुमुरिदण्डं मुख्यवागि नाडुगळ् विट्टायद क्रममेन्तेन्दोडे [।] सकळधान्यमाउद वन्दड हेरैंगोमनं [।] मंडिगे वळ्ळवेरडु [।] हसरकडके औदु [।] हेवैगेले नूरु [।] होत्तळकेय्यत्तु हाडक्कें सोल्लिगे एण्णे उलेय होरे मारितक्के

ओन्दु कट्टोले[।] किरुकुळमेनु मारिदडं सट्ठुगायं हिडिवत्ति [।] कण्पगे मडिके वन्दु॥

श्रीजन्मायत मूर्ति तीर्थमहिमाविस्तारि धात्रीस्फुरत् ।

तेजश्चक्रधरं जगनुतयश तन्नन्ददिंदेन्दु रा -॥

राजिप्पी जिन शान्तिनाथ नवनीनाथप्रणुतोदयं ।

राजक्ष्मापतिगीगे बेळ्प वरवं चन्द्रार्कचारावरं ॥

ललितपदार्थालंकृतिगळिनोसर्वं रसंगळिंदे बुधरोळ् पुळकावळि सस्यमोगेये कविकुलतिलकं शासनमनोल्दु पेळ्दं पार्श्वं ॥

बहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजभिस्सगरादिभि [।] यस्य यस्य यदा भूमिह (मिस्त) स्य तस्य तदा फलम् ॥ गण्यन्ते पासवो भूमेर्गण्यन्ते वृष्टिबिन्दव [।] न गं (ग) ण्यते विधात्रापि धर्म्मसंरक्षणे फलं ॥ स्वदत्ता परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धरां [।] षष्टिर्व्वर्ष सहस्राणि विष्टाया जायते क्रुमि ॥ सामान्योयं धर्मसेतुर्न्नृपाणा काले काले पालनीयो भवद्भि । सर्व्वा (र्व्वा) नेतान्भाविनः पार्थिवेन्द्रान्भूयो भूयो याचते रामचन्द्र ॥ मद्वंशजाः परमहीपतिवंशजा वा पापादपेतमनसा भुवि भूमिपालाः । ये पालयन्ति मम धर्ममिमं समग्रं तेभ्यो मया विरचितांजलिरेष मूर्ध्नि । मंगळमहा श्री श्री [॥] अर्हते नम ।

[JB, X, p. 173–175, a ; p. 220–228, t.; p. 229–239, tr. (ins. No. 5).]

४४०

पुरले;—कन्नड—भग्न ।

वर्ष रक्ताक्ष [१२०४ ई० (लू . राइस) ।]

[वीर सोमेश्वर मन्दिरमें, लिङ्गके आसन-पाषाणपर]

रक्ताक्षि-संवत्सरद भाद्रपद-शुद्ध १३ आं स्वस्ति श्री वीर-बल्लाळ-देवरु [··· ··] समुद्रद नेलेवीडिनल्लु सुखदि राज्यं गेय्युत्तिरे श्रीमतु-महा प्रधान हिरिय-हेडेय-असवर मारय्यङ्गळ सन्निधानदल्लु······दण्णायक विष्णु········हेम-गावुण्ड हडवळकालय्य गङ्ग-गावुण्ड बप्प-गावुण्ड गायि-गावुण्ड माञ्च-गावुण्ड लक्क-गावुण्डुगळु वयिचय्य होन्नय्य-मुख्यवाद समस्त-प्रभु-गावुण्डुगळ

तम्मगागि ··· कुन्तलापुरदल्लि सदाचारय्यरप्प नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवरिगे नाळु-प्रभु·········सावन्त-मारय्यनु विचारिसि····· काळ-गावुण्ड······ मयण पेम्म ·····दियरं कण्डु तव··········वरद शीलाशासनवं तोडदु बलात्कारदि तम्म भक्तियागे सलुत्त········ वेण्णवळिळ-यल्लि··········कोण्डु नाळ्-प्रभुगळु अधिकारि सावन्त-मारय्यनुं मनद्धारेयागि नेमिचन्द्र-भट्टारकदेवर कालं तोळदु धारा-पूर्व्वकवागि······शिला-शासनवं बरेदु बेनवसेय दोडिकेय··(महेशाके अन्तिम वाक्यावयव तथा श्लोक)

[(उक्त मितिको) जिस समय वीर-बल्लाल-देव दोरसमुद्रके निवासस्थानमें था;—प्रधान मन्त्री हिरिय-हेडेय-असवरमारय्यकी उपस्थितिमें, तमाम सरदार और किसानोंने (बहुत-सोंके नाम दिये हैं), कुन्तलापुरके आचार्य नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवके लिये·········· ;—सावन्त मारय्यने जाच-पड़ताल करके, जबर्दस्ती, उस लिखे हुए शिला-शासनको मिटवा दिया और अधिकारी सावन्त-मारय्यके साथ मिलकर, नाळ्-प्रभुओंने, नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालन-पूर्वक ·····एक शिला-शासन लिखवा करके दिया ।]

[E C, VII, Shimoga tl., No 65.]

४५१

शोग्ग;—कन्नड़

[बिना काल निर्देशका, पर लगभग १२०१ ई० का]

[शोग्गमें, वीरभद्र मन्दिरके दरवाजेके साँचेके दोनों ओर]

(बाईं ओर)

माडिसिदं जिनालयमन्·······एल्लियुमिल्ल ऊरेनल् ।
नाडे विराजिसल् बेळगवत्तिय-नाडोळनून-भक्तियिम् ।
कूडे विभूतियष्ट-विधार्च्चनेयेम्बिऊ कुन्ददन्तु कोण्ड- ।
आडुतविर्प्पेनिन्दुवेनलीचणनन्तिरे भव्यनावव (न) म् ॥
ऊरोळ् तप्पदे बसदियन् ।
ओरन्तिरे माडि बेळगवत्तिय-नाडम् ।

घारिणिगे नेगळ्द् कोपणक् ।-
ओरगे माडिदनुदार-निधियीचरसन् ॥

(दायीं ओर)

एरेयन देय्यवाऊददु तन्नय देय्वमदाऊदातनोळ् ।
नेरद् गुणोन्नतिक्केयदु तन्नय मिक्क-गुणोन्नतिक्के कण् ।
देरदडदाव धर्म्मवधिनाथनोळन्तदे तन्न धर्म्मवेन्द् ।
एसकदे मन्त्रियीचणन वल्लभे सोवल-देवि माविपळ् ॥
नगेनगे मोगवम्बुजमम् ।
मिगे मृग-वीक्षणमनीक्षणं मिगे मृगधरनम् ।
तेगळे मोख-कान्ति चेल्वम् ।
त्रि-गुणिसिदुदु निन्न रूपु सोवल-देवि ॥

[ईचणने वेळगवत्ति-नाड्में ऐसा एक जिनालय बनवाया जैसा उस प्रदेशमें और कहीं नहीं था । और इस तरह वेलगवत्ति-नाड्को कोपणके समान बना दिया । मंत्री ईचणकी पत्नी सोवल-देवीकी प्रशंसा ।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 317]

४५२

बळ्ळगेरे—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक ११२७ = १२०५ ई०]

[बळ्ळगेरे (यगटे परगना) में, बाण-रङ्गनाथ मन्दिरके बाहरी आँगनके एक पाषाण पर]

नमः सिद्धेभ्यः ॥ भद्रमस्तु जिन-शासनाय ।
श्रीमत्-परमगंभीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराज परमेश्वर परम-भट्टारकं चालुक्याभरणं श्रीमद्-भू-वल्लभ पेर्म्माडि-रायं कल्याणद नेले-वीडिनोळ् समस्त-सकल-भूमियं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनं गेय्दु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्ये । स्वस्ति सम-

विगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरं यादव-कुला-म्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि त्रिभुवन-मल्ल तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-हानुङ्गल्-उच्चंगि-बनवसे- हलसिगे-हुलिगेरे- बेळुवल-गोण्ड भुज-बल- वीर-गंग- विष्णुवर्द्धन-होय्सळ-देवरु गंगवाडि-नोणम्बवाडि-बेळुवल-नाड दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनं गेय्दु हानुङ्गल नेले-वीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे। अन्तातनग्र-तनूज **नरसिंह**-भूपालकम्।

वृत्त ॥ देवो देव-गिरीन्द्र-रुद्र-शिखर-व्याकीर्ण्ण-कीर्त्ति-ध्वजो।

देवश्चण्डवर-प्रताप-महिमावन्या च लङ्केश्वरः।
देवो भव्य विदग्ध-मुग्ध-सुदती-प्रख्यात-मीनध्वजो।
देवश्री-**नरसिंह**-भूपतिरसौ जीयात् स्थिरं भूतले ॥
सवधि-व्यावेष्टितोर्व्वी-पति ए निसि सुखं बाळ्गे चन्द्रार्क-तारं।
सुरराजं लीलेयिन्दं **यदु-कुळ**-तिळकं [वीर-] सङ्ग्राम-रामं।
पिरिदुं विक्रान्तदिन्दं निज-भुज-विजय गङ्ग-भूमण्डलेशं।
नरसिंहं भूमि-पालं स्थिर-त...लक्ष्मी-वल्लभ होय्सणेशं ॥

आतन तनयन तोल्-वलद पेम्मेयेन्तेन्दोडे।

जय-जाया-प्रिय-वल्लभ सकळ-भूभृन्-मस्तक-न्यस्त-पा-।
द-युगं दोर्ब्बळ-हस्तनप्रतिमनत्योदार्यनत्यूर्जितो-।
दयनत्यद्भुत-विक्रमं [. रिपु-बळ-प्रध्वंस निश्शेष-निर्-।
दय निस्त्रिंश-निरर्गळ] नियमदिं **बल्लाळ**-भूपालकम् ॥
काळगदोळ् निशात-करवाळ-हतक्के हत-प्रभर् मही-।
पाळकरोडि पोक्कु गहनान्तरदोळ् तुमेयळुवे वन्य -मृ-।
बाळदाळिद्द् हङ्गलने हुण्णेनलम्मदे कायि कायि ब-।
ल्लाळ-नृपाळ येम्बिदने पम्बलसिद्दुदु वैरि-संकुळम् ॥

स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वरं परम-भट्टारकं **यादव-कुलाम्बर-**द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेराज-राज मलेपरोल् गण्ड कदन-प्रचण्ड शूरनेकाङ्ग-

वीर निश्शङ्क-मल्ल प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सल-वीर-बल्लाल-देवर गङ्गवाडि-नोण-म्बवाडि-बनवासि-हानुङ्गल्लु यरदरु-नूरु-राजधानियं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनं गेय्दु लोक्कु-गुण्डिय नेले-वीडिं सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तिरे। तत्पादपद्मो-पजीवि। स्वस्ति श्रीमन्महा-सामन्ताधिपति महा सामन्त-चरण निर्गुण्डद चट्टय्य-नायकर प्रतापं एन्तेन्दोडे।

श्रियं श्री-गोरियं पेररदोळेडदोळप्पिर्द्दवर्व्विश्व-लोक-।
ख्यातं मालारिय-माला-परममृत-पयोराशि-कैलाश-नित्य-।
श्रेयोर्द्धि-त्रि-यत्नं नेगर्द्द हरि-हरकुंचु सामन्त-चट्टं -
मारिट्टम्बर्मं सुराचलमनोक्कैसिट्टु डिक्किट्ट तत्-।
पारावारमनन्तुविन्तुवळेदुम्मुत्तुगियुं [पोगियुं]।
पारं-गण्डरुण्डु पोलिपडे पेन्गि विण्पिनि गुण्पिनिन्-।
दारुं पोलिपरे वोलन्य-प्रितना-संवट्टनं चट्टनम् ॥
बन्देरेदङ्गे कोट्टु सले वैरिगे वेङ्कडनेन्दु वेम्बिदा-।
बन्दमो तन्नोळिक्का भयदा-भय्यमं पगेगीवनुन्ते चि-।
त्रं दलेनुतु मत्तं पोगळ्गुं वसुधा-तळवर्क्करिन्दे निर्-।
गुन्दद चट्टनं रिपु-घरट्टननिन्दु-ललाट-पट्टनम् ॥

आतनन्वयमेन्तेन्दोडे।

दोरेवेत्ताहवमल्ल-देव-महिपं कल्याणदोळ् नोडे मच्-।
चरदिं धर्म्म-तनूजनेक्कवुळदिं दोड्डक्कदोळ् कादे निर्-।
भरदिं गेर्ण्दयाल्के पोय्दु तळदिं वायिं भूगिल्लेन्दु ने-।
त्तरुगल् कोन्दु तल-प्रहारि-बेसरं कैकोण्डना-गण्डमम् ॥

क॥ वडेदिरदाहवमल्लं। कुडे नेगर्द तल-प्रहारियुं दोड्डकम्-।
बडिवन्तुवेने पडेदं मि-। क्कडफिल-बेसरं प्रचण्डरार् गण्डमनिम् ॥
आ-गण्डम-वीर-मनो-। रागाविळे मुर्द्दियकनवरिव्वर्गम् ।
चागक्कं चलकं मिक्क्। आगरवेने तनयनादनाहवमल्लम् ॥

आ-नेगर्दाइवमल्लन । मानिनि होन्नव्वेयवर्गे सुतनहित-मरुत्-।
सूनु-हिरिदीव दिनकर-। सूनुवेनल् मिक्क माचनग्र-तनूजम् ॥
पेर्म्मेय सितगर-गण्ड-वे-र्ग्गिमगे विष्णु-नृपनरिये कटकदोळेन्-।
दोम्मोंदले रेवि-शेट्टिय । बम्मंननम्मेन्दु कोन्दु कूरने माचम् ॥
आ-सितगर-गण्डङ्गं । श्री-सतियम्मिगुव माळियक्कङ्गं सन्-
न्नासित-रिपु-बळनधिक-वि-। ळास सामन्त-मल्लनार्थं तनयं ॥
पुट्टलोडं चातुर्यं । कट्टायं शौर्य-वाप्पुमोल्पुं सोवगुम् ।
नेट्टनिविन्तिवुतन्नोडव् । इट्टिदुवेने नेगळ्दं मल्लन सुदृत्-सेव्वं ।

आतन पराक्रमवेन्तेन्दोडे ।

प्रकटं दोर्व्वळदुर्व्विनिं सु-भटनासामन्त-मल्लं रणा-।
नकमुणमल्किदिरागि तागिदरि-सेना-चक्रमं सीळ्‌ पोय्-।
ये कबन्धं कुणिदाडे वीरर सिरं बीरेळे मारान्त-रा-।
वुकनं कोन्देरडानेयं पिडिदना-चक्कळवनुगराजियोळ् ॥
तोळ्वलद बलदे मल्लम् । वळुवळ वळेदोगेद कोपदिन्दं हयमं ॥
तळुविल्लदे पायिसि चं-। गाळ्वन मद-करियनिरिदु कोडेयं कोण्डम् ॥
आ-मल्लेय-सामन्तन । सीमन्तिनि सोमियक्कनवर्गे कान्ति-।
प्रेमात्मजरेनलिवरोळ् । सामन्तादित्यनाद्नग्र-तनूजम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-प्रधानं सर्व्वाधिकारि महा-पसायितं भेरुण्डन-मोत्तदिष्टायकं अमितय्य-दण्णायकर प्रतापमेन्तेन्दोडे ।

मनेयोळ् मन्त्रि-प्रधानं मोनेयोळदट्ना-कोपडोळ् निर्व्विकारं ।
धनदोळ् विश्वासि हेन्नोळ् सुचि निज-पददोळ् भक्तनेन्दोल्दु बल्ला-।
ळ-नृपाळम् यादव-श्री-पति कुडे पडेदं दण्डनाथत्वमं ता-।
नेने दण्डाधीसरोळ् मिक्क मितनोळेणेयर् सामि-सम्पत्तियिन्दं ॥
गुणि गम्भीरं प्रसिद्धं पति-हितनदटं धार्म्मिकं गोत्र-चिन्ता-।
मणि वीरं दानि दक्षं पटु शुभ-मति पुण्याधिकं मंत्रि-चूडा-।

मणि सेव्यं सौ [म्य-र] म्याकृति कलि कुलज सच्चरित्रं सभामू-।
षण-रत्नं-सत्य-भाषा-नमितनमित-दण्डाधिपं कीर्त्तिवेत्तम् ॥
आतन वंशोदयमं । माता-पितृगळ महत्त्वमं सहजात-।
ख्यातियनुदितोदित-पु-। ण्यातिशयमनर्त्तियिन्दमभिवर्ण्णिसुवेम् ॥
चवलतेयङ्कुरितं प-। ल्लवितं कुसुमितमिदेनिसि फळितं तन्नु-
द्भवदिनेने मूरु-वर्ण्णद । नव-मणि-कळसं चतुर्त्थ-वर्ण्णमदेसेगुम् ॥
आ कुलदोळ् पुट्टिदन-। व्याकुळ-पुण्य समस्त-समयाधारम् ।
लोक-प्रसिद्धनखिळ-क- । ळा-कुशल चेट्टि-सेट्टि चारु-चरित्रम् ॥
एने नेगळ्द चेट्टि-सेट्टिग-। वनुपमे जक्कव्वेग कुलक्कनुरागम् ।
ननियिसे जनियिसिदं पेम्- । पिन हरियम-शेट्टि सकल-लोक-ख्यातं ॥
ऐसवा-हरियम-शेट्टिगे । मिसुगुव सुग्गव्वेगोगेदरमृत-चमूना-।
थ-समेतं कल्लय्यं । मसणय्य वसवय्यनेम्ब नाल्वर् तनयर् ॥
एसेवी बल्लाळ-वाणीपतिगे मिसुप नाल्कुं मोग वीर-बल्ला-।
ल-सरोजाक्षङ्गे नाल्कुं भुज रुचिर-यशो-भागि-बल्लाळ-भूभृत्-
वसुधा-चक्कक्के नाल्कुं बळधियमृत-दण्डाधिपं मन्त्रि-कल्लम् ।
मसणय्यं दण्डनाथं वसवनुरु-वचो-वीर-गाम्भीर्य्यदिन्दम् ॥
तन्नेसेव जन्म-भूमि-ज- । गन्नुतमा-लोक्कुगुण्डि पृथ्विगे सलेयोळ्-।
पिन्नेगळदनल्लि पुट्टिद । पोन्नन्तिरे तोळगुवमृत-दण्डाधीशं ॥
एळ्गेयोळावे पेळ्वडे पेळवे येत्तिसिदत्युदग्र-दे- ।
वाळयवोल्दु कट्टिसिद पेर्ग्गेरेयिक्कुव-सत्रवोर्म्मेयिम् ।
पाळिसुवग्रहार-चयविहरवट्टिगे यम्निवेय्दे व- ।
ल्लाळन दण्डनाथ नमृतं गुणि दानि कृतार्थनेम्बुदम् ॥
अमम जगक्के तन्न नुडि ओन्दमृतं नगेवेत्त नोटवोन्द् ।
अमृतवुदारवोन्दमृतवादरवोन्दमृतं विवेकवोन्द् ।
अमृतवेनल्के होय्सळ-नृपाळन राजित-राज्यदोळग् [अद्] ओन्द्
अमृतमेनिप्प मंत्रि-यमृतंगमृतं समनागलाप्पुदो ॥

अमर्दल्लिये नेलसिदनोसे- । दु महेश्वरनेन्दोडमृत-दण्डेश्वरनोल्द् ।
अमृत-समुद्रदोळेत्तिसिद् । अमृतेश्वर-निळयवगलिदिनेतुन् [न] तमो ॥

अवर गुरु-कुळान्वयमेन्तेन्दोडे ।

इदे हंसी-वृन्दमीण्दळ् बोदपुदु चकोरी-चयं चञ्चुविन्दम् ।
कदुंकल् साइंपुदीसमुडियोळिरिसलेन्दिर्द्दप सेज्जेगेरळ् ।
पडेदर्प्पं कृष्णनेम्बन्तेसेदु विस-लसत्-कन्दली-षण्ड-कान्तम् ।
पुडिदत्ती-मेघचन्द्र-व्रती-तिळक-जगद्वर्त्ति-कीर्ति-प्रकाशम् ॥

अवर शिष्यरु **प्रभाचन्द्र-सिद्धान्त-देवरु** ।

जिन-धर्म्मोद्यान-षण्ड-प्रथित-पृथु-लसत्-तोषमं वाग्वधूटी ।
स्तन-हार भव्य-पङ्केरुह-दिवसकरं काम-मत्तेभ-सिंहम् ।
विनुतं सिद्धान्त-चन्द्रेश्वरनेने पेसर्व्वेत्तं **प्रभाचन्द्र**-योगी- ।
न्द्रन पुत्रं सच्चरित्रं मुनि-पति-**जिनचन्द्रं** गुणाम्भोधि-चन्द्रम् ॥

अवर शिष्यरु **नयकीर्त्ति-पण्डित-देवरु** । अवर पुत्र **चट्टिय नेमय केरेयण** । अन्ता-श्रीमन्महा-प्रधानं **अमितय्य-दण्णायकरुं** कल्लय्य-मसणय्य बसवय्य-दण्णायकरु तम्मर्दि··र **चोक्कलुगेरेयलु येकोटि-जिनालयव** प्रतिष्ठेयं माडिसि तमगभ्युदय-निमित्तवागियु धर्म्म-प्रतिष्ठेयं माडिसि बाहुबेयनायक आदेय-नायक······य-नायक चट्टेय-नायकनुं समस्त-प्रजे-गावुण्डगळुविद्दु **शान्तिनाथ-देवरष्ट-विधार्च्चनेगं** ऋषियराहार-दानक्कवागि बिट्ट दत्तियेन्तेन्दडे (आगेकी ६ पंक्तियोंमें धानकी चर्चा है) यिन्तिनितुम **शक-वर्ष ११२७ नेय-दुन्दुभि-संवत्सरद उत्तरायण-संक्रमणदन्दु** श्रीमन्महा-प्रधान-अमितय्य-दण्णायक मरिमल्लेय-नायक चेट्टेय-नायकनुं **नयकीर्त्ति-पण्डितर** कालं कर्च्चि धारा-पू······ (आगेकी पांच पंक्तियोंमें इमेशाके अन्तिम श्लोक हैं)

[प्रारम्भिक भागमें नारसिंह-देव तकके होयसळ राजाओंका वर्णन है । उसका पुत्र बल्लाळ था ।

जिस समय (अपने पदों सहित) होय्सळ वीर-बल्लाळ-देव गङ्गवाडि, नोणम्बवाडि, बनवासि, हन्नुङ्गल्, और दो छ सौ की राजधानीमें दुष्ट-निग्रह और शिष्ट-प्रतिपाळन करता हुआ अपने लोक्कुगुण्डीके निवास स्थानमें था :—

तत्पाद पद्मोपजीवी निरुगुण्डका चट्टय-नायक था, (उसकी प्रशंसायें)। उसकी परम्परा निम्न भाँति थी:—बर्म्मका पुत्र गण्डम था। बर्म्मको एक नाम और मिला था और वह था 'तलप्रहारी'। कारण यह था कि उसने आहवमल्ल-देवको कल्याणमें ऐसा हाथका प्रहार किया कि जिससे उसके गालोंसे खून बह निकला; अत एव उसका नाम 'तल-प्रहारी' पड़ गया। उसे आहवमल्लसे 'दोड्डक्क-चडिवन्' का भी नाम मिला। गण्डम और मुदियक्कसे आहवमल्ल नामका पुत्र उत्पन्न हुआ था। उसकी पत्निका नाम होनब्बे था, और उनका पुत्र माच था, जिसको राजा विष्णुने रवि-सेट्टिके पुत्र बम्मंको पड़ावमें मारनेसे 'सितगर-गण्ड' का नाम दिया। उससे और मालियक्कसे मल्ल उत्पन्न हुआ। उसने रेवुकको मारा और चङ्गाल्वकी लड़ाईमें उसके दो हाथियोंको पकड़ लिया और उसके घोड़े पर भी प्रहार किया, चङ्गाल्वके उन्मत्त हाथीको भाला मारा और उसका छत्र ले लिया। उसकी पत्नी सोमियक्क थी, और उनका ज्येष्ठ पुत्र आदित्य था।

महाप्रधान (मंत्री), सर्व्वाधिकारी अमितय्य दण्णायक था (उसकी प्रशंसा)। चेट्टि-सेट्टि और बकव्वेसे हिरियम-सेट्टि उत्पन्न हुआ था। उसकी पत्नी सुगव्वे से अमृत-चमूनाथ, कल्लय्य, मसणय्य और बसवय्य, ये चार पुत्र उत्पन्न हुये। अपने निवास स्थान लोक्कुगुण्डीमें अमृतदण्डाधीशने एक मन्दिर, एक बड़ा तालाब बनवाया, एक सत्र स्थापित किया एक अग्रहार बनवाया तथा एक प्याऊ बिठायी।

उसके गुरुओंकी परम्परा —मेघचन्द्र-प्रभाचन्द्र-सिद्धान्त-देव। उनका पुत्र जिनचन्द्र-नयकीर्ति-पण्डित-देव, इनका पुत्र चट्टिय-नेमय केरेयण। अमितय्य

दण्णायकने, अपने उन चारों भाइयोंके साथ, ओक्कुगेरेमें येक्कोटि-जिनालयकी स्थापना की और (उक्त मितिको) नयकीर्त्ति-पण्डितके पाद-प्रक्षालन-पूर्वक दान दिया ।]

[EC, VI, Kadur tl., No. 36.]

४५३

बलगाम्बे;—कन्नड ।

[शक ११२७ = १२०५ ई०]

सारांश

यह शासन हळ कन्नड[1] भाषामें बेलगाँव (बलगाम्बे) में एक पेगोडा (बस्ति) की दीवालोंपर उत्कीर्ण है । काल शक ११२७ (१२०६ ई०) ।

यह एक जैन बस्तिके लिए एक जैन राजाके द्वारा दिया गया एक गाँवका दान है, जिसने कर्णाटकमें वेणुग्राम (वेलगाम = बलगाम्बे) पर शासन किया था, (इस वंशका एक राजा सेन राजा है, जो भारतवर्षमें प्रसिद्ध है ।)

इस शासनमें पाँच राजाओंका वर्णन आया है, जो शक १०२७ से शक ११२७ तकके एक राजवंशका वर्णन करता है । वे पांच राजा ये हैं:—१. सेन राजा; २. उसका पुत्र कार्त्तवीर्य; ३. उसका पुत्र लक्ष्मीभूपति; ४ और ५. उसके पुत्र कलि-कार्त्तवीर्य और मल्लिकार्जुन । यह दान शक सं० ११२७, रक्ताक्षि संवत्सर, द्वितीय पौष सुद, बुधवार, मकरसंक्रान्तिके दिन किया गया था । यह दान कुल-गुरु चन्द्रदेव भटको जलधारापूर्वक दिया गया था । इसके बाद आठ दिशाओंकी सीमा आती है ।

---

१. यह एक पुरानी कन्नड भाषा है; लिपि और भाषा दोनों ही आधुनिक कन्नड लिपि और भाषा से बहुत कुछ भिन्न हैं, और थोड़े ही लोग इसको पढ़ सकते हैं ।

राय —यह उल्लिखित कुल वही प्रसिद्ध जैन वंश माना जाता है, जिसने कर्नाटकमें, तुलनापुरके पास, कल्याणीमें राज्य किया था, और जिसके अस्तित्वके सूचक मैकेंज़ी (Makenzie) के संग्रहके अनेक शिलालेख हैं। इस लेखमें शिवबुद्ध राजाको पूजनेका भाव प्रगट किया गया है, जो जैनधर्मका रक्षक एवं पोषक था।]

[JRAS, 1835, p. 387-388, No 7, a.; 1839, p. 174-176, No 6 (sic), tr.]

४५४

बेलगाँव;—कन्नड़।

[शक ११२७ = १२०५ ई०]

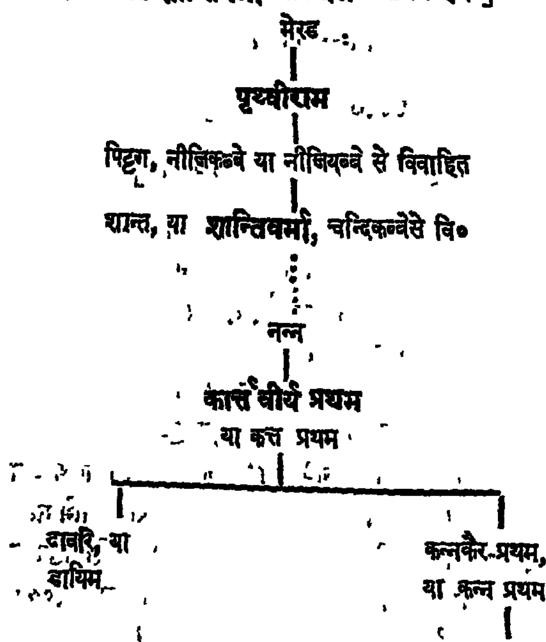
[संभवतः मूल लेख पुरानी कन्नड़ लिपिमें है]

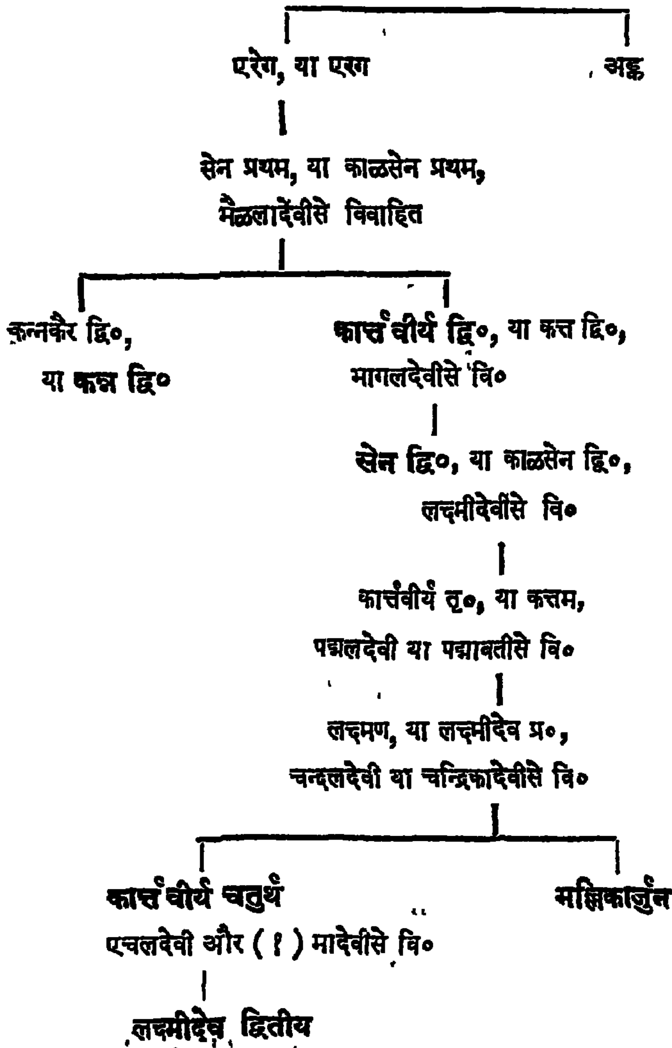
यह लेख दो लेखोंका समाहार (इकट्ठा) है। पहला लेख राजा सेनके वर्णनसे शुरू होता है, यह राष्ट्रकूट वंशी राजाओंकी सूचीमें उसी नामका धारी द्वितीय राजा है। यह वंशावली लेखमें कार्त्तवीर्य और मल्लिकार्जुन इन दोनों भाइयों तक जाती है। इसके बाद किसी एक राजा बीच और उसके पुत्रोंका वर्णन आता है। तत्पश्चात् लेखमें रक्ताक्षि संवत्सर शक वर्ष ११२७ (१२०५-६ ई०), जब सूर्य उत्तरायण हो रहा था पुष्य सुदी २ को शुभचन्द्र-भट्टारकदेवको राजा बीचके द्वारा बनाये गये रट्टोंके जैन मन्दिरके लिये दान करनेका उल्लेख आता है। इस समय वेणुग्राम (बेलगाँव) राजधानीमें महा-सामन्त कार्त्तवीर्यदेव और उनके छोटे भाई युवराजकुमार मल्लिकार्जुनदेव शाही प्रभुताका उपभोग कर रहे थे। जो भूमि दान की गयी थी वह कुण्डी-३००० में अन्तर्गत कोरंवल्ली 'कम्पण' के मम्मरवाणी गाँवकी दी गयी थी।

द्वितीय शिलालेखके, जिसका ऐतिहासिक भाग पहले ही लेख-जैसा है, दान भी ठीक उसी काल, उसी व्यक्ति, और उसी कार्यके लिये किये गये हैं। पर इस लेखमें दान स्वयं वेणुग्रामकी भूमिके थे। इस लेखमें कार्त्तवीर्य तृतीयकी पत्नीका नाम पद्मावती दिया हुआ है। यही नाम दूसरे कनड़ लेखोंमें पद्मल-देवी' आता है।

इन सब ऊपरके शिलालेखों परसे निष्पन्न रट्टोंकी वंशावली इस प्रकार प्रति-फलित होती है:—

[यहां यह ध्यानमें रखना चाहिये कि वंशपरम्परामें सिर्फ एक जगह टूट आती है और वह शान्तिवर्मा और नन्नके बीचमें है।]




एरेग, या एरग
अङ्क
सेन प्रथम, या काळसेन प्रथम,
मैळलादेवीसे विवाहित
कन्नकैर द्वि०,
या कन्न द्वि०
कार्त्तवीर्य द्वि०, या कत्त द्वि०,
भागलदेवीसे वि०
सेन द्वि०, या काळसेन द्वि०,
लक्ष्मीदेवीसे वि०
कार्त्तवीर्य तृ०, या कत्तम,
पद्मलदेवी या पद्मावतीसे वि०
लक्ष्मण, या लक्ष्मीदेव प्र०,
चन्दलदेवी या चन्द्रिकादेवीसे वि०
कार्त्तवीर्य चतुर्थ
एचलदेवी और (?) मादेवीसे वि०
लक्ष्मीदेव द्वितीय
मल्लिकार्जुन

निम्नकोष्ठक से अब तक के आये हुए रट्टोंकी ऐतिहासिक कालावलीका पता एक ही बारके देखने में लग जायगा —

रट्टका नाम	किसके अधीन	इन शिलालेखोंसे विदित काल
पृथ्वीराम······	राष्ट्रकूट कृष्णराज जो शक ७६८ तथा शक ८२५ में शासन कर रहा था।	लगभग शक८००
शान्तिवर्मा······	चालुक्य तैलपदेव द्वितीय, शक ८६५ से ६१६.	शक ६०२
कार्त्तवीर्य प्रथम···	चालुक्य सोमेश्वरदेव प्र०, शक ६६२ ? ६६१ ?	······
अङ्क·· ······	चालुक्य सोमेश्वरदेव प्र०	शक ६७१
कन्न द्वितीय · ···	··· ········	शक १००६
कार्त्तवीर्य द्वि० ··	चालुक्य सोमेश्वर द्वि०,शक ६६१ ? ६६८, और चालुक्य विक्रमादित्य द्वि०, शक ६६८ से १०४६.	शक १०१०
सेन द्वितीय······	चालुक्य विक्रमादित्य द्वि० का पुत्र जयकर्ण। बादमें स्वतन्त्र।	लगभग शक १०५०
कार्त्तवीर्य चतुर्थ, और मल्लिकार्जुन	स्वतन्त्र············	शक ११२४ और ११२७
अकेला कार्त्तवीर्य च.	वही··· ·· ·· ···	शक ११४१
लक्ष्मीदेव द्वितीय···	वही·· ··· ··· ···	शक ११५१

[JB, X, p. 184-185, No 2 II and 12,] a.

४५५

गोग्ग;—कन्नड़—भग्न ।

[काल लुप्त—पर लगभग १२०७ ई०]

[वीरभद्र मन्दिरके पासके एक तीसरे पाषाण पर]

(अग्रभाग घिसा हुआ है)···नेक-श्रृषिय ··· ·· ·· वैशाख सुद्ध ५ वृ··· ··· ··· ···अदके सीप्र बडगल् ·· ·· ··वण तुम्ब केळगे पडुवलु ·· ··· ··· ··· ···मत्तरु १··· ···व ५० अदके चतुस्सीमे नट्ट कल्लु··· ·· ··· ब ५ देवर नन्दा-दिविगेगे गाण १ इत्तेत्तिन बकलु ·· ··· ···हुडिके-देरे हडियदे ग असगर बोकलु १ यिन्तिनितुम सुङ्क··· ··· ···विरुपय्यङ्गलु विट दत्ति समस्त-प्रजेगळिदं कोट्ट धान्यव ग नेल्लु को २ नवणे को २ एळु को १ यिन्तनितु धर्म्ममं श्रीमतु सोवल-देवियरु ई··· ·· कन्या-दान माडि वासुपूज्य-देवर काल कर्च्चि धारा-पूर्व्वक माडिदरु यिन्ती धर्म्ममं नाग-गौडन् ··नय-प्रभेतेयागि प्रतिपाळिसुवरु ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

[(प्रथम अंश नष्ट हो गया है, और उसका अधिकाश मिट गया है) विरूपय्यके द्वारा भूमिका दान । वासुपूज्य-देवके पाद प्रक्षालन-पूर्वक सोवल-देवीके द्वारा (उक्त) अनेक तरहके धान्यका दान, तथा एक कुमारीकी भेंट । इस पुण्यकी रक्षा नाग-गौड, अपनी आँखकी ज्योतिकी तरह, करेगा । हमेशाका अन्तिम श्लोक ।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 321 .]

४५६

गोग्ग; कन्नड़—भग्न ।

[शक ११३० = १२०८ ई०]

[गोग्गामें, वीरभद्र मन्दिरके पासके पाषाण पर]

ऊपरका भाग मिट गया है)··· ··· ··· ···अच्छरिये··· ··· ··· ···बुद्धि

....भोच्चण्ड ...वीर-बळ्ळाल... ... ... अरसंक-कर
... ...वोळगागनेक... ... .. चट्टरस... ... ...

आ-दम्पतिगळ पुण्यदिन् ।
आदं मगनधिक... ... .. ।
... ... ।
... ...विख्यात-सन्धि-विग्रहि ईचं ॥
अभ्याहारादि-शास्त्र... ... ।
... शुभ-चारित्र [ङ्ग] ळिन्दं पर-हित-गुणदिन्दं व्रताचार दिन्दम् ।
शुभ... ... ...उर्वी-नुतं कीर्त्ति-कान्त- ।
प्रभु-मन्त्रोत्साह-शक्ति-त्रय-युतनधिकं सेव्य... ।
पति-हिते सीतेयन्ते जिनपार्श्वकि तेवकियन्ते भर्तृ-सम्-
युते गिरिजातेयन्ते... ...लक्ष्मियन्ते सु- ।
व्रते नेगळद् तिम्मवे... ...न्विते वाणियन्ते ता।न् ।
अतिशयस् इर्द्दळ्... ... ...अङ्गने सोवल-देवि धात्रियोळ् ॥
...सति पद्मसंभवनोळद्रिजे चन्द्र... ...नोळ् ।
परम सुख-प्रशस्ते सिरि विष्णुविनोळ् नेलसिप्प माल्केयिं ॥
स्थिरतर... .. ...सोवल-देवि मनोनुरागदिं ।
निरुपम-सन्धि-विग्रहि-सिखामणियीचनोळी-... ... ॥

[(लेखका प्रथम अंश नष्ट हो गया है, और उसका अधिकांश मिट गया है) ।

ईच और उसकी पत्नी सोमल-देवीकी प्रशंसा । उनके गुरु-परम्परा (गुरु-कुल) की तारीफ—लेखमें सिर्फ चन्द्रप्रभाचार्यका नाम रह गया है ।

महामण्डलेश्वर मल्लि-देवरस सन्धि-विग्रही मंत्री एचकी पत्नी सोवग-देवीने, अपने छोटे भाई ईचके मर जाने पर, एक बसदिका निर्म्माण किया;—भगवान शान्तिनाथकी अष्टविध पूजनके लिये, और मन्दिरकी मरम्मतके लिये, (उक्त मितिको) चन्द्रग्रहणके समय, (उक्त) भूमिका दान किया ।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 320.]

४५७

सोरब;–संस्कृत तथा कन्नड़ ।

—[शक ११३० (?)=१२०८ ई०]—

[सोरबमें, दण्डावती नदीके पूर्वी किनारे पर अवधूत-मण्डपके स्तम्भपर]

श्रीमत्परमगंभीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिन-शासनम् ॥
अम्बुधि-कमळाकरदोळ् ।
जम्बु-द्वीपाब्जदोन्दु-कर्णिकेयेनिकुम् ।
पोम्बेट्टदरिं तेङ्कलु ।
चेम्बेट्टेस्ळेनिपुदल्ते भारत-क्षेत्रम् ॥
भरत-श्री-भूषणदन्त्-।
इरे कुन्तण-देस मक्षि नायक-मणियन्त् ।
उरुतर-शोभा-विक्रम-।
करमेने बनवास-देसमोळुपं पडेगुम् ॥
तद्देशाद्यनेक-जळनिधि-वळय-वळयित-देशाधिपति ।
यी-वसुधाग्रमं यदु-कुळङ्क सळंगे कुडल्के कुत्तुं प-।
ञावतियं सुदत्त-मुनिपर् ब्बरिसल् पुलियागि बप्पुंदुम् ।
माविसे नोडि पोय् शळयेनळ मुनिपर् स्सेळेयिन्दे पोय्दु तद्-
देविगे शौर्य्यमं मेरेदु पोय्सळ-नाममनान्तना-नृप ॥
अन्तु सुदत्ताचारियर् प्पद्मावती-देवियिं पडेदित्त……रदिं तदन्वयदोळनेक मुदितोदितमागे राज्य गेद वळिय ॥

उदयिसिदनमृत-वार्धियो ।
ळ् उदयं-गोय्दमर-भूजमेन्दिनेगं चेल्व्-।
ओदविरे वल्लाळ-नृपम् ।

यदु-कुलदोळु विशद-कीर्त्ति दानाभरणम् ।
घुर-रङ्गं नृत्य-रङ्गं पर-नृपति-कपाळाळि ताळाळि नन्दन्-।
चरियकंळ् पाडुवर् तद्विजय-रुह-यशं दुन्दुभि-ध्वानमागुत्त् ।
इरे विद्विष्टोवनिपाळक-निकरद रुण्डङ्गळि ताण्डवाडम्-।
बरमं माळ्पोळ्पिनिं नट्टविगनेनिसिदं वीर-बल्लाळ-भूपम् ॥
पगेवर पेण्डिर कण्णिन्द् ।
ओगेदञ्जन-पङ्किताम्बुविन्द वेळकम् ।
मिगुवुदु विचित्रमिन्तिदु ।
जगदोळु बल्लाळ भूप-निज-विशद-यशम् ॥

एने नेगळ्द बल्लाळदेवं दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददि राज्यं गेय्युत्तमिरे ॥

दोरेयेने कोङ्कणि वनवा-।
से-रोहणाचळद पुरुष-कान्ता-विबुधोत्-।
कर-रत्नङ्गळ कणियेने ।
निरन्तर तोळगि बेळगि राजिसुतिर्क्कुम् ॥

तद्ग्रामाधिपति ॥

वनवास-देश-भूषण-।
नेनिपं गावुण्ड-मण्डनं-दिक्-कान्ता-।
स्तन-मण्डल-परिशोभित-।
घनतर-तेजः-प्रकाश-घुसृणं मसणम् ॥

तदपत्य ॥

द्यु-नदी-प्रोत्तुङ्ग-रङ्गद्-बहळ-लहरिकान्दोळनोद्भूत-संघा-।
त-नमेरुद्यल्लतान्तावलि-वळयित-डिण्डीर-पिण्ड-प्रभा-मण्-।
डन-पाण्डु-प्रौढ-कीर्त्ति-प्रसर-विसरितोर्व्वी-नमश्चक्र-दिक्-च-।
क्र-निकाय तानेनिप्पोन्देसकदिनेनसुं कीर्त्ति-गावुण्डनादम् ॥

मननोल्दुवंरे कीर्त्तिकुं मगन्-गाडुण्णेत्तम-प्रेम-नन्-।
दननं धन्दि-बनाधिगात्तं-फळद प्रनद-फल-ढु-नन्-।
दननं दुःखंन-दर्रं-राण्टननुर्वी-भात-गाढण्ट-मण्-।
दननं कीर्त्तिपनिन्दु-मुद-दर-हागोळाधि-धर्-कीर्त्तियन् ॥
आर्दीद दानियं घरे ।
कीर्त्तिकुमभिमान-मूर्त्तियं मन-त्तेवम् ।
रहूसिदनी-प्रभु-मण्डन-।
कीर्त्तिनक्कमन-मूर्त्तियं प्रियदिन्तन् ॥

गद्यन्दव ॥

स्रोमं भननयनोत्तळ-।
प्रेमं मसणं तीर्थि-वन-हृत्-रनण्णन् ।
श्री-मदित-महादेवन् ।
प्रेम-महादेवनल्ते रामं रामम् ॥

आ-कीर्त्तिगाडुण्डनणुगिनळिरम् ॥

विततैश्वर्य्यंन माधिनाय-विमर्द-राज-प्रियं दाहिनी-।
पति भोगीश्वर-मूरणं नुत-मृगाङ्क केशव-प्रेम-नि-।
धुनने धौळ्पेनगुं निगादिसे महादेवं महादेवनेम्-।
ब तदीयाङ्कमनन्दिगारथंनेनळर्य-स्पर्किय माडिदन् ॥
नुमनो-मुगर-राद्दितं विपुळ-धार्द बन्धुर-स्कन्ध-मूर्-।
त्ति महीवात-वरं सुप्रम-निचय-स्तुत्य घरा-शेखराद्-।
मि महोदारि दळेन्व तन्नेयकदिन्द भव्य-कल्पावनी-।
क्षोणिपं निखुध-रञ्जतं विभु-महादेवं चमूपोत्तमम् ॥
ओदपल् कण्गिदे मर्त्तुं पोगे रवि लोककरकेय्दे कण्णागि तान् ।
उदयं-गेय्देवोलिन्दु रेन्तरलनिन्द्रत्वके पवागे का-।
गदे मुन्द देमेगेट्टु जैन-जनकेल्लं लोचनं तानेनल्कु ।

उदय-गेय्दनिला-तळ-स्तुत-महादेवं चमूपोत्तमम् ॥
कवि-रिपु गुरु गुरु-रिपु भृगु-। - ' ,
ववरेवरेनल् धरित्रि कवि-गुरु-जनतोद्-।
भवमोदवे मन्त्र-गुणमोपू-।
पुवुदु महादेव-दण्डनाथोत्तमनोळ् ॥
अन्तु कीर्त्ति- गावुण्ड तन्नळिय महादेव-दण्डाधिनाथनुं तटपत्यरुं बेरसु ॥
सल्ललित-गुण-गुणगणं श्री- ।
वल्लभनभिमान-मूर्त्ति कीर्त्ति-वधू-धम्- ।
मिल्ल-विराजित-मल्ली- ।
फुल्लं श्रेष्ठि-प्रतान-मण्डन मल्लम् ॥
एने नेगळ्द मल्ले-सेट्टिग- ।
मनुपम-चरित्र-सीते माचाम्बिकेगम् ।
जनियिसिदं सुकृतं सन्- ।
ननियिसे निज-कुलके नेमनखिळ-ललामम् ॥
नेगळ्दर् गुरुगळ् गुणच्चन्- ।
द्र-गणि-वरम्मूलसंघ (घ)-काणूर्-गणदोळ् ।
सोगयिसुव कुन्द-वंशदो- ।
ळ्सेवरागे नेमनभिजन-रामन् ॥
पर-हित-मूर्ति भव्य-जन-कळ्प-कुजं विभु नेमि-सेट्टि विन्-
तरदोळे कूडे जिड्वळिगे-नाड् पडे-नाडे निसिप्प नाळ्गवोळ् ।
परम-जिनेन्द्र गेहमननेकमनुद्धरिसुत्तमित्तळुद्- ।
धरिसिदनुत्तरोत्तरमेनल् निज-कीर्त्ति-लता-वितानमम् ॥
कोड फणि-पुर-स्तान्मय मेय्- ।
दोडवेनिसिरे नेमि-सेट्टि विभु माडिसिदम् ।
कडु-गोर्व्वि कीर्त्ति-लते दाड्- ।
गुडि विडुविने शान्तिनाथ-जिन-मन्दिरमन् ॥

मनमर्हत्-प्रतिकृतिनिम् ।
तनु सु-व्रतदिं घनं जिनेन्द्रालयसत्-।
जनन-क्रियेयिन्दति-पा ।
वनमागिरे नेमि-सेट्टि नेगळ्दं जगदोळ् ॥

अन्तु नेमि-सेट्टि सक-वर्षद [साविरद] नूर मूवतेनेय विभव-संवत्सरद जेष्ठ शु १० शुक्रवारदोळ् शान्तिनाथ-देवर प्रतिष्ठेय माळ्प कालदोळ् कीर्त्ति गावुण्डनु तत्तनूजरु तन्नाळ्य महादेव-दण्डनायकनुं परिवृत मागिरलु देवरष्ट-विधार्च्चनेगं ऋषियराहारदानकं कोट्ट गद्दे कम्म ५०

वरद-श्री कण्ठ-व्रति-।
परिकिक्रदर् शान्ति-[जि] न-गृहाचार्य्यर्गोप्-।
इरे योग-पट्टगेयना-।
दरदिन्दं वज्र-पञ्जरमनिक्कुववोलु ॥
यिदु जोग-वट्टिगेयनान्-।
तुदु मद्-धर्म्मन् दलेन्द-संख्यात-गणा-।
त्युदित-यशर् प्रतिपालिप-।
रुदात्तदी- शान्तिनाथ-जिन-मन्दिरमम् ॥

[जिन शासन की प्रशंसा ।

जम्बूद्वीप, उसमें भरतक्षेत्र, उसमें कुन्तल देश, उसमे बनवास-देश ।

जिस समय उस तथा समुद्र-परिवेष्टित अन्य देशोंका अधिपति यदुकुलके सळको यह मुख्य क्षेत्र देना चाहता था सुदत्त मुनिपने पद्मावतीको एक चीतेके रूपमे प्रकट करवाया। पद्मावतीको चीतेके रूपमें देखते ही, उन्होंने सलसे कहा—'पोय् सल' (सल, मारो); जिसपर उसने चीतेको सल (डण्डे से) मारा और देवी पद्मावतीको उसके साहसका प्रदर्शन कराया, और इससे राजाका नाम 'पोय्सळ' पड़ गया ।

इस तरह सुदत्ताचार्यके पोय्सळ राज्यकी नीवं गेरनेके बाद उस वंशमें बहुत-से राजा क्रमश हुए। जिनके बाद राजा बल्लाळ उत्पन्न हुआ; उसकी कीर्त्तिकी प्रशंसा।

जिस समय बल्लाळ-देव दोरसमुद्रके निवास स्थानमें था और सुखसे राज्य कर रहा था:—

कोडकणि क्षेत्रका वर्णन। उसका अधिपति मसन था। पुत्र, (प्रशंसा सहित), कीर्त्ति-गावुण्ड था। उसके पुत्र सोम, मसन, महादेव और राम थे। उसका दामाद महादेव-दण्डनाथ था; (उसकी प्रशंसाएँ)।

मल्ल-सेट्टि और माचाम्बिकेसे नेम उत्पन्न हुआ था, जिसके गुरु मूलसंघ तथा काणर-गण के गुणचन्द्र थे। नुन्न-वंशके नेमि-सेट्टिने बिद्दळिगे-नाड् तथा एडे-नाड् में कई जिनेन्द्र-भवन बनवाये थे। कोडकणिमें उसने शान्तिनाथ-जिनालय बनवाया था।

इस प्रकार नेमि-सेट्टिने (उक्त मिति को[1]) शान्तिनाथ-देवकी प्रतिष्ठाके समय, कीर्त्ति-गावुण्ड, उसके पुत्र तथा दामाद महादेव-दण्डनायकसे परिवेष्टित होकर ५० दण्ड प्रमाण धान्य-क्षेत्र भगवानकी अष्टविध पूजाके लिए तथा ऋषियोंके आहारके लिये दानमें दिया।

और श्रीकण्ठ-व्रतिपने शान्ति-जिन मन्दिरके पुजारीको एक योग्य स्थान दिया।

[EC, VIII, Sorab, tl., No. 28]

१—'शक-वर्षवनूर-मूवत्तेनेय,' इसमें हजारकी संख्या लुप्त है।

४५८

अनवेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़ भग्न ।

वर्ष प्रजापति [१२११ ई० (लू० राइस) ।]

[अनवेरी (होळलूरं परगना) में रंगप्पाके खेतमें पड़े हुए पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु ·· **यणन्दि-भट्टारक-देवरु**···अर्हन्त-वोवि-सेट्टि श्री-मूलसंघ-सुर ··· गण **मार-सेट्टिय** मग **चिट्टि-सेट्टि** धर्म्मवं ··· माडिसिद ··· **प्रजापति-संवत्सरद** चैत्र-शुद्ध १० सोमवार श्रीमतु **होय्सण-वीर-बल्लाळ-देव** पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तिरलु कळु ··· तिप्पयङ्गे ·· ··· २० कम्ब केय्य ·······पूर्व्वकं माडि भूमि ······

·· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

(अन्तिम श्लोक)

[कुछ सेट्टि लोगोंने (जिनके नाम दिये हैं), (उक्त मितिको),··· यनन्दि-भट्टारक-देवको, जब कि होय्सण वीर-बल्लाल-देव दुनियाँपर शासन कर रहे थे, दान किया । जिन शासनकी प्रशंसा । हमेशाके अन्तिम श्लोक ।]

[EC, VII, Shimoga tl., No103.]

४५९

बन्दलिके-संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

वर्ष श्रीमुख [१२१३ ई० (लू० राइस) ।]

[बन्दलिके में, शान्तीश्वर बस्तिके उत्तरकी ओरके द्वितीय पाषाणपर]

श्री-मूलसंघ-जलधौ समुदेत्य नित्यम्
क्राणूर्ग्गणोज्ज्वल-सुधाम्बधि तिन्त्रिणीक- ।

गच्छाच्छके ललितकीर्त्ति-मुनेर्व्विनेय
आशाम्बर-श्रियममाच्छुभचन्द्र-देवः ॥
वर्षं-श्रीसुख-मास-चैत्र-सित-पक्षाच्चैः-चतुर्थ्यां-दिने
वारे चान्द्र [...] महति नक्षत्रेऽश्विनी-सञ्ज्ञिके ।
दैने ज्योतिषि कृत्तिका ... परि ... सौभाग्य-योगे वणिग्-
नामाद्योत्करणे स्व ' थ शुभचन्द्राख्य-व्रती योगत ॥
सन्यस्य सर्व्व-सञ्ज्ञानि पठन् पञ्च-पदानि च ।
समाहितो निर्व्वृते शुभचन्द्र-व्रतीश्वर ॥
भरताधीश्वरनिन्दमन्द-शुभचन्द्राभिख्यनिन्देन्दु भा- ।
सुर-जैन-व्रतिनाथनप्प विदितानन्दाभिधाचार्य्यं ... ।
... ... शुभचन्द्र-देव-मुनियिन्द् .. आदुदत्यूर्जितम् ।
सुर-राज्योर्जितवप्प ' ... .. जगत्पावनम् ॥
बन्दणिके-मठाधिपति-शान्ति-जिनावसथाग्रदोळ् जगम् ।
ब ... ... मण्टपमनोप्पिरे मासिसि तन्न कीर्त्ति-या- ।
नन्द ... नाडे भू-भुवन-मण्टपदोळ् ... ... ।
सन्द समाधियन्द ... ... ना शुभचन्द्र-संयुतम् ॥ श्री ॥

[श्री-मूलसंघ, क्राणूर्-गण तथा तिन्त्रिणीक गच्छके, ललितकीर्त्ति-मुनिके आज्ञाकारी, शुभचन्द्र-देव थे । (उक्त मितिको) वह स्वर्ग गये । 'सन्यसन' (समाधि या सल्लेखना) में सब कुछ त्यागकर, पाँच शब्दों (परमेष्ठियोंके वाचक) को उच्चारण करते हुए, उनका मरण होगया । भरतेश्वरसे लेकर ... . बन्दणिकेके मठाधिपतिके लिये ... ... शान्ति बसदिके सामने एक मण्डप खड़ा किया गया था ।

[EC, VII, Shikarpur tl., No 226 .]

४६०

होललकेरे;-संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १२१४ ई० का ?]

[होळलकेरेमें, शान्तेश्वर मन्दिरके पश्चिमकी ओरके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गम्भीर-इत्यादि ॥

स्वस्ति य [म]-नियम-स्वाध्याय ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-समाधिशील-गुण-सम्प-न्नरुं ·· कडियाण प ··· ह क्रमा रुं मध्याह्न-कल्प-वृक्षरुमप्प पार्श्वसेन-भट्टारक-देवरु होळलकेरेय शान्तिनाथ-देवर जीर्ण-जिनालयोद्धारवनु माडिसिद तुर्ग ··· हुज्जिराय-गण्ड-भेरुण्ड पाण्ड्य-राय-प्रतिष्ठपनाचार्य्यं गज-वेण्टेका ·· श्रीमं-महा-प्रताप-चक्रवर्त्ति होयिसण-श्री-वीर-बल्लाळ-देवरु वि ·· ·· पट्टण-दोळु सुख-संकथा-विनोददिं राज्य गेय्युत्तमिरलु तत्पादपद्मोपजीविगळप्प श्रीमनु-महा-प्रधान ··· ·· दण्डनायकर कुमार सोम दण्णायकरु हिरिय-बल्लाळ-दण्णायकरु बेस्मलूर-पट्टणदोळु सुखसंकथा विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे अवर मनेय वळ ·· नायक व ··· नायक नारायण मेच्चि मेच्चे-दन-गण्ड ना ··· नाय-कर गण्ड मूरु सङ्गण रावुत्तर गण्ड श्रीमनु-महा-सामन्ताधिपति वाडद् ··· से-नायकन मग मीसेयर गण्ड वाडद ·· पे-नायकनु होळलकेरेय वीर-वृत्ति-यागि ·· तं विद्दक्ति शक-वर्ष ११३६ नेय श्रीमुख-संवत्सरद फाल्गुन-सु ·· बृहस्पतिवारदलु होळलकेरेय शान्तिनाथ-देवरिगे नित्यो ·· वागि बिट्टदु हिरिय-केरेय हिन्दे होल ··· कोळग ··· ··· ·· ··· हट्टनद ··· ··· ··· वृत्ति ·· ·· ··· ···

[इस लेखका पहला अंश पूर्वगामी लेख नं० ३३८ के अंशसे मिलता है।

जिस समय महा-प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सण वीर-बल्लाल-देव ··· पट्टनमें राज्य करते हुए निवास कर रहे थे :—तत्पादपद्मोपजीवी, महाप्रधान, ·· ·· दण्ड-

नायकके पुत्र सोमदण्णायक जो पुराने बल्लाळ-दण्णायक थे, बेम्मतूर-पट्टणमें, शान्ति से राज्य कर रहे थे :—बहुतसे नायकोंने (जिनके नाम दिये हैं), (उक्त मितिको), होळलकेरेके शान्तिनाथदेवकी पूजाके लिये उक्त भूमिएँ हमेशाकी भेंटके रूपमें दीं ।]

[EC, XI, Holalkere tl., No 2 .]

४६१

श्रवणबेल्गोला,—कन्नड़-भग्न ।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६२

सियाल-बेट;—संस्कृत

[सं० १२७२=१२१५ ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय का है ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 254, t.]

४६३

श्रवणबेल्गोला-कन्नड़-भग्न ।

[वर्ष ईश्वर = १२१७ ई० ? (लू० राइस)]

जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६४

गिरनार-संस्कृत-भग्न ।

(सं० १[२७१] (?) = १२११ ई०)

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay
(ASI, XVI), p. 355 No 14, t. and tr.]

४६५

आर्सीकेरे- संस्कृत और कन्नड ।

[शक ११३१ = १२११ ई०]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलांछनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
श्री-रामावसथं जगज्जननुतं गोत्रास्पदं भूरि-गं- ।
भीरं सत्व-समन्वितं निखिल-वस्तु-स्थानवुर्व्वीतळा- ।
धारं नित्यमुदात्तवप्रतिमवेम्बी-परमेयिं वानिसल् ।
पारावारद-वोल् नेगल्ते-वडेदिक्कुं यादवाख्यान्वयम् ॥
सळनेम्ब तद्-यदुर्व्वीश्वर-कुळ-जनितं जैन-योगीन्द्रनं निर्- ।
म्मळ-चित्तं सादुदुं सन्दिर्प्पुदुवति-कुपितं व्याघ्रनेय्दप्पुदुं होय् ।
सळ येन्दा-योगि पेळ् ··· दे सेळेयोळदं पोय्दु गेल्दकॅरिं होय् ।
सळ-नामं यादवर्गादुदु जसदोदविन्दादवन्दिन्दवित्तल् ॥
आ-होय्सळान्वयदोळुर्व्वियिसिद विनयादित्य-पुत्रनप्पेरेयङ्ग-नृपङ्गव्-
पचल-देविगं पुट्टिद विष्णु-नृपन विक्रमम पेळ्वडे ॥
पर-भूपाळरनिक्कि तद्धरेयनान्तुं यत्नमं माडे बित्- ।

तरदिन्देत्तिसिदा-सुरालय-समूहं प्रेमदिन्दा-तुला- ।
पुरुषं कट्टिसि ··· ··· रेगळ् चित्रग्रहारङ्गळी- ।
धरेयोळ् कूडे निमिर्च्चि ··· बसवनेन्दुं विष्णु-भूपालन ॥
आ-विभुग सति-लकमा- ।
देविगवार्द विशाल-निर्म्मल-कीर्त्ति- ।
श्री-वरनदटर जवन ।
भूवर-गन्धेभ-सिंहनेनिप नृसिंहम् ॥
नेगळ्दा-वीर-नृसिंह-भूमिपतिगं शृंगार-वार ·· ।
·· यप्पेचल-देविग नेगळ्दनुर्व्वी-मण्डन कीर्त्तिग- ।
सिंगनन्यावनिपाळ-दर्प्प-दळन दानोन्नत मा ··· ।
जगती-रक्षण दक्ष-दक्षिण-भुज बल्लाळ भूपालकम् ॥
बुधनन्तिळा-वर वा- ।
र्धियन्ते विशाल-विलसद्षडक्षाणं ।
मधुसखनन्तसमास्त्र ।
सुधाशुधरनन्तुमा-धवं बळ्ळाळम् ॥
सिरि हरिय सङ्गदिं शा- ।
वर-रिपुव पडेद तेरदे बल्लाल-मही- ।
वर-सति पद्मल-माडे- ।
वि रमणि पडेदळ् नृसिंहनं गुण-निधियम् ॥
हृदय-कळकनल्लद जडात्मकनल्लद शीतरोचियेम्- ।
बुदु गुरु-गोत्र-शत्रु-त्रणवल्लद कौशिकनल्लदिन्द्रनेम्- ।
बुदु विपरीतनल्लद कु-जन्मकनल्लद कल्पवृक्षवेम्- ।
बुदु विबुधाश्रयैक-निधियं कुवराग्रण-नारसिंहनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं द्वारावती-पुरवराधीश्वरं यादव-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेराज-राज मले-परोळ् गण्ड कदन-प्रचण्डनेकाङ्ग-वीर निश्शङ्क-प्रताप चक्रवर्त्ति होय्सळ वीर-

बल्लाळ-देवर् सकल-धरित्रियं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाल [न] दिं **दोरसमुद्रद** नेलेवीडिनोळ् सुखदिं राज्य गेय्युत्तुमिरे तदीय-पाद-पद्मोपजीविगळप्प**रसियकेरेय भव्य-नकरङ्गळ** रत्नत्रयाधिष्ठितत्वमे धर्म्म-प्रतिपालन-शक्तियं **कळचुर्य्य-कुळ**-सचिवोत्तमं **रेचरस** केळ्दा बल्लाळन पद-पयोजमनाश्रयिसि तद··· वत्तियं ·· अरसियकेरेयोळ् सहस्र-कूट-जिन-बिम्बमं प्रतिष्ठेयं माडिसिया-देवरष्ट-विधार्च्चनक्कं पूजारि-परिचरकर जीवितक्कं जीर्णोद्धरणक्केन्दा **बल्लाल-भूपनिं** हन्दर-हाळं धारा-पूर्व्वकं पडेदु तमन्वय-गुरुगळ् श्री-**मूल-सङ्घद देशि-गणद पुस्तक-गच्छदिङ्ग-ळेश्वरद** बळियेनिसिद **माघनन्दि-सिद्धान्त-देवर** शिष्यर् **शुभचन्द्र-त्रैविद्य-देवर** शिष्यरप्प श्री-**सागरनन्दि-सिद्धान्त-देवर्गे** धारा-पूर्व्वकवागूरं कोट्टि-धर्म्ममं भव्य-नकरगळ्गे कैय्-तडेयागित्त रेचरसन म ··· ··· नरसियकेरेय पेर्म्मेयं पेळ्वडे ॥

वदनं वाग्-वनिता-विलास-सदनं वक्षं रमा-नर्त्तकी-
विदितानर्त्तवुदारवर्त्थि-जनता-सन्तर्प्पणं कीर्त्ति-कौ- ।
मुदि जैनार्ण्णव-वर्द्धनं गुण-गणं भू-भूषणं मूर्त्ति-चा- ।
रु दयान्वितमेनल्के **रेचण-चमूपं** पेर्म्मेयं ताळ्दिदम् ॥
ओसेदवरिवरेन्नदे स- ।
न्तोसमप्पिनेवित्तु पडेदनी-वसुमत्तियोळ् ।
वसुधैक-बन्धुवेम्बी- ।
पेसरं **रेचरसनुन्तु** देशियिनाव्ते ॥
सारं नोळ्पर्गे पेम्पुळळरसियकेरेयोळ् विश्व-वेदाङ्ग-विप्रर्-
व्वीरर्व्व्याळ्गळाढ्दर्प्परदरचल-वाक्यत्तु रीयर्व्विनूता-
कारं कान्ता-जन कारुगळ-मदरिळा-मण्डनं देगुळं गं- ।
भीरोदारं तटाकं फळ-भरित-वनं पूत-पूदोटवेन्दुम् ॥
नत-भृङ्गाम्भोज-षण्ड शुक-पिक-विविधोद्यान-संकीर्णवापू-
र्णन-तटाकं गन्ध-शाळी-परिमळ-कळितं पुण्ड्र-पुंड्रेक्षु-वापी-

घृतवुत्तुङ्ग-प्रभा-भासुर-सुर-गृह-संपनवुद्यत्प्रभा-पू- ।
रितवुर्व्वी-मण्डनं सन्दरसियकेरेयं वण्णिसल् बल्लनावम् ॥
जिन-धर्म्मवादियागिर्- ।
द्द निखिळ-धर्म्मङ्गळं समन्तनुनयदिन्- ।
दे निमिर्च्चि नडयिपस्संज्- ।
जनररसियकेरेय सायिरोफल् सततम् ॥
आ-सायिरोफल् तमगाधारवागिर्प्प भव्यर पेर्म्मेयेन्तेने ॥
नुडि सत्योद्योत-गेहं नडेवळे जिनधर्मानुगं शक्रनिं नाल्- ।
मडि जैनाङ्घ्रि-द्वयाराधने धनद-निभं पेर्म्मे सत्पात्रदोळ् मेय्- ।
वडेदिर्क्कुं दानधर्त्थोर्ज्जने निखिळ-जनोत्साहवावन्ददेम् नोळ् ।
पडे पेम्पं वाळ्दि सन्दीयरसियकेरेया भव्यरोळ् पाटियावम् ॥
भू-भुवनदोळरसियकेरे- ।
या भव्यगुण-गण-प्रसन्नस्सुजनर् ।
ल्लोभ-विवर्जितराद्दा- ।
ग भय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदर् ॥
एसेये सहस्र-कूट-जिन-बिम्बमनप्रणि रेच मुं प्रति- ।
ष्ठिसि [.] वनकके भव्य-तति कोटेयनिक्किसि गोटेयिन्दवे- ।
त्तिसि गृहमं नेगळ्दरसियकेरेयोळ् गृह-गतियागि पेम्प्- ॥
ओसेये नृपं ··· ··· द्दंस-निष्क्रमना-धरित्रियम् ॥
एळ्-कोटिगळी-धर्म्मम- ।
नळ्कर पेर्च्चिन्दे नडेयिप ··· नेळे- ।
योळ् ··· ल्वे ··· धर्म्म-मन्दिर- ।
र् पेल्कोटि-जिनालयाङ्कमादत्तादम् ॥

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमत्-तेड्कणव्यावळे एनिसिद् सीताळमळिगेयरसिय-केरेय भव्य-नकरङ्गळु सहस्र-कूट-चैत्यालयमनेत्तिसिया-देवरष्ट-विधार्च्चनेगं पूजारि-

परिचारकर जीवितक्कं बन्द-चातुर्व्वण्णङ्गळाहार-दानक्कं जीर्णोद्धारणक्कवेन्दु समस्त सायिरोकड्डगळ कय्यलु धारा-पूर्व्वकं भूमियं पडेदा-भूमिय तेरेगा बल्लाल-भूपनिं इचु,होन्न ... तेरेयोळगिळिहिसि सकळ-श्री-करङ्गळ सिबडियो ... चन्द्रार्क-तार-म्बर सले सल्वन्तं वर... इङ्गळेश्वरद बळियेनिप्पा-सागरणन्दि-सिद्धान्त-देवरन्वयदवर वशं माडि निखिलभव्य-जनङ्गळारयेयागि सक-वर्षद ११४१ नेय प्रमादि-संवत्सरद पुष्प-मासद पौ ... दिवारवन्दु बिट्ट दत्ति देविगेरेय मूड-गेरेय तोण्टद कम्ब ४० । बसव-गेरेय वेळगण तो ... ... द कम्ब ... ... कम्मं ... ... वूर गडियलुं भट्टद हसरदलु समस्त-नकरंगळु बिट्ट गद्दे ... ... हरवरु बिट्ट मानेण्णेगे गाणवेरडु ॥

नुत-भुवन-शान्तिनाथ- ।
प्रतिष्ठेयं भद्रमागे तद्-गृहमुमं ।
क्षिति पोगळे माडिदरसंन्- ।
नुतररसियकेरेय भव्य-नकर-प्रकरम् ॥

आ-देवर प्रतिमेगी-पट्टण-स्वामि कल्लि ... ... कोट्ट ग ... ... देवरर्च्चनेगे बड्डियिं बन्दुं नडवन्तु बिट्टनङ्गडिय जक्कि-सेट्टिय मग नाडियम-सेट्टियत्नय-मण्डार-वागे कोट्ट ग १२ प्रसन्न-कलिसेट्टि कोट्ट ग २

जिन धर्म्मं नेलसिर्क्के भूतलदोळेन्दुं धर्म्मिग ... ... ।
तनवी-धर्म्मद टत्तियं तिळिसिदगांयुं जय-श्रियुमक्क् ।
ए नेरळ्दोवदिदर्क्के कुन्दनोडरिप्पङ्गावगं साग्गं सज्-
जन-गो-ब्राह्मण-सन्मुनि-प्रकरमं कोन्दा-महा-पातकम् ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । हमेशाकी तरह बल्लालतककी होय्सलोंकी वंशावली और उन्नतिका वर्णन ।

जब (अपनी उपाधियों सहित), प्रताप चक्रवर्ती होय्सल वीर-बल्लाळ-देव शान्तिसे राज्य करते हुए, दोरसमुद्रमें निवास कर रहे थे:—

तत्पादपद्मोपजीवी अरसियकेरेके निवासी थे। उनकी रत्नत्रय और धर्म्ममें दृढ़ता सुनकर कलचुर्य्य-कुलके सचिवोत्तम रेचरसने, बल्लाल देवके चरणोंमें आश्रय पाकर अरसियकेरेमें सहस्रकूट जिनकी प्रतिमा स्थापित की। उन भगवान-की अष्टविध पूजन, पुजारी और नौकरोंकी आजीविका, और मन्दिरकी मरम्मतके लिये,—राजा बल्लालसे हन्दरहालु प्राप्त करके उसे अपने वंशके गुरू श्री-मूलसंघ, देशिगण, पुस्तक-गच्छ और इङ्गुलेश्वरबलिके माघनन्दि-सिद्धान्त-देवके शिष्य शुभचन्द्र-त्रैविद्य-देवके शिष्य सागरनन्दि-सिद्धान्त-देवको सौंप दिया।

रेच-चमूपकी प्रशंसा। अरसियकेरेकी शोभाका वर्णन। वहाके जैनोंका वर्णन।

रेच द्वारा स्थापित चमचमाते हुए सहस्रकूट जिन-बिम्बके लिये जैन लोगोंने १ करोड़ रुपया इकट्ठा कर प्रसिद्ध अरसियकेरेमें एक मन्दिर तथा उसके चारों ओरकी चहारदीवारी बनवायी। इसमें जिससे जितना बन पड़ा, यथाशक्ति द्रव्य दिया, और राजा ··· ··· ने १० निष्ककी रेट (भाव) से जमीन दी। इस जिनालयमें समस्त ७ करोड़ लोगोंकी सहायता होनेसे, इसका नाम 'एल्कोटि-जिनालय' रखा गया। इस चैत्यालयके लिये १००० कुटुम्बोंसे जमीन खरीदी गयी थी और राजा बल्लालसे उस जमीन परसे १० होन्नुवाला कर छुड़ा लिया गया था। अरसियकेरेके लोगोंने एक शान्तिनाथका मन्दिर और बनवाया था। उसके पूजा के प्रबन्धके लिये कल्ल ·· ·· ने एक दुकान दी तथा दूसरे लोगोंने (उक्त) दान दिया।]

[EC, V, Arsikere, tl., No. 77]

४६६

निट्टूर;—कन्नड़-भग्न।

वर्ष प्रमाथि [=१२१९ ई० ? (लू. राइस)।]

[निट्टूर (गुब्बि परगना) में आदीश्वर बस्तिकी पश्चिमीय दीवालके एक पाषाणपर]

स्वस्ति श्री-मूलसंघ देशी-गण पोस्तक-गच्छ श्री-कोण्डकुन्दान्वयद श्री-पद्म-प्रभ-मलधारि-देव' गुड्डि जैनाम्बिके येनिसिद माळव-सेट्टिकब्बेयर मग मल्लि-सेट्टि ई-चैत्यालयद होर-भित्तिय सुत्तण प्रतिमेय प्रमाथि-संवत्सरद ज्येष्ठ-शुद्ध-पञ्चमी ...... तण-वागि माडिद .. .. महा श्री

[श्री मूलसंघ, देसिय-गण, पोस्तक-गच्छ तथा कोण्डकुन्दान्वयके पद्मप्रभ-मल-धारि-देवकी गृहस्थ-शिष्या माळवे-सेट्टिकब्बेके पुत्र मल्लि-सेट्टिने,—(उक्त सालमें), इस चैत्यालयकी बाहरी दीवालोंकी चारों ओर मूर्त्तियोंसे सजाया ।]

[EC, XII, Gubbi tl., No. 8.]

४६७

हुम्मच;—कन्नड-भग्न ।

[काल लुप्त, पर लगभग १२२० ई० ?]

[पद्मावती मन्दिर के प्राङ्गणमें, छठे पाषाणपर]

श्री

स्वस्ति श्री-जिन-शासन- ।
विस्तारित-मूल-संघ-देशि-गणदोळ् ।
... ... ।
... ... निसिद्दं कोण्डकुन्दान्वयदोळ् ॥

कोर्त्ति-देवर मुनिचन्द्र-मलधारि-देवर शिष्यरभय ... ... समा-धियिं मुडपि स्वर्गक्के सन्दरु

[मुनिचन्द्र-मलधारिके शिष्य मूलसंघ, देशीगण तथा कुन्दकुन्दान्वयके अभय ... ... का स्मारक ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 54.]

४६८

दानसाले;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न।

११८० ?

—[··· ··· =लगभग १२२० ई०]

[दानसालेमें, उत्तरकी ओर, बस्तिके पासके एक समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

नमो अरिहन्ताण॥ स्वस्ति श्रीमतु शक वर्ष ११४ ··· नेय सार्वधारि-संवत्सरद कार्त्तिक-सुद्ध १० सोमवारदन्दु श्रीमन्महामण्डलेश्वरं कलिगण-कुस मण्डळ-महीपालन सर्व्वाधिकारि-पद्मप्रभ-देवर गुड्ड वैजण-सेनबोवन पुत्र बय्चळ-सेनबोवन तम्म चलिग-सेनबोवनु निजायु ··· ··· सानमनषिदु॥ पोरेदा ··· ··· ··· अगे पर-मण्डळद महीपाळरभिप्राय (२ पंक्तिया नष्ट हो गई हैं) सुखदिं वैजण-सेनबोव॥ तनुजातं ··· ··· ··· कादम्बलिग यिन्ती ··· ··· ··· सहितं मन्त्रि ··· ··· ··· दियकोगेद ··· ··· ···

[जिन शासनकी प्रशंसा।

स्वस्ति। (उक्त मितिको), चलिग-सेनबोव,—जो वैजण-सेनबोवके पुत्र बय्चल-सेनबोवका छोटा भाई और महामण्डलेश्वर मण्डल-महिपालका सर्व्वाधिकारी पद्मप्रभ-देवका गृहस्थ-शिष्य था,—अपना अन्त समीप जानकर, ··· ··· ··· ··· ··· ···कादम्बलिगमें ··· ··· ··· स्वर्गको गया।

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 191.]

४६९

पुरले;—कन्नड़।

—वर्ष विजय [१२२७ ई० ? (लू, राइस) ।]

[पुरलेमें, बस-सेट्टिके खेतके स्तम्भपर]

पूर्व-मुख

व्यय-संवत्सर-पुष्यद् । बहुळद बारसिय कुजन बारदोळ् सद्- ।
विनय-निधि बाळचन्द्र । सु-समाधियं मुडिपि नाकमेय्दिदनीगळ् ॥
अतिथिगम् ... । प्रतिभा-प्रागल्भ्य मनु-मुनिग् ... ।
... ... रुत-वाडिगळ दानम- । वतिशयमी-बाळचन्द्रनुळ्ळन्नेवरं ॥
ळले बुध-समिति सिरद्र । वळगं मेल्मळ्ळने मरुगे दान-विनोदम् ।
प्रळल-प्रद्योभदवोल् । कळि श्री-बालचन्द्रनभिनव-चन्द्रम् ॥

पश्चिम मुख

मनमं निपमिसलरियर् । तनुमं ... तोर्प्पं मुनियं मुनिये ।
मनमं तनुव नियमिस- । लनुदिनमी नेमि-देवनोर्व्वने वल्लम् ॥

[(उक्त मितिको) विनयनिधि बालचन्द्रने समाधिमरण किया और स्वर्ग प्राप्त किया। (उनकी प्रशंसा)।

मन और काय दोनोंके दैनिक नियमनमें, नेमि-देव ही अकेले योग्य हैं।]

[EC, VII, Shimoga tl., No. 66.]

४७०

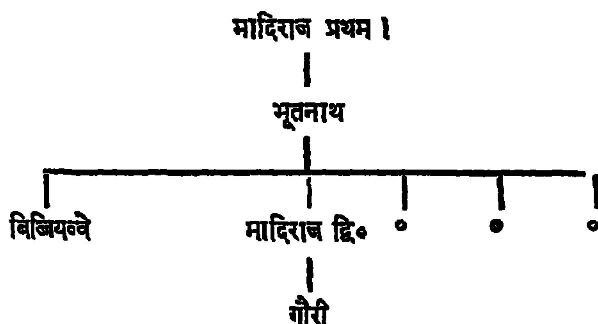
सौंदत्ति;—कन्नड ।

[शक ११५१=१२२९ ई०]

शिलालेखका परिचय

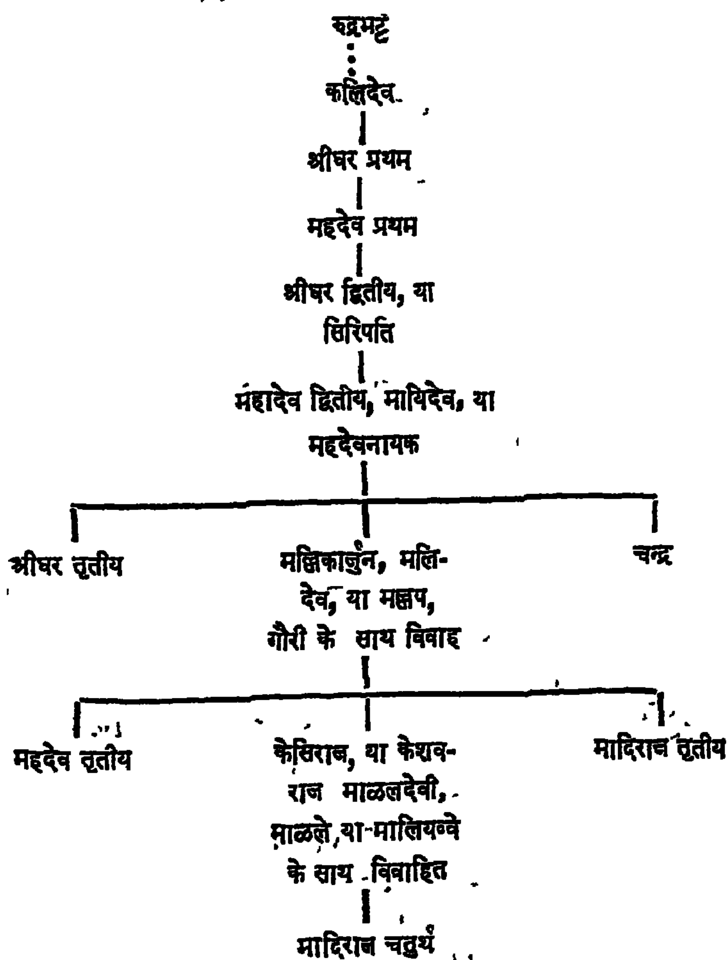
यह शिलालेख कुन्तलदेशके अन्तर्गत कुण्डी जिलेके अधीश्वर राष्ट्रकूटवंशके लक्ष्मण या लक्ष्मीदेव प्रथम के प्राथमिक वर्णनके बाद लक्ष्मीदेव द्वितीयका वर्णन करता है। ल० द्वि. कार्त्तवीर्य चतुर्थ और मादेवीका पुत्र था। इस तरह यह लेख और शिला लेखोंकी अपेक्षा रट्टोंकी वंशावलीको एक कदम

और आगे बताता है। यह कार्तवीर्य चतुर्थकी द्वितीय पत्नी होनी चाहिये, क्योंकि शि० ले० नं० ४४६ में उसकी पत्नीका नाम **पद्मलदेवी** दिया है। तत्पश्चात् हम देखते हैं कि **सुगन्धवर्त्ति बारह** का शासन लक्ष्मीदेव चतुर्थकी अधीनता में रट्टोंके राजगुरू मुनिचन्द्रदेवके द्वारा होता था, और मुनिचन्द्रके सहायकों या परामर्शदाताओं में शान्तिनाथ, नाग और **मल्लिकार्जुन** थे। मल्लिकार्जुनकी वंशावलीके देनेमें स्थानीय दो महत्वशाली वंशोंका विशेष वर्णन है—१८ गाँवोंके वृत्त (समूह) के अधिपति (इन गाँवोंमें **वनिहट्टि** मुख्य था जो आजकल जामखण्डीके पासका एक छोटा शहर मालूम पड़ता है), और **कोलार** के अधिपति (आजकलका कोर्त्ति-कोल्हार जो कलाद्गीसे नातिदूर कृष्णाके किनारे है)। कोलारके वंशमें पुरुष-उत्तराधिकारीके न होनेसे वहाँका अधिपतित्व विवाहके द्वारा बनहट्टिके अधिपतियोंके वंशमें चला गया। कोलारके अधिपतियोंका वंश गृहपति **वशिष्ठ**के वंशसे शुरू होता है, और उसमें निम्न नामोंका वर्णन आया है —



मादिराज द्वि० अपने छोटे भाइयोंके साथ—जिनके नाम नहीं दिये हैं—युद्धमें मारा गया था। उसकी मृत्युके बाद उसकी वहिन विजियव्वेने शासन-सूत्र अपने हाथमें ले लिया और कुछ समय बाद इसे बनिहट्टिके मल्लिकार्जुनके साथ गौरीके विवाहमें दहेजके रूपमें दे दिया। बनिहट्टिके शासकोंके वंशका नाम 'सामासिग-वंश' था और यह अत्रि ऋषिसे प्रारम्भ होनेवाले इन्दुवंशकी एक

शाखा थी। इस खानदानकी वंशावली, जिसमें ६३वीं केसिराजके पुत्र मादिराज का भी नाम आ जाता है, निम्नभांति है :—



जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट है, यह खान्दान रुद्रभट्टसे शुरू हुआ।

इसके बाद लेखमें बताया है कि किस तरह केसिराज, श्री-शैलके मल्लिकार्जुन देवकी वेदीके 'लिङ्ग' की तीन यात्रा और वहाँ कठिन व्रत धारण करनेके बाद, पवित्र पर्वतकी चट्टानसे बने हुए 'लिङ्ग' को अपने साथ लाया और उसे सुगन्धि-वर्त्ति नगरके बाहर नागरकेरें तालाबके पास अपने पिताके नामपर बनानेवाले मल्लिकार्जुन देव या मल्लिनाथ देवके मन्दिरमें स्थापित किया। बादमें इस मन्दिरके उच्च-पुरोहितका पद उसने लिङ्गय्य, लिंगशिव, या वामशक्तिके पुत्र देवशिव, उसके पुत्र वामशक्तिको दे दिया। इसके बाद लेखमें इस मन्दिरके लिये भूमि और उसके दशवें अंशके कई दानोंका उल्लेख आया है। ये दान सर्वधारी संवत्सर, **शक वर्ष ११५१ में**, राजगुरु मुनिचन्द्रकी आज्ञासे किये गये थे। उस समय शासनकर्त्ता वेणुग्राम राजधानीमें महासामन्त **राजा लक्ष्मीदेव** थे। अन्तमें इस लेखके लेखकका नाम-मादिराज दिया है। यह केसीराजका पुत्र था।

समस्तुग शिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे [।] त्रैलोक्य नगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ॥ ईगे निरन्तर सुखमनाश्रितर्गी गिरिजाधिनाथनुर्व्वीगगनेन्दिनानळमरुत्स-लिलात्मयराष्टमूर्तियं रागदे लोक यात्रेमे निभोगिसि तन्न मनोनुरागदि श्रीगिरियो-ळ् विराजिप सदाशिवनी विभु, मल्लिकार्जुन। वर्नाधिमृतावनिमध्यद कनकाद्रिय तेंकदेसेय भरतवनियोल् जनपदमेसेपुदु कुन्तळदेनसु सोगयिसुवुदल्लि कुण्डीदेशं [॥] आ देशाधि ईश्वरं **लक्ष्मणनृपनेसेदं** तत्सुतं कार्त्तवीर्य्यंगादळ् महादेवि ता श्रीसतिय-वर्गों जगजात विद्द(ज)नकाहादं (पेळ्के) ळ विद्विद् क्षितिपति निवहक्कुब्बेगं पुट्टे तद्रामादिवोणि ईश शौर्य्यं सकळगुणयुतं पुट्टेदं **लक्ष्मीदेवं** [॥] सुकुमारा-कारने श्रीसतिगुदयिसिद धारणीचक्र संरक्षकने. श्रीकार्त्तवीर्य्यावनिपतिसुतने रट्टवंशो-द्भवं राजकदोळ्सम्सेव्यने भाविसुवडे निजदिं **लक्ष्मीदेवं** प्रभावाधि(कने) तिम्मांशुवंश प्रकटित विभवं नोप्पंडी **लक्ष्मीदेवं** ॥ इदमोघं राष्ट्रकूटान्वयनतुळबळं लक्ष्मीदेवं सुरूपन्वदोळुच (तेजदोळ् शौर्य्यदो) ळखिलजनानन्ददोळ् भायोळौ-दार्य्यदोळा कन्दर्प्पनं भानुवननिलजनं रोहिणीनाथनं पूर्व्वदिशाकान्तेशन कर्ण्णन-नतिशयदिं पोल्तु विख्यातियेत्तं आ रट्टराज्यमं विस्तारिसि नलविन्दे रट्टराज्य स्थिर

निस्तारक नेनिपं लक्ष्मीनारीशं रट्टराजगुरु मुनिचन्द्रं [॥] कुमुदानन्दतेयिन्द चोन्दि मुनिचन्द्रं शत्रुभूभृन्मुखाब्जमनिर्प्पोडिप तेजर्दिदे मुनिचन्द्रं रट्टराजान्वियं क्रमदिं दिक्तटमं पळंचलेविनं पेच्चेप्प तन्नोन्दु विक्रमदिंदं मुनिचन्द्रनिन्तु मुनिचन्द्रं चन्द्र-नामान्वितं [॥] गुरुवादं कार्त्तवीर्य्यक्षितिपतिगेनसुं मन्त्रदिं ताने शिक्षागुरुवादं शस्त्रशास्त्रस्थिरपरिणतेयोळ् लक्ष्मीदेवंगे दीक्षागुरुवादं प्राज्यराज्यापहरणदे परक्षोणि-पाळर्गोनल्केटुशब्द वाग्वज्रघातदे वरमुनिचन्द्रर्गिदें देसेगाय्ते [॥] धरणीशाग्रणि कार्त्तवीर्य्यसुतनप्पी लक्ष्मीदेवंगे सुस्थिरवर्म्मतिरे घात्रियं नयदिनेकायत्तम माडिदं वरबाहाबळदिं (विरो) धिनृपरं वेंकोण्डनी वाणसा भरण श्रीमुनिचन्द्रदेवन सुहन्मा-तंगकण्ठीरवं [॥] आर्य्यं सचिवरोळतिचातुर्य्यं रट्टोर्व्वीप प्रतिष्ठाचार्यं कार्य्य-धुरन्धरतेयोळौदार्य्यदोळारिंदवधिकनी मुनिचन्द्रं [॥] आ मुनिचन्द्र देवमल मात्यरिळास्तुतरिष्टचिंतामणिकामराजतनय करणाग्रणि शान्तिनाथनुद्दामपराक्रमं नेगळ्द कूण्डिय नागानुदारचारुलक्ष्मी महिमावळम्बनसुखानुभवं मले मल्लिका-र्ज्जुनं [॥] एने नेगळ्द मल्लिकार्ज्जुनननुपम वंशावतार मेन्तेने चतुराननन सभे-यल्लि पूर्व्वं मुनिसप्तकमदरोळत्रिमुनिवरनधिकं ॥ (आ) मुनि मुख्य कान्तेयनसूये पतिव्रते वोल्दु धर्म्ममं काममनर्थमं परमसंपदमं पुरुषगे माडे तत्का (मि) निगदरा हरिहराब्जभवरसुंतरत्रिनेत्रदिं सोमन जन्मवाय्तुद इन्तकुलविन्दुकुल धरित्रियोळ् [॥] धरेगिन्दुवंशमेने विस्तरवं तळेदत्रिगोत्रदोळ् वरविद्यापरिणतरिळामरनलेवरोगेदरव-रोळतो रुद्रभट्टकवीन्द्रं [॥] तत्तनय वंशजक्कंळदिंगळोवुद्ध कवीश्वरप्प वाक्योन्नतियं सरस्वतियिनूर्प्पदिनेंटरोळं प्रभुत्वमं कन्नरनिंदवन्दु पडेदं दोरेमा-कविताविळास दोन्दु-न्नतियोळ् प्रभुत्वद नेगर्च्चेयोळा विभु रुद्रभट्टनोळ् [॥] आ सुकवि रुद्रभट्टनिज सोमकुलाख्यनेनिसुव त्रिकुलं सामासिग कुलवेनिसिदुदन्ता सन्कुलदोळगे पुट्टितमळि-चरित्रं ॥ शदरोळ् निज रामाक्षरविदे सासिर पोंगे कोट्टदं विद्विय नित्तुदिनं पडेदं रूद्रनेम्त्री पडेमात रुद्रभट्टमुर्व्वी (र्व्वी) जनदिं नुतसामासिग वंशदोळवुळवळप्पंलवरा-दरवरोळ् भुवन स्तुतनेनिसि विश्रुतेवेत्तुंन्नतिवडेद विमलकीर्तियं कलिदेवं ॥ तदपत्यं वनिहट्टिनामपुरमुख्याष्टादशाक्कं प्रभुत्वदिंना श्रीधरनोप्पुवं तनुजनातगादनुधन्सु-खास्पदनप्पं महदेवनातन सुपुत्रं श्रीधरं विक्रमोन्मदनप्पं महदेवनेम्न सुतनागल्

लीलेवेचिप्पिर्न ॥ गगनसरोबर पुरदवरिगमा सिरिपति गवागे वैरं होलवे रेगे सिरिपति तत्पुरवासिगळिं धर्मपुरमनेमिन्दं रणमुखदोळ् ॥ जनकं शत्रुशराळिगळ्गे गुरियागळ् तानदं केळदु भोंकेने देशान्तरमेद्दु पोगि रविसख्यान्दं वरं द्वीपदोळ् घनमं सादिसि तन्दु भूपतिगे कोट्टा शत्रुवं कोपदुर्व्विनदिं गन्धगजंगळिं तुळिदु कोन्दं भायिदेवोत्तमं ॥ मु जमदग्निरामनखिलक्षितिनाथरनिप्पतोन्दुळसूब्माजन गाळियन्ते तवे कोन्दुवोली महादेवनायकं कुजरदिंदे वैरिकुलमं तवे कोन्दु पितंगे माडिदं ता अवदानविक्रियेगळं बनिहट्टि समुद्मवेश्वरं ॥ शरणागतर रक्षिप विरुदं घरे पोगळे ह्रवदोळ् सीयल् कळ्करेनिप मातंगरनन्दुरियोळ् ता पोक्कु कायिद ना महादेवं ॥ शरणागतरं रक्षिसि परबळमं गेय्दु मान्यरं मन्निसि ढिक्करि वेरवायतियं विस्तरिसिये महादेवनायकं धरेगेसेदं ॥ एनिसिर्प्पा महदेवनायकन पुत्रर् श्रीधरं मल्लिकार्ज्जुननुं चन्द्रनुमेम्ब मूवरोगेदर्त्तत्पुत्ररोळ् वंशवर्धनमु पुण्ययशोवर्धनमुमागळ् तन्नोळा मल्लिकार्जुन नात्मीय कुळाब्जषण्डवनमार्त्तण्ड करं रंजिप ॥ गुणवळदिं तेजद बळुकणि बुध -शिष्टेष्टजन मनोरथ चिंतामणि सामासिगवंशाग्रणियेने विभु मल्लि-कार्ज्जुनं रंजिसुवं ॥ एने पंपुक्ते मलिदेवन पुण्यागने पितृ द्विजामरसंपूजनरते पतिहिते गौरी वनिते तदगनेय कुलमनभिवर्ण्णिसुवे ॥ मुनिसप्तकदोळ् पेंपिगे नेलि-यिनिप्पं वशिष्ठमुनिमुख्य तन्मुनिगोत्रदोळुदयिसि **कोलारनगरविभु मादिराज** पुण्यचरित्रदोळेने **माळलदेवि** भुवनवन्दितेयादळ् । पतिहितवप्प चारुचरितं पति-भक्तियोळोंदिदा मनं ।।पतियने वण्णिगोन्दु वचनं सति लक्षणविन्तु तन्नोळूर्जितवेने **केसिराजन** मांगने **माळलदेवि** गोत्रसन्नुते वरपुत्रपौत्रबहुसंततियि धरेयोळ् विरा-जिकुं ॥ मनेयोळगेनुळळडविल्लनुतं स्वयमर्थमूरियागुत्तिप्पगनेयम्मळिक्षदेविय विन-याम्भोनिधिय गुणदोळेन्तेणेयप्पर् ॥ मनेयोळगुळळुड मडगो तत्पतिगं मनेभक्तिंग-वेळ्ळनितुवनिक्षला इदे केल कडेयु सुडेनल्के बीविपगेनेयरर्न्ने कुलागने भरेन्देन-लक्कुमे **केसिराज**नगने पतिभक्ते चारु गुणयुक्ते कुलंगने भूतळाग्रदोळ् ॥ मनेगो वन्दरे बिट्टमरेनलोळयिंगोडि होगियडगुव समुखं तनगादडे नीवारेम्ब नलेयरिं मोळियल्बेगेन्तेणेयप्पर् ॥ कुदिळे कुमार्गो कुत्सिते कुरूपि कुमाग्र्ये, कुशीले, जिह्व-लंपटे, शठे धूर्त्ते दुर्गुणि दुरन्विते दुर्ज्जने दुष्टे क्रष्टेयेम्ब टमटकार्त्तिसंतियरे

गुणदोळ् सले माळियव्वेयुंगुटकेणेयागरेन्दो डितरागनेयम्भुवनांतराळदोळ् ॥ पुरुष-रमेळिदवं माळ्त्ररिदुं डिरिटागे बगेव पररं मायाचरणदोळेसगुव सतियर्दोरेये हेळ् माळियव्वेयोळ् कुत्सितेयर असवने गंगलक्के तलेमागिलेगच्चने नोडली इलिंगो-सगेगे नोपिंगंगडिगे चाडिन सन्तेगे बायिनक्के पोपेसकदे पाम्बरोळ् नेरेवरं कुल-नारियरेम्बुदे विचारिसे पतिभक्तिवेत्तेसेव **माळलदेवि**यनल्लदन्यर । गाळुतनदिंदे पुरुषरने किडवं माळ्प दुच्चरित्रेयरं बाचाळेयरं कण्डघतति **माळलदेवि**य गुणानु कथनदे केडुगुं ॥ पति बसदक्कुमिन्तुतमगेन्दु दुरौपधमं प्रयोगिप कितकेयरन्तयिन्दे पररुपवंय कामळे पाण्डु गुल्मदिंद तिकुपरागे विच्चळिसुतिप्पवरेन्त् कुलागजनं पतिहिते माळियव्वेये कुलागने वार्षिपरीत चात्रियोळ् कृतयुगचरितद सतिगुणवतिशयदिं तन्नोळिकुवेने नेगळ्द महासति **माळलदेवि** पतिवृते **मल्लिदेवन** सुजननि रचि-सुतिप्पळ् ॥ जननुते **माळलदेवि**यननुपमगुणवतियनी महासतिय कण्डनितरोळ-मरकदीसेवनेय फसप्रासियेन्दडे वण्णिसुदो । अत्रिमुनीन्द्रपत्नियनसूये पतिवृत-वृत्तियिंदे लोकत्रयवेद्दे वाण्णिसे विरिंचेयनच्युतनं त्रिनेत्रनं पुत्ररेनळ्के पेत्तळेसवीयुगदोळ् पतिभक्ति तन्न चारित्र दिनत्रिगोत्रदोळगुण्डेने **माळलदेवी** रेजिगळ् ॥ कुलवधुविन नडवळियोळ् कुळमुं पतिव्रतागुणदिंद नेलसिक्कुमेम्बु-दिदु **माळलदेविय** चरितदिंदे धरेगतिविदितं । जननि महापतिवृते वशिष्ठकुलो द्भवे गौरि **मल्लिकार्जुन**नभवाम्भोपंकरुहषट्चरणं पितनग्रतानुजव्वेनधिगभीरलप्प महदेवनुमा विभु **मादिराज**नुं वनिते विनूते माळलेयेनल् विभु **केशवराज**-नोप्पुवं ॥ वचन ॥ आपुण्यागनेयरं शिष्टकाम भोगंगळननुभविसुत्तं मल्लिकार्जुननुं मादिराजनुमेम्बीव्वर्पुत्ररं पडेयलवरीव्वरं श्रीरट्ट राज्यप्रतिष्ठाचार्यनुं अरिविरुदमण्ड-लिकजवराजनुमप्प' श्रीमद्राजगुरुगळ् **मुनिचन्द्र**देवरनोलगिसि कूण्डि मूरु सुसासिरद बळिय बाडं श्रीमद्राजगुरुगळ् **मुनिचन्द्र**देवराळ्के वाडं **सुगन्धवर्त्ति** हन्नेरडुमं तदाज्ञेयिं प्रतिपालिसुत्तमिरला कंपणद मोदलु बारं पट्टणं **सुगन्धवर्त्तिय** विलास-मेन्तेन्दडे ॥ होड्वोळलोल् विराजिसुव चूतवनं गिरसंकुळं फलं दुसुगिदनारि केरवन-वोप्पुवशोकवनं शिवालयं मिसुप जिनेन्द्र गेहमेत्रिपिंतिवलब्दव शेषसौख्यदोन्नेसेदु सुगन्धवर्त्ति सले कूण्डि महीतळदोळ् विराजिकुं । पन्नीव्वंगाऊण्डुगळुन्सत सत्यप्रता-

पगुणगण निळयस्संनुत चरित कीर्ति महोन्नतप्रतिमरा स्थळकधिपतिगळ् आ स्थल दोळ् ॥ आराधिपनभवनन सुरोरजखचरामरेन्द्रवन्दितपदपकेरुहननर्थियिं कोलारद विभु केसिराजनमळचरितं । विदितं श्रीपर्व्वताधीश्वरन चरणमं काणली केसिराजं मुददिं नेसेदं धरेयोळ् ॥ सुतनादं मादिराजं गमळ चरितन्त भूतनाथं यशोरंजित रप्पन्नरसुतत्तंप्रभु गोगे दरिळास्तुत्यरस्तम्बरोळ् सन्नुतनादं मादिराजं सेणसुवबर गंटळ्गे गाळं प्रतापोनंतनेन्दुर्व्वी जनं वर्णनेसि पेसेर्व्वंडेदं तेजदोंदिळ्गेयिं ॥ शरणागतजनमं निच्चरिपेडेयोळ् वज्रपंजरं ताननेने डोंकरमादिराज विभु तोडर्दर् डोंकिनिप्प बिरुदनिरदेत्तिसिद ॥ इरे कोलारदोळा समानविभुपुगर्व्वत्तिज़ोपात्तंता वुरचेतम्मेरेवोकडन्तवरनार्द कादु तानुप्रसंगरदोळ् सानुजनेयिद् वीरसिरियं पंचत्वमं पोर्दि विस्तर देवानकजणमे दिव्यगतिवेत्तं धात्रि बाप्पेम्बिनं । आ मादिराजनग्रजे भूमिस्तुते बिब्बियव्वेयनुजर महिमोद्दामभुमनन्प्रतेयन्त माळ्केयिनधिकवागे नडेयिसुतिर्द्दळ् ॥ सले कोलारदोळ् प्रभुत्ववेसे गुं तेनामदोळ् मादिराजळ सत्पुत्रियन्त प्रभुत्वसहितं श्रीगौरियं पोण्मे मंगळतूर्य्यं विभु मल्लिकार्ज्जुन नोर्व्वेळिंप बिब्बियव्वे प्रभुत्वलवाविस्तरयागे ता नेरपि चिन्तोत्साहमं ताळ्दिदळ् ॥ इन्तप्प विमत्रर्दि पेंपं तळेद महाप्रसिद्धवंशजे गौरीकान्ते निज कान्तेयेने चैरन्तनरोळ् मल्लिकार्ज्जुनं समविभवं ॥ आ दंपतिगळ् सुखदिनिरे ॥ पिन्त्येपात्तं तदीयप्रभु तेयेनिसुवष्टादशग्राममुं दौहित्रं ता मादिराजंगद इनमरे कोळारदोन्दु प्रभुत्वं पुत्रं श्रीगौरिगं मल्लपविभुगोगेट केसिराजं लसच्चारित्रं श्रीशैलकन्या पति पदनखचन्द्रांशुचंचच्चकोरं ॥ सात्विकदादिनन्दे परमेश्वरनी गिरिजेशनेम्बुब तत्वविचारादेदे इदु नम्मद निश्चळभक्तियिन्दे शान्तत्वमे रूपगोण्डु मुदमानविषाददोळेंददिर्प्प शूरन्वदोळी धरावळयदोळ् विभुकेशवराजनोप्पुवं ॥ परक्तिक्कलिनदेयं परवधुविंगेन्तुवे इकमं माडदेयं हरचरणपरिणतान्त करणतेयिं केसिराजनें कृतकृतं ॥ एने नेगळ्द केसीराजन वनिते नुतागस्त्यगोत्रसंभवे पुरुषंगनुवशपोपल्लि ता रन्तिसुवनिब्बरोळं पिन्ते रोगादिगळ् तोसिदोट भक्ति वारें दिडवेनलमवं कूत्तु तत्पुत्र वर्मा पदुळं निश्चित विम्नजिरिसिदनधिक धात्रिगाश्चर्य्यमागळ् ॥ मत्तमा तीर्थयात्रेयोळ् ॥ तनु गाढं परिचर्य्यमं मुददे माडम्बाय्दव्दोर्गे तन्ननेरं बाद्दोंड गुडि बप्पवर्गे काळ-

प्रातिशब्दादो डोय्कमे सावन्तवर्गागळागदेनिपी वीरवृतं मल्लिकार्ज्जुनदेवं दयेगेय्यली प्रभुगे सन्नुं केशवंगुर्व्वीयोळ् ॥ इन्तिवादियागिरनन्तवीरवृतंगळिं श्री-शैळद मल्लिकार्ज्जुन देवरं मूरुसळ् दर्शनं माडि तत्प्रीतियिं पर्व्वतलिंगमं तन्दु कूण्डि मूलुसाविरद बलिय कपणं सुगन्धवर्त्ति हन्नेरदर मोदळ वाडं श्रीमद्राजगुरुगळ् मुनिचन्द्र देवराळ् केवाडं पट्टणं सुगन्धवर्त्तिय होळलोळम. मागरकेरेयसिं तन तन्दे मल्लिकार्ज्जुन पेसरोळ् श्रीमल्लिनाथदेवर प्रतिष्ठेय माडि ॥ स्वस्ति समधिगत पंचमहाशब्द महामण्डलेश्वरं सत्तनुप्पुरवराधीश्वरं गीवळीतूर्य्यनिर्घोषणं रट्टकुळ भूषणं सिंधूरलाञ्छन शशिविशदयशोलाञ्छनं सुवर्ण गुरुडध्वजं विदग्धमुग्धागनाम-करध्वजं वैरिवळवीरवृकोदरं परनारिसहोदरं मण्डलिकगण्डतळप्रहारि उद्दण्डरिपुमद-निवारि साहसोत्तुगं बोप्पनसिंग नामादि समस्तप्रशस्तिसहितं श्रीमन्महामण्डलेश्वरं लक्ष्मीदेवरसर् वेणुग्रामेय नेले वीडिनळ् सुखसंकथाविनोददिंदनवरतं राज्यं गे-य्युत्तमिरे शकवर्षं ११५१ नेय सर्वधारि संवत्सरद आषाढदमवासे सोम-वारदन्दिन सर्व्वग्रासिसूर्य्यं ग्रहण दुत्तमतिथियोळा मल्लिनाथ देवर अङ्गभोगरंग-भोगक्कं खण्डस्फटितजीर्णोद्धारकं श्रीमद्राजगुरुगळ् मुनिचन्द्र देवर कोट्टकेय्यन वर नियामदिंदा सुगन्धवर्त्तिय हेनीर्व्वरं गाऊण्डगळ् बूपं पडुवणं होळलोळ् मुळुगुन्दवळिळय होळवेरेय हल्लिमत्तर मान्यद होलवेरेयिं तेकळ् हसुडिय दारियि बडगळ् कडिमण्ण कोळिनलळेन्दु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि कंववरुनूर ६०० सिरिवगिळिं पडुवळ् राजवीदियिं पडुवण केरियोळ् राजहस्तद सेक्कय्यगळ इप्पत्तोन्दु कैनीळद मनेय कोट्टर ॥ मत्तमा हीनीर्व्वरं गावुण्डगळ् मुख्य समस्त-प्रजेगळु देवर नित्योपहारक्केन्दु चन्द्रार्कस्थायियागि मेटगोळगव कोट्टर् ॥ मत्तमा-हन्नीर्व्वर गाऊण्डगळ् कौदिय माटिगाऊण्डनुं पचमठतपोधनसं एण्डहिट्टु सहित बिर्द्द सभेय समक्षदलि कडसेय नागगाऊण्डनु मोदलूर गौडुवान्यदोळगे तन गौडु-मान्यं कडलेयवळनहरळहसुगेयन्निमा गौडुमान्यद कोलिनलळेदु सर्व्वसमस्यमागि कोट्टकेयि कम्बविन्नूर २००, [॥] मत्तं ॥ स्वस्ति समस्त भुवनविख्यात पंचशत-वीरशासनलब्धानेकगुणगणालंकृतसत्यशौचाचारचारुचारित्रनयविनयविज्ञानवीरावता-रवीरबणञ्जुसमयधर्म्मप्रतिपाळकरप्प सुगन्धवर्त्तिय हन्नीर्व्वगाऊण्डुगळ् मुख्य

स्थळँसमस्त नरवर,मुम्मुरिदंडंगळ् सन्तेय देवस महासभेयागिद्दुं तम्मोळैक्यमतवागि आ मल्लिनाथदेवरिगे बिट्ट आयवेन्तेन्दडे [।] एळेय हेलिंगेनूरेळेय कोट्टर् होत्त-लिंगं ऐव्वत्तेलेय कोट्टर् [।] अरो गेथुं सतेयोळगेयुं माळुव धान्यवर्गदलुं मत्त-वसरदलुं सट्टुगवत्तवकोट्टर् [।] पसारकरडकेय कोट्टर् [।] अक्क व्वेक्क अरिसिन मोदलागि किरिकुळवेल्लवं पसारकोन्दोन्दु कोट्टर् [।] इत्तिय पसारक्के हिडिवधिय कोट्टर् [।] मत्तमा देवर नन्दादीविगेगेय्वत्तोक्कळ् गाणक्के सोहिगण्णेय कोट्टर् [।] बेऊरिन्द् बन्ध माळुव एण्णेय हाडक्केयद्दॆण्णेय कोट्टर् आस्थळद अय्सावन्तर् ।

देवरग्घणिय बिन्दिगेगे आवलेगळन कोट्टर । मत्तवन्यूर्व्वर वाडुकाय माळुव जक्कगेरडु सूडु हेचिंगे नालकु काय कोट्टर [।] बोव ककट् तन्दु मारुव वाडुकायिगे तिप्पें सुंकव कोट्टर ॥ मत्तमा देवर्गे एळरावेव हंनीर्व्वर गावुण्डगळ् तम्मूर तेंकण होलनोळ् सवधवत्तिय तम्म होलन सीमेयोळ् सिरिवारँगे होद हेव्वेट्टेयिं मूडळ कद्दिगुरुहळ्ळारं वडगळ् नविलगुन्द गोलिनलळेदु सर्व्वं समस्यवागि कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अयुग्यगल हंनिकैनीळद मनेय कोट्टर । मत्तं बेट्टसुरद मेनेय सिंदर मैलेय नायकनुं अ स्थलदलुवर्गाऊण्डु गळु तम्मूरिं तेंकण होळनोळ कद्दिगुरुहळ्ळदिं तेकल् नविलुण्द गोलिनलळेदु सर्व्वमसमस्यमागि कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अथिगय्यगळ हंनिकैनीळद मनेय कोट्टर ॥ मत्तमा देवर्गे हूलिय **माणिक्य तीर्थद** बसदियाचार्य **प्रभाचन्द्र सिद्धान्तिदेवर** सद्धर्म्मिगळप्प **शुभचन्द्रसिद्धान्तिदेवरं** या **प्रभाचन्द्र सिद्धान्तिदेवर** शिष्यरप्प इन्द्रकीर्ति-देवर श्रीधरदेवर मुख्यवा संघसमुदायंगळुं आ माणिक्य तीर्थद बसदिय स्थलं हिरिय कुंवियल् आस्त्रियकनगावुण्डगळ् सहितविद्दुं आ ऊरिं तेकददेसेयल नक्षियचट्ट गोडन वळबोळगे नेमणन केयिं तेकल् उरुगोळनहोल सीमेयं मूडल् नविल्गुन्द गोलिनलळेदु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अभिगय्यगळ हन्निकै-नीळद मनेय कोट्टर । मत्तमा देवर्गे श्रीमदनादिय पिरियग्रहारं हसुर्चियंर्न्नूर्म्महाजनं-गळुं हन्नीर्व्वर्गावुण्डुगळु तम्मूर तेकण बेस्सगेरियिं तेंकल् **समन्धवत्तिय** सवणुबेलद होलवेरेयिं पडुवलु तम्म बासिगवाडद पडुवण हेब्बसुगेय स्थळदोळगे सोगळद दिगीश्वरदेवर कोललळेदु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि कंवं मून्नूर ३०० [॥]

मर्त्तं श्रीमुनीन्द्रदेवर आयद चट्टिभरगर बिन्नपदिं गाणायदायकारदक्षि सोमवारं प्रति वोन्दु सोक्षगे एण्णेयं कोट्टर ।

इन्तिनितुमना कोलारद केसिराजं सुगन्धवर्त्तिय नागरकेरेय श्रीमल्लि-नाथदेवरिगे वृत्तियं पडेदु 'आकेरेय कट्टिसि सुत्तलु मारबेयनिट्टु तन्नाराधिसुव माल्लेय शुद्ध शैवमार्गिगळप्प तन्न गुरु भारिगळ शिष्यर् वामशक्तिनामाभिधेयरप्प बल्लिटगेय श्रीमूळस्थानदाचार्य्यलिंगय्यंगळिगी स्थानमं धारापूर्व्वकं कोट्टनवर वंशा-नुकथनमेन्तेने ॥ आ मुनि दूर्व्वासान्वयनेमातनुपहतनेन्दु दिव्यम्बिडिदा वामशक्ति-वृतीशं मूमिस्तुतनेनिसि नयसि पेसवंसेवेसेदं तत्तनयर्द्देवशिवरुदात्तयशस्सकलशास्त्र संपन्नस्सद्वृत्तस्स्वभुजोपार्जितवृत्ति समाज न्नीराजिसिदरुर्व्वरेयोळ् तदपत्यलिंग शिव-न्विदितशिवा गमररतक्कर्थं गुणगणनिलयस्सदमळ चरित श्रीशैळदमवनं भक्तियुक्त-वादाधिसुवर ॥ सिंगननाराधिपर्ड श्रीमल्लिनाथपदसरसिजदोळ् भृंगनवोलेसेवनेन्दु मनंगोण्डा केसीराजन वर्गिदनित्तं । ततशासनार्थवप्पी क्षितियं विभवोनंति संतत-चोदितोदित वक्कुं प्रतिपाळिसलोल्लदक्किदनसुगतिगिळिगुं ॥ गये वारणासि कुरु-भूमि येनिप तीर्थंगळल्लि गोकुलयं तन्नय कुलमं ब्रह्मणरं दयेगिडे कोन्दनितु पापमिदनळियलोडं ॥

स्वदत्तां परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धरां ।
षीष्ठन्वर्षसहस्राणि विष्ठाया जायते कृमिः ॥

तंनित्तुद मेणन्यकुलोन्नत रित्तुदु मनवनियं धर्म्मात्मळं मन्निसदळिदा मनुजं मुन्न क्रिमियागि वळिके नरककिळिगुं ॥

मद्वंशजा परमहीपतिवंशजा वा पापादपेतमनसा भुवि भावि भूपाः ।
ये पालयंति मम धर्म्ममिदं समग्रं तेषा मया विरचिताजलिरेष मूर्ध्नि ॥

तानोसगिसिद नृपकुलदा नृपरक्रम्य भूपरक्षी धर्म्मक्केनुमनळिवं तारदडा नृप-रिगविन्दे सुगिन्द कर्य्यान्दिर्प्पं इदा केसिराजन वचन ॥ एसेवी शासनमं विरचि बरेदं पूर्व्वं जन्मदोळ् सुकृतमनर्जिसि केसिराजविभुविन् सिसुवेनिसिद मादिराज-नाविभुमतदिं ॥ ई धर्म्ममं सुगंधवर्त्तिय हेनीर्व्वंमाऴण्डुगळुं प्रतिपाळिसुवर् ॥]

[JB, X, p. 176-179, a; p. 260-272, t.; p. 273-286, tr. (Ins. No. 7.).]

४७१-४७२

पर्वत आबू—संस्कृत

[सं० १२८७=१२३० ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायके लेख

[EI, VIII, No 21, No 1. f.-p., t. and tr.]

४७३-४७४

पर्वत आबू—संस्कृत

[सं० १२८८=१२३१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, VIII, No 21, No 12, t
and
[EI, VIII, No 21, No 4o-11 and 13-18, t.]

४७५

श्रवणबेल्गोला;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष खर = शक ११५३ = १२३१ ई० (कीलहौर्न)]

[जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

४७६

गिरनार;—संस्कृत।

[सं० १२८८ = १२३२ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[Revised Lists ant: rem: Bombay (ASI, XIV), p. 328–331, No. 1, t; and tr.]

४७७

गिरनार;—संस्कृत।

[बिना काल निर्देशका]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[Revised Lists., p. 357-358, No. 21 & 22, t. and tr.]

४७८

माण्टनिड्डुगल्लु;—संस्कृत + कन्नड़

[शक ११५५ = १२३२ ई०]

[निड्डुगल्लु-बेट्ट (निड्डुगल्लु परगना) में, जैन बस्तिमें एक पाषाण पर]

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय ······न शक-वर्ष ११५४ नेय नन्दन-संवत्सरद आषाढ-शुद्धाष्टमी-आदिवारदन्दु नेमि-पण्डितर मकळोबलदिय वृत्तियं धारा-पूर्व्वकं पडेदरु मङ्गळ महा श्री

(५२)

उसी पाषाण पर

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति समस्त-वसुमती-भारधौरेय-दोर्द्दण्डरुमघ कृतोद्दण्डरुं मार्त्तण्ड-कुळ-भूषण-रुमभिसम्पात-भीषणरुमोरेयूर्-प्पुरवराधीशरुमेनिप्प चोळावनीशरोळ्॥

मङ्गि-नृप-सुतु बल्लि-नृ-।
पं गोविन्दरननवनिरुङ्गोळननना-।
तङ्गुदिसिद भोग नृ-।
पं गौरव-मेरु बम्म-नृपनं पडेदम्॥

कलि-बर्म्म-नृपतिगं बा-।
चल-देविगवुदित-भद्र-लक्षण-वक्षस्-।
स्थळक्कनिरुङ्गोळ-धारा -।
तिळकं नळ-नहुष-भरत-चरितं नेगळ्दम् ॥
द्धरि गोवर्द्धन-गोत्रमं दशमुखं रुद्राद्रियं राम-किं -।
क्करुग्राचळ-कोटियं रविसुतं तेर्-गालियं पूण्डु दु -।
र्द्धर-संरम्भदिनन्दु मेट्टि पिडिदे नोन्दायासविन्तारितु -।
व्वरेगी-दक्षिण-बाहु-सङ्गदिनिरुङ्गोळ-क्षमापाळन ॥
कुळिकन लवलविके लया -।
नळनुरुवणि सिडिल सडगर मिल्तुविन -।
गाळिके जवनुब्बगं माण्पं -।
ओळेवुदिरुङ्गोलनाखिगोत्तिद बाळोळ् ॥

अन्तु नेगळ्द निगलंक-मल्लं परनारी-सहोदरनरुवत्तनाल्वर् म्मण्डळिकर तले-गोण्ड मण्ड बुद्दण्ड-मण्डळिक दानव-मुरान्तक रोद्द गोव वाण्ट वावं खड्ग-सहदेवं देव-देव-सदाशिवपादाब्ज-सेवा-समुन्मिषत्-प्रभाव निरुङ्गोळ-देवं राज्य गेय्यु-त्तमिरे तत्पाद-पद्मोपजीवियप्प गङ्गेय-नायकङ्गं चामाङ्ग नेगवुद्भविसि गङ्गेयन मारेयं श्री-मूल-संघद देशिय-गणद कोण्डकुन्दान्वदय पुस्तक गच्छद वाणद-वळिय श्री- वीरनन्दि-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळ शिष्यराद मेदिनीसिद्धर पद्मप्रभ-मलधारि-देवर चरण-परिचर्येयिं पर्य्याप्त-कामितराद नेमि-पण्डित-रिनङ्गीकृत-व्रतनादम् । आगि ॥

काळाञ्जनवेम्बुदिरुद् -।
गळन गिरि-दुर्गंवन्तदग्रक्षग्रा -।
मीळतर-चूळनदरुत् -।
ताळतेयने नोडि घात्रि निडुगलेन्दुम् ॥
आ-कुळीळद बदर-त -।

टाकट दाल्ण-शिलाप्रदोळ् पार्श्व-जिन -।
व्याकोसि-वसतियं प्रिय -।
लोकं गङ्गेयन मारनिदनेत्तिसिदम् ॥
इदु जोगवट्टिगेय बस -।
दि दला-चन्द्रार्कविं सनातनविं सल् -।
वुदु पञ्च-महा-शब्दवद् ।
इदर्कं पालिसुवरिन्नसङ्ख्यातर्कळ् ॥

स्वस्ति निरस्ततम-कमठानेक-वैकुर्व्वाणनप्प पार्श्व-जिनेश्वरन दैनन्दिन-सपर्य्या-कार्य्यकं महाभिषेककं चातुर्व्वर्ण्ण-दानकं गङ्गेयन मारेयनुं नारि बाचलेयुवा-चन्द्र-तारमिनित्तने सल्लुपुदेन्दो डिरुङ्गोळ-देवं धारा-पूर्व्वकवित्त दत्ति (दानकी विगत तथा वे ही अन्तिम वाक्य और श्लोक)।

(प्रथम लेख)

[स्वस्ति । (उक्त मिति को), नेमि-पण्डितके पुत्रने इस वसदि की भूमि प्राप्त की ।]

(द्वितीय लेख)

जिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । चोळ राजाओंमें,—मङ्गि-नृपका पुत्र बप्पि-नृप, (और) गोविन्दरका पुत्र इरुङ्गोळ हुआ, जिसके भोग-नृपका जन्म हुआ था, जिसके बर्म्म-नृप हुआ। जिससे और बाचल-देवीसे इरुङ्गोळ (‑प्रशंसा सहित) उत्पन्न हुआ था।

जब (अपने पदों सहित), इरुङ्गोळ-देव राज्य कर रहा था:—तत्पादपद्मो-पजीवी गङ्गेयन-मारेय गङ्गेय-नायक और चामासे उत्पन्न हुआ था। इसने नेमि-पण्डितसे व्रत लिये थे। ने० प० को पद्मप्रभ-मलधारि-देवसे मनोभिलषित अर्थकी प्राप्ति हुई थी। प० म० देव श्रीमूलसंघ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तक-गच्छ तथा वाणद-बलियके वीरनन्दि-सिद्धान्त-चक्रवर्तीके शिष्य थे।

काळाञ्जन इरुङ्गोळके पहाड़ी किलेका नाम था। यह देखकर कि इसकी चोटियाँ बहुत ऊँची हैं, लोगोंने इसका नाम निड़ुगळ् रख दिया। उस पर्वतके अंदर तालाबके दक्षिणकी तरफ एक चट्टानके सिरेपर गङ्गेयन मारने पार्श्व-जिन बसति खड़ी की थी। इसीको 'बोगवट्टिगे बसदि' भी कहते थे।

पार्श्वनाथ-जिनेशकी दैनिक पूजा, महाभिषेक करनेके लिये, तथा चतुर्वर्णको आहार दान देनेके लिये गङ्गेयन मारेय तथा उसकी स्त्री बाचलेने इरुङ्गुल-देवसे आ-चन्द्र-सूर्य-स्थायी दान करनेके लिये प्रार्थना की और उसने तब यह (उक्त) भूमियोंका दान किया; तथा गङ्गेयनमारेयनहल्लिके कुछ किसानाने मिलकर बहुतसे (उक्त) अखरोट और पान प्रति बोझपर दिये; पैलिके किसानोंने भी कोल्हुओंसे तेल दिया। वे ही अन्तिम श्लोक।]

[EC, XII, Pavagada tl., No. 51 and 52]

४७९

गिरनार;—संस्कृत।

[सं० १२८८-१२८९ = ११३२ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[Revised List ant. rem. Bombay (ASI, XVI, p. 361, No. 34, t. and tr.]

४८०

पर्वत आबू,—संस्कृत।

[सं० १२९० = १२३२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, VIII, No. 21, No. 19-23, t.]

४८१

एलूरा;—संस्कृत ।

[शक ११५६ = १२३५ ई०]

[फाल्गुण सुध त्रीतिया[1] बुधे]

[१] स्वस्तिश्री शाके ११५६ जयसवद्दरे (संवत्सरे)
श्रीर्द्धना (श्रीवर्द्धना) पुरे । जमा — जनि राणगिः ।
तत्पुत्रो म्हाल्लुगि स्वर्णा वल्लभो जगतोप्यभूत् ॥१॥
ताभ्यं (भ्या) बभूवुश्चत्व (त्वा) रः पुत्राश्चक्रेश्वरादयः ।
मुख्यश्चक्रेश्वरस्तेषु दा[न]धर्मगुणोत्तर. ॥२॥

[२] चैत्यं श्रीपार्श्वनाथस्य गिरौ वा (चा) रणसेविते ।
चक्रेश्वरोसृजद्दानादघृ (ना घृ ?) ताहुतीं च[2] कर्मणां ॥३॥
बहूनि बिंबानि जिनेश्वराणं (णा) महाति (हान्ति) तेनैव विरच्य सर्वत: ।
श्रीचारणाद्रिर्गमित. सुतीर्थता कैलासभूभृद्भरतेन यद्वत् ॥४॥

[३] धर्म्मैकमूर्ति· स्थिरशुद्धदृष्टि द्वयोसती (?)[3] वल्लभकल्पवृक्षः ।
उत्पद्यते निर्मलधर्मपालश्चक्रेश्वरः पञ्चमचक्रपाणिः ॥५॥
शुभं भवतु ॥
फाल्गुण त्रितीयां बुधे

अनुवाद:—स्वस्ति श्री ! शक सं० ११५६, जयसंवत्सरमें । श्री (व) र्द्धना-पुरमें राणुगिने जन्म लिया था, उसका पुत्र म्हा (गा) ल्लुगि था जिसकी पत्नी स्वर्णा थी और जो जगत्को भी प्यारा था ।

२. उनके चक्रेश्वरादिक चार पुत्र हुए । इनमें चक्रेश्वर मुख्य था, वह दानधर्म गुणमें सबसे आगे था ।

---

१. तृतीया । २. भगवानलाल इसको ० क्रामीकवा हंत्रवि० पढ़ते हैं । ३. भगवानलाल इन्द्रजी इसे 'द्वोनो सती' पढ़ते हैं ।

३. चारणोंसे सेवित इस पर्वतपर उसने श्री पार्श्वनाथका विम्ब बनवाया, (प्रतिष्ठित किया) और इस कृत्यसे उसके कर्मोंकी निर्जरा हुई।

४. जिस तरह भरतने कैलाश पर्वतको पवित्र तीर्थ बना दिया था, उसी तरह उसने इस पर्वतपर जिनेश्वरोंके विशाल-विशाल बिम्बोंको बनवाकर इसे एक सुतीर्थके रूपमें परिवर्तित कर दिया था।

५. धर्म्मैकमूर्ति, स्थिरशुद्धदृष्टि, दयावान, सतीवल्लभ (अपनी पत्नीके प्रति एकनिष्ठ), दानादि गुणोंसे कल्पवृक्षके समान चक्रेश्वर निर्मलधर्मका रक्षक बन जाता है, पाँचवाँ वासुदेव। शुभ हो। फाल्गुन ३, बुधवार।

[Ins. Cave-tamples of western India, p. 99–100, t. and tr.]

४८२

पर्वत आबू;—संस्कृत।

[सं० १२८३ = १२२६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, VIII, No. 21, Nos 24–31, t.]

४८३

दिलमाल (Dilmal);—संस्कृत तथा गुजरा

[सं० १[२]९५ (?) = १२३८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

EI, II, No. 5, No. 4, (p. 26), t. and tr.]

४८४

हेरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक ११६१ = १२३९ ई०]

[उसी बस्तिके दक्षिणके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु कुमार-पण्डितर गुड्डि पेकन-सेट्टिय हेण्डति गुण-गण सम्पन्ने शीलवतियप्प मल्लव्वे शक-वर्षं ११६१ नेय विकारि-संवत्सरद मार्ग्गशिर-मास बहुळ-पक्षद त्रयोदशि बृहस्पतिवारदन्दु दान-धर्म्म-परोपकार-निरतेयागि समाधि-विधियिं सुर-लोक-प्राप्तेयादळु केलसे सोवोजन माडिद ।

[कुमार-पण्डितकी गृहस्थ शिष्या, पेकन-सेट्टिकी पत्नी, मल्लव्वेके जैन-विधि-पूर्वक किये गये समाधिमरणका स्मारक । केलसे सामोजने इसको बनवाया ।

[EC, VIII, Sagar, tl., No. 161.]

४८५

कोरग्राम;—संस्कृत ।

[सं० १२९६ = १२४० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[EI, II, No. XVII (L., 118-119), t. and tr.]

४८६

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १२९७ = १२४१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[EI, VIII, No. 21; No. 32, t.]

४८७

रोहो;—संस्कृत तथा गुजराती।

[सं० १२९९ = १२४२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, II, No. v, No. 14 (p. 29), t. and tr.]

४८८

सियालबेट;—संस्कृत।

[सं० १३०० = १२४३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[ASI, XVI, p. 253-254, t.]

४८९

हेरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक ११६५ = १२४३ ई०]

[उसी बस्तिके उत्तरकी ओरके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्पवित्रमकलङ्कमनन्तकल्पम्
स्वायम्भुवं सकल-मङ्गळ-वस्तु-मुख्यम्।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्
त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये॥

स्वस्ति श्रीमत्तु शुभकीर्त्ति-पण्डित-देवर गुड्डि पेक्कम-सेट्टिय मगळु कामव्वे सकळ-गुण-गण-सम्पन्ने शीलवति शक वर्ष ११६५ नेय शुभकृतु संवत्सरद

वैशाख-मास-शुक्ल-पक्ष-बिदिगे-बृहस्पतिवारदन्दु आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-निरतेयागि सन्यसन-समाधि-विधियिं सुरलोक-प्राप्तेयादळु ॥ सोवोजन बेस

[शुभकीर्त्ति-पण्डित-देवकी शिष्या, पेक्कम-सेट्टिकी पुत्री, कामव्वेका भी वैसा ही स्मारक। सोवोजका कार्य्य।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 162.]

४९०

कडकोल,—कन्नड़।

[शक ११६८ = १२४६ ई०]

[१] स्वस्ति श्रीमत्-यादव-रायनारायण बु (भु)जबल-प्र-
[२] ताप-चक्रवर्त्ति सिंहणदेव [र] वर्ष ३७ परा-
[३] भव-संवत्सरद मार्ग्गशिर सु (शु)ध(द्ध) पचमी ब्रि(बृ)ह-
[४] स्पति वारदलु सूरस्थगणद मूलसंघद श्री-नन्दि-
[५] भट्टारकदेवर गुड्ड कडकुळद सावन्त-बो-
[६] प्पगौड हेगडे सोमय्यनु समादि (धि) ई (यि) म्
[७] मुडिपि स्वर्ग्ग-प्राप्तनाद [नु] [।]
मंगळ-महा-श्री [॥]

अनुवाद—स्वस्ति। यादवोंमेंसे श्रीवाले रायनारायण भुजबल-प्रताप-चक्रवर्ती सिंहणदेवके ३७वें वर्ष, पराभव-संवत्सरके मार्गशिर (महीने) के शुक्लपक्षकी पंचमी, बृहस्पतिवारको सूरस्थगणके मूलसंघके श्रीनन्दिभट्टारक देवके शिष्य या अनुयायी; तथा कडकुळ[1] के सावन्त-बोप्पगौडके 'हेगडे'[2] सोमय्यने पूर्ण इन्द्रिय-विरतिकी हालतमें मरणकर स्वर्ग प्राप्त किया। मंगल-महा-श्री।

[IA, XII, p. 100, No. 1. t. and tr.]

---

१. दूसरे शिलालेखोंमें यही नाम 'कडकोळ' पाया जाता है। २. मैनेजर।

४९१

ऊद्रि;—कन्नड़ भग्न।

[वर्ष दुन्दुभि (?)

[ऊद्रिमें, बन-शङ्करी-मन्दिरके मार्गके एक पाषाणपर]

(प्रथम अंश मिट गया है)··· गतिनयनेश-संख्येय शकाब्दद दुन्दुभि-नाम-संवत्सर···वर-ज्येष्ठमासद सितेतर-पक्षदोळू द्वितीय-सन्नुतमक्कंवार मनुव ···ता बसवले लोक-विश्रुते " दळ् समाधि-विधियिन्दमनिन्द्र-निवास-सौख्यमम् ॥ नन्दि-देव-पद-युग-सरसिरुहद पञ्च-पद-विनुतान्त करणे-महादेव-विभु-विधु वर-सूरस्थगणे सुगतिय नडे पडेदळु ॥

सुररोद्दुं पुष्प-वृष्टिय- ।
नेरदागळे सुरिये देव-दुन्दुभि-रवमम्- ।
वरदोलेसेयल्के बसवले ।
सुर-लोकवोय्ददळु महोत्सवदिन्दम् ॥

नमो वीतराग ॥

[लेख स्पष्ट है। इसमें भी समाधिमरण धारणकर सुगति-प्राप्तिका उल्लेख है।]

[EC, VIII, Sorab tl., No, 142.]

४९२

श्रवणबेलगोला—कन्नड़।

वर्ष पद्माभव = १२४१ ई० (लू० राइस०)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६३

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १३०५=१२४८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 358, No. 23, t. and tr.]

४६४

हुम्मच;—कन्नड़—भग्न।

[शक ११७०=१२४८ ई०]

[पद्मावती मन्दिर में, प्राङ्गण में दूसरे पाषाण पर]

भद्रं भूयाज्जिनेन्द्रस्य शासनायाघ-नाशिने ॥

स्वस्ति श्रीमत् स (श)क- वर्षं ११७० नेय प्लवंग-संवत्सरद पुष्य-शुद्ध-पञ्चमी-बृहस्पतिवारदन्दु श्रीमतु से ··· ··· ··· सोमयन मग ··· डे वेग्गडे-त ·· ·· ·· वसेयॆन ··· दलिय समुदायमं···मं करदु समस्त ··· ग-सेवितनुमागि व्रतारोपणमं माडिकोण्डु समाधि-विधियिं मुडुपि सुर-लोक-प्राप्तनाद मङ्गळ महा श्री श्री

[सोमयके पुत्र ··· ··· डे-वेग्गडेके लिये एक समाधिमरणपूर्वक सुरलोक-प्राप्तिका उल्लेख है।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 50]

४६५

मलालकेरे,—संस्कृत तथा कन्नड़।

शक ११७०=१२४८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४१६

हीरेहल्लि;—संस्कृत और कन्नड़—भग्न।

[शक ११७० = १२४८ ई०]

[हीरेहल्लिमें, मल्लेश्वर मन्दिर की दक्षिणी दीवालके एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमोऽर्हते ॥

श्रीमत्-पोय्सळ-वंशदल्लि विनयादित्याख्यनादं यशः- ।
प्रेमं तन्नृप-पुत्रनादनेरेयङ्गोर्व्वीश्वरं तत्सुतम् ।
भूमिपालक-मौळि-लाळित-पदं श्री-विष्णु-भूपाळनुद्- ।
दाम-स्व-क्रम-विक्रमोर्जित-जय-भ्राजिष्णु जिष्णूपमम् ॥
मलेयेल्लं वसमाय्तदोन्दे तळकाडुं कोयतूर् कोङ्गु नं- ।
गलि काञ्ची-पुरी गङ्गवाडि पेसर्वेत्तुच्चङ्गि बळ्ळारे बेळ- ।
वल-नाडा-राचनूर्म्मुद्दुगनूर्व्वल्लूरिवं कोण्ड तोळ् ।
वलदिं पोल्वनरारो पेळ् भुज-बळ-भ्राजिष्णुवं विष्णुवम् ॥
आ-विष्णुवर्द्धनङ्गम् ।
भावोद्भव-राज्य-लक्ष्मियेनिसिद लक्ष्मा- ।
देविगमुद्भवसिदिनव- ।
नी-विश्रुत-नारसिंहनाहव-सिंहम् ॥
आ-विभुवन पट्ट-महा- ।
देवि मही-देवि विदित-यादव-लक्ष्मी- ।
देवि जय देवियेचल- ।
देवि जगत्ख्याते सीतेगेणे गुण-गणदिम् ॥

आ-नरसिंह-देवंगं पट्ट-महा-देवियेनिसिदेचल-देविगम् ।
सकल-कला-परिपूर्णं ।
सकलोर्व्वी-नयन-सुखदनकलङ्कं तान् ।
अकुटिळपूर्व्वं-नव-सी- ।
तकरं बल्लाळ-देवनुदयङ्गेय्दम् ॥
चोळम्मुत्तिरे पन्नेरळ्-वरिसेकं कोळ्पोय्दे-ता मोदनेम्ब् ।
आळापं बरे साल्दटोन्दु मोळनं मेल्-डे ‥ उच्चंगियुं ।
पेळासाध्यवदादुदेन्दु दिविज ‥‥ घर वि. ये ब- ।
ल्लाळाळ्दं गिरिदुर्ग-मल्ल-वेसरं बल्लाल-भूपालकम् ॥
सानिवारदन्दे पाण्ड्या- ।
वनिपन सप्ताङ्गमेय्दे सिद्धिसिदुदरिम् ।
सानिवार-सिद्धि-वेसरं ।
जनपति बल्लाल-देवनेसेदिरे तळेदम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरम् । द्वारावती-पुरवराधीश्वरम् । त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-कोंगु-नङ्गलिं-गंगवाडि-नोळम्बवाडि-बनवसे-हुलिगेरे-हानुङ्गल्-गोंड भुजबळ वीरगङ्गनसहाय-शूर सनिवार-सिद्धि गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदङ्क-राम निश्शङ्क-प्रताप होय्सळ-वीर-बल्लाळ-देवरु दोरसमुद्रद नेलेवीडिंनल्लि सुख-संकथा-विनोददिं पृथ्वीराज्य गेय्युत्तमिरे ।

वृ ॥ मले-नाडन् तुळु-नाडनगाड वयल्-नाड लसत्कोड-मण्-
डलमं पेर्द्दोरे मेरेयागे वडगल् श्री-विष्ण-भूपङ्गे भू -।
तलनं साधिसि कोट्टु माण्डु रणदोळ् मारन्तरं कोन्द दोर्-
व्वळदिं द्रोह-घरट्टनेन्दु पेसव्वेत्तं बोप्प-दण्डाधिपम् ॥

श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-दण्डनायकं द्रोह-घरट्ट-बोप्प देवं आसन्दि-नाड कोण्डलियं तन्न हेसरिं द्रोहघरट्ट-चतुर्व्वेदिमङ्गलमेन्दु पेसरनिट्टु भुवन-वीरावतारमेम्ब तन्नपेसर्गनुरूपमप्पन्तव्यतिव्वंर भरणवागिं सर्व्व-नमस्यवागि बिट्टना-महाग्रहारद अशेष-महाजनङ्गळुम् ।

कोण्डलिय माचनं भू :।
मण्डल-विदितं समस्त-शास्त्र-विचारा -।
खण्डित-मतिमद्-ब्राह्मण -।
मण्डलि-सरसीज-खण्ड-चण्डांशु-निभं ॥
भूतेय-नायकमुर्व्वी -।
ख्यातं कट्कैक-रत्न-शक-सळारम् ।
भूतल-विदितं तत्तनु -।
जातं बल्लाळ-नृप-कुमारं मारम् ।

व ॥ इन्तिनिबरुविर्दु तम्मूरिन्दं बडगण बक्कवेगेरेयं केम्बणनकेरेयली-श्री वूरं माडबेळकेन्दु प्रार्थिसि काळ-गवुण्डन तम्मनप्प होन्न-गवुण्डन जक्क-गवुण्डिय मगनप्प महा-प्रभु-आदि-गवुण्डङ्गे सन्तेय कोट्टडायय्यनुं तन्न तम्म माडि-गवुण्डनुं मार-गवुण्डनुं अवर मक्कळुं माच-गवुण्डनुं मार-गवुण्डनुं नाक-गवुण्डनुं चिक्क-मारेयनोळगागि काडं कडिदु कन्नेगेरेय कट्टिसि वूरं माडिदरु ॥

आ- ययन अन्वयवेन्तेन्दोडे ।

कल्ल-गवुण्डमुत्तेय ।
.........हिरियय्यम् ।
सञ्चित-सद्-गुण-गण-मणि । .
सञ्चय ... ळिद् होन्न-गौडण्डं जनकम् ॥
आ-नेगळ्द् होन्न-गवुण्डन ।
... . आदि गवुण्डुन ताय् ताम् ।
भू-नुत-पतिव्रता-गुणे ।
जानकियो जक्क-गवुण्डि गुण-निधिये ॥
... ... । ... ... ॥
पशुसुगळिगे पालम् ।
पोसट्टगबमन-वारियागिरे नव्वम् ।
इस-गालदोळ् ... ... अ ।

··· सनदिनारादि-गौण्ड ··· ··· ॥
केरेयं कट्टिसुतिप्पुदु- ।
मरवण्टगेयिडिसुतिप्पुदेसे ··· ··· ।
··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ।
··· ··· ··· ··· ··· उज्जुगवेन्दुम् ॥
··· ··· ··· · ··· ··· ··· ··· ॥

इसिदर मोगमं नोडम् ।
इसियुं नीरळ्के यिन्न कण्ड ··· ··· ।
··· ··· एनिप ··· ··· ··· ··· ।
वसुधेयोळान्नोंळ्पडादि-गौडण्डन दोरेयर् ॥
अन्तेसेडादि-ग [व्] ण्डन ।
कान्ते मनः कान्ते नाग-गावुण्डि जगत्- ।
कान्ते पति-भक्ति-गुणदिन्द् ।
अन्तिल्लद बसदिनेसेदळवनी-तळदोळ् ॥
बन्दर् बिद्दिनरेन्दन्द् ।
ओन्दिद् सन्तोषदिन्द सासिरकं कय्- ।
सन्द्दुणलु बड्डिप-गुण- ।
दिन्दं पेळु नाग-गौण्डि ··· ··· ··· ॥
·· ··· ··· ··· । ··· ··· ··· ··· ।
··· ··· भ् - । मण्डलदोळगिन्नु नोन्त कान्तेयरोळरे ॥
अवरिल्लंर्गे पुट्टिद ।
··· माच-गौडण्डनातन तम्म । ·
भुवनाधारं ··· ··· य- ।
नवननुजर् ··· ··· चिक्क-मारेयनेम्बर् ॥
अवरोळगं ··· ··· ।
भुवन-हितं माच-गौण्डनेम्ब महात्मम् ।

बवसेयिनोळिपन्दार्प्पिद् ।
इवन-बोलागुंणिगळेनिसि नेगळ्दं जगदोळ् ॥
••• ••• ••• ••• ••• ••• ।
••• ••• मत्तवधिक-बलदिं किरिदल्लु ••• ।
••• निपं समस्त-पुरुषा- ।
र्थ-निधानं माच-गौण्डनर्त्थि-निधानम् ॥
मार-गौण्ड •• •• •• ••• ।
••• ••• ••• ••• ••• निधानम् ॥
वारिनिधि-वेष्टितोर्व्वियो- ।
ळारं तन्नरिल्लेनिप्पं गुणदिम् ॥
लोकापकार-कारण- ।
नेक-क्रमव ••• ••• ••• ••• ।
••• ••• ••• ••• ••• ।
••• ••• णनी-लोकदोळगे लोकं बडेवं ॥
मातृ-पितृ-भक्तनखिळ- ।
ख्यातं पुण्य-क ••• त्रि-मूर्त्ति ।
•• ••• •• ••• ••• •• ।
••• ••• क तम्मनम्मङ्गणुगम् ॥

आदि-गौण्डन गुरु-कुळ-क्रमवेन्तप्पुदेन्दडे । श्रीमद्-द्रमिळ ••• ••• •• वारिधि ••• ••• धर्म-तीर्त्थं प्रवर्त्तिसुव ••• ••• ••• द्रस्वामिगळिन्द •• •• पर-वादीश्वर ••• ••• ••• वृन्द-वंद्य-श्री-पादरशेष-शास्त्र-वार्द्धिग ••• ••• रायणप्पर-हित-व्यापार • •• गुण-घनं श्री-वासुपूज्य-मुनि ••• ••• ••• ••• न्त-देवर-शिष्य पेरुमाळे-देवरिगे ••• ••• न्तोपेद ••• ••• ••• बसदियं माडिसि श्री-देवर-प्रतिष्ठेयं माडिसि आ-देवरष्ट-विधार्च्चनेगं रिषियराहार-दानक्कं जीर्णोद्धारक्कं नडवन्तागि बिट्ट तळ-वृत्ति (आगेकी ५ पंक्तियोंमें दानकी चर्चा है) सक-वर्ष ११७० सेनेय प्लवं-संवत्सरदुत्तरायण-सङ्क्रमाण-व्यतीपातदन्दु

कोण्डलियरोम-महावनङ्गळुं आदि-गौण्डनु माडि कोट्ट मङ्गल महा श्री (हमेशा का अन्तिम श्लोक) नमोऽस्तु वीतरागाय ॥

[इस लेखमें आदि-गवुण्डने अपने गुरु पेरुमाळे-देवके लिये एक विशाल बसदि बनवायी और उसके लिये (उक्त) कुछ भूमिका दान दिया, और (उक्त मितिको) आदि-गवुण्ड, और उसके पुत्रों तथा गाँवके ४० कुटुम्बोंके साथ कोण्डलिके सारे ब्राह्मणोंने उस भूमि तथा मन्दिरको पेरुमाले-देवको समर्पण कर दिया ।]

[EC, V, Belur tl., No. 138]

४६७

हुम्मच,—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न ।

[शक ११७२ = १२५० ई०]

[पद्मावती मन्दिर में, एक पाषाण पर]

वरमसेन··· नाय···स्वस्ति

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमत्-स (श)क- वर्ष ११७२ नेय कीलक-संवत्सरद शुद्ध-श्रावण-दशमी-शुक्रवारदन्दु श्रीमन्महामण्डलेश्वर श्री-ब्रह्म-भूपालकन सचि ··· · ··· ··· ·· ··· · ··· ··· ··· ब्रह्मय-सेनबोवन प्रिय-पुत्रं पार्श्वं-सेनबोव · ··· ··· ··· ·· ·· माडि ··· · ··· ··· ··· · ··· ··· सुर-लोक-प्रापितनादम् श्री (बाकीका पढ़ा नहीं जा सकता है) ।

[महा-मण्डलेश्वर ब्रह्म-भूपालके मन्त्री ··· ··· ·· ब्रह्मय्य-सेनबोवके प्रिय पुत्र पार्श्व-सेनबोवने 'समाधि' की विधिसे स्वर्गलोक प्राप्त किया ।]

[Ec, VIII, Nagar tl,' No. 56]

४९८

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४९९

हलेबीड,—संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक ११७७=१२५५ ई०]

[हलेबीड से कटी हुई बस्तिहल्लिमें, पार्श्वनाथ बस्तिके बाहरकी दीवाकके पाषाणके एक ओर]

श्रीमत्-सम्यक्त्व-चूडामणि सल-नृपना-वंश-सिंहासनस्थम् ।
सोमेशं नित्यनप्पन्तोसेदु विजय-तीर्थाधिनाथङ्गे नाल्कुम् ।
सीमा-संस्थानदोळ् मुक्कोडे यसेविनेगं नट्टु धर्म्मके कोट्टम् ।
भूमीशत्वक्के तानेन्दरिपुव तेरदि तत्सुतं नारसिंहम् ॥

शकवर्षं ११७७ नेय आनन्द-संवत्सरद मार्ग्गशिर-ब १ बृ-दन्दु श्रीमत् प्रताप-चक्रवर्त्ति-होय्सळ-श्री-वीर-नारसिंग-देवरस बोप्प-देव-दण्णायकर बसदिगे बिजयं गेय्दु श्री-विजय-पार्श्व-देवरिगे काणिकेयनिक्कि आ-बसदिय मुण्डण शासनवं कण्डु तम्मन्वयराजावळियनोदिसि-गोड्डुचविद्दवसरदोळु आ-शासनस्थवह देव-दानद क्षेत्रदोळगे मय्दुनं पद्मि-देवर बट्टारव कट्टि मनेय माडि आबठारवु हलवु वरुषदिन्दवु हालागि यिद्दुदनु केळि तम्म अन्वयद धर्म्मवोप्पु … कारणवागियुं श्रीमतु प्रताप-चक्रवर्त्ति-होयसळ-श्री-वीर-सोमेश्वर-देवरसर राज्याभ्युदयवहन्तागियुं पूर्व्व-देसे … … नट्ट कल्लिन्दोळगणभूमिसहित मयिदुन-पद्मि देवन बठारवनु बी … … मनेयमाडि आ-विजय-पार्श्व-देवन श्री-कार्‍य नडिसुवन्तागि सर्व्व-बाधे-परिहारवागि आ-चन्द्रार्कस्थायियागि सलुवन्तागि अन्दिन

धनुस्-संक्रमणदल्लु आ-देवर सन्निधियल्लु आ-कुमार-**नारसिंह-देवरु** तम्म श्री-हस्तदल्लु पुन-[र्]-धारेयनेरेदु कोट्टरु मङ्गल महा श्री श्री श्री

[१२६]

आनन्द-संवत्सरद फाल्गुन-ब २ बु । वन्दु श्रीमतु प्रताप-चक्रवत्ति-कुमार-**नारसिंह-देवरसरु** तवगे उपनयनवागल्लि **बोप्प-देव-दण्णायकर** बसदिय **श्री-विजय-पार्श्व-देवर** श्री-कार्य्यंक्के आ-चन्द्रार्क्कं-स्थायियागि नडवन्तागि हिरिय-केरेय केळगे केम···द साल-माविन गट्टिनोळगे कोळद-होन्नयन पट्टशालेगे कल्ल नट्टु बिट्ट भूमियिन्द मूडल्लु गद्दे गुम्मेश्वरद कोळादल्लु गद्दे सलगे नाल्कुवम् धारा-पूर्व्वकं माडि सर्व्व-बाधे परिहारवागि कोट्टरु (परिचित अन्तिम श्लोक), मंगळ महा श्री श्री श्री

[सलके वंशमें **सोमेश** हुआ । उसका पुत्र **नारसिंह** था । सोमेशका विजय-तीर्त्थाधिनाथ (दण्णायक) **बोप्पदेव** था । (उक्त दिन) प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सळ वीर-नारसिंह देवरसने बोप्पदेव-दण्णायककी बसदिका निरीक्षणकर बसदिका पूर्व 'शासन' देखा और अपनी वंशावली पढ़ी । उसने अपने साले या जीजा पाम्र-देवके द्वारा बनवायी गई चहार-दीवारी और एक मकानको, जो कि ध्वस्त हो गया था, सुधरवाकर धनुस्-संक्रमणके समय में विजय-पार्श्व-देवकी सेवामें अर्पण कर दिया ।

[१२६]-कुमार **नारसिंह देवरसने** (उक्त मितिको) अपने 'उपनयन' संस्कारके समय (उक्त) कुछ दान दिये ।]

[EC, V, Belur tl., No. 125 and 126.]

५००

हुम्मच;—कन्नड़ ।

[वर्ष आनन्द = १२५५ ई० ? (लू. राइस) ।]

[पद्मावती मन्दिरके प्राङ्गणमें, ४वें पाषाणपर]

श्री-मूलसंघ-देशी-गणद ··· ··· दु-त्रैविद्य-देवर गुड्ड ··· ··· ··· जननी बाळचन्द्र-देवर गुड्डि व्रत-शील-गुण-सम्पन्ने सोयि-देवि आनन्द-संवत्सरद पुष्य-मास-बहुळ-दशमि-बुधवारदन्दु समाधि विधियिं मुडिपि सुर-लोकव सूरे गोण्डळु

माता कामाम्बिका श्रीमान् ··· माधवाह्वयः ।
पुत्री सोमाम्बिका तस्या सोयि-देवी ··· ज ॥
कवित्वे गमकित्वे-च वादित्वे वाग्मिता-जये ।
त्रैविद्य-बालचन्द्रस्य सदृशो नास्ति नास्ति हि ॥

मङ्गळ महा श्री

[श्री-मूलसंघ और देशी-गणके ··· दु-त्रैविद्य-देवके गृहस्थ शिष्य ··· की माँ, बाळचन्द्र-देवकी गृहस्थ-शिष्या सोयि-देवि, (उक्त मितिको), समाधिकी विधिसे मर गयी और स्वर्गलोकको प्राप्त हुई । उसकी माँ कामाम्बिका थी, पिता माधव, तथा पुत्री सोमाम्बिका थी ।

कवित्वमें, गमकित्वमें, वादित्वमें, वाग्मिता तथा जयमें त्रैविद्य-बाळचन्द्रके समान दुनियाँमें कोई नहीं है, कोई नहीं है ।]

[EC, VIII, Nagar tl , No. 53.]

५०१

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़ ।

[वर्ष नळ = १२२६ ई० (लू. राइस.)

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५०२

चिक-मागडि;—कन्नड-भग्न।

[संभवतः लगभग १२१६ ई०]

[चिक-मागडिमें, बस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमत्तु यादव-नारायण भुजबल-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री-कन्दार-देवन ११ नेय नळ-संवत्सरद ······ न्न-बहुळ-अमवासे-बड्डवारदन्दु मुडिय सा······वन्त सन्यसन-समाधियं माडि सुगति-प्राप्तनादं मङ्गळ महा श्री श्री गज-सैलेन्दु-शशाक ··· कार्त्तिक-कृष्ण-पद्ममेने हिमना ··· ··· शनिवार वुत्तरायण ··· स ··· ··· प्रणष्ट ··· देवर गुड्डनेसेव शान्त ··· नवरनु सामन्त ··· ··· मु ··· मनदोळु ता पञ्च-पदवं चिन्तिसुत्त ··· ··· मरमु ··· स्वर्ग-जनके ··· आप्त-जनं परिवारं बन्धु-जनमुमाश्रित-चनमुं निलेदेक्षरं ··· ··· शरणिक्षदेन्दु··· वुचिद्दरं।

पुरुष-निधाननं सकळ-भोगियनाश्रित-कल्प-वृक्षनम्।
नर-सुर-धेनु वन्दि-सुर-भूज नवीन-मनोज-रूपन।
गुरु-पद-भक्ति ··· ळ प्रभाव-सावन्त मुब्बन ··· वोप्देनि ···।
करुणि विधात्रमूल ··· पद-लोभिगळि ··· ··· ··· ··· ···॥

(बाकीका मिट गया है)।

[स्वस्ति। यादव-नारायण भुजबल-प्रताप-चक्रवर्त्ति कन्दार-देवके ११वें वर्षमें,—मुडिके सा ··· वन्तने, 'सन्यसन' 'महोत्सवकी (विधि)'-को करते हुए, सुखी हालत प्राप्त की। उसकी और भी प्रशंसा। '(शिलालेख बहुत घिसा हुआ है।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No. 198]

५०३

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक ११७८=१२५६ ई०]

[उसी आङ्गनमें पार्श्वनाथ बस्तिके पूर्वकी ओरके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु शक-वर्ष ११७८ आनन्द-संवत्सरद पुष्य-बहुल-चौति-मंगलवारदन्दु यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरुं त्रि-पद-त्रिशल्यरुं त्रि-गारव-रहितरुं गुप्ति-त्रय-संयुतरुं सप्त-भयातीतरुं अस (श) रण-शरण्यरुं श्रीमतु महा-मण्डलाचार्य्यरुं राज-गुरुगळुमप्प श्री-पुष्पसेन-देवरुमकलङ्क-देवरु सन्यसन-विधियिं मुडिपि मुक्ति-पथवं पडेदरु ॥

श्री-परमात्म-चिन्तेयोळे चित्तमनागळे पतु निट्टनन्त- ।
आत्यद-सौख्यमं पडेव पञ्च-पदङ्गळनोदुतर्त्थियिम् ।
बाप्पुरे वादिराज-मुनि-पाद-पयोरुह-वृं (भृं) ग मुक्तियेम्- ।
बोपळ पुष्पसेन-यति कूडिदनैदे मनोनुरागदिम् ॥
आ-नन्दन-संवत्सरद् ।
आनन्ददे पुष्प-ब्रहुळ-मङ्गळवारम् ।
ताना-चौतिय-दिनदोळु ।
ज्ञानात्मं पुष्पसेन मुडिपिदनोलविम् ॥
स्थिरदिन्द पञ्च-वसदिय ।
वर-मुनि-गुणसेन-सिद्धान्तर कय्योळ् ।
भरदिं कय्येदे गोट्टा- ।
नर-लोकं पोगळे मुक्ति-पथवं पडेदम् ॥
परम-जिन-तत्व-चिन्तेये ।

स्थिरतरवागिरलु भाव नेलेगोळे मुनिपा ।
धरेयोळगे मुद्दिपि मुक्तिगे ।
वरनार्द निष्कळङ्कनीयकळङ्कम् ॥
अकलङ्क-देवरेय्दिद ।
सकळङ्कानन्दवप्य संवत्सरदोळ् ।
मुक्तिगे मार्गशिरं ताम् ।
शुक्लं पौर्णमिय दिनद बुधवारदोळम् ॥
प्रकटिसि जिन-धर्म्मंमुमम् ।
सुकृतमुमागिरलु पेळ ··· यतियम ।
सकळागम-कोविदनम् ।
अकलङ्क-व्रतियनोय्य तक्कुदे धात्रा ॥
इल्लेम्बने कुडुववसरव् ।
अल्लेम्बो मुनिनन्दवक्लदु कालम् ।
होल्लेम्बरे वेळ्पवसर ।
निल्लेम्बरे पुष्पसेन-यति-पति धरेयोळ् ॥
तर्क-व्याकरणाब्धिमस्खलमतिज्ञानेन यः पप्लुते ।
श्री-नन्द्यान्वय-राजभूषण-मणि श्री- वादिराजो मुनि ।
तच्छिष्यः पर-वादि-पर्व्वत पवि :साहित्य-रत्नाकरः ।
जीयाद्-द्रविळ-जैनसंघ-तिलक श्री-पुष्पसेनो मुनिः ॥
सायोजन मग सान्तोज माडिद ॥

[जिनशासन की प्रशंसा । स्वस्ति । (उक्त मिति को), साधुके गुणोंको प्राप्त कर (गुणोंके नाम दिये हैं), त्रिशल्य रहित त्रिपद[1]को धारण कर,

---

1. त्रिपद अपूर्वकरण, अधःप्रवृत्तिकरण और अनिवृत्तिकरण हैं।

त्रिगारव[1]से मुक्त होकर त्रिगुप्तिसे संयुक्त होकर, सप्त-भय[2]से रहित होकर, महा-मण्डलाचार्य और राज-गुरू पुष्पसेन-देव और अकलङ्कदेवने सन्यसन-विधिसे शरीर त्याग कर मुक्तिका मार्ग प्राप्त किया। परमात्माके ध्यानमें अपनेको लगा-कर, शाश्वत सुख देने वाले पञ्च-नमस्कार मंत्रका उच्चारण करते हुए, वादिराज-मुनिके चरण-कमलोंके भ्रमर,—पुष्पसेन-यतिने मुक्ति-फल प्राप्त किया। उक्त मितिको, आनन्दके साथ सँभले हुए पुष्पसेन मुनिने इच्छा-पूर्वक देहत्याग किया। मुख्य मुनि गुणसेन-सिद्धनाथको पञ्चवसदि स्थायीरूपसे सौंप कर उन्होंने मुक्तिका मार्ग अख्तियार किया।

अकलङ्कने भी उक्त मितिको मुक्तिका मार्ग अपनाया। वादिराज-मुनिके शिष्य पुष्पसेन-मुनि थे।

सायोजके पुत्र सान्तोजने इसे बनाया।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 44]

५०४

हीरेहल्लि—कन्नड़।

[शक ११७१=१२५० ई०]

[हीरेहल्लिमें, मल्लेश्वर मन्दिरकी दक्षिणी दीवालके पाषाणके बायीं ओर]

नमोऽस्तु सिद्धेभ्यो नम स्वस्ति श्री शक-वरुष ११७१ नेय राक्षस-[3] संवत्सरद वैशाख-शुद्ध ·· सोमवारदन्दु आदिगौण्डन तक्किय बसदिय

---

१. त्रिगारव पञ्चसून (काटना, पीसना, रसोई बनाना, जल भरना, बुहारना), क्रोमोहादि, परिग्रह (भूमि, मकान, पशु, धान्य, द्विपद, चतुष्पद, सवारी, बिस्तर, दासी-दास, कुप्य-भाण्ड) हैं।

२. सप्त-भय मरण-भय, राज-भय, चोर-भय, व्याघ्र-भय, दुष्ट-दैव-भय, परिषद्-भय और संसारभय हैं।

३. राक्षस=११७८।

आ-स्थानिक पेरुमाळमा-नूर माच-गौण्ड मार-गौण्ड चिक-गौण्ड चिक-मारेय अक्षिय स्थानिक कल्ल-बोय समस्त-प्रजेगळुं वज्र-नन्दि-सिद्धान्ति-देवर मल्लि-षेण-देवर पेरुमाळु-कन्तियर माचय्यन मग माडय्यङ्गे धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट बसदियं माद्य्यन हिरियमगं बेलनारण अवचैय मचेलनुं (वे ही अन्तिम वाकयावयव) एकोटि-जिनालय ··· मगल महा श्री श्री

[(उक्त मितिको) आदिगौण्डनहल्लिकी बसादिके पुरोहित पेरुमालने दूसरों के साथ (जिनका नाम दिया है) मिलकर एक बसदि बनाकर पेरुमालु-कान्तिके पुत्र माचय्यके पुत्र माद्य्यको दी। (वे ही अन्तिम श्लोक।)

एकोटि-जिनालयकी वृद्धि होवे !]

[Ec, v, Belur tl. No 131]

५०५

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़।

[वर्ष कालयुक्त=१२८८ ई० ? (लू० राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग]

५०६

सियाल-बेट;—संस्कृत

[सं० १३१५=१२५८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[ASI, XVI, p. 254, t.]

५०७

पर्वत सुन्ध (राजपूताना)—संस्कृत

[सं० १३१९ = १२६२ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[EI, IX, No. 9, G, t. and a.]

५०८

कडकोल;—कन्नड़।

[शक ११८९ = १२६८ ई०]

[१] स्वस्ति श्री- सं० (श) कवरुस (ष) ११८९ प्रभ

[२] व- संवत्सरद माघ सु (शु) ध (द्ध) ५ सु (शु)-

[३] क्रवारदल्लु मूलसंघद सूर-

[४] स्थगणद श्री-नन्दि भट्टारकदेवरगु-

[५] [ड्] ड कडकोळद सावन्त-देवगावुण्ड-

[६] न मग मारगावुण्ड सर्व्वं निव्रि (वृ) [त्ति] य कै-

[७] यि- कोण्डु समाधियिं मुडिपि स्व-

(८) (र्) ग- प्राप्तनाद निषिधिय स्तंभ [।] मं-

(९) गळ-महा-श्री-श्री-श्री [॥]

अनुवाद स्वस्ति! मूलसंघ के सूरस्थगणके श्रीनन्दिभट्टारक देव के शिष्य या अनुयायी; (तथा) कडकोळ के सावन्त-देवगावुण्ड के पुत्र—मारगावुण्डकी स्मृतिमें यह 'निषिधि' का स्तम्भ है। मारगावुण्डने तमाम इन्द्रियों का निरोध करके, सर्व सांसारिक कृत्योंसे निवृत्ति लेकर प्रभव संवत्सर-जो कि शक वर्ष ११८९ था—के माघ (महीने) के शुक्ल पक्षकी पञ्चमी, शुक्रवार को समाधि पूर्वक स्वर्ग यात्रा की। मंगल-महा-श्री-श्री-श्री।

[IA, XII, p. 101-102, No. 4.] t. and tr.

५०९

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड ।

वर्ष विभव=१२६८ ई०] ? (लु. राइस) ।]

[पद्मावती मन्दिर के प्राङ्गणमें, दायें हाथ की तरफ के खम्भे पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीमद्विभव-संवत्सरद् चैत्र-मा १३ दश्यां तिथौ .. वैभव...जकपाख्यस्य पुत्राभ्यां राम-श्रेष्ठि-ब्रह्म-श्रेष्ठिभ्या धन्य (आम्) आवासं प्रथम-मण्डप-निर्म्माणं -कृतं चिर-कालं वर्द्धता जैन-शासनं कर्तॄणा सद्-धर्म्मं श्री-बलायु-रारोग्यैश्वर्याभि-वृद्धिरस्तु मङ्गल महा श्री

[जिन शासन-की प्रशंसा । (उक्त मिति को) धनिक जकपके दो पुत्रों, राम श्रेष्ठि और ब्रह्म श्रेष्ठि ने पहला मण्डप बहुशोभा-युक्त बनवाया ।

जैन-शासन चिरकाल तक बढ़े । इसके प्रचार करने वालो में सद्धर्म, बल, आयु, आरोग्य और ऐश्वर्य भी अभिवृद्धि होवे ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 55]

५१०

कण्ठकोट;—संस्कृत

[सं० १३२.=१२७० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASWI, Selections, No. CLII, p. 64, a; p. 86, t. (ins. No. 30).]

५११

बेलूरु;—कन्नड़-भग्न।

[वर्ष प्रजापति = १२७१ ई० (लू० राइस)]

[बेलूरमें, सिद्धेश्वर मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

··· स्तु ॥

श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं ··· ··· ॥

··· नाना-नूत्न-रत्न-प्रवण ··· ··· समुद्रा ··· ··· गु अनून-दान-विभव ··· ··· जम्बूद्वीपमा-समुद्रदिं मुद्रितमागिप्पुदल्लि ॥

कन्द ॥ भरतावनि-घन-शोभा ···। ··· गु आश्चर्यं ··· ··· खण्डम्।
··· ··· कर्ण्णाटक-। वर-विपयं सन्ततं ··· विषयम् ॥

··· ··· येनिप-भोग्य-नुत-वस्तु ··· ··· ··· ··· नीकानेक ··· ··· धामनेषेद सार-सौख्यारामम् ॥ ··· अन्तु सन्ततं मोदलाद्-अनेक-जनपदक् अधीश्वरनुमतुळ-प्रताप-लङ्केश्वरनुं यादवान्वय-वियत्-तळ-मार्त्तण्डनुं नय-वि ··· नाना-दान-गुण-मणि-करण्डनुं विजया ······ विधायकनुमप्प रामचन्द्र-भूपाळनन्वय ··· ··· माळव ··· मागध-वङ्ग-कळिङ्ग-चेर-नेपाळ व ··· ··· पाळर ··· ··· ··· एनितु बीविपुदी ··· जयसिंह ··· ··

कन्द ॥ आत ··· भुवन-भवनं ··· मातेनो ताने।
मत्तं ··· सु-ललित-प्रताप-निधि ··· गुण-मणियम् ॥

··· ··· प्रगळ्भेनिसिर्प्प-वरूथव दोरे ··· ··· वलं ··· ··· दि नेषेद ··· ··· धरित्रियोळ् मर्त्य-रूप ··· सहोदर महदेव ··· यन प्रतापमेन्तेने ॥

वृ ॥ सन्तत-रं ··· ··· मत्तु सन्ता ··· ··· ··।
··· ··· ··· ईश्वर-पदं ··· ··· ··· ···।
··· नोडलेयलोत्तिपनेन्दोडे ··· ··· जनं ··।

••• एनिप्पुदी-महदेव-महीपतियं निरन्तरम् ॥

व ॥ मत्तमा-कन्दर-राय,तनूभव-श्री-राम-देव-प्रतापमेन्तेने ॥

••• पदाम्बुज युगानवरं सततं समन्नु ••• ••• ।

••• यदु-वंश चक्रियुर्व्वी ••• ••• ••• ••• ।

••• ईतनेम्ब ••• ••• •••   • ••• ••• ।

••• रामदेव-भूपाळन तोळ-बळ-बगाङ्गने ••• ••• ।

व ॥ मत्तं तत्पाद-द्मोपजीवियप्प कूचि-राजन राव-गुरु श्रीमजिन-भट्टारक-देवरन्वय महोन्नतियेन्तेने ॥

वृ ॥ एळेयोळ् नेट्टने वीरसेन-जिनसेनाचार्य्य-वर्य्यंस् सुधा- ।

बळ ••• कल्पिता •• चार्य्यावळि श्री ••• ••• ।

••• गुणभद्र योगि-रमणं राद्धान्त-चक्रेश्वरम् ।

•• श्रीमजिनसेन-योगि सतत ••• रोळ् कीर्त्तियम् •• ।

••• अगण्यर महोन्नतियेन्तेने ॥

द ॥ श्री-मुनि-पद्मसेन-यति गोत्तम ••• ••• ••• ।

••• महोन्नति-नि ••• र-वर्द्धनेयिन्दमे मत्ते ••• ।

••• राममेनिप्प शास्त्र ••• यिन्दमे ••• श्रेष्ठियं ••• ।

•• मद-विभञ्जनन् ••• न्न ••• रे भाविपुदी-धरित्रियोळ् ॥

••• ••• राद्धान्त-सम्पत्तियं •• ••• ••• ।

••• करं विनष्टमेनिपा-तन्त्रौषदि मन्त्रदिम् ।

देवेन्द्र-स्तुत-जैन-मार्गा-सपदि ••• यं ताळ्दिदम् ।

भू-वन्द्यं वर-पद्मसेन-मुनिपं भट्टारकाग्रेसरम् ॥

नत-जिन-पाद •• त्र सु-चरित्र कळावळि-चारु-चि •••वि- ।

श्रुत-बुध-माळतेत्र निखिळाघ-दुरन्त-लता-त्रवित्र सम्- ।

स्तुत-महसे (से) न-पुत्र नय-पात्र लसद्गुरु-पुण्य-गात्र भू- ।

पति-नुत पद्मसे (से) न-यति-नाथ कृतार्थने नीने धात्रियोळ् ।

व ॥ मत्तमा-मुनीश्वर-पादारविन्द-द्वन्द्व-भकनुमनून ··· धीरनुं निज-तुरग-दळ-खर-खुर-प्रद ··· ··· ··· मनेक-बिरिदावळि-विराजमाननुमप्प श्री-कूचि-राजनन्वय-महोन्नतियेन्तेने ॥

धरणी-वन्दित-सिं [ह] देव-तनयं मज्जाम्बिका-नन्दनम् ।
शरदिन्दूज्ज्वळ-कीर्त्ति चट्टतनुजं लक्ष्माङ्गना-वल्लभम् ।
वर-योगीश्वर-पद्मसेन-पद-पद्माराधकं कूचणम् ।
स्थिर-पुण्यं पेसर्वेत्तनुत्तम-यशं साहित्य-सत्याश्रयम् ॥
प्रणय-प्राणा ··· तम्मोळवरी-भू-भागदोळ् राम-ल- ।
क्ष्मणरं पोल्वरे पोल्वरा-भरत-मात्तद्-बाहुबल्याख्यरम् ।
गुणदिं पोल्वरे पोल्वरेन्दु बुध-बन्धु-व्रातमानन्ददिम् ।
गणियिक्कुं वर-मन्त्रि-चट्ट-नृपनं श्री-कूच-दण्डेशनम् ॥

व ॥ मत्तमा-कूचि-राजन सर्व्वाङ्ग-लक्ष्मिमय महोन्नतियेन्तेने ॥

वृ ॥ मावज-मन्त्र-देवतेयनुत्तम चम्पक-वर्ण्ण-गात्रेयम् ।
पावन-शीलेयं गुणद शालेयनुद्घ-कळा-प्रवीणेयम् ।
भू-वलय-प्रणूत-मद-कुञ्जर-यानेयनोल्दु कीर्त्तिकुम् ।
श्री-विभु-कूचि-राजनेशेव्- ( ) अङ्गनेयं धरे लक्ष्मि-देवियम् ॥

वा ॥ मत्तमा-कूचि-राज-तनूजन-प्रतापवेन्तेने ॥

कं ॥ सरन सुतङ्गमधिकं । धारिणियोळ् कूचि-राज-तनुजं दानो- ।
दारतेयिं बोप्प-देवं । शूरतेयिं शूद्रकङ्गमग्गळमेनिपम् ॥
सङ्गर-रङ्गदोळदट । लिङ्गद विक्रममनिरदे तानेळिसुवम् ।
मङ्गळ-निधि बोप्प-देवं । तुङ्ग-यशं पद्मसेन-पद-युग-भक्तं ॥

व ॥ मत्तं पाण्ड्य-देश-मध्याध्यासितमाद बेतूर चलुवेन्तेने ॥

कं ॥ निरुपम-देवागारं । सु-रुचिरमेनिसिद्द विपणि गणिका-वाटम् ।
करमेसेव-प्राकारम् । पिरिदेसेदुद्यानदिन्दे बेतूरेसेगुम् ॥

व ॥ मत्तमा-बेतूर मन्नेयर शेट्टि-गुत्तर गौडुगळ वूरोडेयर महोन्नति-येन्तेने ॥

क ॥ सन्नुत-गुण-गणाश्रित- । र् उन्नतमेनिसिर्द्द पाण्ड्य-देशाधीशर् ।
मन्नेय-कुल-सञ्जात- । प्रोन्नत-विक्रमिगळखिळ-गुण-गण-मिळयर् ॥
कोण्डेयरं दुर्ज्जनरं । गण्डिगरं तेगदु तेगदु सिक्किपरन्ता- ।
मण्डळद शेट्टि-गुत्तर् । म्मण्डित-विक्रमिगळेसेवरवनी-तळदोळ् ॥
क्षितियोळ् माचि-तनूजं । वितत-यशं हरिप-गौडनुदधि-गभीरम् ।
रति-पति-निभ-माक-प्रिय- । सुतनेसेवं योग-गौडनूर्जित-तेजम् ॥
श्री महित-राम-गौडं । भूमियोळमराद्रियन्ते सु-स्थिरनेनिपम् ।
सोम-सुतं गौड-कुळ- । व्योमार्कं सूरनन्ते वर्त्तिसुतिर्प्पम् ॥

व ॥ मत्तमा-कूचि-राजं बेतूरु-प्रभृति-ग्रामगळं वळितमागि पडेदु सुखदिनिर्प्पुदुं श्री-पद्मसेन-भट्टारकरुपदेशदिं निज सर्व्वाङ्ग ··· लक्ष्मि ··· स्वर्गापवर्ग-सौख्यं कारणमागि लक्ष्मी-जिनालयमं माडिसिदनदेन्तेन्दोडे ॥

कं ॥ निरुपम-मूल-सु-संघद- । सु-रुचिरमेनिसिर्द्द-शे (से)न-गण-दोळ् मेषेवा- ।
वर-पोगळे-गच्छदिन्दं । निरविसिदं कूचनेसेव-जिन-मन्दिरमम् ॥

व ॥ मत्तमा-कूचि-राजं प्रजापति-संवत्सरदल्लि श्री-वीर-महदेव-रायन प्रशस्त-हस्तदल्लि ब्राह्मणनग्रहारमागि बिड्डवल्लि लक्ष्मी-जिनालयक्के डुणिसेयहळ्ळियनु हन्नेरडु होन्निनिं नियत-क्षेत्रमागि पुण्यतिथियोळ् धारेयं पडेदु-बन्दु तज्जिनालयद श्री पार्श्वनाथ-देवर्गे शासन-पूर्व्वकं श्री-पद्मसेन-भट्टारक-देवर श्री-पाद-प्रक्षाळनवं माडि गौडुगळु समन्वितमागि कोट्टरवावुवेन्दोडे ॥

कं ॥ अङ्गडियनडके-दोण्टम- । नङ्गज-निभरेनिप-गौडु-सहितं कूचम् ।
गङ्गन-मत्तरनेरड । ··· गाणम धारेयनेयेदर् ॥
गुण-निधि धारा-पूर्व्वं । डुणिसेयहळ्ळियननन्त-भोग ··· ।
··· ··· ··· । प्रणुत-श्री-पार्श्वनाथ-बसदिगे कोट्टम् ॥

व ॥ मत्तमा-डुणिसेयहल्लि ··· ··· मेगण-नट्ट-कल्लु तेङ्कण-दिक्किनल्लि ··

[यह शिलालेख बहुत-कुछ घिसा हुआ है।)

जिन-शासनकी प्रशंसा। जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र और कर्णाटक विषयको प्रशंसा।

बहुत राष्ट्रों का स्वामी, लङ्केश्वर, यादववंशीय राजा रामचन्द्र थे। उसकी उत्पत्ति। जयसिंह नामके कोई राजा थे। उनके पश्चात् [कन्दर राय] और उसका भाई महदेव था। कन्दर रायका पुत्र रामदेव हुआ।

तत्पादपद्मोपजीवी कूचि-राज था, और राजगुरु जिन-भट्टारक-देव थे। उनकी उत्पत्ति। वीरसेन और जिनसेनाचार्यकी परम्परामें गुण-भद्र-योगी और जिन-सेन-योगी हुए। इसके बाद महसेनके पुत्र मुनि पद्मसेन-यतिपकी प्रशंसा आती है।

उक्त मुनीश्वरके चरणोंका भक्त कूचि-राज था। उसकी उत्पत्ति। वह वि [इ] देव और मल्लाम्बिकाका पुत्र था, उसका छोटा भाई चट्ट था, पत्नी लच्मा (या लक्ष्मी) थी। उसकी पत्नी लक्ष्मी-देवीकी प्रशंसा। उसका पुत्र बोणदेव था, जो पद्मसेन मुनिके चरणोंका भक्त था।

पाण्ड्य-देशके मध्यमें स्थित बेतूर की प्रशंसा। माचिके पुत्र हरिप-गौड, माकवे पुत्र योग-गौड, तथा सोमके पुत्र राम-गौडका उल्लेख।

और जब उस कूचि-राजको बेतूर तथा दूसरे गाँवोंका घेरा मिल गया,—और जब उसकी स्त्री स्वर्गस्थ हो गयी,—पद्मसेन-भट्टारककी सम्मतिसे, उसने लक्ष्मी-जिनालय खड़ा किया। और कूचने यह मन्दिर श्री-मूलसंघके सेनगणके पोगले-गच्छको दे दिया।

कूचि-राजने (उक्त मितिको) वीर-महदेव-रायके शुभ हस्तोंसे अग्रहारके रूपमें, लक्ष्मी-जिनालयके लिये, हुणिसेयहल्लि प्राप्त करके तथा १२ होन्नुपर काम करनेवाला एक श्रोत्रिय सदाके लिये नियत कर, उसे पद्मसेन-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक, उस जिनालयके पार्श्वनाथ देवके लिये एक शासन (लेख) द्वारा सौंप दिया। तथा, गौड लोगोंके साथ-साथ चलकर, उसने एक दुकान तथा सुपारीका एक बगीचा भी दिया।

[EC, XI, Davangere tl., No 13]

५१२

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११२१ (ठीक ११९५ ?) = १२७३ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५१३

चिक्क-मागडि; कन्नड़—भग्न।

[बिना काल-निर्देशका]

[चिक्क-मागडिमें, बस्तिके पासके पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमतु यादव-नारायण प्रताप-चक्रवर्त्ति ··· ··· ···देवर वर्षद २८ नेय शार्वरि संवत्सरद कार्त्तिक ··· ··· चिक्कमागडिय अक्काले बम्मोज स ··· ··· वदिर ··· · गति ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· नेय्दे पुण्डु सत्-पुरुष-विधनुदात्त-निकि सच्चरित पडेद समाधियम् ॥

पडेदु समाधियनिन्नोर ··· ।
पडलडदमर-पुरकेणगि देव-निकायम् ।
गेडेगोडरे सुर-सुखमं ।
पडेदं बम्मोजं अमळ-जिन-भावनेयिम् ॥

[सुनार बम्मोजके लिये उसकी समाधिकर प्रदर्शक यह लेख है।]

[Ec, VII, Shikarpur tl, No 199]

५१४

हलेबीड—कन्नड।

[शक ११९७=१२७४ ई० (चीकहॉर्न)]

[आदिनाथेश्वर बस्तिके पास-बस्तिहल्लिमें]

श्रीमन्नेमिचन्द्र-पण्डितदेवरु केळिदरु

श्रीमद्बाळचन्द्र-पण्डित-देवरु सारचतुष्टयादि-ग्रन्थगळ व्याख्यानमं माडिदपरु*

(बायीं ओर) स्वस्ति श्री मूलसंघ-देशिय-गण-पुस्तक-गच्छ-कोण्ड-कुन्दान्वयदिङ्गळेश्वरद बळिय श्री-समुदायद-माघनन्दि-भट्टारक-देवर प्रिय-शिष्यरं श्रीमन्नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवरुं श्रीमदभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळुं दीक्षा-गुरुगळुं श्रुत-गुरुगळुमागे तप [सु]-श्रुतङ्गळिं जगदोळ् विख्यातं-वेट्ट श्रीमद्बाळचन्द्र-पण्डित-देवरु सक-वर्ष ११९७ नेय भाव-संवत्सरद भाद्रपद-शुद्ध १२ बुधवारद मध्याह्न-कालदोळु यमगे समाधियेन्दुं चातु-र्वर्णिगळ्गरिपि नीवेल्लरुं धार्म्मिकरप्पुदेन्दु नियामिसि क्षमितङ्गमेन्दु संन्य-सनपूर्व्वकं सकळ-निवृत्तियं माडि पर्य्यंकासनदोळिर्द्दु पञ्च-परमेष्ठिगळ स्वरूपमं ध्यानिसुतं स्व-समय-पर-समयंगळु मेच्चे उत्तम-समाधियं पडद्द- श्रीमद्राजधानी-दोरसमुद्रद समस्त-भ-(दायीं ओर) व्य-जनंगळु तत्कालोचितमप्प धर्म्म-प्रभावनेयं माडि परोक्ष-विनय-मागि गुरुगळ प्रतिकृति-समन्वितं पञ्च-परमेष्ठिगळ प्रतिमेयं माडिसि यथा-क्रमदिं लोकोत्तरमागे प्रतिष्ठेयं माडि पुण्य-वृद्धि-यशो-वृद्धियिं माडिकोण्डरु। भद्रमस्तु जयतु जिन शासनाय।

श्री-जैनागम-वार्द्धि-वर्द्धन-विधुः कन्दर्प्प-दर्प्पापहो

---

* उपर्युक्त पाषाणके सिरे पर दो मूर्तियोंके ऊपर यह लिखा हुआ है।

भव्याम्भोज-दिवाकरो गुण-निधिः कारुण्य-सौधोदधिः ।
स श्रीमानभयेन्दु-सन्मुनि-पति-प्रख्यात-शिष्योत्तमो
जीयात् कावनिशान्निबात्मनि रतौ बालेन्दु-योगीश्वरः ॥
पूर्व्वाचार्य्य-परंपरागत-जिन-स्तोत्रागमाध्यात्म-सच्-
छास्त्राणि प्रथितानि येन सहसाभूवन्निळा-मण्डले ।
श्रीमन्मान्य-मयेन्दुयोगि विबुध-प्रख्यात-सत्-सूनुना
बाळेन्दु-व्रतिपेन तेन, लसति श्री-जैनधर्म्मोऽधुना ॥

श्री-बालचन्द्र-पण्डित-देवाय नमः ॥

दूसरा लेख

(उसी बस्तिमें, समाधि-मण्डपके बायीं ओर)

श्रीमदभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळु व्याख्यानमं माडिदवरु ॥
श्रीमद्-बालचन्द्र-पण्डित-देवरु केळिदवरु ।
श्रीमज्जिनेन्द्र-मुख-निर्गत-दिव्य-वाणी
यस्याननेन्दुमुपसृत्य विवर्द्धमाना ।
तं बालचन्द्र-मुनि-पण्डित-देवमस्मिन्
लोके स्तुवन्ति कवय परमादरेण ॥
कस्त्वं कामः क एते हरि-हर-विधि-विध्वंसकाः पञ्च-बाणाः
कोऽयं धर्म्मं क एष अमर-मय-गुणस्तेऽत्र किं, योद्धुकाम ।
संख्यातीतैर्गुणौघैर्ज्जगति दश-विधैश्चारु-धर्म्मैरनन्तैर्-
ब्बाणैर्ब्बाळेन्दु-योगी लसति कुरु ततस्तत्पदाम्भोज-सेवाम् ॥
येनाधीतमतीत-बाधमभितं स [त्]-ज्ञान-सम्पादकम्
शास्त्रं सर्व्व-जनोपकारि विहिताचारोचिता प्रेमत ।
तस्मादनन्त-भव्य-कल-नरैर्ब्बाळेन्दु-योगीश्वराद्
आप्तं मुक्ति-सुखैक-साधनमनु प्रेक्षोपदेशादिकम् ॥

दक्षोऽयमनुपादादि-पद्ममावीक्ष्य तत्क्षणे ।
प्रत्यक्षादि-प्रमाणेन भेत्तुं बालेन्दु-सन्मुनिः ॥

वर्द्धतां जिन-शासनम् । श्री-पञ्च-परमेष्ठिगळे शरणु । श्री-बालचन्द्र-पण्डित-देवाय नम ॥

ॐ ह्रीं हं

[बालचन्द्र-पण्डित-देव 'सारचतुष्टय' तथा अन्य ग्रन्थोंपर टीका बनाते हैं (या करते हैं)। नेमिचन्द्र-पण्डित-देव सुनते हैं (ऊपर पाषाणके माथे पर लिखा हुआ)।

श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ, कौण्डकुन्दान्वय, इङ्गलेश्वर-बलि, श्री-समुदायके माघनन्दि-भट्टारक-देवके प्रिय शिष्य,—नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और अभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्ती उनके क्रमसे 'दीक्षागुरु' और 'श्रुतगुरु' थे,—बालचन्द्र-पंडित-देवने चतुर्वर्णोंके सामने यह घोषणा की कि "(उक्त मितिको) मध्याह्न-कालमें मैं समाधि (सल्लेखना) ले लूँगा ।" तदनुसार उनके समाधि-मरण प्राप्त करनेके बाद दोरसमुद्रके भव्य लोगों (जैनों) ने उनके स्मारक के रूपमें उनकी (अपने गुरू की) तथा पञ्च-परमेश्वरकी प्रतिमायें बनवाकर उनकी प्रतिष्ठा की । इससे उनका गुण और कीर्त्ति खूब बढे ।

१३२ वें लेखमें अभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्ती टीका करते हैं । बालचन्द्र-पण्डित-देव सुनते हैं । इसमें बालचन्द्र-पण्डित-देव की प्रशंसा भरी हुई है । कामको भी उनकी सेवा करनेका आदेश इसमे दिया हुआ है ।]

[Ec, V, Belur tl. No 131 and 132]

५१५-५१६

श्रवणबेलगोला;—कन्नड ।

[वर्ष भाव=१२७४ ई० ? (लु. राइस.)

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५१७

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५१८

गिरनार,—संस्कृत

[सं० १३३३=१२७६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 353, No. 10, t. and tr.]

५१९

चित्तौड़ (राजपूताना);—संस्कृत।

[सं० १३३४=१२७७ ई०]

[शृङ्गार चावडी मन्दिर के पास किले की दीवाल में एक पुराने मन्दिर के उल्टे बनाये गये चौखट के ऊपरी भागपर]

(१) (चिह्न) ० ॥ स्वस्ति श्री-सं०-१३३४ वर्षे वैशाख सुदि ३ बु (बु) ध-दिने श्री वृ (बृ) हद्-गच्छे सा० प्रल्हादन-पुत्र-सा०-रत्नसिंह-कारित-श्री-शान्ति-नाथ-चैत्ये सा०-समधा-पुत्र-सा०-महण-भार्या-सोहिणी पुत्री-कुम-
(२) रल-श्राविकया मातामह-सा०-ठाडा-श्रेयसे देव-कुलिका कारिता ॥

[लेखमें शान्तिनाथमन्दिरके प्राङ्गणमें एक छोटे मन्दिर (देव-कुलिका) के निर्माण का स्पष्ट उल्लेख है।]

[ASWI, progress Report 1903-1904, p. 59, t.]

५२०

श्रवणबेलगोला—कन्नड़ ।

[शक १२००=१२७८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५२१

अमरापुर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १२००=१२७८ ई०]

[अमरापुरमें, तालाब के नष्ट बाँध में एक पाषाण पर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-वसुमती-मार-धौरेय-दोर्-दण्डदं अधःकृतो-द्दण्डरं मार्त्तण्ड-कुल-भूषणरुमभिसम्पात-भीषणरुमोरेयूर-पुर-वराधीश्वररेनिप्प चोळावनीशरोळु ॥ स्वस्ति श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वर त्रिभुवनमल्ल भुज-बळ-भीम रोद्द गोव खड्ग-सह-देव अरुवत्ताद-मण्डळिकर तले-गोण्ड-गण्ड अण्टर काव पर-नारी-सहोदर पडे मेच्चे गण्ड निगळङ्क-मल्ल भीतरं कोल्ल मरेवुगे काव शरणागत-वज्र-पञ्जरमसहाय-शूर येकाङ्गवीर निश्शंक-प्रताप-चक्रवर्त्ति वीर-दानव-मुरारि पिरियल्लोण-देव-चोळ-महाराजर श्री पृथ्वी-निड्गुगल्लु-नेलेवीडिनोळु नेलसि सुख-सङ्कथा-विनोदर्दि राज्यं गेय्युत्तमिरलु शक-वर्ष ॥ १२०० नेय ईश्वर-संवत्सरद आषाढ-शुद्ध-पञ्चमी-सोमवारन्दु तैलङ्गेरेय जोग-वट्टिगेय ब्रह्म-जिनालयके मूल-संघ देशिय-गण कोण्ड-कुन्दान्वय पुस्तक-गच्छ्द् पिङ्गळेश्वरद बलिय त्रिभुवन कीर्त्ति-रावुळर प्रधान शिष्यरु बालेन्दु-मलधारि-देवर प्रिय-गुड्डनुं सज्जयन बोम्मि-सेट्टिगं मेळव्वेगं पुट्टिद मल्लि-सेट्टि तम्मडियहळ्ळिय एरेयगुय्यल तन्न एरडु-मागद् एरडु-सायिर-अडकेय-मरनु तैळङ्गेरेय बसदिय

प्रसन्न-पार्श्वदेवर प्रतिहस्तवागि मक्कळु-पर्य्यन्तं वृत्तिवन्तनेन्दुं दक्षिण-पाण्ड्य-देशद दक्षिण-मधुरेय उत्तर-भागदल्लि पोन्नर ... न्नति-सीमेय भुवलोक-नाथ विषयद भुवलोकनाथन वूर (पुर) जिन-ब्राह्मणरल्लि यजुर्व्वेददैत्रेय-शाखे वशिष्ठ-गोत्र कौण्डिन्य-मैत्रा-वरुण-वैशिष्टमेम्ब-प्रवरद दीप-नायकङ्गं पोन्नव्वेगं पुट्टिद श्री-सयनगिरियुं आ-बाळेन्दु-मलधारि-देवर प्रिय-शिष्यनुमप्प चेल्लपिल्ले-हस्तदल्लि आ-चन्द्रार्कं-वरं तन्न मेळि-भागवनु धारा-पूर्व्वकं वृत्तियागि कोट्ट ॥ चिन्तप्पुदक्के साक्षि इदिनेण्टु-समयं मल्लि-सेट्टि ओप्प श्री-वीतराग इदिनेण्टु-समयद ओप्प सदाशिव-देवरु (वही अन्तिम श्लोक)

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । मार्त्तण्ड-कुल-भूषण, ओरेयूर्-पुरवराधीश्वर, चोळ राजा थे,—जिनमेंसे,—जिस समय महा-मण्डलेश्वर, यिरुङ्गोण-देव-चोळ-महाराज अपने पृथ्वी-निडुगलके निवासस्थानमें थे·—

(उक्त मितिको,) तैलङ्गेरेमें जोगमट्टिगेके ब्रह्मजिनालयके लिये, (मूल संघ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तक-गच्छ, और इङ्गळेश्वर-बळिके त्रिभुवन-कीर्त्ति-रावुळके प्रधान शिष्य) बालेन्दु मलधारिके प्रिय गृहस्थ-शिष्य, सङ्गयके (पुत्र) बोम्मि-सेट्टि तथा मेळव्वेसे उत्पन्न,—मल्लिसेट्टिने, तैलङ्गेरे बसदिके प्रसन्न पार्श्व-देवके लिये, तम्मडियहळ्ळिमें सुपारीके २००० पेड़ोंके २ हिस्से वंशानुवंश तक जानेके लिये अलग निकाल दिये तथा दीपनायक और पोलव्वेसे उत्पन्न चेल्लपिल्लेको वे अर्पित कर दिये । (यहाँ दीपनायकके शहर, खानदान आदिका परिचय दिया है ।) चेल्लपिल्ले सयनगिरि और बालेन्दु-मलधारिका प्रिय शिष्य था । साक्षियों के हस्ताक्षर ।]

शाप ।

[EC, XII, Sira tl., No. 32.]

५२२

कलस—कन्नड ।

[शक १२००=१२७७ ई०]

[दूसरे खम्बेके शासनपर]

स्वस्ति श्रीमत्-पट्टद पिरियरसि कळाळ-महादेवियरु पृथ्वी-राज्यं गेयुत्तिरलु [शक]-काल १२०० नेय ईश्वर-संवत्सरद वृश्चिक ३ आ १ कळसनाथ-देवरिगे जिनेश्वर-देवरिगे मादेवसर्वागि कलसेट्टिय मादव दारेयनेरसिकोण्डा अक्कि मान २ नडवन्तागि निमानिय मेगे कोडङ्गिय नि ··· क सहितो गळु बिट्टि तेरुमा सलुव प १ सदे आव त्यरुगडेयू अल्ल अन्तप्पुदक्के साक्षि आ-मरसणिय नाळु कळसद हेब्बरुवरुकळु (औरों का नाम दिया है) कलसनाथदेवर अमृतर्पडिगे अक्कि कुडुते १ नील-कण्टकोबळ माकेयन कैयलि कोण्ड अलुगल-मकिय ··· हूलियहाळिय मेळे मुडुकिय तलेय गण्ण १ मेले न अन्तप्पुदक्के साक्षि कळसद ग्राम आ-हेब्बारुवकळु ।

[जिस समय अभिषिक्त ज्येष्ठ रानी कलाल-महादेवी पृथ्वीका राज्य कर रहीं थीं :—(उक्त मितिको) जब कि यह कलसनाथ और जिनेश्वर दोनोंका महान् दिन था,—कलसेट्टिके पुत्र मादवने, सर्व करोंसे मुक्त, दो 'मान' धान्य (चावल) देनेके लिये (उक्त) दान दिया। साक्षी। उन्हीं देवताके लिये एक और भी (उक्त) भूमिका दान।]

[EC, VI, Mudgere tl., No. 67 l.]

५२३

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १३३५ = १२७८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 352-353, No. 9 (II part), t. and tr.]

५२४

हलेबीड—संस्कृत और कन्नड ।

[शक १२०१ = १२७९ ई०]

[बस्तिहल्लिमें, शान्तिनाथेश्वर बस्तिके पहिले ही प्रतिमा पाषाणपर]

(सामने)

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्री-संघ-रै-कुमृति देशिय-सद्गणाख्य-
कल्पाङ्घ्रिपो लसति पुस्तक-गच्छ-शाखः ।
श्री-कुण्डकुन्द-मुनिपान्वय-चारु-मूलः
सारेङ्गळेश्वर-बळि-प्रघळोपशाख. ॥
इन्तु पोगळ्ते-वेत्त यति-सन्ततियोळ् कुलभूषणाख्य-सै- ।
द्धान्तिक-शिष्यनूर्जित-जिनालय-कारक-निम्ब-देव-सा- ।
मान्तन सुव्रतक्के गुरु वाग्-वनिता-पति माघनन्दि-सै- ।
द्धान्तिक-चक्रवर्त्ति येसेदं वसुधा-पति-राजि-पूजितम् ॥
नमो ग्रन्थविमुक्ताय तच्छिष्याय विमुक्तये ।
विशुद्ध-जैन-सिद्धान्त-नन्दिने शुभनन्दिने ॥

तच्छिष्यरु ।

धवळ-यशो-नीरञ्जित- ।
भुवनं कवि-गमक-वादि-वाग्मि-वितान- ।
प्रवरं सार्त्थक-निज-ना- ।
म-विलासं चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवम् ॥

तच्छिष्यरु ।

कु-मतौघ-निवारकनम् ।

नमस्करिप्पेम् जिनागमोद्धारकनम् ।
विमल-दयाधारकनम् ।
समुदायद माघनन्दि-भट्टारकनम् ॥
श्री-नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवोऽप्यभयचन्द्र-सैद्धान्तोऽपि ।
इति शिष्याभ्यां गुरु-माघनन्द्यमूदधर्म्म-इव ··· भ्याम् ॥
तदुभयरोळ् अभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रव (दायीं ओर) त्तिगळ महिमेयेन्तेने ॥
वृ ॥ छन्दो-न्याय-निघण्टु-शब्द-समयालङ्कार-षट्-खण्ड-वाग्-
भू-चक्रं विवृतं जिनेन्द्र-हिमवज्जात-प्रमाण-द्वयी- ।
गङ्गा-सिन्धु-युगेन दुर्म्मत-खगोर्व्वीभृद्भिदा यत् स्व-धी-
चक्राक्रान्तमतोऽभयेन्दु-यतिपः सिद्धान्त-चक्राधिपः ॥
तदुभयमुं क्रमदि दीक्षा-गुरुगळुं श्रुत-गुरुगळुमागे पेम्पु-वडेद ।
मालिनी ॥ नुत-गुण-मणि-कोशं कीर्त्ति-वक्षीकृताशं
वितत-सदुपदेशं शस्त-बोध-प्रकाशम् ।
कृत-मदन-निवासं नौमि निर्म्मोहपाशम्
हत-कुमत-निवेश बाळचन्द्र-व्रतीशम् ॥
तन्मुनीन्द्र-शिष्यरु ।
स-विशेषागम-वाक्-सुधौघमनीण्टल् कोट्ट कार-त्रि-दो- ।
ष-विकारद्दळनेत्ति किल्तु विळसद्रत्नत्रयं रक्षया- ।
गे विनयाळिगे कट्टि रक्षिसिदनी-सिद्धान्त-चक्रेशनेम् ।
भव-रोगक्के सु-वैद्यनोवभयचन्द्रं बाळचन्द्रात्मजम् ॥
सासिरदिन्नूरेरडेने- ।
या-शक-वर्ष-प्रमादि-समदूर्ज्ज-लसन्मा- ।
सासित-पक्षद नवमी- ।
शशिवार-त्रियामदोळ् तन्मुनिपम् ॥
अरिदात्मीय-समाधियं तोरदु सर्व्वाहारमं देहमं ।
मेरेदत्तोमलेयं बगं पोगळे पर्य्यङ्कासन-प्रास्तियिम् ।

नेरेदात्मोद्ध-कलांशुवं दिवदोळं तोर्प्पेन्दलेम्बन्ददिम् ।
तरिसन्दं सुर-मन्दिरक्कमयचन्द्रं कन्द्र सैद्धान्तिकम् ॥
मुददमयचन्द्र-सिद्धान्- ।
ति-देवरभाद निषिधियं दोरसमु- ।
द्रद नरवरङ्गळ् निर्म्मिसि ।
विदित-यशः-पुण्य-वृद्धियं कैकोण्डर् ॥

मंगलमहा श्री श्री श्री ॥

(बायीं ओर) श्री-अभयचन्द्र-सिद्धान्ति-देवर् तम्म शिष्य-बाळचन्द्र-देवरिगे व्याख्यानं माडिदपरु ॥ श्री श्री

[इस लेखमें बालचन्द्रके श्रुतगुरु अभयचन्द्र महासैद्धान्तिकके समाधि मरणका उल्लेख है ।

जिन शासनकी प्रशंसाके बाद श्री-संघ (मूलसंघ) को एक पर्वत मानकर उसके ऊपर देशिय-गणको एकवृक्षकी उपमा दी है । इस कल्पवृक्षकी जड कुन्द-कुन्दान्वय है, इसकी शाखाएँ पुस्तक-गच्छ हैं, और इसकी उपशाखायें इङ्ग-लेश्वर बलि हैं । इसी प्रसिद्ध परम्परामें कुलभूषण-सैद्धान्तिक, उनके शिष्य एक जिन-मन्दिरके संस्थापक निम्बदेव-सामन्त हुए । उस सामन्तके चारित्र-गुरु माघ-नन्दि-सैद्धान्तिक-चक्रवर्त्ति हुए ।

एक गन्धविमुक्त हुए, उनके शिष्य शुभनन्दि-सैद्धान्त, उनके शिष्य चारु-कीर्त्ति-पण्डित-देव, उनके शिष्य समुदायद-माघनन्दि-भट्टारक थे । माघनन्दिके दो शिष्य हुए,—नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और अभयचन्द्र सैद्धान्ती । तत्पश्चात् अभय-चन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्त्तीकी महिमाका वर्णन । ऊपरके ये दोनों बालचन्द्र-व्रतीशके क्रमसे दीक्षागुरु और श्रुतगुरु थे । बालचन्द्रके पुत्र अभयचन्द्र बालचन्द्रके शिष्य हुए । (उक्त मितिकी) रातको अपने सल्लेखनाके समयको जानकर, उसकी विधिको धारण करके अभयचन्द्र महासैद्धान्तिक दिवंगत हुए ।]

[EC, V, Belur tl., No. 133.]

४२५

कडकोल,—कन्नड ।

[शक १२०१ = १२७९ ई०]

[कडकोल गाँवके अन्दर हणमन्त या हनुमान मन्दिरके पासके स्मारक पाषाण पर यह अभिलेख है]

[१] स्वस्ति श्री स (श) कवर्ष १२०१ प्रमाथि-संवत्स-
[२] रद भाद्रपद सु (शु) द्ध छ [ट्] टि सोमवारदन्दु श्रीम-
[३] न्-मूलसंघद पद्मुमसि (? से) न-भट्टारकदेवर गु-
[४] [ड्] डि कडकोळद सावन्त सिरियम-गौडन हेण्डति
[५] चण्डिगौडि सर्व्व-निव्रि (वृ) त्तियं कयि-कोण्डु स-
[६] माढि (धि) यिं मुडिपि स्वर्ग्गप्राप्तेयाद निषिद्धि (धि)-
[७] य स्तम्भम् [।] मंगळ-महा-श्री-श्री-श्री [॥]
[८] हिर्य्य-बोप्पगौड चिक्क-बोप्पगौड चिक्कगौड
[९] क (?) लिदेव रुवा (?) घ (?) विरिदेव मुख्य हन्नेरडु-हि-
[१०] ट्टु समस्त-प्रजे बसदिगे कोट्ट येरे मत्तरु १ [।] श्री-
[११]-वान्य मङ्गल-महा-श्री-श्री-श्री [॥]

अनुवाद—स्वस्ति ! पवित्र मूल संघके पद्मुमसेन-भट्टारकदेवकी गुड्डि (शिष्या या अनुयायिन), (तथा) कडकोळके सावन्त-सिरियमगौडकी पत्नी चण्डिगौडिकी (स्मृतिका) यह 'निषिधि'-स्तंभ है । उसने यह समाधि सर्व इन्द्रियोंके विषयोंसे निवृत्त होकर तथा सर्व सांसारिक कार्योंका त्याग करके प्रमाथि संवत्सर—जो शक वर्ष १२०१ था—के भाद्रपद (महीने) के शुक्ल पक्षकी छठ, सोमवारको ली थी स्वर्ग प्राप्त किया था । मंगल और लक्ष्मी बढ़े ! १२ हिट्टु तथा हिर्य्य-बोप्प गौड, चिक्क-बोप्पगौड चिक्कगौड, (?) (कलिदेव, (तथा) रुवाघविरिदेव प्रमुख सब लोगोंने बसदिके लिये १ 'मत्तर' काली-मिट्टी वाली भूमि दी । मंगल-महा-श्री-श्री-श्री !

[IA, XII, P. 100–101. No 2. T and Tr]

५२६

चिक-मगलूर—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२०२=१२८० ई०]

[चिकमगळूरमें, लालबागमें एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्।

श्रीमन्-नाळ्-प्रभु सु-चरितनेने विनय-निधियु निर्म्मल-चित्तं प्रेमं बुध-जननिकरका-लय वासुनेमं सकळजनक्काधारं धार्म्मिष्टं धीरं धुरन्धरं पुरुषाकारं कामरूपं मसण-गावुण्डनग्र तनूजं सोम-नाम धरेयोळ्।

जिन-समय वर्धि-वर्द्धन [न्]। अनवरतं चातु-वंर्णकितुं तणियम्।
घन-महिम-श्रेयास-। मुनियगुड्डनु विनय-निधि चलदङ्क-रामनेनिपं सोमम्॥
आरडि-गौण्डेयव्वे ·· । सारदे गुण-रत्न-भूमि-चिन्तामणिय ···।
·· इं नोय्वं ताय्वरे। तोरद · ··· सोम-गौण्डनेम्ब निधानम्।

स्वस्ति परम-जिन-समय-समुद्धरण-करण-परिणततनुमेनिसिद श्री-मूल-संघद देशि-गण-पोस्तुक-गच्छ हनसोगेय बळि कोण्डकुन्दान्वयद श्रेयान्स-भट्टा-रक गुड्ड चिक्कमुगुळिय मसण-गौडनग्र-सुत सक-वरुस१२०२ नेय विक्रम-संवत्सरद श्रावण-शुद्ध-तदिगे मंगळवारदन्दु सोम-गौड समाधि वडदु सुर-लोक-प्राप्तनाद ई-निषिधिय कल्ल आतन मग हेग्गडे-गौड प्रतिष्ठे माडिद अष्ट-विधार्च्चनेगे नडविगे कारुबिय गुळिय गद्दे ··· कोम्ब ५ ··· ···

[जिन शासनकी प्रशसा। मसण-गौडके पुत्र सोमकी प्रशंसा।

चिक-मुगुळिके मसण-गौडके ज्येष्ठ पुत्र सोम-गौड, जो श्री-मूलसंघ, देशि-गण, पोस्तक-गच्छ, हनसोगे-बलि तथा कोण्डकुन्दान्वयके श्रेयान्स-भट्टारकका गृहस्थ-शिष्य था, के समाधिमरण धारणकर स्वर्ग जानेके बाद, उसका यह स्मारक-पाषाण

उसके पुत्र हेग्गडे-गोडने खड़ा किया था। उस समय अष्टविध पूजनके लिये (उक्त) भूमिका दान दिया था।]

[Ec, VI, Chikmagalur tl., No, 2]

५२७

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़।

[शक १२०३ (शक १२०१ ?)=१२८१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५२८

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२०५ = ११८२ ई०]

[जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

५२९

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १३३९=१२८२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant rem Bambay (ASI, XVI), p. 352-353, No 9 (lst parh), t. and tr.]

५३०

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १३३९ = १२८२ ई०]

श्वेताम्बर लेख

[Ant. Kathiawad. and kachh (ASWI, II), p. 169, tr.]

५३१

कण्ठकोट,—संस्कृत ।

[सं० १३४० = १२८३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASWI, Selections, No. CLII, p, 64, a.; p. 86, t. (ins, No. 26).]

५३२

सियाल-बेट;—संस्कृत ।

[सं० १३४३ = १२८६ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, p. 254, t.]

५३३

श्रवणबेल्गोला,—कन्नड़ ।

[वर्ष सर्वधारी=शक १२१०—१२८८ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५३४

तवनन्दि,—कन्नड़ ।

[वर्ष सर्वधारी = १२८८ ई० ?]

[तवनन्दिमें, किलेकी बस्तिके दक्षिणकी ओरके समाधि-पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु सर्व्वधारी-संवत्सरद आषाढ़-सुद्ध-तदिगे-बृहस्पति-वारद श्रीमतु काणूर-गणद माधवचन्द्र देवर गुड्डि श्रीमत्-नाळु-प्रभु माळि-गौडन

सोसे अप्पे-गौडन हेण्डति श्रीमत्-नाळु-प्रभु उदरैयन मगळु सिरियव्वे समाधि-विधियि मुडिपि स्वर्गस्तेयादळु मङ्गळ महा श्री श्री

[यह लेख भी समाधि-मरणकी विधि लेकर स्वर्ग प्राप्त करने का है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 195.]

५३५

हिरे-आवलि,—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-वस्तिके सामनेके १३वें पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्री-रामदेव-राज्यद-विकृत संवत्सरद भाद्रपद-ब ४ सु मलधारि-देवर गुड्ड चोळय समाधियि मुडिपि स्वर्गास्थनादनु मङ्गळ

[लेख स्पष्ट है । ईस्वी सन् १२९०; राम-देवका राज्य था ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No 113]

५३६

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १३१ = १२११ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res , XVI, p. 311, No XXII, a.]

५३७

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

[सं० १३५० = १२९३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 360-361, No. 33, t. & tr.]

५३८

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[?]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके २७वें पाषाणपर]

श्री स्वस्ति श्रीमतु यादव-नारायणं भुज-बळ-प्रौढ-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री-रामचन्द्र-राज्योदयद २२ नेय जय-संवत्सरद पुष्य-बहुळ-अष्टमो-आदिवारदन्दु श्रीमन्-नाळ्-प्रभु अवलिय-माद-गौडन मग काम-गौडन तम्म बेळ-गौडन हेण्डति मूल-संघ सेन-गण कोण्डकुन्दान्वयद कन्तरसेन-देवर गुड्डि बक्कचि-गौडि समाधि विधियि मुडिपि स्वर्गा-प्राप्तळादळु मङ्गळ महा श्री

[लेख स्पष्ट है। ईस्वी सन् १२५५; रामचन्द्रका राज्य था।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 124.]

५३९

खम्भात (Cambay),—संस्कृत-भग्न।

[सं० १३५२=१२९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Bhavnagar Ins., p. 227-233, t and tr.]

५४०

तवनन्दि,—कन्नड।

—[?] पर ई० १२९२

[तवनन्दिमें, पाँचवें समाधि-पाषाणपर]

कलि-चलि-महदेवण्णान।

कुलमुमनुद्धरिसलेन्दु रामन बसरोळ्।

सले पुष्टि कीर्त्ति वर्द्धेदम् ।
बल युत दण्डेश-माधवं वसुमतियोळ् ॥
सकळ-गुण-भरिते जिन-पा- ।
द-कमळ-युग भक्ते अरसलाङ्गने या··· ।
सु-कवि-सुरभून- दण्णा- ।
यक-माधव नेसदनखिळ-वसुधा-तळदोळ् ॥
श्रीमन्नन्दन वत्सरे परिलसज्-ज्येष्ठे तु मासे सिते
पक्षे रुद्र-(मिते) दिने गुरौ च विमळे वारे-कळा-कोविदः ।
श्रीमन्माधवचन्द्र-देव-चरणाम्भोजात-भृङ्गो जगद्-
विख्याताभित-कल्प-वृक्ष-स श-श्री-माधवाख्य-प्रभु ॥
स्वामि वञ्चकरोळ् गण्डस् सर्व्वं-सासारिकं पुरा ।
त्यक्त्वा जिनालयं कृत्वा ख्यात तवनिधावळम् ॥
सोऽयं प्रभुगळादित्यस्समाधि-विधिना भुवि ।
नाक-लोकमगाद् दण्डनाथ-श्री-माधव-प्रभु ॥
श्रीमद्-यादव-नारायणं भुज-बळ-प्रौढ-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री वीर-रामचन्द्र-राय-विजय राज्योदयद २३ नेय नन्दन-संवत्सरद ज्येष्ठ-ब. ११ गुरुवार-दन्दु श्रीमत्-काणूर-गणद माधवचन्द्र-भट्टारकर गुड्ड श्रीमत्-नाळ्-प्रभु प्रभुगळादित्यं प्रजे-मेच्चे-गण्डं ··· ··· · दण्णायक-माडि-गौडं समाधि-विधियि शुद्धुपि स्वर्ग-मासनादनु मङ्गल महा श्री श्री

[वीर महदेवण्णके कुलको आनन्दित करनेके लिये रामकी कुक्षिसे दण्डेश-माधव उत्पन्न हुआ था। वह माधवचन्द्र-देवके चरण-कमलोंका भ्रमर था, उसने तमाम कौटुम्बिक बन्धनोंको छोड़कर, जिनमन्दिर बँधवाकर समाधिमरणपूर्वक स्वर्गको प्रयाण किया था। यादव-नारायण, भुजबल-प्रौढ़-प्रताप-चक्रवर्त्ती वीर-रामचन्द्र-रायके विजय-राज्यमें, (उक्त मितिको), काणूर-गणके माधवचन्द्र-भट्टारकके गृहस्थ शिष्य-नाळ्प्रभु दण्डनायक माडि-गौड स्वर्गको गये।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 198]

५४१

हिरे-आवली;—कन्नड़ ।

—[?]=१२६९ ई० का

[हिरे आवलिमें, ध्वस्त जिन-वस्तिके सामनेके पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमत्तु यादव नारायणम् भुज-बळ प्रवुड-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री-रामचन्द्र-विजय-राज्यदोयद १ १३ नेय मनुमथ(मन्मथ)-संवत्सरद् मार्गशिर-बहुळ १३ य ······ श्रीमन्-नाळ्-प्रभु आवलिय कामं काळ-गवुडनु श्री मूल-संग (घ) द कोण्डकुन्दान्वयद सुराष्ट्र-गणद देवणन्दि-देवर गुड्ड समाधि-विधियिं मुडिहि स्वर्गास्तनादनु मङ्गल महा श्री ॥

[स्वस्ति । यादव-नारायण, भुजबळ-प्रौढ़-प्रताप चक्रवर्ती रामचन्द्रके विजय-राज्यके २३वें (?) वर्षमें, जो कि मन्मथ वर्ष था, (उक्त मितिको), श्री-मूल-संघ, कोण्डकुन्दान्वय तथा सुराष्ट्र-गणके देवनन्दि-देवके गृहस्थ-शिष्य, नाळ्-प्रभु आवळि-काळ-गवुड, समाधि-विधिको धारण करके, स्वर्गको गया ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 101.]

५४२

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १२१८ = १२९६ ई०]

[उसी स्थानपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमत्तु शक-वर्षं १२१८ नेय दुर्म्मुखि-संवत्सरद् पुष्य सु-विदिगेलु श्री-गुणसेन-सिद्धान्त-देवर प्रिय-गुड्ड यादगवुड समाधि-विधियि मुडिपि सुर-लोक-प्राप्तनाद मङ्गळ महा श्री

[जिन शासनकी प्रशंसा। स्वस्ति। (उक्त मितिको), गुणसेन सिद्धान्त-देवके प्रिय गृहस्थ-शिष्य याद-गवुडने 'समाधि'-विधि द्वारा देवलोक प्राप्त किया।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 43.]

५४३

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़।

[वर्ष दुर्म्मुखि = १२१६ ई० ? (लू० राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५४४

हिरे-आवलि;-संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष दुर्म्मुखि = १२१६ ई० ? (लू० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके १४ वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं कोटि-नायकन विजय-राज्योदयद दुर्म्मुखि-संवत्सरद भाद्रपद-ब ११ आ। श्रीमन्-नाळ्-प्रभु अवलिय काळ-गौडन पुत्र सिरियम-गौडन मग श्री-मूलसंग (घ) देसि-गणद रामचन्द्र-मलधारि-देवर गुड्ड फल्ल-गौड सन्यसन-समाधियिं मुडिपि स्वर्ग्गस्तनाद मङ्गल महा श्री श्री श्री

[लेख स्पष्ट है। ईस्वी सन् १२९६ (?); कोटि-नायकका राज्य था।]

[Ec, VIII, Sorab tl No 114]

५४५

हेग्गेरे;—कन्नड़।

[शक १२२० = १२९८ ई०]

[हेग्गेरेमें, उसी बस्तीमें तीसरे पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमत्पञ्च-कल्याणाभ्युदय शक वर्षद १२२० ने हेमलम्बि-संवत्सरद-कार्त्तिक ब ११ सु-वेनिप नन्दा भृगुविनलु उत्तरा-नक्षत्रदलु उत्तरोत्तरवह श्री-मूल-संघ देशिय्य य)-गण श्रीमत्-त्रिभुवनकीर्त्ति-राऊळ-शिष्यरु कलि-युग-गण-धर मदनन गेलिद अखि-बळ सकल-जीव-दय (या)-पर-नेम्व मलधारि-बाळचन्द्र-राऊळ ··· ··· सुत चन्द्रकीर्त्ति स्वर्ग-वडेदम् ।

हेग्गेरेय भव्य-जनता '-।
वेग्गळवेनिसिप्पं ··· दीपकरिवरुम् ।
स्वर्गं वडेदं मुनिपन ।
वेग्गळवेनिसिद निषिधिय माडिसिदर् ॥

[स्वस्ति । (उक्त मितिको), श्री-मूलसंघ, देशिय-गणके त्रिभुवनकीर्त्ति-राउलके शिष्य, कलियुग-गणधर, मलधारि-बालचन्द्र-राउळके पुत्र चन्द्रकीर्त्तिने स्वर्गलाभ किया। हेग्गेरेके भव्य (जैन) लोगोंके अग्रणियोंने मुनिपोंमें अग्रणीके लिये उनके स्वर्ग-प्राप्तिके उपलक्ष्में यह स्मारक बनवाया।]

[EC, XII, Chik-Nayakan halli tl., No. 24]

५४६

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १३५६ = १२९९ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant. rem Bombay (ASI, XVI), p. 363, No. 37, t. & tr.]

५५७

हिरे-आवलि;—कन्नड़ ।

[वर्ष विकारी = १२९९ ई० ? (लू० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन बस्तिके सामनेके १२ वें पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वर तुळुव-राय .... राय-बेण्टेकार मलेयमण्ड-लिक-मदेभ-कुम्भ-विदळन-वेदण्डारि-सदृश श्रीमन्महामण्डलिक कोटि-नायकन राज्या भ्युदयदन्दु विकारि-संवत्सरद श्रावण-मास-शुक्लपक्ष-पञ्चमी-शनिवार-दन्दु श्री-मूल-संघ देशी गण-कोण्डकुन्दान्वयद समस्त-गुण-शील-सम्पन्नरप्प गुणनन्दि-भट्टारकर गुड्डि खण्ड-स्फुटित-जीर्ण-जिनालयोद्धरण-परिणतान्तःकरणनु आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदनुं सम्यक्त्व-रत्नाकरनु जिन-गन्धोदक-पवित्री-कृतोत्तमांगनुमप्प श्रीमन्-नाळ्-प्रभु अवलिय शिरियम-गौडन सर्व्वांग-लक्ष्मि शिरि-यम-गौडि सकळ-सन्यसन-पूर्व्वक समाधियि मुडिपि स्वर्ग्गस्तेयादळु ॥ मङ्गल महा ! श्री

[लेख स्पष्ट है । १२९९ ई०; कोटि-नायकका राज्य था ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 122,]

५५८

हलेबीड—संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक १२२२ = १३०० ई०]

[बस्तिहळ्ळिमें, दूसरे प्रतिमा-पाषाण पर]

(सामने)

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री मूल-संघ-देशिय गण-पुस्तक-गच्छ-कुण्डकुन्दान्वयद पिङ्गलेश्वरद बळिय श्री-समुदायद माघनन्दि-भट्टारकदेवर प्रिय-शिष्यरु श्री-नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवरु श्रीमदभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळुं विद्या-गुरुगळुं व्रत-गुरुगळुमागे तपश्श्रुतंगळिं जगदोळ् विख्यातियं पेट्ट श्रीमद्बाळचन्द्र-पण्डित-देवर प्रियाग्र-शिष्यरुमप्प श्रीमद्रामचंद्र-मलधारि-देवरु सक-वरुष-सासि-रदिन्नूरिप्पत्तेरडनेय सार्व्वरि संवत्सरद-चैत्र-बहुल-तदिगे-बृहद्वार-दपराह्णकालदोळेमगे समाधियेन्दु चातुर्व्वर्ण्णंगळगरिपि (बायीं ओर) नीमेलरं धार्म्मिकरप्पुदेन्दु नियामिसि क्षमितव्यमेन्दु सन्यसनपूर्व्वकं सकळ-निवृत्तियं माडि पर्य्यङ्कासनदिं पञ्च-गुरु-चरण-स्मरणेयं माडुत्त दिवके सन्दरु। अवर तपो-माहात्म्य-मेन्तेन्दोडे।

नडेवडे बाहु-दूगड युगान्तरमं नेरे नोडदावगम्।
नडेयद-कामिनी-कन*मं सले शोकद कर्कसङ्गळम्।
नुडियदहर्न्निशं विकथेयं मारेदाडद मोह-पाशदोळ्।
तोडरद्द ··· मलधारिय ··· ··· ··· विराजिकुम्॥

श्रीमद्रामचन्द्र मलधारि-
देवर तम्म प्रियाग्र-शिष्यरु-
मप्प शुभचन्द्र-देवरिंगे श्रे-
यो-मार्गोपदेशमं माडियरु
अवरु केळिहरु॥

श्रीमद्-बालचन्द्र-पण्डित-देवरु
तम्म प्रियाग्र-शिष्यमरुप्प श्री-
मद्-रामचन्द्र-मलधारि-देवरिंगे
सारचतुष्टयं मोदलाद ग्रन्थगळ
व्याख्यानं माडिहरु अवरु केळिहरु॥*

यिन्तु पोगळते-वेत्त श्रीमद्रामचन्द्र-मलधारि-देवर प्रतिकृति-समन्वित-पञ्च-परमेष्ठिगळ प्रतिमेगळं श्रीमद्-राजधानि-दोरसमुद्रद मन्यजनंगळु माडिसि पुण्य-वृद्धि-यशोवृद्धिय कैकोण्डरु॥ भद्रमस्तु जिनशासनाय मंगल महा श्री॥

[इस लेखमें रामचन्द्र-मलधारि-देवके सल्लेखना-व्रत लेनेका उल्लेख है। रामचन्द्र-मलधारिदेवके गुरु बालचन्द्र-पण्डित-देव, इनके गुरु माघनन्दि-भट्टारक

* ये दो प्रतिमाओं पर लिखे हुए हैं।

देव, जो मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक गच्छ, कुण्डकुन्दान्वय, पिङ्गलेश्वर-बलि और श्री-समुदाके थे। बा० प० दे० के विद्यागुरु नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और श्रुत-गुरु अभयदेव-सिद्धान्त-चक्रवर्त्ति थे। रा० म० दे० के शिष्य शुभचन्द्र देव थे। इनकी प्रतिमा दोरसमुद्रके जैनोंने बनायी थी।

[Ec, V, Bel w tl., No I34]

५४९

हलेबीड—कन्नड।

[बिना काल-निर्देशका पर लगभग ११०० ई० ?]

[हलेबीडसे लगी हुई बस्तिहल्लिमें, पार्श्वनाथ बस्तिके बाहरकी दीवालके स्तम्भ पर]

ईशान्यद-आदि-मोदलागि ईशान्यद हदिनैदु-कैयन्तरदलु आरुगय्युन्त्वेदट्ट शान्तिनाथ-देवरु भूमिस्थवागिद्दहरु आवनानुं पुण्य-पुरुषं तेगदु प्रतिष्ठेय माडि पुण्यमं माडिकोळुवुदु ॥

[ईशान दिशासे शुरू करके, उससे (ईशान दिशासे) १५ बिलस्तके अन्तरपर शान्तिनाथ देव, जिनकी ऊँचाई ६ बिलस्त है, जमीनके अन्दर गड़े हुए हैं। कोई पुण्य-पुरुष उनको बाहर निकालकर, उनकी प्रतिष्ठाकर 'पुण्यका लाभ ले।]

[Ec, v, Belur tl. No 127]

५५०

पर्वत आबू—प्राकृत।

[सं० १२६० = १२०३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Asiat, Res, XVI, P. 311, No XX, a.]

५५१

होन्नेनहल्लि;—कन्नड़।

[शक १२२५ = १३०३ ई०]

[होन्नेनहल्लि (किरजाजि प्रदेश) में, बस्तिके प्रवेशके बायीं ओरके पत्थरपर]

स्वस्ति श्री मूलसंघ देशियगण पोस्तकगच्छ कोण्डकुन्दान्वय हनसोगेय बळिय श्री **बाहुबलि-मलधारि-देवर** प्रिय-शिष्य-रुमप्प **श्री-पद्मनन्दि-भट्टारक-देवरु शक-वर्ष १२२५ शुभकृतु-संवत्सरदन्दु होन्नेयनहळ्ळिय** बसदिय गन्ध-गुडियनु गद्याणं हदिनय्दनू कोट्टु माडिसिदरु (**बाहुबलि-देवरु पारिश्व-देवरु** बरसिदरु) मङ्गळमहा श्री इवनळिदवरु नरकक्के लोहरु ॥

[पद्मनन्दि-भट्टारक-देवने, जो मूलसंघ देशीगण पुस्तकगच्छ तथा कोण्डकुन्दा-न्वयके, और हनसोगेके बाहुबलि-मलधारि-देवके प्रिय शिष्य थे, होन्नेयनहल्लि बसदिको १५ 'गद्याण' (गद्याण एक सिक्का (मुद्रा) विशेष है) दिये और उसके लिये 'गन्ध-गुडि' भी बनवायी थी। (इस लेखको बाहुबलि-देव और पारिश्व-देवने लिखा था।)]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 14]

५५२

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़।

[शक १२३५=१३१३ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग]



५५३

गिरनार,—संस्कृत

[सं० १३७०=१३१३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 362, No. 36, t. and tr.]

५५४

पर्वत आबू—संस्कृत ।

[सं० १३७६ = १३२२ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res. XVI, p. 312, No XXII, a.]

५५५

कुप्पटूर;—संस्कृत तथा कन्नड़।

वर्ष चित्रभानु [१३२२ ई० (या १३०२) ? (लू. राइस)]

[कुप्पटूरमें, चौथे पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
द्वीपे जम्बूमति क्षेत्रे भारते भीधरान्विते ।
चन्द्रगुप्तेन सु-क्षेत्र-धर्म्मगेहेन धीमता ॥
रक्षितो दक्षिणा-पा ··· -जन-सम्पद्-विराजितः ।
अष्टैश्वर्य-निलयो नागरखण्डक-नाम-भाक् ॥

स्वस्ति-मागस्ति विषयो विषयोऽखिल-सम्पदाम् ।
निलयो लय-राहित्यादासता श्रीमतां सताम् ॥
तत्र ॥ नाळिकेराम्र-पूगा [···] द्यारामेण विराजित
विद्यते कुप्पटूराख्यो ग्रामो गोपेश-रक्षितः ।
तत्रास्ति हरिहराधीश-भू-सती-तिलकोपम ।
जिन-चैत्यालयो नाम कदम्बैः कृत-शासनः ॥
तच्चैत्य-पूजनोद्योग-चातुरी-वार्द्धि-चन्द्रमाः ।
चन्द्रप्रभ इति ख्यातः पार्श्वनाथस्य बान्धव ॥
पितृ-दुर्व्वंश-निर्दिष्ट-गुरु पण्डित-सेवक· ।
वर्त्तमाने चित्रभानौ वत्सरे कार्त्तिके च सः ।
मासे स कृष्ण-दशमी-तिथौ सोम-समाह्वये ।
वारे दुर्व्वार-यम-राड्-दूत-ज्वर-गदार्द्दितः ॥
आयु ·परिसमाप्तेश्च कृत-पुण्य-परिग्रह· ।
स-सुत· ··· ··· ··· ··· नित्य-सुखास्पदम् ॥

श्री श्री

[जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्रमें श्रीधरपर्वतके पास नागरखण्ड नामका एक प्रदेश था। उसमें अनेक फल सहित वृक्षोंके बगीचों सहित, गोपेश द्वारा रक्षित कुप्पटूर् नामका गाँव था। उसमें राजा हरिहरकी भूमिमें एक जिन-चैत्यालय था, जिसमें कदम्बोंकी तरफसे एक शासन (दान-लेख) मिला था। उस चैत्यमें पार्श्वनाथके बान्धव प्रसिद्ध चन्द्रप्रभ थे जो कि एक पण्डितके गुरू थे। (उक्त मितिको) उसे यमराजके दूतोंकी तरफसे बुखार आ गया और अपनी जिन्दगीका अन्त करके नित्य सुखके स्थान (अर्थात् स्वर्गको) चला गया।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 263]

५५६

हिरे-आवलि;—कन्नड ।

[वर्ष विजय = १२४६ ई० ? (ख़ू. शाइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-बस्तिके सामनेके, पाषाणपर]

व्यय-संवत्सरद ज्येष्ठ-सु ५ गु रामचन्द्र-मलधारि गुरुगळ गुड्ड अवलिय चन्द्र-गौडन मग राम-गौड जिन-पदवनयिदिद ।

[लेख स्पष्ट है । १२४६ ई०; राजाका उल्लेख नहीं है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 123]

५५७

तिरुमलै,—तामिल ।

[?]

१. स्वस्ति श्री [॥] राजनारायणन् शंबुवराजर्क्कु या-
२. ण्डु १२ वदु पोन्नूर् मण्णैपोन्नाण्डै
३. मगळ् नल्लात्ताळ् वैगैत्तिरुमलैक्कु एरियरुळ-
४. प्पण्णिन श्रीविहारनायनार् पोन्नेयिल्-
५. नाथर् [।] धर्म्मायज्ञयतु [॥]

[यह लेख राजनारायण शम्बुवराजके १२वें वर्षका है और वैगै-तिरुमलै, अर्थात् वैगैके पवित्र पर्वतपर जैन प्रतिमाकी प्रतिष्ठापनाका उल्लेख करता है । इस प्रतिष्ठापनाको करनेवाली पोन्नूरकी निवासी मण्णै-पोन्नाण्डैकी पुत्री नल्लात्ताल् थी ।]

[South Indian ins., I, No. 70 (p. 101–102) t. & tr.]

५५८

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड।

[वर्ष विजय=१३५३ ई० (लु. राइस)।

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-बस्तिके सामनेके १०वें पाषाणपर,]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाडु श्री-वीर हरियप्प-वोडेयर राज्योदयदन्दु विजय संवत्सरद पुष्य-सुद्द ३० सु॥ श्रीमनाळुव-प्रभु राम-चन्द्र-मलधारि-देवर गुड्डु सुरगियहळ्ळिय गोप-गौडनु मग अवलिय काम-गौण्डन मोम्म काम-गवुडनु पञ्च-नमस्कारदिं मुडिहिद मङ्गल महा श्री

[लेख स्पष्ट है। १३५३ ई०; उस समय हरियप्प-वोडेयर्का राज्य था।]

[EC, VIII, Sorab. tl., No. 110]

५५९

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक १२७६=१३५४ ई०]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-बस्तिके चौथे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाडु हिन्दुव-राय-सुरत्राण ... वीर-हरियप्प-वोडेयर राज्योदयदन्दु शक-वरुष १२७६ विजय-संवत्सरद पुष्य-बहुळ-तदिगे आ॥ श्रीमन्नाळुव-प्रभु-आवलिय काम-गौडन् मग सिरियम-गौड

सिरियम-गौडन सुपुत्र मल-गौडनु सन्यासन-समाधियिं मुडिपि स्वर्गस्तनादनु आतन अर्द्धाङ्गि चेन्नकनु सहगमनदिं स्वर्गस्तेयादळु । मंगळ मा (महा) श्री श्री

[ऊपरके उल्लेखोंके समान ही; महामण्डलेश्वर, शत्रु राजाओंका नाशक, हिन्दुव राजाओंका सुरताल, हरियप्प-वोडेयरके राज्यमें,—स्वर्गगत मालगौड तथा उसकी भार्या चेन्नकके, जिसने 'सहागमन' करके स्वर्ग प्राप्त किया, के लिये भी उल्लेख है ।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 104]

५६०

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक सं० १२७७=१३५५ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, बड़े गोल पत्थरके पूर्वकी ओर]

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्री मूलसंघ देशिय-गण कोण्ड-कुन्दान्वय पुस्तक-गच्छ हनसोगेय बळिय श्रीमद्-राय-राजगुरु-मण्डलाचार्य-समयाचरण-रुमप्प हेमचन्द्र-भट्टारकर शिष्यरु तेलुग आदि-देवरु ललितकीर्त्ति-भट्टारकर शिष्यरु ललितकीर्त्ति-भट्टारकरु शक-वरुष १२७७ मन्मथ-संवत्सरद चैत्र-बहुळ १४ गुरुवारदल्लु तम्म निषिधि-निमित्तागि कनकगिरि-यल्लु माडिसिद विजय-देवर प्रतिमेगे अवर मुख्यवाद आचार्य्य ओलगरु मङ्गलमहा श्री श्री श्री

[श्री-मूलसंघ, देशियगण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तकगच्छ तथा हनसोगे-बळिके हेमचन्द्र-भट्टारकके शिष्य तेलुग आदि-देव और ललितकीर्त्ति भट्टारकके शिष्य ललितकीर्त्ति भट्टारकने अपनी निषिधिके निमित्तसे कनक-गिरिपर विजय-देवकी प्रतिमा बनवायी ।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 153]

५६१

कणवे;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२८४ = १३६२ ई०]

[कणवेमें, मण्डगद्देके समीप, कल्लु-बस्तिमें एक पाषाणपर]

श्री-मूल-संघ-देशो- ।
गण - क-गच्छ कोण्डकुन्दान्वयदोळ् ।
भूमियोळखिळ-कला··· ।
काम-करं चारुकीर्ति-पण्डित यतिपम् ॥
श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरमरि-राय-विभाड भाषेगे तप्पुव रायर गण्ड समुद्र-त्रयाधीश्वर श्री-सङ्गमेश्वर-कुमार श्री-वीर-बुक्क-महारायरु राज्यं गेय्युत्तिरे अवर कुमार विरुपण्ण-वोडेयरु मले-राज्यवनाळुवल्लि हेद्दूर-नाडोळगे तडताळ पार्श्व-देवर देव-स्वद सीमा-सम्बन्धक्के आ-हेद्दूर-नाडवरु आस्थानद आचारियरु सूरिगळ कूडे संवादव माडिदड़े श्रीमन्महा-प्रधानं नागण्णगळु प्रधानि-देवरसरू आ ··· ··· दा देवरसरू ··· ··· ··· जैन-मल्लप्पनू आरगद चावडियल्लि मूरु-पट्टणद हलरनू इद्दिनेण्टु-कम्पणवनू करसि विचारिसि आ-नाड-नोडम्बडिसि पडकोट्टु पूर्व-मरियादेयल्लि मूडलु बेट्ट तेङ्कलु बेट्ट पडवलु हळ्ळि बडगलु होळे सीमेयागि पार्श्व-देवर देवस्ववेन्दु चतुस्सीमेयनु विवरिसि शक-वर्ष १२८४ शुभकृत्संवत्सरद माघ-शुद्ध-पञ्चमी-गुरुवारदलु आ-अरसु प्रधान-रनू (औरोंके नाम दिये हैं) तडताळनु आ-चन्द्रार्क नडव हागे शासनव नडसि कोट्टरु (वे ही अन्तिम वाक्यावयव) !

अक्षय-सुख-मी-धर्म्ममन् ।
ईक्षिसि रक्षिसुव पुण्य-पुरुषर्ग्गक्कुम् ।

मल्लिसुवातन सन्ता- ।
न-त्वयमायु-त्वयं कुळ-द्वयमक्कुम् ॥

श्री-मूलसंघ-देशिगण-पुस्तक-गच्छ-कोण्ड-कुन्दान्वय ··· ··· ··· ···

श्री-मूलसंघ, देशि-गण, पुस्तक-गच्छ, तथा कोंकुन्दान्वयमें चारुकीर्त्ति-पण्डित-यतिप थे।, जिन शासनकी प्रशंसा। -जिस समय महामण्डलेश्वर, संगमेश्वरके पुत्र वीर-बुक्क-महाराय राज्यका शासन कर रहे थे—हेद्दूर-नाड्के तडताळके पार्श्व-देव मन्दिरकी जमीनकी सीमाओंके विषयमें जब हेद्दूर-नाड्के लोगों और मन्दिरके आचार्यों में झगड़ा चल रहा था,—प्रधानमंत्री नागण्ण और अनेक अरसु लोगोंने, इसकी जाँच-पड़ताल करके, फैसला कर दिया। और इस बातका शासन (लेख) लिख दिया।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 197]

५६२

हिरे-आवलि;—कन्नड़

[शक १२२६ (Sic), वर्ष पार्थिव=१३६६ ई० १ (लू. राइस) ।]

[हिरे-आवलि में, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके द्वितीय पाषाण पर]

श्रीमतु । विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-अभिनव बुक्क-राय राज्यं गेय्वल्लि । सकल-गुण-सम्पन्न सिद्धान्त-देवर गुड्ड । रत्न-त्रयाराधकरुम् । आवलिय बेच-गौण्डन सुत चन्द-गौण्डन तम्म । सक-वरुष १२२६ नेय पार्त्थिव-संवच्छरं ब ११ सोमवारदलु । सन्यसन-समाधि-विधियिं मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तियादनु । मङ्गळमस्तु ।

मान-गर्व्वनु ··· ··· ललु -।
मानदोळं नडिय वक्षमोल्दा-तेरदिम् ।
ज्ञानिगळ सलहुतिप्पम् ।
दान-रतं रा ··· पुरुकभिरामन् ॥

[जिस समय विजयनगर और दूसरे समस्त पट्टण (नगरों) का अधीश्वर, अभिनव-बुक्क-राय राज्य कर रहा था :—

सिद्धान्त-देवका गृहस्थ-शिष्य, आवळि-बेच-गौडके पुत्र चन्द-गौडका छोटा भाई, (उक्त मितिको), सन्यसन और समाधि-विधिसे मरकर, स्वर्ग गया। उसकी प्रशंसामें श्लोक।]

[Ec, VIII Sorab tl, No 102]

५६३

कुप्पटूर;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२८९=१३६७ ई०]

[कुप्पटूरमें, जैन-बस्तिके पासके वीरकल् पर]

शक-काले नव-वारण-द्वि-शशि-संख्योक्त-प्लवंगाब्ददुव् -।
त्सुकदाषाढद मासदोळ् विधु-लसद् वारं समन्तोन्दिरल् ।
प्रगटं-बेचतिसय्यना-श्रुत-मुनि-श्री-पाद-सेवा-रतर् ।
सु-कवीन्द्र-स्तुत-देवचन्द्र-मुनिपर् स्वर्-लोकमं पोर्दिदर् ॥
श्रुत-मुनिगळ शिष्यर् भू -। नुत-देशी-गणद देवचन्द्र-व्रतिपर् ।
यति-कुल-ललामरल्तूर् -। जित-तेवरन्नेगळ्दरादिदेवर गुरुगळ् ॥
श्रुत-मुनि-वल्लभेन्द्र-गुरु दीक्षेयनीयलदादियागदुर् -।
जि [त]-गुण-शील-सच्चरि ··· ··· ··· ··· कूडि बेच्च् ।
अतिस (श) य-जैन-धर्म्मद निमिर्केयोळोन्दि विराजिसिर्द् दी -।
क्षितियोळु देवचन्द्र-मुनि-वर्य्यदमागम-कोविदर्जिनम् ॥
जीर्ण्ण-जिन-भवनमं धरे । वर्ण्णिसलुद्धरिसि कीर्त्तियं तळेदरु सम् -।
पूर्णतर-चरितरेनि [सि] र्द् । अर्ण्णव-गम्भीर देवचन्द्र-व्रतिपर् ॥
नेगळ्दा-मुनिपर् भव-मा- । लेगळिक् सन्यसनदिं समाधियनेय्दिद् ।

अगणित-महिमेयोलोन्दिद । सु-ग [ति] यनान्तर्व्विनेय-जन-नुत-चरितर् ॥
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रुत-मुनि-वर्य्याद् भव्यात् पूज्य-श्री-देवचन्द्र-परम-गुरुः ।
तच्छिष्य आदिदेव ··· ··· ··· सत्-तपो-निळय ॥

शुभमस्तु ॥

[(उक्त मितिको) प्रसिद्ध श्रुतमुनिके चरणोंका उपासक देवचन्द्रमुनिपने स्वर्गलाभ किया। श्रुतमुनिके शिष्य संसार-विख्यात, देशी-गणके देवचन्द्र-व्रतिप यतियोंके कुलमें तिलक-समान थे, वे आदिदेवके गुरु थे। उनकी और भी प्रशंसा, जिसमें कहा गया है कि उन्होंने एक ध्वस्त जिनमन्दिरका पुनरुद्धार करवाया था। श्रुतमुनिसे सन्मानित देवचन्द्र थे जिनके शिष्य आदिदेव थे।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 260]

५६४

हिरे-आवलि;—कन्नड ।

[वर्ष प्लवंग = १३६७ ई० (लू० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-वस्तिके सामने १वें पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमतु प्लवंग-संवत्सरद अस्वैज-बहुळ-दशमी-शुक्रवारदन्दु श्री-मूल-संघद वारिसेन-देवर गुड्ड मसण-गौडन मग गोरव-गौड पञ्च-नमस्कार-समाधि-विधियिं स्वर्गस्तनाद ॥

[लेख स्पष्ट है। १३६७ ई०; राजाके नामका उल्लेख नहीं है।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 109]

५६५

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़।

[शक १२१०=१३६८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५६६

कल्य;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२१०=१३६८ ई०]

[कल्य (सातनूर परगना) में, चिक्कण्णके खेतमें एक पाषाणपर]

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितम्

पाषण्ड-सागर-महा-वडवा-मुखाग्नि-
श्रीरङ्ग-राज-चरणाम्बुज-मूल-दासः ।
श्री-विष्णु-लोक-मणि-मण्डप-मार्ग-दायी
रामानुजो विजयते यति-राज-राजः ॥

शक-वर्ष १२९० नेय कीलक संवत्सरद श्रावण-शु २ सो-द्लु श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाढ भाषेगे तप्पुव रायर गण्ड श्री-वीर-बुक्क-रायनु पृथु (थु) वी-राज्यवनाळुव कालदलि जैनरिगे भक्तरिगे संवादवादल्लि आनेयगोन्दि-होसपट्टण-पेनगोण्डे-कळ्यहवोळगाद समस्त-नाड जैनरु बुक्क-रायङ्गे भक्तरु अन्यायदलु कोल्लुवदनु बिन्नहं माडलागि कोविलु-तिरुमले पेरुमाळ्कोविलु- । तिरुनारायणपुर-मुख्यवाद सकलाचार्य्यरु सकळ-समयिगळु सकळ-सात्त्विकरु मोष्टिकरु तिरुमणि-तिरुविडि तन्दवरु नाळ्वत्तेण्टु-तले-मक्कळु सावन्त-बोवक्कळु तिरुकुल-जाम्बवकुल-वोळगाद पदिनेण्टु-नाडा-श्री-वैष्णवर कय्यलु महारायनु ··· निम्म वैष्णव-दरुसनद मषेवोक्केयवेन्दु कोह-सम्बन्ध पञ्च-बस्तिगळलि कळस जगळे-जगटे-मोदलाद पञ्च महा-वाद्यऊ सलुउदु अन्यरि

[गे] बरकूडदु जैन-समयके सलुबुदेन्दु ··· ··· ··· ··· वृद्धिपाद (बायीं ओर) श्री-वैष्णव-समय ··· ··· ··· ··· ··· यी-मर्यादे ··· ·· ··· ··· ··· ओळगुळ बस्ति ·· श्री-वैष्णव ··· ··· ··· ·· नेट्टु कोट्टेवु (बाकी का पढ़े जाने लायक नहीं है)

[रामानुज की स्तुति ।

(उक्त मितिको), जिस समय महामण्डलेश्वर वीर-बुक्क-राय पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे :—जैनों और भक्तों (वैष्णवों) में कोई विवादका विषय उपस्थित होने पर आनेयगोन्दि, होसपट्टण पेनुगोण्डे और कल्यह,[1] इन नाडोंके जैनोंने बुक्क-रायको इस बातका प्रार्थनापत्र देकर कि १८ नाडोंके श्री-वैष्णवोंके हाथोंसे जैन लोग अन्यायसे मारे जा रहे हैं,—महारायने (यह घोषणा करते हुए कि) "हम तुम्हारे वैष्णव दर्शनमें बाधक नहीं होंगे" निम्न हुक्म दिया :—कलश इत्यादि पाँच बस्तियोंमें पाँच महा वाद्य बज सकते हैं। और में वे नहीं बजाये जा सकते। वे जैन समय (या समक) की हैं। श्री-वैष्णव समय, जो बढ़ गया है ··· ··· ··· ·· (बाकीका अधिकाश अपठनीय है)]।

[Ec, IX, Magadi tl., No 18]

५६७

पश्चिगनहल्लि—कन्नड़।

[शक सं० १२१२ = १२७० ई०]

[पुश्चिगनहल्लि (बल्लमगूड प्रदेश) में, वहींके पास, नेमिनाथ-बस्तिके उत्तर एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥

---

१. जहाँ यह शिलालेख है, वहाँ कल्य कहते हैं।

धीररपार-सद्गुण-मणि-व्रज-वारिधिगळ् अपाय-सं-
हारिगळाद भावपररिद्धजिनेश्वरधम्मराजिगळ् ।
कूरे-चरित्र-बाहुबलि-देवर् अभिष्टुत-पार्श्व-देवरुं ।
सूरि-विनूतवद्विशद-शक्तियनान्तेसेदर्न्निरन्तरम् ॥२॥
जिनमताम्बुराशि-परिवर्द्धना-चन्द्रनन् अस्त-तन्द्रनं ।
मानित-सार-सर्व्व-गुण-रुन्द्रनन् उन्नत-कीर्त्ति-सान्द्रनम् ।
पीन-विमोह-मारण-मृगेन्द्रननुद्म-कृपा-नदीन्द्रनम् ।
भू-नुत-मेघचन्द्रननशेष-जनं नलविन्दे बण्णिकुम् ॥३॥
अरियद विद्येयिल्ल बिडदोदद केळद शास्त्रविल्ल कूर्त्त-
ई ··· ··· ··· ···भूपरिल्ल सले सोलद वादिगळिल्ल सन्ततं ।
नेरेये समस्तरं पोगळदिर्द्द कवीशरुं इल्ल लोकदो-
ळरे पार्श्वदेवस्तुत-बाहुबलि-व्रति-शक्तियद्भुतम् ॥४॥

शकवर्षं १२६२ नेय सन्द विरोधिकृतु-संवत्सरद मार्ग्गसिर-सु १५ आ। वारद दिवसदल्लि मेघचन्द्र-देवरु मुक्तिगे सन्दरु, मंगळमहा श्री यिवरिगे निसिधिय माडिसिद वरकोटय मेघचन्द्र-देवर शिष्यरु माणिक-देवरु ।

[इस लेखमें दूसरे श्लोकमें बाहुबलि-देव और पार्श्व-देवकी प्रशंसा है। तीसरे श्लोकमें भूनुत (प्रसिद्ध) मेघचन्द्रकी प्रशंसा है। चौथे श्लोकमें पुनः पार्श्वदेव और बाहुबलि-व्रतीकी प्रशंसा है। उनके विषयमें कहा गया है कि ऐसी कोई विद्या नहीं थी जिसको वे न जानते हों, ऐसा कोई शास्त्र (Sciance) नहीं था जिसको उन्होंने पढ़ा या सुना न हो, ऐसा कोई राजा नहीं था जिसने उनके ऊपर कृपा न की हो, ऐसा कोई वादी नहीं था जिसको उन्होंने हराया न हो, ऐसा कोई कवि नहीं था जिसने कभी उनकी प्रशंसा न की हो,—क्या संसार उनकी अद्भुत शक्ति को माननेके लिये तैयार न होगा? अपितु होगा ही।' मेघचन्द्र-देवका देहान्त होनेके बाद, उनकी स्मृतिमें उनके शिष्य मणिक-देवने यह स्मारक खड़ा किया।]

[Ec, III, Nanjangud tl., No 43]

५६८

तवनन्दि,—कन्नड़।

[शक १२९२ = १३७० ई०]

[तवनन्दिमें, आठवें समाधि-पाषाणपर]

श्रीमतु शक-वर्षं १२९२ नेय साधारण-संवत्सरद माघ-शुद्ध ८ सोमवारदन्दु श्रीमन्माधवचन्द्र-मलधारि-देवर प्रिय-गुड्ड तवनिधिय माडि-गौडन सु-पुत्र बोम्मणनु समाधि-विधियिं मुडिपि स्वर्ग-लोक-प्राप्तनादनु ॥

[(उक्त मितिको), माधवचन्द्र-मलधारी-देवका प्रिय गृहस्थ-शिष्य तव-निधि माडि-गौडका पुत्र बोम्मण्ण, समाधि मरणपूर्वक स्वर्गको गया।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 201]

५६९

तवनन्दि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२९३ = १३७१ ई०]

[उसी स्थानमें, छठे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर अरि-राय-विभाड भासेगे तप्पुव रायर गण्ड हिन्दु-राय-सुरत्राण पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्री-वीर-बुक्क-राय विजय-राज्यं गेय्युत्त-मिप्पंल्लि शक-वर्षं १२९३ नेय विरोधिकृत्-संवत्सरद फाल्गुन शु. १३ मङ्गळवारदल्लु श्रीमद्-राय-राज-गुरु मण्डलाचार्य्य बलात्कार-गणाग्रगण्यरुमप्प श्री-सिद्धनन्द्याचार्य्यर प्रिय-गुड्ड सोरबद बिठ[ल]-गौण्डन सुपुत्रि श्रीम-

भाळ्व महाप्रभु तवनिधिय ब्रह्मन अर्द्धाङ्ग (ने) लदिम बोम्मक्कनु समाधि-विधियिं मुडिपि स्वर्गं-लोक-प्राप्तियादल् ॥.

विनय-गुण-प्रगल्भे पेसर्वेत्त चतु-र्विध-दान-युक्ते पा- ।
वन-जिन-राज-राजित-पदाम्बुज-भक्तियोळोप्पुवेत्तु तोर्प् - ।
अनुपम-शीले विट्ठलन नन्दने सौन्दर-रूपे बोम्म-गो- ।
ड्डन सति बोम्मक्क मेरेवळगद पुण्य-वधू-ननङ्गळोळ् ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय, (अपनी उपाधियो सहित), वीर-बुक्क-राय अपने विजयी राज्यपर शासन कर रहे थे —(उक्त मितिको), राय-गुरु, बलात्कार-गणके अग्रणी, सिंहनन्द्याचार्य्यकी गृहस्थ-शिष्या, सोरब-वीर-गौण्डकी सुपुत्री, आळ्व-महा-प्रभु तवनिधि ब्रह्मकी पत्नी, लक्ष्मी-बोम्मक्क, समाधि-मरण-पूर्वक स्वर्गको गयी । उसकी प्रशंसा ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 199]

५७०

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १२९३=१३७१ ई०]

[हिरे-आवलिमें ध्वस्तजैन-बस्ति के सामने १९ वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वर अरि-राय-विभाड श्री-वीर-बुक्क-राय-राज्योभ्युदयदन्दु (1) श्या १२९३॥ प्रमाथि-संवच्छरद फाल्गुन-सुध-एकादशी-आदि-वार श्रीमनाळ्व-महा-प्रभु रामचन्द्र-मलधारि-देवर गुड्ड आवलिय चन्द-गौडन मग राम गौण्डनु पञ्च-नमस्कारदिं मुडिहिद मंगळ (महा) श्री श्री श्री

श्री श्रीमतु हिरिय-निडुवळिगेय आवळिय महाप्रभुगळु जिन-चरण-स्मरण-परिणातान्त -करणरुमप्प आवलिय ज्ञान (?) अन्याय आवलिय मशण-गौण्डन- मग गोरव-गौण्डन मग रवळ-गौण्डन मग गोप-गौण्डन मग चन्द-गौण्डन मग गोप-गौण्डन तम्म राम-गौण्डन तम्म बेच-गौड अन्तु यिवरु मुक्तियन् यैदिदरु मंगल महा श्री श्री श्री मडिद् तगरोजन मग मदोज नागोज आवळिय विलित-वन्तरु ॥

[लेख स्पष्ट है। १३७४ ई०; बुक-राय का राज्य था।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 115]

५७१

हुलुहळ्ळि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[शक सं० १२९४ = १३७२ ई०]

[हुलुहळ्ळि (कबले प्रदेश) में, वरदराज-स्वामी मन्दिर मुख्य प्रवेश द्वारके उत्तर की ओर के एक पाषाण पर]

श्रीमत्त्रैलोक्य ··· ··· मकुटस्य ··· ··· नेन्द्रस्य।
शासन ··· ·· ··· लाञ्छनं सततं ॥

पेरुमाळे-देवरसरु ··· ··· चक्रवर्त्तिदेवरु ··· ·· देवरु

वितत-मोदोमरं ··· ··· ··· । ··· ··· ···

निरुपम-विभवश्री-वैभवैर्वर्द्धमानो
दिशतु चरम-तीर्थाधीश्वरस्सम्पदं नः ॥
यस्य श्री ··· ··· जिनेन्द्रस्य दिव्य-वाक-तत्वार्थात्
अङ्गैस्सर्व्वं पूर्व्वैस्संजग्रहुर्गौतमादि-गणधर्मः ॥
तच्चरमजिनेश ··· ··· नमिह जगति साम्प्रतं भारतेऽस्मिन्

ते गणभृतस्तदुदितसिद्धान्त तदनुगश्च सकलस्संघः ॥
तत्र श्री-जिन-शासनोन्नतकरे श्रीमूलसंघोदिते
श्री-देशीय-गणे सु संयम-भरे श्री-कोण्डकुन्दान्वये ।
सुश्लाघ्यश्रिय इङ्गळे ··· ··· चार्य्य-नर्यावली
श्रीमत्पुस्तकगच्छभाग्व्रतधरास्संजज्ञिरे ··· ··· ॥
श्रेदः-पद्म-विकास ··· रणिस्स्याद्वादरत्नामणि
सद्विद्वज्जन ··· ··· ··· ··· चूड़ामणिः ।
··· ··· मुनिश्चादेष्ट-चिन्तामणिः ॥
··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···
पादौ राज-समाज-पूजित-पदौ हस्तौ ··· ··· कवि-
व्रातानन्दनकारि-दान-विभवेनास्यं गिरो-लास्यदं ।
··· ··· कुण्ठित-नीलकण्ठ-ललना ··· रश्च यस्यावृतौ
सोऽयं ··· श्वरो विजयते सङ्गीत-विद्यापति ॥
तदन्ववाय--दुग्धाब्धि-समुल्लास-कळानिधिः ।
नूल-श्रु तमुनि ··· बौद्धोघो ···
श्रुतमुनिगज सशिष्यसंघस्तपश्चरणविद्द ··· ।
तरण-प्रम-पर्यन्त ·· विक-लोकं पुनानोऽस्थात् ॥
साकेब्देऽथ विरोधिकृत्-सममिधे पाथोधि-नन्दांशुमत्
संख्ये [१२९४] मासि शुचौ सित-प्रतिपदि च्छायासुते यामके ।
कृत्वा पूतमिळातळं श्रुतमुनिस्सन्यस्य त्रिण्यापुरे
प्रीत्यार्थी परमेष्टि-भावन-मत· प्रापत् प्रशस्ता गतिम् ॥
दुम्मुंख्याख्ये शकाब्दे वसु-मुनि-रवि-संख्याङ्किते [१२७८] मासि चैत्रे
पञ्चम्यां भौमवारे निशि लसित-रमे पत्तने केल्लहाख्ये ।
ग्रन्थि सन्यस्य सर्व्वं परम-गुरु-कुलं भावयन्नुद्भभावः
प्राप्तो दिव्यं गतिं श्री श्रुतमुनि-तनयश्चन्द्रकीर्त्ति-व्रतीन्द्रः ॥
तद्भक्तियुक्तिभविका नयकीर्त्ति-देव-सूरीश्वर- श्रुतिमुनि-प्रमुखा ··

सु-श्रावणश्च पुरुषोत्तम-राज-कामश्रेष्ठ्यादयो भुवि चरन्तु चिरं सुमत्या ॥
श्री-श्रुतमुनीश्वर शिष्यरु। माघनन्दि-सिद्धान्ति-देवरु। सार्व्व-परमागमोपदेश-निपुणरप्प आ ·· ळु। श्रुतकीर्त्ति-देवरु। मुनिचन्द्र-देवरु। बाहुबलि-देवरु। ··· गिय-पार्श्व-देवरु। जिनचन्द्र-देवरु। सन्यसन-समाधियिं ··· गतियन्नेय्दिदरु ॥ ··· ···

··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···

··· ·· पेरुमाळु-महीश कुशाग्र-बुद्धिर्व्विदितसकलनयसूत्रः ॥
श्री-माचिराज-मालाम्बिकयोरजनिष्ट पेम्मिन-देव-नृपः।
जनहितजैन-मतार्ण्णव-संवर्धन-पूर्ण्णिमा निशाधीश ॥
शाके सिन्धु-गिरि-प्रभाकर मिते [१२७४] ऽब्देऽस्मिन् खराख्यान्विते
चैत्रे मासि ··· बुधे क्षितिसुते वारे नवम्यां तिथौ।
प्रत्यूषे सितपक्षके ··· ··· ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· पेरुमाळ-देव-नृपति. प्राप प्रकृष्टां दिवं ॥
शाकेब्दे शून्य-नन्द-द्वितय-विधु-मिते [१२९०] ऽस्मिन् प्लवङ्गाह्वयोद्-
वैशाखे मासि शुद्धे दिनमुखनवमी सन्-तिथौ जीवनारात्।
तज्जायांस ··· था जिनमुनि-वरविख्यार्हं-शुद्धान्ववाया
अह्वाम्बा प्राप दैवीं गतिममलमति भावयन्नर्हदादि ॥
··· वान्वयाम्भोज-दिवाकराभा नरोत्तम-श्री-नृप-नामधेया।
यदीय-कीर्त्तिर्ध्वजति जहार जगत्त्रयं सद्गुणदानसम्भवा ॥

आ-पेरुमाळ-देव-अरसरु पेम्मि-देवरसरु हुल्लनहळ्ळियलु सुखदि राज्यं गेयुत्तिरलु तम्म इह-पर-लोक-साफल्य-निमित्तवागि त्रिजगन्मंगळमेम्बुत्तुंगचैत्यालयमं माडिसि आ ··· चिन्तामणि-प्रतिमरप्प माणिक्य-देवर प्रतिष्ठेयं गेय्दु आ हुल्लनहळ्ळि-यल्ले पुरातन-भव्य-जन-प्रतिष्ठितमप्प आ-परमेश्वर-चैत्यालयमं जीर्ण्णोद्धारमं माडिसि आ-एरडु चैत्यालयङ्गळामृतपडिगे कोट्ट गद्दे बेद्दल सीमे यन्तेन्दोडे (इसके बाद की ६ पंक्तियोंमें सीमाओं इत्यादि की चर्चा है।)

अक्षय-सुखदिं धर्म्ममन् ।
ईन्दिसि रक्षिसुव पुण्य पुरुषगंक्कुम् ।
भक्तिसुवातनु ... ... ।
... त्तयं आ ... तु त्तयं .. क्षयमक्कुम् ॥
स्याद्वादाय सदा स्वस्ति प्रवादि-मत-भेदिने ।
शुभमस्तु सर्व्व-जगत. । मङ्गलमहा श्री श्री श्री ॥

[इस लेखमें प्रारम्भमें जिनशासन, पेरुमाले-देवरस, तथा अन्य व्यक्तियोंकी, जिनके नाम घिस गये हैं, प्रशंसा है। बादकी गण (आचार्य) परम्परामें, जिनशासनके प्रभावक आचार्य हुए। उनमें मूलसङ्घ, देशीय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा इङ्गुलेश्वरकी शाखामें बहुतसे पुस्तकगच्छके मुनी हुए। ऐसे ही मुनियों में एक अभयेन्दु थे। (इस जगह लेख बहुत घिसा हुआ है।) सङ्गीत विद्यापति ईश्वरकी प्रशसा। इसके बाद श्रुतमुनि और उनके शिष्योंकी प्रशंसा है। श्रुतमुनि शक वर्ष १२६५ में, विरोधिकृत् नामक वर्षमें, आषाढ़ शुक्ल प्रतिपदाके दिन शनिवारको प्रातः प्रशस्त गतिको प्राप्त हुए। यह उनका स्वर्गमन **त्रिपयापुर** (= हुलुहल्लि) में हुआ था। शक वर्ष १२७८, दुर्मुखी नामके संवत्सरमें ईश (आश्विन) महीनेकी पञ्चमी तिथि रात्रिको मंगलवारके दिन श्रुतमुनिके पुत्र व्रतीन्द्र **चन्द्रकीर्त्ति** दिव्य गतिको प्राप्त हुए। उनके भक्त उपासक—जयकीर्ति-देव, सूरीश्वर श्रुतमुनि तथा इतर, श्रावकोत्तम पुरुषोत्तम-राव, कामश्रेष्ठी तथा अन्य लोगोकी चिरकालतक जिन्दा रहनेकी मनोकामना की गयी है। श्रुतमुनीश्वरके शिष्य क्रमसे ये थे—माघनन्दि सिद्धान्ति-देव, श्रुतकीर्त्ति-देव, मुनिचन्द्र-देव, बाहुबलि-देव, ... गिय पार्श्वदेव, जिनचन्द्र-देव। इन्होंने मरणके समय समाधि ली थी। पेरुमालु-महीश की प्रशंसा। मान्त्रि-राज और मालाम्बिकाके **पेम्मि-देव-नृप** उत्पन्न हुए थे। शक १२७४ मे पेरुमाळ-देव स्वर्गस्थ हुए। शक १२९० में उनके बड़े भाईकी स्त्री **मल्लाम्बा** स्वर्गस्थ हुईं। उसके पुत्र नरोत्तम-श्री-नृप थे।

जिस समय पेरुमाल-देवरस शान्तिसे सुखपूर्वक राज्य कर रहे थे, उस समय उन्होंने 'त्रिजगन्मङ्गलम्' नामके चैत्यालयका निर्माण कराया, और माणिक्य-देवको प्रतिष्ठित किया; साथ ही हुल्लनहल्लिके प्राचीन मन्दिर 'परमेश्वर चैत्यालय' का भी जीर्णोद्धार किया, तथा दोनों चैत्यालयोंमें विधिवत् सतत पूजा चालू रहे, इसके लिये भूमिदान किया।

अन्तमें इन मन्दिरोंकी रक्षा तथा उनसे लगी हुई भूमिका जो गुणवान् आदमी रक्षण करेगा उसके लिए निरन्तर सुखकी मङ्गल-कामना की गई है।]

५७२

श्रवणबेलगोला—संस्कृत भग्न।

शक १२१९ = १२७२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७३

श्रवणबेलगोला—कन्नड

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७४

हिरे-आवलि;—कन्नड।

[शक १२१८ = १२७६ ई०]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके कुठे पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमतु शक-वरुष १२९८ नळ-संवत्सरद आश्विज-शु १२ गु श्रीमन्नाळ्व-महा-प्रभु आवलिय चन्द-गौण्डन मग बेचि-गौण्डनु रामचन्द्र-

मलधारि ··· ··· ··· र गुड्डनु बेचि-गौण्ड नु वीर-बुक्क रायन राज्याभ्युदयदन्दु पञ्च-नमस्कारदिं मुडुपि स्वर्गास्तनादनु आतन किरिय-मदवळिगे आ-मुद्दि-गौण्डि सहगमनदिं पिन्तरु मुक्तिप्राप्तरादरु आवलिय प्रभुगळ सन्तान मसण-गौडन मग गोरव-गौड काल-गौड गोप-गौड चन्द्र-गौड आ-चन्द्र-गौडन मग बेचि-गौड बू··· गौडन मनेय गोरवोजन मग मादोज नागोज माडिद निशितिय कल्लु मङ्गळ महा श्री श्री श्री

[(उक्त मितिको), आवलि चन्द-गौडके पुत्र बेचि-गौड, जो रामचन्द्र-मलधारिका गृहस्थ-शिष्य था,—वीर-बुक्क-रायके राज्य में,—पञ्चनमस्कार पूर्वक मर गया और स्वर्ग गया। उसकी नवीन स्त्री मुद्द-गौण्डिने 'सहगमन' किया, और दोनोंने 'मुक्ति' पायी। आवलि प्रभुओंने (जिनमें कईओंके नाम निर्दिष्ट हैं) यह स्मारक बनवाया। बनाने वाला गोरवोजका पुत्र मादोज नागोज था।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 106.]

५७५

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड।

[वर्ष नष्ट—१२७१ ई० (लू. राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७६

गिरनार—संस्कृत-भग्न।

[बिना कालनिर्देशका]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant rem Bombay (ASI, XVI), p. 347-351, No 7 t. and tr.]

५७७

तवनन्दि;—कन्नड़-भग्न ।

[शक १३०१=१३७९ ई०]

[तवनन्दिमें, सातवें समाधि-पाषाणपर]

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर श्री-वीर-हरिहर-राय विजय-राज्यं गेय्युत्तमिर्पल्लि शक-वरुष १३०१ दनेय काळयुक्ति संवत्सरद श्रवण-शुद्ध १ शुक्रवारदलु श्रीमत्-तवनिधिय शान्ति-तीर्थंकर-पाद-पद्माराधकर्नु दासि-वेसि-पर-नारी-सहोदर श्रीमतु श्रीमदाळ्व-महा-प्रभु तवनिधिय बोम्मण्णं मनेय ··· ··· नि श्रीरा ··· ··· ··· ··· मलधारि-देवर प्रिय-गुड्ड ·· ·· ··· (४ पंक्तियाँ पढ़ी नहीं जा सकती हैं)।

[जिस समय महामण्डलेश्वर वीर-हरिहर-राय विजयी राज्य पर शासन कर रहे थे :—(उक्त मितिको), तवनिधि के शान्ति-तीर्थंकरके चरणोंका पूजक, एक दासीके वेषमें, रा ··· ·· मलधारि देवका गृहस्थ-शिष्य, आळ्व-महा-प्रभु तवनिधि बोम्मणके घरका पवित्र व्यक्ति,··········· ··]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 200.]

५७८

तवनन्दि,—कन्नड़-भग्न ।

[शक १३०१=१३७९ ई०]

[तवनन्दिमें ही, तीसरे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाड भासेगे तप्पुव-रायर गण्ड हिन्दु-राय-सुरत्राण पूर्व्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्री-वीर-बुक्क-रायन कुमार श्री हरिहर रायनु राज्यं गेय्युत्तमिप्पल्लि ॥ स्वस्ति श्री जयाभ्युदय शक-वरुष १३०१ नेय काळयु [क्ति]- नाम-संवत्सरद पुष्य ब ३ सोमवारदलु श्रीमदाळुव-महाप्रभु प्रजे मेच्चे गण्ड अह्नियः हदिनेण्टु-कम्पणक्के शिरोमणि एनिप महा-प्रभुगळादित्य तवनिधिय बोम्म-गौडनु सकल-सन्यसन-विधियिं मुडिपि स्वर्गं प्राप्तनादनु ॥ आतन गुणावलि एन्तेन्दडे ॥

पारावार-त्रयाधीश्वरनतुळ-बळं-बुक्क-रायङ्गे लोका- ।
धारङ्गं ••• माडिदवनिय घर्मङ्गळं जैन-का-
चारं ••• ळं गड ••• ••• मर ••• ••• माडि पुण्या- ।
कारं ••• कीर्त्ति-वृत्तं तवनिधि यधिपं बोम्मण मेरु-धैर्य्यम् ॥
परम ••• यादि-देव परद ••• तान् ••• नर्ग ••• ••• ।
दरिसिद जैननोर्व्वं कलि ••• पाळकनिन्दु भक्तियिम् ।
परम-जिनेश्वर ••• ••• ••• नेम्ब •• ।
••• दृढ़-चित्तनी-तवनिधि-प्रभु ब्रह्मनि ••• क-लोकदोळ् ॥
जिन-पतियन्तरङ्गदोळिगप्पं (बाकी का पढ़ा नहीं जा सकता ।)

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय, (अपने पदों सहित), वीर-बुक्क-रायके पुत्र हरिहर-राय शासन कर रहे थे :—(उक्त मितिको), आळुव महा-प्रभु, १८ कम्पणोंका शिरोरत्न, महा-प्रभुओंका सूर्य तवनिधि बोम्म-गौड 'सन्य-सन' की विधिपूर्वक, मर कर स्वर्गको गया । उसकी प्रशंसा ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 196]

५७९

ऊद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

[शक १२०२ = १२८० ई०]

[ऊद्रि गाँवके मध्यमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
यैदिदनु स्वामि-कार्य्यंव ।
यैदि···रुतिरलु कण्डनी-माव्वंतमम् ।
यैदे कडि-खण्ड माडिद ।
यैदिद जिन-पाद-पद्ममं वैचप्पम् ॥

अदेन्तेने ॥

वारिधि-परिवृत-वर-धर ।
णी-रङ्गद-मध्यदमरगिरियिं तेङ्कलु
राराजिप-भरत-धरा- ।
नारी-भूषणमेनिप्प कुन्तळ-देशम् ॥
तां नेरे मेरेवुदु बनवसे ।
पन्निच्छासिर-समेतमदरोळ् मं- ।
···निजदिं पदिनेण्टेनिप् ।
उन्नत-कम्पणके राजधानियेनिक्कुम् ॥
मत्ता-कम्पण-निच्चयम- ।
नित्तरोळं नेगळ्द हिरिय-बिदरेय-नाड्- ।
उत्तममदरोल् सुख-सम्- ।
पत्ति-स्थानाभिवृद्धि कुळ्दे मेरेगुम् ॥

वृ ॥ अदु नाना-देव-हर्म्य-प्रयुतवतुळ-वापी-तटाकाञ्चितं सम्- ।

पद्मं ताळिदर्प्पं-विप्राधरिवळ-जन-समेतं लसत्पुष्पवाटी-
विदितोद्यानादि-युक्तं प्रकट-कळम-जाळ-प्रवृता ''''' ।
तोप्पुंदु सकळ-मुनि-प्रेम-धर्म्माभिरामम् ॥
''''''एने मेरे उद्धरे '' ।
''''''नत-स्थळमागिरल्के तां सौन्दर्यदिम् ।
मनुज-मनोजं वैचप्पन् ।
अनुपम-कीर्ति-प्रभावदिन्दोसे[दि]प्पम् ॥
क्षितिनुत-शान्ति-जिन-क्रम- ।
शतपत्र-मधुव्रत सुरज्ञन-मित्रम् ।
चतुरं वैचय-नायक- ।
न तनूजं राचिसिप्पनी- वैचप्पम् ॥
भू-देवाशीर्व्वादा- ।
ह्लादं निज-शिर-करण्ड''''''''' ।
'' दं वर्चिसे मेरेवम् ।
मेदिनि-मीसेयर गण्डनी-वैचप्पम् ॥

तदनन्तरम् ॥

विलसित-विजयानगरिय ।
नेलेवीडिनोळे वीर-बुक्क-राज-तनूजम् ।
बलि-निभ-हरिहर रायम् ।
सले राज्यं गेय्युतिर्द्दनति-मुददिन्दम् ॥

तत्पादपद्मोपजीवि ॥

वृ ॥ माधव-राय अप्रतिम-तिय ना''' उ[द]ग्र-साहसां-
भोधिगळेन्दु'''रणद दन्तिगे''''''मोग्द-कालदोळ् ।
बोधक-रूपिनिं'''गोण्ड'''रणं'''वृद्धि-वि- ।
द्याधरर् आज्ञणं तो'''तोळेय''' ''' ''' ॥

वर-वस्त्राभरण··· ··· ··· छत्रमं··· ··· ।
··· ब्रातम ··· ··· ··· रूर्गळम् चामरो- ।
त्करमं कप्पुर दम्बुल-प्रकरमं कोण्दा··गीत··· ।
त्तुरदी-कोङ्कण-देशजर् खळर् एनुत्तागेत्तइं माडदे ।।
नस्ताम्बेयोळं धात्री- ।
वल्लभ माधव निरुत्तरमक्षि तर ।
रल्लक्षि निलुतं त्ररल् ।
एल्लर परेयल्के कण्डु कलि-बैचप्पम् ।।
वृ ।। हयमं देरेगेइं नेलक्किळिवुतं पाय्देरि नोडुत्ते भल्- ।
लेयनुक्कैय्दि ··· ··· ··· तारं तट्टुत्तुत्ते बल्- ।
मेयोळड्ड बरुत्तिप्पं कोङ्कणिगरं कीनाश-लोकक्के निशू- ।
चयदिन्देय्दिसुत पराक्रमयुतं बैचप्पनिन्तिर्प्पिनम् ।।
केलवर् कोङ्कणिगर् म्मार्- ।
म्मलेवदटि वण्डु-गट्टि नेट्टने परिसन्द् ।
अलगडुणमं चाळिसि ।
नेलनदिरलु ··· ··· ···मेय्द ।।
तलेयिन्द ··· सिडि ·· तूळ्दाडि खड्गाग्र कण्णोळ् ।
किडि सूसिचेम्बिनं ·· रदटिनिं पाय्दु ·· ·· बन्- ।
दडे कट्टी-बैचपं माधव-नरपति नोडल्के सङ्ग्रमदिम् ।
किडि-खण्डं माडिदं माव्वंलमनदटिनिं भीमसेनोपमानम् ।।
आ-रण-रंगदोळ् विडदे कूगि नेगळ्द-वीर ··· ··· ।
··· ··· विट्टु नेट्टने समाधि-विधानमोन्···चित्तदोळ् ।
मार-विरोधि ··· ·· नूर्बित-नाक-लोकमम् ।
सारिदनुत्तम-प्रभु-कुलाम्बर-चन्द्र-मरीचि बैचपम् ।।
निरुतं श्री-शक-सङ्के सासिरद मूनूरोन्द रौद्रि-व- ।
त्सर-वैशाख-सित-त्रयोदशि-लसद्-भौमाढ्यं वार ।

बरे वैचप्पनुदार-चारु-जिन-पदाम्भोज-सक्तं मनो- ।
हर रूपं वर-धात्रियोळ् मडिदु नाक-चेत्रमं पोर्द्दिदम् ॥

[वैचप्पने किस तरह जिन चरणों का आश्रय लिया,इसका इस लेखमें वर्णनहै । भरत चेत्र-कुन्तलदेश-त्रनवसे १२०००-१८ कम्पण-उद्धरे-और उसमें वैचप्पका वर्णन । बुक्कराजके पुत्र हरिहर-राय विजयनगरीमें राज्य कर रहे थे । कोंकण-देशसे लड़ाई का वर्णन । उसमें वैचप्प की जीत हुई ।]

[EC, VIII, Sorab tl.,;No. 152]

५८०

मलेयूर—कन्नड़ ।

[बिना काल निर्देशका, पर लगभग १३८० ई०]

[उसी पर्वतपर, पार्श्वनाथ बस्तिके प्राङ्गणमें दक्षिणकी ओरके पाषाणपर]

बाहुबलि-पण्डित-देवरु ।

नयकीर्त्ति-व्रति-नन्दनं सकळविद्याचक्रवर्त्याह्वयं
द्वय-भाषा-कविता-त्रिणेत्रगुरु-होरा-शास्त्र-सर्व्वज्ञकम् ।
नययुक्तमवर-मूल-सङ्घदोडेयं देशी-गणाग्रेसरं
प्रियदं पोस्तुक (पुस्तक)-गच्छ-पूर्ण-तिलकं श्रीकोण्डकुन्दान्वयं ॥

[बाहुबलि-पण्डित देव—नयकीत्ति-व्रतीके पुत्र, सकलविद्याचक्रवर्ती, द्वयभाषा कवितात्रिनेत्र, होराशास्त्रसर्वज्ञ, नययुक्त मूलसंघाधिपति, देशीगणाग्रेसर, पोस्तुक-गच्छके पूर्ण तिलक और कोण्डकुन्दान्वयी थे ।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 157]

५८१

तिरुप्परुत्तिक्कुण्रू (काञ्जीवरम्के निकट)—तामिल।

(दुन्दुभि वर्ष=१३८२ ई० (हुक्ज)]

१—स्वस्ति श्रीः [॥] दुन्दुभिवर्षं कात्तिगै-मादत्ति । पूर्व्व-पक्षत्तु-चिङ्गत्तु-श्रिळ-मैयु पौर्णैयुं पेर्र ताकात्ति-

२—गै-नाळ् महामण्डलेश्वरन् अरिहरराज-कुमारन् श्रीमद्- बुक्कराजन् धर्म्म आग वैचय-दण्डनाथ-पुत्रन्

३—जैनोत्तमन् इरुगप् [प]-महाप्रधानि वि [रुप्] प्परुत्तिक्कुण्रू-नाय-नार् त्रैलोक्यवल्लभर्क्कु पूजैक्कु

४—शालैक्कुं तिरुप्पणिक् [कु] म् मावण्डूर्-प्पर्रिल् महेन्द्रमङ्गलं नार्पा-ल्लैयुं इटै-इलि पत्तिच्छन्दमाग चन्द्रादित्यवरैयुं नडक्कत्तरुविलार धर्म्मोय जयतु

[काञ्जीवरम्के निकट तिरुप्परुत्तिक्कुण्रूमें वर्धमान जिनमन्दिरके भण्डारकी उत्तर तरफकी दीवालपर नीचेकी ओर यह तामिल तथा ग्रन्थ लेख उत्कीर्ण है। इसमें बताया गया है कि वैचय दण्डनाथ (सेनापति) का पुत्र इरुगप्प महामन्त्रीने मावण्डूर् तालुकेका महेन्द्रमङ्गलं गाँव जैनमन्दिरको दानमें दे दिया था। उसने यह दान हरिहर द्वितीय के पुत्र अरिहरराज, अर्थात् बुक्क द्वितीय, के पुत्र बुक्कराजके गुणके कारण किया था। अतः दुन्दुभिवर्ष, जिसमें दान किया गया था, १३८२ ई० से मिलना चाहिये।]

[EI, VII, No. 15 A.]

५८२

बस्तीपुर—कन्नड़ ।

[शक १२०५=१२८३ ई०]

[बस्तीपुर (बळगुळ तालुका) में, सोमा-पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्री-मूलसङ्घ कानूर-गण तिन्त्रिणि गच्छ कोण्डकुन्दान्वयद श्री-वासुपूज्य-देवर शिष्यरु श्री-सकलचन्द्र-देवर तपद प्रभावमेन्तेन्दोडे ॥

स्थिरवाक्यं सु-व्रताम्भोनिधि सकळ-जगत्-पावनं राजपूज्यं
परम-श्री-जैनधर्म्माम्बर-दिनकरनुद्यत्तपोमूर्त्ति ··· णा ।
भरणं त्रैविद्य-चक्रेश्वर-विमल-पदाम्भोज-भृङ्गं जिनश्री-
चरणालंकार-शीरुष (व) म् सुकविजन-यतप्-सन्मुनि राजहंसं ॥

सोस्ति श्रीशकवर्ष १२१५ नेय सुभकृतु-संवत्सरद श्रावण-मास-सुद्द-पाड्य-आदित्यवार-सिंह-लग्नदल्लि कूरिगिहळ्ळिय प्रभु-गळु गौड-कुल-तिलकरु मरें-होकर-कावरु शिथिल-वेङ्कोम्बरु सत्यदल्लि कर्ण्णरुमप्प केत-गौड राम-गौड सम्बुव-गौड मादि-गौड मोदलाद समस्त-गौडगळु बस्तिय प्रतिष्ठेयं माडिसि बस्तिय ब्रह्मगण बिट्ट बेद्दलु को १० पारुष-देवर अमृतपडि ··· ··· ··· सद्द । देवोजन बहर मंगल महा श्री श्री श्री

[मूलसङ्घ, कानूरगण, तिन्त्रिणि गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके वासुपूज्यदेवके शिष्य सकलचन्द्रदेवके तपकी स्तुति या प्रशंसा है। कूरिग (गि) हल्लिके गौड़ोंने एक पारुष-देवकी वस्ति (मन्दिर) बनवाई और उसे दान दिया।]

[EC, III, Seringapatam tl. No. 144]

५८३

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[वर्ष रुद्धारि = १३८३ ई० ? (लू. राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, १२ वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु रुधिरोद्गारि-संवत्सरद ज्येष्ठ शुध-पुण्णमि-सोमवार-दन्दु श्री-मूल-संघद वीरसेन-देवर गुड मुद्द-गौड मगळु एकमतियवे पञ्च-नमस्कार-समाधि-विधियिं स्वर्गस्थेयादळु अचेयवे गौडि माडिसिद कलु ॥ बोपोझोज गेयिद कलु ॥

[लेख पहिलेके ही लेखों के समान है, अतएव स्पष्ट है। सन् १३८३ ई० का है। किसी राजाका उल्लेख नहीं है।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 112]

५८४

रावन्दूर—संस्कृत और कन्नड़।

[शक १३०१ = १३८४ ई०]

[रावन्दूर (रावन्दूर प्रदेश) में, वस्तिके एक पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्यरेनिसि श्री-मूलसंघदेशीय-गण पुस्तक-गच्छ कोण्डकुन्दान्वय यिङ्गळेश्वरद बळि श्री मदभयचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्त्ति-गळु तत्-शिष्यरु श्री-श्रुतमुनिगळु तत्-शिष्यरु प्रभेन्दुगळु अवर प्रियाग्रशिष्यरु श्री-श्रुतकीर्त्ति-देवरु शक-वर्ष १३०६ नेय रुधिरोद्गारि संवत्सरद द्वितीय-भाद्रपद-ब ८ आदित्यवारदलु मुक्तिवधू-वल्लभरादरु तत्प्रतिनिधियनु सुमति-

तीर्थंकरनू ई-चैत्याल[य]द जीर्णोद्धारवनु अवर शिष्यरु **आदिदेव-मुनिगळु** श्रुत-गण-मुख्यवाद समस्तभव्यजनङ्गळु माडिसिद शासन वर्द्धतां जिन-शासनम् ।

[मूलसङ्घ, देशियगण, पुस्तकगच्छ, कोण्डकुन्दान्वय, और इंगुलेश्वर-बलिके **अभयचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्त्ती**के शिष्य श्रुतमुनि उनके शिष्य प्रभेन्दुके प्रियाग्र शिष्य—श्रुतकीर्त्ति-देवके मुक्तिवधूके वल्लभ होनेके बाद (अर्थात् स्वर्गस्थ हो जानेपर), उनके शिष्य **आदिदेव मुनि** तथा श्रुत-गणके जैनोंने उनकी तथा सुमति तीर्थंकरकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कर इस **चैत्यालय**को सुधरवाया ।]

[Ec, IV, Hunsur tl., No. 123.]

५८५

विजयनगर—संस्कृत ।

[शक १३०७=१३८६ ई०]

(जैन मन्दिरके सामने दीपस्तम्भ पर)

यत्पादपंकजरजो रजो हरति मानसं ।
स जिनः श्रेयसे भूयाद्भूयसे करुणालयः ॥ [१]
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥ [२]
श्रीमूलसंघेजनि नंदिसंघ [स्त] स्मिन् बलत्कारगणोतिरम्य ।
तत्रापि सारस्वतनाम्नि गच्छे स्वच्छाशयोऽभूदिह **पद्मनंदी** ॥ [३]
आचार्य्यं कुंड [कुंदा] ख्यो **वक्रग्रीवो** महामति ।
एलाचार्यो गृध्रपिच्छ इति नाम पंचधा ॥ [४]
केचित्तदन्वये चारुमुनय. खनयो गिरा [।]
जलधाविव रत्नानि बभूवुर्द्दिव्यतेजसः ॥ [५]
तत्रासीच्चारुचारित्ररत्नरत्नाकरो गुरुः ।
धर्म्मभूषणयोगीन्द्रो भट्टारकपदांचितः ॥ [६]

भाति भट्टारको धर्म्मभूषणो गुणभूषण. ।
यद्यश.कुसुमामोदे गगनं भ्रमरायते ॥ [७]
शिष्यस्तस्य मुनेरासीदनर्गलतपोनिधिः ।
श्रीमानमरकीर्त्त्यार्य्यो देशिकाग्रेसरः शमी ॥ [८]
निजपद्मपुटकवाट घटयित्वानिलनिरोध [तो] हृदये ।
अविचलितबोधदीपं तममरकीर्त्तिं भजे तमोहरणम् ॥ [९]
केपि स्वोदरपूरणे परिणता विद्याविहीनातरा
योगीशा भुवि सम्भवंतु बहवः किं तैरनंतैरिह ।
धीरः स्फूर्ज्जति दुर्ज्जयातनुमदध्वंसी गुणैरुर्ज्जितै-
राचार्य्योमरकीर्त्तिशिष्यगणभृच्छ्री सिंहनन्दी व्रती ॥ [१०]
श्रीधर्मभूषोजनि तस्य पट्टे श्रीसिंहनंद्यार्य्यगुरोस्सधर्म्मा ।
भट्टारक· श्रीजिनधर्म्महर्म्यस्तंभायमान· कुमुदेन्दुकीर्त्ति ॥ [११]
पट्टे तस्य मुनेरासीद्वर्द्धमानमुनीश्वर. ।
श्रीसिंहनंदियोगींद्रचरणांभोजषट्पद ॥ [१२]
शिष्यस्तस्य गुरोरासीद्धर्मभूषणदेशिकः ।
भट्टारकमुनिः श्रीमान् शल्यत्रयविवर्ज्जित ॥ [१३]
भट्टारकमुनेः पादावपूर्व्वकमले स्तुम· ।
यदग्रे मुकुलीभावं यांति राजकरा· परं ॥ [१४]
एवं गुरुपरंपरायामविच्छेदेन वर्त्तमानाया—
आसीदसीममहिमा वंशे यादवभूभृता [।]
अखंडितगुणोदारः श्रीमान् बुक्कमहीपति [१५
उदयन्नूतस्तस्माद्राजा हरिहरेश्वरः ।
कलाकलापनिलयो विधु· क्षीरोदधेरिव ॥ [१६]
यस्मिन् भर्त्तरि भूपाले विक्रमाक्रातविष्टपे ।
चिराद्राजन्वती हंत भव [त्येषा] वसुंधरा ॥ [१७]

तस्मिन् शासति राजेन्द्रे चतुरम्बुधिमेखला ।
धरामधरिताशेषपुरातनमहीपतौ ॥ [१८]
आसीत्तस्य महीजाने. शक्तित्रयसमन्वित. ।
कुलक्रमागतो मंत्री चैचदंडाधिनायक ॥ [१६]
द्वितीयमंत करणं रहस्ये बाहुस्तृतीस्समरागणेषु ।
श्रीमान्महा चैच [प] दंडनाथो वार्गत्ति कार्ये हरिभूमिभर्तुः ॥ [२०]
तस्य श्रीचैचदंडाधिनायकस्यो [र्ज्जि] तश्रियः ।
आसी दिरुगदंडेशो नंदनो लोकनन्दन ॥ [२१]
न मूर्त्ता नामूर्त्ता निखिलभुवनाभोगिकतया
शरद्राजद्राकाविटनिर्घ्लिनेत्रद्युतितया ।
अमूता कीर्त्तिस्ता चिरमिरुगदण्डेश कथय-
त्यनेकांताक्रांतात्परमिह न किञ्चिन्मतमिति ॥ [२२]
सद्वंशजोपि गुणवानपि मार्ग्गणाना-
माधारतामुपगतोपि च यस्य चाप ।
नम्रः परान्विनमयन्निरुगक्षितीश-
स्योच्चैर्ज्जनाय खलु शिक्षयतीव नीतिम् ॥ [२३]
हरिहरधरणीशप्राज्यसाम्राज्यलक्ष्मी-
कुवलयहिमधामा शौर्य्यगाम्भीर्य्यसीमा ।
इरुगपधरणीशस्सिहनन्ध्याय्र्यवर्य्य-
प्रपदन [ाल] नम्रंगस्स प्रतापैकभूमिः ॥ [२४]
स्वस्ति शकवर्षे १३०७ प्रवर्तमाने क्रोधनवत्सरे फाल्गुनमासे कृष्णपक्षे द्वितीयायां तिथौ शुक्रवारे ॥
अस्ति विस्तीर्ण्णकर्णाटधरामण्डलमध्यगः ।
विषय कुन्तलो नाम्ना भूकांताकुंतलोपमः ॥ [२५]
विचित्ररत्नरुचिरं तत्रास्ति विजयाभिधं ।
नगरं सौधसन्दोह दर्शिताकाण्डचन्द्रिकं ॥ [२६]

मणिकुट्टिमवीथीषु मुक्तासैकतसेतुभिः ।
दा[न]ावूनि निरुंधाना यत्र क्रीडंति बालिका [॥ २७]
तस्मिन्निरुगळदेश पुरे चारुशिलामथ ।
श्रीकुन्थुजिननाथस्य चैत्यालयमचीकरत् ॥ [२८]
भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥

सारांश,

इस लेखमें २८ संस्कृत-श्लोक हैं और यह प्राचीन जैन मन्दिरके सामने दीपस्तम्भ पर खुदवाया है। इस मन्दिरको आजकल 'गाणिगिट्टी' मन्दिर, यानी, "तेलिनका मन्दिर" कहते हैं। पहले श्लोकमें जिन, दूसरेमें जिनशासनकी मंगलकामना है। तत्पश्चात् एक जैन संघके प्रधान **सिंहनन्दिके** आध्यात्मिक पूर्वजों तथा शिष्योंके वंशका वर्णन है। वह इस तरह है —

मूलसंघ
|
नन्दिसंघ
|
बलात्कार-गण
|
सारस्वतगच्छ
|
पद्मनन्दी
⋮
धर्मभूषण प्रथम, 'भट्टारक'
|
अमरकीर्ति
|

सिंहनन्दि, 'गणभृत्'

|

धर्मभूष, 'भट्टारक'

|

वर्द्धमान

|

धर्मभूषण द्वितीय, उर्फ भट्टारकमुनि

लेखमें इन गुरुओंकी पदवियाँ ये लिखी हैं :—आचार्य, आर्य, गुरु, देशिक मुनि और योगीन्द्र। गुरुवंशावलीके बाद ही प्रथम **विजयनगर** वंशके दो राजाओं, **बुक्क** और उसके पुत्र **हरिहर**का संक्षिप्त वर्णन है। बुक्क यादववंशके राजाओंमें उत्पन्न हुआ था। हरिहरका कुलक्रमागत मंत्री दण्डाधिनायक **चैच** या **चैचप** था, जो जिन भक्त था। चैचका पुत्र दण्डेश या क्षितीश (युवराज) **इरुग** या **इरुगप** था, जो उपर्युल्लेखित सिंहनन्दि गुरूके सिद्धान्तोंका उपासक था (श्लोक २४)। १३०७ [अतीत] शकमें, क्रोधन संवत्सरमें इरुगने विजयनगरमें एक मन्दिर बनवाया और उसमें श्री कुन्थु-जिननाथकी स्थापना की। यह नगर कर्णाट प्रान्तके कुंतल जिलेमें था (श्लोक २५)।]

नोट :—इस मंत्री इरुग या इरुगपने 'नानार्थनाममाला' नामक ग्रन्थ बनाया था, ऐसा ई० हुल्श, पी० एच० डी० महाशयके लेखसे मालूम पड़ता है।

[South Indian ins, Vol. I, No. 152.
(p. 155–160)]

———

५८६

मसार;—संस्कृत।

[सं० १४४३=१३८६ ई०]

नं० १

[वृषभ चिह्नवाली आदिनाथकी प्रतिमाके चरण-पाषाणपरका लेख]

१—सं० १४४३ ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो महासारस्य ज
२—राजनाथ देव राज्ये काष्ठसंघे आचा-
३—र्यं कमलकीर्त्ति जयसरङ्गाचार्ज
४—* * वपुत्रल * * *

यह लेख सं० १४४३में, सारंग (या उसके पुत्र) द्वारा एक प्रतिमाके समर्पणका उल्लेख करता है। समर्पण महासारके राजनाथ देवके राज्यमें हुआ। गुरु काष्ठासंघके कमलकीर्ति आचार्य थे।

नं० २

[एक प्रतिमाके, जिसका चिह्न मिट गया है, चरण-पाषाणपरका लेख]

१—सं० १४४३ समये ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो
२—राजनाथ देव प्रवर्द्धमाने[१] महासारस्य काष्ठसंघे मथुरान्वये
३—पुष्करगणे प्रतिथ वन कमलकीर्त्ति देव
४—जैसवल वेसल रगचर्ज * * *
५—पुत्र लवम देव सम * * *
६—यन प्रतिष्ट * *

इस लेख में पहलेके लेखके दिन ही एक प्रतिमाके समर्पणकी बात है। राजनाथ देव और उसके गुरु कमलकीर्त्ति का नाम स्पष्ट है।

१. मूलमें 'राज्ये' छूट गया है।

नं० ३

[शंख चिह्नवाली नेमिनाथकी प्रतिमाके पीठ-स्थलपरका लेख]

१—सं० १४४१, ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो महासारस्य न (?)
२—काष्ठसंघे अचार्य-कमलकोर्त्ति देव
३—जै महन्साचार्यं उदे सिदि

उसी राजा और उसी गुरूके तत्त्वावधानमें उसी दिन नेमिनाथकी प्रतिमाका दान।

[A. Cunningham, Reports, III, p. 68–69
No. 1–3.] t. & a.

५८७

तिरुप्परुत्तिक्कुण्रु,—संस्कृत।

प्राभव (प्रभव) वर्ष = शक १३०९ = १३८७ ई० (हुल्श और कीलहॉर्न)]

श्रीमद्वैचयदण्डनाथतनयस्संवत्सरे प्राभवे
संख्यावानिरुगप्प-दण्डनृपतेश्श्रीपुष्पसेनाज्ञया॥
श्री काञ्चीजिनवर्द्धमाननिलयस्याग्रे महामण्डपं
सङ्गीतार्थमचीकरच्च शिलया बद्धं समन्तात् स्थलम्॥१॥

[पूर्व शिलालेखवाले मन्दिरकी वेदीके सामनेके मण्डपकी छतमें यह ग्रन्थ-लेख उत्कीर्ण है। इसमें शार्दूलविक्रीडित छन्दका एक ही श्लोक है। इसमें उल्लेख है कि प्राभव (प्रभव) वर्षमें गुरु पुष्पसेनकी आज्ञासे सेनापति वैचपके पुत्र उसी (पूर्व वर्णित) सेनापति इरुगप्पने उस मण्डपको बनवाया है जिसमें यह लेख उत्कीर्ण है।]

[E C, VII, No. 15, B.]

५८८

उद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[वर्ष विभव = १३८८ ई० (लू० राइस) ।]

[उसी तालाबकी मोरीके पासके पाषाणपर]

श्री-शान्तिनाथाय नमः ।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
वर-वृषभ-तीर्थंकर गण- ।
धररेनिसिद वृषभसेन-मुनि-पुङ्गवरद- ।
धुर-वंश-सम्भवाचा- ।
र्य्यर पेम्प पोगळ्वरिदपने फणिरमणम् ॥
आ-नियमाग्रणिगळु जिन- ।
सेन-श्री-वीरसेन रेनिपाचार्य्यर् ।
भू-नुत-चरित्ररवरम् ।
बानिसुव विनेय-जनद पेम्पेंयदार्म्मम् ॥
अमर्द तदन्वयदिं बन्- ।
द मुनीशरु लक्ष्मिसेन-भट्टारकरुत्- ।
तम-चरित्रवर शिष्यरु ।
विमळ-गुणरु चन्द्रसेन-सूरिगळनघर् ॥
आ-मुनि-राजर शिष्यो- ।
द्दामरु मुनिभद्र-देवरवर चरित्रम् ।
भू-महितमेन्दोडदनिन्न् ।
ए-मतो बण्णिसल्के वल्लवनावम् ॥
वृ ॥ चेममनम्बिनं विमल-कीर्त्ति दिगन्तमनेय्ददन्निनम् ।

कामन चाप चापळते सार्व्वीनमोप्पिदरं पोगळ्दपेम् ।
श्री-मुनिमद्र-देवरनिळा-विनुतोरु-शुम-स्वमावरम् ।
प्रेमदोळर्त्थिगर्त्थमुमनीवरमुग्र-तप -प्रमावरम् ॥
मुनिसं मन्मथ-युद्धदोळ् निरुतमं तत्त्वार्थदोळ् भक्तियम् ।
जिन-पादाम्बुजदोळ् कृताधिकतेयं सच्चित्तदोळ् देसेयम् ।
विनुताचार-चयङ्गळोळ् वचनमं वक्तृत्वदोळ् रुक्म रस् ।
जनेयं देहद कान्तियोळ् निरिसिदर्वाक्याढि-वर्णाह्वयर् ॥

कं ॥ हिरियुगल्ल बसदियं मा- ।
डिवि मुळुगुण्डः जिनेन्द्र-मन्दिरके सुधा- ।
प्रसरमनेसगिसि जममम् ।
पसरिसि मुनिभद्र-देवरोळ्पं तळेदर् ॥
न्यायोपायद हरिहर- ।
रायं वर-विजयनगरियोळु नेलसिप्पन्द् ।
आयतिकेय सेन-गण- ।
ग्रावरु मुनिभद्र-देवररनेरकदङ्र् ॥
इन्तेसेव तपश्चरणा- ।
नन्तरमाप्तागम-प्रमावमनेसगुत्- ।
तं तूळ्दि दुरितमं निश्- ।
चिन्तरु मुनिभद्र-देवरिर्प्पन्नेवरम् ॥
कालावसान-संस्थितिगु ।
आलम्बमेनिप्प निर्णय दोरकलोडम् ।
शीलाचार-समान वि- ।
शालमुनिभद्र-देवररितं बनिसल् ॥
नीरोळगण-तावरेयेले ।
नीरं पोरदन्ते बाह्य-वस्तुवनेल्लम् ।

दूरं माडि बळ्ळिक्कम् ।
धीररु **मुनिभद्र-देव**रगणित-महिमर् ॥

वृ ॥ क्रमे निश्शल्यमेनुत्ते सन्यसनदिन्दात्म-प्रबोधादयम् ।
समसन्दोन्दिरे दिव्य-पञ्च-पद-चिन्ता-पंक्ति मुन्नेय्दुवुत्- ।
तम-ताणक्कदु सञ्चितार्त्थमेने धर्मं-ध्यान-मौनोद्यमं ।
क्रमदिन्दं **मुनिभद्र-देव**रोडलिं बेम्मोडिदर्व्वोवमम् ॥
लसित-शकाङ्कमुद्ध-नभ-चन्द्र-पुरेन्दुविनिन्दे सोमिसल् ।
पेसर्वडेदोप्पि तोप्पं विलसद्-**विभवाब्दद-चैत्र शुद्ध-ते-** ।
रसे-शनिवारदोळ् सकळ-सन्यसन-व्यसनं समाधि सन्- ।
दिसे **मुनिभद्र-देव**ररे सद्-गति सौख्यमनेय्दिदर् निजम् ॥

क ॥ लसित-**मुनिभद्र-देव**र ।
नि,सिधियुमनवर शिष्यरेने सोगयिप **पारि-** ।
सरेन-देवररे मा- ।
डिसि कीर्त्तियनान्तरिन्दु कन्तु-विदूरर् ॥

भद्रमस्तु जिनशासनम् श्री

[वृषभ-तीर्थंकरके गणधर वृषभसेन-मुनिप और उद्धुर-वंशके आचार्योंकी कीर्त्तिका वर्णन कौन कर सकता है ? इस वंशके आचार्योंके अग्रणी जिनसेन और वीरसेन थे । उस परम्परामें लक्ष्मीसेन-भट्टारक अवतीर्ण हुए थे, जिनके शिष्य चन्द्रसेन-सूरि थे । उनके शिष्य मुनिभद्र-देव थे; उनकी प्रशंसाएँ । उन्होंने हिसुगल बसदिको बनवाया था, और मुळुगुण्ड जिनेन्द्र मन्दिरका विस्तार किया था । जिस समय हरिहर-राय विजयनगरीमें विराजमान थे, सेन-गणके वृद्धजनोंने उस यतिके गुणोंको नमस्कार किया था । तपश्चरणके बाद उन्होंने बहुत समयतक निश्चिन्त जीवन बिताया । अन्तमें, उन्होंने अपना अन्त नजदीक जानकर, विहित विधिका अनुष्ठान करके उच्चावस्थाके लिये अपनेको तैय्यार किया, तथा

(उक्त मितिको), 'सन्यसन' की विधिपूर्वक, प्राणोत्सर्ग करके शाश्वत सुखका आनन्द लिया। उनका स्मारक उनके शिष्य वा (पा) रिससेन-देवके द्वारा खड़ा किया गया था। जिनशासनका कल्याण हो।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 146]

५८६

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[शक १३११=१३८६ ई०]

[हिरे-आवळिमें, १६वें पाषाण पर]

श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगरि-मुखवाद। समस्त-पट्टणाधीश्वर। अश्वपति-गजपति-नरपति-अरि-राय-तुरुष्क (ष्क)-विभाड। हिन्दूराय-सुरत्राण। भाषेगे-तप्पुव-रायर गण्ड। समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वल्लभ। महाराजाधिराजम्। श्री-वीर-बुक्क-रायन कुमार हरिहर-राय रादयं गेय्युत्तमिप्पं कालदल्लि महा-प्रधानि मन्त्रि-शिरोमणि मादरस वोडेयर काल। स्वस्ति यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-तप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरप्प श्री-मुनिभद्र-स्वामिगळ गुड्ड। आहाराभय-शास्त्र-दान-विनोदनुं। रत्नत्रयाराधकनुं। जिन-मार्ग-प्रभाव-करनुमप्प जिड्डुलिगेय-नाडिङ्के मुखवाद हिरियावलिय पुराधीश्वरनप्प आमन्नाळुव-महा-प्रभु काम-गौण्डन सुपुत्र कुल-दीपकनप्प। हिरियचन्दप्पन शक-वर्ष १३११ शुक्ल-संवत्सरद कार्तिक-बहुळ-रजनी-कुज-वार-चतुर्द्दशि- शुभ-दिनदल्लु सन्यसन-समाधि-विधियिं मुडिहि स्वर्गा-प्राप्तनाद॥

क॥ कार्त्तिक-बहुळ-चतुर्द्दशि।
कीर्त्तिय मुनिभद्र-यतिय प्रियद गुड्डम्।
मूर्त्तिय देहव तोरदन-।
मूर्त्तद देवरने नेनेदु कीर्त्तिय पडेदम्॥
वोडने हुट्टिदरनेल्लर

कह्नु-मोह्द मात-पितर-बन्धु-बनङ्गळ ।
यडवरियद महदियरम् ।
कह्नु-गलितनदल्लि वोरेदु सन्यसनिन्दम् ॥
रजनि-कुजवार-शुभ-दिन ।
भजियिसिदं देव-गुरुव व्रतगळनेल्लम् ।
सुजनत्वद चन्द्रमनुम् ।
गजमजिसदे मडिदि स्वर्गमं नेरे पडेदम् ॥
अण्ण चन्द्रमगे गोपय ।
पुण्यद सम्बळ वनिते राम-गौण्ड-गौण्डिय पुत्रम् ।
वण्णिसुव हरिहरायन ।
पुण्णिदन कालदल्लि शुक्लोत्सरदोळ् ॥
गगाळ महा । श्री श्री

[लेख स्पष्ट है । हरिहर-रायके समयका है ।]

[Ec, VIII, Sorab tl , No 116]

५९०

मुल्लूर;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३१३ = १३९१ ई०]

[मुल्लूरमें, वस्ति-मन्दिरमें चन्द्रनाथ वस्तिके पास]

स्वस्ति श्री शक-वर्ष १३१३ नेय प्रमोदूत-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध ५ ... रदल्लु श्री-मूल-सघ देसी-गण पुस्तक-गच्छद ... कोण्डकुन्दान्वयराव्यं-शुभेन्दु कन्द- विजयकीर्त्ति-देवर प्र ... ... ल्लि देवर ई-स्थानमं पडेदुद्धरिसिदर श्री-राजा ... ... कोङ्गाळ्व सुगुणि-देविय देहारद विजय-देवर द्वारा ... ... स्व-जननि ... ... आ-पोचब्बरसिगे पुण्यार्थ-वागि प्रतिष्ठेय माड्सि ... बिट्ट करु अणिज्ञवाडिय नेलविहळ्ळियम् (यहाँ

दान और सीमाओंकी विस्तृत चर्चा आती है; और वे ही अन्तिम वाक्यावयव) ।

[स्वस्ति । (उक्त मितिको), श्री-मूल-संघ देशीगण पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके, आर्य शुभेन्दुकी सन्तान विजयकीर्त्ति देवके प्रिय ·····ल्लि-देव-को यह मन्दिर मिलनेके बाद इसकी पुन स्थापना की। और राजा ····· कोङ्गाळ्व सुगुणि-देवीने, अपने शरीररक्षक विजयदेवके द्वारा,—इसलिये कि अपनी माँ पोचब्बरसिके लिये पुण्योपार्जन हो सके, —(प्रतिमाकी स्थापना की और इसके लिये जैसे कि लेखमें कहे गये हैं, सीमाओं सहित) दान दिये। शाप।]

[EC, IX, Coorg tl., No. 39]

५९१

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग

५९२

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[वर्ष आङ्गिरस=१२५३ ई० (लु. राइस)।]

[हिरे-आवलिमें, ११वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु आङ्गिर-सं [व] त्स (त्स) रद आश्र (षा) ड-सुध त्रयोदशे-गुरुवार दन्दु। मूल-संघद शुभचन्द्र-देवर गुड अर्वालिय मसण गोडन मग गौरव-गोडन तम्म काळ-गोड समाधियिं मुडिपि स्वर्ग-प्राप्तनाद ॥

[लेख स्पष्ट है। राजाका उल्लेख नहीं है।]

[Ec, VIII Sorab tl, No 111]

५९३

हुले-सोरब,—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक सं० १३१७=१३९५ ई०]

[हुले-सोरबमें, उसके दक्षिण-पूर्वमें, तालावके उत्तरीय नष्ट बन्धके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छन ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

शक-वरुष १३१७ नेय भाव संवत्सरद भाद्रपद-ब ७ बु सोरवद मोलेय-तम्म गाउडन मग तम्म-गाऊड तनगे क्षय-व्याधियाद-निमित्त घट्टद केळगण नगिलेयकोप्पक्के होगि औषधिय माडिसिकोळुतिरलागि रोग बिडदे सिद्धान्ति-देवर पञ्च-नमस्कारद ध्यानदिं जिन-चरण-सेवेगैदिदनु ॥

[जिनशासनकी प्रशंसा। (उक्त मितिको), सोरबके तम्म-गौडको क्षय-रोग हो जानेसे घाटोंके नीचे नगिलेयकोप्पमें दवाई लेनेके लिये गया। लेकिन चूँकि बीमारी (रोग) उसे छोड़नेवाला नहीं था,—सिद्धान्ति-देवकी आज्ञाके अनुसार, पञ्च-नमस्कारके उच्चारणपूर्वक, वह जिनके पाद-मूलमें गया।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 52]

५९४

हिरे-आवली,—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष भाव=१३९५ ई० (लू, राइस)]

[हिरे-आवलिमें, तीसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर अश्वपति-राजपति-नरपति-अरिराय-विभाड समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वल्लभ महा-राजाधिराजं श्री-हरिहर-राय राज्यं गेय्युत्तमिर्प्पल्लि तत्प्रधानि हरिय-रायन·· कालदल्लि भाव संवत्सर-फाल्गुण-मास-बहुळ-एकादशी-बुधवारद ·· कान-रामणन सति कामीगोण्डि सन्यसनि-विधियिं मुडिहि स्वर्गस्थेयादळु ॥

वृ ॥ सुरपति-वन्द्य-पार्श्व-जिन-पाद-सरोजद युक्त-कान्तियुम् ।

धरे-नुत-राय-राज-गुरु सिद्धान्ति-यतीशने तन राध्यनुम् ।

भर ··· न- नाड जिड्डुळिगे आवलि-पुराधिप बेच-गौण्डनुम् ।

उरुतर-माम बोम्म॰नुमत्तेयु शोभिप कामि-गौण्डियुम् ॥

कान-रामण [न] सतियेने ।

दानदोळं धर्म्मदल्लि सन्यसनियम् ।

येनु तडावल्ल मुडिहिदम् ।

मानि पतिव्रते नाकमं नेरे पडेदळ् ॥ मङ्गळ महा श्री श्री श्री ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय राजधानी हस्तिनापुर-विजयनगर और समस्त शहरों पट्टण) का अधीश्वर, महाराजाधिराज हरिहर-राय राज्य कर रहे थे :—उसके मंत्री हरिहर-रायके समयमें, (उक्त मितिको), कान-रामणकी स्त्री काम-गौण्डिने, 'सन्यसन' लेकर, मृत्युको प्राप्त होकर स्वर्ग गयी । आगेके श्लोकों में बतलाया गया है कि राजगुरु सिद्धान्ति-यतीश उसका पुरोहित था; जिड्डुलिगे-नाड्के आवलि-पुर ा अधिप बेच-गौण्ड चाचा था; बोम्मर उसकी सास थी ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No. 103.]

५९५

हिरेआवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[—शक १२१९ = १२९७ ई०]

[हिरेआवलिमें, २१वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरम् । अरि-राय-विभाड । श्री-वीर-हरियप्प-वोडेयर राज्योदयदन्दु शक-वरुष १२१९ धातु-सं-आषाढ़-शु० ११ म हिरिय-बिङ्गलि-गेय-नाडोळ-गण हिरियावलिय राम-गौडन सति माघवचन्द्र-मलधारि-गळ गुड्डि रामि-गौडि श्री-जिन-पदवनेय्दिदळु

षड्दरुशन-सम-शीलम् ।

दृढ़-व्रत-दृढ़ ध्यान-मौन-दृढ़-गुण-चरितव ।

बिड़दे श्री-जिन-पदाब्जव ।

नेनकुत्तं रामि-गौडि स्वर्गस्तेयादळ् ॥

[लेख स्पष्ट है । हरियप्प-वोडेयर्के समयका है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 121]

५९६

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत ।

[शक १२२० = १२९८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५९७

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[काल=शक १३२१=१३९९ ई०]

[पार्श्वनाथ बस्तिके मुखमण्डपके तीसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु शक वरुष (वर्ष) सा १३२१ नेय बहुधान्यसंवत्सरद मार्गसिर-सुद्ध ४ ··· ··· श्रावण-नक्षत्रद ··· ··· मल्लप्पगळ मग होम्बुच्चद यि ··· पायण्ण सकल-सन्यसन-सल्लेखन ··· दणियं सरीर-मारमं बिट्टु स्वर्गस्तरादरु मङ्गळ श्री श्री

[होम्बुच्चके पायण्णने सन्यसन और सल्लेखनाके द्वारा अपनेको अपने शरीर-भारसे मुक्त किया और स्वर्ग प्राप्त किया । यह उसीका स्मृति-लेख है ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 51, t. & tr.]

५९८

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३२१=१३९९ ई०]

[हिरे-आवलिमें, पाँच वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ।

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराजं अश्वपति गजपति नरपति पूर्व्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगर-दुल्लवाद समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-हरिहर-राय रायरुं गेय्युत्तमिण्य कालदल्लि ।

शक-वर्ष १३२१ नेय बहुधान्य-संवत्सरद आषाढ़ शुद्ध १२ बुधवारदुदय-काल-दोळु श्रीमन्नाळुव-महाप्रभु जिड्डुलिगेय-नाड़िङ्गे मुख्यवाद आवलिय चन्द्र-गौण्डन सति चन्द्र-गौण्डि सन्यसन-समाधि-विधियिं मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तेयादळु ॥

क ॥ वर-पार्श्व-जिनर चरणम् ।

उत्तर-श्री-विजयकीर्त्ति-चरणाम्बुजमम् ।

शरणेन्दु मनदि नेनेवुत ।

वर-वडदळु यिन्द्र-स्वर्गमं सुखदिन्दम् ॥

नडव महा-लक्ष्मि-चौण्डक ।

यडवरिय ··· ··· ··· आवलियोळम् ।

कडयिल्लद कीर्त्तिय ··· ·· ।

पडेद सति सतियरोळगे ··· ··· गाद सतियळ् ॥

भद्रमस्तु ॥ मङ्गळ महा श्री श्री श्री

[यह लेख ऊपर के लेख नं० ५९४ से मिलता है, लेकिन चन्द्र-गौण्ड की पत्नी चन्द्र-गौण्डि, जिनके पुरोहित विजयकीर्त्ति थे, का उल्लेख है ।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 105]

५९६

ऊद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[बिना काल निर्देशका, पर लगभग १३८० ई०]

[ऊद्रिमें ही, एक दूसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भू-वळय-मध्यदोळ् इर्प्पुदु मेरु-पर्व्वतम् ।

प्रस्थदि दक्षिणाश्रयदोळिर्प्पुदु कुन्तळ-देश देशदोळ् ।

स्व-स्थिरवाद बनवसेगवाश्रयमुं पदिनेण्टु-कम्पणम् ।
विस्तरदिन्व जिडडुळिगेगोप्पुव दर्प्पणवुद्धरा पुरम् ।
उद्धरेयोळ् बनिसिद्दम् ।
... द्वात्तं बयिचपाल्मनं सिरियण्णम् ।
सद्धर्म्मिगळ सुर-द्रुम ।
... . सिष्टरं पालिसुत ॥
आतन सति चोडाम्बिके ।
भूतळदोळ् पुरुष-भक्ति बन्धुगळिल्सा- ।
मात्रदि पुर-जनवहुदेने ।
गोत्र पेच्चुंत्ते नडदळत्याश्चर्य्यम् ॥

व ॥ अन्ता-सिरियण्णं ... .. स्व-पत्नी-सहित-बन्धु-बान्धव .. परिजन-पुर-जनम पालिसुत्त सुख-संकथा-विनोददिन्दमिरुत यिरलु ॥ वोन्दानोन्दु-दिनं अरुहत्-परमेश्वरं मुनिभद्र .. सिरियण्ण ... चिन्तानेयं माळ्प ...

मुनिभद्र-देवराग्नेयोळ् ।
अनुवर्त्तिसिद गुड्डुनातनेम् ... ।
... ... तङ्क् ।
अनुमत-पदवीवेनेन्दु नेनेववसरदोळ् ॥
अनु ... त्तर्दि कुसुम-वृष्टिगळं सुरियल्के बेगदिम् ।
घन-रव-भेरि-दुन्दुभि महा-मुरजं वहु-वाद्य-घोषदिम् ।
तन तनगाडि पाडुतिरे .. .. ।
जिन-पद-पद्ममं बिडद ... सिरियण्णनेम् कृतार्त्थनो ॥

(बाकीका पढ़ा जाने योग्य नहीं है) ।

[इस लेखमें बयिचप्पके पुत्र सिरियण्णने किस तरह जिन-चरणोंका आश्रय लिया, इसका वर्णन है । नं० ५७६ लेखकी ही तरह यहाँ भी उद्धरेका वर्णन है । इसमें बयिचपके पुत्र जिन-भक्त सिरियण्णने जन्म लिया था । उसकी स्त्रीका

नाम वरदाम्बिके (?) था। एक दिन अर्हत् परमेश्वरने (?) मुनिभद्रको यह बतलाया कि वे पूर्ण गृहस्थ-शिष्य सिरियण्णको एक सुखी अवस्थामें पहुँचायेंगे। उस अनुकूल समयमें, जब कि पुष्प-वृष्टि हो रही थी और भेरी, दुन्दुभि तथा महा-मृदङ्गके बाजे बज रहे थे, साधु सिरियण्ण हमेशाके लिये जिन-चरणोंमें लिपट गया। कितना भाग्यशाली वह था?]

[EC, VIII, Sorab tl ,.No. 153]

५८०

मलेयूर—संस्कृत तथा कन्नड।

[प्रमाथि वर्ष = १४०० ई० ? (लू. राइस) ।]

[उसी पहाड़ीपर, बड़े गोल पाषाणके पश्चिमकी ओर]

प्रमाथि-वत्सरे ज्येष्ठ-मासस्य श्वेत-पक्षके।
पञ्चम्यां च तिथौ शुक्रवारे चन्द्रप्रभस्य तु ॥
प्रतिष्ठा कुरुते चन्द्रकीर्त्ति-योगी स्वयं मुदा।
स्व-निषिध्यर्थं उद्दाम-जिन-धर्म्म-प्रकाशक ॥

श्री-मूलसंघ देशीगण पुस्तकगच्छ इङ्गलेश्वरद बळि कोण्डकुन्दान्वयद सम्बन्धिगळु श्रुत-मुनिगळ पद-पद्म-भृङ्गरुं शुभचन्द्र-देवर प्रियाग्र-शिष्यरुं श्रीमतु सकल-कला-प्रवीणरुमप्प श्री-कोपणद् चन्द्रकीर्त्ति-देवरु माडिसिदरु श्री-चन्द्रप्रम-स्वामि-गळन्नु।

[सकलकलाप्रवीण, शुभचन्द्रदेवके प्रियाग्रशिष्य, मूलसघ, देशीगण, पुस्तक-गच्छ, इङ्गुलेश्वर-बळि तथा कोण्डकुन्दान्वयके श्रुतमुनिके पद-पद्म-भृङ्ग, कोपणके चन्द्रकीर्त्ति-देवने चन्द्रप्रमकी एक प्रतिमा बनवायी और उसकी, अपनी निषिधिके लिये, प्रतिष्ठा करायी।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 151]

६०१

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १३२५ = १४०३ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १७ वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति श्रीमतु हरिहर-राय राज्यं गेय्युत्तविप्प कालदलु॥ श्रीमन्नाळ्व-महा-प्रभु अवलिय बेचि-गोण्डन महा-सति सक-वर्ष १३२५ दनेय स्वभानु-संवत्सर-भाद्रपद-बहुळ-सप्तमी-शुक्रवार-रोहिणी-नक्षत्र-वेळप्प - जावदलु बोम्मि-गोण्डि सन्यसन-समाधि-विधियिं शरीर-भारमं बिट्टु स्वर्गा-प्राप्तियादळु॥

क॥ तन्नय दय्व जिन-पति।
तन्न गुरु मारचन्द्र-मलधारि-देवर्।
तन्न पति बेचि-गौण्डनु।
तन्न सुतं चन्द्-गौण्ड अवलिपुरेशन॥
यी-तेरद बन्धु-बळगद।
ख्यातिय प्रभु-मनेगळेल्ल तन्नवरेल्लम्।
··· ताय गुणके पासटि।
भू-तळदोळु ब म्मकङ्गे सरि दोरे उण्टे॥
जिनर नेनेवुत्त वचनदोळ्।
मनसिनोळं पुत्र-पौत्ररं तोरेवुत्तम्।
येनगीग पञ्च-पदगळे।
घनवेनुतले मुडिहि स्वर्गम नेरे पडेदळ्॥

मङ्गल महा श्री श्री॥

[लेख स्पष्ट है। हरिहर-रायका राज्य था।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 117.]

६०२

श्रवणबेलगोला;—कन्नड ।

[वर्ष तारण = शक १३२६ = १४०४ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६०३

हले-सोरब,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३२७=१४०५ ई०]

[हले-सोरबमें, बसके पूर्वमें आञ्जनेय मन्दिरके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिन-शासनम् ।।

स्वस्ति श्री शक-वरुष १३२७ नेय पार्थिव-संवत्सरद प्रथम-आषाढ-ब ३० सु सोरबद महा-प्रभु देव-राजन अर्द्धाङ्गि मेचकं जिन-पदवनेय्ददळ-देन्तेने ॥

कन् ॥ पोडविपर नेलेवीडिदु
भु (ट्ट) उत्तर-पुर चन्द्रगुप्ति अदकाश्रयवी -।
एड-नाड्ड मोदल-कम्पण ।
कडेगं पदिनेण्टु-नाडनाग् वण्णिपरो ॥
घनतर-तेजदेळेगेगेसदिप्पववेम् पदिनेण्टु-कम्पणक् ।
अनितरोळोप्पु वड्डेय श्री-वनिता-सति बयिच-राजनोळ् ।
जनिसिदळिल्लि बाळ्द् ळेड-नाड महा-प्रभु देव-राजनड् -।
गने एने मेचक जिन-पादाब्जमनेय्दिदवेम् कृतार्त्थेयो ॥

कन् ॥ अरुहत्-परमेश्वरनम् ।
स्मरिसि महा-दुरित-दुर्घटङ्गळ कळिदळ् ।
गुरुगळ सम्बोधने उच्चरणेयलेयिदिदळु सु-समदि जिन-पदमं ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । (उक्त मितिको), सोरब महाप्रभुकी अर्द्धाङ्गिनी मेचक जिन पदोंके पास गयी । उसकी प्रशंसामें श्लोक, जिनमें कहा गया है कि कि अठारह-कम्पणमें उद्धरेके वयिचि-राजकी पुत्री थी । १८-कम्पणमें पहिला कम्पण एडेनाड् था, जो कि बलवान् नगर चन्द्रगुत्ति पर आश्रित था ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 51.]

६०४

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३२६=१४०७ ई०]

[हिरे-आवलिमें, सात वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज भुजबल-प्रताप चक्रेश्वर श्री-वीर-हरिहर-रायन कुमार देव-रायर पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिर्प्प-कालदल्लि शक-वर्ष १३२६ सर्व्वधारि-संवत्सरदलु जिड्डुलिगेय नाडिङ्गे मुख्यवाद हिरि-आवलिय ग्रामदल्लि श्रीमन्नाळ्व-महाप्रभु राम-गौण्डन सुपुत्र हारुव-गौण्ड स्वर्गा-प्राप्ति आद ॥

वृ ॥ परम-श्री-जिन-राज देय्व मुनिपं वैराग्य-सम्पत्तिन्द ।

··· द श्री-मुनिभद्र-देव मुनियोळ् कैकोण्डुमिर्प्पसियुम् ।

जरेयुं वल्लमेयेन्दु वीरतनदिन्दाश्रिवज-भानुदिनम् ।

वर-मु ··· स्त्याङ्गनेगक्कु हारुव-गौण्ड-प्रभु धर्मस्थ-कीर्त्ति ··· ॥

अण्ण बोपण्णान तम्मनु ।

पुण्यद कणि धर्म-चित्त सच्चारित्रम् ।

पुण्यदनपवर्गांकम् ।
वण्णिसली-हारुव-गौण्डगेयार् वरेयोळ् ॥
नोडिदडे मदन-सन्निभ ।
रूदियोळतिकांत्ति वेत्त सज्जन पुरुषम् ।
पाडरिदं हारुव-गौण्डम् ।
बेडिदवरिगन्न-होन्नु-वस्त्रवनीवम् ॥
जिनर नुडि जिनर भावने ।
जिन-बिम्बकल्ददन्य-देय्वक्केरगम् ।
जिन-पद-नळिन-भ्रमरम् ।
जिन-धर्म्मोद्धार हरुव-गौण्डनुदारम् ॥
मंगल महा श्री श्री श्री ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । स्वस्ति । जिस समय, (अपने पदों सहित), वीर-हरिहर-रायके पुत्र देव-राय पृथ्वीका राज्य कर रहे थे :—(उक्त मितिको) हिरि-आवलिमें, जो कि जिड्डुलिगे-नाड्का मुख्य ग्राम है, शासक महाप्रभु राम-गौण्डका पुत्र स्वर्गको गया ।

आगेके श्लोक बताते हैं कि उसके पुरोहित मुनिभद्र-देव थे, और उसके ज्येष्ठ भाई गोप्यण, तथा उसकी उदारता और जिनभक्तिकी भी प्रशंसा की गयी है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No 107]

६०५

कुप्पटूरु—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३३० = १४०८ ई०]

[कुप्पटूर में, जिन-बस्ति के उत्तर-पश्चिमकी ओर के पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री-प्रणतामराधिप-हटत्-कोटीर-चूड़ामणि- ।
स्तोमोद्दाम-रुचि-प्रदीप-निकरैर्नीराजिताङ्घ्रि-द्वयः ।
श्री-गोपीश-महा-प्रभोर्व्वर-कुले स्वाम्यादि-चक्रादितः
श्रीमद्-बान्धव-पुरिणो विजयते श्री-शान्तिनाथ-प्रभुः ॥
तच्छान्तीश्वर-चन्द्र-सान्द्र-करुणा-पीयूष-संवर्द्धितात्
सत्-सन्तान-परिष्कृतात् स्वयमभूद् गोपीपते स्वस्तरो ।
नाम्नाप्यर्थवता सदा नरकजित् सद्-धर्म-सन्नाहवद्-
धाम्ना श्रीपतिराश्रितार्त्थि-सुमनश्-श्रेय -फलं सत्-सुतः ॥
तत्पुत्रो जिन-धर्म्म-तामरस-सन्मित्र सु-मित्र सताम्
साहित्यामृत-वाहिनी-सरिदिनः संगीत-विद्या-धन ।
सोऽपि स्वस्य पितामह-प्रतिनिधिर्न्नाम्ना च गोपीपति
स्वानूकाश्रम-योग्य-सद्-गुण-मणि-श्रेणी शुभालंकृति ॥
तेन श्री-मूलसंघ-प्रथित-गणि-गुणोद्भासि-देशी-गणोद्यत्-
सिद्धान्ताचार्यवर्य्य-प्रियतम-वर-शिष्येण तेजस्विना च ।
श्रीमज्जैनेन्द्र-पूजा-जिन-गृह-कृति-सत्-पात्र-दानादि-पुण्य-
श्रेण्या ••• हानि त्रिदिव पथ-सुनिश्रेणि-कल्पान्यकारि ॥
तनोळगिर्द्द मौक्तिकविळा-धरवद्रि-धराङ्ग-रोचिगळ् ।
तनोळगोळ्पु-वेत्तु पोष्पोण्मुव-वोल्-जळ-शीकरङ्गळिन्द् ।
उन्नतमाद बल्-देरेगळित् तेरे-मालेय नील-रोचियिम् ।
तन्नति-गुण्पु घोषदोदर्वि लवणाम्बुधि नाडे रञ्जिकुम् ।
आ जळनिधि-परिवेष्टिसिद्- । आ-जम्बू-द्वीप-मध्यदोळ् मेरुनगम् ।
राजिपुदेण्देसेगमर-स- । मानदे, सुर-धेनु-देव-तरु-पद्मकदिम् ।
आ-मेरु-गिरिय तेङ्कण-दिक्कितोळु धर्म्म-भूमि भरतखण्डमिप्पुंददरोळति-रमणीय-
माद नाना-देशमुण्टा-देशदोळु ॥
जिन-धर्मावासवदत्तमळ-विनयदागारवादत्तु पद्मा- ।
सननिर्म्मी-सद्मवादत्तविशद-यशो-धामवादत्तु विद्या- ।

घन-जन्म-स्थानमादत्तसम-तरळ-गम्भीर-सद्-गेहवादत्तु ।
"एनिसल्किन्तुळ्ळ नाना-महिमेगोळेसुगुं चारु-कर्णाट-देशम् ॥"
अदनाळ्वं शत्रु-भूभृद्-गिरि-कुळिशनिळा-दानि राजाधिराजम् ।
कदन-क्रीडा-त्रिणेत्रं पृथुल-भुज-बलाढ्य-प्रभाव-प्रसिद्धम् ।
चदुरं बाण-प्रयोग-क्रमदे निरुपमोग्राग्रदेकाङ्ग-वीरम् ।
मदनाकारं गभीरं हरिहर-नृपनात्मोद्भवं देव-रायम् ।
आ-नरनाथं सुख-संकथा-विनोददि राज्यं गेय्युत्तमिरे ॥
पलवुं देशक्के सोम्पिं सोगयिपुवुदु कर्णाट-सम्पूर्ण-भू-मण्-
डलवा-कर्णाट-देशक्कतिशयवदरोळ् गुत्ति-नाडोप्पुगुं मत्त् ।
ओलविन्दा-देशवेल्लं सहबदे पदिनेण्टागियु कम्पणङ्गळ् ।
सले कूर्प्पिन्दिप्पुवा-कम्पणदोळतिशयं तानेनल् नाडे तोक्कुम् ॥
बोलविं नागर-खण्डेयं ललितदा-नाडिङ्गे दल् कुप्पटूर् ।
त्तिलकं तानेनिसुत्त भव्य-जन-धर्म्मावासदिं सन्ततम् ।
मले चैत्यालयदिन्दे पू-गोळगळिन्दुद्यानदिं गन्ध-शा- ।
ळि-लसत्-क्षेत्र-निकायदिन्दे रमणीयं-वेत्तु विभ्राजिकुम् ॥
पू-लते पू गिडु-पू-मर । सालिन्दल्लल्लि केरि-केरिगळोळ् चै-
त्यालयद मुन्दे तुम्बिग । ळाळं मदवेरे मेरेववा-परिमळदोळ् ॥
आ-एरमं ताना(ळ्) । गोप-महाप्रभु जिनेश-धर्म्म-विशुद्धम् ।
सोपानं स्वर्गक्केने । पाप-रहित-सच्-चरित्रदि सोगयिसुवम् ।
आ-गोप-गौण्ड-तनयं । सागर-परिवेष्टिसिर्द्द जम्बू-द्वीपक्क् ।
आगळ् वितरण-विभवदे । मोगद सिरियण्णनेसेवनेळेगप्रतिमं ॥
आ-सिरियण्ण-तनूजम् । भासुर-गुण-निलयनुचित-दानि कृपाम्भो- ।
राशि गरुवर्गे गुरु जिन- । दासं गोपण्णनखिल-गुण-निस्सीमम् ॥
आ-गोपण्णन वितरणदेळ्गेयेन्तेन्दोडे ॥
वारिजसद्मे सद्मदोळगिर्द्दवोलिन्-नुतिसिर्द्द पारदम् ।
पारदे बन्द-तोक्कें सुमनो-मणि सन्मणि-हारदल्लि बन्द्- ।

ओरणमागि निन्द-परि वन्दि-जनक्केनिपोन्दु दान-गम्- ।
मीरतेयादुदेम् पोगळ्वे नाम् सिरियण्ण-तनूज-गोपनम् ॥
सत्यद मेलणेच्चरिके धर्म्मद मेलण लोभविन्तु सा- ।
हित्यद मेलणासे जिन-पादद मेलण-निष्ठे नाडे सद्- ।
भृत्यर मेलणादरणे कीर्त्तिय मेलण कूर्म्मे लोक-सं- ।
स्तुद गोपण-प्रभुविगुण्टुळिदर्गिनितुण्टे धात्रियोळ् ॥
करुण-रसं पोनल्-कविदु धर्म्म-महा-लतेगालवाल-सु- ।
स्थिर-जलमागे तल्-लते जिनागम-कल्प-महाजमं मनो- ।
हर-तरदिन्दे पर्व्वि निले गोपन वृक्ष-कृपानुभवमम् ।
निरुपम-धर्म्ममं वर-जिनागमदुन्नतिय पोगळ्वगर् ॥
येनेन्दार् कीर्त्तिसल् वल्लरो विमल-महा-मोक्ष-लक्ष्मी-निवासम् ।
दानाभिन्तोंम्प तोर्प्पा-जिन-पतिय ललत्-कोमलाङ्घ्रिद्वय-सम्यग्
ध्यानं कैगाळ्मुवा-निर्म्मळ-मनदोदविन्देय्दे विश्रान्तिपं सु- ।
ज्ञानाम्भोराशि-गोपण्णन तेरदोळिळा-लोकदोळ् धन्यनावम् ॥
गुरुगळ् सिद्धान्ति-देवर् तनगे वर-जिनेन्द्रागम-ज्ञानमं भा- ।
सुर-वाक्यावानीकदिन्दं तिळिपि वळिक्र मन्त्रोपदेश-प्रभा-वि-
स्तरमं सार्च्चल्कवत्तं गुरु-कृपेय्यने कैकोण्डु सत्-सेव्यनादं ।
सिरियण्णात्मोद्भवं गोपणन तेरदोळिन्नावदं पुण्य-रूपम् ॥

आ-पुण्य-मूर्त्ति-गोपण्णन पुण्याङ्गनेयर गुण-समुदयवेन्तेन्दोडे ॥

स्थिरदिं निर्म्मळ-चित्तदिं सोबगिनिं शान्तत्वदिं रूपिनिम् ।
गुरु-पादाम्बुज-भक्तियिन्दे जिन-मार्गाचारदिं सन्मनो- ।
हरमप्पा-पुरुष-व्रत-स्फुरणेयिं गोपायि-पद्मायिगळ् ।
नितं नाडे विराजिपर्गे दोरेयार् सर्व्वोर्व्वियोळ् कान्तेयर् ॥

सिरियण्ण-सुनु मलेनाड महाप्रभु गोपण्णं पतिव्रतेयराद पुण्याङ्गनेयरोळ्
पलवु कालं नलिदु तनगे संसार-सुखं देयमागे ॥

गगनाग्नि-पुर-हिमांशुगळ ।
ओगेद शक १३३० सर्व्वधारि-संवत्सरदा ।
मिगे वैशाख-[चिं]- शुद्धदे ।
सोगयिसुवा-दशमी-मिसुप-शनिवासरदोळ् ॥
हिरण्य-धान्य-भूमि-गो-दान-मुख्यवाद समस्त-दानङ्गळं द्विजवरगित्तु ॥

मनदोळ् जिह्वाग्रदोळ् सत्-कररुहदे जिन-ध्यानमं मन्त्रमं मन् -।
त्र निरूपं तानेनिप्पा-जप-गणनेगळं साच्चुतं मोक्ष-लक्ष्मा -।
विनयं कैगळमलागळ् त्रिदिवमनतिसन्तोपदिन्देय्दिद सन् -।
चिनरेल्लं कूत्तु सैय्पिं पोगळे सिरियणात्मोद्भवं गोप-गौडम् ॥

अदं कण्डु ॥

परम-श्री-निधि-गोपनङ्गने अरेल्ला-ठानमं सद्-द्विजोत् -।
कर-हस्ताग्रदोळित्तु शुद्ध-मनदि सिद्धान्त-योगीन्द्रना -।
चरणाब्जक्कोळविन्द वन्दिसि महा-श्री-वीतरागाङ्घ्रियम् ।
स्मरिसुत्तं दिवकेय्दिदर् जलविनिं गोपायि-पद्मायिगळ् ॥

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

भगवान शक्तिनाथकी स्तुति । गोपीपति-श्रीपति-पुन गोपीपति, इन राजाओंकी परम्परा । जम्बूद्वीप, मेरु पर्वत और भरतखण्डका निर्देश । उसमें कर्णाट देशका वर्णन; उसके राजा हरिहरके पुत्र, देवरायका उल्लेख । उनके राज्यके समय गोपीपतिने, जो मूलसंघ तथा देशी-गणके आचार्य सिद्धान्ताचार्य्यका शिष्य था, एक जिनमन्दिर बनवाया और उसे दान दिया ।

कर्णाट प्रान्तके गुत्ति-नाड्के १८ कम्पणोंमेंसे अत्यन्त प्रसिद्ध नागरखण्ड था, जिसका तिलक 'कुप्पटूर' था । इसका कारण यह था कि इसमे जैन लोग निवास करते थे, उनके साथ बहुत-से चैत्यालय थे, सुन्दर कमलयुक्त तालाब थे इत्यादि उसकी शोभा थी ।

उसका शासक जैन धर्मावलम्बी गोप-महाप्रभु था। गोप-गौडका पुत्र **सिरि-यण्ण** था। उसका पुत्र **गोपण्ण**। उसकी प्रशंसाके श्लोक। उसकी पत्नियोंके नाम गोपायि और पद्मायि थे। वह सब कुटुम्बको छोड़कर त्यागी हो गया और स्वर्ग गया। उसका अनुसरण उसकी दोनों पत्नियोंने भी किया।]

[EC, VIII, Sarab., tl. No. 261]

६०६

हिरे-आवलि,—कन्नड़-भग्न।

मिति लुप्त (?)

[हिरे-आवलिमें, आठवें पाषाण पर]

(अग्र भाग मिट गया है)

··· ··· ··· ··· ··· ··· । स्वस्ति सम ··· ·· देव-रायरु ··· भाद्रपद ··· ··· डुळिगेय ··· ··· ··· ··· ··· होरगेय ··· ·· ··· ······आढिद-वळिकं पेर-कोण्डाडनु ··· ··· ··· ··· ··· ··· नोडनु जिनपद ··· ··· ··· द्रमनेन्दुम् ॥

मुनि-म ··· ··· ··· ञ्रुपिय करुणदे।
··· ··· ··· ··· ··· गिद्दुं सुख-सङ्कथदिम्,
जिन-पद-कमळव मनदोळग्।
अनुदिन तां नेनदु नाक-सुखमं पडदम् ॥
यिन्दु कळङ्कनेम्बवर मातुगळ पुसि-माळ्पेनेन्दु आ -।
नन्ददे घात्रियल्लुदसिदं क्ळे कुन्ददे कोट्टु नष्टमम्।
पोन्ददे कण्डुसिर्प्पवरे त्रळिद सर्व्व-जनाब्धि-चन्द्रमम्।
चन्द्रमनोप्पिदं मुददि चोवयनात्मज भू तळाग्रदोळ् ॥

मंगळ महा श्री श्री श्री

[इस लेखमें चीवयके पुत्र चन्द्रमके लिये एक वैसी ही स्मारकका उल्लेख है जैसा कि नं० ६०४ के लेख में है।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 108]

६०७

श्रवणवेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड।

शक १३३१=१४०९ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६०८

चैतनाथ (ग्वालियर); प्राकृत-भग्न।

[सं० १४६७=१४१० ई०]

ॐ सिद्धिः ; संवत् १४६७ वर्षे मार्गसुदि ५ सो, दिनं ॥ महाराजाधिराज श्री वीलक्ष देवः। श्रीत्तियं काकोमनपुकर वाणैः। प्रधान—जनार्दन । भुवदानु रा —ज—। सूत्र यारदान वाग्नुः ॥ मादा पेति—॥—

अनुवाद—सिद्धि! संवत् १४६७ के माघ महीने के सुदी पक्ष के पाँचवे दिन। महाराजाधिराज बिलक्ष देव (शेष पढ़ने में नहीं आता)।

कर्नेल सी. उक्त नामको 'विरम' पढ़ते हैं।

JASB, XXXI, P. 404, t.; p 422, tr.]

६०६

धर्मपुर;—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न।

[काल लुप्त, पर लगभग १४१० ई०]

[धर्मपुर (धर्मपुर परगने) में पुलिस स्टेशन के सामने के एक पाषाण पर]

ॐ नमः शान्तिनाथाय ॥

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महाराजाधिराज राज-परमेश्वर पूर्व दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधिपति हिन्दू-राय-सुरत्राण भाषेगे-तप्पुव-रायर गण्ड श्रीमत्-प्रताप-चक्रवर्ति श्री-वीर-देव-राय-महारायरु विजयानगरद नेलेवीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे

कन्द ॥ आ-देव-राय सकळ-ध-। रादेत्तं राज्य-रक्षणकोलवि ··· ·· ···
आदरिसले निड्डुगल्ल-म-। हा-दुर्गमनाळ्दनोसेदु गोप-चमूपम् ॥

वृत्त ॥ आतन ··· श-जरने वेसगोण्ड ··· कौशिकान्वयोद् -।
भूतनुदग्र-मन्त्रि-पदवी-प्रथितं विभु ··· ··· ··· ।
·· ··· ··· ··· तमनं जिनेन्द्र-समयाम्बुधि-वर्धन-पूर्ण-चन्द्रने-मातो
दिगन्त ··· ··· ··· ··· ··· ॥

कं ॥ ··· ··· मन्त्रि-महा ।··· ··· · ··· · ··· ··· ।
··· ··· ··· ··· ···। ··· ··· ··· ··· ··· ···· ॥

······गोपणन यशस्सुर-भूजद बीज-राजियन्ददिन् (बाकीका मिट गया है)।

[ॐ। शान्तिनाथ के लिये नमस्कार। जिनशासनकी प्रशंसा।

स्वस्ति। जिस समय महाराजाधिराज राज-परमेश्वर, पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधिपति, हिन्दू-राय-सुरत्राण, वीर-देव-राय-महाराय विजयनगरके अपने निवास-

स्थानमें थेः—जब वह देव-राय राज्य की रक्षा करनेमें प्रसन्न था—प्रधान मन्त्री के पदको सुशोभित करते हुए, जिन-समय रूपी समुद्र के बढाने के लिये पूर्ण चन्द्र जैसा गोप-चमूप महान् निडुगळ् किले पर शासन कर रहा था।]

[EC, XI, Hiriyur tl., No 28]

६१०

भारङ्गी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १३३७ = १४१५ ई०]

[भारङ्गीमें, कल्लेश्वर-बस्तिके पाषाणपर]

... ... खण्डितानङ्ग-राजस्
स्तुत-हित-जिन-राजः प्राप्त-सत्-पाद-पूज ।
धृत-सगुण-समाजो वादिन वादि ... ...
... ... राजोऽभून्नताशेष-राजः ॥
सरसि च सित-सरसिजमिव
गगने विधुरिव हरिरिव हर-हसनम् ।
इव हलधर-रुचिरिव विलस ...
... ... मुनि-पति-वर-विशद-यशः ॥
तच्छिष्यो जयकीर्त्ति-नाम-मुनिपस्तत्पाद-सेवा-रतः ।
सिद्धान्त-व्रतीपो नताखिल-नृपस्सिद्धान्त-पारङ्गत ।
तच्छिष्योत्तम-चुळ्ळ गौड-तनुजः श्री-गोपिनाथोऽभवत्
तच्छिष्यः स्वयमप्यभूत् स्व-जननी श्री-माळि-गावुण्डयपी ॥
क्रमदिन्दी येल्लर गुणस्तुति येन्तेन्दोडे ॥
शेषोऽप्यस्तु सहस्र-रम्य-रसनस्स्तोत्रे समर्थो हि यो
भूयो या धिषणा [.. ...] श्री-शारदाप्यस्तु सा ।
सोऽप्यस्त्वत्र गुरुर्गुरुस्सुर-ततेर्य्यश्शुद्ध-बुध्या गुरुर्

व्वक्तुं श्री-जयकीर्त्ति-वृत्तमशकन् नान्य कथं मादृश ॥
यम-नियम-समेतो ध्यान-दग्घाघ-जातो
जप-शत-विधि-तुष्टोऽभूदनुष्ठाननिष्ठ·
अनुगत-गुण-जालो वर्द्धितात्मीय-शीलो
भुवि किल जयकीर्त्तिश्चारु-मूर्त्तिस्सु-कीर्त्ति ॥
दीक्षा-स्वीकारकालागत-जन-निवहे जात-तोषात् प्रभूतात्
कीर्त्तिं कुर्वंत्यनूनं जय-जय-वचसा यस्य नुन्नाखिलार्त्तिम् ।
स नामास्यैव नामाभवदिति भुवने ख्यातिरासीदितीदम्
जाने वक्तुं तदीयानपगत-गणनान्नैव जाने गुणौघान् ।
तच्छिष्यः श्रुत-वार्द्धि-वर्द्धन-विधुस्सिद्धान्त-पारङ्गतः
सिद्धान्ताभिध-शुद्ध-नाम-सहितोऽभूच्छुद्ध-विद्योद्यम· ।
बौद्धाद्युद्धत-वादि-वद्ध-नमन सिद्धस्तुतौ तत्परस्
सिद्धेशश्च विशुद्ध-बुद्धि-सहितो ह्यद्योऽनवद्यो भुवि ॥
यद्-वाणीमय-दर्प्पणे शुचि-गुणे धी-भस्म-सन्दीपन-
प्रक्षीणावरणादि-कल्मष-गणे सत्यं जगद्दर्प्पणे ।
भव्या-वीक्ष्य निज-स्वरूपममलं रत्नत्रयाकल्पकम्
स्वीकृत्यामृतकामिनीं निज-वशे कुर्व्वन्ति शीघ्रं किल ॥
सिद्धान्तदेव-कर-पिञ्छमितीव भाति ॥
किं कर्णाभरणैस्सुवर्ण्ण-रचितैः किं मौक्तिकैर्न्निर्म्मितै
किं नानामणि-निर्म्मितैरपि वरैर्म्मत्वेति मुक्त्वा पुन ।
सिद्धान्त-व्रतिपस्य मानसहितं वाणीं सुवर्णोज्ज्वलाम्
कर्ण्णाकल्प इतीव शाश्वतिमा कुर्व्वन्ति सर्व्वे जनाः ॥
सांख्या किंकरतामिता किल पुनर्य्यौगा नियोगं किल
चार्वाकाश्च वराकता किल गता **बौद्धाश्च** दुर्बुद्धिताम् ।
भाट्टो भ्रष्ट-मतिः किलाभवदिमं **प्राभाकरं** वेत्ति क
तस्मात् को मदमातनोति पुरतस्सिद्धान्त-वादीशिनः ॥

स्याद्वाद-वाराकर-शीतभानो
सिद्धान्त-देवस्य मनोज्ञ-शिष्य ।
अभूदसौ बुळ्ळप-गौड़-नामा
चारित्र-वाराकर-शीतरोचि ॥
जिनेन्द्र-गन्धोदक-पूत-गात्रो
जिनार्च्चना-पुष्प-निवास-मूर्द्धा ।
जिनार्च्चना-चन्दन-कान्त-भालो
जिनेन्द्र-मन्त्रालय-मानसाब्ज ॥
नित्यं विशुध्द्या कृत-धर्म-चक्रो
नित्य ललाटे कृत-धर्म-चक्र ।
नित्यं मुदा पालित-देहि-चक्रो
नित्यं यश -पूरित-भूमि-चक्र ॥
दिनेदिने सम्भृत-धम-बुद्धिर्
दिनेदिने वर्द्धित-दान-वृद्धि ।
दिनेदिने वृत्त दयाभिवृद्धिर्
दिनेदिनेवृत्त-हिरण्य-वृद्धि ॥
अमी गुणास्सन्त्यखिळे जनेऽपि
सम्यक्त्व-रत्नकरता तु नैव ।
सा बुळ्ळ गौडे खलु सत्यमस्ति
को वा ततो वर्णयति प्रभु तम् ॥
तत्पुत्रस्तत-सद्गुण-स्तुत-जिनस्सिद्धान्त-नाम्नो मुनेस्
सिद्धान्तोद्भट-वार्द्धि-वर्द्धन-विधोश्शिष्य सुपुण्यद्रुय· ।
सत्याब्जाकर-भास्कर प्रियकरश्चारित्र-वाराकर ।
श्री-पूर्णो भुवि गोपण-प्रभुरभूत् सम्यक्त्व-रत्नाकर· ॥
सिद्धान्तदेव-गुरु पाद-पयोज-भक्त । --
श्री-बुळ्ळ-गौड़-हृदयाम्बुज-भानु-बिम्ब ।

सन्मल्लि-गौडि-कर-पङ्कज-बाल-भृङ्ग ।
श्री-गोपणो निखिळ-बन्धु-मणीष्ट-सिन्धु ॥
कीर्त्तिर्द्दिक्कामिनीना शिरसि वितनुते मल्लिका-पुष्प-शोभाम्
तेजस्सीमन्तिनीनां विलसति विमले कान्त-सीमन्त-भूमौ ।
सिन्दूर-श्रीरिवाशा-परवश-विदुषा प्रीति-कृद् दान-सम्पद्
वाणी पीयूष-साम्या समल-गुण-निधेर्ग्गोपिनाथ-प्रभो स्यात् ॥

श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्य्यं महा-वाद-वादीश्वर-राय वादि-पितामह सकल-विद्वज्जन चक्रवर्त्तिगळप्प श्रीमदभयचन्द्र-सिद्धान्त-देवर प्रियाग्र-शिष्यनह बुळ्ळ गौडन मग गोप-गौडनाव-पोरकधिपतियेन्दोदे ॥

द्विपङ्गळोळगे जम्बू -।
द्वीपं देशाङ्गवोळगे कन्नड-देशम् ।
रूप-विभवदलि सत्या -।
लापदि सोगयिसुतमिप्पॅवतिमुदविन्दम् ॥

अन्ता-जम्बू-द्विपदोळगण कर्णाट-विषयदोळगे ॥

फल-भरवाद शालि तळ्देरिढ चूत-कुजालि तेङ्गु कण् -।
गोळिसुव कौङ्गु पूत लते पू-गिडु पू-मरदोळि पल्लवद् -।
गळ पोळगोन्दि ता निमिर्व शाक-कुजं तिळि-नीर्ग्गोळङ्गळिम् ॥
सुललितवागि रञ्जिपुदु नागरखण्डमदेत्त नोळ्पडम् ।
आ-नाडिङ्गे शिरो-विभूषणवेनल् भारङ्गिचेल्वागि सु -।
ज्ञान-व्यापकरप्प भव्य-जनदिं विद्वज्जनानीकदिम् ।
नाना-नीति-विदग्धरिं धनिकरिं तीविर्द्दु लक्ष्मी-महा -।
स्थानं तन्नोळगिप्पुदेम्व बगे-दोरुत्तिप्पुदेन्नागळुम् ॥

आ-पुरद मध्य-प्रदेशदोळु ॥

ओळकोण्डभ्रमनेय्दे चुम्बिपुदय-श्री-शलवा-भानु-मण् -।

आ-तारापति-भानु-भूधर-धरा ताराम्बरं तिष्ठ (ष्ठ) तु
श्री-गोपीश-परोक्ष-शासनमिदं सत्कर्म्मणा स्थापितम् ॥

[वादिराज मुनिकी प्रशंसा । उनके शिष्य जयकीर्त्ति-मुनिप थे; उनके शिष्य सिद्धान्त-व्रतिप थे । उनके शिष्य बुल्ल-गौड, उनके पुत्र गोपीनाथ, और उसकी माँ मल्लि-गावुण्डि । इन सबकी क्रमसे प्रशंसा । उनके शिष्य (प्रशंसा सहित) सिद्धान्त-देव-मुनिप थे, जिनका मस्तक बौद्धोंको चुप करनेके लिये हमेशा सन्नद्ध रहता था । सांख्य, योग, चार्व्वाक, बौद्ध, भाट्ट तथा प्राभाकर सभीको उन्होंने शास्त्रार्थमें जीता था । बुल्लप-गौड, तथा उनके पुत्र गोपण-प्रभु जो अपनी माँ मल्लि-गौडिके हाथमें मक्खीकी तरह था, की प्रशंसा ।

राय-राजगुरु-मण्डलाचार्य्य, महा-वाद-वादीश्वर, रायवादि-पितामह अभय-चन्द्र-सिद्धान्त-देवका पुराना (ज्येष्ठ) शिष्य बुल्ल-गौड था, जिसका पुत्र गोप-गौड नागरखण्डका शासक था । नागरखण्ड कर्णाटक देशमें था । नागरखण्डका खास भूषण मारङ्कि था, जिसमें जैन लोग, विद्वान्, न्यायी एवं श्रीमन्त लोग भरे हुए थे । इसमें एक उत्तम चैत्यालय था, जिसमें पार्श्व जिनेश विराजमान थे, उस नगर (मारङ्कि) का शासक गोप-गौडके पुत्र बुल्लप्पका पुत्र गोपण था, जिसके दो गुरु थे, पण्डिताचार्य्य और श्रुत मुनिप; इनमेंसे एक उनको अनीतिके मार्गसे हटाता था तो दूसरा अच्छे मार्गपर लगाता था । इस संसारकी अच्छी-अच्छी वस्तुओंका उपभोग कर, परलोकके फलोंकी इच्छासे, (उक्त मितिको), गोपणने समाधिकी रस्मसे शरीर-त्याग किया, और 'मुक्ति' प्राप्त की । भद्रमस्तु । यह समय उसी शक कालका था, जिसमें यह पाषाण लगाया गया था ।

[EC, VII, Sorab tl., No. 329.]

६११

हिरे-आवलि,—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १३२९ = १४०७ ई०]

[हिरे-आवलिमें, ११ वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

व॥ श्रीमद्-राय-राजधानि-विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-वीर-हरिहर-रायन कुमार प्रताप देव-रायनु राज्यं गेय्युत्तमिर्प्प कालदल्लि शक-वर्ष १३२९ नेय विलम्बि-संवत्सरद चैत्र-बहुळ १० गुरुवारदलु श्रीमत्-सेन गणाग्रगण्यरु मुनि-भद्र-स्वामिगळ प्रिय-गुड्ड हिरि-अवलिय राम-गौण्डन सत्-पुत्र गोप-गौण्डनु समाधि-विधियिं मुडिपि स्वर्ग-प्राप्ति आद॥

वृ॥ वीर-जिनेन्द्र-पाद-पङ्कज-भृङ्गनुदार-चित्तनुद्-।
धारकनन्त-चीर्ण-जिन-वासव निर्म्मित-दान-पारगम्।
गोरद-दासि-वेसि पर-नारि-सहोदर मार- सन्निभम्।
अपारद-गोप-गौण्ड-प्रभुवं पुर बण्णिसुतिक्कुंमागळुम्॥

क॥ वसदि-कलु-वेसननेसगिये।
वसुधेयोळु पुण्य-कीर्त्तियं अवलियोळम्।
दस-दिक्किनलि गोपण्णम्।
पसरिसिद राम-गौण्डनदेम् पवित्रनु॥

वृ॥ परमाराध्यं जिनेन्द्रं गुरु ऋषि-निवहं राम-गौण्डात्मजातम्।
निरुतं रामाम्बिका जननि अनुजनुं हा राम-गवुण्डं गुणज्ञम्।
पिरि-अण्णं चन्द्रमाक्क सरसिज-मुखि गोवकं पत्नियेम्बळ्।
पिरिदु स्वर्गापवर्ग-प्रकरदोळेसेव गोप-गौण्डं कृतार्त्थम्॥

क ॥ पोडवि-पति देव-रायनु ।
तडेयदे राज्यवनु आळ्व-कालदोळन्दुम् ।
बिडदे जिन-चरण-सेवेय ।
कडु-गुणि गोपण्ण पडेदनुत्तम-गतियम् ॥
गुत्तिय-राज्यद बोळगम् ।
उत्तमवेनिसिहुदु हिरिय-बिड्डुळिगेयोळम् ।
अत्युत्तम-हिरि-अवलिय ।
पेत्तनु प्रभु-राम गौण्ड-सुत गोपण्णम् ॥
गुरुगळु श्री-मुनिभद्ररु ।
धरिसिदमवरिन्द गोपणाङ्कनु व्रतमम् ।
नररोळगे पुण्यवन्तनु ।
पिरिदुं स्वर्गापवर्गम नेरे पडदम् ॥
अळवड्-चैत्र बहुळदि ।
बेळगप्पा-आवदलि गुरुवारदोळम् ।
विलसित-विलम्बि-वत्सरद- ।
ओळगादुदु दुहूरण-योग गोपि-देवर्गम् ॥
दासी-वेसिय-रूपम् ।
व···घोडं पिरिदेन्दु तो ·· अनि व्रतदिम् ।
मासिद-कीर्त्तिर्गाळन्दम् ।
लेसेनिसिये गोप-गौण्ड स्वर्गव पोक्कम् ॥
मंगल महा श्री

[इस लेखमें वंशावलि वर्णित है । देव-रायका राज्य-काल था ।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 119]

६१२

हादिकल्लु;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

[वर्ष हेमलम्बी = १११७ ई० (लू राइस) ।]

[हादिकल्लुमें, रते हक्लके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

... ... श्रीमत् हेव(म)ळम्बि-संवत्सरद आषाढ़-सु १ बृह-स्पतिवारदन्दु श्री-गुणसेन-सैद्धान्ति-देवर गुड्ड ... ... हादिगलगुडि-ययप्प-गौडन हेडति काळि-गावुण्डि समाधि-विधियिं मुडिपि सुर-लोक-प्राप्तेयादळु मङ्गल महा

[जिन-शासनकी प्रशंसा । (उक्त वर्षमें), गुणसेन-सिद्धान्ति-देवके गृहस्थ शिष्य ... अयप्प-गौडकी पत्नी काळ-गौण्डि समाधि-विधिके द्वारा मृत्युको प्राप्त हुई और स्वर्गको गयी ।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl, No 121.]

६१३

हिरे-आवलि,— कन्नड़-भग्न ।

[शक १३४३ = १४२१ ई०]

[हिरेआवलिमें, २०वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमद्-राजधानि-विजयानगर-मुख्यवाद समस्त ... ... श्री-वीर-प्रताप-देव-राय-वोडेयरु राज्यं गेयुत्तमिर्प्प कालदल्लि शक-वरुष १३४३ प्लव-समाशिवज ब-६ सु हिरियावलिय गोप-गौडन मगनु भैरव-गौडनु पञ्च-नमस्कारदिं स्वर्गास्तनादम् ॥

परम-जिन-पार्श्वनाथन
चरण ... ... ।
... ... चरण-कमल-षट्पम् ।
... ... भयि(भै)रव ... ... भव्य ॥
जिन-रत्न ... ... ।
... ... जिनदासन उदित-वीर-व्रतदिम ।
... ... प्टनेन्दा- ।
विनयाम्बुधि भयि(भै)रवं ... ... पोदम ॥
पित गोपीनाथनेनिपनु ।
मत ... ... मातेयु कञ्चि-गोडि-मातेयु तनगम् ।
... ... माते सुत ... . ।
... ... भैरप्प .. . मुडिपि स्वर्गांव पोद्धम् ॥
गुरु-पद्म-पदव नेनेऊत ।
सु-रुचिर-सञ्चित्तदिग्दलात्मन ... ... ।
पिरिदप्प गतिय पडदम् ।
. . .. .. सणि भैरप्प ... ... ॥

[इस लेखमें भी समाधिके स्मारकका उल्लेख है। देव-रायके राज्यका काल है।]

[EC, VIII Sorab tl, No 120]

६१४

हिरे आवलि;—कन्नड-भग्न ।

[शक १३४३ = १४२१ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १८ वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीमतु राजधानी-**विजयनगर**-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-वीर-प्रताप-**देव-राय** राज्यं गेयिकत्तमिर्प्प कालदलि **सकवरुष** १३४३ नेय साव्वरि-सं [व] त्सर-फाल्गुण-सु. ४ सो श्रीमत्-सेन-गणाग्रगण्यरु **मुनिभद्र-स्वामिगळ्गे** प्रिय-गुड्ड **हिरिय-आवलिय बेच-गोडन** सुपुत्र **मडुक गोडनु** समाधि-विधियिं मुडिपि स्वर्गासियादम् मङ्गळ महाश्री श्री थी-[क] ल्ल माडिदातमी-ऊर पूर्व्विक **मदोजन** मग **बनदोजनु** ॥

[लेखमें स्मारकका उल्लेख है। देव-रायका राज्यकाल है।]

[Ec, VIII, Sorab tl, No 118]

६१५

पहला लेख

मलेयूर (रु);—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३४४=१४२२ ई०]

[**मलेयूरु (उच्चमवल्लि प्रदेश) में ग्राम-प्रवेशके एक पाषाणपर**]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री **शक-वरुष** १३४४ नेय शुभकृत्-संवत्सरद श्रावण-शुद्ध १५ ल्लु श्रीमद्राजाधिराज-राज-परमेश्वर श्री-वीरदेव-राय-महारायर कुमार श्री-वीर-हरिहर-रायरु सोम-ग्रहणदल्लु **कनकगिरिय** श्री-**विजय-देव**र श्री-कार्यक्के सल्लुव अङ्ग-रङ्ग-भोग मोदलाद देवता-विनियोगक्के **मलेयूर** चतुस्सीमेयोलगाद तोट तुडिके गद्दे बेद्दलु सुवर्णादाय होन्नु होर्म्बार सुङ्क तळवडिके ग्राम्मद मणय वोसगे मदुवे चौर डलपे सरटि निधि निक्षेप जल पाषाण अक्षीणि आगामि मुन्तागि ऐनुळ्ळन्था स्वाम्य सर्व्वादाय-सहित आ-मालेयूरु-ग्रामवन्नु धारा पूर्व्वकवाद शासन-दत्तवागि वासुदेवर-केरे-गद्दे स्थान-मान्यगळु होरतागि बिट्ट दत्ति (हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[राजाधिराज राजपरमेश्वर वीर देवराय-महारायके पुत्र वीर हरिहरराय ने कनकगिरिके देव विजयकी उपासनाके लिये मलेयूर ग्रामकी सारी भूमिका दान किया ।]

दूसरा लेख

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य वर्द्धतां जैन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वर्ष १३४४ सन्द वर्तमान-शुभकृतु-सवत्सरद श्रावण-शु १५ आ लु कनकगिरिय श्री-विजय-देवरिगे श्रीमन्महाराजाधिराज राजपरमेश्वर श्री वीरप्रताप देवराय-महारायर कुमार हरिहररायर् ओडेयरु आ-कनकगिरिय श्री-विजयनाथ-देवर अमृत-पडि अङ्ग-रङ्ग-भोग-वैभवक्के कोट्ट धर्म-शासन तमगे कोट्टिह तेरकणाम्बेय राज्यक्के सलुव कोलगाणद मागेय मलेयूर ग्राम १ र चतुस्सीमेयोळगल्ल गद्दे बेद्दलु तोट तुडिके आरु-वन्नु मेलु-ओन्नु अड-देरे कुम्बार-देरे कल्ल-मने कोडेगे देव-दान विनुगु बेस-वक्कलु होन्नु होम्बळि होङ्के दारा सुङ्क दण्णायकर स्वाम्य मुन्तागि प्राकु-मर्य्यादे ऐनुळ्ळ सर्व्व-स्वाम्यवनु अनुभविसिकोम्ब मलेयूर ग्राम १ र कालुवन्नि हुणुसूरपुरद ग्राम १ उभयं ग्राम २ क्क हिरिय मनेय पट्टे प्रमाण ग २३० (आगेकी १३ पक्तियोंमें दानका विस्तृत विवरण है) अक्षरदलु नूरिपत्त-ऐळु होनिन मलेयूर ग्राम १ न् सोम-ग्रहण-पुण्य-काल शुभकृतु-संवत्सरद कार्त्तिक-शु १ आरम्यवागि त्रियम्बक देवर सन्निधियल्लि स-हिरण्योदक-दान-(दान)-धारा-पूर्व्वकवागि धारेयनेरेदु आ ग्रामद चतुस्सीमेयल्लि मुक्कोडेय कल्लनु नेट्टिसि कोट्टे (IIb) वागि आ-ग्रामद चतुस्सीमेयोळगुळ्ळ अक्षिणी-आगामिनिधि-निक्षेप-जल-पाषाण-सिद्ध-साध्य अष्टभोग-तेजम्-स्वाम्य सर्व्व-पृथ्वी समस्तबलिसहित देवर अमृत-पडिगाङ्ग-रङ्ग-भोग-वैभवक्के धारयन्नु एरदु कोट्टवागि आ-चन्द्रार्क्क-स्थायियागि चित्तायसुवुदेन्दु कोट्ट धर्म्मशासन-बिट्ट दत्ति (पूर्वकी तरह अन्तिम श्लोक) कोलगणद वासुदेवरिगे मले (IIIa) यूरलि कोट्टिह वूरु-मुण्डाग केरेय केळगे

चतुरसीमेयल्लि प्राकु मर्य्यादि नीर वरिदु बेळव इप्टु गद्दे होरंते स्थान-मान्य पूर्व्व मर्य्यादि वर् ··· ओप्प श्री विरूपाक्ष (कन्नड़ अक्षरोंमें)

[इस लेखका विषय शिलालेख नं० १४४ (ए० क०, जिल्द ४ थी, चामराजनगर तालुका) से भिन्न नहीं है। अत १४४ और १५६ नं० के लेखोंका विषय एक ही है। इस लेखमें भी हरिराय ओडेयरने कनकगिरिके विजयनाथ-देवकी पूजा, सजावट और रथयात्राके लिये हुणसूरपुर ग्राम सहित मलेयूर ग्रामका दान किया। यह दान त्रियम्बक-देवके समक्ष किया गया था। मालेयूर गाँव तेरकणाम्बे राज्यके कोलगणका था।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No, 144 & 159.]

६१६

श्रवणबेलगोला—संस्कृत।

[वर्ष शुभकृत्=शक १२४४ (कीलहौर्न)=१३२२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६१७

देवगढ़,—संस्कृत।

[सं० १४८१ तथा शक १३४६=१४२४ई०]

[ललितपुर से लाये गये एक शिलालेख की नकल]

१—वृषभ जयत संश्रीमद्वर्द्धमानमहोदये विपुलं विलसत्कान्तौ कान्तारव्येऽमृत-सागरे। सुगत सुमतिमन्नैणाङ्काकलङ्क सकौमुद वितनुते सता शान्त्यै शान्ति-श्रियं सुमतिं जयं ॥१॥+ + + + भुंव श्रोते नश्वरानुदयाय ते। तज्जिनदुष्वज्ज्न-लज्ज्योतिरार्हतं श्रेयसे श्रये ॥२॥ पायादपायात् सदय सदा न सदा शिवो यद्विशदो हितासौ चञ्चञ्चिदा—१

२—नन्दविशुद्धचन्द्रद्युतौ चकोर इयपि (?) शुद्धहंसाः ॥३॥ श्रीशंकरं श्रीरमणा-भिरामं + + +सल्लक्ष्मणमर्हणार्हं । जिनेन्द्रनन्दं घनदं सुमित्रमजातशत्रुं विभजे चकोरं ॥४॥ स्ववाममायामध्मप्यमायं वामं लसल्लक्ष्मणमर्हणार्हं । सीतेश-सुग्रीवमहार्हणार्हं वन्दे–२

३— सहर्षं सहसैकशीर्षं ॥५॥ सशल्यदुःशासननाशहेतुमजातशत्रुं सहदेववर्य्यं । वन्दे विशालार्जुन सद्य + + नन्दत्स्ता वर्णकुलं मृगाङ्कं ॥६॥ वामयेषा-ष्टकं (?) स्वेन कर्म्मौघाच्चीद् यस्त्वर (?) । साधोर्द्धं दुरेख तम्हंलीये विलयश्रिये ॥७॥ विगर्ज्जद्यागरबाङ्क–३

४—मजित सक्षकं नमः । दुर्घटं सुघटद्वर्द्धमानजैनमहोत्सव ॥८॥ वदनपरगिरीशो ···विन्निदशन······ वेत्रवरयाकलेयंत् । प्रभवतु स मृगाङ्कोप्यस्तदोषोऽकलङ्कः । कुवलयसुखहेतुर्नः श्रिये शान्तिसोमः ॥९॥ योदीदहच्च तिलकेक्षण वह्निनेह काम–४

५—अमीमरदरं जनक तदीयं । शत्तयान्वितास्त्रिनयनोप्यपवामवामः शान्तीश्वर-स्त्रिजगता स शिवाय······पदपद्मयुग्म ··· छद्म उपास्महे तदह मुदा यदमर्त्य-मर्त्यभुजङ्गमनम्रमौलिकुलारमचित् । विदलत्तमालसमुल्लसत्सुनखेन्दुमण्डसमण्ड-लीविगलाशुभिमंवश्री–५

६—मुष शशिनोऽर्हतो भवरंभवे ॥११ क्षीरकर्पूरनीहार-हारहीरहरावरा कुन्देन्दु-कुमु·· क्षीरसमुद्रसान्द्र विलसत्कल्लोलमालोज्ज्वला श्रीसर्वज्ञ सुधांशुमण्डल-मिलत्स्वर्लोकवल्लोलिनीं । विद्रावन् निजभक्तचेतसि समुन्मीलत्तमोपद्रवा वन्दे–

७—जाड्यमिदे मुदे च भगवद्वाणीश्च सत्सम्पदे ॥१ श्रीमूल-लक्ष्म्या नृपनन्दि-संघे गच्छेपतुच्छे मदसारदाख्ये । क्षणे बलात्कारगणे गरिष्ठे श्रीकुं······ जिनेन्द्रचन्द्रागमदुर्गमार्गो यस्योडुप इत्र सता हि वाच । अद्याप्युदञ्चद्यशा-सामबसन्धाम्न स धर्मचन्द्रः ॥२ यस्याशागजकर्णकैरववना–७

८—नन्दैकसत्कौमुदीकीर्तिर्नागनरामरेन्द्रभुवने जेगीयतेऽहर्निशं । धर्मेन्दुः

सकल कलङ्कविकल· स स्याच्छुधाशुभिये श्रीमूल ·· ·· विलसन्न··· ···
दये ॥३ धर्म्मचन्द्रमुनीन्द्रस्य पट्टोत्कृष्टोदयाचले। यस्योदयोऽभवत्तस्य
तमस्तोमापनोदिनः ॥४ रत्नकोर्त्तेर्लसन्मूर्तेस्तिग्माशो क–८

९—मलोदये। सतामप्यपपङ्काना तपसा स्युर्यशोऽशवः ॥५ अद्याप्युन्नैर्वजृम्भे चरणचयन्वितसम्मदम्भाद् यदीया ज्योत्स्नेवानुष्णरश्मे· स्वरदमृतमयी ·· ···। सस्या ·· ·· ·· ··· समिना पुण्यपुण्योपदेष्टा सृष्टा सत्प्रतिष्ठासु च जिनशशिनो रत्नकीर्त्ति प्रशस्यं ॥२ रत्नकीर्त्तिरदाम्भोजकमलालङ्कृतासने। ये नोचद्धाग्वि-९

१०—लासेन भारती भूषणायितं ॥१ गर्व्वद्दुर्वादिवृन्दाम्बुदद्दलनविधौ योऽभवत्ती-व्रवातस्त्वेकान्तध्वान्तभानु कुवलयसुखकृद् यस्त्वनैकान्त ··· ··· द्रान्ताङ्को-कलङ्क ·· ··· सकलकल शङ्करो++वृत्त स्याद्द्वद्धयै मूलसङ्घामल-कमलनिधौ श्रीप्रभाचन्द्रदेवः ॥२ पदे ततो नमदशेषमहीशभाललग्ना-नि यत्क्रमरजस्तिलकान्यभूवन् -१०

११—कल्याणकारिकमलाकुचकेलिदानि पापापहानि समभूदिह पद्मनन्दी ॥१ क सरीसर्त्ति साम्यत्वं सन्निधावब्जनन्दिन। न ··· · न सम्ममे यस्य स ··· ॥ २ केके पुराणसारीण्यं शिष्यानाकर्ण्य कर्णयो। श्रीपद्मनन्दिन प्रापुं सस्मिता धर्म्मदेशनां ॥ ३ प्रेम्णा कज्जलित विशच्छलमितं चेतोभुवा वर्त्ति—११

१२—तं रागाद्यै स्मयदूषितं परमतैर्भ्रस्यत्तमस्तोमितं। मावै प्रस्फुटितं नयैर्नि-र्मितं धर्म्मं समुद्योतितं सत्पात्राम्बुजनन्दिदीपतपसि प्राग्जैनधर्म्मालये ॥४ सै ··· ·· क+चलति सद्वंसत्यनुष्णा द्युति क्षीराम्भोव्यतिचन्द्रमत्यहरह स्पर्द्धन्ति हन्तो अति। श्रीमानभुवनन्दिनस्त्रिभुवने जेगीयमाना न यै–१२

१३—र्वाद्यत्सद्यशसा न केन सुनटी कीर्त्तिर्नरीनर्त्यहो ॥५ ज्ञानार्णव· समयसार-गमीरशब्दसल्लक्षण· प्रणवलीनलय· प्रमाण·। वि ··· ·· भुवनोपकृत्यै ··

·· ॥ ६ इन्द्रोपेन्द्रफणीन्द्रगीष्पतिमतिं यः कोऽपि धत्ते पुमान् मन्ये पद्मन- नन्दिनो गणगुणान् वक्तु न सोपीशते । संसारार्णवतीर्ण–१३

१४—यामलधिया सन्नौकया सन्मुनेर्निष्कल्लोलचिदम्बुधावचलया पद्मायितं लीलया ॥३ श्रीपद्मनन्दिसुगुरो पदपद्मप ··· ··· ··· धर्मोपलक्षितदिशा ··· मारमनोभिरम्य. प्रोद्भेद्य कौमुदमरं शुभचन्द्रदेवः ॥ १ अथ सवत्सरेस्मिन् नृपविक्रमादित्यगताब्द १४८१ शा–१४

१५—के श्रीशालिवाहानाम् १३४६ वैशाखमासशुक्लपक्षीय पूर्णमास्या गुरु- वासरे । स्वातिनः(न)क्षत्रे । सिंहलग्नोदये ॥ अतिविक्र + + र्ष्येन्दे चन्द्रा- द्रयब्धीन्दु ··· ··· वैशाखे पूर्णराकाया ··· ··· मृगयोदये ॥ · साकृष्ट- कृपाणपाणिविलसत्तीव्रप्रतापानलज्वालाजालसमाकुलीकृतगजाधीशा–१५

१६—धरीशैणपे । श्रीमान् मालवपालकेशकनृपे गोरीकुलोद्योतके नि क्रान्ते विजयाय मण्डपपुराच्छ्रीसाहि आलम्भके ॥१··· ··· सुमण्डलमण्ड- मानाखण्डलबालकुलमण्डमपी + + न्ये । सनिर्म्ममे शिवशिरोमणिरम्मनोज्ञं सद्बोधिन. सुविधिना सुविधि सुबोध ॥ १ सोऽभूत्तस्मिन् त्रिभुवनपालो भुवने १६

१७—लसद्यश कलश । योऽलं त्रिभुवनलक्ष्म्या लेभे गणगुणं गणा + रणं ॥२ निर्दम्भ सम्मगर्जद् गजसकलकला + + लाङ्काकलङ्क ··· ··· ··· विपुलयशसो यस्य चित्रं पवित्रं । तस्य श्रीपुण्यलक्ष्याखिलगुणनिलयो धीरधीरो गभीरः पुत्रो गोत्रामप + पममहिमनिधिर्घोरधी साधुसाधुः ॥ ३ + + लबालकीर्त्तिलताब्धि- १७

१८—तानधारावर सुसमयोप्यतमस्ककल्य । सन्तापहारि ·· ··· कापसार्थभव ·· ·· ··· वनिवि + देव ॥ विद्युल्लतेव विमला ··· ··· ··· पति- व्रताङ्का सौभाग्यभूधरसुता नररत्नगर्भा तस्याम्बिका च वनिता बनिताम्बि- केव ॥ ५ अमूदसमसौम्योपि तयोपि तयोर्वागर्थयोरिव होलीसुनन्दनः श्रीमान् १८

१९—त्सोत्साहाभिनन्दनः ॥ ६ वर्द्धमानार्थिनामर्थं वर्द्धमानान् मनोरथान् सार्थ-
यन्नर्थत श्रीमान् होली कल्पाड्घ्रिपायते ॥७ सन्मूल. सदलोल्लसत् ......
प्रशाखोच्छ्रित· श्लाघ्य स्वच्छ कुलै फलैरविकल सुच्छायकायश्रिय· ।
मन्तादेऽपि सुराकरः क्षुवजये श्रीहोलिकल्पाड्घ्रिपो जीयाच्चर्जितदुर्ज्जनोऽ
र्जुनच- १९

२०—शोभासोऽर्चन्द्रार्थिमि (।) । ८ अविकलनलल्पलतया सुकान्तया कान्तया
कान्तः । असकृत् सुकृतसत्न्नतधाराधरनिर्भरासारैः ॥ ९ यः कान्ता + +
लत ... ... मलाख्यया घनाख्यं घनदं सुघनञ्जयं साधु. ॥१०
तवूपन्नश्रीफलमालयालं गल्हेशवंशानुबनन्दनैश्च सुवर्णवक्नाहिरमा- २०

२१—गैर्भिः सरत्नमृगलरठक्कुराग्यै ॥११ गाम्भीर्यवलदासये विचलतां देवाचलौ
मार्द्दवं नृत्यत्कान्तिककेकिकाय विगलत + + त + दय· ... ...
सदाभिततरा सर्व्वं महत्त्व घरा यस्मादेव मिता दद्· स जयतात् श्रीहोलि-
मल्लाधिप· ॥१२ विस्मयन्ते चरित्राणि ... ... · होलिसाधुना । य- २१

२२—यशोऽमृतदुग्धाब्धौ नृपः कौमुदमेधते ॥१३ यद्यशो विष्णुनाप्युच्चै.
कलावन्यकलङ्किना । + + स नैशशेषत्वं विश्वविश्वमुपाददे ॥१४ + दैव
+ ति सुजनवाञ्छ ... ... णा । अनुभवति वचांसि गुर्व्विश्वं विस्मयति
होलिहनी ॥१५ गुणवानपि धर्म्मात्मा वक्र सद्धर्म्मवोपि य । यद +
मोमदो हो- २२

२३—ली श्रुभुग्याप्यशोभमाक् ॥१६ गेहसावरसच्छुक्लार्कपुराद् यद्यशो-
ल्लसत् सुचा मुक्त्यङ्गना मुक्ताहारं होल्या रसोर्हतात् ॥१७ सत्केतःक्रि
... ... काशसकाम ... ... यशसात्ममयीकृताशः । शोल्लासतारसनि-
वाभिमया महान्तो होलीश्वरोऽस्तु सघनञ्जयसार्थवाह. ॥१८ नाको- २३

२४—सि त्वमहं नृपस्ततनुतनुः किं पुत्रपित्रो· शुचा सानन्दं वद सत्र किं मृगयसे
भूयोवतारस्तयो· । त + + क्त कलौ वदाशु नृकवे किं वर्द्धमानेऽन्वये...
... महूपो... ... .. होलि सं + + रे ॥१९

श्रीहोलीकमलाकरे कुवलयं सत्कीर्त्तिकञ्जायते शेषेनालयि सद्दलीयति गजै-र्दिन्दु प्रकाशीयति । मेरौ चित्रम- २४

२५—त्रात्र चित्रमपि तन्मित्रास्तचिन्तापभृद् यन्नालीयति सन्मरालति कलङ्की यत्र दोषाकर· ॥२० चन्द्रो निर्हसिता + तिप्रविकशद्र··· · ···जम्बालति । सिद्दीपत्यखिलाचलाचलविभुमं + + नन्तमितत्युद्यद्दोलियशोम्बुधौ सम ··· ···धम्मकनौकेत्यहो ॥

२६—२१ तत्रप्यत्रैको हेतुस्तद् यथा तथा हि ॥ विविक्त शक्तिमान् होली विविधश्रीक्तिमानहं । इत्यावयोर्महान् स्नेह सतत ववृधे वुधा· ॥२२ येनाकारि मनोहारि · पुरन्दर ··· ··· श्रीलजिनाश्रयं ॥ २३ सता सन्तोष-पोषाय श्रेयसे चात्मन श्रिये । सुखाय विमुखात्त्राणा चेह स्नेहाय पश्यता ॥२४ खण्डे भू + त + शो···२६

२७—संसोभूत् साधुदेहाख्य । वेदश्रिया स लेभे सुसुतं श्रीवल्लदेवाख्यं ॥ स वल्लणश्रीरमणोपि सूनुं विचक्षणं लक्षणलक्षिताङ्ग । लेभे नृप लक्षण-पालदेवं देवा··· ··· ···श्रिया श्रीमत्क्षेमराजाभिधाङ्कजं । धर्म्मार्थ-कामसंसिद्धिसाधक भाग्यतोऽलभत् ॥३ द्वितीयमद्वितीयोद्यत्प्रतापातापि—२७

२८—तद्विषं । + +माग्धुराधूर्य्यंवर्य्यं माधुर्य्यसागरं ॥४ नाम्ना देवरति सटे-दयमतं सन्मर्त्यलक्ष्मीपतिं धर्म्मध्यानगतिं निरस्तकुमति यो नित्यमेवाददे । यश्चक्रे जिन+र्च्चनेऽचलरतिं स ··· ··· साधुजनेवि···॥५ श्रेष्ठ पद्म-श्रिया श्रेष्ठ स्ववशाम्भोजभास्करं सूनुं नयनसिंघाख्य लेभे रत्नामरावरं ।. ॥६ नृरत्नं रत्ननामानम- २८

२९—यत्ना-भ्यस्तपादव ? सुतमाप्य समस्तास्तकुमति स दिव ययौ ॥७ अलभन्मल्ह-णदेगनयारम्भाभयाङ्कज चाथ । बालकलेशमिवालं कलया कलया ···
पतिलङ्कनाथो··· दिल्हणदेव्याभिनन्दितनन्दन । अथ पद्मसिंहनन्दन-मुख्यैरपि नन्दतार्दानशं ॥८॥ प्रतिष्ठयाति गारिष्ठयं यन्नामादेव देहिना । तस्याब्जनन्दि- २९

३०—नो मूर्त्तेः क· प्रतिष्ठापयामदेत् ॥१ शुभमोमाज्ञया सोधौ तथापि गुण-कीर्त्तिना। वर्द्धमानाभिधं श्रीमद्वरपत्यादिभिर्बुधै ॥२ श्रीण्वनन्दि ·· दमवसन्तमहात्मने मूर्त्योन्विधाय विधिनाभिमतां प्रतिष्ठामेतां हि नन्दन-सुनन्दन नन्दनाद्यं· ॥३ मङ्केश्वर कुवलयेऽमलहोलिचन्द्रः स्ङ्केश ३०

३१—देवपतिवार्प्पतिनेन्द्रमुद्र· । सन्मङ्गलं· सकलबन्धुजनो + वृन्दैर्वर्षत् सद्धर्ममुप-कारसुधाश्रुधारां ॥४ परोपकर्त्ता यो यद् यशा ··· ··· ·· श्रीमान् सतत-धर्म्मामृतवृष्टिं यो दानवारिणा। धत्ते स सत्यधर्म्मेशो जीयाद्धोलो नरो-त्तम· ॥२ मोदत् कुवलयं यस्य यशस्तिलकमुत्तमं। दि- ३१

३२—दीपे उपमं सोम· स जीयाद्धोलिशङ्कर ॥२ प्रात कालीयरागदलदखिलत-मोरंगुरेपादपद्मङ्हन्पद्मोल्लासिलदम्यास्तरुण · ··· ··· चन्द्रचान्द्रीयश्रा-वजन्द्र सकलकुवलये साधुता होलिसाघो ॥४ अग्रोतकान्वये गर्गगोत्रे हाटबुधाङ्गजाः बभू- ३२

३३—वुः साधव· जौमाहरुगङ्गामराभिधाः ॥५ तेषामाद्यात्मजस्तत्र जील्हो-भूपल्हिकाङ्ज हरुरजधियोः सूनुस्ततो भूत्तल्हण· सुदक् ॥२ ··· ··· ··· गनया तत· ॥३ समजनि वसन्तकीर्त्त्याख्यो वोल्हणवर्द्धमानजन्मा-मृगयन् मातामयितश्रीत्वाल्हीचार्य्याकरो हिमाघवुध· ॥३३

३४—प्रशस्तिमुच्चद्वृषभार्हचन्द्रसान्द्रार्थतीर्थो + + घा चकोर । सतां मुदे सत्कवि-वर्द्धमनो जिनं समाराध्य विवर्द्धमानं ॥५ श्रीवर्द्धमानविबुधाननपद्मचन्द्रत पीयू ··· ··· धारा पीत्वा कृतां श्रुतियुगाञ्जलिभिस्त्वमीमां नन्दस्तु संतुमनस· शुचिचञ्चरीका· ।६॥ शुभमस्तु सतां सदा ॥ ··· सुतश्चिरं जीयात्। रिपुनृप-सिन्धुसवा ··· ··· विभू ··· ··· पत्माहि आलम्म· ॥१ श्रीसाह्यालम्माधि-पतनुजे रिभूपमौलिमाणिके। गर्जति गर्जनस्थाने ग + + गोरीकुलं कुवलयेस्मिन् ··· ·· ··

सार

इस शिलालेखको मिस्टर एफ० सी० ब्लैक (Mr. F. C. Black)

ने ललितपुर जिलेमें पाया था। यह देवगढ़के पुराने किलेके भग्नावशेषोंके ऊपर उगे हुए जङ्गलमें मिला था। मि० ब्लैकका अनुमान है कि यह शिलालेख किसी ध्वस्त जैन मन्दिरका है।

इस शिलाखण्डका माप ६ फीट २ इञ्च × २ फीट ६ इञ्च है तथा मोटाई ३ इञ्च है।

लेख की भाषा अत्यन्त शब्दाडम्बर सहित है।

लेखके करीबन मध्यमें (पंक्ति १५) में दिया हुआ काल अक्षरों और अङ्कों दोनोंमें खूब समालके साथ दिया हुआ है। वह यह है ·· "गुरुवार, विक्रम सं० १४८१ के वैशाख मासकी पूर्णमासी तथा शालिवाहन (शक) सं० १३४६ के स्वाति नक्षत्र और सिंह लग्नके उदयमें।" राजाका नाम घोरी (गोरी) वंशका **शाह आलम्भक** दिया हुआ है, यह मालव या मालवाका राजा (शासक) था। श्री राजेन्द्रलाल मित्र, एल एल० डी, सी० आई० ई० (Rajendralala Mitra, LL. D., C I E.) अपने नोट (पृ० ६७) में कहते हैं कि उन्हें इस नामके किसी राजाका पता नहीं है; लेकिन सुल्तान दिलावर गोरी (Ghori) के द्वारा संस्थापित मालवाके गोरी वंशमें द्वितीय सरदार **सुल्तान हुशंग गोरी** उर्फ **अलप् खाँ** था, जिसने माण्डुका शहर बसाया, राज्यकी राजधानी धारसे वहाँ हटायी, और १४०५ ई० से १४३२ ई० तक राज्य किया, और इसमें कोई संशयकी बात नहीं है कि इसी सरदारको संस्कृतमें **'आलम्भक'** लिखा है। उसकी नयी राजधानीका नाम शिलालेखमें **मण्डपपुर** दिया हुआ है।

- लेखका विषय **होली** नामके जैन पुरोहित द्वारा **पद्मनन्दि** और **हम-वसन्त**की दो मूर्त्तियोंका समर्पण है। यह समर्पण **शुभचन्द्र**की आज्ञासे किया गया था। उनके नाममें कोई शाही विशेषण नहीं लगा हुआ है।

लेखका प्रारम्भ वर्द्धमान नगरमें कान्तमें स्थापित होनेवाले वृषभ (वृषभदेव, प्रथम तीर्थंकर) की स्तुतिसे होता है। और इसका अन्तमें लेखकके अपने विषय

के संक्षिप्त वर्णनसे होता है। बीचमें कुछ नामोंकी वंशावली आती है; वह इस तरह है :—१. सायदेद, २. उसका पुत्र वल्लदेव, ३. उसका पुत्र लक्ष्मीपालदेव, ४. उसका पुत्र क्षेमराज, ५, ६, पद्मश्री, ७. रत्न, ८. रम्भामय, १०. पद्मसिंह।

[JASB, LII, p. 67-80] t. & tr.

६१८

सरगूरु;—संस्कृत और कन्नड़-भग्न।

[शक १३४६ = १४२४ ई०]

[सरगूरु (सरगूरु प्रदेश) में, गाँवके दक्षिणकी ओर पद्म-वस्तिमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति शक-वरुष १३४६ नेय शोभकृतु-संवत्सरद वैशाख शु १२ गु। प्रचण्ड-दोर्-दण्ड-मण्डली-मण्डन-मण्डलाग्र-खण्डितारातिप्रकाण्ड महा मण्डलेश्वर समुद्र-त्रयाधीश्वर श्री-मतु विजय-बुक्क-राय-राज्याभ्युदये श्रीमद्भगवदर्हत्परमेश्वर श्रीपाद-पद्माराधकरप्प श्रीमन्महाप्रधान बयिचय-दण्डनाथर पादपद्मोपजीवी होय्सल-राज्याधिपति नागण्ण-वोडेयर ··· इम्मितू ······ ताप-हार हण्डले-गणाग्रगण्यर् अप्प श्रीमत्पण्डितदेव इवर शिष्यरु बयि-नाड महाप्रभु मसणेयहळिय कम्पण-गवुडरु तमगे स्वर्गापवर्ग-निमित्तवागि बेळगुळद श्री-गुम्मटनाथ-स्वामिगळ अङ्ग-रङ्ग-भोग-संरक्षणार्थवागि तम्म बय-नाडोळगण तोट-हळ्ळिन ग्राम १ आ चतुस्सीमेयोळगण केरे गद्दे-बेद्दलु-तोट-तुडिके-कुळ-होर्म्माळ आय-होन्नु ·· ··· होन्नु हन्दलु-मिक्क-होति मादारे-तेटे-शुङ्क-निधि-निक्षेप-जल पाषाण-मुन्ताद सकल स्वाम्यद कुळवनु रायरु दण्णायकर ·· ·· यलि नागण-

ओडेयर कयिन्दवु त्रिदिसि श्री-गुम्मटनाथ-स्वामिगळिगे आ-चन्द्रार्क्कं सलु-वन्तागि गुम्मटपुरवेन्दु कोट्ट दान-शासन ॥

स्वदत्ता परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धरां ।
षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्ठाया जायते क्रमि ॥

अक्षयसुखमी-वर्म्ममनीक्षिसि रक्षिसुव पुण्य-पुरुषर्गक्कुम् ।
भक्षियिपातन सन्तानक्षयमायु क्षयं कुलक्षयमक्कुम् ॥

(हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

इस लेखमें विजयी बुक्कारायने, स्वर्गप्राप्तिके लिये, बेळगुळ (श्रवण-बेल्गोल) के गुम्मटनाथ-स्वामीकी पूजा एवं सजावट के लिये तोटहळ्ळि गाँव भेंटमें दिया है । बुक्कराय भगवदर्हत्परमेश्वर का आराधक था । बयिनाड्, मसन-हळ्ळि कम्पनगवुडका अधिपति था । तोटहळ्ळि गाँवके साथ-साथ उसकी चारों तरफ-की सीमाओंके अन्दरके तालाब, धान्य (चावल)-भूमि, सूखे खेत, बगीचा, भण्डार, आसामी, 'होम्बलि', आयका रुपया,···, छप्परखाने,·· ·· निम्न श्रेणीकी चीजोंपर कर, चुङ्गी, भूमि-भण्डार, निधि, रहन (निक्षेप), जल, पाषाण तथा पूरे स्वामित्व (मालिक) के जितने अधिकार हैं, वे सब दिये । इन चीजों को नागण्ण-ओडेयरके हाथ से दिलवाया तथा इन सबमें राजा तथा दण्णायककी भी आज्ञा ले ली, जिससे कि यह सब दान तबतक जारी रहे जबतक चन्द्र और सूर्य गुम्मट स्वामीकी रक्षा करते हैं । और गाँवका नाम गुम्मटपुर रख दिया । इस सबका उसने दान-पत्र (शासन) लिख दिया ।]

[EC, IV, Heggadadevankote tl., No. 1]

६१६

वराङ्गना—संस्कृत तथा कन्नड़

काल-शक सं० १३४६ (A. D.1424)

(साउथ कैनरा के Sub-Court में)

कन्नड़ लिपिमें संस्कृत और कन्नड भाषामें तीन ताम्र-पत्रोंपर जो एक अंगूठीके द्वारा जुड़े हुए हैं। इस अंगूठीपर एक मुहर लगी है जिसपर एक जैनमूर्ति है। दानदाता विजयनगरके राजा देवराय हैं। दान का काल शक सं० १३४६ (१४२४ ई०), क्रोधी संवत्सर है। इस दानपत्रके द्वारा वराङ्गनाका गाँव **वराङ्गनेमिनाथ**के मन्दिरको दान किया गया था। राजा की वंशावली इस प्रकार दी हुई है —

बुक्क महीपति
|
हरिहर
|
देवराय
|
विजय भूपति,
नारायणीदेवीसे विवाह किया
|
देवराय

शासनकाल उस राजाके राज्यकालसे मिलता है जिसे बर्नेल Burnell ने (South Ind. Paleography, p. 55) देवराज, वीरदेव या वीरभूपति बताया है। लेकिन उसके वंशजका नाम उक्त लेखक के द्वारा दिये गये नामसे

भिन्न पड़ता है। (८२, ८७ अङ्कोंसे तुलना करो, जिनमे दी गई वंशावली इस दानपत्रगत वंशावलीसे मिलती-जुलती है।) लेखकी भूमिकामें कुन्तल देशकी राजधानी **विजयनगर** बतलाया गया है।

[R. Sewell, Archaeslojical Survey of Southern India (ASSI, II), p. 14. No 89, a.]

६२०

विजयनगर—संस्कृत।

[शक १३४८ = १४२६ ई०]

A. मन्दिर के महाद्वारके समीप बायीं ओर।

शुभमस्तु ॥ श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥

श्रीमद्यादवान्वयार्णवपूर्णचन्द्रस्य श्रीबुक्कपृथ्वीभुज [ ] पुण्य [परिग]-क परिणतमूर्त्तेर्**हरिहर**महाराजस्य पर्यायावताराद्वीरा**द्देवराज**नरेश्वराद्देवराजादिव **विजयश्रीवीरविजय**नृपतिस्सजातस्तस्माद्रोहणाद्रेरिव महामाणिक्यकाङो नीतिप्रतापस्थिरीकृतसाम्राज्यसिंहासनः । राजाधिराजराजपरमेश्वरादिबिरुदविख्यातो गुणनिधिर्**भिनवदेवराज**महाराजो निजाज्ञापरिपालित**कर्णाट**देशमध्यवर्त्तिन स्वावासभूत**विजयनगर**स्य क्रमुकपर्णापणवीथ्यामाचंद्रतारमात्मकीर्त्तिधर्म्मप्रवृत्तये । सकलज्ञानसाम्राज्यविराजमानस्य स्याद्वादविद्याप्रकटनपटीस **पार्श्वनाथस्यार्हतः** शिलामय चैत्यालयमचीकरत् [। ।]

देशः **कर्णाट**नामाभूद्वावास सर्व्वसपदा ।
विडम्बयति य स्वर्गं पुरोडाशाशनाश्रय ॥ [२]

विजयनगरीति तस्मिन्न [ग] री नगरीति रम्यहर्म्यास्ते ।
नगरि (री) षु नगरी यस्या न गरीयस्येव गुरुभिरैश्वर्य्यैः ॥ [३]

कनकोज्ज्वलसालरश्मिजालैः परिखाम्बुप्रतिबिम्बितैरलं या
वसुधेव विभाति वाडवार्च्चिर्वृतरत्नाकरमेखला परीता ॥
श्रीमानुद्दामधामा यदुकुलतिलकस्मारसौंदर्य्यसीमा-
धीमान् रामाभिरामाकृतिरवनितले भाति भाग्यात्तभूमा [।]
विक्रान्त्याक्रान्तदिक्को विमतधरणिभृत्पक्षश्रेणिच्छिन्नः (।)
क्षोण्या जागर्त्ति बुक्कक्षितिपतिररिभूभृच्छिरदिक्छपक्षः ॥ [४]

तत्प्राप्तात्मावतारः स्फुरति हरिहरक्ष्मापतिर्ज्ञानसारो
दारिद्र्यस्फारवाराकरतरणवि [धौ] विस्फुरत्कर्ण्णधार ।
भूदानस्वर्णदानानुकृतपरशुधृ (या 'भृ') त्पश्चिनीवल्लभसूनु
स्फाराकूपारतीरावळिनिहितजयस्तम्भविन्यस्तकीर्त्तिः ॥ [५]
तेनाजन्यरिराजतज्ञजशिरस्तोमस्फुर -
च्छेखरप्रत्युप्तोपलदीपिकापरिणमत्पादाब्जनीराजनः ।
विद्वत्कैरवमंडलीहिमकरो [वि] ख्यात वीर्य्याकर [:]
श्रेयान्वीरम्मास्वयंवृतवर श्रीदेवराजेश्वरः ॥ [६]
तज्जन्माहिमन्वदान्यो ज [ग] ति विजयते पुण्यचारित्रमान्यो
दानध्वस्तार्थिदैन्यो विजयनरपति खण्डितारा [ति] सैन्यः ।
प्रत्युद्यज्जैत्रयात्रासमसमयसमुद्भूतकेतुप्रसूत -
[स्फा] य [द्दा] त्योपहत्या प्रतिहतविमतोग्रप्रतापप्रदीपः ॥ [७]

B. महाद्वारके दक्षिण (दायीं) ओर ।

तस्मादस्मिन्नजातात्मावनि जगति यथा जंभजेतुर्जयंतो
राजा श्रीदेवराजो विजयनृपतिवागशिराकाशशाक ।
कोपाटोपप्रवृत्तप्रज्वलरणमिलद्विप्रतीपक्ष्मापाप -
प्राणश्रेणीनमस्विन्निनिवहकवलनव्यग्रखड्गोरगेन्द्रः ॥ [८]
वीरश्री देवराजो विजयनृपतयस्तारसञ्जातमूर्त्ति -
र्भर्त्ता भूमेर्व्विभाति प्रणतरिपुततेरार्त्तिजातस्य हर्त्ता ।

क्रुंक्रोधेद्धयुद्धोद्धुरकरटिघटाकर्ण्णशूर्प्पप्रसर्पद् -
वातव्रातोपघातप्रतिहतविमताटभ्रतूलभ्रसघः ॥ [९ [

यद्घाटीघोरघोटीखुरदलितधरारेणुभिर्व्योम्नि यस्मि -
न्धूम [स्तो] मायमाने प्रतिनृपतिगणस्त्रीदृशः शाश्रुधाराः ।

प्रोद्यद्दर्प्पप्रभूतप्रतिभटसुभटास्फोटनाटोपजाग्रद् -
रोषोत्कर्षां[व]काराद्धुर्माणदटयते देवराजेश्वरोऽयं ॥ [१०]

विश्वस्मिन्विजयक्षितीशतनुपः श्रीदेवराजेशितु-
स्संदर्मी कीर्त्तिसिताब्जं कलयते शौर्य्याख्यसूर्य्योदयात् ।
आशा यत्र पलाशतामुपगताः स्वर्णाचलः कर्णिका
भृंगा दिक्षु मतंगजा जलधयो मारंदबिंदूत्कराः ॥ [११]

विख्याते विजयात्मजे वितरति श्रीदेवराजेश्वरे
कर्ण्णस्यापि न वर्ण्णना विगलिता वाच्या दधीच्यादयः ।
मेघानामपि मोघता परिणता चिंता न चिंताम [णे] :
स्वल्पाः कल्पमहीरुहाः प्रथयते स्वर्णाचकीनीचता ॥ [१२]

सोयं कीर्त्तिसरस्वतीवसुमतीवाणीवधूभिस्सम
भव्यो दीव्यति देवराजनृपतिर्भूदेवदिव्यद्रुमः ।
यश्शोरिर्व्वलियाचनाविरहितश्चन्द्रः कळंकोज्झितः
शाकस्सत्यमगोत्रभिद्दिनकरश्चामरव्योल्लंघनः ॥ [१३]

मदनमनोहरमूर्त्तिः महिळाजनमानसापहरणः ।
राजाधिराजराजाटिमपदपरमेश्वरादिनिजबिरुदः ॥ [१४]

शक्तो बुक्कमहीपालो दाने हरिहरेश्वरः ।
शौर्य्ये श्रीदेवराजेशो ज्ञाने विजयभूपतिः ॥ [१५]

सोय श्रीदेवराजेशो विद्याविनयविश्रुतः ।
प्रागुक्तपुरवीथ्यंतः पर्ण्णपूगीफलापणे ॥ [१६]

शाकेऽब्दे प्रमिते याते वसुसिंधुगुणेंदुभिः ।
पराभवाऽब्दे कार्त्तिक्यां धर्म्मकीर्त्तिप्रवृत्तये ॥ [१७]

स्याद्वादमतसमर्थं [न] खर्व्वितदुर्व्वादिगर्व्ववाग्वितततेः ।
अष्टादशदोषमहामदगजनिकुरुम्बमहितमृगराजः ॥ [१८]

भव्याम्भोरुहभानोरिंद्रादिसुरेंद्रवृंदवन्द्यस्य ।
मुक्तिवधूप्रियभर्त्तुः श्रीपार्श्वजि[ने]श्वरस्य करुणाब्धेः ॥ [१९]

भव्यपरितोषहेतुं शिलामयं सेतुमखिलधर्म्मस्य ।
चैत्यागारमचीकरदाधरणिद्युमणिहिमकरस्थैर्य्यम् ॥ [२०]

सारांश

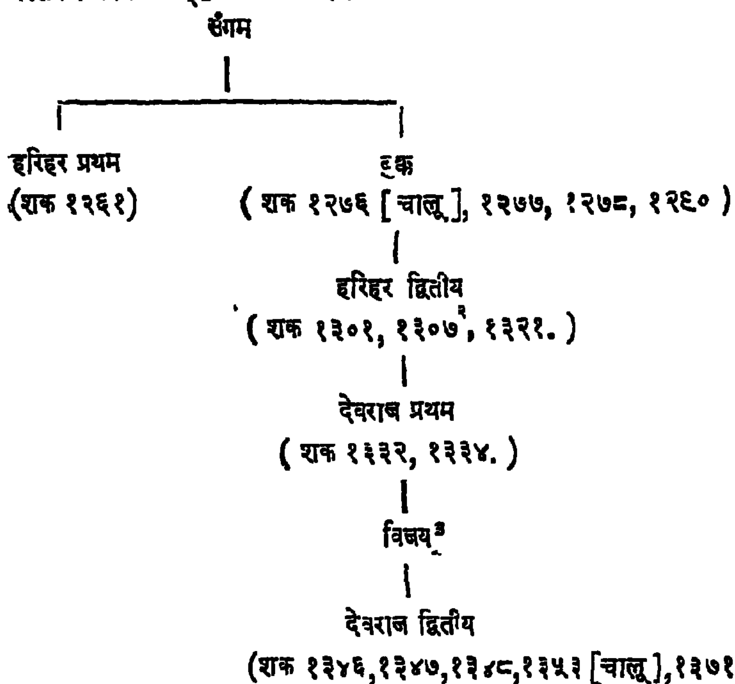
विजयनगर प्राचीन समयमें जैनियोंकी राजधानी थी। शक १२७६ (सं० ११४१) से यादववशी दि० जैन राजाओंका राज्य था। इस वंशकी वंशावली निम्न भांति है :—

१. यदुकुलके बुक्क।
२. उसके पुत्र, हरिहर (द्वितीय), 'महाराज'
३. उसके पुत्र, देवराज (प्रथम)
४. उसके पुत्र, विजय या वीर-विजय (पं० २)।
५. उसके पुत्र देवराज (द्वितीय), अभिनव-देवराज।

अन्तिम महाराजा देवराजने अपने पराक्रमके कृत्य और अपना नाम अजरा-मर करनेके लिये अपने राजमहलके पास 'पान-सुपारी-बाजार' (पर्ण-पूगीफलापण, श्लो० १६) नामक बगीचेमें एक चैत्यालय (चैत्यागार) बनवाया और मन्दिरमें श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी प्रतिमा विराजमान की।

नोट :—इस वर्णित विजयनगरके प्रथम या यादव वंशावलिके क्रममें बुक्कके पिता और बड़े भाईके नाम तथा वे शक मितियाँ, जिनका लेखमें कोई संकेत

नहीं हैं और न यहाँ ही नीचे टिप्पणीमें दी गयी हैं," मि० फ्लीटके उसी वंशके कालक्रम-चक्रसे[1] उद्धृत की जाती हैं। वे इस प्रकार हैं :—



[South-Indian ins., Vol I, No I53 (p 160-167)]

---

1 Jour. Bo. Br. R. A. S. Vol XII q 339.

२ यह मिति शि० ले० नं० ५८९ की है।

२ मि० सोवैल (Sewell), Lists, Vol. I, p 207, इस राजा के एक शिलालेख का उल्लेख करते हैं, जिसकी मिती शक १३४० (व्यतीत) कही जाती है।

६२१

वेगूर,—संस्कृत तथा कन्नड-भग्न ।

[शक १३४६ = १४२७ ई०]

[वेगूरमें (वेगूर परगना), ध्वस्त जिन-बस्ति

श्रवणप्पनदिन्नेमें प पाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति शक-वरुष १३४६ नेय पराभव-संवत्सरदलु श्री-मूल-संघद देशीय-गणद कोण्डकुन्दान्वयद पुस्तक गच्छद ··· ··· ··· श्रीमतु प्र ·· ··· ··सिद्धान्ति-देवर शिष्यरप्प श्रीम च्छुभचन्द्रसिद्धान्तिदेवर गुड्ड चक्किमय्यन नागिय करियप्प -दण्डनायक, रप्प दण्ड ·· ··· ··· ··· मोरसु-नाडाळ्वन्दे काटि ··· ··· कलियूरग्रहार कोट्ट सर्वबाघ-परिहारवागि चोक्किमय्य जिनालयं चन्द्रादित्यरुळ्ळन्नक मल्लन्तागि ··· ··· धर्मम नडसुवन्तागि ·· ·· ··· ··· (वे ही शापात्मक वाक्य) श्रीम ··· ··· ··· · ··· ण्डनायक चोक्कि-मय्य ··· ·· ··· ··· ··· रडु निलिसिदनु कल्लु ··· ·· मडिसिकोट्ट ·· ···

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

(उक्त मितिको), श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा पुस्तक-गच्छके प्र ··· ··· सिद्धान्ति-देवके शिष्य शुभचन्द्र-सिद्धान्ति-देवके गृहस्थ-शिष्य चक्किमय्यके (पुत्र) नागिय करियप्प-दण्डनायकने ··· ··· ··· ·· जब वे मोरसु-नाड् पर शासन कर रहे थे, कलियूर् अग्रहारके लिये दान (जो कि मिट गया है) किया, ताकि चोक्किमय्य जिनालय तबतक जारी रहे जबतक सूर्य और चन्द्रमा हैं । शाप]

[EC, IX, Bangalore tl., No. 82]

६२२

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १४८४ = १४२८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. Bombay (ASI, XVI), p. 354-355, No 12, t. & tr.]

६२३

आनेवाळु—संस्कृत और कन्नड ।

[साधारण वर्ष १४३० ई० (लू० राइस)]

[आनेवाळु (येट्टदपुर प्रदेश) में, बस्तिके रङ्ग-मण्डपमें भीतरके दाहिनी ओरकी दीवाल पर]

श्रीमतु साधारण-संवत्सरद माग-सुध १० यलु आनेवाळ-चिक्कण्ण-गौडर मगळु होन्नण-गौडरु तम्म मग हुट्टिद बोम्मण्ण-गौडरिगे पुण्यवाग-बेकेन्दु कट्टिसिद ब्रह्म-देवरु पद्मावतिय बस्तिय धर्म्म-शासन श्री श्री ।

[आनेवाळके चिक्कण्ण-गौडके पुत्र होन्नण-गौडने अपनी चिरञ्जीव बोम्मण्ण-गौडकी पुण्यकी प्राप्तिके लिये ब्रह्मदेव और पद्मावतीकी बस्तिको बनवाया ।]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 62]

---

१. वंसके शक नागरी अक्षरोंमें हैं ।

६२४

कारकल,—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक सं० १२५३ = १४३२ ई०]

[गोम्मटेश्वर-मूर्तिस्तम्भके ठीक बाँयीं तरफ]

१. सूरितनु भैरवें-
२. द्रकुमार श्री पाण्ड्य
३. रायनिंदतिमु-
४. दर्टि। कारिल गुंमट-
५. जिनपति चारु श्री मू-
६. र्त्ति कुडुगे निमगभिम-
७. तमं ॥ श्री पाण्ड्यराय जय [॥]

[EI, VII, No. 14. D.]

[गोम्मटेश्वर-मूर्ति-स्तम्भके ठीक दाहिनी तरफ]

पंक्ति १. श्रीमद्देशीगणे
२. ते पनसोगे वलीश्वर । ख्या -
३. योऽभूल्ललितकी-
४. र्त्याख्यस्तन्मुनी-द्रोपदे-
५. शतः ॥ स्वस्ति श्रीशकभूपते-
६ स्त्रिशरवह्नी (न्) दो विरोध्या-
७. टिकृद्वर्षे फाल्गुनसौ-
८. म्यवारधवलश्रीद्वा-
९. दशीसत् तिथौ। श्री सोमा-
१०. न्वय भैरवेन्द्रतनु-

११. जश्री वीरपाण्ड्येशिना नि—
[१२. मांय प्रतिमाऽत्र बा-
[१३. हुबलिनो जीयात् प्र-
१४. तिष्टापिता ॥ शकवर्ष
१५. १३५३ श्री पाण्ड्यराय ॥

[शक राजाके विरोध्यादिकृत् वर्ष, अर्थात् १३५३वें वर्षके फाल्गुन शुक्ला १२, बुधवारके दिन सोम वंशके भैरवेन्द्रके पुत्र श्री वीर पाण्ड्येशी या श्री पाण्ड्यरायने यहाँ (कारकलमें) बाहुबलकी प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित कराई। वह प्रतिमा जयवन्त रहे। यह कार्य उन्होंने देशीगणके पनसोगे शाखाकी परम्परामें होनेवाले ललित कीर्त्ति मुनीन्द्रके उपदेश से किया।]

[EI, VII, No. 14, C. IA, II, q. 353-354]

६२५

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत।

[शक १३५५=१४३२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६२६

आनेवाळु,—कन्नड़।

[काल—वर्ष प्रमादीच= १४३३ A. D.]

[आनेवाळुमें ध्वस्त बस्तिकी छोटी सी जैन-प्रतिमाके पृष्ठपर]

प्रमादीच—संवत्सरद फाल्गुन-सु १०मी भानुवार अनन्तन प्रतिमे
[अनन्तकी प्रतिमा]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 60, t & tr.]

६२७

कार्कल—कन्नड़।

[शक सं० १३५८=१४३६ ई०]

[गोम्मटेश्वर मूर्ति स्तम्भके सामनेके ब्रह्मदेव स्तम्भ पर]

१. शकनृपन १३५८ राक्षसमंवत्सर[द फ]ाल्गुन शु
२. १२ सु ॥ जिनदत्तान्वय भैरवतनय श्री [वी]रपां-
३. ड्यनृपतिगे वरमं । मनमोलुदीय [सु] नेल [सि] द
४. जिनभक्तं ब्रह्मनीगे निमगभि [मत] म ॥

अनुवाद—शक नृपके राक्षस नामके १३५८ वें वर्षमें फाल्गुन शुक्ला १२ के दिन, जिनदत्तके वंशमें होनेवाले भैरवके पुत्र श्री वीरपाण्ड्य नृपतिकी प्रत्येक इच्छाको पूर्ण करने के लिये यहाँपर प्रतिष्ठापित, जिनभक्त ब्रह्म [की प्रतिमा] तुम्हारी [प्रत्येक] मनोकामनाको पूरा करे।

[EI, VII, No., 14 E.]

६२८

देवगढ़;—संस्कृत।

[सं० १४९३ तथा शक १३५८=१४३६ ई०]

(पंक्ति ५)—संवतु १४९३ शाके १३५८ वर्षे वैशाप (ख) -वि (व) दि ५ गुरं (रौ) दिने मूल-नक्षत्रे ॥

बृहस्पतिवार, ५ अप्रैल १४३६ ई०

शक १३५८—देवगढ़ जैन शिलालेख।

[INI, Nos. 287 & 375.]

६२९

पर्वत आबू—सस्कृत ।

[सं० १४९४ = १४३७ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदाय का लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 313, No. XXV, a.]

६३०

नागदा—संस्कृत ।

[सं० १५१५=१४५८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Bhavnagar inscriptions, p. 112-113, t. & tr.]

६३१

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १४९६ = १४३९ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 355, No. 13, a, t. & tr.]

६३२

राणपुर (जोधपुर जिला) संस्कृत ।

[सं० १४९६ = १४४० ई०]

[Bhavnagar inscriptions, p· 113-117, t. & tr.]

६३३

ग्वालियर;—प्राकृत।

[सं० १४९७=१४४० ई०]

श्री आदिनाथाय नमः ॥ संवत् १४९७ वर्षे वैशाख ... ७ शुक्रे पुनर्वसु नक्षत्र श्रीगोपालचलदुर्गे महाराजाधिराजराजा श्रीडुंग .. [र सिंहराज्य] संवर्त्तमानो श्रीकाष्ठासंघे मायू[थु]रान्वयो पुष्करगणभट्टारक श्रीग (गु)णकीर्त्तिदेव तत्पदे यत्यः (श) कीर्त्तिदेवा प्रतिष्ठाचार्य श्रीपंडितरघू (इधू) तेषं। आभाये (म्नाये) अग्रोतवंशे मोद्गलगोत्रा सा॥ घुरात्मा तस्य पुत्र साधुभोपा तस्य भार्या नान्हो। पुत्र प्रथम साधु क्षेमसी द्वितीय साधुमहाराजा तृतीय असराज चतुर्थ धनपाल पञ्चम साधु पाल्का। साधुक्षेमसी भार्या नोरादेवी पुत्र—ज्येष्ठपुत्र भधायि पति-कौल॥ भ—भार्या च ज्येष्ठजी सरस्तुती पुत्र मल्लिदास द्वितीय भार्या साध्वोसरा पुत्र चन्द्रपाल। क्षेमसीपुत्र द्वितीय साधु श्रीभोजराजा भार्या देवस्र पुत्र पूर्णपाल॥ एतेषां मध्ये श्री॥ त्यादिजिन-संघाधिपति काला सदा प्रणमति॥

अनुवाद—आदिनाथको नमस्कार। सं० १४९७ के वैशाख सुदी ७, जब पुनर्वसु नक्षत्र उदित हो रहा था, और जिस समय महाराजाधिराज डूंगरेन्द्रदेव गोपाचल (आधुनिक ग्वालियर) के किलेमें राज्य कर रहे थे। तब काष्ठासंघके मयूर अन्वयके, पुष्कर गणके भट्टारक गुणकीर्त्तिदेवके बाद उनके पट्टाधीश कीर्त्तिदेव हुए। इसके बाद लेखमें पट्टाधीशके पदपर आसीन होनेवालोंमें प्रतिष्ठाचार्य पण्डित (पुरोहित) श्रीरघू, तत्पश्चात् पण्डित श्रीभायाके नाम आये हैं। श्री भायाके पुत्र 'साधु' भोपा, उसकी पत्नी नन्ही थी। इसके बाद उनके पुत्र और पुत्रों की पत्नियों तथा उनके पुत्रोंके नाम आये हैं। अन्तमें

मायदेवके पुत्रका नाम पूर्णपाल बतलाया है। इनमेंसे आदिजिनसंघाधिपति काला[1] सदा प्रणाम करते हैं।

[JASB, XXXI, p. 404, a. ; p. 422-423, t. & tr.]

६३४

पर्वत आबू;—संस्कृत।

[सं० १४९७=१४४० ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Asiat. Res. XVI, p. 313, No XXVII, a.]

६३५

श्रवणबेल्गोला;—संस्कृत।

[वर्ष क्षय=शक १३६८=१४४१ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६३६

म्यूनिच;—संस्कृत।

[सं० १५०२=१४४६ ई०]

[J. Klatt, IA, XXIII, p. 183, t & tr.]

१—उपर्युक्त अनुवादकी शुद्धता बाबू राजेन्द्रलाल मित्रकी दृष्टिमें सन्देहास्पद है। 'काका' नाम उन्हें अशुद्ध मालूम पड़ता है। यह अनुवाद खाली काम चलाऊ है।

६३७

माण्ट निडुगल्लु;—कन्नड़ ।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १४५० ई० ? (लू. राइस) ।]

[निडुगल्लु-बेट्टपर मळे-मल्लिकार्जुन मन्दिरके पासके पाषाणपर]

श्री-मूल-संघद वृषभसेन-भट्टारक-देवर गुड्ड वैश्यर
रामि-सेट्टियर मग बिमी-सेट्टिय हेण्डति चन्द्रवेय निषिधि ॥

[मूलसघके वृपभसेन-भट्टारकके गृहस्थ-शिष्य, वैश्य रामि-सेट्टिके पुत्र बिमी-सेट्टिकी पत्नी चन्द्रवेका स्मारक यह है ।]

[E C, XII, Pavugada tl., No 56]

६३८

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १५०९=१४५२ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 311, No XXI, a.]

६३९

टोंक;—संस्कृत (देवनागरी लिपि)

[काल—सं० १५१०=१४५३ ई०]

टोंक (राजपूताना) के नवाबके महलके पास जनवरी सन् १९०३ ई० में खुदाई होनेसे अचानक ११ जैन प्रतिमाएँ निकलीं । ये प्रतिमाएँ भिन्न-भिन्न ११ तीर्थङ्करों की हैं, जो पद्मासन-स्थित हैं, गोदके ऊपर जिनके बाएँ हाथके ऊपर दाहिना हाथ है और दाहिने हाथकी हथेलीका मुख ऊपरकी तरफ है । ये सब प्रतिमाएँ समानाकृति हैं, सिर्फ पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथकी प्रतिमाके ऊपर सर्पका फण है तथा और प्रतिमाओंपर उनके भिन्न-भिन्न लाञ्छन (चिह्न)

हैं। वे सफेद संगमरमरके पत्थर की बनी हुई हैं और अच्छी तरह सुरक्षित दशामें हैं। उनकी बनावट कुछ भद्दी है। तीर्थङ्करोंके नाम तो नहीं प्रकट किये गये हैं, पर चिह्नोंसे उन्हें मालूम किया जा सकता है। वे निम्नलिखित भाँति हैं :—

१. **पार्श्वनाथ** (२८ इञ्च × २३ इञ्च) सप्तफणी सर्प सिर के ऊपर है, और सर्प चिह्न के तौरपर है।

२. **सुपार्श्वनाथ** (करीब २२ × १८ इञ्च). पञ्च-फणी सर्प सिर के ऊपर। स्वस्तिक चिह्न।

३ **महावीरनाथ** (करीब २२ × १८ इञ्च), सिंह का चिह्न है।
४. **नेमिनाथ** (करीब १९ × १५ इञ्च) शंख का चिह्न है।
५. **अजितनाथ** (करीब २१ × १७ इञ्च), हाथी का चिह्न है।
६. **मल्लिनाथ** (करीब २१ × १७ इञ्च) कलश का चिह्न।
७. **श्रेयान्सप्रभु** (करीब २१ × १७ इञ्च) गेंडे का चिह्न है।
८. **सुविधिनाथ** (करीब २१ × १७ इञ्च), मछली का चिह्न।
९. **सुमतिनाथ** (करीब १८ × १७ इञ्च) चकवे का चिह्न।
१०. पद्मप्रभ (करीब १६ × १३ इञ्च), कमल का चिह्न।
११. शान्तिनाथ (करीब १६ × १३ इञ्च), कच्छप (कछुआ) का चिह्न।

इन प्रतिमाओं के नीचे के पाषाणपर लेख है जो कि प्रायः मिलते-जुलते हैं और देवनागरी लिपि में भद्दे रूप से अशुद्ध **संस्कृतमें** लिखे हुए हैं। सबका काल **संवत् १५१०, माघ शुक्ला दशमी**, तदनुसार **रविवार १९ फरवरी, १४५३** ई० है।

ये सब प्रतिमाएँ जैनोंके दिगम्बर सम्प्रदाय की हैं। यह इस बात से प्रमाणित होता है कि सब के ऊपर 'मूलसंघ' लिखा हुआ है और सब नग्न हैं। लेखों के अनुसार, इन सबकी प्रतिष्ठा **लापू** नाम के एक धनिक, तथा उसके पुत्र **सालहा** और **पाल्हा** और उनकी क्रमशः **लक्ष्मिणी, सुहागिनी** (**सुगनश्री** भी कहते

थे) और गौरी नामक स्त्रियों के द्वारा हुई थी। ये लोग अपने को जिनचन्द्र का भक्त कहते थे और दिगम्बराम्नायी खण्डेलवाल जाति तथा बाकलीवाल गोत्र के थे।

पार्श्वनाथ की प्रतिमा का लेख बताता है कि ये पाषाण-लेख लूङ्करदेव के राज्यकाल में उत्कीर्ण किए गए थे। ये लूङ्करदेव उस समय के स्थानीय शासक रहे होंगे लेकिन इतिहास में उनका कोई पता नहीं चलता। उन प्रतिमाओं को संभवतः किसी मूर्तिभञ्जक द्वारा आपत्काल प्राप्त होनेपर किसीने छिपाया होगा।

श्रीमान् नवाब महोदय ने इन ११ प्रतिमाओं को, अजमेर के गवर्नमेंट म्यूजियम के बन जाने पर उसे उन्हें टोंक स्टेट के उपहार के रूपमें भेंट देने का संकल्प प्रकट किया था।

[Hiranand Shastri, A S P & U P annual Report 1903–1904 p. 61–62, a.]

६४०

ग्वालियर,—प्राकृत।

[सं० १५१०=१४५४ ई०]

(१) सिद्धि संवत् १५१० वर्षे माघसुदि ८ (अ)ष्टमै (म्या) श्री गोपगिरौ महाराजाधिराजरा-

(२) जा श्री डं(डुं)गरेन्द्रदेवराज्यप्र [वर्त्तमाने] श्रीकाञ्चीसंघे माथु (थु)रान्वये भट्टारक श्री

(३) क्षेमकीर्त्तिदेवस्तत्पदे श्री हेमकीर्त्तिदेवास्तत्पदे श्री विमलकीर्त्तिदेवाः ... ...

(४) डिता .. . तदाम्नाये अग्रोतवंशे गर्गगोत्रे सा... ...त

(५) यो. पुत्रा ये दशाय श्रीचंद भार्या मालाही तस्य प्रवलापेषार रा... बीसा... ...दु

(६) तीयसा० हरिचंद्रभार्या जसोधर हितये ··· ··· ··· ··· णसीसा० सधासा० तृती

(७) यहेमा चतुर्थसा० रतीपुत्रसा० सह सार्पं ··· मु सा० धंसा० सल्हापुत्र अेसेवं ए

(८) तेषा मध्ये साधु श्रीचंद्रपुत्र शेषा तथा हरिचंद्रदेवकी भार्या ··· ···

(९) दीप्रमुखा नित्यं श्रीमहावीरप्रतिमा प्रतिष्ठाप्य भूरिभक्त्या प्रणमंति ॥

(१०) अङ्गुष्ठमात्रां प्रतिमा जिनस्य भक्त्या प्रतिष्ठापयतो महत्या। फलं वलं राज्य

(११) मनन्तसौख्यं भवस्य विच्छित्तिरथो विमुक्ति ॥ शुभं भवतु सर्वेषां ॥

अनुवाद—संवत् १५१०की माघ सुदि ८मी को महाराजाधिराज राजा श्री डूंगरेन्द्रदेवके शासनकालमें काष्ठासंघके मायूर अन्वयके भट्टारक श्री क्षेम-कीर्त्तिदेव हुए। उनके बाद हेमकीर्त्तिदेव तत्पश्चात् अ (वि)मलकीर्त्तिदेव हुए। (शेष अपठनीय है।)

[JASB, XXXI, p. 404, a.; p. 423–424, t. & tr.

६४१

मारङ्गी,—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष धातु = १४५६ ई० (लू० राइस)]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिनशासनम्।
निरुपम-धातु-वत्सरद माधव-मासद शुद्ध-सप्तमी -।
रवरकरवारदोळ् दिनकरोदयवागद मन्ने सन्द सच् -।
चरिते जिनेन्द्र-चन्द्र-पद-पद्मननोप्पिरे चित्त-वृत्तियोळ्।
··· रुयिसि नाडे भागिरथि ताळ्दिदळायत-स्वर्ग-सौख्यमं ॥

अभवं श्री-वीतरागं तनगे निबदोळं दैवमा-योगि •••।
विभु सिद्धान्ताख्यराराध्यरु जिन-मत-वाराशि-संपूर्ण-चन्द्रं ।
प्रभु बुळ्ळप्पं पितं भागुर-गुणवति मल्लव्वे तायेन्दोडी-सद्-
विभ ʻनोन्तर् •• अरियिरे धरणी-चक्रदो •• ••• ॥
सुखमय ••• ••• ••• भागीर् [अ] थि निरुपम-सौख्य यिप्प ••• प्रीतियं
••• ••• ••• ••• ••• भद्रमस्तु ••• •••

[भागीरथीका, जैन विधि-पूर्वक, मृत्युका स्मारक यह है। उसके पिताका नाम प्रभु बुल्लप्प, और मांका मल्लव्वे था]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 331]

६४२

चित्तोड़;—संस्कृत ।

[सं० १५१४=१४५७ ई०]

[एक चिकनी चट्टानपर जिसके बीचमें चरण-चिह्न हैं और जिसके अन्तमें गणेश और भैरवकी मूर्त्तियाँ हैं।]

(१) ॥ संवत् ५१४ (१५१४) वर्षे मार्ग (र्ग)-शुदि ३ श्री-भर्तृपुरीय-गच्छे श्री-चूडामणि-भर्तृपुर-महा-दुर्गे श्री-गुहिलपुत्रवि-

(२) हार-श्री-वडादेव-आदिजिन-नामाङ्के दक्षिणाभिमुखद्वारगुफा (म्फा) यामेकविंशति-देवीनाम् चतुर्णाम् ••• पा-

(३) लानाम् चतुर्णाम् विनायकाना च पादुका-पट्टित-सहकार-सहिता च श्री-देवी-चित्तोदरि-मूर्ति (र्तिं) स्था • (पिता ?)

(४) श्री-भर्तृगच्छीय-महा-प्रभावक-श्री-आम्रदेव-सूरिभि ॥ अस्या मूर्त्तौ सा० सोमा-सु०-सा०-हरपालेन मातृ-लोक-

(५) श्रेयसे = पुण्योपार्जना व्यधीयत ॥

[लेख स्पष्ट है। इसके अन्दर आये हुए 'भतृ॑पुर' से भरतपुरका संकेत होता है, क्योंकि यह भी एक 'महादुर्ग' कहा जाता है। चट्टानके मध्यमें चरणचिह्नोंके नीचे "श्री-जाशि (खि) णि" अक्षर खुदे हुए हैं।]

[ASWI, Progress Report 1903-1904, p. 59, t.]

६४३

बवागञ्ज (माळवा);—संस्कृत।

[सं० १५१६=१४५९ ई०]

मन्दिरके दरवाजे पर।

स्वस्ति **श्रीसंवत् १५१६ वर्षे** मार्गशीर्षे वदि ६ रवौ सूरसेन-मेदमुन्द-राज्यश्रीकाष्ठासङ्घे **माथुरगछे (च्छे) पुष्करगणे** भट्टारक श्री**श्रीक्षेमकीर्त्ति-देवः** व्रतनियमस्वाध्यायानुष्ठान-तपोपशमैकनियमभट्टारक **श्रीहेमकीर्त्तिदेव**शिष्य महावादवादीश्वर **रायवादी**पितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिनल **श्रीकमल-कीर्तिदेवा** शिष्यजिनसिद्धान्तपाठपयोधिनायकान्तरोपासीन मण्डलाचार्य **श्री-रत्नकीर्त्तिना** जीर्णोद्धारः कृत बृहच्चैत्यालयपार्श्वे दशजिनवशतिकाहा कारोपीता भट्टेश्वर द्वितीयसं डालुभार्य्याखेतु द्वि (०) ना (०) पद्मिनी खेतुपुत्रसं० वाढास० पारस एतै इन्द्रजित प्रतिमा प्रतिष्ठाप्य नित्यमर्च्चयन्तो पूजयन्तों वा शुभं तावच्छ्रीसङ्घस्य।

मन्दिरके उत्तरकी ओर।

संवत् १५१६ वर्षे शिल्पनागसुतरवालाशिलप्डाला सूत्रशाला जीर्णो यत।

मन्दिरके पश्चिमकी ओर।

आचार्यश्री**रत्नकीर्त्ति**पंडितपाहु।

मन्दिरके दरवाजेके स्तम्भ पर।

बोगीजंगमयाउसबोतराउल ।

प्रतिमाके चरणपरसे ।

कण्ठरनाथसाधु

चतुर विहतिहिलि

साकसाला हइ प्रणति

लेख स्पष्ट है ।

[JASB XVIII, p. 951-953, No 3, t. & tr.]

६४४

पर्वत आबू—संस्कृत ।

[सं० १५१८ = १४६१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat Res., XVI, p. 298-299, Nos XIII & XIV, a]

६४५

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १५२२=१४६५ ई०]

[नेमिनाथ मन्दिरके दक्षिणकी तरफके प्रवेशद्वारके प्राङ्गणमें टूटे हुए खम्भेकी पश्चिमी दीवारपर]

संवत् १५२२ श्री मूलसंघे श्री हर्षकीर्त्ति श्री पद्मकीर्ति भुवनकीर्त्ति ... .

अनुवादः—सं० १५२२, श्री मूलसंघके श्री हर्षकीर्ति, पद्मकीर्ति, भुवनकीर्ति, ...

[ASI, XVI P. 355, No 13, b.]

६४६

भारङ्गी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष पार्थिव = १४६६ ई० (लू. राइस)]

[भारङ्गीमें, कल्लेश्वर-बस्तिके दूसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
स्वस्ति श्रीमति मूल संघ-तिलके श्री-नन्दि-संघोद्भवे
स्वच्चे (च्छे) पुस्तक-गच्छ-शालिनि शुभे देशी-गणे यस्सुखी।
स्याद्वादारि-नगाशनिर्गुण-मणि-श्रेणी-महीयः-खनिः
श्रीमानेष जयत्यल श्रुति-मुनि कैवल्य-जन्मावनिः ॥
शिष्यस्तस्य मुनेस्तिरस्कृत-तमस्स्तोम समुद्यश्चिरात्
स्याद्वादचलतश्रिदम्बरतले देदीप्यमानस्सदा।
दीन विश्वमिद कृपामृतभरैरुज्जीवयन् पावन
चिह्नातीत-कलानिधिर्विजयते श्री-देवचन्द्रोमुनिः ॥
तच्छिष्योऽभयचन्द्र-चन्द्र-करुणा-सौधोल्लसन्निर्भरी-
सम्पूर्णामल-मानसः कलि-युगे श्रेयाश्च गोपीपतेः।
सूनुस्सूनृत-धर्म्म-कर्म्मणि रत श्री-जैन-चूडामणिर्
दूरं बुलप इत्ययं प्रभुरय ख्यात्यात्मना शोभते।
यिन्तु नेगळ्नेचत्ता-विभुविप्पं ग्रामवावुदेन्दडे ॥
सारं गुत्तिगे सन्दु बप्पं पडिनेण्टुं-कम्पणं भूमियोळ्।
सारं नागरखण्डमन्तदोरोळिर्पा-ग्राम-सन्दोहदोळ्।
भारङ्गी-पुरमन्न-षण्ड-लसित चैत्यालयानीक-वि-।
स्तारोचत्-कलशांशु-शोभित······सारं जयत्-संस्तुतम् ॥

आ-पुरमं भू-कान्ता- ।
नूपुरमं नूत्न-रत्नमय-गोपुरमम् ।
भूपति-समाभिरामम् ।
गोप-प्रभु-सुनु-बुळ्ळपार्य्यं पोरेवम् ॥
कलियं माङ्करिसित्त तन्न चरितं कल्यावनीजातदोळ् ।
चलमं माडिदुदत्युदारते महा-धैर्य्यं सुरोर्व्वीध्रदोळ् ।
मलेतत्तेन्दोडे बुळ्ळप-प्रभुगे मन्याचारदिं चागदिम् ।
विलसद्-धैर्य्यदिनी-धरातळदोळन्यर् प्पोलतेनार्प्परे ॥
कं ॥ चागदे घन-राशियनुरु- ।
भोगदे तन्नायुराशियं समेयिसिदम् ।
त्यागं श्रेयांसनोळुरु- ।
भोगं सुकुमारनल्लि समनेम्बिनेगम् ॥
वृ ॥ यिनितुं चोद्यमे राय-राज-गुरु-लोकाचार्य्यरास्थान-रञ्- ।
जन-विद्विजन-चक्रिवर्तिगळनिं दुर्व्वादि-मातङ्ग-भे- ।
दन-पञ्चाननरोल्दु बोधिसिदवर् सिद्धान्त-योगीन्द्ररेन्द् ।
एने बुळ्ळप्पनोळुद्ध-कीर्त्तियुमनूनाचारमुं धर्म्ममुम् ॥
चिरमल्लितनुवाप्त-पूजेयोदवं सत्-सेवेयं भक्तियिम् ।
गुरुगळिग्गम्मिगे माळ्पर्प्परो पेरर् मेणागरो माळ्पेनाम् ।
चिरमं धर्म्ममतेन्दु कोट्टदके भू-दानङ्गळ दीर्घ्घको- ।
त्करमं कट्टिसि बुळ्ळप-प्रमुवदेम् धर्म्मक्कडप्पादनो ॥
कं ॥ जिन-पद-युगदोळ् जिन-मुनि- ।
जन-सेवेयोळुचित-दानदोळ् सलियिसिदम् ।
मनमं तनुवं घनमम् ।
विनय-परं बुळ्ळपार्य्यनचलित-धैर्य्यम् ॥

इन्तु सुखदिनिर्प्यन्नेगं समाधि-कालमत्यासन्नमागे ॥

वृ॥ जिन-गतियं जिनेश्वरन नाममना-जिन-नाम-सङ्ख्येयम् ।
मनदोळमास्य-पङ्कजदोळं कर-शाखेयोळं समाधि सन्- ।
ननियिप कालदोळ् निलिसि सर्व्व-निवृत्तिगे सन्दु मुक्ति-धा-
धन-मननैदिदं त्रिदश-धाममनी-क्रमदिन्दे बुळ्ळपम् ॥

व ॥ अन्तु पञ्च-परमेष्ठिगळ ध्यानदिं ता पडेद समाधि-कालद जय-क्रम मेन्तेन्डोडे ॥

अदु मूवचैदरिन्द क्रमदोळे पदिनारागि मत्तारवोळ् सन्- ।
दुदु बन्दसैदरोळ् नाल्करोळेराडरोळिर्द्दोन्दरोळ् विन्दु नाका-
स्पदमं सैतित्तुदात्त-सत्व-नय-विलसद्-वर्ण्ण-सन्दोहमीयन्- ।
ददिना-जिह्वाग्रदोळ् सन्मतियिनेनलदेम् धन्यनो बुळ्ळपार्य्यम् ॥
सरिगाणेम् धरेयह्नि चागिगलोळेन्नोळ् पोल्के-वप्पन्नरम् ।
सुर-भूजं समनप्पोडप्पुददना नोळ्पेम् समन्तेम्बवोल् ।
धरेयोळ् पोम्-मले सोर्द्दे पाञ्जिनोळे चागं गेय्दु सोपानमागू ।
इरे धर्म्मं त्रिदिवक्के बुळ्ळपनमर्त्यावासमं पोर्द्दिदम् ॥
मान्यो राज-सभासु बुळ्ळप-विभुर्य्यः पार्त्थिवे वत्सरे
मासे भाद्रपदे त्रयोदशि-तिथौ पक्षेऽर्क्कवारे सिते ।
श्रीमत्पञ्च-नमस्क्रियामय-सुधा स्वैर पिबन् श्री-गुरून्
ध्यास् ··· ··· समाधि-विधिना स प्राप दिव्यं श्रियम् ॥
आ-कल्पं भुवि बुळ्ळ [प]-प्रभु-यशस् स्थाय्यस्तु सं ··· ···
··· ··· ··· इत्यचीकरदिमामस्मै निषद्या कलाम् ॥
तत्प्रेमात्म ··· ··· नाथ-परमाराध्य ·· ··· ··· ।
··· ··· ··· चन्द्र-सूरिरनिशं जीयादिदं शासनम् ॥
वर्प-सहस्रदोळ् ··· दश-स ··· ··· ··· ··· ··· ।
वर्षमे पार्त्थिव पुदिये भाद्रपदं वर-मासदोन्दु ··· ।

··· ··· ··· सित-प ··· ··· ··· प्रभा- ।
कर-वर-वारमागे विभु-त्तुळ्ळपनेदिद ··· ··· ··· ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । मूल-संघ, नन्दि-संघ, पुस्तक-गच्छ, और देशि-गणके श्रुत-मुनिकी प्रशंसा । उनके शिष्य देवचन्द्र मुनि थे । उनके शिष्य गोपिपतिके पुत्र तुळ्ळप थे, जिन्हें अभयचन्द्रकी कृपासे यह अवसर प्राप्त हुआ था । जिस गाँवका वह अधीश था, वह नागरखण्ड था, जो १८ कम्पण देशके गुत्तिका गाँव था । इस नागरखण्डके गाँवोंमें एक गाँव मारङ्गि था, जिसमें उत्तमोत्तम चैत्यालय थे । तुल्लप की प्रशंसा, जिसने भूमिदान किया था और ताळाव (दीर्घिका) बनवाये थे । अपना अन्त नजदीक जानकर, उसने सभी नियत विधियोंको किया, और समाधि-की विधिसे (उक्त मितिको), स्वर्गको गया ।]

[EC, VIII Sorab tl, No 330]

६४७

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १४२४=१४६८ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res. XVI, p. 301, No. XVII, a.]

६४८

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १५२१ = १४७२ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res. XVI, p. 299, No. XV, a.]

६४९

यिडुवणि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३१५ = १४७३ ई०]

[यिडुवणिमें, पार्श्वनाथ बस्तिके पाषाणपर]

श्री-पार्श्व-तीर्त्थेश्वराय नम निर्विघ्नमस्तु ॥
श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्री-पञ्च-परमेष्ठिभ्यो नम· ।
नमस्तुङ्ग-इत्यादि ॥

स्वस्ति समधिगत-भु[व]नाश्रय श्री-पृथ्वी-मनो-वल्लभ महा-राजाधिराज राज-परमेश्वरनीश्वर-कुल-तिलक श्रीमन्महा-विरूपाक्ष-महारायरु राज्यवनु सुख-संकथा-विनोददि प्रतिपालिसुत्तमिद्दल्लि श्रीमन्महा-प्रभु मलेय-हुलि-मार्त्तण्ड निड्डिगयेण्टु-दण्डिगेय मनेयर गण्ड श्रीमन्महा-प्रभु अयिसूर मुन्दुवण्ण-नायकर वर-कुमार भैरण्ण नायकरु होरुगुप्पे हेब्बयल-नाडनु प्रतिपालिसुत्तमिद्दलि इडुवणिय बलिय-गौडर मग नगिर-ठाविण आनेवळिगे अप्रगण्यरप्प कोडे-हडप दीप-मालेय कम्म अङ्क-टेङ्के-मुत्ताद-तेज-मान्य-ननुळ्ळ हैवण्ण-नायकरु वुक्कण्ण-नायकर अळिय माळक-नायकितियर मग आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दत्तावघा[त]रुमप्प पारिस-गौडरु तम्म जोडय मयिरण्ण-नायकरिगू तमगू पुण्य-वृद्धि-यशो-वृद्ध्यर्थ-निमित्तवागि तम्म दानमूलद-सीमेय यिडुवणेयोळगे श्री-पार्श्व-तीर्थङ्कर-चैत्यालयवनु माडिसिदनु तन्मुहूर्त्तके शुभमस्तु ॥ स्वस्ति श्री जयाभ्युदय शालि-वाहन शक-वर्ष १३१५ नेय नन्दन संवत्सरद वैशाख-शुद्ध १३ यन्दु सूर्य्य-प्रतिष्ठेयाद घ २ ळिगेयल्लि चतुस्सघ-समन्वितदिं पञ्च-कल्याण-महोत्साहदिं सु-मुहूर्त्तदिं श्री-पार्श्व-तीर्त्थेश्वर प्रतिष्ठेयं भैरण्ण-नायकर कारुण्य-वर-प्रसाददिं पारिस-गौ[ड]रु तम्मोडेरु भैरण्ण-वोडेयरिगू तनगू अभ्युदय-निश्रेयस-सुख-प्राप्ति-निमित्त-वागि माडूसिदुदक्के भद्रं शुभं मङ्गलम् ॥

स्वस्त्यनवरत-विनमदमरेन्द्र-मौळि-माणिक्य-मयूख-बालातप-विलसित-पादारविन्द श्री-मदनादि-ससिद्ध-प्रसिद्धरुमप्प चिड्डवणिय श्री-पार्श्व-तीर्त्थेश्वररिगे मलेय-हुलिय मार्त्तण्डनिडिग येण्टु-दण्डिगेय मन्नेयर गण्ड उभय-नाना-देशिगळगे तवर्म्मनेयाद ऐश्वर्य्यपुर-वराधीश्वर श्रीमन्महाप्रभु **भैरण-नायकरु** तम्म अम्म सिरु-मादेवियवरिगू तमगू तम्म कारुण्य-वर-प्रसाददिं सेवेयं माडुत्तं चिद्द पारिस-गौडरिगू पुण्य-वृद्धि-यशो-वृद्धयर्थं-निमित्तवागि कोट्ट धर्म्म-शासनद भाषा-क्रमवेन्तेन्दरे। नाऊ आळुत्तं चिद होर-गुप्पे हेव्वयल-नाडोळगण अप्पु-गौडन लक्कणन पाल कुळ ग २ = २ अन्तरदलू चिप्पत्तु-यरडु-हणविन कुळवनु श्री पार्श्व-तीर्त्थेश्वर नित्य-पूजा-महोत्साहक्के अमृतपडि यरडु-होत्तिन हिरिय-देवर हाल-धारे मृत्युञ्जय चक्र-पूजे पञ्चामृतद अभिषेक सिद्ध-चक्र-पूजे सिद्धर हाल-धारे अडके यले गन्ध धूप एण्णे वाद्य-मुन्ताद समस्त-पूजा-वेच्चके नावु सोम-सूर्य-ग्रहणदल्लि धारा-पूर्व्वकदिं बिट्टु कोट्ट यीग २ = २ हणविन कुळ-स्थळद वृत्ति-भूमिगळ विवर (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा है) यिन्ती-वृत्ति भूमिगळ चतुस्सीमेगळिन्दोळगाद मोदल सिद्धायि ई-मोदल सिद्धाय अदक्के बन्द अडके-यले-मुन्ताद होरगुप्पे हेव्वयल-नाडोपादियल्लि बन्द नाना-उपोत्र मुन्दे येनु बन्द हदिके-होदके-मुन्तागि एल्लववनू नाऊ नम्म स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सामन्त-दायादानुमतदिं नम्म स्व-रुचियिं चन्द्र-सूर्य-अग्नि-वायु-साक्षियागि...... ण्ण-नायकर वर-कुमार भैरण्ण-नायकरु बरसिकोट्ट शीला-शासनक्के मङ्गळ महा श्री श्री (यहाँ हमेशाका अन्तिम श्लोक तथा दानकी विस्तृत चर्चा आती है)।

स्वस्ति श्री **विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वर्ष १३९६ नेय विजय-संवत्सरद कार्त्तिक शुद्ध ५ वुद (ध) वारदलु** स्वस्ति श्रीमद्-वादीन्द्र-**विशालकीर्त्ति-भट्टारक-स्वामिगळ** वुपदेशदिन्द स्वस्ति श्रीमन्महा-प्रभु-मुण्डुवण्ण-नायकर कुमार भैरण्ण नायकरु तमगे अभ्युदय-निश्रेयस-सुख-प्राप्ति-निमित्तवागि **मळेयखेडद नेमिनाथ-स्वामिगळ** नित्य पूजा-महोत्सवक्के बिट्ट धर्म्म-शासनद क्रमवेन्तेन्दरे (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा आती है) नम्म स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सामन्त-दायादानुमतदिन्दलू नाऊ नम्म स्व-रुचियिन्द चन्द्र-सूर्य्य-वायु-अग्नि-

साक्षियागि भैरण्ण-नायकर कुमार चिम्मडि-भैरवेन्द्रनू बरद शिला-शास[न]के मङ्गल महा श्री ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

इन्द्रः पृच्छति चाण्डालीं किमिदं पच्यते त्वया ।
श्वान-मांसं सुरा-सिक्त कपालेन चिताग्निना ॥
देव-ब्राह्मण-वित्ताना बलादपहरन्ति ये ।
तेषा पाद-रजो-मीत्या चर्मणा पिहितं मया ॥

(हमेशाका अन्तिम श्लोक) ।

[पार्श्व-तीर्थेश्वरको नमस्कार । यह निर्विघ्न होवे । जिन-शासनकी प्रशंसा । पञ्च-परमेष्ठियोंको नमस्कार । शम्भुको नमस्कार इत्यादि ।

जिस समय महाराजाधिराज, राज-परमेश्वर, ईश्वर-कुल-तिलक, महाविरूपाक्ष महाराय शान्ति एवं बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे—और महाप्रभु, अयिसूर मुन्दुवण्ण नायकका पुत्र भैरण्ण-नायक होरुगुप्पे हेब्बयल्-नाड्की रक्षा कर रहे थे;—इदुवणि बलिय-गौडका पुत्र, जो नगिर-ठावुमें आनेवाळिगेमें अग्रणी था, हैवण्ण-नायक, तथा बुकण्ण-नायकका दामाद, मालक-नायिकितिके पुत्र पारिस-गौडने ताकि पुण्य और ख्याति स्वय अपनी तथा अपने शासक भयिरण्ण-नायककी बढ़ सके,—अपने दानमूल सीमेमें इदुवणेमें पार्श्वनाथ-तीर्थङ्करका चैत्यालय बनवाया था । और (उक्त मितिको) (पूर्व विगतोंको दुहराते हुए) भगवान्की स्थापना की गयी थी ।

(नाना उपाधियोंवाले) इदुगणिके पार्श्व तीर्थेश्वरके लिये, ऐश्वर्यपुर-वराधीश्वर, महाप्रभु भैरण्ण-नायकने, जिससे कि पुण्य और ख्याति अपनी माता सिरु-मादेवी तथा अपनेतक, और उसकी सम्पत्तिके दास पार्श्व-गौडतक बढ़ सके,—निम्नलिखित शासन (लेख) प्रदान किया;—यहाँपर दैनिक पूजा, महोत्सव, भेंटें, तथा अभिषेक आदिके लिये तथा और भी खर्चोंके लिये,—हमने

सूर्यग्रहणके समय (उक्त) भूमियाँ, सूर्य और चन्द्रको साक्षी बनाकर दी हैं। हमेशाका अन्तिम श्लोक।

पारिस (पार्श्व)-गौड तथा दूसरे गौडोंने (जिनके नाम दिये हैं) (उक्त) भूमियाँ प्रदान कीं।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 60]

६५०

गोडि;—संस्कृत-ध्वस्त।

[सं० १६३६ = १४७६ ई०] श्वेताम्बर लेख।

[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh (ASWI, Selections No. CLII), p. 88, No. 40, t.]

६५१

भिलरी,—संस्कृत और गुजराती।

[सं० १५३८ = १४८१ ई०] (श्वेताम्बर)

[J. Kirste, EI, II, No. V, No 1, (p 25), t. & tr.]

६५२

हुरवे,—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक सं० १४०४ = १४८२ ई०]

[हरवे (उय्यस्वळि्ळ परगना) में, शिवलिंगय्याके खेतके दक्षिणकी तरफ एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति श्री शक-वर्ष १४०४ सन्द वर्त्तमान-शुभकृत्-संवत्सरद चैत्र -शु ५ लु हुरवेय देवप्पगळ मग चन्द्रप्पनु तम्म कुल-स्वामी हरवेय बस्तिय आदि-परमेश्वरन

अमृत-पडि चातुर्व्वण्णंद दान तदर्त्थवागि तगडूर प्रभुगळु एनेगे दानार्त्थवागि कोट्ट क्षेत्रद स्थान-निर्देशद विवर । अरिन्द नैऋत्य-दिक्किनल्लि विभूतिय लिङ्गप्पयगळ गद्दे होल ग ३० तेङ्कलु विभूति-नञ्जप्पन होल तोटदिं पडुवलु येरे-होलक्के होह वोणियिं बडगलु शिववैय्यन अड्डुविं मूडण चतुस्सीमेयोळगाद स्थळ होल गद्दे अडके-तेङ्गु-एलेय-तोट ओळगाद क्षेत्रद सर्व्वं मान्यवनू स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सापत्न-दायादाद्यनुमति पुरस्सरवागि आदीश्वरगे एनेगे धर्म्मार्त्थवागि त्रिवाचा कोट्टेनु । (हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[हरवे के देवप्पके पुत्र चन्दप्पने, हरवे बस्तिके अपने कुल-देवता आदि-परमेश्वरकी पूजा का प्रबन्ध करने, तथा चतुर्व्वर्णको दान देनेके लिये, तगडूरके सरदारोंके द्वारा दी गयी भूमिका, सूखे खेतों, धान्यके खेतों, सुपारी, नारियल और पानके उद्यानों सहित—जो कि इस भूमिमें लगे हुए थे, दान किया । यह दान उसने अपनी स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सौतेली स्त्रियोंके पुत्रों और दायादों (उत्तराधिकारियों) की अनुमतिसे किया था ।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No., 189]

६५२

चित्तौड़—संस्कृत ।

[सं० १५४३ तथा शक १४०८ = १४८६ ई०]

[गोमुखके पासके जैन-मन्दिरका लेख जो कि एक चट्टानपर है, जिसमें ३ प्रतिमायें उत्कीर्ण हैं ।]

(१) ॥ (चिह्न) ॥ सम्वत् १५४३ वर्षे शाके १४०८ प्र० मार्ग(र्ग) शीर्ष वदि १३ तिथौ गुरु-दिने । श्री-चित्रकूट-महा-दुर्गे । श्री-रायमल्ल-राजेन्द्र-विजे (ज) य राज्ये । सकल-श्री-सङ्घेन । स-तीर्थं । श्री-स (सु)कोशलेश-प्रतिमा कारिता । प्रतिष्ठि-

(२) ता । श्री-खरतरगच्छे । श्री जिनसमुद्र-सूरिभि (र्भ) ॥

['रायमल्ल' स्पष्टत वही राजमल्ल है जो कुम्भकर्णका पुत्र है, और उसके लिये विक्रम सं० १५४३, इस लेख द्वारा निर्दिष्ट, सबसे पूर्ववर्ती मिति है। लेखमें खरतरगच्छके जिनसमुद्र-सूरि द्वारा सुकोशलेश या ऋषभदेव तथा अन्य तीर्थों (जो कि दो से अधिक नहीं हो सकते हैं, क्योंकि पाषाणपर उत्कीर्ण केवल ३ मूर्त्तियोंका ही उल्लेख है।) की प्रतिमाओंकी स्थापनाका वर्णन है।]

नोट —जिनसमुद्रसूरिके विषयमें जाननेके लिये Ind Ant Vol XI. p. 249, No 58 देखना चाहिये।

[ASWI, Progress Report 1903-1904, p 59 t.]

६५४

होगेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४०४=१४८७ ई०]

[होगेकेरीमें, पार्श्वनाथ वस्तिके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥
श्रीमद्भू-भुवन-प्रसिद्धतर-जम्बूद्वीप-मध्यस्थ-तुङ्-।
गामर्त्याचल-दक्षिणान्त्य-भरतार्य्या-खण्ड-नैर्ऋत्य-दिक्-।
सीमोपाब्धि-तटोपकण्ठ-विलसद्-वर्णाश्रमाकीर्ण भू-।
धाम तौळव देशमिप्पुदिल्लेयोळ् सताङ्ग-सम्पत्तियिम्॥
अदरोळ् माङ्गल्यगेहं बहु-विध-विभव-प्रोल्लसच्चैत्यगेहम्।
सुदती-सन्तान-जन्मालयमखिल-सुखि-त्यागि-भोगि-प्रजाहम्।
मदवद्-हस्त्यश्व-यूथ-प्रबळ-पटु-भटाकीर्णमुत्तुङ्ग-सौधो-
दय-राजद्-राज-संगीतपुरमदेशेयल् प्रौढ़-सङ्गीयमानम्॥
कवि-गमकि-वादि-वाग्मि-।
प्रवेक-सङ्गीत-विषय-साहित्य-रसो-।

द्भव-चतुर-संस्तुत- ।
विविध-कला-भङ्गि-यंगि सङ्गीतपुरम् ॥
अद्रनाळ्वं साळुवेन्द्र-क्षितिपति रिपु-मत्तेभ-कण्ठीरवं शा- ।
रद-चन्द्रचन्द्रिका-निर्म्मळ-ललित-यश -पूरिताशान्तराळम् ।
मदन-प्रध्वंसि-चन्द्रप्रभ-जिन-चरण-द्वन्द्व-संसक्त-चित्तम् ।
सुदती-नेत्रान्तरङ्गोत्सव-कर-निज-सौभाग्य-कन्दर्प्प-देवम् ॥

अन्तातनखण्डित-प्रचण्ड-प्रताप-खर्व्वं-गर्व्वं-निर्ज्जित-भीष्म-ग्रीष्म-मार्त्तण्ड-मण्डलनुम-प्रतिहत-देदीप्यमान-निज-तेज -पुञ्जनुं दन्दह्यमान-रिपु-वधू-हृदयनु विशाल-भाल-तल चोचुम्ब्यमान-जिन-चरण-नख-मयूखनुं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळन-क्रिया परिष्ठनुं चतुर-चतुष्षष्ठि-कला-कलापनुं रत्न-त्रय-मणि-करण्डायमानान्त करणनुं श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर श्री- साळुवेन्द्र-महाराजं नि कण्टकनागि सुखदिं राज्यं गेय्युत्तम् ॥

विनुत-प्रासाद-चैत्यालय-तल-विलसन्-मण्डपौघङ्गळिं कम्-
चिन-मान-स्तम्भदिन्दा-पुरद वनद विन्यासदिं लोह-पाषा-
ण-निबद्धानेक-बिम्बङ्गळिनुपकरण-व्रातदिं नित्य-दाना-
र्च्चनेयिन्दम् शास्त्र-दानं नेगळे नडसिदं धर्म्मम शाळुवेन्द्रम् ॥

अनितु राज-धर्म्ममं धर्म्ममुमं पालिसुत्तम् ।
बरे साळवेन्द्रन चित्तम् ।
परितोषमनेयिदुवन्ते सेवा-रत्- ।
परनागि भक्ति-भरदिन्द् ।
इरे विगत-च्छद्म सुगुण-सद्मं पद्मम् ॥
हितनीतं प्रिय-सत्य-वाद-निपुणं धर्म्मार्त्थ-सम्पादकम् ।
चतुरं सच्चरित्रं दयार्द्र-हृदयं शाश्वतानेम्मन्वया- ।
गतनी-पद्मण-मन्त्रियेन्दडे कुळिर्-क्कोडल्के साल्वेन्द्र-भू-
पतिया-चन्द्र-धरार्क्कमिप्तनुरे मान्य-ग्राम-सम्पत्तियम् ॥
श्रीमद्-विश्रित-शालिवाहन-शकाब्दं नन्द-खाब्धीन्दु-सं-
ख्या-मानं नडेव प्लवंग-गत-पुष्य-स्याम-सत्-पञ्चमी- ।

स्तोमं गीष्पतिवारमोल्दिरे मनो-वाक्-काय-शुद्धं चतुस्-
सीमान्तोर्व्वियनष्ट-भोग-सहितं हेमाम्बु-धारा-युतम् ॥
प्रमुगळ् पुर-जन-परिजन- ।
सभामदर्म्मेञ्चे साळुवेन्द्र-नृपाळम् ।
विभवदि पद्मण-मन्त्रिगे ।
शुभमत्तेन्दोगेयकेरेयनवनोल्दित्तम् ॥

अन्तु स-हिरण्योदक-दान-धारा-पूर्व्वकमागि कोट्ट वोगेयकेरेय-ग्राम-वोन्दर चतुस्सी-मेयोळगण गद्दे-बेद्दलु-तोट-तुडिके-कळ-मने-कोटार-होन्नु-होम्बळि-वरि-बङ्कु-काणिके-कट्टाय-बेडिगे जिनगु-बेसवोक्कलु-अड्ड-सुङ्क-टङ्कसाळे तळवारिके निधि-निक्षेप-जल-पाषाण-अक्षिणि-आगामि-सिद्ध-साध्यमेम्बष्ट-भोग-सर्व्व-स्वाम्य-सर्व्वादाय-प्राप्ति-सहित-मागिया-चन्द्रार्क्क-स्थायियागि पद्मणामात्यननुभविसुवुदेन्दु कोट्ट सर्व्वमान्य-ग्राम-दान-शासन-वचनम् ॥

[जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र, उसमें तौलव-देशका वर्णन । उसमें संगीतपुर नगर तथा उसके राजा शाळुवेन्द्रका वर्णन ।

जिस समय महा-मण्डलेश्वर शाळुवेन्द्र-महाराज सुखसे राज्य कर रहे थे :— सुन्दर, ऊँचे-ऊँचे चैत्यालयों, मण्डपसमूहों, घण्टी सहित मानस्तम्भों और उद्यानोंसे साळुवेन्द्र धर्म्मको बढा रहे थे । उनकी सेवामें तत्पर पद्म नामका व्यक्ति था । यह पद्मण (पद्म) हमारे खानदानमे से हुआ है अत· राजाने मन्त्री-पद्मणको ओगेयकेरे नामका गाँव दिया । उस गाँवमें बहुतसे शस्य (चावल) के खेत थे । ये सब उसने उसको दिये तथा इन सबका शासन (लेख) भी लिख-कर दिया ।]

[EC, VIII, Sagar tl, No 163, Ist part]

६५५

ह्वोगेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४१२ = १४९० ई०]

[ह्वोगेकेरीमें, पार्श्वनाथ बस्तिके एक पाषाणपर]

नमस्तुङ्ग-इत्यादि ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरं **सङ्गि-राय-वोडेयरवर** कुमार **यिन्दगरस-वोडेयरु संगीतपुर**-वर-राजधानियलु यिद्दु हाडवल्लिय राज्य-मुन्ताद समस्त-राज्यङ्गळनु सद्धर्म-कथाप्रसङ्गदिं प्रतिपालिसुत्तं यिर्द्दन्दिन **शालिवाहन-शक-वरुष १४१२ नेय सौम्य-संवत्सरद कार्त्तिक-ब ७ शुक्र**वारदलु श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर **यिन्दगरस-वोडेयर** निरूपदिन्द **बोम्मण-सेट्टियर** मग **पदुमण-सेट्टियरु** बरसिद धर्म्मशासनद माषा क्रमवेन्तेन्दरे यिन्दगरस-वोडेयर कैयलु **पदुमण-सेट्टि** मूलवनु कोण्डु आळुत्तं यिद **वोगेयकेरेय**-बोळगे चयि (चै) त्यालयवनु कट्टिसि पारिश्वतीर्त्थेश्वर प्रतिष्ठेयनु माडि आ-पारिश्व-तीर्त्थेश्वररिङ्गे प्रतिदिन त्रि-काल-अभिषेक-पूजे मूरु कार्त्तिक-पूजे मूरु नन्दीश्वरद अष्टाह्निक शिवरात्रे अक्षय-तदिगे श्रुत-पञ्चमी कैयक्रिय होयिर्वाळ्ल जीवदयाष्टमी कैयक्रिय सूसवळ्ळि गर्भावतरण जल्मा (जन्मा) भिषेक दीक्षा-कल्याण केवल-ज्ञान-कल्याण निर्व्वाण-कल्याणङ्गळेम्ब पारिश्व-तीर्त्थेश्वर पञ्च-कल्याण-मुन्ताद नैमित्तिकङ्गळल्लि माडुव अभिषेक-पूजे-धर्म्मङ्गळिङ्गे अङ्गरङ्ग-नैवेद्यगळिङ्गे वोन्दु-तण्डु-तपस्विगळ आहार-दानके पूजक-मान्दारिगळु मालेयवरु मुन्तादवरिगे विङ्गडिसि माडिद धर्म्मस्थळङ्गळ विवर (शेषमें दानकी विस्तृत चर्चा आदि है)।

[शम्भुको नमस्कार इत्यादि।

जिस समय महा-मण्डलेश्वर सङ्गी-राय-वोडेयर् का पुत्र इन्दगरस- वोडेयर् राजधानी सङ्गीतपुरमें था :—(उक्त मितिको) महा-मण्डलेश्वर इन्दगरस-

वोडेयरके हुक्मसे,-बोम्मण-सेट्टिके पुत्र पदुमण-सेट्टिने एक धर्म-शासन-पत्र लिखवाया, जिसकी भाषा इस प्रकार थी :—इन्दगरस-वोडेयरके हाथोंसे, पदुमण सेट्टिने अपने द्वारा शासित वोगेयकेरेके मौलिक अधिकारको प्राप्त करके उसने वहाँ एक चैत्यालय बनवाकर पार्श्वतीर्थेश्वरको विराजमान किया। तथा पूजा और अभिषेक का प्रवन्ध करनेके लिये (जिसकी कि विस्तृत सूची दी हुई है) उसने (उक्त) भूमियोंका दान दिया। और इन सब लिखे हुए धर्मोंको चैत्यालयके उत्तरमें बनवाये गये मकानमें सुरक्षित रक्खा। मेरे एक हजार वर्ष बाद मेरे पुत्र, मेरी पीछेकी पीढ़ी और सन्तान मकानपर अधिकार कर सकते हैं, लगानकी देखभाल करते हुए (उक्त) धर्मोंको सञ्चालित कर सकते हैं। प्रत्येक चीजका खर्च नियमित रूपसे व्यवस्थित कर दिया गया है। (अन्तका लेख पढा नहीं जा सकता।)]

[EC, VIII, Sagar tl, No 163, III part.]

६५६

विदरूरु,—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक १४१३ = १४९१ ई०]

[विदरूरुमें, जनार्दन मन्दिरके ताम्बेके पत्रपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥
श्रीमत्-तौळव-देश-मिश्रित-महा सङ्गीत-सत्-पत्तने
बाभातीन्द्र-महीन्द्र-चन्द्र-तनयः श्री-सङ्गि-राजात्मज।
भास्वत्-काश्यप-गोत्र-सोम-कुलजं श्री-सङ्करास्वोदर-
क्षीराम्भोधि-सुधाकरो नुत-जिन श्री-साळुवेन्द्राधिप॥
साक्षीकृत्य निज-प्रताप-दहनं गन्धर्व्व-पादाहति-
प्रोद्भूतोद्भट-धूळि-काण्ड-वसनं संयोज्य नीराजनम्।

खड्गाखड्गि-ज-विस्फुलिंग-निवहैर् द्विट् कण्ठ-भेदारवै
र्वाचानोम्मडि-साळुवेन्द्र-नृपति र्व्वीर-श्रिय लब्धवान् ॥
असूत सूर्यो यमुनां पुरेति
कथा पृथिव्या प्रथिता तथापि ।
श्री-साळुवेन्द्रासि-दिनेश-पुत्री
प्रताप-सूर्य्यं सुषुवे विचित्रम् ॥
प्रताप-तपनोत्फुळ्ळ-कीर्ति-कञ्जेष्ट-दिग्-दळे ।
तारोद-बिन्दुके यस्य लेभे हंस-श्रियं शशी ॥
विख्यातेम्मडि-साळुवेन्द्र-नृपते श्यामासि-सोमोद्भवा
मध्योन्मग्न-विराजमान-कमला प्रासूत * पत्यामहो ।
एका शत्रु-करीन्द्र-मस्तक-गलद्-रक्तौघ-शोपा-नदीम्
अन्या श्री-विबुधेश-सेवित-तटीं सत् कीर्त्ति-भागीरथीम् ॥
पातालोत्पललोचना-कटि-तटे चञ्चद्दुकूल-द्युतिम्
दिक्-कान्ताकुच-कुम्भयो कलयते मुक्ता-कलाप-श्रियम् ।
देव-स्त्री-कुटिलालकेषु नितरा मन्दार-माला-छविम्
कीर्त्ति कार्त्तिक-कौमुदी-प्रविमला श्री-साळुवेन्द्राधिप ( ) ॥
व्यानम्रामर-पद्मराग-मकुट-ज्योतिश्छटा-रञ्जितौ
पादौ यस्य सरोजयो कलयतो बालातप-श्री-युजो ।
शोभा वेणुपुराधिप स भगवान् श्री-वर्द्धमानो जिन
पायादिम्मडि-साळुवेन्द्र-नृपतिं भूपाळ-चूडामणिम् ॥

इत्याद्यनेक-बिरुदावळी-विराजमानसङ्गि-राय-वोडेयरवर कुमार शुद्ध-सम्यक्त्व-रत्नाकरनेनिसिद श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर चिन्दगरस-वोडेयरु संगीतपुरद राज-धानियल्लिद्दु विदियनाडु-मुन्ताद समस्त-राज्यवनु प्रतिपालिसुत्त यिद्दन्दिन अयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १४१८ नेय वर्त्तमानक्के सल्लुव विरोधि-

---

* ऐसा ही मूल में है; शायद 'पुत्र्यावहो' की जगह ऐसा हो गया है ।

कृतु-संवत्सरद वैशाख-सुद्ध ५ आदिवार दलु श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वर इन्दगरस-वोडेयर तमगे पुण्यार्थवागि बरसिद धर्म-शासनद क्रमवेन्तेन्दरे बिद्रि-रूर बस्तिय वर्द्धमान-स्वामिगळ अङ्ग-रङ्ग-नैवेद्य-नित्य-नैमित्तिक-जिन-पूजाङ्ग-विनियोग-मुन्ताद-श्री-कार्य्यक्के पूर्व्वदलि बिट्टु-देवस्ववागि हिरण्योदक-धारा-पूर्व्वक-वागि-आ-चन्द्रार्क-स्थायियागि सर्व्वमान्यवागि बिट्ट भूमिगळ विवर (यहाँ दानकी विगत आती है) ई-बिट्ट-कुळ-स्थलङ्गळ नीरन्नु नेलनवन्नु नट्ट-कल्लु तेगदगळु गडियिन्दोळगाद चतुःसीमेगे ळ्ळद मक्कि हक्कु बानु काडाग्म्म नीर दारि निधि-निक्षेप-अक्षीणि-आगामि-सिद्ध-साध्य-मुन्ताद तेव-मान्यगळनुळ ई-कुळ-स्थळंगळ मेले काणिके कड्डाय बीडुगळु विराड-मुन्तागि आवौपुत्र-इल्लदे सर्व्वमान्यवागि आ-वर्द्धमान-तीर्थ-वरिगे हिरण्योदक-धारा-पूर्व्वकवागि आ-चन्द्रार्क स्थायियागि बिट्टु-देवस्व वागि शासनाङ्कितवागि नावु बिट्टु-कोट्ट धर्म्म-शासनद पट्टे यिन्त पुदके तात्तिगळु।

आदित्य-चन्द्रावनिलो-इत्यादि ॥

ई-धर्म्मके आ रोब्बर तप्पिदवरु ऊर्ज्जन्त-गिरियल्लि सहस्रगो-ब्राह्मणर हतिर माडिद पापके होहर यरडूवरे-द्वीपदोळगुळ जैन्य चैत्यालयदोळगुळ जिन-मुनिगळ वधसिद पापके होहर (हमेशाके शापात्मक वाक्यावयव और श्लोक) चिन्द-गरस बरह।

[जिनशासनकी प्रशंसा।

तौलव देशमें, प्रसिद्ध सङ्गीतपट्टनमें काश्यपगोत्र और सोम कुलके महाराज इन्द्रके पुत्र सङ्गि-राजके पुत्र राजा साळुवेन्द्र शोभायमान था। वह जिनभक्त था और उसकी माता सङ्कराम्बा थी। इम्मडि-साळुवेन्द्रके पराक्रमकी प्रशंसा। उसके यशकी प्रसिद्धिका कीर्तन।

जिस समय इन और अन्य उपाधियों सहित, सङ्गी-राय-वोडेयरका पुत्र, महामण्डलेश्वर इन्दगरस-वोडेयर शाही नगर सङ्गीतपुरमें थे :—(उक्त मितिको),

पुण्यकी प्राप्तिके लिये, उसने निम्नलिखित दान दिया;—जो दान बिदिरूर वृस्तिके वर्धमान-स्वामीकी (उक्त) उपासना और पूजाके लिये पहले दिया गया था और फिर छोड़ दिया गया था निम्नलिखित थे;—(यहाँ पूरी-पूरी विगत दी हुई है)। ये भूमियाँ, (उक्त) एवं अधिकारों सहित, वर्धमान-तीर्थंकरके लिये दे दी गयीं थीं।]

[EC, VIII, Sagar tl. No 164]

६५७

मलेयूर;—कन्नड़-भग्न।

[शक १४१४ = १४९२ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, सम्पिगे-बागलुके पश्चिमकी ओर]

शुभमस्तु **शक-वरिष १४१४** नेय वर्त्तमान-**परिधावि-संवत्सरद** चैत्र-शु १ लु **कनक-गिरिय** श्री-**विजयनाथ** ······ · यके **मलेयू** ··· ·· **दिमण्ण-सेट्टिय** ··· ··· ··· **ट्टियर कनकगिरिय** ··· ··· समस्त ··· ··· १ के हत्तु होन्निगे यरडु हण बड्डियलु कोट्टद अन्तरदलु इप्पत्तु होन्निगे वोप्पद ··· ·· ··· ··· १ के लव ··· ··· ···लं ई कोळगद ··· ··· ··· दीप आरति-सेवे ··· ···

[मलेयूरके दिमण्ण-सेट्टिके [पुत्र] ·· ··· सेट्टिने कनक-गिरिपर स्थित विजयनाथदेवकी दीप-आरतिकी सेवाके लिये, प्रत्येक १० होन्नुपर २ हणाके व्याजके हिसावसे, २० होन्नुका दान किया था।].

[EC, IV, Chamarajnagar tl, No 160]

६५८

होगेकेरी,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १४२० = १४९८ ई०]

[होगेकेरीमें, पार्श्वनाथ बस्तिके पाषाणपर]

श्रीमत्पार्श्व जिनेन्द्र-भक्तनमल-श्री-पण्डिताचार्य्य-सत्- ।
प्रेमोद्यत्-प्रिय शिष्यनप्रतिम-नागाम्बात्मजं सद्-गुण- ।
स्तोम-ब्रह्म-तनूजनुत्तम-सु-पद्मा-वल्लभं मल्लिका- ।
कामं पद्मण-मन्त्रि-मुख्यनेसेदं साल्वेन्द्र-चित्तोत्सवम् ॥
जिन-पादानति मस्तकक्के जिन-बिम्बाळोकनं दृष्टिगा- ।
जिन-शास्त्र-श्रवणं स्व-कर्ण-विवरक्के श्री जिन-स्तोत्रमा- ।
नन पद्मक्के चिदात्म-भावने मनक्कं पात्र-दान-कर- ।
क्के निजालङ्कृतियागे पद्मण-महा-मन्त्रीशनेम् बन्यनो ॥
येनेगी-भूप-कृपावलोकनदिनेंश्री-पोष्य-वर्गक्के तक्क् ।
अनितुण्टी-धन-धान्य-सम्पदमदी साल्वेन्द्रनोल्देन्तु को- ।
ट्टनितुं ग्राममनेन्तु धम्ममेनगा-चन्द्रार्क्कमप्पन्तु माळ्प् ।
इनितोन्दे-रडे गण्ड-कज्जमेनितुं निश्चयिसद चित्तदोळ् ॥
जिन-चैत्यावासम माडिसि समुचित-सालादिथिं कूडे पार्श्व-
सन बिम्ब-स्थापनं गेय्दनुदिनमेसेयल् नित्य-पूजाभिधानम् ।
मुनि-दानं तप्पदोळियन्दोगेयकेरेयोळप्पन्ते ता कोट्ट शा- ।
सनमं तच्छासन-प्रान्तदोळे बरासदं पद्मणाङ्क-प्रधानम् ॥
शकाब्दे कालयुक्ते नरभट-गणिते १४२० चैत्र-शुक्लाष्टमी-सत्-
पुष्यर्क्षे जीववारे गवरिपु-करणे शूल-योगे मनोज्ञे ।
निर्दोषे मीन-लग्ने सु-रुचिरमकरोत् पार्श्वनाथ-प्रतिष्ठाम् ।
श्री-पद्मोद्भासि-पद्माकर-पुर-वसतौ पद्मनाम-प्रधानः ॥

पल-कालं नित्य-पूजा-विधिगे मेपव तोण्टङ्गळं याणमं तान् ।
ओलविं नन्दादि-दीप्ति-प्रमुख-सकल-दीपक्के नैमित्तिकक्कम् ।
स्थलमीयाष्टाह्निकादि-प्रमुख-तिथिगमीयापणं पात्र-दानम् ।
नेलेयप्पन्तावगं वेप्पंडिसि बरसिदं वृत्ति यं पद्मनाभम् ॥

क ॥ अपरिमितमुचितमेम्बीय- ।
उपकरणङ्गळने कोट्टु वैदिक-लौकिक- ।
निपुणनं ई अह्मण-सचिव ।
सुपरीक्षितमागि बरसिदं शासनमम् ॥
पद्मं विनमित-जिन-पद- ।
पद्मं सज्जनरोळेसेव विगत-च्छद्मम् ।
पद्मा-प्रिय-कर-गुण-गण- ।
सद्मं नित्य-प्रसन्न-निज-मुख-पद्मम् ॥

[पार्श्व जिनेन्द्रका पूजक, पण्डिताचार्य्यंका शिष्य, नागाम्ब और ब्रह्मका पुत्र, पद्माका पति तथा मल्लिकाका प्रिय,—साल्वेन्द्रका कृपापात्र, मुख्य मन्त्री पद्म था । उसकी जैन भक्तिका वर्णन । उसने एक जिन चैत्यालय बनवाया था, उसमें पार्श्वनाथ भगवान्‌की स्थापना कर दैनिक पूजा और मुनियोंके आहार दानके लिये प्रबन्ध किया था । (उक्त मितिको), मंत्री पद्मनाभने पद्माकरपुरमें पार्श्व-नाथकी स्थापना की, और इसमेंसे (उक्त) विभिन्न कार्योंके लिये अलग-अलग हिस्से निकाल दिये, और एक शासन लिख दिया । पद्मकी प्रशंसा ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 163, part II.]

६५६

शत्रुञ्जय,—प्राकृत ।

सं० १५...(.....ई०)

यह लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय का है ।

[G. Buhler, EI, II, No. VI, No. 117 (p. 86), a.]

६६०

पर्वत आबू,—संस्कृत ।

[सं० १५६६ = १५०१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Asiat. Res., XVI, p. 298, No. XII, a.]

६६१

श्रवणवेल्गोला;—कन्नड़ ।

[शक १४३२ = १५१० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६६२

वहादुरपुर (जिला अलवर);—संस्कृत

[सं० १५७३ = १५१६ ई०]

(श्वेताम्बर लेख ।)

[A. Cunningham, Reports, XX, p. 119-120]

६६३

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १४४० = १५१८ ई०]

पहला लेख

[उसी पहाड़ीपर, दोणेके उत्तर और बलि-कल्लुके दक्षिण एक चट्टानपर]

श्री ॥ शाकेऽब्दे व्योम-पाथोनिधि-गति-शशि संख्येश्वरे श्रावणे तत्-
कृष्णे पक्षेऽत्र तद्द्वादश-तिथि-युत-सत्-काव्य-वारे गुरोर्मे ।
आद्यर्क्षो कन्यकायां यतिपति-मुनिचन्द्रार्य्य-वर्य्याग्रशिष्यो
लेभे चेत -कृतार्हत्पदयुग-मुनिचन्द्रार्य्य-वर्यस्समाधिम् ॥

तच्छिष्य-वृषभदास-वर्णिना लिखितं पद्यमिदं विद्यानन्दोपाध्यायेन कृतम् । श्री ।

[यतिपति-मुनिचन्द्राख्यके मुख्य शिष्यने मुनिचन्द्रार्यके लिये समाधि बनाई ।[1] यह श्लोक उनके शिष्य वृषभदासने लिखा और इसको बनानेवाले थे विद्यानन्दोपाध्याय ।]

दूसरा लेख

[उसी पहाड़ीपर, सेनगण निषधिकी उत्तर-पूर्वकी चट्टानपर]

कालोग्र-गणद **मुनिचन्द्र-देवर** पाद अवर शिष्य **आदिदास** वरसिद

[कोल्लारगणके मुनिचन्द्र-देवके चरणचिह्न उनके शिष्य आदिदासके द्वारा स्थापित किये गये थे ।]

तीसरा लेख

[उसी पहाड़ीपर, मुनिचन्द्र-निषधिके एक पाषाणपर]

ईश्वर-संवत्सरद श्रावण-बहुल श्री-मूलसंघ-कोलाग्र-गणद **मुनिचन्द्र-देवरिगे** निषिधि ··· ·· अवर पादवन्नु अवर शिष्य **आदिदास** ··· **आवियण्णगळु** माडिसिदरु श्री श्री श्री

श्रीमूलसघ और कोलाग्र-गणके **मुनिचन्द्र-देवका** स्मारक । उनके चरण-चिह्नोंकी स्थापना उनके शिष्य आदिदासने की थी । (यह कार्य) आवियणके द्वारा संपन्न किया गया था ।]

[EC,IV, Chamrajnagar tl., no 147, I48 and 161]

---

१ इस श्लोक का उपर्युक्त अर्थ गलत मालूम होता है । श्लोकार्थ से तो समाधि लेनेवाले स्वयं मुनि चन्द्रार्यके प्रधान शिष्य थे, न कि प्रधान शिष्य ने मुनि चन्द्रार्य के लिये समाधि बनायी । 'समाधि लेने'का अर्थ होता है 'समाधिको प्राप्त हुआ' न कि 'समाधि बनाई' । इसका कर्ता भी 'अग्रशिष्यो है।

६६४

कल्लवस्ति,—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४५२=१५३१ ई०]

[कल्लवस्ति (बगुञ्जी परगना) में, कल्ल-वस्तिके सामनेके एक पाषाणपर]

श्री गणाधिपतये नम· ।

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीमानादि-वराहोऽयं श्रियं दिशतु भूयसीम् ।
गाढमालिङ्गिता येन मेदिनी मोदते सदा ॥
नमस्तुङ्ग इत्यादि ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १४५२ सन्द वर्त्तमान । विकृतु-संवत्सरद् । चैत्र-शुद्ध १० बुधवारदलु श्रीमतु अरि-राय-गण्डर दावणि बोम्मल-देवियर कुमार श्री-वीर भैररस वोडेयरु । कारकळद सिंहासनदल्लि सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं प्रतिपालिसुत्तिह कालदलि । अवर तङ्गि काळल-देवियरु । बगुञ्जिय सीमेयनु स्व-धर्मदलु प्रतिपालिसुत्तिह कालदलु तम्म कुल-स्वामि कल्ल-वस्तिय पार्श्व-तीर्त्थकररिगे नित्य-धर्म्मक्के बिट्ट भूमिय क्रमवेन्तेन्दरे । तावु तम्म कुमारति रामा-देवि-यरु । कालव माडिदलि । अवर हेसरलि । माडिद धर्म्म (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा आती है) मंगल महा श्री-बोम्मरस बिट्ट इलि ··· यी-भूमियनु नावु नम्म बगुञ्जिय सीमेय पूर्व्व-प्रधानिगळु महाजनङ्गळु हलरु नाडु कोलविळियरु मुन्तादवर् समस्तरु साक्षियल्लि स-हिरण्योदक-दान-धारा-पूर्व्वकवागि धारेय-नेरदु कोट्टेवु आ-चन्द्रार्क-स्तिरवागि कोट्टेवु । हरुगोल बोणिय गदेय कल्ल-वस्तिय देवर अमृतपडिगे पूर्व्वदल्लि बिट्ट दा नम्म क ··· कालव दल्लि बिट्ट भूमि रव ६ उभय बीजवरि रव ११ ··· ··· भूमियनु देवरिगे बिट्टेवु इदके राजिक ··· ·· बरसिद कल्ल-शासन (हमेशाके अन्तिम श्लोक)

अनुगच्छन्ति ये ·· ··· तुकं कौतुकान्वितम् ।
पदे पदे क्रतु-फलं लभते नात्र संशयः ॥

[जिस समय बोम्मल-देवीके पुत्र वीर-भैररस-वोडेयर कारकलकी गद्दीपर थे : और उनकी छोटी बहिन काळल-देवी अगुम्बि-सीमेकी रक्षा कर रही थी;— उसने अपने कुल-देवता कल्ल-बस्तिके पारिश्व (पार्श्व)-तीर्थङ्करकी दैनिक पूजाके लिये दान दिया। और जब उसकी पुत्री रामा देवी मर गई तब उसने अग्र-लिखित पुण्य-दान किया :—प्रतिदिन चावलकी २ अञ्जलि देना, पहिले मिले हुए ४० खमें भट्टके १५ ख और मिलाकर कुल ५५ ख; २ हमेशा जलनेके लिये दिये, और वार्षिक २४ ग धातुमें;—साथियोंके सामने (उक्त) भूमिका दान दिया। पाषाणका शासन उसीने उत्कीर्ण करवाया।]

[Ec, VII, Koppa tl. No .47.]

६६५-६६६

शत्रुंजय—प्राकृत ।

[संवत् १५८७ और शक सं० १४५२ = १५३० ई०]

ये दोनों लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायके हैं।

[G. Buhler, EI. II, No. VI, No. I (P. 42–47), t]

६६७

हुम्मच—कन्नड़ ।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १५३० ई० का (लू० राइस)।]

[पद्मावती मन्दिरके प्राङ्गणमें एक पाषाण पर]

विद्यानन्द-स्वामिय ।
इद्योपन्यास-त्राणि भरेयोळ्गेन्दुम

माधवादि-गजेन्द्र ।
मेद्योद्धुर-सिंह-विरुतियन्तेवोलेसेगुम् ॥
स्थितियोळ् विद्यानन्द- ।
व्रतिपति-मुख्य-जात-वाणि विबुधर मनदोळ् ।
सततं रञ्जिसुतिर्क्कुम् ।
व्रति-विरहित-क्रान्त-रचित-भाष्यद् तेरदिम् ॥
विद्यानन्द-स्वाम्यन- ।
वद्योपन्यास-मुद्रे कविगळ मनदोळ् ।
सद्य सुखकर वाणन ।
गद्यात्मक-काव्यदन्ते रञ्जिसि तोर्क्कुम् ॥
श्री-नञ्जरायपट्टणद् ।
आ-नरपति-नञ्जदेव-भूपन सभेयोळ् ।
आ-नन्दन-मल्लि-भट्टो- ।
दानमनुधे किडिसि मेघद विद्यानन्द ॥
श्रीरङ्ग-नगरकार्य्यन ।
पेरङ्गिय मतमनळिदु विद्वत्-सभेयोळ् ।
शारदेयं वस-माडिये ।
वारिणिगभिवन्द्यनादे विद्यानन्दा ॥
श्री-सान्तवेन्द्र-रायन ।
केसरि-विक्रमन वङ्गुरास्थानदोळिन्त् ।
ई-साहित्यमनुर्व्वरे ।
गोसिसुवन्तुरुदे वादि-विद्यानन्दा ॥
श्री-सालुव-मल्लि रायन ।
यूसरगेणेयेनिसि तोर्प्पं जाणन सभेयोळ् ।
सासनदोळधिकरादर ।

बासेयनु मनिसिदे वादि-विद्यानन्दा ॥
अर्ण्णव-वेष्टित-वसुधा- ।
कर्ण्णोपम-गुरु-नृपालनास्थानदोळेम् ।
कर्ण्णाट-दत्त-कृतिथम् ।
वर्ण्णिसि लस बददे वादि-विद्यानन्दा ॥
वासव-समान-मान्य- ।
श्री-साळुव-देव-रायनास्थानिकेयोळ् ।
पुसियेन्दाखळ-वायुरु- ।
शासनमं गेल्दु मेोन्चदे विद्यानन्दा ॥
नागरी-राज्यद राजर ।
··· लेनिसुव सभेगळह्लि विबुध-व्रातक् ।
अगणित-वाक्यामृतमं ।
सोगसिन्दीण्टिसिदे वादि-विद्यानन्दा ॥
कळशोद्भव-सम-शौर्य्यंन ।
बिळिगेय नरसिंह-भूपनास्थानिकेयोळ् ।
बेळगिदे जिन-दर्शनमम् ।
नाळिनाम्बक-सनु-वैरि विद्यानन्दा ॥
कारकळ-नगरदाण्मन ।
भैरव-भूपाल-मौळियास्थानदोळेम् ।
सारतर-जैन धर्म्मंन् ।
ओरन्तिरे बेळगि मेधदे विद्यानन्दा ॥
बिदिरेय भव्य-जनङ्गळ ।
विदमल-चारित्र-भूष्य-हृदयर सभेयोळ् ।
पडे सिद्धान्तित-मतमम् ।
मुडदिं प्रकटिसिदे वादि-विद्यानन्दा ॥
नरपति-मणि-मुकुटाञ्चित- ।

नरसिंह-कुमार-कृष्ण-रायन समेयोळ्
पर-मत-वादि-वृन्दमन् ।
ओरसिदे वाग्बलदे वादि-विद्यानन्दा ॥
कोपण-मोदलाद-तीर्त्थदोळ् ।
अपरिमित-द्रव्यदिं देहाशा-विधियिम् ।
स्वपवर्गद फलकागिये ।
विपुलोदय माडि मेषदे विद्यानन्दा ॥
बेळगुळद गुम्मटेशन ।
चळन-द्वयदल्लि जैन-सघक्के महा- ।
कळ मुददे वसन-भूषण- ।
कळधौतद मळेय कषद विद्यानन्दा ॥
श्री-गेरसोप्पेयोळगण ।
योगागम-वाद-सक्त-मुनिगळ गणमम् ।
राजदे पालिप कल्लकि- ।
दी-गुरु-रुणियन्ते मेषदे विद्यानन्दा ॥

वृ ॥ वीर-श्री-वर-देव-राज-कृत-सत्-कल्याण-पूजोत्सवो

विद्यानन्द-महोदयैक-निलय श्री-सङ्गि-राजार्च्चितः ।
पद्मा-नन्दन-कृष्ण-देव-विनुत श्री-वर्द्धमानो जिन
पायात् साळुव-कृष्ण-देव-नृपतिं श्रीशोऽर्द्धनारीश्वर· ॥
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
वर्द्धमानो जिनो जीयात् गौतमादि-मुनि-स्तुत ।
सुत्रामार्च्चित-पादाब्ज परमार्हन्त्य-वैभवः ॥
स चतुर्दश-पूर्व्वेशो भद्रबाहुर्ज्जयत्यरम् ।
दश-पूर्व्व-धराधीश-विशाख-प्रमुखार्च्चितः ॥

तत्वार्थसूत्र-कर्त्तारमुमास्वाति-मुनीश्वरम् ।
श्रुतकेवलि-देशीयं वन्देऽहं गुण-मन्दिरम् ॥
श्री-कुन्दकुन्दान्वय-नन्दि-संघे
योगीश-राज्येन मतां ··· ·· ।
जाता महान्तो जित-वादि-पक्षाः
चारित्र-वेषा गुण-रत्न-भूषाः ॥
सिद्धान्तकीर्त्तिर्जिनदत्तराय-
प्रणूत-पादो जयतीद्ध-योगः ।
सिद्धान्त-वादी जिन-वादि-वन्द्यः
पद्मावती-मन्त्र ·· ती-कृतेज्य ॥
जीयात् **समन्तभद्रस्य** देवागमन-संज्ञिनः
स्तोत्रस्य भाष्यं कृतवानकलङ्को महर्द्धिक ॥
अलङ्चकार यस्सर्वमाप्तमीमांसितं मतम् ।
स्वामि-विद्यादिनन्दाय नमस्तस्मै महात्मने ॥
यः प्रमाता पवित्राणा · ·· · ··· ।
विद्यानन्द-स्वामिनञ्च **विद्यानन्द**-महोदयम् ॥
विद्यानन्द-स्वामी
विरचितवान् श्लोकवार्त्तिकालङ्कारम् ।
जयति कवि-विबुध-तार्किक-
चूडामणिरमल-गुण-निलय· ॥
माणिक्यनन्दी जिनराज-वाणी-
प्राणाधिनाथ· पर-वादि-मर्द्दी ।
चित्रं **प्रभाचन्द्र** इह क्षमायम्
मार्त्तण्ड-वृद्धौ नितरा व्यदीपित् ॥
सुखी ··· **न्यायकुमुद चन्द्रोदय**-कृते नमः ।
शाकटायन-कृत्सूत्र-न्यास-कर्त्रे व्रतीन्दवे ॥

न्यासं जिनेन्द्र-संज्ञं सकल-बुध-नुतं पाणिनीयस्य भूयो-
न्यासं शब्दावतारं मनुज-तति-हितं वैद्य-शास्त्रं च कृत्वा ।
यस्तत्त्वार्थस्य टीकां व्यरचयदिह तां भात्यसौ पूज्यपाद-।
स्वामी भूपाल-वन्द्य स्व-पर-हित-वचः-पूर्ण-दृग्-बोध-वृत्त· ॥
वर्द्धमान-मुनीन्द्रस्य विद्या-मन्त्र-प्रभावत ।
शार्द्दूलं स्व-वशीकृत्य होय्सळोऽपालयद्धराम् ॥
होय्सळान्वय-भूपानां वृत्त-विद्या-प्रदायिनः ।
श्री-वर्द्धमान-योगीन्द्र-मुखास्ते गुरवोऽभवन् ॥
वासुपूज्य-व्रती भाति भव्य-सेव्यो बुधार्च्चित ।
सिद्धान्त-वार्द्धि-शीतांशुः ·· रित्राधार-विग्रहः ॥
रिपु-वर्द्धन-बल्लाळ-राय-वन्द्य-क्रमाम्बुज ।
अनेकान्त-नयोद्भासी श्रीपालो राजते सुखी ॥
भूभृत्पादानुवर्त्ती सन् राज-सेवा-पराङ्मुखः ।
संयतोऽपि च मोक्षार्थी ·· ··· पात्रकेसरी ॥
त्रिलोकसार-प्रमुख ··· ···
··· ··· ··· भुवि नेमिचन्द्रः ।
विभाति सैद्धान्तिक-सार्व्वभौम
चामुण्ड-रायार्च्चित-पाद पद्मः ॥
रेजे माधवचन्द्रोऽसौ निराकृत-मधूत्सवः ।
चैत्याश्रयी शुचि-रतिस्सदा श्रावण-तत्पर· ॥
जीयादभयचन्द्रोऽसौ मुनिस्सिद्धान्त-वेदिनाम् ।
चरम· केशवार्य्येण ··· ··· सत्य-पाणाभव ॥
··· ··· ··· स-राज-सूर्यो
दया-पर श्री- जयकीर्त्ति-देवः ।
विराजते शास्त्र-विदा वरेण्यः
स ···रमालिङ्गित-रम्य-गात्रः ॥

··· ··· शासन-श्रीमन् ··· ··· सेन इवावनौ ।
राजते जिनचन्द्रार्य्यं ··· ··· ··· थ· ॥
आचार्य्य-वर्य्यं ··· ··· विभाति विबिते ··· · ।
इन्द्रनन्दी जिनेन्द्रोक्तसंहिता-शास्त्र विद्-वरः ॥
वसन्तकीर्त्तिर्व्वन-देश-वासी
विशालकीर्त्तिश्शुभकीर्त्ति-देवः ।
श्री-पद्मनन्दी मुनि-माघनन्दी ॥
जटा-प्रसिद्धामल-सिंहनन्दी ॥
व्यतिभाते गुणाधीशो श्रीमान् चन्द्रप्रभो मुनिः ।
वसुनन्दी माघचन्द्रो वीरनन्दी धनञ्जयः ।
वादिराजो धराधीश-वन्दिताङ्घ्रि-सरोरुह. ॥
षट्-तर्क-वादि-जनतामय-दान-दक्ष-
साहित्य-नन्दन-वनालि-विकासि-चैत्रः ।
श्री-धर्म्मभूषण-गुरुर्म्मुनिराज-सेव्यो
भट्टारको जयति सत्कविता-कलेन्दुः ॥
राजाधिराज-परमेश्वर-देव-राय-
भूपाल-मौलि-लसदङ्घ्रि-सरोज-युग्म ।
श्री-वर्द्धमान-मुनि-वल्लभ-मौरव-मुख्यः
श्रीधर्म्मभूषण-सुखी जयति क्षमाढ्यः ॥
विद्यानन्द-स्वामिनस्सूनु-वर्य्यस्
सञ्जातस्ते सिंहकीर्त्ति-व्रतीन्द्रः ।
ख्यातश्श्रीमान् पूर्ण-चारित्र-गात्रो
दान-स्वर्ण्णू-धेनु-मन्दार-देश्यः ॥
श्वेत-वर्णाकुलो भूमौ सर्व्वदा मरुदावृतः ।
सुदर्शनो मेरुनन्दी राजहस-परिष्कृतः ॥
वर्द्धमानः प्रभाचन्द्रोऽमरकीर्त्तिर्गुणाकरः ।

विशालकीर्त्तिश्श्री-नेमिचन्द्रस्सिद्ध-गुणा इव ।
आमात्यश्शपतेर्द्दिने तत-नयो वङ्गाळय-देशावृत-
श्रीमद्-दिल्लि-पुरेड्-महम्मुद-सुरित्राणस्य माराकृतेः ।
निर्ज्जित्याशु सभावनौ जिन-गुरुर्ब्बौद्धादि-वादि-व्रजम्
श्री-भट्टारक-सिंहकीर्त्ति-मुनि-रा ·· चैक-विद्या-गुरुः ॥
विशालकीर्त्तिर्व्वादीन्द्रः परमागम-कोविदः ।
भट्टारको बलात्कार-गणाधीशो महा-तपः ॥
सिकन्दर-सुरित्राण-प्राप्त-सत्कारवैभवः ।
महा-वाद-जयोद्भूत-यशो-भूषित-विष्टपः ॥
श्री-विरूपाक्ष-रायस्य श्री-विद्यानगरेशिनः ।
सभाया वादि-सन्दोहं निर्ज्जित्य जय-पत्रकम् ॥
स्वीकृत्य च महा-प्रज्ञा-बलेन बुध-भू भुजैः ।
मतं सरस्वती-मूल-शासन वा सदोज्वळम् ॥
देवप्प दण्डनाथस्य नगरे श्रीमदारगे ।
प्रकाशित-महा-जैन-धर्म्मोऽभूद् भूसुरार्च्चित ॥
विशालकीर्त्तिश्श्री-विद्यानन्द-स्वामीति शब्दितः ।
अभवत् तनयस् साळुव-मल्लिराय-नृपार्चित ॥
आगम-त्रय-सर्व्वज्ञ- कवित्व-गुण-भूषित ।
नानोपन्यास-कुशलो वादि-मेघ-महा-मरुत् ॥
स्वामि-विद्यादिनन्दस्य भारती भाललोचनः ।
सूनुर्द्देवेन्द्रकीर्त्याख्यो जातो भट्टारकाग्रणीः ॥
श्रीमद्देवेन्द्रकीति-व्रति-पद-नख-रुग्-मञ्जरी मंगलं मे
भूयात् तत्पादपार्श्वे मम नुति-विनमन्मस्तके मल्लिकाभा ।
नेत्रे कर्प्पूर-पा ··· वदन-सरसिजे स्फार-पीयूष-धारा
कण्ठे मुक्ता-कलापस्त्ववयव-निकरे चन्द्र-युक्-चन्दन-श्रीः ॥
आनन्दाश्रु-सलिलैरपि भावयित्वा

भाल-स्थली-विरचिताञ्जलि कुड्मलेन ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-चरणे सुखमर्प्पयामि
कामातुरः कुच-भरे म यथा तरुण्याः ॥
यत्पादाब्ज-नखेन्दु-कान्ति-लहरी-स्थानं जगत्पावनम्
यत्पादाब्जरजो-विलेपनमहो संसार-सन्ताप-हृत् ।
यत् कारुण्य-कटाक्ष-वीक्षणमपि क्षीरोद-पट्टाम्बरम्
यत् प्रेम् ··· सुधाशनं भव-भवे सोऽस्तु प्रियो मे गुरु ॥
श्रीमान् देवेन्द्रकीर्त्तिर्य्यति-पति-मुकुरो मन्त्र-वादीभ-सिंह
माहित्याम्भोधि-सूर्य्यो विमलतरतप -श्री-समालिङ्गिताङ्गः ।
विद्यानन्दार्य्य-सूनुः कवि-विबुध-महा-पारिजातो विभाति
प्रायो भूताचलेन्द्रः पर-हित-चरित शारदा-कर्ण्णपूरः ॥
श्री-कृष्ण-राय-महनाच्युत-राय-मौलि-
विन्यस्त-पाद-कमलः कमनीय-मूर्त्तिः ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-मुनिराट् जयति प्रसिद्धः
स्याद्वाद-शास्त्र-मकराकर-शीतरोचिः ॥
श्रीमद्देवेन्द्रकीर्त्ति-व्रतिप जिन-मताम्भोजिनी-मासि-मानो
सद्विद्या-नाथ-पाथोनिधि-विशद-शरत् ··· र-पीयूषमानो ।
एनो-बन्धाग्निधेनो मयि कुरु करुणां वाक्-सुधा-कामधेनो
विद्यानन्दार्य्य-सूनो गुण-मणि-विलसद्-रोहणाद्रीन्द्र-सानो ॥
वादावसान-विनमद्-वर-वादि-चक्र-
कङ्काल-जात-मुदिताश्रुजल-बिन्दु-वृन्दैः ।
मुक्ताफलैरिव मुहुः परिपूज्यमानम्
देवेन्द्रकीर्त्ति-चरणं शरणं भजामि ॥
सन्मार्गासक्त-चित्तं कुवलय-जनितामोद-सद्-वृद्धि-हेतुम्
सद्-वृत्तं चारु-बोधोज्ज्वल-विबुध-नुतं सत्-कलानामधीशम् ।
क्षाणीभृत्-तुङ्ग-मौलि-प्रणिहित-विलसत्-पादमुच्चैरखसम्

विद्यानन्द-यतीन्द्रामृतकरमवतु श्री-पतिर्व्वर्द्धमानः ॥
वादि-प्रोद्दाम-वाचा-तिमिर-समुदय-प्रोच्चलद्-बाल-भानुस्
त्रैलोक्याखर्व्व-गर्व्व-स्मर-विपिन-महा-दीप्र-तेज-कृशानुः ।
शास्त्राम्भोराशि-ताररमण-सदृश-देवेन्द्रकीर्त्यार्य्य-भानुर्
व्विद्यानन्दार्य्य-वर्य्यो जगति विजयते धर्म्म-भूमीध्र-सानु ॥
साकारो वा भाति सौजन्य-राशिन्-
सञ्ज्ञो वा मर्त्य-वेषस्समिन्धे ।
सञ्चारी वा सर्व्व-शास्त्र-प्रपञ्च
विद्यानन्द-स्वामि-वर्य्यो विभाति ॥
का सर्व्वं विशदीकरोति विनतापत्य भवेत् किं हरे
भुक्ते पूत-हविश्च क. खग मृगादीना च को वाश्रय ।
क्वास्ते देव-तति प्रथा क्व नु कुतस्सन्तो भजन्ते मुदम्
विद्यानन्द-मुनावनङ्ग-विजयिन्युद्वीक्ष्यमाणे सति ॥
वित्यानं दमुना वनं गवि जयिनि ॥
देवेन्द्रकीर्त्तिर्जिन-पूजनेषु
विशालकीर्त्तिर्व्विबुधाग्रणेषु ।
विश्वावनी-वल्लभ-पूज्य-पादो
विद्यादिनन्दो जयताद् धरित्र्याम् ॥
विद्यानन्द-स्वामि-शास्त्रोपमायै
शेषश्शम्भुं सेवते हार-भावात् ।
प्रायो लक्ष्म्यालिङ्गितास पुमान्सम्
पर्य्यङ्कत्वं प्राप्य साक्षादुपास्ते ॥
व्याचिख्यासति वैदुषी-भर-लसद्-व्याख्यान-कोलाहले
विद्यानन्द-मुनौ समासु विदुषां कान्यस्य सूरेः कथा ।
खद्योति किमुदेति कान्तिरुदिते राका-सुधाधामनि
प्रौढे भास्वति भाति भाति ••• दैवी कथं दीधितिः ॥

वीर-श्री-वर-देव-राय-नृपतेस्सद्-भागिनेयेन वै
पद्माम्बा ••• गर्भ-वार्द्धि-विधुना राजेन्द्र-वन्द्याङ्घ्रिणा ।
श्रीमत्-साळुव-कृष्ण-देव-धरणीकान्तेन भक्त्यार्चितो
विद्यानन्द-मुनीश्वरो विजयते स्याद्वाद-विद्या-फल· ॥
श्रीमद्विद्यानन्द-स्वामिनममराचलं मन्ये ।
द्विज-विबुध-कवि-गुरूणा सन्दोहस्सेवतेऽन्यथा कथं भुवने ॥
किं वाणी चतुरानन किमथवा वाचस्पतिः किन्वसौ
विद्याना विभवस् सहस्रवदनः साक्षादनन्तः किमु ।
इत्थं संसदि साधवस्समुदितास्संशेरते सादरम्
विद्यानन्द-मुनौ बुधेशभवन-व्याख्यानमातन्वति ॥
यो विद्यानगरी-धुरीण-विजय-श्री-कृष्ण राय-प्रभोर्
आस्थाने विदुषा गण समजयत् पञ्चाननो वा गजम् ।
सद्-वाग्मिनंखरैरुदात्त-विमल-ज्ञानाय तस्मै नमो
विद्यानन्द-मुनीश्वराय जगति प्रख्यात-सत्-कीर्त्तये ॥
विद्यानन्द-स्वामिनोऽभूत् सधर्म्मा
विख्यातोऽय नेमिचन्द्रो मुनीन्द्रः ।
भूत-माताम्भोज-वैकासकारो
[•••] शास्त्राम्भोराशि-संवृद्धिकारी ॥
पोम्बुर्च्च-पार्श्वनाथस्य वसतिं श्री-त्रि-भूमिकाम् ।
कृत्वा प्रतिष्ठा महतीं सन्तनोति स्म भक्तित· ॥
विद्यानन्द-स्वामिन· पुण्य-मूर्त्तेः
जीयात् सूनुरश्री-विशालादिकीर्त्तिः ।
विद्वद्वन्द्य सर्व-शास्त्रावतारो
माद्यद्-वादीमेन्द्र-संघात-सिंह· ॥
वादि-विशालकीर्त्ति-मुनि-राड् विबुध-स्तुत-सद्-गुणोदयः
क्ष्माधिप-संसदप्रतिम-वाक्य-निराकृत-सूरि-सन्ततिः ।

स्यात्पद-लाञ्छनान्वित-जिनागम-भावन-पूत-मानसो
भाति नृपाल-पूजित-पद. स-दयो जित-पुष्पसायकः ॥
जीयादमरकीर्त्याख्य-भट्टारक-शिरोमणिः ।
विशालकीर्त्ति योगीन्द्र-सधर्म्मा शास्त्र-कोविदः ॥
विशालकीर्त्तियोगीन्द्र-भट्टोदय-महीभृतः ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-मुखि-राड् बालार्क्क इव भासते ॥
श्री-भैरवेन्द्र-वंशाब्धि-राज-पाण्ड्य नृपार्चित ।
जीयाद् देवेन्द्रकीर्त्यर्थ्यो विद्यानन्द-महोदय· ॥
देवेन्द्रकीर्त्तिस्सिद्धार्थस् तद्वाणी प्रियकारिणी ।
धीमांस्तदुदितो वर्ण्णी वर्द्धमानो न किं भवेत् ॥
निर्भ्भग्नात्म-निबन्धनस्स-करुणो निर्म्वाण-वाञ्छान्वितो
बाह्यार्त्थावगमाभिलाष-रहितो दूरीकृतोत्कल्पनः ।
स्व-च्छन्द-स्व ·· ··· ना भद्राङ्ग-लक्ष्म्या परम्
त्विल्या मत्त-महा-करीव जयति श्री-वर्द्धमानो मुनिः ॥
ख्यात-श्री-वर्द्धमानोऽभूद् वीत-संसार-विभ्रम· ।
ज्ञातानुयोग-शास्त्रार्त्थो जातरूपा··· ··· स्वरु ॥
यति ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· दन ।
नुत-सद्-गुण-सन्तान-पूत-चिद्-भावना-मतिः ॥
जयति भुजबल-श्रीराद्यं ··· सञ्चयस्य
जिन-पति-मत-शुद्धि· स्वर्ग-मोक्षैक-सिद्धि ।
जन-हित-मित-वाणी-लुप्त-कन्दर्प-वाणी
नव-तपन ··· ··· ··· ··· ·· ··· ॥
··· दिन्द्रकीर्त्ति-योगीन्द्र विद्यानन्द-महोदय ।
वर्द्धमान-बुधाराध्य भूयो भूयो नमोऽस्तुते ॥
सत्पुत्रो-जननीं निदाघ-तृषित· शैत्यं जलं कामिनी
कान्त वारवधू: धनं यतिपतिः ··· ···यितं चातक· ।

मेघं भूरमणो जयं युधि यथा ध्यायत्यजस्रं तथा
विद्यानन्द-मुनीश्वरस्य चरणाम्भोजं मदीयं मनः ॥
वन्दे पद्मावतीं देवीं धारिणीन्द्र-मन-प्रियाम् ।
श्री-सिन्धु ··· ·· ··· · ·· ··· ·· ·· ॥
देवेन्द्रकीर्त्ति-मुनिराज-तनूभवेन
श्री-वर्द्धमान-मुनिना गदितानि भान्ति ।
पद्यानि सद्-गुण-युतानि महोज्वलानि
विद्वत्-कवीन्द्र-गल-कर्ण्ण-विभूषणानि ॥
······ दया धर्म्मस्तावत् सद्-धर्म-शासन ।
श्रीरस्तु जगता राजा धरा न्यायेन रक्षतु ॥
भान्तु षड्-दर्शनान्यु ··· ··· ··· ··· ॥
(वही अन्तिम श्लोक) ।
वर्द्धमान-मुनीन्द्रेण विद्य ··· ··· बन्धुना ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-महिता लिखिता ·· ·· · ॥

[विद्यानन्द-स्वामीकी वाणीके तर्कसे वादि-राजेन्द्र भयभीत रहते हैं। विद्यानन्दि-व्रतिपतिके मुखसे निकली हुई वाणीको विद्वान् लोग भाष्य समझते हैं। उनके तर्ककी प्रशंसा। नञ्जराय पट्टणके राजा नञ्ज-देवकी सभामें उन्होंने नन्दन-मल्लि-भट्टका मुँह बन्द करके अपनेको 'विद्यानन्द' प्रसिद्ध किया। श्रीरङ्गनगरके काव्यं (प्रवर्द्धक) यूरोपियनके मतको ध्वस्त करके एक विद्वत्परिषद्में उनने शारदा, (सरस्वती) को बुलाया था। उन्होंने सातवेन्द्र (या सान्तवेन्द्र) राजके अनुपद्रव दरबारमें दुनियाँ में प्रसार पा जानेवाली एक कविता पढी थी। साल्व-मल्लि-रायकी एक विद्वत्परिषद्में अच्छे वादियोंको परास्त किया। गुरु-नृपालके दरबारमें एक कर्णाटक ग्रन्थका निर्म्माण करके उन्होंने प्रसिद्धि प्राप्त की। साळुव-देव-राय के दरबारमें सब वादियोंके सिद्धान्तोंको मिथ्या सिद्ध करनेमें उन्होंने महती सफलता प्राप्त की थी। नगरी राज्यके राजाओंकी सभाओंमें उन्होंने विद्वानोंको

अपनी वाणीके अमृतकी मधुरताका पान कराया। बिल्लिगेके राजा नरसिंहके दरबारमें उन्होंने जिनदर्शनको स्पष्ट रीतिसे समझाया। कारकल-नगरके शासक भैरवके दरबारमें उन्होंने जैन-धर्मकी बहुत अच्छी प्रभावना की थी। विदिरेके जैनोंकी सभाओं की सम्मति प्राप्त करनेके लिये उन्होंने सिद्धान्तका प्रतिपादन किया। नरसिंहके पुत्र कृष्ण-रायके दरबारमें तुमने अपनी वाणीके बलसे परमतवादियोंके वर्णको हटा दिया। कोपण तथा अन्य दूसरों तीर्थोंमें तुमने महोत्सव करके अपनेको विद्यानन्द प्रसिद्ध किया। बेळुगुळके गोम्मटेशके दोनों चरणोंमें उन्होंने वर्षाके समान जैन संघके ऊपर बड़े प्रेमसे एक कपड़ों, आभूषणों, सोना और चान्दीका 'महाकल' डाला। गेरसोप्पेमें 'योगागमकी चर्चामें लगे हुए मुनिगणको मुख्य गुरुके तौरपर उनको सहायता देनेका कार्य अपने हाथमें लिया था।

वर्धमान जिन—जिन्हें वे देव-राज, सङ्गि-राज और कृष्ण-देव पूजते थे—साळुव-कृष्ण-देवकी रक्षा करें।

जिन शासनकी प्रशंसा। वर्द्धमान स्वामीकी स्तुति। चतुर्दशपूर्व्वियोंमें सिर-मौर भद्रबाहु थे, जिनकी पूजा विशाख तथा अन्य दशपूर्वी करते थे। तत्वार्थसूत्रके कर्त्ता उमास्वाति-मुनीश्वर हुए। जिनदत्त-रायके द्वारा पूजित सिद्धान्तकीर्ति थे, जिन्होंने एक विधिसे पद्मावतीको भी मन्त्रमुग्धकर दिया था। समन्तभद्रके देवागम-स्तोत्रका भाष्य बनानेवाले महर्धिक अकलङ्क हुए। श्लोक-वार्त्तिकालङ्कारके रचयिता विद्यानन्द-स्वामी हुए। माणिक्यनन्दी जिनराज-वाणीके पति, विरोधी वादियोंके परास्त करनेवाले थे। प्रभाचन्द्रने प्रमेयकमलमार्त्तण्ड और न्यायकुमुद-चन्द्रकी रचना की थी तथा शाकटायनके सूत्रोंपर न्यास बनानेवाले भी यही थे। पूज्यपाद-स्वामीने जैनेन्द्र नामका न्यास बनाया था, पाणिनीके सूत्रोंपर 'शब्दावतारं' नामक न्यासका भी प्रणयन किया था, वैद्य-शास्त्र तथा तत्त्वार्थकी एक टीका (सर्वार्थसिद्धि नामकी) भी बनायी थी। वर्द्धमान मुनीन्द्र वे ही थे जिनके मंत्रके प्रभावसे होय्सलने बाघको वश किया था तथा फिर दुनियाँपर शासन किया था। वासुपूज्य-व्रती हुए। बल्लाल-रायसे पूजित श्रीपाल सुखी हुए। पात्रकेसरी

हुए। त्रिलोकसार तथा अन्य दूसरे ग्रन्थोंके कर्त्ता नेमिचन्द्र सैद्धान्तिक-सार्व्वभौम हुए; जिनके चरण चामुण्डराय पूजते थे। माधवचन्द्र, अभयचन्द्र, जिनचन्द्रार्य्य, इन्द्रनन्दि, वसन्तकीर्त्ति, विशालकीर्त्ति, शुभकीर्त्ति-देव, पद्मनन्दि-मुनि, माघनन्दि तथा सिंहनन्दी हुए। चन्द्रप्रभ-मुनि, वसुनन्दि, माघ-चन्द्र, वीरनन्दि, धनञ्जय, वादिराज हुए। षट्-तर्क्कवक्ता धर्म्मभूषण-गुरु, जिनके चरण-कमलोंको राजाधिराज परमेश्वर, राजा देवराय नमन करता था। विद्यानन्द-स्वामीके एक अत्युत्तम पुत्र सिंहकीर्त्ति-व्रतीन्द्र हुए थे। अश्वपतिके समयमें यही एक महान् तार्किक था जिसने दिल्लीश्वर महमूद सुरित्राणकी सभामें बौद्ध और दूसरे वादियोंको परास्त किया था। विशालकीर्त्तिने जो एक अच्छे वक्ता थे और बलात्कारगणके मुख्य अग्रणी थे, सिकन्दर सुरित्राणसे अच्छा सन्मान पाया था। उन्होंने विद्यानगरके शासक विरूपाक्ष-रायकी सभामें परवादियोंके समुदायको परास्त कर एक विजयपत्र (a certificate of victory) प्राप्त किया था। देवप्प दण्डनाथके नगर आरगमें उन्होंने जैनधर्म्मका प्रतिपादन किया था और ब्राह्मणोंने उनका सन्मान किया था। विशालकीर्त्तिके विद्यानन्द-स्वामी नामका एक पुत्र था, जिसका साल्व-मल्लि-राय आदर करते थे। वह पुत्र तीनों आगमोंमें (धवल, जयधवल और महाबन्ध ही तीन आगमोंके नामसे प्रतीत होते हैं।) पारङ्गत, काव्यके गुणोंसे अलङ्कृत, कई टीकाओंके बनानेमें प्रवीण, परवादीरूपी मेघोंके लिये प्रचण्ड वायुके समान था।

स्वामी-विद्यानन्दके देवेन्द्रकीर्त्ति नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जो भट्टारकोंमें अग्रणी था। उनकी स्तुति व प्रशंसा। उनके चरण-कमल कृष्ण-रायके भाई अच्युत-रायके मुकुटसे पूजित थे।

विद्यानन्द-मुनीश्वर राजा साळुव-कृष्ण-देवकी भक्तिसे पूजित थे। साळुव-कृष्ण-देव राजा वीर-श्री-वर देवरायकी बहिनके पुत्र थे, पद्माम्बा उनका नाम था।

विद्यानन्द-स्वामीके एक सधर्मा थे, जिनका नाम नेमिचन्द्र-मुनीन्द्र था। उन्होंने पोम्बुर्च्चमें पार्श्वनाथकी वसति (मन्दिर) तीन मञ्जिलकी बनवायी थी और बड़ी भक्तिके साथ इसकी प्रतिष्ठा की थी।

विशालकीर्त्तिके सधर्मा अमरकीर्त्तिका उल्लेख। विशालकीर्त्ति-योगीन्द्र-भट्टसे देवेन्द्रकीर्त्तिकी उत्पत्ति। देवेन्द्रकीर्त्यार्य्य—जो पाण्ड्य राज्यसे पूजित थे—वर्द्धमान-मुनि उत्पन्न हुए थे। उनकी प्रशंसा।

देवेन्द्रकीर्त्ति मुनिराजके पुत्र वर्द्धमान-मुखीके द्वारा निर्मित श्लोक बहुत अच्छे हैं। जबतक पृथ्वीपर दया और 'धर्म्म' हैं तबतक यह 'धर्मशासन' स्थिर रहे।

रामचन्द्रके समयका यह धर्म शासन है।

विद्यानन्दके सम्बन्धी वर्द्धमान-मुनीन्द्रके द्वारा लिखित तथा देवेन्द्रकीर्त्तिके द्वारा आहत और सम्मति-प्राप्त यह धर्मशासन हमेशा स्थिर रहे।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 46]

६६८

मद्दगिरि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न।

[वर्ष खर = १५३१ ई० ? (लू० राइस)।]

[मद्दगिरि (दोड्डेरि परगना) में, जैन-बस्तिमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गम्भीर-इत्यादि ॥

क(ख)र-संवत्सरद वैशाख-शुध (द्ध) ५ लु जिनसेन-देवर शिष्यराद माणिक्य ··· ळचिसेनर मल्लिनाथ-स्वामि ··· · ··· गोवि दानि-मयर हेण्डति जयम मल्लिनाथ-देवरिगे अमृत-पडिगे आहार-दानके ·· ···

[जिन शासनकी प्रशंसा। (उक्त सालमें), जिनसेन-देवके शिष्य माणिक्य ··· लचिसेन, मल्लिनाथ-स्वामिके ··· ··· ··· ··· ··· गोवि-दानिमयकी स्त्री जयमने (उक्त) भूमि पूजाके लिये मल्लिनाथ-देवको प्रदान की।]

[EC, XII, Maddagiri tl,. No. 14]

६६९—६७०—६७१

श्रवणबेल्गोला;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६७२

नरलै;—संस्कृत

[सं० १५९७ = १५४० ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Bhavnagar ins., p. 140-143, t. & tr.]

६७३

अञ्जनगिरि;—कन्नड़-भग्न।

[शक १४६६ = १५४४ ई०]

(अञ्जनगिरिमें एक पाषाणपर)

श्री शान्तिनाथाय नम ॥ निर्व्विघ्नमस्तु ॥ शुभमस्तु ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री-मूलसङ्घ देशीगण पुस्तकगच्छ कुण्डकुन्दान्वयद् थिङ्गुलेश्वर-बळिय श्रीमद् बेळुगुल-पुरवराधीश्वर गुम्मट-जिनेश्वर-पादपद्ममत्तमधुकरायमानराद तत्कालधर्म्मप्रवर्त्तकराद धर्म्माचार्य्यर बिरुदावलि येन्तेन्दोडे ॥ पंडित-पुण्डरीक-कुलमं परिबोधिसियुर्व्वी-कोर्म्मे-उद्दण्ड-कुवादिहृत्-तममनोडिसि कूडे दिगम्बर-प्रभा-मण्डन-वृत्तमं तळेदु भव्य-रथाङ्गमनोवुतावगं पण्डित-देव-सूर्य्यनेसेदं नयवाग्-रुचियिं निरन्तरम् ॥ स्वस्ति श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्य्यं महावाद-वादीश्वर रायवादि-पितामह सकल-विद्वज्जन-चक्रवर्त्तिगळुं बल्लालराय-जीवरक्ष-पालकाद्यनेक-बिरुदावलि-विराजमानरुमप्प श्रीमच्चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवरुगळ

प्रशिष्यराद तच्छिष्य **श्रीमदभिनवचारुकीर्त्ति-पण्डित-देवरुगळ** प्रियशिष्यराद तस्याग्रजशिष्य श्रीमच्चारुकीर्त्तिपण्डित-देवरुगळ सतीर्थ्यराद श्रीमच्छान्ति-कीर्त्ति-देवरु [ग] ळु शक-वर्ष ॥ १४६६ सन्द वर्त्तमान **क्रोधि संवत्सरद** कार्त्तिक शुद्ध १५ लू बरसिद शिला-शासनद क्रमवेन्तेन्दोडे तम्म गुरु **श्रीमदभि-नव-चारुकीर्त्ति पण्डित देवरुगळु** । कलि-काल-धर्म्म-तीर्थ-प्रवर्त्तन-निमित्त-वागि सुवर्न्नावति-नदियिन्द स्वप्न-प्रत्यक्षरागि **शान्ति-तीर्थेश्वररनु अनन्तनाथ-**स्वामियु **शक-वरुष १४५३** नेय विकृतु-संवत्सरद चैत्रदलु बिजे-माडलागि **अञ्जनगिरिय**-अग्र-निवासियागिद्द शान्तिनाथ-स्वामिय बसदिगे बिजेमाडिसि गिरि-यग्रदल्लि दारुमयद-बसदिय माडिसि खर-संवत्सरद चैत्रमासदल्लि स्वानुजराद **कोणलनगरद (गुड्ड) शान्तोपाध्याय**र कय्यिन्द प्रतिष्टेय माडिसि शिला-मयवाद बसदिय माडिसेन्दु बुद्धि गतिसलागि आल्लिन्द मुन्दे क्रोधि-संवत्सरद कार्त्तिक शु १५ नेलेगे कलु-गेलस हालदारेगल नडसिद विवर **नञ्जरायपट्टणक्के** सलुव चेम्मत्ति बूतन्हळि-मलगनकेरेय समस्त-हलरि कलु-गेलसक्के सन्द होन्नु ग २०० हुनसोगेय आदि-श्री-अव्वगळु अम्मन-होसहळ्ळिय भुजबलि-श्री-अव्वगळिन्द गर्व्व-गृहव गौबल्लि कलु-गेलसक्के सन्ददु ग ३० होन्नु तम्म गुरु **श्रीमच्चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवरुगळिगे** ताविक्तण्डक्के मूरु **हालदारे** मध्य-बागिललि वोन्दु-होत्तिन नैवेद्यक्के शेल सन्ददु ग ५० आहार-दानक्के शेल सन्ददु ग [५०] । शुभकृतु-सवत्सरद पा (फा) ल्गुन शु १५ लू **अञ्जनगिरिय** शान्तीश्वरगे त्रिदिरे सीताळ-मळिगेय समस्त **हलरु** कन्नडिग-हलरु नानादेसिय-हलरु माडिद धर्म्म । [नू] आड कट्टिद कालु-नडे वोण्डक्के ग ०-१ वनु आहार-दानक्के कोडुवेयु येन्दु बरसिद ई धर्म्म-शासन श्री-धर्मक्के तप्पिदवरु गो ब्राह्मर कोन्द दोषक्के होवरु [॥]

(बायीं ओर) **शक वरुषं १४६५** नेय **शुभकृतु-संवत्सरद** चैत्र शुद्ध १२ बुधवार वृषभ-लघ्न (ग्न) दल्लि गुरु तण्ड **देहारगळु** कुल-प्रतिष्टे यायितु ॥ दानशालेगे हल्लि बयल गद्देय क्रयद मौल्य ग ७० कोलायरु होस गद्दे गैदुदक्के कोट्टदु ग ५० उभयं वेच्च ग १२० क्के आदाय श्रीमच्चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवरु गळ शिष्यरु **हुलसोगेय** आदि-श्री-अव्वगळु भुजबलि-श्री-अव्वगळिं ग २४ बस-

वप [त्न] द अनन्तमति-अव्वगळु नेमि-श्री-अव्वगळि सन्ददु ग २४ मुड्डि-सट्टिय विजेयू [अ]-श्री-अव्वगळि सन्ददु ग १० मलुगनहळिय आचक्कगळि सं ग १२ हारुव-सट्टिय विजेय-ण-शट्टिरिं ग ३० कण्णनूर देव-रम्म-शट्टियरिं ग १२ [अ] मुं [डि] य अ [र] स ······ (शेष भूमिमें गड़ा हुआ है) (दायीं ओर) [पंक्ति ६९—१०७ में तीन वे ही अन्तिम श्लोक हैं जो 'स्वदत्ता परदत्ता, दानपालनयोर् तथा 'स्वदत्ताद्द्विगुण' हैं]। ई माडिद धर्मवु आचन्द्रार्क्क-स्थायियागि नडेयलि येन्दु बरसिद धर्म-शासनक्के मङ्गल-महा श्री श्री ।

[श्री-मूलसङ्घ, देशीगण, पुस्तकगच्छ, कुण्डकुन्दान्वय, और इङ्गुलेश्वर शाखाके एक पण्डित-देव थे । इनका नाम **चारुकीर्त्ति**-पण्डित-देव था । इन्होंने **बल्लाल-राय**के प्राणोंकी रक्षा की थी । इसीलिए इनको लेखमें 'बल्लालराय-जीवरक्षपालक' कहा गया है । इनके प्रशिष्यके शिष्य श्रीमदभिनवचारुकीर्त्ति-पण्डित-देव हुए । इनके प्रिय शिष्य श्रीमच्छान्तिकीर्त्ति-देव ने, शक वर्ष १४६६ के बीत जानेपर जब क्रोधी संवत्सर विद्यमान था, तब कार्त्तिककी पूर्णिमाको एक शिलालेख इस तरह लिखवाया :—

उसके (शान्तिदेवके) गुरू श्रीमदभिनवचारुकीर्त्ति-पण्डितदेवने—जब कि, कलिकालमें धर्मतीर्थकी प्रवृत्तिके लिये स्वयं शान्तितीर्थेश्वर और अनन्तनाथ-स्वामी शक-वर्ष १४५३, जो कि विकृत संवत्सर था, के चैत्रमें सुवर्णावती नदीके किनारेसे आकर प्रगट हुये,—अञ्जनगिरिके शिखरपर स्थित शान्तिनाथ स्वामीकी बसदिके दर्शन कर, तथा **खर** संवत्सरके चैत्र महीनेमें पहाड़ीकी चोटीपर एक लकड़ीकी बसदि बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा अपने छोटे भाई कोनसनगुड्ड शान्तो-पाध्यायके हाथ से करायी और एक पत्थरकी बसदिके बनानेका निर्देश किया ।

तत्पश्चात्, अगले वर्ष क्रोधी संवत्सरमें, कार्त्तिकी पूर्णिमाको जब पाषाणकी नींव पड़ गयी तब 'हालदारे' (शायद मन्दिरके खर्चके लिये किया गया चन्दा) का जो संग्रह हुआ वह लेखमें दिया हुआ है। 'होन्नु' और 'गद्याण' ये उस समयके सिक्के विशेष हैं ।

शुभकृतु संवत्सरमें, फाल्गुणकी पूर्णिमाको समस्त 'हलरु' का 'धर्म्म' (शायद ट्रस्ट) 'धर्म्म-शासन (ट्रस्टडीड) में लिखकर किया गया। १४६५ शक वर्ष, जो कि शोभकृतु वर्ष था, चैत्रशुक्ला त्रयोदशी, बुधवारको २ शरीर रक्षक (देहारगळु) कुल-प्रतिष्ठाके लिये नियत किये गये थे; इसके बाद एक दान-शालेके लिये जो चन्दा भरा गया था उसका वर्णन है।]

[EC, I, Coorg. ins., No. 10]

६७४

गोवर्द्धनगिरि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १२६० ई० का (लू. राइस)]

[गोवर्द्धनगिरिमें, वेंकटरमण मन्दिरके सामनेके पीतलके खम्भेपर]

(पूर्व मुख) श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

नमश् श्री-नेमिनाथाय जगदानन्द-दायिने।
यद्-बुद्धि-कामिनी-मध्ये त्रिलोकी त्रिवलीयते॥
लीलाघ्रातैकवल्ली-कुसुमवदभवत्कम्बुराराबमाना-
शैयाभूद् व्यालरूत्रा झटिति मुकुळिता तूणिवच्चारुशर्ण्णम्।
पञ्चेषोरिक्षु-चाप-प्रतिनिधिरभवद् भूतले यस्य शक्त्या
तं वन्दे मुक्ति-कान्ता-वश-गत-मनसं नेमिनाथं नितान्तम्॥
यत्कान्त्या भुवन-त्रये चुलुकिते कृष्णन्ति सर्व्वे जना-
सर्व्वं विष्णुमयं जगत् प्रवचनं तस्मादभूद्भूतले।
सोऽस्मान् पातु जलोऽच्युतेश्वर-शिरोलङ्कार-पादाम्बुजो
दिव्य-ध्यान-पवित्रित-त्रि-भुवनः श्री-नेमि-भट्टारकः॥
अमृत-श्री-कान्तमागिर्दखिल-सुख-समुच्छ्राय मागिर्द्दनाना-

समल-प्रध्वंसि (सि) यागिदं निमिष-खग-संसेव्यमागिदं देवो-
त्तमनागीशोत्तमङ्गार्प्पित-निज-पदमागिदं वाराशि-चन्द्रो- ।
पममागिर्द्दि-निजाकारमें रामेगे विळासास्पदं नेमिनाथा ॥
यत्कारुण्यमशेष-भव्य-जगता भास्वत्-तनुत्रायते
यद्-दिव्य-क्रम मञ्जु-कञ्ज-युगळं श्री-देव-रत्नायते ।
यद्-वाक्-पंक्तिरपार-जन्म-जलधे. सेतु-प्रबन्धायते
सोऽयं रक्षतु रक्षिताखिळ-जन श्री-गुम्मटाधीश्वरः ॥
जगेयल् श्री-योजण-श्रेष्ठिय-विशद-यशो-मूर्त्ति- सुस्फाटिकोद्यन् ।
मृगराजोद्भासनं चन्द्रनवोलेसेये तल्लक्ष्म-लक्ष्मी-प्रभा-पुञ्-
जगळेम्बन्तात्म-देह-प्रभेगलेसेयलोप्पिर्द्द नोल्द् ज्ञवण-श्रे- ।
ष्ठिगे निच्चं माळ्के नित्योत्सवमननुपमं नेमिचन्द्रं जिनेन्द्रम् ॥
जम्बू-द्वीप-महाब्ज-दक्षिण-दले श्री भारते विद्यते
देशः पश्चिम-वार्धि-पूर्व्व-तटग श्री-तौळवाख्यो महान् ।
तस्मिन्नम्बु-नदी-सु-दक्षिण-तटे श्री-पुण्ड्रवद्भासते
श्रीमत्क्षेमपुरं पुरन्दर-पुर-प्रख्यं स्फुरद्-गोपुरम् ॥
वर-जिन-चैत्य-गेह-नृप-सद्म-नियोगि-[··] वास-वैश्य-मन्-
दिर-निकुरम्बदिं विमल-धर्म्म-दयान्वित-दान-शौण्डरिम् ।
गुरु-यति-वृन्ददिं कवि-बुधोत्करदिं वर-भव्य-कोटियिम् ।
सुरुचिर-गेरसोप्पेयवोलाव-पुरं जगदोळ् प्रसिद्धमे ॥
श्रीमत्-क्षेमपुरेश्वरस्सकल-भू-भूपाल-चूडामणिः
श्रीमद्देव-महीपतिर्व्विजयते सद्-राज-विद्या-पति ।
येनकारि कलौ महेन्दर-विषयं श्री-गुम्मटाधीशितुर्
स्त्लोकात्यद्भुत-मस्तकाभिषवणं जन्माभिषेकोपमम् ॥
आ-महाराजनन्वयमेन्तेन्दोडे ॥
जलनिधि-रेखे पत्र-वळयं धन-वेत्ते सु-केशराळि भू- ।
तळमे नवाम्बुजं निज-यशं विशरन्मकरन्द गन्धमु- ।

ज्वल-जिन-धर्म्म-सूत्र्थेंनिनलर्च्चिंदुदं निन-हस्त-पद्मदोळ् ।
तळेदु सु-लीलेयिन्दरेवरा-पुरमं नृपराळदु पोगळुम् ॥

अन्तगण्य-पुण्य-निधिगळुं कलि-मुख-हस्त भावनियङ्ककार कठारित्रिणेत्राद्यनेका-न्वर्थं-बिरुदावळी-विराबमानरुं **सोम-वंश काश्यप-गोत्र**-पवित्ररुमेनिसिद अनेक-भूपालकरा-पुरमनाळ्द बळियम् ॥

तस्मिन् क्षेमपुरे नृपस्समभवत् सद्-वंश-मुक्ता-मणि
तेजो-राशिरचिन्त्य-निर्म्मलतरस्त्रासोज्झितात्मोदयः ।
सद्-वृत्त-प्रथित-स्फुरद्-गुरु-गुण-स्थानं जगद् भूषणम्
श्रीमद्-**भैरव-भूपति**र्जिन-मत-क्षीरोद-राकापति ॥
तदनुजवर-रत्न **भैरवाख्य**स्ततोऽभूत्
तदवरज-शशाङ्कः श्रीमद**स्त्र-क्षितीशः** ।
तदुभय-नरपाभ्यामुत्तरे **साल्व-मल्लः**
समभवदवनीशस्तत्कनीयान् महीयान् ॥
बुध-जन-सुर-धेनु सोम-वंशाब्ज-भानु
कृत-जिन-रथ-यात्र· काश्यपोदार-गोत्र ।
वर-कलि-मुख-हस्त सद्गुण-व्रात-शस्तस्
त्रिणयन-नर-मल्ल शो।(सो।)ऽभवत् **साल्व-मल्लः** ॥
पश्चात् **साळुव-मल्ल-राय**-नृपतेः श्री-भागिनेयाग्रणी·
सत्पोपाय-विचार-चारु-चतुर-श्री-**देव-रायो**ऽभवत् ।
श्रीमत्**पण्डित-राय**-राज-गुरु-सत्-पादाब्ज-पुष्पन्धय ।
सत्ताज्ञोन्नत-वैभवाढ्य-नगरी-राज्यैक-रत्नामणि ॥
(दक्षिण मुख) तद्-भागिनेयोऽजनि **साल्व-मल्लस्**
तस्यानुजोऽभूद् वर-**भैरवेन्द्रः** ।
यौ लोक-पुण्येन तरा विभातम्
जिनेन्द्र-चन्द्राविव सत्पयेशौ ॥

वृ ॥ समराम्भोराशियोळ् सुत्तुव सुळिगळिवेम्बन्ते नीनेरिदश्वो- ।
त्तमदिन्दं वेडेयङ्गळ् पशरिसे रिपु-राजेन्द्ररेरिद्दं मत्ते- ।
भ-महा-वाजि-व्रजङ्गळ् पडगुगळवोलद्दंल्के नुङ्गुत्तमिर्क्कुम् ।
क्रमदिं त्वत्पादयुग्मं मकर-युगदवोल् साल्व-मल्ल-क्षितीश ॥
श्रीमद्-भैरव-भूप-मेरुमनिशं ··· सर्व्वं-देवालयम्
सद्-गो-मण्डलमाश्रमस्त्यपि यं अस्पृष्ट्वा द्विजेशं करैः ।
तन्मन्ये तवक-प्रताप-सवितुः साम्यश्च साद्राम्बरो
नाहं नाथमिति प्रकम्पित-तनु सत्यापयत्यंशुमान् ॥

अन्ततिप्रसिद्धराद युवराजरेनिसिद इर्व्वरळियन्दिरिं भक्ति-युक्तराद उळिद राज-कुमाररिं दण्डोपनतराद अन्य-मण्डलिकरिन्दोलगिसिकोळ्पट्ट देव-रायं तुळु-कोङ्कण-हैवे-मुन्ताद भूमण्डलमं भूमण्डलाखण्डल-नेनिसि आळुत्तमिरेम् ।

श्रा-पोळल्गोळ् श्री देव-म- ।
हीपाल-सुपालितोरु-तेजोमान्य- ।
व्यापित-राज-श्रेष्ठि र- ।
मा-परिवृढनिप्पंजक्कण-श्रेष्ठि-वरम् ॥
आतन कान्ते शील-गुणवन्ते कला-गुणवन्ते जैन-मार्ग्ग-
आतत चित्ते धर्म्म-पर-चित्ते जन-स्तुत-वृत्ते सत्कुल-
ख्यात सुरूपे सन्मति-कलापे विनिर्गत-कोपे एन्दुवा-
त्री-तळमोप्पे देवरसियं पोगुल्गुं गुण-रत्न राशियम् ॥

अवरिर्व्वरन्वयमन्तेन्दोडे ॥ श्रीमद्-राजाधिराजं वनवसि-पुर-वराधीश्वरं कोङ्कण-हैव राज्याधीशनप्प चन्दाकरद कदम्ब-कुल-तिलक कामि-देव-महाराजन दण्डाधिनाथ कामेय-दणायकन सु-पुत्र रामण-हेग्गडेगं रामकर्गं पुट्टिद अष्ट-पुत्ररोळगे अतिप्रसिद्धनाद योजन-श्रेष्ठिगे तङ्गणनुं रामकनुमेम्ब इर्व्वर कुल-वधुगळादरवरोळु तङ्गणङ्गे रामण-श्रेष्ठियुं रामकङ्गे कल्प-सेट्टियुमेम्ब तनुजरादर-वरोळ् कूडि ॥

कं ॥ प्रियतमेय दय्वदिन्दं । नयन-द्वयदिन्दे वक्त्रमोप्पुव-तेरदिम् ।
भयदक्कदाने दन्त- । द्वयदिन्देसेवन्तेयोप्पिदं योबौणम् ॥

व ॥ अन्तेनिसिद् योजण-श्रेष्ठी श्रीमदनन्तनाथन चैत्यालयमं चेमपुरदोळ् कट्टिसि अन्तामिझ्बदिर्द्दं कीर्त्ति-पुण्यक्के नेलेयागिदूर्द्दं अन्त्य-कालदोळ् तन्न राज-श्रेष्ठि पदवियं तन्न पुत्ररिगोप्पिसि सुर-लोक-प्राप्तनादनित्तलु ॥

कं ॥ रामण-सेट्टिय तनुजम् ।
कामनिभ तम्मण,ङ्कनातन तनयम् ।
श्री-महित-नागपङ्कम् ।
भूमीश्वर-मान्यनादनैदे वदान्यम् ॥

व ॥ आ-नाग-सेट्टिय कुल-स्त्रियरारेन्दोडे सातमनुं नागमनुमेन्दु यिर्व्वरादर नगरी-राजदोळ् प्रसिद्धमाद् कुदुर-पुरदोळ् पुट्टिद सर्व्वं-तेजो मान्यदिन्देसेव तोळहळ-वळिय आ-सातम्मगं हट्टिगन-वळिय आ-नागप्प-श्रेष्ठिग तोटियण्ण-सेट्टियेम्ब सुपुत्रनादम् ॥ मत्तं नागमनन्वयमेन्तेन्दोडे ॥

कं ॥ यिदु सिरिगे तवर्मनेयेनि- ।
सिद नगरी-सीमेयाद मागोडोळ् पु- ।
ट्टिद दण्डुवळिय सोवगिन ।
मोदलेनिसिदनल्ते नरस-नायकनेम्बम् ॥

अन्तेनिसिद् नरसण-नायक्कं तन्न जन्म-स्थानमाद मागोडोळु चैत्यालयमं कट्टिसि श्री-पार्श्व तीर्थ्थेश्वररनल्लि प्रतिष्ठेयम् माडिसि चतुर्व्विध-दानक्के यथायोग्यमागि क्षेत्रादिकमम् कोट्टु पुण्यके भाजननादम् ॥ मत्तमातन मोम्मगळु मारक्कनं हैवे-राज्यक्के मुख्यवाद हरियट्टेय-सीमेगे वन्द अन्तरवळियल्लि हुट्टिद हट्टिगन-वळिय नेमण-सेट्टिगे कोडे अवगें हुट्टिद नागमनमा-नेमण-सेट्टि तन्न सोदरळिय नागप्प-सेट्टिगे धारापूर्व्वकं कोडे ॥

वृ ॥ पति-चित्तानुगुण-प्रवर्त्तनदिनत्याश्चर्य्य-सौकर्य्य-सं- ।
युत-शीलोन्नतियिं जिनेन्द्र-पद-पूजासक्त-सद्-भक्तियिम् ।

सततोत्साह-सुदानदिं पर-हित-व्यापार-चातुर्य्यदिम् ।
क्षितियोळ् नागमनान्तळुत्तम-यश -सौभाग्यमं भाग्यमम् ॥

कं ॥ आ-नागप्प-श्रेष्ठिगम् ।
आ-नागम्मङ्गे पुट्टिदर् स्सुतरिर्व्वर् ।
मू-नुतम्भणेरम्बी- ।
दानोन्नत-मल्लि-सेट्टि येम्बी-पेसरिम् ॥

व ॥अन्ता-नागप्प-श्रेष्ठि पुत्र-कळत्र-मित्ररोळ् कूडि सुखदिनिर्द्दम् ॥ (पश्चिम मुख) मत्तमम्बण-श्रेष्ठिय कुल-स्त्रीयरारेन्दोडे मल्ल मनुं देवरसियुमेम्बिर्व्वरोळ् देवरसिय अन्वयमेन्तेन्दोडे ॥ धरेयोल् नेगळ्ते-वडेद पिरि-योजण-श्रेष्ठीय पुत्र रामण-सेट्टिय सापत्नं रामक्काम्बा-गर्भाब्धि-चन्द्रनेनिसिद कल्लप्प-श्रेष्ठि दान-पूजादि-सत्-कृत्यदि धरणियोळ् प्रसिद्धनादम् ॥

कं ॥ कल्लप-सेट्टिय तनुजम् ।
पुल्लशराकार योजण-श्रेष्ठि-वरम् ।
सल्ललित-यशं जिन-पद- ।
पल्लव-कमनीय-भक्ति-लतिकाब्रोगम् ॥

अन्ततिप्रसिद्धिनाद राज-श्रेष्ठियाद योजण-श्रेष्ठिगे तोगरसियोळ् पुट्टिद होलेयनळिगे श्रेष्ठनाद देवी-मावन्तन वडहुट्टिद वङ्कन बळिलोळु चैत्यालयमं कट्टिसि धर्म्मं माडि प्रसिद्धनाद बिदरु-नाडिगे मुख्यनाद मादु-गौडन तङ्गि वीरक्कनेम्ब कन्निके वधुवागे आ-योजन-श्रेष्ठि सुखदिनिरुत्तं तन पितृ कल्लप्प-श्रेष्ठिय नियोगदिं क्षेम-पुरदोळु चैत्यालयमं द्वि-तलमागि कट्टिसि केळगण नेलेयोळु श्री-नेमीश्वरन प्रतिमेय मेगण नेलेयोळु श्री-गुम्मटनाथन प्रतिकृतियं प्रतिष्ठेयं माडिसिद आ- योजन-श्रेष्ठिय कीर्त्तिय मूर्त्तियन्ते पुण्यद पुञ्जदन्तिर्द्दी-चैत्यालयमेन्तेन्दोडे ।

वृ ॥ हरि-वंशारिष्टनेमि-स्थिर-निवसनदिन्दूर्ज्जयन्ताद्रियिं मा- ।
स्कर-रत्न-स्पर्द्धि-कूपोन्नतियिननुदिनं रोहणाद्रीन्द्रमं मा- ।

सुर-सौधर्म्मागमर्पि-स्थितियिनमर-शैलेन्द्रमं सत्पताको -।
त्करदिं नाट्याङ्कम पोल्तेसवुदु भुवन-स्वामि-नेमीश-वासम् ॥

अन्तेसेव चैत्यालयमं कट्टिसि सुखदिनिरुत्तमा-योवण-श्रेष्टि तनगं वीरक्कं पुट्टिद सुतरोळु ।

कं ॥ संगरसनिन्दे किरियळु ।
मंगल-गुणि कल्लपाङ्गनिन्दं पिरियळ- ।
नङ्गन जय-सिरियन्ते म- ।
नङ्गोळिप नतक्कनेम्व कन्या-रत्नम् ॥

व ॥ आ-कन्निकेयं वट्टकळद सेट्टिकाररोळु मुख्यनेनिसिद संवकोच्चं ··· होळेयोळु चैत्यालयमं कट्टिसि दान-पूजादिगळिन्दति-प्रसिद्धेयाद कञ्चधिकारिय पेण्डाति माळधिकारितिगे पुट्टिद पारिसणधिकारिय तङ्गे गुम्मट-देविगं पुट्टिद कञ्चण-सेट्टिगे विवाह-पूर्व्वकं कोडे ।

कं ॥ आ यिर्व्वरिगं पुट्टिद- ।
ळायत-जलजाक्षि देवरसियेम्बळ् ताम् ।
कायज-रायन मोह-स- ।
हायद शक्तियवोलेशेव रूपोन्नतियिम् ॥
आकेयनुजाते मदन-प- ।
ताकेयवोल् जनद मनद कोनेयोल् निमिर्दा- ।
लोके सुते पुट्टिदळ् सी- ।
लोन्नते मल्लि-देवियेम्बी-पेसरिम् ॥

आ-(अ) नतक्कमिन्तोप्पुव पेण्-मक्कळिर्व्वरं पडदु अवरिर्व्वरोळ् पिरिय-मगळु देवरसियम् । तनगण्णनागल् वेडिद्दं नागण्ण-श्रेष्टिय मग अम्बुवण-श्रेष्टिगे विवाह-पूर्व्वकं कुडे ।

कं ॥ रतियुं रतिपतियुं श्री-
सतियुं श्रीपतियुमिर्प्प-तेरदिं भोग- ।

स्तुतियनतुभविसुत्त जिन- ।
मतदोळति-प्रियरागि सुखदिन्दिर्द्दर् ॥

व ॥ अन्ता-दम्पतिगळिर्व्वरं सुखदिनिरुतमोन्दानोन्दु-दिवसं वन्दना-भक्तियिं नेमि-जिन-चैत्यालयक्के बन्दु ।

वृ ॥ जन-नेत्र-भ्रमरावली-कुसुमितोद्यानं मुनीन्द्रौघ-चि- ।
त्त-नवीनाम्बुरुह-प्रभात-समय विद्वज्जनस्तोत्र-दि- ।
व्य-नदी-पूर-हिमाचलं निज-महा-सौन्दर्य्यमेन्देम्ब सज्- ।
जनता-संस्तुति निन्नोळेनमदुंदै श्री-नेमि-तीर्त्थेश्वर ॥

एम्बिवु मोदलाद स्तुतियिं नेमि-स्वामियं स्तुतियिसि मुनि-वृन्दारकरं वन्दिसि बळियं अभिनव-समन्तभद्र-मुनियिं धर्म्ममं केळ्दु मनदे गोण्डु आ-दम्पतिगळिर्व्वरुं तमगे पुण्यार्थवागि तमगे अजनाद योजण-श्रेष्ठि कट्टिसिद नेमीश्वरन चैत्याल-यद मुन्दे मानस्तम्भमं माडिद्येवेन्दु गुरुगळिगे बिन्नविसि तम्म गृहक्के पोगि तम्म बळ्वुट्टिदराद कोटण-सेट्टि-मल्लि-सेट्टि-मुन्ताद बान्धवानुमतदिं तम्म वोडेयने-निसिद देव-भूपालङ्गे ई-धम्मगार्य्यवनेचरिसि आ महाराजननुमतदिं चतुस्संघदनु-मतदिम् (उत्तर मुख) शुभ-दिन-दोळ् कास्यमय-मानस्तम्भमं माडिसि दयेवेन्दु निश्चयिसिर्प्पन्नेगम् ।

कं ॥ कमलिनियुं कुमुदिनीयुम् ।
क्रमदिं कासार-लक्ष्मिगुदयिपवोल् श्री- ।
सम-देवरसिगे पुट्टिद- ।
रममेने पद्मरसि देवरसियेन्दिर्व्वर् ॥

अन्तिर्व्वरु-सुतेयरं पडेदु अदे-शुभ-सकुनमादन्ते कास्यमय-मानस्तम्भमं माडिसि आ-चैत्यालयद मुन्दे प्रतिष्ठेयं माडिसिदरु । आ-(मा) मानस्तम्भक्के

कं ॥ पोन-कळसमने माडिसि ।
सन्नुत-पद्मरसि-देवरसि इर्व्वर् ताम् ।

उन्नत-मानस्तम्भकेयू ।
उन्नतियागिप्प-तेरदे पदविन्दित्तर् ॥

आ-मानस्तम्भमेन्तेन्दोडे ॥

वृ ॥ भरदिं जन्माब्धियं दाण्टिसुव वर-महा-धर्म्ममेन्देम्न पोतक्
उरुकूप-स्तम्भमम्बाङ्कन विशद-यश -पट्टिका-स्तम्भमेम्बन्त्- ।
इरे मानस्तम्भमा-कूटदोळेसेव चतुर्ज्जैन-बिम्बाङ्घ्रि-पूजा- ।
परिकीर्ण्णस्फार-पुष्पाञ्जलियोलेशेवुदी-व्योम-तारा-कदम्बम् ॥
श्रीमन्नेमीश्वरोद्यज्-जिन-गृह-पुरतः प्रस्फुरत्-कास्य-मान-
स्तम्भं सद्धेमकुम्भं शुभमभिनव-सामन्तभद्रोपदेशात् ।
नागप्प-श्रेष्ठि-पुत्र स्फुरदुरु-विभवादम्बण-श्रेष्ठि-वर्य्यः
सद्-धर्म्म-च्छत्र-दण्डं प्रमुदित-मनसाकारयद् भूरि-शोभम् ॥

अन्तु मान-स्तम्भमं माडिसिदरु ॥

[जिन-शासनकी प्रशंसाके बाद, नेमिनाथ भगवान्को नमस्कार और उनकी प्रशंसा । गुम्मटाधीश्वरसे रक्षा की कामना । अम्बण-श्रेष्ठीको नेमिचन्द्र जिनेन्द्र की ओरसे मङ्गल-कामना ।

जम्बू-द्वीपमें भारत देश, उसमें तौलव देश; उसमें अम्बुनदीके दक्षिण किनारे पर क्षेमपुर है । उसमें गेरसोप्पे नगरकी शोभाका वर्णन ।

क्षेमपुर का अधीश देव-महीपति था । इस महाराज के वंशावतार का वर्णन —क्षेमपुर में पूर्व में कई राजा हुए । उनमें एक भैरव-भूपति था । वह जिन धर्म रूपी समुद्रके लिये चन्द्रमा था । उसके छोटे भाई भैरव, अम्ब-क्षितीश तथा साल्व-मल्ल थे । इनमेंसे साल्वमल्ल यद्यपि सबसे छोटा था, तथापि सबसे महान् था । उसको सोम-वंश तथा काश्यप-गोत्र का बताते हुए उसकी प्रशंसा की गयी है । उसके बाद, उसकी बहिनका पुत्र देवराय नगर और राज्य का वैसा ही बराबरीका रक्षक रहा । उसकी बहिनका पुत्र साल्व-मल्ल रहा, जिसका छोटा

भाई भैरवेन्द्र था। राजा साल्व-मल्लकी प्रशंसा। राजा भैरवकी मेरु-पर्वतसे उपमा देते हुए उसकी प्रशंसा।

जिस समय देवराय, इस तरह अनेकोंकी भक्तिके साथ तुळु, कोंकण, हैवे तथा दूसरे देशोंपर राज्य कर रहा थाः —

उस नगरमें, राजा देवसे रक्षित, महाप्रसिद्ध, राजश्रेष्ठी अम्ब्वण-श्रेष्ठी रहता था। उसकी पत्नी (प्रशंसा सहित) देवरसि थी। उनकी वंश-परम्पराका वर्णन·— राजाधिराज, बनवसि-पुरका मुख्य अधीश, कोंकण और हैव राज्यका मुख्य अधीश, चन्दाउर कदम्ब-कुल-तिलक कामिदेव-महाराज थे। उसके दण्डाधिनाथ कामेय-दण्णायकका पुत्र रामण-हेग्गडे और रामकके ८ पुत्र उत्पन्न हुए थे, जिनमें सबसे प्रसिद्ध **योजण-श्रेष्ठी** था, जिसका दो स्त्रियें तङ्गण और रामक्क थीं। पहिलीके रामण-श्रेष्ठी तथा दूसरीके कल्प-सेट्टि हुआ। इन अपनी प्रिय दो भार्याओं सहित योजण समृद्ध हुआ। इस योजण-श्रेष्ठी क्षेमपुरमें अनन्तनाथ चैत्यालय बनवा-कर तथा इसके अतिरिक्त और भी अगणित पुण्य प्राप्त करके अपना राज-श्रेष्ठिका पद अपने पुत्रोंको सौंपकर स्वर्गलोकको चला गया। दूसरी तरफ, रामण-सेट्टिका पुत्र तम्मन था, जिसका पुत्र नागप हुआ। उसके दो पत्नियाँ थीं, सातम और नागम। सातमसे इट्टिगमें तोटियण्ण-सेट्टि नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके बाद नागमका अवतार (उत्पत्ति) कैसे हुआ, यह बताया है। नागम और नागप्प-सेट्टिसे दो लड़के उत्पन्न हुए थे, अम्ब्वण-श्रेष्ठिके मल्लम और देवरसि नामकी दो पत्नियाँ थी। इसके बाद देवरसिकी उत्पत्तिका वर्णन है।

जब ये दोनों अम्ब्वण-श्रेष्ठी और देवरसि पूर्ण शान्ति और सुखसे रह रहे थे, एक दिन वे नेमि-जिन चैत्यालयमें आये, और नेमि-तीर्थेश्वरकी (उद्धृत) स्तुतिको दुहराते हुए मुनिगणका सम्मान किया। इसके बाद, अभिनव-समन्तभद्र-मुनिसे धर्म सुनकर और इसे हृदयमें धारण कर गुरुको सूचित किया कि वे अपने पितामह योजन-श्रेष्ठिके द्वारा बनवाये गये नेमीश्वर-चैत्यालयके सामने मानस्तम्भ बनवायेंगे। इसके बाद घर जाकर, अपने भाई कोरण-सेट्टि और मल्लि-सेट्टि और

अन्य रिश्तेदारोंसे सम्मति लेकर इन्होंने इस पुण्य-कार्यको करनेका इरादा देव-भूपालसे प्रकट किया। और महाराजकी सम्मति, चतुर्विध संघकी सम्मतिपूर्वक, एक शुभ दिन उन्होंने अपना इरादा पूरा किया तथा घण्टेकी धातु (Bell-metal) का स्तम्भ बनवा दिया। इसी अन्तरालमें, देवरसिके पद्मरसि और देवरसि नामकी युगल पुत्री उत्पन्न हुईं। उनकी ही ऊँचाई जितनी ऊँचाईका सुवर्ण-कलश चैत्यालयके सामने उस स्तम्भपर चढवाया।

इसके बाद मानस्तम्भका वर्णन है।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 55]

६७५

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १६२० = १५६३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

६७६

सिरोही—संस्कृत।

[सं० १६३४ = १५७७ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, P. 316
No XLIII, a]

६७७

हेग्गोरे;—कन्नड।

[शक १५०० = १५७८ ई०]

[हेग्गोरेमें, बस्ति के एक पाषाणपर]

श्री शुभमस्तु स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुषङ्गळु १५००
नेले प्रमाथि-संवत्सरद माघ-सुद्द १ लू श्रीमन्महामण्डलेश्वर श्रीपति-

राजगळ मग राजय्य-देव महा-अरसुगळ कुमाररु वल्लभराज-देव-महा-अरसुगळु ताउु आळुतिद्द मगरनाड होयिसळ-राज्यक्के सलुव बूडिहाळ-सीमे योळगण बस्तिय जिन-देवरिगे कोट्ट भू-दानद हेग्गेरेय बस्तिय मान्यद जीर्णोद्धारद क्रमवेन्तेन्दरे गुत्तिय हरदर सूरय्यन मग चिन्नवर गोविन्द-सेट्टियु हेग्गेरेय बस्तिय देवर-मान्यव पालिसबेकेन्दु बिन्नह माडिकोळलागि आतन बिन्न-हव पालिसलू तमगू अनेक-धर्माभिवृद्धियागवेकेन्दु हेग्गेरेय गौडनकेरेय केळगण (दानकी विगत) अक्षरदल्लू हदिनैदु-कोळग देवदायमान्यद गद्देयनू यी-आरभ्य-वागि प्रतिवर्ष प्रति-फलदल्लू नीर-सरदियलि कोट्टु बहेऊ एन्दु श्रीपति-राजगळ वल्लभराज-देव-महा-अरसुगळू पालिस्त बस्तिय देवदाय भू-दान जीर्णोद्धारवह शासन (वे ही अन्तिम वाक्य) श्री हेग्गेरेय स्थळदलु काडारम्भद होल ख˙˙˙४

[शुभमस्तु । स्वस्ति । (उक्तमितिको), महामण्डलेश्वर श्रीपति रायके पुत्र राजय्य-देव-महा-अरसुके पुत्र वल्लभराज-देव-यह अरसुने अपने द्वारा शासित मगर-नाडमें होय्सल राज्यके बूदिहाळ-सीमेमे बस्तिके जिन देवके लिये निम्न शासन, हेग्गेरे बस्तिके 'मान्य' की पुन· स्थापनाके लिये प्रदान किया; गुत्ति हरदरे-सूर्य्यके पुत्र चिन्नवर-गोविन्द-सेट्टिने इस वातका प्रार्थनापत्र देकर कि हेग्गेरे बस्तिके देवकी 'मान्य' चालू होनी चाहिये,—इस प्रार्थनापत्रको मान्य करनेके लिये, तथा अपनी समृद्धिके लिये, हम (उक्त) भूमियाँ जो कि कुल मिलाकर धान्यक्षेत्रके १५ कोळग (एक नाप-विशेष) होते हैं, फसलके समय बलका वार्षिक क्रम भी आजसे ही चालू करते हैं। वल्लभराज-देव-महा-अरसूके द्वारा प्रदत्त, बस्तिके देवदायका प्रस्थापक भूमिके दानका शासन ऐसा है। हेग्गेरे-स्थलमें (उक्त) शुष्क भूमिका दान भी हुआ।]

[EC, XII, Chik-Nayakan halli tl., No 22.]

६७८

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १६४० = १५८३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

६७६

तारंगा—संस्कृत और गुजराती ।

[सं० १६४२ = १५८५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[J. Kriste, EI, II, no v, No 29 (P. 33-34), t. et. a.]

६८०

कारकल;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १५०८ = १५८६ ई०]

श्री वीतरागाय नम ॥

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥
आचन्द्रार्क्कं स्थिरं भूयादायु श्रीजयसम्पदा ।
भैरवेन्द्रमहीकान्त श्रीजिनेन्द्रप्रसादत ॥२॥

अविघ्नमस्तु ॥ भद्रमस्तु ॥

तीर्थौघ सुखमद्वयं च कुरुताच्छ्रीपार्श्वनाथो बल;
कीर्त्तिं नेमि-जिनः सुवीर-जिनपश्चायु श्रियं दोर्व्वलि ।
कल्याणान्यर-मल्लि-सुव्रत जिना [·] पोम्बुच्च पद्मावती,
चाचन्द्रार्क्कममीष्टदास्तु सुचिरं श्री-भैरव-क्ष्मापतेः ॥३॥
श्रीमद्देशीगणे ख्याते पनसोगावलीश्वरः ।
योऽभूल्ललितकीर्त्याख्यस्तन्मुनीन्द्रोपदेशत ॥४॥

श्रीमत्सोमकुलामृताम्बुधिविधु· श्रीजैनदत्तान्वय
श्रीमद्भैरवराज तुङ्गभगिनि श्रीगुम्मटाम्बासुतः ।
श्रीमद्योगिसुरेन्द्रचक्रिमहिम श्रीभैरवेन्द्रप्रभुः
श्रीरत्नत्रयभद्रधामजिनपान्निर्माप्य संसिद्धिभाक् ॥५॥
श्रीमच्छालिशकाब्दके च गलिते नागाभ्रबाणेन्दुभि-
श्चाब्दे सद् व्यय नाम्नि चैत्र-सित-षष्ठयां सौम्यवारे वृषे ।
लग्ने सन्मृगशीर्ष-भे स्थिरतरा श्रीभैरवेन्द्रेण ते
श्रीरत्नत्रयभद्रधामजिनपा भान्तु प्रतिष्ठापिता ॥६॥

जिनाय नम ॥ स्वस्ति श्री [॥] शालिवाहन शक वर्ष १५०८ नेय व्यय संवत्सरद चैत्र शुद्ध षष्ठियु बुधवार मृगशीर्ष-नक्षत्रवु वृषभलग्नदल्लु कलियुगाभिनव-भरतेश्वरचक्रवर्त्ती गुत्ति-हम्मिब्बरगण्ड [प] त्ति-पोम्बुच्च-पुर-वराधीश्वर मरे-होक्करकाव मारान्तवैरि मन्नेय-राय-मस्तकशूल षड्दर्शन स्थापना चार्य्य सोमवंशशिखामणि काश्यपगोत्रपवित्रीकरणदक्ष पोम्बुच्च-पद्मावती-लब्धवरप्रसाद सम्यक्त्वाद्यनेकगुणगणालंकृत जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्ग अरु-वत्तारु-मण्डलीकर-गण्ड होन्नमाम्बिका-प्रियकुमार-भैररस-वोडेयर-अळियरे-निप श्रीमज्जिनदत्तराय-वंश-सुधाम्बुधिपूर्ण्णचन्द्र श्रीमद्वीर-नरसिंह-वङ्गनरेन्द्र श्रीगुम्मटाम्बा-कुलदीपक-प्रियसूनु अरिराय-गण्डरडावणि श्रीमदिम्मडि-भैररस-वोडेयरु तमगे अभ्युदय-नि श्रेयस-लक्ष्मी-सुख-सम्प्राप्ति-निमित्तवागि कारकळद पाण्ड्यनगरियल्लि श्री-गुम्मटेश्वरन संनिधानदल्लि कैलासगिरि-सन्निभ-चिक्कबेट्टदल्लु ॥

श्रीकान्ताकुलवेश्म किं वरयश -कान्ताप्रमोदागरं
भूकान्तारतिसद्म सज्जयवधू-क्रीडास्पदं किं पुन ।
स्यात्कारोज्ज्वल-सन्नयद्वयमयी श्रीभारतीरङ्गभू-
स्त. श्री-मुक्ति-रमा-स्वयम्वरगृहं श्रीजैनगेहं वृषे ॥७॥

इन्तप्प सकलजनानन्दमन्दिरवाद सर्व्वतोभद्र-चतुर्म्मुख-रत्नत्रयरूप-**त्रिभुवन-तिलक-जिनचैत्यालयवनु** रोद्द-गोव निकलङ्क-मल्ल बन्टरभाव परनारिसहोदर नुडिदु-माशेगे-तप्पुव-रायर-गण्ड सुवर्णकलशस्थापनाचार्यरादकारण धर्म्म-साम्राज्य नायकरागि निजपुण्यानुबन्धि-पुण्यद प्रेरणेयिन्द तमगु तज्जिनभवन प्रेक्षकराद सकल-शीलगुणसम्पन्नराह चतुस्संघक्कू साक्षात्स्वर्म्मोक्षलक्ष्मीस्वयम्वरशालोपमन् आगि निर्म्मापिसि अनन्तसुखद सम्प्राप्तिनिमित्वागि । आ नाल्कु-दिक्किनल्लू **अर-मल्लि मुनिसुव्रत-तीर्त्थंकर**-प्रतिमेगळनू स्थापिसि । आ पश्चिम-दिग्भागदल्लि **चतुर्विंशति-तीर्त्थंकर**-प्रतिमेगळनू इदिनाल्कु बोक्कलु स्थानीकरु नडसुव अभिषेक-पूजे मुंतादवक्कु (।) मीले नड़व अङ्करङ्गवैभवादिकगळिगू आ **भैररस-वोडेयरु** निज-सन्तोषदि [ट] 'राज्यजनाळुवाग आ **त्रिभुवन-तिलक-जिनचैत्यालय-दल्लि** आ प्रतिष्ठा-समयद पुण्यकालदल्लि तमगे पुण्यार्थवागि मूड **मुकडपिन-होळे** । तेङ्क **येस्णेय-होळे** । पडुव **पोळ्ळकळियद-होळे** । वडग **बलिमेय-होळे** । ई नाल्कु-होळेगळनु मीरेयागुळ्ळ । निढि (धि) निक्षेप । अक्षिणि आगा-

२५. म्य । जल पाषाण । सिद्ध साध्यंगळेम्ब (।) अष्ट-भोगंगळिगोळगाद **तेळार-ग्रामवनू** । अदरोळगे अक्कि मूडे ७०० नू । **रंजाळ-नल्लूर** सिद्धायदल्लु ग २३८-

२६. नू धारापूर्व्वकवागि आचन्द्रार्कस्थायियप्पन्ते देवर्गे मा [ड्] ि- कोट्ट धर्म्मक्षेत्रध (ट) विवर । आ क्षेत्रद चतु सीमेयोळगल्ल हरवरि (री)-मुम्तादवर-

२७. ल्लि सल्लुव गेणि-सिद्धाय बड्डिय-भट्ट हुरुळिय-अक्कि जोळक्के-कचिद-अक्कि होम्न-बड्डियक्कि सह सल्लुव अक्कि हाने ५० र लेक्कद मूडे ७०० क्के **नल्लु**-

२८. **रु-रञ्जाळदल्लि** वोक्कलु-तार्क्कणेयागि विट्ट सिद्धाय ग २३८ वरहक्कू सहवागि नडव धर्म्म । पडुवण-बागिलल्लि वोक्कलु २ क्के मूरु-होचि-

२६. न देवपूजगे चरु हाने ६ मीलु-चरु हाने ३ अक्षते-अक्कि हाने १ तोये पायस तुप्प कलसुमीलोगर ताळिल मुंताद पंच-मक्ष्यक्के अक्कि हाने २

३० कुडुते २ अन्तु अक्कि हाने १५ कुडुते २ र लोकदल्लि वर्ष। इक्के अक्कि मूडे ११० [।] उदयद पञ्चामृतदाभिषेकक्के ग ७ म २ पञ्चखज्जायक्के ग ७½ सिद्ध-

३१. चक्रद आराधनगे ग १२ प (फ) ल-वस्तुविगे ग १ म २ बैगिन हाल-धारेगे ग ½ म ४ गन्ध-धूपक्के ग ½ म ३ येम्ने हाड १२ क्के ग ८ म ४ अष्टाह्निक ३ क्के ग ३

३२. वर्षाभिषेक इक्के ग ६ अन्तु ग ४७ ॥ @ ॥ बडगण-बागिल वोक्कलु २ क्के मूरु होत्तिन देवपूजगे दिन इक्के चारुविगे अक्कि हाने (।) ६ मीलु [च] रुविगे

३३. अक्कि हाने ३ अक्षतगे अक्कि हाने १ तोये पायस तुप्प कलसुमी लोगर ताळिल मुन्ताद पञ्चमक्ष्यक्के अक्कि हाने, २ कुडुते २ अन्तु अक्कि

३४. दिन इक्के हाने १५ कुडुते २ र लेक्कदल्लि वर्ष (।) इक्के मूडे ११० [।] उदयद बैगिन हालधारेगे ग १½ म ३ पञ्चखज्जायक्के ग ७½ प (फ) ल-वस्तु-

३५. विगे ग १ म २ गन्धधूपक्के म ८ येम्ने हाद १२ क्के ग ८ म ४ अष्टा-ह्निक ३ क्के ग ३ वर्षाभिषेकक्के ग ६ अन्तु ग २८ म ७ ॥ ई लेक्कदल्लि मूड-बागिल वोक्क-

३६. लु २ क्के अक्कि मूडे ११० ग २८ म ७ ॥ आ-तेङ्क-बागिल वोक्कलु २ क्के अक्की (क्कि) मूडे ११० ग [२] ८ म ७ ॥ अन्तु बागिलु ४ क्के वोक्कलु ८ क्के वर्ष (।) इक्के अक्कि मूडे ४४० ग १२३

३७. म १ ॥ @ ॥ पडुव-बागिल येड-बलद गुण्ड २ क्के वोक्कलु इक्के चरु-विगे अक्कि हाने ५ र लेक्कदल्लि मूडे ३६ अक्षतगे अक्कि मूडे ४ उभयं मूडे ४० हाल-

३८. धारे ४ क्के ग ३½ म १ फलवस्तुविगे ग १ म २ गन्ध-धूपक्के म ३ येम्ने हाड ५ क्के ग ३½ अष्टाह्निक ३ क्के म ५½ वर्षाभिषेकक्के ग १ अन्तु ग १० म १½ [।] इं लेक्कदल्लि

३९. नडग (।) मूड तेङ्कण गुंदन्नळिगू । आ पडुवण तीर्थंकरु ब्रह्म पद्मावति गळिगू सह वोक्कलु ५ क्के अक्कि मूडे २०० ग ५० म ७½ =[1] उभयं वोक्कलु

४०. ६ क्के अक्कि मूडे २४० ग ६० म ९ [।] ब्रह्म-पद्मावतीय ऐन्नरविगे अक्कि मूडे ४ = अन्त वोक्कलु १४ क्के अक्कि मूडे ६८४ ग १९४ ॥ @ ॥ दोळु-नागलर-कोम्बिनवर वन

४१. ६ क्के ग ३६ अडिपिन मूलितियर वन २ क्के अक्कि मूडे १६ बस्तिर-ल्लिह तरस्विगळ् तण्ड ४ क्के शीतनिवारणेय-इच्छुड ८ क्कं कैय्यक्किय वुम्बुत्र सूवुव इ-

४२. च्छुड इक्कं सह इच्छुड ६ क्के ग ५ म २ मण्डेय तोळवरे येम्णेय हाड २ क्के ग २ अडुगन्तु सीगेगे सह म ८ अन्तु ग ८ = अन्तु अक्कि मूडे ७०० ग २३८ [॥]

४३. हिरिय-अरमनेर नाल्कु-चठ (वु) कद वोळगण बस्तिय चन्द्रनाथ स्वामिय अमृतपडिगे आरूरल्लण-ववक्कळदल्लि त्रिळिनर-

४४. सर गुरु जिम्नप्पनिन्द अक्कि मूडे २० वागिलरसर गुरु माण्डप्पो [डि] यिन्द अक्कि मूडे १० उभयं मूडे ३० नल्लूर

४५. त्रिक्किरुपाण्डिय-वाळिनल्लि ग ७½ बत्तिकोटिय-वाळिनल्लि ग ३ पं(ला)-ळदल्लि कम्बुववाळिनल्लि ग ७½ अन्तु ग १८ । गोवर्धनगिरिय-बस्तिय

---

१. यह यहाँ और आगे भी जहाँ कहीं आये, विराम का चिह्न समझना चाहिये ।

४६. **पार्श्वनाथ(थ)स्वामिय** अमृतपडिगे **मल्लिलद**-कम्बुळदल्लि अक्किय मूडे ३० आ मीलण दड्डि-मरुगळल्लि मूडे ४ [**लल्लू**] **र** न० [वि] वेट्टि-नारणनल्लि

४७. अ [क्कि] मूडे ६ अं [तु] मू [डे] ४० [**के**] **लवसेय** सेटि-वेट्टिन हित्तिल [फ] लदल्लि [ग] ८ म २½ [॥] [इ] दु पञ्च-ससार-कालोरग-दष्ट-गाढ़-मूर्च्छित-नाना-संसारि-जीव-प्रबोधनक-

४८. र-पञ्च-महा-कल्याण [बी] जोपम [वाद] जिनमन्त्र-पूतात्मन । श्री वीतराग । येम्ब पञ्चाक्षरियनु पञ्चविंशति-मल-विदूर-परम-सम्यग्दृष्टिगळाद-कारण आ **भैरर**-

४९. **स-वोडेयरे** स्व-हस्तदिंद वो [प्प कोट्टु] ददक्के इन्द्रवज्रा-[वृत्त] दिन्द [चतुर्विंशत्य] - क्षर-लिखित-पञ्चाक्षररूप-सर्वतोभद्र-चित्र-प्रबन्धदिं [द] रचिसिद् चि [त्] र-

५०. श्लोक ॥ श्री-वीत-वीरागत-वीग-वीतं
श्री-राग-वीतं गतराग रागम् ।
श्रीगं ततं रागतरागरा [ङ्कं]
श्री वीतरागं तत-वी [र]-गं तम् ॥ @ ॥ ८ ॥

[मंगलाचरणके बाद इस लेखमें (श्लो० २ और ३) तीर्थंकरों, दोर्वलि (बाहुबलि) और पोम्बुच्चकी पद्मावती देवीके आशीर्वादका दाता **भैरव** या **भैरवेन्द्र**, जिनको **भैररस-वोडेय** तथा **इम्मडि भैररस-वोडेय** कर्णाटक गद्यमें कहा गया है, के लिये आह्वान किया गया है। इस सरदारको हम एकदम **भैरव-द्वितीय** कह सकते हैं। इन्हींके मामाको इसी लेखमें (श्लो० ५) भैरव प्रथम कह सकते हैं, जिनका नाम **भैरवराज** दिया है। आगे लेखसे पता चलता है कि **ललितकीर्ति मुनीन्द्र**, जो पनसोगे शाखा (गच्छ) देशीगणके थे, उनके उपदेशसे भैरव द्वि० ने 'रत्नत्रय' (श्लो० ५ तथा ७ वें श्लोक के बादके कन्नड़गद्यमें) मन्दिर, जिससे स्पष्टतः **चतुर्मुख बस्ती** का मतलब है, बनवाया था। श्लोक ६ तथा इसके बादके कन्नड़ गद्यमें

मन्दिरकी नींव रखने और प्रतिष्ठाका दिन दिया है। वह दिन शालि-(या शालिवाहन-) शक वर्ष १५०८, व्यय-संवत्सर, चैत्र शुक्ला षष्ठी, बुधवार था, उस समय नक्षत्र मृगशीर्ष या मृगशिरा तथा लग्न वृष या वृषभ था। श्लोक ६ के बाद के तथा ७ के बादके कन्नड़ गद्यमें भैरव द्वि० की विरुदावलि दी हुई है तथा मन्दिरका नाम **त्रिभुवनतिलक-जिन-चैत्यालय** (७ वें श्लोक के बादके गद्यमें) दिया है, जिसको 'सर्वतोभद्र' और 'चतुर्मुख' कहा गया है। यह **कारकल्लमें पाण्ड्यनगरीमें** श्रीगुम्मटेश्वरके सन्निधानवर्ती **चिक्कबेट्ट** टीले-पर बनाया गया था। पाण्ड्यनगरी, वर्तमान हिरियङ्गडिकी तरह, एक दूसरी कारकलकी पार्श्ववर्ती उपनगरी थी जिसमें स्वयं चिक्कबेट्ट टीला, जिसपर चतुर्मुख बस्ती बनी हुई है, स्तम्भीय गोम्मटेश्वरकी मूर्ति और इन दोनोंके बीचमें से जाने वाली वह सकडी गली है जिसमें कुछ जैन गृहस्थोंके गृह तथा मठ अवस्थित हैं। ख्यातनामा गुम्मटेश्वरकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा करानेवाले पाण्ड्यराय या वीरपाण्ड्यके नामसे यह नगरी प्रसिद्ध थी। आगे बताया गया है कि भैरव द्वि० ने मन्दिरके चारों ओर मुख्य दरवाजोंकी तरफ **अर, मल्लि** और **मुनि-सुव्रत** इन तीन तीर्थङ्करोंकी मूर्तियोंको विराजमान करवाया, तथा इन्हींके साथ बीचमें २४ चौबीसों तीर्थङ्करों की मूर्त्तियोंकी यक्ष-यक्षिणीके साथ स्थापना की।

आगे पंक्ति २२ से ४२ में **तेळार** ग्रामके दानका उल्लेख है, जिससे लगानके रूपमें ७०० 'मूडे' धान्य (चावल) की प्राप्ति थी। इसके अतिरिक्त-**रंजाळ** और **तल्लूर** ग्रामोंके 'सिद्धाय' (अर्थात् चालू लगान) में से २३८ 'गद्याण' (या 'वटह', प० २८) भी मिलते थे। इस आमदनीसे मन्दिरकी पूजाका प्रबन्ध होता। नित्य पूजन करनेवाले १४ स्थानिकों (पुजारियों) के कुटुम्ब इसी कामके लिये नियत थे। प्रत्येक दरवाजेकी वेदी पर कितना खर्च होता था, यह सिलसिलेवार इस शिलालेखमें दिया हुआ है। उससे पता चलता है कि सबसे अधिक खर्च पश्चिम दरवाजेकी वेदी पर होता था, क्योंकि वही मुख्य गिनी जाती थी। दूसरा इस दरवाजेकी प्रधानताका प्रमाण यह है कि उसी दरवाजेकी वेदी पर २४ तीर्थङ्कर विराजमान हैं। इस प्रधानताकी वजह ही

से उस पर ज्यादा खर्च होना भी स्वाभाविक था। माली और गायकोंके (गन्धर्वोंके) लिये भी खर्च इसी आमदनीसे बँधा हुआ था। मन्दिरमें बसने-वाले ब्रह्मचारी इत्यादिको वर्ष भरमें ८ कम्बल शीतनिवारणके लिये मिलते थे और एक कम्बल दैनिक भात-भिक्षाके संग्रहके लिये। उन्हें आवश्यक चीजें, जैसे, तेल, साबुन-ईन्धन भी मन्दिरसे ही मिलता था। पंक्ति ४३-४७में दो और दानोंका उल्लेख है जो कि उसी भैरव द्वि० के ही किये गये मालूम देते हैं। (१) पहला दान 'हिरियअरमने' (अर्थात् बड़ा महल) के प्रागणमें स्थित 'बस्ति' के **चन्द्रनाथ** के नित्य पूजनके लिये और (२) **गोवर्धनगिरि**के टीले पर स्थित ' 'बस्ति' के **पार्श्वनाथ** के पूजनके लिये। अन्तिम ८ वें श्लोकमें पञ्चाक्षरी 'श्रीवीतराग' पर चित्रबन्ध शब्दालंकार है। इस लेखके परिचयमें श्री एच. कृष्णशास्त्री, बी. ए. ने अन्तिम चार पंक्तियाँ (८ वें श्लोकके बाद) मिटी हुई बताई हैं।

दाता और भैरव द्वितीय सोमकुल, काश्यपगोत्र तथा **जिनदत्त** या **जिन-दत्तराय**के वंशका था। वह **गुम्मटाम्बा** और वीरनरसिंह-बंगनरेन्द्रका पुत्र था। गुम्मटाम्बा **भैरव प्रथम**की बहिन थी। भैरव प्र० **झोसमाम्बिका** का पुत्र था। भैरव द्वितीयके विरुद इसी लेखसे जानने चाहिये।]

[EI, VII, No. 10]

६८१

मद्रास;—कन्नड।

काल-[शक सं० १५१२ (१५९१ ई०)]

[साउथ कैनराके Sub-Court में]

खर संवत्सरमें, शक सम्वत् १५१२ (१५९१ ई०) में एक जैन-मन्दिरकी पूजाके प्रबन्धके लिए **किञ्जिग भूपाल** नामके युवराजके द्वारा कन्नड़ प्रान्तमें भूमिदान।

[ASSI, II, p. 14, No. 91, a.]

६८२-६८३

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

[सं० १५५० = १४९३ ई०]

(श्वेताम्बर लेख।)

६८४

अनहिलवाड-पाटन,—प्राकृत।

[सं० १५५१-१५५२ = १४९४-१४९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[G. Buhler, EI, I, No. XXXVII, (p. 319-324), t. et. a.]

६८५

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

[सं० १५५२ = १४९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

६८६

अनहिलवाड-पाटन;—संस्कृत

[सं० १५५२ = १४९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[J. Burgess and H Consens, Art. of Northern Gujarat (ASI XXXII) p. 44-45, tr.]

६८७

सिरोही;—संस्कृत।

[सं० १६५३ = १५६६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316, No. XLIII, a.]

६८८

कोप्प;— संस्कृत तथा कन्नड।

[शक १५२१=१५९९ ई०]

[कोप्प (कोप्प परगनामें) पश्चिमकी तरफ खाली पड़ी हुई जमीनमें एक पाषाणपर]

श्री-वीतरागाय नमः।
श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥
नमस्तुङ्ग इत्यादि॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १५२१ सन्द वर्तमान-विळम्बि-संवत्सरद चैत्र ब ७ चन्द्रवारदलु श्रीमतु करिदल-बळिय भयिल-नायकर मदवळिगे तळार-बळिय तुग्गमन मग पांड्य-नायक अवर तम्म देरेनायकरु कोप्पदल्लि पलिरत-साधन चैत्यालयवनु कट्टिसि प्रतिष्ठेय माडिसि अमृतपडिगे बिट्ट स्वास्ति-विवर (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा है) भयिर-रस-वोडेयरु पारिश्वनाथ-देवरिगे आ-कोप्प-आयदलि धारेनेरद क्षेत्रभूमिय विवर (यहाँ विशेष चर्चा आती है) लिंगवन्तनादव अळुदिदरे श्रीपर्वतदलि लिङ्ग बडु ··· ·· ··· ··· पापके होह विभूति-रुद्राक्षिगे होरगु नामधारि

आगि आदव ई-धर्मके अळुपिंदरे तिरुपति-श्रीरङ्ग-विष्णु-कञ्चिलि स्वामि-सेवे अळिद पापके होहरु इष्टर वळिरु अळुपिदरे एळनेनरकक्के इळिवरु इदु तप्पदु (शेषमें साक्षियोंके नाम हैं) पाण्ड्यप्प-वोडेरु कोप्पद-बस्तिगे धारेनेरडु मुदुकदानीळु गद्दे भूमि २ क्के गडि ख १० उलिगददेन्दु नरसोपुरद महाजनङ्गळ कय्य क्रयक्के कोण्ड कागलु-गोडलु कले ख १८ कारु १२ उभ ख ३० ··· ४० भट्ट पारिश्वनाथ-देवर वोळ-भागस्तराढवरिंगे · ··· (हमेशाके अन्तिम श्लोक)

[(उक्त मितिको) करिदलके मयिल-नायककी पत्नी तळार-दुग्गम्मके पुत्र पाण्ड्य-नायक और उसके छोटे भाई देरे-नायकने कोप्पमें साधन-चैत्यालय बनवाकर और उसमें प्रतिमा विराजमान करके, पूजनके लिये निम्नलिखित सम्पत्ति दानमें दी । (जो जमीन दी उसकी यहाँ विस्तृत चर्चा है) ।

और मयिररस-वोडेयरने पारिश्वनाथ-देवके लिए कोप्पकी लगानमेंसे निम्नलिखित जमीन दानमें दी । (जहाँ जमीनकी कीमत दी हुई है) ।

लिंगवन्त और नामधारियोंके विरुद्ध भिन्न शाप । साक्षी ।

पाण्ड्यप्प-वोडेरने मुदकदानिमें कोप्पकी बस्तिके लिये (उक्त) और भी दान दिया तथा नरसीपुरके ब्राह्मणोंसे खरीदकर कुछ और जमीन भी दानमे दी ।]

[EC, VII, koppa tl. No 50]

६८६

वेणूर,—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १५२५ = १६०४ ई०]

[गोमटेश-मूर्तिस्तम्भके ठीक दाहिनी तरफ]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शास [नं] जिनशासनम् ॥ [१]

शकवर्षेष्वतीते[षु वि]षयाक्षिशरेंदुषु ।
व [तंमा] ने शोभकृति वत्सरे फाल्गुना [ख्यके ॥] [२॥]

मासेऽथ शुक्लपक्षेऽद्दशम्या गु [रुपु] ष्यके ।
सुलग्ने मिथुने देशी [गणाव] र दिनेशितु [॥] [३॥]

बेळगुळाख्यपुरीपट्टची [र] त्नुघिनिशापते ।
चारुकीर्त्ति] मु [ने] दिंव्यवाक्यादेनूरपत्तने ॥ [४॥]

श्री रायकुवरस्याथ जामाता त [त्सहो] दरी- ।
पाण्ड्यकाख्यमहादेव्या [सु] पुत्र· पांड्यभूपते ॥ [५॥]

अ [नु] ज [स्ति] मरा [जा]ख्यश्चामुंडान्वय[भूष]कः ।
अस्था [प] यत्प्रति [ष्ठाप्य] भुजबल्याख्यकं जिनं ॥ ६ ॥

शुभमस्तु ॥

[इस लेखमें बताया गया है कि चामुण्ड (प्रसिद्ध चामुण्डराव जिन्होंने श्रवण-वेल्गोळामें गोम्मटेशकी मूर्त्ति स्थापित की है) के वंशमें होनेवाले तिम्मराजने एनूर (वर्त्तमान वेणूर) में भुजबली (बाहुबली) जिनकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करके स्थापना की। यह तिम्मराज पाण्ड्य नरेशका छोटा भाई, पाण्ड्यक रानीका पुत्र, तथा रायकुवरका जामाता था। उसने इस मूर्त्तिकी स्थापना वेल्गुळ (वर्त्तमान श्रवण-वेल्गोला) के भट्टारक, जो देशीगणके थे, की आज्ञासे की थी। मूर्त्तिकी स्थापना दिवस शक वर्ष शोभकृत् १५२५ के व्यतीत हो जानेपर फाल्गुन शुक्ला १०, पुष्यनक्षत्र, मिथुन लग्न था।]

[EC, VII, No 14, F.]

६९०

वेणूर;— कन्नड़ ।

[शक सं० १५२६ = १६०४ ई०]

[गोम्मटेश-मूर्तिस्तम्भके ठीक बायीं तरफ]

१. श्री शकव [र्ष] मं गणि [से स]ासिरदि मिं-
२. गुवरडु लेकमु [ळ्ळ] शतदिप्पता [र] नेय
३. शोभकृदब्दद फाल्गुनाख्यमासाश्रि-
४. [त] शुक्लपक्ष दशमी गुरुपुष्यद यु-
५. [ग्म] ल [ग्न] दोळ् देशिगणा [ग्र] गण्यगुरु-
६. पडितदे [व] न दिव्यवाक्य [दिं] ॥ [१] राय-
७. कुमार [नो] प्पुवळिय सयि पांड्य-
८. कदेवि [य पुत्रनत्र] सोमायतव-
९. श [धु] र्य्यंनुरुसाहसि पांड्यन-
१०. पानुजनुद्धदानराधेयनुदा-
११. र [पुंजळि] के पट्टवनाळ्व नृपाग्रणि
१२. तिम्मभूभुजं श्रीयुतनं प्रति [ष्ठि]-
१३. [सि] द [न]ादिजिना [तम] न [नं जि] न गुं [म] टेशनं ॥ [२॥]

[पहले शिलालेखकी तरह, इस लेखमें भी बताया गया है कि मूर्तिकी स्थापना तिम्मने की थी। इस लेखमें पूर्व सम्बन्धोंके साथ-साथ तिम्मको सोम-वंशका धुरीण तथा पुञ्जळिकेका शासक बताया गया है। समय इस लेखमें १५२६ (शब्दोंमें) शक वर्ष है, जबकि पूर्व लेख १५२५ अतीत वर्षका है। 'गुम्मटेश' बाहुबलीका ही नामान्तर है।]

[EI, VII. No 14. F.]

६९१

मेलिगे;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १५३०=१६०८ ई०]

[मेलिगेमें, रङ्ग-मण्डपके दक्षिण-पश्चिमकी ओर आदिनाथ बस्तिमें एक पाषाणपर]

श्रीमदनन्तनाथाय नम

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीमद्-गीर्व्वाण-चक्रोट्-फणिपति-मकुटोद्भासि-माणिक्यमाला- ।
रोचिः-प्रक्षालित-श्री-चरण-सरसिज-द्वन्द्व-त्रामास्यमानः ।
मानस्तम्भाम्बुजाताकर-कलित-लसत्-खातिकाद्युद्ध-शोभोऽ
सौ स्वान्त् सन्तोषयन् श्री-समवसृति-पतिर्भा त्यनन्तो जिनेशः ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-परुष १५३० नेय सौम्य-संवत्सरद् माघ-शुद्ध १० आदिवारदलु ॥

वृ ॥ निद्राभूत-महीश-वारिज ततेः कुर्व्वन् विकास-श्रियम्
सन्मार्गाम्बर-भासमान-विसरत्-तेजो-निधिस्सर्वदा ।
वैरि-क्ष्मापति-भूरि-कैरव-कुलं सङ्कोचयन् सन्ततम्
श्रीमद्-वेङ्कट-देव-राय-तरणिस्तीव्र समुज्जृम्भते ॥

इत्याद्यनेक-विरुदावळि-विराजमानराद श्रीमद्-राजाधिराज राज-परमेश्वर श्री-वीर-प्रताप श्रीमद्-वेङ्कटपति-देव-महारायरु पेनगोण्डे सिंहासनारूढरागि प्रति-पालिसुत्तिर्द्द समस्त-राज्यङ्गळोळत्यतिशयमनुळवन्य-देशदोळु ॥

अन्तेसेववन्य-देशदोळ् ।
अन्तातीत-प्रकार-शोभा-रुचियम् ।

तां तळेद्दारगामेम्ब पु- ।
रं तोप्पुंहु भुवनगिरिय मूडण-देसेयोळ् ॥

आवोळञमाळ्‌वननेक-चातुरी-धुरन्धरनाद **वेङ्कटाद्रि-महीपाल** नातन गुण-कथनमेन्तेने ॥

श्री-रामा-रमण विवेक-शरण साहित्य-रत्नाकरम् ।
नारी-चित्त-मनोभवं बुध-नुतं सङ्गीत-गङ्गाधरम् ।
वैरि-व्रात-मदेभ-पञ्च-वदनं ··· ··· ··· ··· ।
··· श्री-पति-**वेङ्कटाद्रि-महिपं** तानोप्पिद धात्रियोळ् ॥

मत्तमातन कीर्त्ति-प्रतापमेन्तेने ॥

उरगाधीश-महा-मणि-प्रमेयनिन्द्रोत्कुम्भि-कुम्भस्थळो- ।
त्कर-सिन्दूरमनीश-माळ-नयनाग्नि-ज्वाळेयं तार-भू- ।
धर-गौरेयक-शृङ्गमं सुरनदी-रक्ताम्बुम गेल्दुदु -।
र्व्वरेयोळ् सन्नुत-वेङ्कटेन्द्रन यशस्तेज -प्रभा-मण्डलम् ॥

इन्तनेक-गुण-सम्पत्-समृद्धराद **वेङ्कटाद्रि-नायकय्यनवरु** कुळकाळाज्ञियागि नडसि कोण्डु वह **बोम्मण्ण-हेग्गडे**यातनेन्तप्पनेने

कलित-गुण-निधि ··· ·· ।
··· शूरनुदधि-सम-गम्भीरम् ।
विळसद्-**बोम्मण-हेग्गडे** ।
पिळेयोळ् मुत्तूरनाळ्‌दनुत्तमनेसेदम् ॥

आतनाळ्‌व सीमेयोळगण **निडुवल-नाडिगे** सलुव **कोदूरपालोळगे मेलिगे**येम्ब ··· ··· त्तिर ··· ··· राज-श्रेष्ठियातन गुण-कथनमेन्तेने ॥

शच्या सह सुराधीशो यथा भाति तथानिशम् ।
वर्द्धमान-वणिग्-मुख्यो **नेमाम्बा**-प्राण-कान्तया ॥
तत्सुतो **बोम्मण-श्रेष्ठी** निर्माप्य जिन-मन्दिरम् ।
तत्रानन्त-जिनाधीशं संस्थाप्य ख्यातिमाप्तवान् ॥

मत्तमा-मन्योत्तमन परम-गुरुविन प्रभावमेन्तेने ॥

श्रीमज्जैन-मताब्धिवर्द्धन-सुधासूतिर्म्महीपालक- ।
व्रात-स्तुत्य-पदाम्बुजात-युगलो भव्याब्ज-मानूपम ।
दुर्व्वार-स्मर-गर्व्व-पर्व्वत-पविर्न्नाना-का(क)ला-कोविदो ।
विद्यानन्द-मुनीश्वरो विजयते वादीभ-पञ्चाननः ॥

तच्छिष्य-परम्परायात-बलात्कार-गणाग्रगण्य श्रीमद्-राय-राजगुरु वसुन्धराचार्य्यवर्य्य महा-वाद-वादीश्वर राय-वादि-पित मह सकल-विद्या .... माद्यनेकान्वर्थ-बिरुदावलि-विराजमान श्रीमद्-**देवेन्द्रकीर्त्ति-भट्टारक**-पदाम्भोज-दिवाकरायमान श्रीमद्**भिनव-विशालकीर्त्ति भट्टारक**-देव-पद-पयोज-मत्त-मधुकरायमान प्रवीण-**बोम्मण-श्रेष्ठिय** तनूजातनेन्तिर्द्दपनेने ॥

तस्यात्मजातो विख्यातस्सुकृती धार्म्मिकाग्रणी· ।
बोम्मणाख्यो वणिग्-मुख्योऽपालयत् तज्जिनालयम् ॥
नेमाम्बा नाम तत्पत्नी व्रत-शील-विभूषिता ।
तयो· पञ्च सुता जातास्स्मराकारा गुणोज्वळाः ॥

आ-कुमारकरय्वरेन्तिदरेने ।

श्रीमज्जिन-पादाम्भोज-युगल-भ्रमरोपम· ।
भाति श्री **बोम्मण**-श्रेष्ठी सत्य-शौच-गुणान्वितः ॥
यस्यानन्त-जिनेश्वरो निज-कुल-स्वामी त्रिलोकी-पतिर्
विद्यानन्द-मुनीश्वरो निज-गुरुर्व्वादीभ-कण्ठीरव· ।
...त्त परमं जिनेन्द्र-गदितं येनोरु तत्वं महान्
सोऽयं भाति मही-तले **पदुमण-श्रेष्ठी** गुणाना निधि ॥
श्रीमान् कुवलयाह्लादी कलानामाश्रयो महान् ।
सद्भि परिवृतो भाति **चन्दन-श्रेष्ठि**-चन्द्रमाः ॥
सर्व्व-श्रेष्ठिषु रत्नत्वाद् दान-पूजादि-सद्-विधौ ।
राजते **माणिक-श्रेष्ठी** नाम्नान्वर्थेन पुण्य-भाक् ॥

श्री जिनोदित सद्धर्म्म-कार्याणामादिमस्त्वत ।

आदण्णा'यो वणिग् भाति नामान्वर्थं दधत् सुधी ॥

इन्तेसेव सकल-गुण-समन्वितराद मेळिगेय बोम्मण-सेट्टियर मक्कळु बोम्मण-सेट्टियरु (औरोंके नाम दिये हैं) नाऊ तम्मोळेकस्तरागि नम्म अज बोम्मि-सेट्टियरु कट्टिसिद बस्तियनु शिलामयवागि कट्टिसि ॥

श्री-विश्वावसु-वत्सरे शुभतरे ज्येष्ठे च मासे सिते

पक्षे सद्-दशमी-तिथौ सु-रुचिरे शुक्रे च वारे वरे ।

ऋक्षे चोत्तर-नाम्नि केसरि-महा-लग्ने प्रतिष्ठापित

पद्म-श्रेष्ठि-वरेण शास्त्र-विधिनानन्ताख्य-तीर्थेश्वर ॥

आ-श्रीमदनन्तनाथ स्वामिय नित्य-नैमित्तिक-पूजेगे । अमृतपडि । नन्दादीसि । अङ्ग-रङ्ग-वैभव-मुन्ताद समस्त-विनियोग-धर्म्म नडवदक्के बिट्ट भू-दान शासनद क्रम वेन्तेन्दरे (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा तथा वे ही अन्तिम श्लोक आते हैं) ।

मेलिगे बोम्मण-सेट्टर मक्कळु बोम्मण-सेट्टरु पदुमण-सेट्टरु सि (शि) लामय-वागि कट्टिसिद श्रीमदनन्तनाथ-स्वामि-चैत्यालयदल्लि नडव धर्म्मद विनियोगक्के कोट्ट सर्व्वमान्यद स्वास्तेगे बरद शिला-शासन मुत्तूर हेगडेर बोप्पित बोम्मण-मल्लणग वोप्प ।

[अनन्तनाथके लिये नमस्कार । जिन शासनकी प्रशंसा ।

अनन्त जिनेशकी स्तुति ।

(उक्त मितिको), वेङ्कट-देव रायको सूर्यकी उपमा । जिस समय वेङ्कटपति-देव-महाराय पेनुगोण्डेकी राजगद्दीपर बैठे थे, उनके सारे राज्यमें अवन्य-देश प्रसिद्ध था । उस देशमें, भुवनगिरिके पूर्वमें, आरग शहर था । उस नगरका शासक वेङ्कटाद्रि-महीपाल था । उसके गुणोंका वर्णन ।

वेङ्कटाद्रि-नायकय्यका आश्रित बोम्मण-हेगडे था । उसकी प्रशंसा । वह मुत्तूरका शासक था । इसके एक स्थान मेळिगेमें, जो निडुवळ-नाड्के कोहूर-पाळ्में था, राज-श्रेष्ठी वर्द्धमान था । उसकी प्रशंसा । उसकी पत्नी नेमाम्बा थी । उसके पुत्र बोम्मण-श्रेष्ठीने एक जिनमन्दिर बनवाकर उसमें अनन्त जिनकी प्रतिष्ठा

की। उसके गुरु विशालकीर्त्ति भट्टारक थे। ये विद्यानन्द-मुनीश्वरके शिष्य, बलात्कारगणके प्रधान, राय-राजगुरु देवेन्द्रकीर्त्ति-भट्टारकके शिष्य थे। बोम्मण-श्रेष्ठीके पुत्र बोम्मणने मन्दिरकी रक्षा की थी। उसके पाँच पुत्र थे।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 166]

६९२-६९९

शत्रुंजय—प्राकृत।

[सं० १६७५ से सं० १६८३ = १६१८ ई० से १६२६ ई० तकके]

श्वेताम्बर लेख।

७००

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १६८३=१६२६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[ASI, XVI, p. 360, No 31, t & tr.]

७०१

शत्रुंजय;—प्राकृत।

[सं० १ [६]८४=१६२७ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७०२

शत्रुंजय;—संस्कृत।

[संवत् १६८६ तथा शक सं० १५५१]

(बड़े आदीश्वर मन्दिरके उत्तर-पूर्वके छोटे आँगनमें, दिगम्बर जैन मन्दिरका यह शिलालेख है।)

पं० १. संवत् १६८६ वर्षे वैशाख सुदि ५ बुधे शाके १५५१ प्रवर्त्तमाने श्री मूलसङ्घे सरस्वतीगच्छे

२. बला[त्का]रगणे श्री कुंडकुंदाचार्य्यान्वये भट्टारक श्री सकलकीर्त्ति-देवास्तत्पट्टे भ० श्री भुवनकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री ज्ञानभूषणदेवा-

३. स्तत्पट्टे भ० श्री विजयकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री शुभचन्द्रदेवास्तत्पट्टे भ० श्री सुमतिकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री गुणकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री वादिभूषणदेवास्तत्पट्टे भ० श्री रामकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री पद्मनन्दिगुरूपदेशात् पातसाहाश्रीशाहा-

४. ज्याहां विजयराज्ये श्री गुर्जरदेशे श्री अह्मदावादवास्तव्यहुंवड-ज्ञातीयवृहच्छा-खीयवाग्वरदेशस्थातरीयनगरनौतनभद्रप्रासादोद्धरणधार जाडा सं० भोजा भा० स० लकु सु० संवस्ता भा० सं० लटकण भा० सं० ललतादे तयो

५. सुत निजकुलकमलविकाशनैकसूर्यावतार दानगुणेन नृपतिश्रेयाससम श्री-जिनबिंवप्रति-

६. ष्ठातीर्थयात्रादिधर्म्मकर्म्मकरणोत्सुकचित्तसंघपति श्रीरत्नसी भा० स० रूपादे द्वितीय भा० स० मोहणदे तृतीय भा० सं० न[थ]रगदे द्वितीयसुत संघवी श्रीरामजी भा० सं० केशरदे तयो सुत संघवी

७. डुगरसी भार्या स० डाहमदे द्वितीयसुत संघवी [रायव]जी भा० सं० गमतादे [एते सर्वे] महासिद्धक्षेत्र श्री श[त्रुंजयनाम्नि] गिरौ श्री जिनप्रासादे श्री शान्तिनाथबिंबं कारयित्वा नित्यं प्रणमति । शुभं भवतु [॥]

[भावार्थ—यह अभिलेख अहमदाबाद निवासी, हुँबड (हूमड़) जातिके किन्हीं सद्गृहस्थोंने, जिनके नाम इस अभिलेखमें दिये हुए हैं, खुदवाया है। इसमें उनके द्वारा इस शत्रुञ्जय पर्वतपर श्री शान्तिनाथकी प्रतिमाके स्थापनकी खास बात है। यह बिंब प्रतिष्ठा संवत् १६८६, वैशाख सुदि ५, बुधवार, तथा शक स० १५५१ के समय हुई थी। आम्नाय तथा भट्टारकोंकी परम्परा इस तरह चालू थी —

मूलसंघ सरस्वतीगच्छ, बलात्कारगण, कुन्दकुन्द अन्वय, इसके बाद भट्टारकों की परम्पराका क्रम सकलकीर्त्ति, भुवनकीर्त्ति, ज्ञानभूषण, विजयकीर्त्ति, शुभचन्द्र, सुमतिकीर्त्ति, गुणकीर्त्ति, वादिभूषण, रामकीर्त्ति, और पद्मनन्दि। इस समय बादशाह श्री शाहाज्याहा (शाहजहाँ) का राज्य प्रवर्तमान था।]

[EI, II, p. 72.]

७०३

शत्रुञ्जय;—प्राकृत-ध्वस्त।

[सं० १६८१=१६२१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७०४

नखौर (Bihar Miridional),—संस्कृत।

[सं० १६८६=१६२६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H T. Colebrook, Miscell, Essays, Vol. II (1837), p. 318–319, t et, tr; pl. VII, f–s.]

७०५

मलेयूर;—कन्नड-भग्न।

[बिना काल-निर्देशका; लगभग १६३० ई० (लू० राइस).]

[उसी पर्वतपर, पार्श्वनाथ-बस्तिके प्राङ्गणमें पूर्वकी ओर एक पाषाणपर]

.. ... जीर्णोद्धारवनु माडि .. जिन-मुनिगर प्रतिष्ठि . अप्प तोरण-स्तम्भदलि राय-करणिक देवरसर तम्म पितृगळु चन्द्रप्पगू माथि..निलसि दीप-स्तम्भ .. तोरण यनु माडिसिद

[तोरणके स्तम्भोंको सुघरवाकर और उनपर जिन-मुनियोंके प्रतिबिम्बोंकी स्थापनाकर राय-करणिक देवरसने, अपने पिता चण्डप्प तथा ··· ··· के नामपर, एक दीप-स्तम्भ बनवाया।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 156]

७०६–७०८

सरोत्रा;—संस्कृत और गुजराती।

[सं० १६८९ = १६३२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[J Kriste, EI, II, No. V, Nos 20–26 (p. 31–33), t et. a]

७०९

श्रवणबेलगोला,—कन्नड़।

[शक १५५६ = १६३४ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१०

हुलेबीड;—संस्कृत और कन्नड।

[शक १५६० = १६३८ ई०]

[पार्श्वनाथ बस्तिके आँगनमें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

नमस्तुङ्ग इत्यादि ॥
पायादायासु[?] खेद-क्षुभित-फणि-फणा-रत्न-निर्य्यत्न-निर्यच्-।
छाया-माया-रतङ्ग-द्युति-मुदित-वियद्-वाहिनी-चक्रवाकम् ।
अभ्रान्त-भ्रान्त-चूडा-तुहिनकर-कनीक-नालीक-नाळ- ।
च्छेदामोदानुघाव ·· न्थ-खगं धूर्जटेस्ताण्डवं वः ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन शक वर्ष १५६० नेये सलुव ईश्वर-संवत्सरद फाल्गुन शुद्ध ५ यु गुरुवारदल्लु श्रीमद्वेलापुरी चेन्न वेङ्कटेश्वर-क्रम-कमल युगळ ··· रिथर-राज-हंसराद वैष्णव-मतामृत-वार्धि-प्रवर्द्धमान-पूर्ण सुधासूति-बिम्बायमानराद प्रजा-पालन-मन्त्र-पालन-आत्म-पालन-कुल-पालन समञ्जसत्व सप्तांग-राज्य-सम्पन्नराद कोट्टमापेगे तप्पुव घोरेगळ गण्ड दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालकराद सामादि-चतुरुपाय-सयुतराद । पञ्चाङ्ग-सन्मन्त्र-गुण-समेतराद । रिपु-राय-शरभ-गण्ड-भेरुण्डराद वीर-क्षत्र-चूडामणि । शरणागत-वज्र-पञ्जरराद । सिन्धु-गोविन्द धवळांक-भीम मणिनागपुर-वराधीश्वर । कलिङ्ग सप्तांग-हरण । तुरुक-दळ-विभाड इत्याद्यनेक-विरुदावळी-विराजमानराद कृष्णप्प-नायक अय्य-नवर कलि-कालाद्यम-चक्रवर्ति वेङ्कटाद्रिनायक-अय्यनवर वेळूर-राज्यवन्नु धर्मदिं प्रतिपालिसुतं यिरलु हळेयबीड विजय-पार्श्वनाथ-स्वामिय बसदिय कम्बगळिगे हुच्चप्प-देवरु लिंग-मुद्रेय हाकलागि आ-लिङ्ग-मुद्रेयनु विजयप्पनु तोडेयलागि । सज्जन-शुद्ध-शिवाचार-सम्पन्नराद । देव-पृथ्वी-महामहत्तिनोळगाद अतिथिगळु । सूर्य्यन तेज चन्द्रन शान्त समुद्रद गम्भीर । नन्दिकेश्वरन प्रतिष्ठे कल्पवृक्षद फल बलिय वीरते रामन सयिरणे लक्ष्मणन हित-कार हरिश्चन्द्रन सत्य कोट्ट-मापेगे तप्पुवर मीसेय कोयिववरुं । नरनन्ते तीर्थ-सिंह ··· मठ-मने-देवालय-जीर्णोद्धारकरुं समे-दयेवन्तरुं विष्णुविनुपाय, ब्रह्मन चातुर्य्य हनुमन्तन शक्ति जाम्बवन युक्ति प्रह्लादन भक्ति नित्य-जप-शिव-पूजा-पञ्चाक्षरी-मन्त्रालंकृतराद देव-पृथ्वी-महा-महत्तु यी-स्थळद हळेबीड बसवप्प-देवरु पुष्पु-गिरिय पट्टद-देवरु-मुन्ताद देशा-मागद महा-महत्तुगळिगे वेळूर-राज्यद जैन-सेट्टि-गळु भगवदर्हत्परमेश्वर पाद-पद्माराधकराद स्याद्वाद-मत-गगन-सूर्य्यराद आहा-

रामय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदरं । खण्ड-स्फुटित-जीर्ण-जिन-चैत्यालयोद्धारकरं जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्गराद सम्यक्त्वाद्यनेक-गुण-गणालंकृतराद हासनद देवप्प-सेट्टिय हु-कुमार-पद्मण्ण-सेट्टि-मुन्तादृ-समस्तरु दिनहं माडिकोळ्ळागि आ-महा-महत्तु एकस्थगागि वा सिद्धोण्डु कट्टुमाडिसिद विवर। विभूति-वीळ्य-वन्नु माडिसिकोण्डु श्री-विजय-पार्श्वनाथ-स्वामिगे पूजे-पुनस्कार-यज्ञ-रङ्ग-वैभव-दीपाराधने-अभ्रयोदक-प्रभावना-मुख्यवाद जैनागमक्के सलुव धर्म्मव पूर्व्व-मर्य्यादे-यल्लि आ-चन्द्रार्क्क-स्थायियागि माडिकोळ्ळि येन्दु वेळूर वेङ्कटाद्रि-नायक-अय्यन-वरिगे सकल-साम्राज्याभ्युदयार्त्थं-निमित्तवागि आ-दोरेय दक्षिण-तोर-दण्डराद प्रधान-वंशोद्धारकराद पद-वाक्य-प्रमाण-पारावार-पारङ्गतराद पर-पुरुषार्थ-परम-पण्डितराद । काळय्य-मंत्रि-प्रियाग्र-कुमार मंत्रि-कुलाग्र-गण्यराद कृष्णप्पय्यनवरु श्री-धर्म-कार्य्य-वनु कयि-विडिदु पुरो-वृद्धिगे सलिसलागि आ-महा-महत्तु बरसि कोट्ट शील-शासन श्री-जैन-धर्म्मक्के आवनानोव्वंनु विल्लव माडिदरे आतनु तम्म महा-महत्त पदव कुडिदवनल्ल शिवद्रोहि चङ्गन-द्रोहि विभूति-रुद्राक्षिगे तप्पिदवनु काशि-रामेश्वरादि तीर्थङ्गल लिङ्गक्के तप्पिदवरु श्री-महा-महत्तिन वप्पित ॥ वर्द्धताम् जिनशासनम् ।

[यह लेख शक सं० १५६० के समयमें जैन और शैवोंके ऐक्यका तथा परधर्मसहिष्णुताका एक खासा नमूना है। इसमें मंगलाचरणमें पहले जैनदर्शन की प्रशंसा है, फिर शम्भू (महादेव) को नमस्कार किया है। इसमें बताया गया है कि (उक्त मितिको) जब कृष्णप्प-नामक-अय्यका पुत्र, कलिकालका अष्टम-चक्रवर्ती, वेङ्कटाद्रि-नामक-अय्य वेलूर-राज्यकी न्यायसे रक्षा कर रहा था, तब हुच्चप्प-देवने हलेयबीडुके विजय-पार्श्वनाथ-बसदिके सम्मोदर लिङ्ग-मुद्रा लगायी और विजयप्पने उसको तोड़ दिया,—तब हलेबीडुके देवप्पकी-महामहत्तु, पुष्प-गिरिके पट्टदेव, तथा देशभागके अन्य महा-महत्तुओंने मिलकर यह आज्ञा निकाली कि जैन लोग चन्द्र, सूर्यके स्थायी होनेतक अपनी सब धार्मिक विधि कर सकते हैं।]

[EC, V, Belur tl., No. 123.]

७११

शत्रुंजय;—प्राकृत ।

[सं० १६६६=१६२१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७१२

श्रवणबेल्गोला;—संस्कृत ।

[शक १५६५=१६४३ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१३

श्रवणबेल्गोला;—मराठी ।

[शक १५७०=१६४८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१४–७१५

शत्रुंजय;—प्राकृत ।

[सं० १७१० = १६५३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७१६

सिरोही;—संस्कृत ।

[सं० १७१८=१६६१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316, No. XLIII, a.]

७१७

सिरोही,—संस्कृत।

[सं० १७२१ = १६६४ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316, No. XLIII, a]

७१८

श्रवणवेलगोला,—कन्नड़।

[वर्ष सौम्य = १६६६ ? (लु. राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१९

मदने;—कन्नड़।

[शक १५९६ = १६७४ ई०]

[मदने ग्राममें, ग्राम-प्रवेशके पासके एक पाषाणपर]

श्री शक-वर्षं १५९५ नेय परिधावि-संवत्सरद पुष्य शुद्ध १० यल्लि श्रीमद्-मैसूर देव-राज-ओडेयरु वेळुगोळद चारुकीर्त्ति-पण्डिताचार्य्यर दान-शालेय जैन-संन्यासिगळिगे नित्य-अन्न-दानक्के सर्व्वमान्य-वागि धारादत्त-वागि कोट्ट मदणि-ग्रामवु मंगल महा श्री श्री श्री ॥

[(उक्त मितिको) मैसूरके देवराज-ओडेयरने वेळुगोळके चारुकीर्त्ति-पण्डिताचार्यकी दानशालाके जैन-संन्यासियोंको आहार-दान देनेके लिये मदणि गाँव दानमें दिया। महान् सौभाग्य।]

[EC, V, Channarayapatna tl., No. 273.]

७२०

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक सं० १५९६ = १६७४ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, बलि-कल्लुके उत्तर-पूर्वकी चट्टानपर]

शाके द्रव्य-पदार्थ-भूत-धरणी-संख्या-मिते वत्सरे
त्वानन्दे वर- पुष्य मास-सित-पक्षे-पञ्चमी सत्तिथौ ॥
लक्ष्मीसेन-मुनीश्वरेण पर-दुर्व्वादीभ-सिंहेन वै
हेमाद्रौ वर-पार्श्वनाथ-जिनपे दीक्षा श्रिता सत्फला ॥

विजयप्पैय्य पाद वरसिदनु।

[लक्ष्मीसेन-मुनीश्वरने हेमाद्रिमें पार्श्वनाथ जिनालयके अन्दर दीक्षा ली। चरणचिह्न विजयप्पैय्यने स्थापित किये थे।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 149.]

७२१

सिरोही,—संस्कृत।

[सं० १७२६ = १६७१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H H. Wilson, Asiat Res, XVI, p. 316, No. XLIII, a]

७२२

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़।

[शक १६०२ = १६८० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७२३

बेळ्ळूरु—संस्कृत और कन्नड़।

[बिना काळनिर्देशका, पर सम्भवतः लगभग १६८० ई० का]

[बेल्लूरु (नेल्लीकेरी परगना) में विमल-तीर्थंकरकी बस्तिमें वरण्डाकी दीवालपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीसमन्तभद्रमुनये नमः ॥ श्रीमत्तु-डिल्ली-कोल्लापुर-जिनकञ्चि-पेनुगुण्डे-सिंहासनाधीश्वरराद लक्ष्मीसेन-भट्टारक प्रतिबोधदिन्द श्री-मैसूर देवराज-वोडेयरु धारा-दत्तवागि कोट्ट क्षेत्रदल्लि स्वशिष्यरह हुलिकल्ल पदुमण-सेट्टर सुतराद दोड्डादण्ण-सेट्टर पुत्रराद सक्करे-सेट्टरु अभ्युदय-निश्श्रेयस-निमित्तवागि आ-चन्द्रार्क-वागि निर्म्मापिसिद विमल-नाथन चैत्यालयवु श्री

[जिनशासनकी प्रशंसा। समन्तभद्र-मुनिको नमस्कार। डि (दि) ल्ली, कोल्लापुर, जिनकञ्चि, और पेनुगोण्डेके सिंहासनाधीश लक्ष्मीसेन-भट्टारकके प्रतिबोधन (सम्मति) से मैसूरके देवराज-वोडेयरकी दी हुई जमीनपर हुलिकल पदुमण-सेट्टिके पुत्र दोड्डादण्ण-सेट्टिके पुत्र सक्करे सेट्टि—जो कि लक्ष्मीसेन भट्टारकके शिष्य थे—ने अपने अभ्युदयकी वृद्धिके निमित्त विमलनाथ चैत्यालय बनवाया था और यह कामना की थी कि यह चैत्यालय जबतक सूर्य-चन्द्र हैं तबतक इस पृथ्वीपर रहेगा।]

[EC, IV, Nagamangala, tl. No. 43]

७२४

हागलहल्लि—कन्नड़।

[शक सं० १६२१ = १६९९ ई०]

[हागलहल्लि (कूलगेरी परगना) में, ईश्वर मन्दिरके दक्षिण-पूर्वके तेल-मिल (चक्की) के पासके एक पाषाणपर]

.... श्री-मूलसंघद .. त्रिणक-गच्छद ध्यानधारण मौनानुष्ठान-जप-समाधि-शील-गुण सन्टरप्प नियग चन्द्र-सिद्धान्तद अमल-विद्वत्-कुमुद-चन्द्र पण्डित-देव आदिनाथ पण्डित-देवर गुड्ड चाम-गौण्ड शक-वर्ष काल साविरद आर-नूरैप्प(रिप्पतो)न्दनेय ईश्वर-सम्वत्सरद माघ-मासद सुद्ध-पक्षदलु त्रयोदसि-सोमवारद अन्दु श्री तिप्पूरु तीर्त्थदहल्लि-हादिलवागिल भूमिगारं तेळ्लर-कुलद् एरैयङ्ग-गौण्डन मग देव-गाउण्डमातन मग कालि-गाउण्डन मगं चाम-गाउण्डनु कल्ल-गाणमं माडिसिद मङ्गलमहा श्री ॥ तिप्पूर्-तीर्त्थ-दल्लि मानिवद . ...

[मूलसङ्घ, [तिं] त्रिणक-गच्छके आदिनाथ-पण्डित-देवके श्रावक शिष्य, तेली जातिके, तिप्पूर्-तीर्त्थके एक गाँव हादिलवागिलुके किसान चाम-गौडने एक पत्थरका तेल निकालनेका कोल्हू बनवाया।]

[EC, III, Malavalli tl., No. 48]

७२५

सिक्का—प्राकृत

[सं० १७७३ और शक १६३८ = १७१६ ई०, श्वेताम्बर लेख।]

[D. P. Khakhar, Report on remains in kachh (ASWI, selections, No. CLII), p. 84, t.; p. 95 a. (ins. No. 23]

७२६

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १६२१ (ठीक १६४५=१७२३ ई० ? [कीलहौर्न])]

[जै० शि० स०, प्र० भा०]

६२७–७३१

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[स० १७८३ से स० १७९४ और शक १६५९ तक = ई० १७२६ से १७३७ तक]

श्वेताम्बर लेख।

७३२

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत।

[वर्ष सिद्धार्थ = १७३९ ई० ? (लू० राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७३३

सिरोही—संस्कृत।

[संवत् १८०८ = १७५१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316, No. XLIII, a.]

७३४–७३६

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८१० से १८१५ = १७५३ से १७५८ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

७३७

गोढि—संस्कृत-ध्वस्त ।

[सं० १८२१ और शक १६८६ = १७६४ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh (ASWI, selectoins, No. CLII), p. 88, t.; p. 96 a (ins. No. 41).]

७३८

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८२२ = १७६५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७३९

राजगिरि;—संस्कृत ।

[सं० १८२९ = १७७२ ई०]

[निम्न लेख रत्नागिरि के एक चरण पर है]

"ॐ सिद्धम् । संवत् १८२९ के माघ महीनेके कृष्णपक्षकी छठी तिथिक हुगलीके रहनेवाले, ओसवाल और गढिया गोत्रके बुलाकीदासके पुत्र शा मानिक-

चन्दने राजगृहमें रत्नगिरि पर्वतके मन्दिरको सुधरवाते समय श्री पार्श्वनाथ जिनके कमल-सदृश चरणयुगलकी स्थापना की।"

नोट—मूल लेखका पता नहीं है। यह उपर्युक्त अनुवाद अंग्रेजी अनुवादपरसे दिया जा रहा है।

[A. M. Broadlay, JASB, XLI, p. 250, tr.]

७४०

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १८४३ और शक १७०८ = १७८६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७४१

मांडवो—संस्कृत।

[सं० १८४५, शक १७१० = १७८८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[J. Burgess & H. Cousens, Revised lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI). p. 106, No. 2–4, t.]

७४२

पटना—संस्कृत।

[सं० १८४८ = १७९१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[L. A. Waddeli, Discovery of the exact site of Patliputra (Calcutta, 1892), p. 18, t. et, tr.]

७४३

राजगिरि;—संस्कृत।

[सं० १८४८ = १७९१ ई०]

निम्न लेख (अनूदित) विपुलाचलपर मुनिसुव्रतनाथके मन्दिरमें है :—

"संवत् १८४८ के कार्त्तिक महीनेके कृष्णपक्षकी सप्तमी तिथिको श्री अमृत धर्म वाचकने संघसहित विपुलाचलपर मुक्ति लाभ करनेवाले परम निर्वृत्त ऋषि (The supremely liberated sage) की प्रतिमाका निर्माण और संस्थापना की थी।"

नोट :—मूल लेखका पता नहीं है। यह उपर्युक्त अनुवाद अंग्रेजी अनुवाद परसे दिया जा रहा है।

[A. M. Broadley, JASB, XLI, p. 249, tr.]

७४४

मांडवी,—प्राकृत। आदिनाथके मन्दिरमें

[सं० १८५७ = १८०० ई०]

॥ संवत् १८५७ वर्षे वैशाखमासे कृष्णपक्षे दश्यातिग्रे शनौ श्री मुत्त संवत् सरस्वतिगच्छे बलात्कारगणे कुंदकुंदा आचार्य्यंलये भट्टारक श्री सकलकीर्त्ति तदनुक्रमेण रूप श्रीविजयकीर्ति तत्पदे भ० श्री नेमीचंद देवा तत्पदे भ० श्री चंद्रकीति देवास्तत्पदे भ० श्री रामकीर्ति देवा तत्पदे भटारक श्री यज्ञकीति पुरुप देशात् मम उशाची वलं पुएम्दं (?) श्री मांडवी ग्रामे समस्त श्रीदीप्त श्री मूलनायक श्री आदिनाथ नित्यं प्रणम्यंति॥ श्री॥ श्री शुभ भवतु॥

[J. Burgess & H. Cousens, Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 106, No. 1. t.]

७४५-७४९

शत्रुंजय—प्राकृत ।

[सं० १८६० और शक १७२६ से सं० १८६१ और शक १७२६ तक = ई० १८०३ से १८०४ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

७५०

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़ ।

[शक १७३१=१८०९ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७५१

शत्रुञ्जय;—गुजराती ।

[सं० १८६७=१८१० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७५२

श्रवणबेलगोला,—कन्नड़ ।

[विना कालनिर्देशका, पर लगभग १८१० ई० (लू. राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७५३

मलेयूर—संस्कृत ।

[शक सं० १७३४ = १८१२ ई०]

[मलेयूर (उप्पमवल्लि परगना) में, पहाड़ी पर स्थित गुफा के ब्रह्म-देवरके मार्गमें]

(पहला)

श्रीमद्-देवर-देव-वन्दित-जिनाङ्घ्रि-द्वन्द्व-सन्वारित-
प्रेम वेट्ट समस्त-भव्य-जन-रिन्दं शोभितं सद्गुणो-
द्दाम पुस्तक-गच्छ-देशि-गणदोल् विभ्राजितं सत्कला-
गमं भट्टाकलङ्क-मुनिपं त्रैलोक्य-संपूजितम् ॥

[पुस्तकगच्छ और देशी-गणके भट्टाकलंक-मुनिप की प्रशंसा]

(दूसरा)

[उसी पहाड़ी पर, पाषाणोंके ढेरके पास, उत्तरकी तरफ दूसरी चट्टान पर]

श्रीमच्छाके शराग्नि-व्यसन-हिमगु-संख्यामिते श्रीमुखाब्दे
पौषे मासे त्रयोदश्यवनिज-दिवसे धातृ-भे चाप-लग्ने
श्रीमद्देशी-गणाग्र्यः कनकगिरि-वरे सिद्ध-सिंहासनेशः प्रापद्
भट्टाकलङ्कस्सुमरणविधिनास्मिन् गिरौ नाकलोकम् ॥

[पहले नं० के लेख का ही विषय इसमें है। देशीगणके अग्र्य (प्रधान), कनकगिरिके प्राप्त-सिंहासनके ईश भट्टाकलंकने इस टीले पर सुमरणपूर्वक स्वर्गलोक को प्राप्त किया, अर्थात् शरीर छोड़ा।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 146 & 150]

७५४

शत्रुंजय;—प्राकृत।

[सं० १८७५ = १८१८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७५५

मसार—संस्कृत ।

[सं० १८७६ = १८१९ ई०]

१. सं ८७६ वैशाख शुक्ले ६ मूले संघे श्रीकुन्दकुन्दाचार्य्यान्वये भट्टारक विश्वभूषणजी भट्टार
२. क श्री जिनेन्द्रभूषणजी भट्टारक महेन्द्रभूषणजी तदाम्नके अग्रोतकान्वये कानिलगोत्रे श्री
३. सद-श्री दशानाकर भिपस्य पुत्र श्री बाबू संकरलालजी तस्य पुत्र पुत्रश्चत्वार बाबू श्री रतनचन्दजी
४. श्री बाबू कीर्त्तिचन्द, श्री बाबू गुपालचन्द, श्री बाबू प्यारीलाल अरामनगर वसिभि मसाढ़नग
५. रे जिन मन्दिर बिम्ब प्रतिमा कर ······ अंग्रेजराज्ये वर्त्तमाने कारुपदेशे श्री

[इस लेख में सं० १८७६ की वैशाख शुक्ला ६ को, जब कि 'कारुष-देश' पर अंग्रेजी राज्य प्रवर्त्तमान था, (पार्श्वनाथ की) प्रतिमा मसाढ़ नगरके जैन मन्दिरमें अराम नगर (वर्त्तमान आरा=शाहाबाद) के बाबू शंकरलाल और उनके चार पुत्रोंके द्वारा समर्पित गयी थी। लेखमें आरा नगरके भट्टारकोंकी परम्परा भी वर्णित है। उस समय भट्टारक महेन्द्रभूषण जी विद्यमान थे।

[A. Cunningham Reports, III, P. 70, t. & a.]

७५६

पभोसा—संस्कृत ।

[सं० १८८१ = १८२४ ई०]

पं० १. सम्वत् १८८१ मिते मार्गशीर्षशुक्लपक्षस्या शुक्रवास-
२. रे काष्ठासंघे माथुरगच्छे पुष्करगणे लोहाचार्याम्नाये

३. भट्टारक श्री जगत्कीर्त्तिस्तत्पट्टे भट्टारक श्री ललितकी-
४. र्त्तिजी तदाम्नाये अग्रोतकान्वये गोयलगोत्रे प्रयागन-
५. गरवास्तव्यसाधु श्रीरायजीमल्लस्तदनुजफेरुम-
६. ल्लस्तत्पुत्रसाधु श्री मेहरचन्दस्तद्भ्राता सुमेरचन्द-
७. स्तदनुजसाधु श्रीमाणिक्यचन्द स्तत्पुत्रसाधु श्री हो-
८. रालालेन कौशांबीनगरबाह्य प्रभासपर्वतोपरि श्री-
९. पद्मप्रभजिनदीक्षाज्ञान कल्याणकक्षेत्रे श्री जिन-
१०. बिंबप्रतिष्ठा कारिता अंग्रेजबहादुरराज्ये शु [शु] भ [॥]

अनुवाद—शुक्रवार, मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठी, सं० १८८१ के दिन, काष्ठासंघ, माथुरगच्छ, पुष्करगण, लोहाचर्यके अन्वय (परम्परा) में भट्टारक श्री जगत्कीर्त्ति उनके पट्टपर भट्टारक श्री ललितकीर्तिजी इनकी आम्नायमें अग्रोतक अन्वय (जाति) तथा गोयल गोत्रके प्रयाग नगरके रहनेवाले साधु (साहु = सेठ) श्री रायजीमल्ल, उनके अनुज फेरुमल्ल, उनके पुत्र साधु श्री मेहरचंद, उनके भ्राता सुमेरचंद, उनके अनुज साधु श्री माणिकचंद, उनके पुत्र साधु श्री हीरालालने कौशाम्बी नगरके बाहर प्रभास पर्वतके ऊपर श्री पद्मप्रभ (तीर्थङ्कर) के दीक्षा कल्याणक क्षेत्रमें श्री जिन (पार्श्वनाथ) बिंब प्रतिष्ठा कराई। यह काल अंग्रेज लोगोंके शासन का था [१८२४ ई०]।

[EI, II, NoXIX, No3 (P. 244)]

७५७

श्रवणबेलगोला—कन्नड़।

[शक १७४८ = १८२७ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७५८

फेलसूरु—संस्कृत ।

[काल लुप्त, (१८२८ ई० १ लू० राइस)]

[फेलसूरु (फेलसूरु परगना) में, बस्तिके अन्दरकी दीवालपर]

श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नम ।

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री-शकवत्सरे त्रि..... पष्टि-त्रय-संख्ये स्थिते
वर्षे सम्प्रति सर्वधारिणि सिते मासे तपस्ये तिथौ ।
सप्तम्या गुरुवासरे मृगशिरो-भे योग आयु ·· ···
··· ··· कर्णाटकनामदेशविलस-मध्यस्थिते ··· शुभे ॥
श्रीमान् यो महिसूरुनामनगरे सद्रत्नसिंहासना—
सीनः पार्थिव-चामराज-तनुभूरात्रेय-गोत्रोदित ।
कुर्व्वन् सन्निह दुष्ट-निग्रहमतश्शिष्टानुरक्षा च सु-
प्रेक्षावान् पृथुपुण्यराशिरपि सत्पुण्योद्यमादि-क्षम ॥
नानादेशनृपालमौलिविलसद्रत्नप्रभाच्यक्रमा-
म्भोजो राज्यविचारणैकचतुरो भास्वान् वदान्याग्रणी ।
तेजस्वी विबुधौघरक्षणचणस्सुज्ञानलीलानिधि-
र्नानाशास्त्रविचारणो विलसते श्री कृष्णराजो नृप ॥
तत्पादाश्रित-शान्त पण्डित-सुतश्श्रीवत्सगोत्रोद्भवो
रानव्राजयस ··· न प्रविलसद्विज्ञापनाकर्णनात् । ·
दिव्ये ह्यवधार्य पुण्यपुरुपसद्धर्मकृत्यं महान्
सोऽसौ ·· फेलसूरु-नामनि पुरे चैत्यालयादि-स्थिताम् ॥

श्री-चन्द्रप्रभ-तीर्त्यकृद्विजयदेवज्वालनीदेविका-
बिम्बानां ··· ··· पुनर्नवलसच्चित्रान्विता शोभनाम् ।
प्राप्ताश्चर्यरसामकारयदपि श्रेष्ठा प्रतिष्ठा पुनः
··· ··· ··· शुभ ··· ·· नाट-गुरुणा वक्तुं यथैवन्मन ॥
श्री मङ्गलं भवतु । वर्द्धतां जिन-शासनम् ।

[चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्रको नमस्कार । जिन-शासनकी प्रशंसा ।

कर्नाटक देशके **महिसूर** नामक नगरमें राजा चामराजका पुत्र **राजा कृष्णराज** रत्नजटित सिंहासनपर बैठा । वह दुष्टोंका निग्रह और शिष्टोंका पालन करता था । (उसकी प्रशंसा) उसने शान्त-पण्डितके पुत्र श्रीवत्स-गोत्रीय······जके प्रार्थना-पत्रसे केलसूरके चैत्यालयमें फिरसे तीर्थंकर चन्द्रप्रभ, विजय-देव तथा ज्वालिनी-देविकाके बिम्बों (प्रतिमाओं) को स्थापित करवाया । चैत्यालयको भी सुधरवाकर उसको फिरसे चित्रित किया था ।]

[EC, IV, Gundlupet tl., No 18]

७५९–७६३

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८८५ से १८८६ तक= १८२८ से १८२९ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

७६४

नरसीपुर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १७४१=१८२१ ई०]

[नरसीपुर (नेम्मनहल्लि परगना) में, ज्ञान्तय्यके खेतमें एक पाषाणपर]

श्री दे

शुभमस्तु ।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १७५१ विरोधि सं० कार्तिक-शु ५ भानु ॥ श्रीमद्राजाधिराज महाराज श्री-कृष्ण-राज-वाडेयरय्य-नवरु मैसूर-नगरदल्लि रत्न-सिंहासनारूढरागि पृथ्वी-साम्राज्यं गेय्युन्तु । दळ-वायिकेरेगे बन्दु इद्दु तपिशिकोण्डु अडविगे होद आनेयन्नु अप्पणें-मीरेगे गुण्डिनिन्द होडिशि हजूरिगे वपिस्त बगे हेग्गडदेवन कोटे अमलुदार शान्तय्यन मग देवचन्द्रैय्यगे गिनामागि अप्पणे कोडिसिद्दु ताळोकु-पैकि सागरद होबळि वळित नरसिंहपुरद ग्रामदल्लि वेद्दलु कं गु १२—० वरहद भूमिगे चतु-र्दिक्किगू शीला-प्रतिष्ठे माडिसि कोट्टद्दु यी-शिलेगे पश्चिम होल-सारिगे वुण्डु सहा १ यिदके शेरिद अड्डु सह कुळ मोगचु कं० गु० १०—६ यी शिलेगे पूर्वं हत्ति-होल १ क्के कुळ मोगचु कं गु १—४ उभयं हन्नेरडु-वरहाद वेद्दलु-भूमिगे यी-कार्तिक-ब १३ सोमवारदल्लु शिला-प्रतिष्ठे माडि यीत यीतन पुत्र-पौत्र-पारम्पर्यवागि निरुपाधिक-सर्वमान्यवागि अप्पणे कोडिसिद शासना ।

[जिन शासन की प्रशंसा ।

जिस समय मैसूरकी रत्नजटित गद्दीपर बैठकर राजाधिराज महाराज कृष्णराज वोडेयरय्य इस पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे:—एक हाथी दळवायिकेरीमें आया और जङ्गलमें भाग गया। हाथीको मारकर राजाके पास लानेका हुक्म हुआ। हेग्गडदेवन्कोटेके अमलदार शान्तय्यके पुत्र देवचन्द्रने यह काम सम्पन्न किया, तो उसे इनाम मिलनेका हुक्म हुआ; और इनाम में उसे उपर्युक्त तालुकेके सागर होबलि (प्रदेश) के नरसिंहपुर गाँवमें १२ वराह-जितने मूल्यकी सूखी जमीन दी गयी। इस भूमिको चारों ओर पत्थरोंकी निशानीसे अङ्कित कर दिया गया था। यह भूमि उसके पुत्रों, पौत्रों और सन्तान-दरसन्तानके उपभोगके लिये विना किसी बाधाके, सब करोंसे मुक्त रूपमें दी गयी थी।]

[EC, IV, Heggadadevan-Kote tl., No. 51]

७६५

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १८८७ = १८३० ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७६६

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत।

[सं० १८८८ और शक १७५२ = १८३० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७६७–७७७

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १८८८ से सं० १८९३ सक = ई० १८३१ से १८३६]

श्वेताम्बर लेख।

७७८

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक सं० १७६० = १८३८ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, चन्द्रप्रभ प्रतिमाके पश्चिमकी ओरकी चट्टानपर]

श्री श १७६० । स्वस्ति श्री वर्द्धमानाब्दः २५०१ विळम्बि-सं० वैशाख-शु ३ गु । सा । देवचन्द्रनु पितृ-सन्तानमं बरसिदं मङ्गलमहा श्री श्री श्री

[वर्द्धमान सं २५०१, शक १७६०, विळम्बि वर्षमें देवचन्द्रने अपने पूर्व-पुरुषोंकी परम्परा लिखवायी।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 154.]

७७६–७९२

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १८९७, शक १७६३ से सं० १९१९, शक १७८१ तक = ई० १८४० से ई० १८६१ तक] श्वेताम्बर लेख।

७९३

कोथरा—संस्कृत।

[सं० १९१८, शक १७८३ = १८६१ ई०] श्वेताम्बर लेख।

[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh (ASWI, selectoins, No. CLII), p. 75-76, t.; p. 91 a (ins. No. 1).]

७९४–७९८

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

[सं० १९२१ से १९३० तक=ई० १८६४ से १८७३ तक] श्वेताम्बर लेख।

७९९

शालिग्राम;—संस्कृत और कन्नड।

[शक १८००=१८७८ ई०]

[शालिग्राममें, अनन्तनाथ-बस्तिके सामनेके स्तम्भपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शकाब्दः १८०० नेय ईश्वर-संवत्सरद माघ-शु ५ लु स्वस्ति श्री पेनगोण्डे-सेनगण-संस्थानद श्रीलक्ष्मी-सेन भट्टारक-स्वामियवर शिष्यनाद यिद्गूरु पट्टण-शेत्रु वीरप्पनवर कुमार अण्णैयनवर कुमार हजूरु-मोतीखाने-वीरप्प तम्म तिम्मप्प सह शालिग्राम-

दल्लि यी-नूतनवाद चैत्यालय कट्टिसि श्री अनन्त-स्वामियन्नु स्वास्त्यक्षेत्र-सहित प्रतिष्ठे माडि यिरुवदक्के मद्र शुभं मङ्गल श्री ॥

[जिन शासन की प्रशंसा। सेनगणकी संस्थान पेनगोण्डेके लक्ष्मीसेन भट्टारक-स्वामी के शिष्य यिदगूरके पट्टण-शेट्टिके पुत्र अण्णैय्यके पुत्र **वीरप्प** और **तिम्मप्प** थे। तिम्माप्प छोटा भाई था। वीरप्प मोतीखानेके महलमें काम करता था। वीरप्पने शालिग्राममें इस नवीन चैत्यालय का निर्माण कराकर इसे **अनन्तस्वामी**को सौंप दिया।]

[EC, IV, Yedatore tl , No. 36]

८००–८०३

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० ११३१ से ११४३ तक=ई० १०८२ से १०८६ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

८०४–८३०

श्रवणबेल्गोला,—कन्नड़ ।

[अनिश्चित कालके]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

८३१

तिरुमलै;—तामिल ।

[काल अनिश्चित]

१ स्वस्ति श्री [॥] कडैकोट्-
२ टूर् त्तिरुमलैप्परवादिम-
३ ल्लर् माणाकर अरिष्टने-
४ मि आचार्य्यर् शेय्-
५ वित यक्षित्तिरु-
६ मेनि ॥

अनुवाद—स्वस्ति ! श्री ! कडैकोट्टूरके अरिष्टनेमि-आचार्यने, जो तिरु-मलैके परवादिमल्लके शिष्य थे, एक यक्षी की प्रतिमा बनवाई ।

[South Indian ins., I, No. 73 (p. 104–105) t. & tr.]

८३२

कलुगुमलै,—तामिल ।

[अनिश्चित काल]

१ श्री [॥] [आ] णनूर् सिंगण-
२ दिक्कुरवडिगळ् मा-
३ णाक्कर् नागणन्दि-क्कुरव-
४ [डि] गळ् शे [य्] वित्त ति [रु] मेणि [॥]

अनुवाद—(यह) प्रतिमा आणनूरके पूज्य गुरु सिंहनन्दिके शिष्य पूज्य गुरु नागनन्दिने बनवायी थी ।

[EI, IV, p. 136, No. 6.]

८३३

बस्तीपुर;—कन्नड़-भग्न ।

[काल निश्चित नहीं]

[बस्तीपुरके उत्तरमें एक पाषाणपर]

क ॥ अकलङ्क ··· ··· ··· · ··· ।
वाक्-चन्द्रकीर्त्तियं धवळिसे दिगम्बर ।
··· ··· ·· भव्य-प्रकार-चकोरं नलेय ।
··· ··· ··· य कुटिल-वाङ्कन्य पदाम्भोजम् ॥

[अकलङ्ककी प्रशंसामें]

[EC, III, Seringapatam tl,. No. 145.]

८३४

चिदरवल्लि;—कन्नड़।

[विना काल-उल्लेखका]

[चिदरवल्लि (सोसले परगना) में, गाँवके पश्चिम बलगौ रावळके खेतकी एक चट्टानपर]

अय-महित-कोण्डकुन्दा- । न्वय-सम्भव-देशिकाख्य-गणदोल् गुणिगळु ।
प्रिय-धर्म्मर् न्नेगळ्दरुपा- । त-यशर् ॱ नन्दि-देवरी-वसुमतियोळ् ॥
आ-गुणिगळ शिष्यन्तियर् । आगमदिष्टदोळे नेगळ्दु तपदोळ् सलेका-
लागमनग्दित्तति सन्द्- । ओगडिसदे नागि यव्वें-कान्तियरगळु ॥
तोरि ··· तप परि-ग्रहमं नेरे नोन्ताराधनातीत ··· मनदोळ् पडङ्गल-नरिदोप्पु-तमव्वमसमान व ··· ·· मक्तियिन्दमपत्र-श्रीकारियमनात्माम्त्रिकगे प्रत्यक्ष-परोक्ष-विनयमं मान्य-चरित··· ··· ···

[देशिक-गण और कोण्डकुन्दान्वयके ·· नन्दि-देवकी शिष्या नागियव्वें-कन्ति अपनी श्रद्धा और पवित्रताके लिये विख्यात थी। गृहीत व्रतोंकी परिपूर्णता-पूर्वक स्वर्गवास हो जानेसे, मातृक प्रेमके कारण, ··· माँकी स्मृतिमें ···]

[EC, III, Tirum Kudlunarasipur, tl , No. 133]

८३५

वेरम्बाडि;—संस्कृत-भग्न।

[विना काल निर्देशका]

[वेरम्बाडिमें (कुन्तूर् परगना) मारी मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

ओं नमोऽर्हते भगवते चण्डोग्र-पारिश्वं (पार्श्व) नाथाय धरणेन्द्र-पद्मावती-सहिताय सर्व्वंग्राविद्दरं अळदुभोगे ··· ··· ··· नाना ··· श्री-पञ्च-परमेष्ठी ··· ··· ···

[ॐ। भगवान् अर्हत् चण्डोग्र-पार्श्वनाथको नमस्कार हो। वे धरणेन्द्र-पद्मावती सहित हैं। वे सब व्याधियोंको दूर करनेवाले हैं ··· ··· ··· ··· पाँच परमेष्ठी ··· ··· ··· ···]

[EC, IV, Gundlupet tl., No. 96]

८३६

जवगल्लु,—कन्नड़-भग्न।

[अनिश्चित कालका]

[जगवल्लु (जगवल्लु परगने) में, जैन-बस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्री कोण्डकुन्दान्वय देशी गणदमरचर-भटारर शिष्यन्तिय अष्टो-पवासदर क्रियागुणचन्द्र-भटारर सधर्मेगळु तोम्भत्तेळ वरिसा त ··· वख्दुन बि ··· ··· निसिधिय कल्लनिरिसिद्

[कोण्डकुन्दान्वय तथा देसी-गणके अमरचर-भट्टारकी शिष्या, जो (महीनेमें) आठ दिनका उपवास करती थी और गुणचन्द्र-भट्टारकी साथिन थी, ६७ वर्षतक जीयी। उसके बहनोई या सालेने यह स्मारक खड़ा किया।]

[EC, V, Arsikere tl., No. 3.]

८३७

कोलूरु;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष विरोधिकृत्]

[कोलूरुमें, कुमरि-हक्कलुमें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति श्रीमतु आदिनाथ-देव-पादाराधक सम्यक्त्व-रत्नाकर जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्गेयप्प राजियव्वे-हेग्गडिति ४५ नेय विरोधिकृतु-

संवत्सरद् माघ-सुध(द्ध)-पञ्चमी-बृहवारदन्दु कोळूरोळ् सुर-लोक प्राप्ते-
यादळ् ॥ सरस्वतिगण-पुत्र-सुमति-पण्डित-शिष्य रूवारि सोमोजन पुत्र दुगायन बेस

[इस लेखमें किसी भी सुरलोक प्राप्तिका दिन दिया है और कोई विशेषता नहीं है ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 106]

८३८

हले-सोरब;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[काल निश्चित नहीं]

[हले-सोरबमें, उसी स्थानपर एक दूसरे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥ [१]

श्री हेमचन्द्र-देवर गुड्डु दम गोडन निषिधि श्री-वीतरागाय श्रीमत् पी-
क्ल माडिदनु सोरपद बयिरोजनु ॥

लेख स्पष्ट है।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 53.]

८३९

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, P. 356, No. 15, t. & tr.]

८४०

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, p. 356, No. 17, t. & tr.]

८४१

गिरनार;—संस्कृत।

[दक्षिणी प्रवेश-द्वारके पासके गिरिनारी मन्दिरके मण्डपमें भूमि-मञ्जिलके एक पाषाण-तलपर]

श्री सुमकीर्तिदेव साहुजाजासुत साहु तेजकीर्ति देव।

अनुवादः—श्री सुमकीर्तिदेव और साहु जाजाके पुत्र साहु तेजकीर्तिदेव।

[ASI, XVI, p. 356-357, No. 18.]

८४२

भोलरी;—संस्कृत और गुजराती।

[काल अनिश्चित] श्वेताम्बर लेख।

[J. Kirste, EI, II, No. V, No. 3 (p. 25-26) t. & tr.]

८४३

रामनगर (अहिच्छत्र);—संस्कृत।

[काल अनिश्चित]

रामनगरके पुराने किलेसे उत्तरकी ओर कुछ १०० गज दूरीपर और नसरतगञ्जके पूर्वमें 'कतारि खेरा' नामकी एक बहुत छोटी पहाड़ी है। यह 'कतारि-खेरा' 'कोत्तरि खेरा'का अपभ्रंश (विगड़ा हुआ रूप) मालूम पड़ता है। 'कोत्तरि खेरा'का अर्थ होता है 'मन्दिरका ढेर'। यहाँ जनरल कैनिंघमने खम्भेका कङ्कडका चोखूँटा पाया और एक छोटे मन्दिरकी करीब-करीब लुप्तप्राय दीवालें खोज निकाली थीं। उसने पहिले इसे कोई बौद्ध-मन्दिर समझा, परन्तु पीछेसे वहाँ सिवा एक बुद्ध-मूर्तिके और कुछ न होनेसे, यह खयाल छोड़ दिया। लेकिन वहाँपर कुछ नग्न मूर्तियाँ निकलीं जोकि दिगम्बर जैन सम्प्रदायकी थीं। इससे उसने जैन मन्दिर समझा। पत्थरके एक परिवेपक्र (Railing) स्तम्भपर, जिसमें ऐसी मूर्तियोंकी ६ कतारें थीं, निम्नलिखित समर्थक लेख मिला —

महाचार्य इन्द्रनन्दि शिष्य महादरि पार्श्वपतिस्य कोष्टरि ।

"इन्द्रनन्दिके शिष्य महादरि, पार्श्वपतिके मन्दिरको ॥"

यहाँ 'पार्श्वपति'से मतलब २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथसे ही है। एक दूसरी नग्न प्रतिमाके पाषाणपर 'नवग्रह' ये शब्द खुदे हुए थे, एक विशाल स्तम्भके खण्डपर उसके चारों ओर शेरके आकार बने हुए थे, जो कि महावीर स्वामीका चिह्न है। जैनोंमें 'अहिच्छत्र' अब भी एक पवित्र स्थान माना जाता है। इन लेखोंके अक्षरोंसे जनरल कनिंघम अनुमान करते हैं कि यह मन्दिर गुप्तकालकी अवनतिसे पहले बना था।

[Art, Ins. N-W-P-O (ASI, II), p. 23, t. & tr.]

८४४

खजुराहो,—संस्कृत ।

[काल अनिश्चित]

[२१ नं०के जिन-मन्दिरके द्वारके स्तम्भपर]

आचार्य सी (श्री)-देवचन्द्रः (न्द्र) शिष्य (शिष्य) कुमुदचन्द्र (न्द्रः) ॥

[देवचन्द्रके शिष्य कुमुदचन्द्रका उल्लेख ।]

[ASWI, Progress Reports 1903-1904, 48, t.]

८४५-८४८

जैसलमेर,—संस्कृत ।

[सं० १४७३=१४१६ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

शि० ले० ८४७—संवत् १४९३ = १४३६ ई०

" " ८४८— " १४९७ = १४४० ई०

" " ८४९— " १५०५ = १४४८ ई०

" " ८५०— " १५३६ = १४७९ ई०

समाप्त

अनुक्रमणिका (१)

जैन-शिला लेख संग्रह भाग १-२ में संग्रहीत शिला लेखों के स्थानों की अकारादि क्रम से नाम सूची। नाम के पश्चात् लेख नम्बर समझना चाहिये।

अनुक्रमणिका २

[विशेष नाम सूची]

इस अनुक्रमणिका में जैन मुनि, आर्यिका, कवि, संघ, गण, गच्छ, ग्रन्थ तथा राजा, रानी, गृहस्थों और सब प्रकार के नाम समाविष्ट किये गये हैं। नाम के पश्चात् अंक, लेख नम्बर समझने चाहिये।

इ

ई

उ

ए

ख

ग

च

द

प

भ

र

ल

श

ह